653

कल्याण

गोसेवा-अङ्क

(परिशिष्टाङ्कसहित)

गीताप्रेस, गोरखपुर

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

कल्याण

गोसेवा-अङ्क

(परिशिष्टाङ्कसहित)

[वर्ष-६९] [संख्या १-२]

[जनवरी सन् १९९५ ई०, वि० सं० २०५१]

'गोसेवा-अङ्क' की विषय-सूची

विषय — पृष्ठ-संख्या

विषय पृष्ठ-संख्या विषय पृष्ठ-संख्या

गोतत्त्व-विमर्श—

चित्र-सूची

(सादे चित्र)

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

तृणोदकाद्येषु वनेषु मत्ताः क्रीडन्तु गावः सवृषाः सवत्साः।
क्षीरं प्रमुञ्चन्तु सुखं स्वपन्तु शीतातपव्याधिभयैर्विमुक्ताः॥

वर्ष ६९ } गोरखपुर, सौर माघ, वि० सं० २०५१, श्रीकृष्ण-सं० ५२२०, जनवरी १९९५ ई० { संख्या १ पूर्ण संख्या ८१८

सर्वतीर्थमयी मुक्तिदायिनी गोमाता

सर्वे देवा गवामङ्गे तीर्थानि तत्पदेषु च। तद्गुह्येषु स्वयं लक्ष्मीस्तिष्ठत्येव सदा पितः॥
गोष्पदाक्तमृदा यो हि तिलकं कुरुते नरः। तीर्थस्नातो भवेत् सद्यो जयस्तस्य पदे पदे॥
गावस्तिष्ठन्ति यत्रैव तत्तीर्थं परिकीर्तितम्। प्राणांस्त्यक्त्वा नरस्तत्र सद्यो मुक्तो भवेद् ध्रुवम्॥

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, श्रीकृष्णजन्म० २१। ९१—९३)

गौके शरीरमें समस्त देवगण निवास करते हैं और गौके पैरोंमें समस्त तीर्थ निवास करते हैं। गौके गुह्यभागमें लक्ष्मी सदा रहती हैं। गौके पैरोंमें लगी हुई मिट्टीका तिलक जो मनुष्य अपने मस्तकमें लगाता है, वह तत्काल तीर्थजलमें स्नान करनेका पुण्य प्राप्त करता है और उसकी पद-पदपर विजय होती है। जहाँपर गौएँ रहती हैं उस स्थानको तीर्थभूमि कहा गया है, ऐसी भूमिमें जिस मनुष्यकी मृत्यु होती है वह तत्काल मुक्त हो जाता है, यह निश्चित है।

गो-स्तवन

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥

'गौ रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, अदितिपुत्रोंकी बहिन और घृतरूप अमृतका खजाना है; प्रत्येक विचारशील पुरुषको मैंने यही समझाकर कहा है कि निरपराध एवं अवध्य गौका वध न करो।'

आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन्त्सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः॥

'गौओंने हमारे यहाँ आकर हमारा कल्याण किया है। वे हमारी गोशालामें सुखसे बैठें और उसे अपने सुन्दर शब्दोंसे गुँजा दें। ये विविध रंगोंकी गौएँ अनेक प्रकारके बछड़े-बछड़ियाँ जनें और इन्द्र (परमात्मा) के यजनके लिये उषःकालसे पहले दूध देनेवाली हों।'

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति।
देवांश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह॥

'वे गौएँ न तो नष्ट हों न उन्हें चोर चुरा ले जाय और न शत्रु ही कष्ट पहुँचाये। जिन गौओंकी सहायतासे उनका स्वामी देवताओंका यजन करने तथा दान देनेमें समर्थ होता है, उनके साथ वह चिरकालतक संयुक्त रहे।'

गावो भगो गाव इन्द्रो म इच्छाद्गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः।
इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामि हृदा मनसा चिदिन्द्रम्॥

'गौएँ हमारा मुख्य धन हों, इन्द्र हमें गोधन प्रदान करें तथा यज्ञोंकी प्रधान वस्तु सोमरसके साथ मिलकर गौओंका दूध ही उनका नैवेद्य बने। जिसके पास ये गौएँ हैं, वह तो एक प्रकारसे इन्द्र ही है। मैं अपने श्रद्धायुक्त मनसे गव्य पदार्थोंके द्वारा इन्द्र (भगवान्) का यजन करना चाहता हूँ।'

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित् कृणुथा सुप्रतीकम्।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु॥

'गौओ! तुम कृश शरीरवाले व्यक्तिको हृष्ट-पुष्ट कर देती हो एवं तेजोहीनको देखनेमें सुन्दर बना देती हो। इतना ही नहीं, तुम अपने मङ्गलमय शब्दसे हमारे घरोंको मङ्गलमय बना देती हो। इसीसे सभाओंमें तुम्हारे ही महान् यशका गान होता है।'

प्रजावतीः सूयवसे रुशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः।
मा व स्तेन ईशत माघशंसः परि वो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु॥

'गौओ! तुम बहुत-से बच्चे जनो, चरनेके लिये तुम्हें सुन्दर चारा प्राप्त हो तथा सुन्दर जलाशयमें तुम शुद्ध जल पीती रहो। तुम चोरों तथा दुष्ट हिंसक जीवोंके चंगुलमें न फँसो और रुद्रका शस्त्र तुम्हारी सब ओरसे रक्षा करे।'

हिङ्कृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात्।
दुहामश्विभ्यां पयो अघ्न्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय॥

'रँभानेवाली तथा ऐश्वर्योंका पालन करनेवाली यह गाय मनसे बछड़ेकी कामना करती हुई समीप आयी है। यह अवध्य गौ दोनों अश्विदेवोंके लिये दूध दे और वह बड़े सौभाग्यके लिये बढ़े।'

गवोपनिषद्

सौदास उवाच

त्रैलोक्ये भगवन् किंस्वित् पवित्रं कथ्यतेऽनघ।
यत् कीर्तयन् सदा मर्त्यः प्राप्नुयात् पुण्यमुत्तमम्॥

सौदास बोले—'भगवन्! निष्पाप महर्षे! तीनों लोकोंमें ऐसी पवित्र वस्तु कौन कही जाती है, जिसका नाम लेनेमात्रसे मनुष्यको सदा उत्तम पुण्यकी प्राप्ति हो सके।'

[गौओंकी महिमाके गूढ़ रहस्यको प्रकट करनेवाली विद्याके महान् विद्वान् महर्षि वसिष्ठने गौओंको नमस्कार करके राजा सौदाससे इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया—]

गावः सुरभिगन्धिन्यस्तथा गुग्गुलुगन्धयः।
गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत्॥

[वसिष्ठजी बोले—] 'राजन्! गौओंके शरीरसे अनेक प्रकारकी मनोरम सुगन्ध निकलती रहती है तथा बहुतेरी गौएँ गुग्गुलके समान गन्धवाली होती हैं। गौएँ समस्त प्राणियोंकी प्रतिष्ठा (आधार) हैं और गौएँ ही उनके लिये महान् मङ्गलकी निधि हैं।'

गावो भूतं च भव्यं च गावः पुष्टिः सनातनी।
गावो लक्ष्म्यास्तथा मूलं गोषु दत्तं न नश्यति॥

'गौएँ ही भूत और भविष्य हैं। गौएँ ही सदा रहनेवाली पुष्टिका कारण तथा लक्ष्मीकी जड़ हैं। गौओंको जो कुछ दिया जाता है, उसका पुण्य कभी नष्ट नहीं होता।'

अन्नं हि परमं गावो देवानां परमं हविः।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ॥

'गौएँ ही सर्वोत्तम अन्नकी प्राप्तिमें कारण हैं। वे ही देवताओंको उत्तम हविष्य प्रदान करती हैं। स्वाहाकार (देवयज्ञ) और वषट्कार (इन्द्रयाग)—ये दोनों कर्म सदा गौओंपर ही अवलम्बित हैं।'

गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।
गावो भविष्यं भूतं च गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः॥

'गौएँ ही यज्ञका फल देनेवाली हैं। उन्हींमें यज्ञोंकी प्रतिष्ठा है। गौएँ ही भूत और भविष्य हैं। उन्हींमें यज्ञ प्रतिष्ठित हैं अर्थात् यज्ञ गौओंपर ही निर्भर है।'

सायं प्रातश्च सततं होमकाले महाद्युते।
गावो ददति वै हौम्यमृषिभ्यः पुरुषर्षभ॥

'महातेजस्वी पुरुषप्रवर! प्रातःकाल और सायंकाल सदा होमके समय ऋषियोंको गौएँ ही हवनीय पदार्थ (घृत आदि) देती हैं।'

यानि कानि च दुर्गाणि दुष्कृतानि कृतानि च।
तरन्ति चैव पाप्मानं धेनुं ये ददति प्रभो॥

'प्रभो! जो लोग (नवप्रसूतिका दूध देनेवाली) गौका दान करते हैं, वे जो कोई भी दुर्गम संकट आनेवाले होते हैं उन सबसे, अपने किये हुए दुष्कर्मोंसे तथा समस्त पाप-समूहसे भी तर जाते हैं।'

एकां च दशगुर्दद्याद् दश दद्याच्च गोशती।
शतं सहस्रगुर्दद्यात् सर्वे तुल्यफला हि ते॥

'जिसके पास दस गौएँ हों, वह एक गौका दान करे। जो सौ गायें रखता हो, वह दस गौओंका दान करे और जिसके पास एक हजार गौएँ मौजूद हों, वह सौ गौएँ दानमें दे दे तो इन सबको बराबर ही फल मिलता है।'

अनाहिताग्निः शतगुरयज्वा च सहस्रगुः।
समृद्धो यश्च कीनाशो नार्घ्यमर्हन्ति ते त्रयः॥

'जो सौ गौओंका स्वामी होकर भी अग्निहोत्र नहीं करता, जो हजार गौएँ रखकर भी यज्ञ नहीं करता तथा जो धनी होकर भी कृपणता नहीं छोड़ता—ये तीनों मनुष्य अर्घ्य (सम्मान) पानेके अधिकारी नहीं हैं।'

कपिलां ये प्रयच्छन्ति सवत्सां कांस्यदोहनाम्।
सुव्रतां वस्त्रसंवीतामुभौ लोकौ जयन्ति ते॥

'जो उत्तम लक्षणोंसे युक्त कपिला गौको वस्त्र ओढ़ाकर बछड़ेसहित उसका दान करते हैं और उसके साथ दूध दुहनेके लिये एक कांस्यका पात्र भी देते हैं, वे इहलोक और परलोक दोनोंपर विजय पाते हैं।'

युवानमिन्द्रियोपेतं शतेन शतयूथपम्।
गवेन्द्रं ब्राह्मणेन्द्राय भूरिशृङ्गमलंकृतम्॥
वृषभं ये प्रयच्छन्ति श्रोत्रियाय परंतप।
ऐश्वर्यं तेऽधिगच्छन्ति जायमानाः पुनः पुनः॥

'शत्रुओंको संताप देनेवाले नरेश! जो लोग जवान, सभी इन्द्रियोंसे सम्पन्न, सौ गायोंके यूथपति, बड़ी-बड़ी सींगोंवाले गवेन्द्र वृषभ (साँड़) को सुसज्जित करके सौ गायोंसहित उसे श्रेष्ठ श्रोत्रिय ब्राह्मणको दान करते हैं, वे जब-जब इस संसारमें जन्म लेते हैं, तब-तब महान् ऐश्वर्यके भागी होते हैं।'

नाकीर्तयित्वा गाः सुप्यात् तासां संस्मृत्य चोत्पतेत्।
सायंप्रातर्नमस्येच्च गास्ततः पुष्टिमाप्नुयात्॥

'गौओंका नाम-कीर्तन किये बिना न सोये। उनका स्मरण करके ही उठे और सबेरे-शाम उन्हें नमस्कार करे। इससे मनुष्यको बल एवं पुष्टि प्राप्त होती है।'

गवां मूत्रपुरीषस्य नोद्विजेत कथंचन।
न चासां मांसमश्नीयाद् गवां पुष्टिं तथाप्नुयात्॥

'गौओंके मूत्र और गोबरसे किसी प्रकार उद्विग्न न हो—घृणा न करे और उनका मांस न खाय। इससे मनुष्यको पुष्टि प्राप्त होती है।'

गाश्च संकीर्तयेन्नित्यं नावमन्येत तास्तथा।
अनिष्टं स्वप्नमालक्ष्य गां नरः सम्प्रकीर्तयेत्॥

'प्रतिदिन गौओंका नाम ले, उनका कभी अपमान न करे। यदि बुरे स्वप्न दिखायी दें तो मनुष्य गोमाताका नाम ले।'

गोमयेन सदा स्नायात् करीषे चापि संविशेत्।
श्लेष्ममूत्रपुरीषाणि प्रतिघातं च वर्जयेत्॥

'प्रतिदिन शरीरमें गोबर लगाकर स्नान करे, सूखे हुए गोबरपर बैठे। उसपर थूक न फेंके, मल-मूत्र न छोड़े तथा गौओंके तिरस्कारसे बचता रहे।'

X X X

घृतेन जुहुयादग्निं घृतेन स्वस्ति वाचयेत्।
घृतं दद्याद् घृतं प्राशेद् गवां पुष्टिं सदाश्नुते॥

'अग्निमें घृतसे हवन करे। घृतसे ही स्वस्तिवाचन कराये। घृतका दान करे और स्वयं भी गौका घृत ही खाय। इससे मनुष्य सदा गौओंकी पुष्टि एवं वृद्धिका अनुभव करता है।'

गोमत्या विद्यया धेनुं तिलानामभिमन्त्र्य यः।
सर्वरत्नमयीं दद्यान्न स शोचेत् कृताकृते॥

'जो मनुष्य सब प्रकारके रत्नोंसे युक्त तिलकी धेनुको **'गोमाँ अग्नेऽविमाँ अश्वी'** (ऋग्वेद ४। २। ५) इत्यादि गोमती-मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके ब्राह्मणको दान करता है, वह किये हुए शुभाशुभ कर्मके लिये शोक नहीं करता।'

गावो मामुपतिष्ठन्तु हेमशृंग्यः पयोमुचः।
सुरभ्यः सौरभेय्यश्च सरितः सागरं यथा॥

'जैसे नदियाँ समुद्रके पास जाती हैं, उसी तरह सोनेसे मढ़ी हुई सींगोंवाली, दूध देनेवाली सुरभी और सौरभेयी गौएँ मेरे निकट आयें।'

गा वै पश्याम्यहं नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा।
गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्॥

'मैं सदा गौओंका दर्शन करूँ और गौएँ मुझपर कृपादृष्टि करें। गौएँ हमारी हैं और हम गौओंके हैं। जहाँ गौएँ रहें, वहीं हम रहें।'

एवं रात्रौ दिवा चापि समेषु विषमेषु च।
महाभयेषु च नरः कीर्तयन् मुच्यते भयात्॥

'जो मनुष्य इस प्रकार रातमें या दिनमें, सम अवस्थामें या विषम अवस्थामें तथा बड़े-से-बड़े भय आनेपर भी गोमताका नामकीर्तन करता है, वह भयसे मुक्त हो जाता है।'

गो-प्रदक्षिणा

गवां दृष्ट्वा नमस्कृत्य कुर्याच्चैव प्रदक्षिणम्। प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तद्वीपा वसुन्धरा॥
मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः। वृद्धिमाकांक्षता नित्यं गावः कार्याः प्रदक्षिणाः॥

'गोमाताका दर्शन एवं उन्हें नमस्कार करके उनकी परिक्रमा करे। ऐसा करनेसे सातों द्वीपोंसहित भूमण्डलकी प्रदक्षिणा हो जाती है। गौएँ समस्त प्राणियोंकी माताएँ एवं सारे सुख देनेवाली हैं। वृद्धिकी आकांक्षा करनेवाले मनुष्यको नित्य गौओंकी प्रदक्षिणा करनी चाहिये।'

गोमती-विद्या

गोमतीं कीर्तयिष्यामि सर्वपापप्रणाशिनीम् । तां तु मे वदतो विप्र शृणुष्व सुसमाहितः ॥
गावः सुरभयो नित्यं गावो गुग्गुलगन्धिकाः । गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं परम् ॥
अन्नमेव परं गावो देवानां हविरुत्तमम् । पावनं सर्वभूतानां रक्षन्ति च वहन्ति च ॥
हविषा मन्त्रपूतेन तर्पयन्त्यमरान् दिवि । ऋषीणामग्निहोत्रेषु गावो होमे प्रयोजिताः ॥
सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम् । गावः पवित्रं परमं गावो मङ्गलमुत्तमम् ॥
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावो धन्याः सनातनाः । (ॐ) नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च ॥
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः । ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधा स्थितम् ॥
एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरेकत्र तिष्ठति । देवब्राह्मणगोसाधुसाध्वीभिः सकलं जगत् ॥
धार्यते वै सदा तस्मात् सर्वे पूज्यतमाः सदा । यत्र तीर्थे सदा गावः पिबन्ति तृषिता जलम् ॥
उत्तरन्ति पथा येन स्थिता तत्र सरस्वती ॥

गवां हि तीर्थे वसतीह गङ्गा पुष्टिस्तथा तद्रजसि प्रवृद्धा ।
लक्ष्मीः करीषे प्रणतौ च धर्मस्तासां प्रणामं सततं च कुर्यात् ॥

(विष्णुधर्मोत्तरपु०, द्वि० खं० ४२ । ४९—५८)

[जलाधिनाथ वरुणके पुत्र पुष्कर-द्वीपके स्वामी सर्वशास्त्रोंके ज्ञाता पुष्कर भगवान् परशुरामके पूछनेपर इस विद्याका उपदेश करते हुए उनसे कहते हैं—] हे विप्रवर! अब मैं गोमती-विद्याका वर्णन कर रहा हूँ, यह गोमती-विद्या समस्त पापोंका समूल उन्मूलन करनेवाली है, इसे आप पूर्णतया एकाग्रचित्त होकर सुनें—

गौएँ नित्य सुरभिरूपिणी—गौओंकी प्रथम उत्पादिका माता एवं कल्याणमयी, पुण्यमयी, सुन्दर श्रेष्ठ गन्धवाली हैं। वे गुग्गुलके समान गन्धसे संयुक्त हैं। गायोंपर ही समस्त प्राणियोंका समुदाय प्रतिष्ठित है। वे सभी प्रकारके परम कल्याण अर्थात् धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षकी भी सम्पादिका हैं। गायें समस्त उत्कृष्ट अन्नोंके उत्पादनकी मूलभूता शक्ति हैं और वे ही सभी देवताओंके भक्ष्यभूत हविष्यान्न और पुरोडाश आदिकी भी सर्वोत्कृष्ट मूल उत्पादिका शक्ति हैं। ये सभी प्राणियोंको दर्शन-स्पर्शादिके द्वारा सर्वथा शुद्ध निर्मल एवं निष्पाप कर देती हैं। वे दुग्ध, दधि तथा घृत आदि अमृतमय पदार्थोंका क्षरण करती हैं तथा उनके वत्सादि समर्थ वृषभ बनकर सभी प्रकारके भारी बोझा ढोने और अन्न आदि उत्पादनका भार वहन करनेमें समर्थ होते हैं। साथ ही वेदमन्त्रोंसे पवित्रीकृत हविष्योंके द्वारा स्वर्गमें स्थित देवताओंतकको ये ही परितृप्त करती हैं। ऋषि-मुनियोंके यहाँ भी यज्ञों एवं पवित्र अग्निहोत्रादि कार्योंमें हवनीय द्रव्योंके लिये गौओंके ही घृत, दुग्ध आदि द्रव्योंका प्रयोग होता रहा है (अतः वे गायोंका विशेष श्रद्धा-भक्तिसे पालन करते रहे हैं)। जहाँ कोई भी शरणदाता नहीं मिलता है वहाँ विश्वके समस्त प्राणियोंके लिये गायें ही सर्वोत्तम शरण-प्रदात्री बन जाती हैं। पवित्र वस्तुओंमें गायें ही सर्वाधिक पवित्र हैं तथा सभी प्रकारके समस्त मङ्गलजात पदार्थोंकी कारणभूता हैं। गायें स्वर्ग प्राप्त करनेकी प्रत्यक्ष मार्गभूता सोपान हैं और वे निश्चित रूपसे तथा सदासे ही समस्त धन-समृद्धिकी मूलभूत सनातन कारण रही हैं। लक्ष्मीको अपने शरीरमें स्थान देनेवाली गौओंको नमस्कार। सुरभीके कुलमें उत्पन्न शुद्ध, सरल एवं सुगन्धियुक्त गौओंको नमस्कार। ब्रह्मपुत्री गौओंको नमस्कार। अन्तर्बाह्यसे सर्वथा पवित्र एवं सुदूरतक समस्त वातावरणको शुद्ध एवं पवित्र करनेवाली गौओंको बार-बार नमस्कार।

वास्तवमें गौएँ और ब्राह्मण दोनों एक कुलके ही प्राणी हैं, दोनोंमें विशुद्ध सत्त्व विद्यमान रहता है। ब्राह्मणोंमें

वेदमन्त्रोंकी स्थिति है तो गौओंमें यज्ञके साधनभूत हविष्यकी। इन दोनोंके द्वारा ही यज्ञ सम्पन्न होकर विष्णु आदि देवताओंसे लेकर समस्त चराचर प्राणियोंका आप्यायन होता है। यह सारा विश्व शुद्ध सत्त्वसे परिपूर्ण देवता, ब्राह्मण, गाय, साधु-संत-महात्मा तथा पतिव्रता सती-साध्वी, सदाचारिणी नारियोंके पुण्योंके आधारपर ही टिका हुआ है। ये ही धार्मिक प्राणी सम्पूर्ण विश्वको सदा धारण करते हैं, अतः ये सदा पूजनीय एवं वन्दनीय हैं। जिस जलराशिमें प्यासी गायें जल पीकर अपनी तृषा शान्त करती हैं और जहाँ जिस मार्गसे वे जलराशिको लाँघती हुई नदी आदिको पार करती हैं, वहाँ-वहाँ गङ्गा, यमुना, सिन्धु, सरस्वती आदि नदियाँ या तीर्थ निश्चित रूपसे विद्यमान रहते हैं। गौ-रूपी तीर्थमें गङ्गा आदि सभी नदियाँ तथा तीर्थ निवास करते हैं और गौओंके रजःकणमें सभी प्रकारकी निरन्तर वृद्धि होनेवाली धर्म-राशि एवं पुष्टिका निवास रहता है। गायोंके गोबरमें साक्षात् भगवती लक्ष्मी निरन्तर निवास करती हैं और इन्हें प्रणाम करनेमें चतुष्पाद धर्म सम्पन्न हो जाता है। अतः बुद्धिमान् एवं कल्याणकामी पुरुषको गायोंको निरन्तर प्रणाम करना चाहिये।

गौओंके लिये नमस्कार

नमस्ते जायमानायै जाताया उत ते नमः। बालेभ्यः शफेभ्यो रूपायाघ्न्ये ते नमः॥

'हे अवध्य गौ! उत्पन्न होते समय तुम्हें नमस्कार और उत्पन्न होनेपर भी तुम्हें प्रणाम। तुम्हारे रूप (शरीर), रोम और खुरोंको भी प्रणाम।'

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च। नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥

'श्रीमती गौओंको नमस्कार। कामधेनुकी संतानोंको नमस्कार। ब्रह्माजीकी पुत्रियोंको नमस्कार। पावन करनेवाली गौओंको नमस्कार।'

पञ्च गावः समुत्पन्ना मथ्यमाने महोदधौ। तासां मध्ये तु या नन्दा तस्यै देव्यै नमो नमः॥
सर्वकामदुघे देवि सर्वतीर्थाभिषेचिनि। पावनि सुरभिश्रेष्ठे देवि तुभ्यं नमो नमः॥

'क्षीरसमुद्रके मथे जानेपर उसमेंसे पाँच गौएँ प्रकट हुईं, उनमेंसे जो नन्दा नामकी श्रेष्ठ गौ है, उस देवीको बारंबार नमस्कार है। हे श्रेष्ठ सुरभिदेवी! तुम समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली तथा समस्त तीर्थोंमें स्नान करनेवाली हो। अतः हे पवित्र करनेवाली देवि! तुम्हें बार-बार नमस्कार है।'

यया सर्वमिदं व्याप्तं जगत् स्थावरजङ्गमम्। तां धेनुं शिरसा वन्दे भूतभव्यस्य मातरम्॥

'जिस गौसे यह स्थावर-जंगम अखिल विश्व व्याप्त है, उस भूत और भविष्यकी जननी गौको मैं सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ।'

गोशुश्रूषा

गाश्च शुश्रूषते यश्च समन्वेति च सर्वशः। तस्मै तुष्टाः प्रयच्छन्ति वरानपि सुदुर्लभान्॥
द्रुह्येन्न मनसा वापि गोषु नित्यं सुखप्रदः। अर्चयेत सदा चैव नमस्कारैश्च पूजयेत्॥
दान्तः प्रीतमना नित्यं गवां व्युष्टिं तथाश्नुते।

'जो पुरुष गौओंकी सेवा करता है और सब प्रकारसे उनका अनुगमन करता है, उसपर संतुष्ट होकर गौएँ उसे अत्यन्त दुर्लभ वर प्रदान करती हैं। गौओंके साथ मनसे भी कभी द्रोह न करे, उन्हें सदा सुख पहुँचाये, उनका यथोचित सत्कार करे और नमस्कार आदिके द्वारा उनका पूजन करता रहे। जो मनुष्य जितेन्द्रिय और प्रसन्नचित्त होकर नित्य गौओंकी सेवा करता है, वह समृद्धिका भागी होता है।'

गौका विश्वरूप

[श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने अर्जुनको अपने विश्वरूपका दर्शन कराया। सम्पूर्ण विभूतियोंसहित चराचर जगत्, त्रिभुवन-त्रैलोक्य और सारे देवी-देवताओंके दर्शन अर्जुनको भगवान् श्रीकृष्णमें हुए।

*अपने शास्त्रोंके अनुसार हिन्दूधर्ममें तैंतीस करोड़ देवता माने गये हैं। सम्पूर्ण विश्व—चराचर जगत्के जड-चेतन सभी अवयवोंके अधिष्ठातृ देवता होते हैं और इन सभी देवी-देवताओंका निवास गौ मातामें होनेके कारण गौ विश्वरूप है। इतना ही नहीं, यहाँतक कहा गया है कि **'गावो विश्वस्य मातरः'** अर्थात् गाय चराचर जगत्की माता है यानी अखिल विश्वका आधार गौ माता ही है। यही कारण है कि केवल गौकी पूजा एवं सेवासे सम्पूर्ण देवी-देवताओंका आराधन हो जाता है।*

*अतः यहाँ वेदों, स्मृतियों तथा पुराणोंमें उपलब्ध गौके विश्वरूपका वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है, साथ ही गोमहिमा और गोसेवाकी महिमाका भी दिग्दर्शन कराया गया है—**सम्पादक**]*

गौका विश्वरूप

[सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः]

वेदोंमें

प्रजापतिश्च परमेष्ठी च शृङ्गे इन्द्रः शिरो अग्निर्ललाटं यमः कृकाटम्॥
सोमो राजा मस्तिष्को द्यौरुत्तरहनुः पृथिव्यधरहनुः॥
विद्युज्जिह्वा मरुतो दन्ता रेवतीर्ग्रीवाः कृत्तिका स्कन्धा घर्मो वहः॥
विश्वं वायुः स्वर्गो लोकः कृष्णद्रं विधरणी निवेष्यः॥
श्येनः क्रोडोऽन्तरिक्षं पाजस्यं बृहस्पतिः ककुद् बृहतीः कीकसाः॥
देवानां पत्नीः पृष्टय उपसदः पर्शवः॥
मित्रश्च वरुणश्चांसौ त्वष्टा चार्यमा च दोषणी महादेवो बाहू॥
इन्द्राणी भसद् वायुः पुच्छं पवमानो बालाः॥
ब्रह्म च क्षत्रं च श्रोणी बलमूरू॥

प्रजापति और परमेष्ठी इसके (गौके) सींग, इन्द्र सिर, अग्नि ललाट और यम गलेकी संधि है। नक्षत्रोंके राजा चन्द्रमा मस्तिष्क, द्युलोक ऊपरका जबड़ा और पृथ्वी नीचेका जबड़ा है। बिजली जीभ, मरुत् देवता दाँत, रेवती नक्षत्र गला, कृत्तिका कंधे और ग्रीष्म ऋतु कंधेकी हड्डी है। वायु देवता इसके समस्त अङ्ग हैं, इसका लोक स्वर्ग है और पृष्ठवंशकी हड्डी रुद्र है। श्येन पक्षी (बाज) इसकी छाती, अन्तरिक्ष इसका बल, बृहस्पति इसका कूबड़ और बृहती नामके छन्द इसकी छातीकी हड्डियाँ हैं। देवाङ्गनाएँ इसकी पीठ और उनकी परिचारिकाएँ पसलीकी हड्डियाँ हैं। मित्र और वरुण नामके देवता कंधे हैं, त्वष्टा और अर्यमा हाथ हैं तथा महादेव इसकी भुजाएँ हैं। इन्द्रपत्नी इसका पिछला भाग है, वायु देवता इसकी पूँछ और पवमान इसके रोयें हैं। ब्राह्मण और क्षत्रिय इसके नितंब और बल जाँघें हैं।

धाता च सविता चाष्ठीवन्तौ जङ्घा गन्धर्वा अप्सरसः कुष्ठिका अदितिः शफाः॥
चेतो हृदयं यकृन्मेधा व्रतं पुरीतत्॥
क्षुत्कुक्षिरिरा वनिष्ठुः पर्वताः प्लाशयः॥

विधाता और सविता घुटनेकी हड्डियाँ हैं, गन्धर्व पिंडलियाँ, अप्सराएँ छोटी हड्डियाँ और देवमाता अदिति खुर हैं। चित्त हृदय, बुद्धि यकृत् और व्रत ही पुरीतत् नामकी नाड़ी है। भूख ही पेट, देवी सरस्वती आँतें और पर्वत भीतरी भाग हैं।

क्रोधो वृक्कौ मन्युराण्डौ प्रजा शेपः॥
नदी सूत्री वर्षस्य पतयः स्तना: स्तनयित्नुरूधः॥
विश्वव्यचाश्चर्मौषधयो लोमानि नक्षत्राणि रूपम्॥

देवजना गुदा मनुष्या आन्त्राण्यत्रा उदरम्॥
रक्षांसि लोहितमितरजना ऊबध्यम्॥
अभ्रं पिबो मज्जा निधनम्॥
अग्निरासीन उत्थितोऽश्विना॥
इन्द्रः प्राङ् तिष्ठन् दक्षिणा तिष्ठन् यमः॥

क्रोध गुर्दे, मन्यु (शोक) अण्डकोश और प्रजा जननेन्द्रिय है। नदी गर्भाभय, वर्षाके अधिकारी देव स्तन हैं तथा गड़गड़ाहट करनेवाले बादल ही दुग्धकोष हैं। विश्वव्यापिनी शक्ति चमड़ी, ओषधियाँ रोयें और नक्षत्र इसके रूप हैं। देवगण गुदा, मनुष्य आँतें एवं यक्ष पेट हैं। राक्षस रुधिर एवं दूसरे प्राणी आमाशय हैं। आकाश स्थूलता और मृत्यु मज्जा है। बैठनेके समय यह अग्निरूप है और उठते समय अश्विनीकुमार। पूर्वकी ओर खड़े होते समय इन्द्र और दक्षिणकी ओर खड़े होनेपर यमराज है।

प्रत्यङ् तिष्ठन् धातोदङ् तिष्ठन्त्सविता॥
तृणानि प्राप्तः सोमो राजा॥

पश्चिमी ओर खड़े होते समय विधाता और उत्तरकी ओर खड़े होते समय यही सविता देवता है। घास चरते समय यही नक्षत्रोंका राजा चन्द्रमा है।

मित्र ईक्षमाण आवृत्त आनन्दः॥
युज्यमानो वैश्वदेवो युक्तः प्रजापतिर्विमुक्तः सर्वम्॥
एतद्वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम्॥
उपैनं विश्वरूपाः सर्वरूपाः पशवस्तिष्ठन्ति य एवं वेद॥

(अथर्व० ९। ७। १—२६)

देखते समय यह मित्र देवता है और पीठ फेरते समय आनन्द है। हल अथवा गाड़ीमें जोतनेके समय यह (बैल) विश्वेदेव, जोत दिये जोनेपर प्रजापति और जब खुला हुआ रहता है उस समय यह सब कुछ बन जाता है। यही विश्वरूप अथवा सर्वरूप है और यही गोरूप भी है। जिसको इस विश्वरूपका यथार्थ ज्ञान होता है उसके पास विविध आकारके अनेक पशु रहते हैं।

इस सूक्तमें गौका तथा बैलका विश्वरूप बताया गया है। जिस प्रकार भगवद्गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने अपने विश्वरूपका वर्णन किया है उसी प्रकार गौके भी विश्वरूपका इस सूक्तमें वर्णन है। संस्कृतके प्रसिद्ध पाश्चात्त्य विद्वान् ग्रिफिथ महोदय कहते हैं कि इस सूक्तमें आदर्श बैल और गायकी प्रशंसा की गयी है।

इस सूक्तपर कई दृष्टियोंसे विचार किया जा सकता है; परंतु यहाँ केवल एक-दो मुख्य बातें बतलानी हैं। सम्पूर्ण सूक्तके सभी अंशोंपर विचार करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। इस सूक्तके विचारणीय अंश नीचे दिये जाते हैं—

(१) ब्राह्मण और क्षत्रिय विश्वरूपिणी गौके नितंब हैं। (मन्त्र ९)
(२) गन्धर्व पिंडलियाँ और अप्सराएँ छोटी हड्डियाँ हैं। (मन्त्र १०)
(३) देवता इसकी गुदा हैं, मनुष्य आँतें और अन्य प्राणी आमाशय हैं। (मन्त्र १६)
(४) राक्षस रक्त एवं इतर मनुष्य पेट हैं। (मन्त्र १७)

उपर्युक्त मन्त्रोंमें यह भाव दिखलाया गया है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा इतर लोग अर्थात् वैश्य, शूद्र, निषाद, गन्धर्व, देवता, अप्सराएँ, मनुष्यमात्र, राक्षस एवं अन्य सब प्राणी गो-रूप ही हैं। सम्पूर्ण जनता हृदयसे समझे कि हम सब मनुष्य गोमाताके ही अङ्ग हैं—इसीलिये इन मन्त्रोंकी अवतारणा की गयी है। इस प्रकार हमलोग गोमाताके शरीरके साथ अपनी एकरूपता देखना सीखें। गौके शरीरको कष्ट होनेपर वह कष्ट हमींको होगा—यह भाव मनमें धारण करें। यदि कोई मनुष्य गौको कष्ट देता है या उसे काटता है या और किसी भी तरहसे दुःख देता है तो वह केवल गौको ही दुःख देता है तथा गौके दुःखी रहनेपर भी हम सब सुखी रह सकते हैं—यह हीन भाव मनसे हटा दें। गौका हमारे साथ अवयवी और अवयवका सम्बन्ध है। हम गौके ही अङ्ग हैं; इसलिये जो दुःख गौको मिलता है, वह हमींको मिलता है—ऐसा मानना चाहिये और इसी भावनासे गौका पालन तथा रक्षण करना चाहिये। दूसरे शब्दोंमें स्वयं अपने ऊपर दुःख आनेपर जिस लगनके साथ उसका प्रतिकार किया जाता है उसी तीव्रताके साथ गौके कष्टोंको दूर करनेकी चेष्टा होनी चाहिये।

गौ एक निरा दूध देनेवाला पशु ही नहीं है, प्रत्युत वह अपने कुटुम्बका हकदार है, या यों कहिये कि मालिक

है और हम उसके परिवारके लोग हैं—यह भाव सदा मनमें जीवित और जाग्रत् रहना चाहिये।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, निषाद, राक्षस आदि सभी जातिके लोगोंमें यह विचार जाग्रत् रहना चाहिये। ऐसा होनेसे सम्पूर्ण जगतीतलपर गोमाताकी पूजा होने लगेगी।

यह सम्पूर्ण जगत् ही गोरूप अर्थात् गायका ही रूप है, इसलिये गौके साथ किसी एक पदार्थकी तुलना हो ही नहीं सकती। अन्य सभी पदार्थोंको विविध उपमाएँ दी जा सकती हैं; केवल गौ ही ऐसा प्राणी है, जो अनुपम है; क्योंकि वह प्राणीमात्रकी निरूपम माता है, मानव-वंशोंका पालन करनेवाली है और मानवमात्र उसके अवयव हैं। पाठक यदि विचार करेंगे और गौके उपकारोंका मनन करेंगे तो वेदका यह कथन ठीक तरहसे उनकी समझमें आ सकता है।

यहाँ प्रश्न यह हो सकता है कि उपर्युक्त वर्णनसे वेदने किस बातकी शिक्षा दी है? इस प्रश्नके उत्तरमें निवेदन है कि वेदने इस सूक्तके द्वारा अहिंसाका उत्तमोत्तम उपदेश दिया है। मनुष्य तो क्या, कोई भी प्राणी अपने-आपकी हिंसा कदापि नहीं करेगा। सिंह या अन्य हिंसक जन्तु दूसरे जीवोंको मारकर खा जाते हैं। राक्षस भी मनुष्यादि प्राणियोंको खा जाते हैं। परंतु दूसरेके मांसपर निर्वाह करनेवाले ये क्रूर प्राणी अत्यधिक भूख लगनेपर भी अपनी ही देहके अवयवोंको कभी काटकर नहीं खाते।

अत: इस स्वाभाविक प्रवृत्तिको लेकर ही वेद मनुष्योंको इस सूक्तके द्वारा गाय और बैलके मांससे पूर्णतया निवृत्त करना चाहता है। यह बात उपर्युक्त वर्णनसे स्पष्ट हो जाती है।

जब सम्पूर्ण हृदयसे मनुष्य अपने-आपको गौके शरीरके अवयव मानने लगेंगे तब वे लोग गौ या बैलका मांस किस तरह खा सकेंगे; क्योंकि कोई भी जीव अपने शरीरका मांस नहीं खाता। औरोंकी तो बात ही क्या, निरे आमिषभोजी अथवा नरमांसभोजी मनुष्य भी अपने शरीरका मांस नहीं खाते। इसलिये जो मनुष्य अपने-आपको गौके शरीरका अवयव मानेगा, वह गोमांस-भक्षणसे पूर्णतया निवृत्त होगा ही।

देखिये, कितनी प्रबल युक्तिसे वेदने लोगोंको—मांसभोजी राक्षस-श्रेणीके लोगोंको भी निरामिषभोजी बनानेका यत्न किया है। यह इतनी प्रबल युक्ति है कि यदि इस प्रकारका विचार मनमें सदाके लिये स्थिर हो जाय तो कभी कोई गोमांस खाये ही नहीं। इतनी प्रबल युक्ति देनेपर भी कई पाश्चात्त्य विद्वान् यह मानते हैं कि वैदिक कालमें गोमांस खानेकी प्रथा थी और बैलका भी मांस खाया जाता था। उन लोगोंसे हमारी प्रार्थना है कि वे इस प्रबल युक्तिका अधिक विचारपूर्वक मनन करें और इसके बाद अपना मत स्थिर करें।

गौ मुझसे भिन्न नहीं, मैं उसके शरीरका एक भाग हूँ; इसलिये मुझे जिस प्रकार अपनी रक्षा करनी चाहिये, उसी प्रकार गौकी भी रक्षा अवश्य करनी चाहिये—यह कितना उच्चतम उपदेश है। पाठक इस उपदेशका महत्त्व समझें।

दुराचारी मनुष्य भी जिस समय किसी स्त्रीको 'माँ' कहता है, उस समय उसकी दृष्टिमें तत्काल पवित्रता आ जाती है। किसीको माता कहनेका तात्पर्य ही यह है कि उसे पवित्रताकी दृष्टिसे देखा जाय।

गौको माता कहनेका अर्थ यही है कि उसे हम पवित्र एवं पूज्य दृष्टिसे देखें। 'गौ हमारी परम पूजनीय, वन्दनीय एवं पालनीय माता है'—यह भाव हमें हर समय जाग्रत् रखना चाहिये। पाठक इस सूक्तका मनन इसी दृष्टिसे करें। इन्द्रादि देवगण जीवित और जाग्रत् गोमाताके देहमें हैं। जहाँ इन्द्रादि देव रहते हैं, वहीं स्वर्ग है अर्थात् गौ ही स्वर्गलोक है—यही भाव पूर्वोक्त सूक्तके चतुर्थ मन्त्रमें कहा गया है।

गौको माता कहनेवाले कुछ लोग गौके शरीरमें नाना देवताओंका निवास मानते हैं; किंतु यह सब मानते हुए भी उनका आचरण ऐसा होता है मानो वे यह कुछ भी नहीं मानते। इसका कारण उनका धर्मविषयक अज्ञान ही है। यदि वेदका यह उपदेश उनके मनमें जाग्रत् रहेगा तो वे गौकी रक्षा भलीभाँति कर सकेंगे। गौके जिस गौरवका वर्णन इस सूक्तमें हुआ है, वह गौरव जिस कालमें जनताके मनोंमें रहा होगा, उस कालमें गौका वध असम्भव था—इस बातको अधिक विस्तारसे कहनेकी आवश्यकता नहीं है।

वेदोंके समान ही विभिन्न इतिहास-पुराणोंमें भी गौके विश्वरूपके अलग-अलग वर्णन मिलते हैं। उनमेंसे कुछको यहाँ दिया जा रहा है—

बृहत्पराशरस्मृतिमें

शृंगमूले स्थितो ब्रह्मा शृंगमध्ये तु केशवः।
शृंगाग्रे शंकरं विद्यात् त्रयो देवाः प्रतिष्ठिताः॥
शृंगाग्रे सर्वतीर्थानि स्थावराणि चराणि च।
सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः॥
ललाटाग्रे स्थिता देवी नासामध्ये तु षण्मुखः।
कम्बलाश्वतरौ नागौ तत्कर्णाभ्यां व्यवस्थितौ॥
स्थितौ तस्याश्च सौरभ्याश्चक्षुषोः शशिभास्करौ।
दन्तेषु वसवश्चाष्टौ जिह्वायां वरुणः स्थितः॥
सरस्वती च हुंकारे यमयक्षौ च गण्डयोः।
ऋषयो रोमकूपेषु प्रस्रावे जाह्नवीजलम्॥
कालिन्दी गोमये तस्या अपरा देवतास्तथा।
अष्टाविंशतिदेवानां कोट्यो लोमसु ताः स्थिताः॥
उदरे गार्हपत्योऽग्निर्हृदये दक्षिणस्तथा।
मुखे चाहवनीयस्तु सभ्यावसथ्यौ च कुक्षिषु॥
एवं यो वर्तते गोषु ताडनक्रोधवर्जितः।
महतीं श्रियमाप्नोति स्वर्गलोके महीयते॥

(५।३४—४१)

गौओंके सींगोंके मूलमें ब्रह्माजी और दोनों सींगोंके मध्यमें भगवान् नारायणका निवास है। सींगके शिरोभागमें भगवान् शिवका निवास जानना चाहिये। इस प्रकार ये तीनों देवता गौके सींगमें प्रतिष्ठित हैं। इसके अतिरिक्त सींगके अग्रभागमें चर तथा अचर सभी तीर्थ विद्यमान रहते हैं। इसी प्रकार सभी देवता गौके शरीरमें निवास करते हैं, अतः गौ सर्वदेवमयी है। गौके ललाटके अग्रभागमें देवी पार्वती तथा नाकके मध्यमें कुमार कार्तिकेयका निवास है। गौके दोनों कानोंमें कम्बल और अश्वतर नामके दो नाग निवास करते हैं और उस सुरभी गौके दाहिनी आँखमें सूर्य और बायीं आँखमें चन्द्रमाका निवास है। दाँतोंमें आठों वसु और जिह्वामें भगवान् वरुण प्रतिष्ठित हैं। गौके हुंकारमें भगवती सरस्वती निवास करती हैं और गण्डस्थलों (गाल)-में यम और यक्ष निवास करते है। गौके सभी रोमकूपोंमें ऋषिगणोंका निवास है तथा गोमूत्रमें भगवती गङ्गाके पवित्र जलका निवास है और गोमय (गोबर)-में भगवती यमुना तथा सभी देवता प्रतिष्ठित हैं। अट्ठाईस करोड़ देवता उसके रोमकूपोंमें स्थित हैं। गौके उदर-देशमें गार्हपत्य अग्निका निवास है और हृदयमें दक्षिणाग्निका निवास है। मुखमें आहवनीय नामकी अग्नि तथा कुक्षियोंमें सभ्य एवं आवसथ्य नामक अग्नियाँ निवास करती हैं। इस प्रकार गायके शरीरमें सभी देवताओंको स्थित समझकर जो कभी उनके ऊपर क्रोध तथा प्रताडना नहीं करता है वह महान् ऐश्वर्यको प्राप्त करता है और स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठा प्राप्त करता है।

पद्मपुराणमें

गोमुखे चाश्रिता वेदाः सषडङ्गपदक्रमाः॥
शृंगयोश्च स्थितौ नित्यं सहैव हरकेशवौ।
उदरेऽवस्थितः स्कन्दः शीर्षे ब्रह्मा स्थितः सदा॥
वृषध्वजो ललाटे च शृंगाग्र इन्द्र एव च।
कर्णयोरश्विनौ देवौ चक्षुषोः शशिभास्करौ॥
दन्तेषु गरुडो देवो जिह्वायां च सरस्वती।
अपाने सर्वतीर्थानि प्रस्रावे चैव जाह्नवी॥
ऋषयो रोमकूपेषु मुखतः पृष्ठतो यमः।
धनदो वरुणश्चैव दक्षिणं पार्श्वमाश्रितौ॥
वामपार्श्वे स्थिता यक्षास्तेजस्वन्तो महाबलाः।
मुखमध्ये च गन्धर्वा नासाग्रे पन्नगास्तथा॥
खुराणां पश्चिमे पार्श्वेऽप्सरसश्च समाश्रिताः।
गोमये वसते लक्ष्मीर्गोमूत्रे सर्वमङ्गला॥
पादाग्रे खेचरा वेद्या हम्भाशब्दे प्रजापतिः।
चत्वारः सागराः पूर्णा धेनूनां च स्तनेषु वै॥
गां च स्पृशति यो नित्यं स्नातो भवति नित्यशः।
अतो मर्त्यः प्रपुष्टैस्तु सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
गवां रजः खुरोद्भूतं शिरसा यस्तु धारयेत्।
स च तीर्थजले स्नातः सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(सृष्टिखण्ड ५७। १५६—१६५)

छहों अङ्गों, पदों और क्रमोंसहित सम्पूर्ण वेद गौओंके मुखमें निवास करते हैं। उनके सींगोंमें भगवान् श्रीशंकर और श्रीविष्णु सदा विराजमान रहते हैं। गौओंके

उदरमें कार्तिकेय, मस्तकमें ब्रह्मा, ललाटमें महादेवजी, सींगोंके अग्रभागमें इन्द्र, दोनों कानोंमें अश्विनीकुमार, नेत्रोंमें चन्द्रमा और सूर्य, दाँतोंमें गरुड, जिह्वामें सरस्वती देवी, अपान (गुदा)-में सम्पूर्ण तीर्थ, मूत्रस्थानमें गङ्गाजी, रोमकूपोंमें ऋषि, मुख और पृष्ठभागमें यमराज, दक्षिण पार्श्वमें वरुण और कुबेर, वाम पाश्वमें तेजस्वी और महाबली यक्ष, मुखके भीतर गन्धर्व, नासिकाके अग्रभागमें सर्प, खुरोंके पिछले भागमें अप्सराएँ स्थित हैं। गायके गोबरमें लक्ष्मी, गोमूत्रमें सर्वमङ्गला भगवती पार्वती, चरणोंके अग्रभागमें आकाशचारी देवता, रँभानेकी आवाजमें प्रजापति और थनोंमें भरे हुए चारों समुद्र प्रतिष्ठित हैं। जो मनुष्य प्रतिदिन स्नान करके गौका स्पर्श करता है, वह सब प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो गौओंके खुरसे उड़ी हुई धूलिको सिरपर धारण करता है वह मानो तीर्थके जलमें स्नान कर लेता है और सभी पापोंसे छुटकारा पा जाता है।

भविष्यपुराणमें

शृंगमूले गवां नित्यं ब्रह्मा विष्णुश्च संस्थितौ।
शृंगाग्रे सर्वतीर्थानि स्थावराणि चराणि च॥
शिवो मध्ये महादेवः सर्वकारणकारणम्।
ललाटे संस्थिता गौरी नासावंशे च षण्मुखः॥
कम्बलाश्वतरौ नागौ नासापुटसमाश्रितौ।
कर्णयोरश्विनौ देवौ चक्षुर्भ्यां शशिभास्करौ॥
दन्तेषु वसवः सर्वे जिह्वायां वरुणः स्थितः।
सरस्वती च कुहरे यमयक्षौ च गण्डयोः॥
संध्याद्वयं तथोष्ठाभ्यां ग्रीवायां च पुरन्दरः।
रक्षांसि ककुदे द्यौश्च पार्ष्णिकाये व्यवस्थिता॥
चतुष्पात्सकलो धर्मो नित्यं जंघासु तिष्ठति।
खुरमध्येषु गन्धर्वाः खुराग्रेषु च पन्नगाः॥
खुराणां पश्चिमे भागे राक्षसाः सम्प्रतिष्ठिताः।
रुद्रा एकादश पृष्ठे वरुणः सर्वसन्धिषु॥
श्रोणीतटस्थाः पितरः कपोलेषु च मानवाः।
श्रीरपाने गवां नित्यं स्वाहालंकारमाश्रिताः॥
आदित्या रश्मयो बालाः पिण्डीभूता व्यवस्थिताः।
साक्षाद्गङ्गा च गोमूत्रे गोमये यमुना स्थिता॥
त्रयस्त्रिंशद् देवकोट्यो रोमकूपे व्यवस्थिताः।
उदरे पृथिवी सर्वा सशैलवनकानना॥
चत्वारः सागराः प्रोक्ता गवां ये तु पयोधराः।
पर्जन्यः क्षीरधारासु मेघा विन्दुव्यवस्थिताः॥
जठरे गार्हपत्योऽग्निर्दक्षिणाग्निर्हृदि स्थितः।
कण्ठे आहवनीयोऽग्निः सभ्योऽग्निस्तालुनि स्थितः॥
अस्थिव्यवस्थिताः शैला मज्जासु क्रतवः स्थिताः।
ऋग्वेदोऽथर्ववेदश्च सामवेदो यजुस्तथा॥

(उत्तरपर्व ६९। २५—३७)

गौओंके सींगकी जड़में सदा ब्रह्मा और विष्णु प्रतिष्ठित हैं। सींगके अग्रभागमें चराचर समस्त तीर्थ प्रतिष्ठित हैं। सभी कारणोंके कारणस्वरूप महादेव शिव सींगोंके मध्यमें प्रतिष्ठित हैं। गौके ललाटमें गौरी, नासिकाके अस्थिभागमें भगवान् कार्तिकेय और नासिकाके दोनों पुटोंमें कम्बल तथा अश्वतर—ये दो नाग प्रतिष्ठित हैं। दोनों कानोंमें अश्विनीकुमार, नेत्रोंमें चन्द्र और सूर्य, दाँतोंमें आठों वसुगण, जिह्वामें वरुण, कण्ठदेशमें सरस्वती, गण्डस्थलोंमें यम और यक्ष, ओष्ठोंमें दोनों संध्याएँ, ग्रीवामें इन्द्र, ककुद् (मौर)-में राक्षस, पार्ष्णि-भागमें आकाश और जंघाओंमें चारों चरणोंसे धर्म सदा विराजमान रहता है। खुरोंके मध्यमें गन्धर्व, अग्रभागमें सर्प एवं पश्चिम-भागमें राक्षसगण प्रतिष्ठित हैं। गौके पृष्ठदेशमें एकादश रुद्र, सभी संधियोंमें वरुण, श्रोणितट (कमर)-में पितर, कपोलोंमें मानव तथा अपानमें स्वाहा-रूप अलंकारको आश्रित कर श्री अवस्थित हैं। आदित्यरश्मियाँ केश-समूहोंमें पिण्डीभूत हो अवस्थित हैं। गोमूत्रमें साक्षात् गङ्गा और गोमयमें यमुना स्थित हैं। रोमसमूहमें तैंतीस करोड़ देवगण प्रतिष्ठित हैं। उदरमें पर्वत और जंगलोंके साथ पृथ्वी अवस्थित है। चारों पयोधरोंमें चारों महासमुद्र स्थित हैं। क्षीरधाराओंमें पर्जन्य नामक देवता एवं क्षीरविन्दुओंमें मेघ नामक देवता अवस्थित हैं। जठरमें गार्हपत्याग्नि, हृदयमें दक्षिणाग्नि, कण्ठमें आहवनीयाग्नि और तालुमें सभ्याग्नि स्थित हैं। गौओंकी अस्थियोंमें पर्वत और मज्जाओंमें यज्ञ स्थित हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद—ये सभी वेद भी गौओंमें ही प्रतिष्ठित हैं।

ब्रह्माण्डपुराणमें
(गोसावित्री-स्तोत्र)

अखिल विश्वके पालक देवाधिदेव नारायण! आपके चरणोंमें मेरा प्रणाम है। पूर्वकालमें भगवान् व्यासदेवने जिस गोसावित्री-स्तोत्रको कहा था, उसीको मैं सुनाता हूँ। यह गौओंका स्तोत्र समस्त पापोंका नाश करनेवाला, सम्पूर्ण अभिलषित पदार्थोंको देनेवाला, दिव्य एवं समस्त कल्याणोंका करनेवाला है। गौके सींगोंके अग्रभागमें साक्षात् जनार्दन विष्णुस्वरूप भगवान् वेदव्यास रमण करते हैं। उसके सींगोंकी जड़में देवी पार्वती और सींगोंके मध्यभागमें भगवान् सदाशिव विराजमान रहते हैं। उसके मस्तकमें ब्रह्मा, कंधेमें बृहस्पति, ललाटमें वृषभारूढ भगवान् शंकर, कानोंमें अश्विनीकुमार तथा नेत्रोंमें सूर्य और चन्द्रमा रहते हैं। दाँतोंमें समस्त ऋषिगण, जीभमें देवी सरस्वती तथा वक्ष:स्थलमें एवं पिंडलियोंमें सारे देवता निवास करते हैं। उसके खुरोंके मध्यभागमें गन्धर्व, अग्रभागमें चन्द्रमा एवं भगवान् अनन्त तथा पिछले भागमें मुख्य-मुख्य अप्सराओंका स्थान है। उसके पीछेके भाग (नितंब)-में पितृगणोंका तथा भृकुटिमूलमें तीनों गुणोंका निवास बताया गया है। उसके रोमकूपोंमें ऋषिगण तथा चमड़ीमें प्रजापति निवास करते हैं। उसके थूहेमें नक्षत्रोंसहित द्युलोक, पीठमें सूर्यतनय यमराज, अपानदेशमें सम्पूर्ण तीर्थ एवं गोमूत्रमें साक्षात् गङ्गाजी विराजती हैं। उसकी दृष्टि, पीठ एवं गोबरमें स्वयं लक्ष्मीजी निवास करती हैं; नथुनोंमें अश्विनीकुमारोंका एवं होठोंमें भगवती चण्डिकाका वास है। गौओंके जो स्तन हैं, वे जलसे पूर्ण चारों समुद्र हैं; उनके रँभानेमें देवी सावित्री तथा हुंकारमें प्रजापतिका वास है। इतना ही नहीं, समस्त गौएँ साक्षात् विष्णुरूप हैं; उनके सम्पूर्ण अङ्गोंमें भगवान् केशव विराजमान रहते हैं।

स्कन्दपुराणमें

गौ सर्वदेवमयी और वेद सर्वगोमय हैं। गायके सींगोंके अग्रभागमें नित्य इन्द्र निवास करते हैं। हृदयमें कार्तिकेय, सिरमें ब्रह्मा और ललाटमें वृषभध्वज शंकर, दोनों नेत्रोंमें चन्द्रमा और सूर्य, जीभमें सरस्वती, दाँतोंमें मरुद्गण और साध्य देवता, हुंकारमें अङ्ग-पद-क्रमसहित चारों वेद, रोमकूपोंमें असंख्य तपस्वी और ऋषिगण, पीठमें दण्डधारी महाकाय महिषवाहन यमराज, स्तनोंमें चारों पवित्र समुद्र, गोमूत्रमें विष्णु-चरणसे निकली हुई, दर्शनमात्रसे पाप नाश करनेवाली श्रीगङ्गाजी, गोबरमें पवित्र सर्वकल्याणमयी लक्ष्मीजी, खुरोंके अग्रभागमें गन्धर्व, अप्सराएँ और नाग निवास करते हैं। इसके सिवा सागरान्त पृथ्वीमें जितने भी पवित्र तीर्थ हैं सभी गायोंके देहमें रहते हैं। विष्णु सर्वदेवमय हैं, गाय इन विष्णुके शरीरसे उत्पन्न हुई है, विष्णु और गाय—इन दोनोंके ही शरीरमें देवता निवास करते हैं। इसीलिये मनुष्य गायोंको सर्वदेवमयी मानते हैं।

(आवन्त्यखण्ड, रेवाखण्ड अ० ८३)

महाभारतमें

यदा च दीयते राजन् कपिला ह्यग्निहोत्रिणे।
तदा च शृंगयोस्तस्या विष्णुरिन्द्रश्च तिष्ठतः॥
चन्द्रवज्रधरौ चापि तिष्ठतः शृंगमूलयोः।
शृंगमध्ये तथा ब्रह्मा ललाटे गोर्वृषध्वजः॥
कर्णयोरश्विनौ देवौ चक्षुषी शशिभास्करौ।
दन्तेषु मरुतो देवा जिह्वायां वाक् सरस्वती॥
रोमकूपेषु मुनयश्चर्मण्येव प्रजापतिः।
निःश्वासेषु स्थिता वेदाः सषडङ्गपदक्रमाः॥
नासापुटे स्थिता गन्धाः पुष्पाणि सुरभीणि च।
अधरे वसवः सर्वे मुखे चाग्निः प्रतिष्ठितः॥
साध्या देवाः स्थिताः कक्षे ग्रीवायां पार्वती स्थिता।
पृष्ठे च नक्षत्रगणाः ककुद्देशे नभःस्थलम्॥
अपाने सर्वतीर्थानि गोमूत्रे जाह्नवी स्वयम्।
अष्टैश्वर्यमयी लक्ष्मीर्गोमये वसते सदा॥
नासिकायां सदा देवी ज्येष्ठा वसति भामिनी।
श्रोणीतटस्थाः पितरो रमा लाङ्गूलमाश्रिता॥
पार्श्वयोरुभयोः सर्वे विश्वेदेवाः प्रतिष्ठिताः।
तिष्ठत्युरसि तासां तु प्रीतः शक्तिधरो गुहः॥
जानुजङ्घोरुदेशेषु पञ्च तिष्ठन्ति वायवः।
खुरमध्येषु गन्धर्वाः खुराग्रेषु च पन्नगाः॥
चत्वारः सागराः पूर्णास्तस्या एव पयोधराः।

(आश्वमेधिकपर्व, वैष्णवधर्मपर्व, अध्याय ९२)

[भगवान् श्रीकृष्णने राजा युधिष्ठिरसे कहा—] राजन्!

जिस समय अग्निहोत्री ब्राह्मणको कपिला गौ दानमें दी जाती है, उस समय उसके सींगोंके ऊपरी भागमें विष्णु और इन्द्र निवास करते हैं। सींगोंकी जड़में चन्द्रमा और व्रजधारी इन्द्र रहते हैं। सींगोंके बीचमें ब्रह्मा तथा ललाटमें भगवान् शंकरका निवास होता है। दोनों कानोंमें अश्विनीकुमार, नेत्रोंमें चन्द्रमा और सूर्य, दाँतोंमें मरुद्गण, जिह्वामें सरस्वती, रोमकूपोंमें मुनि, चर्ममें प्रजापति एवं श्वासोंमें षडङ्ग, पद और क्रमसहित चारों वेदोंका निवास है।

नासिका-छिद्रोंमें गन्ध और सुगन्धित पुष्प, नीचेके ओठमें सब वसुगण तथा मुखमें अग्नि निवास करते हैं। कक्षमें साध्य देवता, गरदनमें पार्वती, पीठपर नक्षत्रगण, ककुद्के स्थानमें आकाश, अपानमें सारे तीर्थ, मूत्रमें साक्षात् गङ्गाजी तथा गोबरमें आठ ऐश्वर्योंसे सम्पन्न लक्ष्मीजी रहती हैं। नासिकामें परम सुन्दरी ज्येष्ठा देवी, नितम्बोंमें पितर एवं पूँछमें भगवती रमा रहती हैं। दोनों पसलियोंमें सभी विश्वेदेव स्थित हैं और छातीमें प्रसन्नचित्त शक्तिधारी कार्तिकेय रहते हैं। घुटनों और ऊरुओंमें पाँच वायु रहते हैं, खुरोंके मध्यमें गन्धर्व और खुरोंके अग्रभागमें सर्प निवास करते हैं। जलसे परिपूर्ण चारों समुद्र उसके चारों स्तन हैं।

गोस्तु मात्रा न विद्यते

एक बार देवी-देवता, ऋषि-मुनि एवं ऋतुओंमें वाद-विवाद होने लगा। आपसमें सभी एक-दूसरेसे अपनेको बड़ा एवं महान् मानते थे। आपसमें निर्णय न होनेपर वेद भगवान्के न्यायालयमें सभी उपस्थित हुए। अपनी-अपनी प्रतिष्ठाके अभिलाषी देवतादि भगवान् वेदके न्यायकी प्रतीक्षा करने लगे। भगवान् वेदके आदेशपर सभीने अपना-अपना मत प्रकट किया। किसीने कहा कि मैंने अपने सत्कर्तव्यसे समाजको ऊपर उठाया। किसीने कहा कि मैंने अपने कर्मसे लोगोंका उत्थान किया आदि।

इसका निर्णय देते हुए अथर्ववेद भगवान्ने कहा कि संसारमें केवल एक ही सबसे महान् एवं श्रेष्ठ है। उसीको चाहे गाय कहो या ऋषि या एक धाम या आशीर्वाद। अथवा संसारमें एक ऋतु या एक ही पूजनीय देव मानो जो समाजका सर्वप्रकारेण उत्थानकारी है। वैदिक मन्त्रमें प्रश्न इस प्रकार है—

को नु गौः क एकऋषिः किमु धाम का आशिषः।
यक्षं पृथिव्यामेकवृदेकर्तुः कतमो नु सः॥

(अथर्व० ८। ९। २५)

इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—सम्पूर्ण धरातल एक ही विश्वरूपी गौ है। सम्पूर्ण विश्वमें व्याप्त एक ही परमात्मा, परमेश्वर, परब्रह्म श्रीराम सबके ज्ञाता और द्रष्टा ऋषि हैं। क्योंकि—

रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि।
इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते॥

(श्रीरामपूर्वतापिन्युपनिषद् मं० ६)

सब विश्व मिलकर एक ही धाम है। एक ही स्थान है। सबके लिये एक ही आशीर्वाद है, जो सबको कल्याणके लिये ही दिया जाता है। एक ही ऋतु वह है, जो मानवोंमें शुभकर्म करनेके लिये अखण्ड उत्साह-रूपसे रहती है। यथा—

एको गौरेक एकऋषिरेकं धामैकधाशिषः।
यक्षं पृथिव्यामेकवृदेकर्तुर्नाति रिच्यते॥

(अथर्व० ८। ९। २६)

स्वतन्त्र-रूपसे भी वेदभगवान्ने पञ्चपरोपकारियोंमें श्रेष्ठ गायको ही माना है। अर्थात् गाय जीवोंके हर पहलुओंमें लाभकारी है। यथा—

चतुर्नमो अष्टकृत्वो भवाय दश कृत्वः पशुपते नमस्ते।
तवेमे पञ्च पशवो विभक्ता गावो अश्वाः पुरुषा अजावयः॥

(अथर्व० ११। २। ९)

हे पशुओंके स्वामी श्रीरामजी! ऐसे पशुओंको उत्पन्न करनेवाले देव! आपको चारों प्रहरमें साष्टाङ्ग एवं

दसों नाखूनसहित आपको प्रणाम है। आपके द्वारा उत्पन्न जो आपके लिये ही पाँच पशु नियुक्त किये गये हैं—गायें, घोड़े, पुरुष तथा बकरियाँ और भेड़ें—इन पाँचों श्रेष्ठ पशुओंमें आपने गायको प्रथम स्थानपर रखकर गायकी श्रेष्ठता प्रदर्शित की है। अतएव विश्वरूपी एक ही गौ है, जिसके दूधका विविध रूपसे सभी सेवन करते हैं तथा उसीसे हृष्ट-पुष्ट होते हैं। इस गौकी देखभाल करनेवाले स्वामी एक ही परब्रह्म श्रीरामजी हैं। इस गौके रहनेके लिये व्यापक विश्व ही गोशाला है और यही परमपद है।

ऋग्वेदमें ऐसा वर्णन है कि एक बार इन्द्र भगवान्ने समस्त सभाके बीच यह घोषणा की—'हे पोषण करनेवाले व्यापक तथा शत्रु-दलपर आक्रमण करनेवाले वीरवर! हमारे कर्म गौको प्रमुख स्थान देकर नियुक्त कीजिये और हमें कल्याणमय स्थितिमें कीजिये जिससे हम सभी सुखी रहें। अर्थात् गायकी महिमा समझाइये। वैदिक मन्त्र इस प्रकार है—

उत नो धियो गोअग्राः पूषन् विष्णवेवयावः। कर्ता नः स्वस्तिमतः॥

(ऋ० १।९०।५)

अन्य देवोंने भी प्रार्थना की कि हमें उस प्रकारकी बुद्धि प्रदान कीजिये, जिस प्रकार कि गायको प्रमुख स्थान देकर या आगे करके स्वयं अनुचर बनकर चलनेसे हम अजेय हों। यथा—

समिन्द्र राया समिषा रभेमहि सं वाजेभिः पुरुश्चन्द्रैरभिद्युभिः।
सं देव्या प्रमत्या वीरशुष्मया गोअग्रयाश्वावत्या रभेमहि॥

(ऋ० १।५३।५)

वेद भगवान्का निर्देश है कि यदि किसीको इस माया-राज्यमें सब प्रकारका वैभव प्राप्त करना है तो गौ माताकी प्रमुख-रूपसे सेवा करे। सायण भाष्यकारने भी इसको स्वीकार करते हुए लिखा है कि—'**स्तोतृभ्यो दानार्थमग्रे प्रमुखत एव गावो०**' अर्थात् गायोंका दान, गायोंकी पूजा-स्तुति प्रमुखरूपसे करनी चाहिये, क्योंकि दानोंमें गोदान प्रमुख है। इसीसे सभी देवता गौ माताके साथ अपनी पूजा करानेके लिये विविध अङ्गोंपर निवास करने लगे। गौ माताके मल-मूत्रकी महानता समाजमें सर्वकालमें विद्यमान रहे, इस उद्देश्यसे स्वयं श्रीलक्ष्मीजी भी गोबर एवं गोमूत्रमें वास करने लगीं।

यजुर्वेदका निम्न मन्त्र निर्देश करता है कि जिस ब्रह्मविद्याद्वारा मनुष्य परम सुखको प्राप्त करता है, उसकी सूर्यसे उपमा दी जा सकती है, उसी प्रकार द्युलोककी समुद्रसे तथा विस्तीर्ण पृथ्वीकी इन्द्रसे उपमा दी जा सकती है, किंतु प्राणीमात्रके अनन्त उपकारोंको अकेली सम्पन्न करनेवाली गौकी किसीसे उपमा नहीं दी जा सकती, गौ निरुपमा है, वास्तवमें गौके समान उपकारी जीव मनुष्यके लिये दूसरा कोई भी नहीं है—

ब्रह्म सूर्यसमं ज्योतिर्द्यौः समुद्रसमꣳसरः।
इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते॥

(यजुर्वेद २३।४८)

अतएव मानवोंको गौ माताकी सेवा करनेके लिये वेद भगवान्का आदेश हुआ। जो व्यक्ति सब प्रकारसे अपना कल्याण चाहता हो वह वेद भगवान्के आदेशका पालन करे। अस्तु!!

(मानसप्राज्ञ पं० श्रीरामराघवदासजी शास्त्री 'पुजारी')

जीवनदान सर्वश्रेष्ठ दान है

जीवितस्य प्रदानाद्धि नान्यद्दानं विशिष्यते। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन देयं प्राणाभिरक्षणम्॥
अहिंसा सर्वदेवेभ्यः पवित्रा सर्वदायिनी। दानं हि जीवितस्याहुः प्राणिनां परमं बुधाः॥

(वायुपुराण ८०।१७-१८)

जीवनदानसे बढ़कर और कोई भी उत्तम दान नहीं है, इसलिये सब प्रकारके प्रयत्नोंसे सबको प्राणदान देना चाहिये। अहिंसा सब फल देनेवाली है और परम पवित्र है। प्राणियोंको जीवनदान सर्वश्रेष्ठ दान है।

गौकी महिमा

महाभारतमें

गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किंचिदिहाच्युत॥
कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव।
गवां प्रशस्यते वीर सर्वपापहरं शिवम्॥
गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते।
अन्नमेव सदा गावो देवानां परमं हविः॥
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ।
गावो यज्ञस्य नेत्र्यो वै तथा यज्ञस्य ता मुखम्॥
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च।
अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः॥
तेजसा वपुषा चैव गावो वह्निसमा भुवि।
गावो हि सुमहत् तेजः प्राणिनां च सुखप्रदाः॥
निविष्टं गोकुलं यत्र श्वासं मुञ्चति निर्भयम्।
विराजयति तं देशं पापं चास्यापकर्षति॥
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।
गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किंचित् परं स्मृतम्॥
इत्येतद् गोषु मे प्रोक्तं माहात्म्यं भरतर्षभ।
गुणैकदेशवचनं शक्यं पारायणं न तु॥

(अनुशासनपर्व, दानधर्मपर्व ५१। २६—३४)

[महर्षि च्यवनने राजा नहुषसे कहा—] अपनी मर्यादासे कभी च्युत न होनेवाले हे राजेन्द्र! मैं इस संसारमें गौओंके समान दूसरा कोई धन नहीं देखता हूँ। वीर भूपाल! गौओंके नाम और गुणोंका कीर्तन तथा श्रवण करना, गौओंका दान देना और उनका दर्शन करना—इनकी शास्त्रोंमें बड़ी प्रशंसा की गयी है। ये सब कार्य सम्पूर्ण पापोंको दूर करके परम कल्याणकी प्राप्ति करानेवाले हैं। गौएँ सदा लक्ष्मीकी जड़ हैं। उनमें पापका लेशमात्र भी नहीं है। गौएँ ही मनुष्योंको सर्वदा अन्न और देवताओंको हविष्य देनेवाली हैं। स्वाहा और वषट्कार सदा गौओंमें ही प्रतिष्ठित होते हैं। गौएँ ही यज्ञका संचालन करनेवाली तथा उसका मुख हैं। वे विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती और दुहनेपर अमृत ही देती हैं। वे अमृतकी आधारभूत हैं। सारा संसार उनके सामने नतमस्तक होता है। इस पृथ्वीपर गौएँ अपनी काया और कान्तिसे अग्निके समान हैं। वे महान् तेजकी राशि और समस्त प्राणियोंको सुख देनेवाली हैं। गौओंका समुदाय जहाँ बैठकर निर्भयतापूर्वक साँस लेता है, उस स्थानकी शोभा बढ़ा देता है और वहाँके सारे पापोंको खींच लेता है। गौएँ स्वर्गकी सीढ़ी हैं। गौएँ स्वर्गमें भी पूजी जाती हैं। गौएँ समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली देवियाँ हैं। उनसे बढ़कर दूसरा कोई नहीं है। भरतश्रेष्ठ! यह मैंने गौओंका माहात्म्य बताया है। इसमें उनके गुणोंका दिग्दर्शन मात्र कराया गया है। गौओंके सम्पूर्ण गुणोंका वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता।

× × ×

तुल्यनामानि देयानि त्रीणि तुल्यफलानि च।
सर्वकामफलानीह गावः पृथ्वी सरस्वती॥
मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।
वृद्धिमाकांक्षता नित्यं गावः कार्याः प्रदक्षिणाः॥
संताड्या न तु पादेन गवां मध्ये न च व्रजेत्।
मङ्गलायतनं देव्यस्तस्मात् पूज्याः सदैव हि॥
प्रचोदनं देवकृतं गवां कर्मसु वर्तताम्।
पूर्वमेवाक्षरं चान्यदभिधेयं ततः परम्॥
प्रचारे वा निवाते वा बुधो नोद्वेजयेत गाः।
तृषिता ह्यभिवीक्षन्त्यो नरं हन्युः सबान्धवम्॥
पितृसद्मानि सततं देवतायतनानि च।
पूयन्ते शकृता यासां पूतं किमधिकं ततः॥
घासमुष्टिं परगवे दद्यात् संवत्सरं तु यः।
अकृत्वा स्वयमाहारं व्रतं तत् सार्वकामिकम्॥

(अनुशासनपर्व, दानधर्मपर्व, अ० ६९)

[भीष्मजीने कहा—युधिष्ठिर!] गाय, भूमि और सरस्वती—ये तीनों समान नामवाली हैं—इन तीनों वस्तुओंका दान करना चाहिये। इन तीनोंके दानका फल भी समान ही है। ये तीनों वस्तुएँ मनुष्योंकी सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण करनेवाली हैं। गौएँ सम्पूर्ण प्राणियोंकी माता कहलाती हैं। वे सबको सुख देनेवाली हैं। जो अपने अभ्युदयकी इच्छा रखता हो, उसे गौओंको सदा दाहिने करके चलना चाहिये।

गौओंको लात न मारे। उनके बीचसे होकर न निकले। वे मङ्गलकी आधारभूत देवियाँ हैं, अतः उनकी सदा ही पूजा करनी चाहिये। देवताओंने भी यज्ञके लिये भूमि जोतते समय बैलोंको डंडे आदिसे हाँका था। अतः पहले यज्ञके लिये ही बैलोंको जोतना या हाँकना श्रेयस्कर माना गया है। उससे भिन्न कर्मके लिये बैलोंको जोतना या डंडे आदिसे हाँकना निन्दनीय है। विद्वान् पुरुषको चाहिये कि जब गौएँ स्वच्छन्तापूर्वक विचर रही हों अथवा किसी उपद्रवशून्य स्थानमें बैठी हों तो उन्हें उद्वेगमें न डाले। जब गौएँ प्याससे पीड़ित हो जलकी इच्छासे अपने स्वामीकी ओर देखती हैं (और वह उन्हें पानी नहीं पिलाता है), तब वे रोषपूर्ण दृष्टिसे बन्धु-बान्धवोंसहित उसका नाश कर देती हैं। जिनके गोबरसे लीपनेपर देवताओंके मन्दिर और पितरोंके श्राद्धस्थान पवित्र होते हैं, उनसे बढ़कर पावन और क्या हो सकता है? जो एक वर्षतक प्रतिदिन स्वयं भोजनके पहले दूसरेकी गायको एक मुट्ठी घास खिलाता है, उसका वह व्रत समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाला होता है।

भविष्यपुराणमें

क्षीरोदतोयसम्भूता याः पुरामृतमन्थने।
पञ्च गावः शुभाः पार्थ पञ्चलोकस्य मातरः॥
नन्दा सुभद्रा सुरभिः सुशीला बहुला इति।
एता लोकोपकाराय देवानां तर्पणाय च॥
जमदग्निभरद्वाजवसिष्ठासितगौतमाः।
जगृहुः कामदाः पञ्च गावो दत्ताः सुरैस्ततः॥
गोमयं रोचना मूत्रं क्षीरं दधि घृतं गवाम्।
षडङ्गानि पवित्राणि संशुद्धिकरणानि च॥
गोमयादुत्थितः श्रीमान् बिल्ववृक्षः शिवप्रियः।
तत्रास्ते पद्महस्ता श्रीः श्रीवृक्षस्तेन स स्मृतः।
बीजान्युत्पलपद्मानां पुनर्जातानि गोमयात्॥
गोरोचना च माङ्गल्या पवित्रा सर्वसाधिका।
गोमूत्राद् गुग्गुलुर्जातः सुगन्धिः प्रियदर्शनः।
आहारः सर्वदेवानां शिवस्य च विशेषतः॥
यद्बीजं जगतः किंचित् तज्ज्ञेयं क्षीरसम्भवम्।
दधिजातानि सर्वाणि मङ्गलान्यर्थसिद्धये।
घृतादमृतमुत्पन्नं देवानां तृप्तिकारणम्॥
ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधा कृतम्।
एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरन्यत्र तिष्ठति॥
गोषु यज्ञाः प्रवर्तन्ते गोषु देवाः प्रतिष्ठिताः।
गोषु वेदाः समुत्कीर्णाः सषडङ्गपदक्रमाः॥

(उत्तरपर्व, अ० ६९)

[भगवान् श्रीकृष्णने युधिष्ठिरसे कहा—पार्थ] समुद्रमन्थनके समय क्षीरसागरसे पाँच लोकोंकी मातृस्वरूपा कल्याणकारिणी जो पाँच गौएँ उत्पन्न हुई थीं, उनके नाम थे—नन्दा, सुभद्रा, सुरभि, सुशीला और बहुला। ये सभी गौएँ समस्त लोकोंके कल्याण तथा देवताओंको हविष्यके द्वारा परितृप्त करनेके लिये आविर्भूत हुई थीं। फिर देवताओंने इन्हें महर्षि जमदग्नि, भरद्वाज, वसिष्ठ, असित और गौतम मुनिको समर्पित किया और उन्होंने इन्हें प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण किया। ये सभी गौएँ सम्पूर्ण कामनाओंको प्रदान करनेवाली कामधेनु कही गयी हैं। गौओंसे उत्पन्न दूध, दही, घी, गोबर, मूत्र और रोचना—ये छः अङ्ग (गोषडङ्ग) अत्यन्त पवित्र हैं और प्राणियोंके सभी पापोंको नष्ट कर उन्हें शुद्ध करनेवाले हैं। श्रीसम्पन्न बिल्व-वृक्ष गौओंके गोबरसे ही उत्पन्न हुआ है। यह भगवान् शिवजीको अत्यन्त प्रिय है। चूँकि उस वृक्षमें पद्महस्ता भगवती लक्ष्मी साक्षात् निवास करती हैं, इसीलिये इसे श्रीवृक्ष भी कहा गया है। बादमें नीलकमल एवं रक्तकमलके बीज भी गोबरसे ही उत्पन्न हुए थे। गौओंके मस्तकसे उत्पन्न परम पवित्र 'गोरोचना' समस्त अभीष्टोंकी सिद्धि करनेवाली तथा परम मङ्गलदायिनी है। अत्यन्त सुगन्धित गुग्गुल नामका पदार्थ गौओंके मूत्रसे ही उत्पन्न हुआ है। यह देखनेसे भी कल्याण करता है। यह गुग्गुल सभी देवताओंका आहार है, विशेषरूपसे भगवान् शंकरका प्रिय आहार है। संसारके सभी मङ्गलप्रद बीच एवं सुन्दर-से-सुन्दर आहार तथा मिष्टान्न आदि सब-के-सब गौके दूधसे ही बनाये जाते हैं। सभी प्रकारकी मङ्गल-कामनाओंको सिद्ध करनेके लिये गायका दही लोकप्रिय है। देवताओंको परम तृप्त करनेवाला अमृत नामक पदार्थ गायके घीसे ही उत्पन्न हुआ है। ब्राह्मण और गौ—ये दो नहीं हैं, अपितु एक ही कुलके दो पहलू या रूप हैं। ब्राह्मणमें तो मन्त्रोंका निवास है और गौमें हविष्य स्थित है; इन दोनोंके संयोगसे ही विष्णुस्वरूप यज्ञ सम्पन्न होता है—(**यज्ञो वै विष्णुः**)। गौओंसे ही यज्ञकी

प्रवृत्ति होती है और गौओंमें सभी देवताओंका निवास है। छहों अङ्ग—शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष और पद, जटा, शिखा, रेखा आदि क्रमोंके साथ सभी वेद गौओंमें ही सुप्रतिष्ठित हैं।

पद्मपुराणमें

[ब्रह्माजीने कहा—नारद!] पहले भगवान्‌के मुखसे महान् तेजोमय पुंज प्रकट हुआ। उस तेजसे सर्वप्रथम वेदकी उत्पत्ति हुई। तत्पश्चात् क्रमशः अग्नि, गौ और ब्राह्मण—ये पृथक्-पृथक् उत्पन्न हुए। मैंने सम्पूर्ण लोकों और भुवनोंकी रक्षाके लिये पूर्वकालमें एक वेदसे चारों वेदोंका विस्तार किया। अग्नि और ब्राह्मण देवताओंके लिये हविष्य ग्रहण करते हैं और हविष्य (घी) गौओंमें उत्पन्न होता है; इसलिये ये चारों ही इस जगत्‌के जन्मदाता हैं। यदि ये चारों महत्तर पदार्थ विश्वमें नहीं होते तो यह सारा चराचर जगत् नष्ट हो जाता। ये ही सदा जगत्‌को धारण किये रहते हैं; जिससे स्वभावतः इसकी स्थिति बनी रहती है। ब्राह्मण, देवता तथा असुरोंको भी गौकी पूजा करनी चाहिये; क्योंकि गौ सब कार्योंमें उदार तथा वास्तवमें समस्त गुणोंकी खान है। वह साक्षात् सम्पूर्ण देवताओंका स्वरूप है। सब प्राणियोंपर उसकी दया बनी रहती है। प्राचीन कालमें सबके पोषणके लिये मैंने गौकी सृष्टि की थी। गौओंकी प्रत्येक वस्तु पावन है और समस्त संसारको पवित्र कर देती है। गौका मूत्र, गोबर, दूध, दही और घी—इन पञ्चगव्योंका पान कर लेनेपर शरीरके भीतर पाप नहीं ठहरता। इसलिये धार्मिक पुरुष प्रतिदिन गौका दूध, दही और घी खाया करते हैं। गव्य पदार्थ सम्पूर्ण द्रव्योंमें श्रेष्ठ, शुभ और प्रिय हैं। जिसको गायका दूध, दही और घी खानेका सौभाग्य नहीं प्राप्त होता, उसका शरीर मलके समान है। अन्न आदि पाँच रात्रितक, दूध सात रात्रितक, दही बीस रात्रितक और घी एक मासतक शरीरमें अपना प्रभाव रखता है। जो लगातार एक मासतक बिना गव्यका भोजन करता है उस मनुष्यके भोजनमें प्रेतोंको भाग मिलता है; इसलिये प्रत्येक युगमें सब कार्योंके लिये एकमात्र गौ ही प्रशस्त मानी गयी है। गौ सदा और सब समय धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—ये चारों पुरुषार्थ प्रदान करनेवाली है।

जो गौकी एक बार प्रदक्षिणा करके उसे प्रणाम करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर अक्षय स्वर्गका सुख भोगता है। जैसे देवताओंके आचार्य बृहस्पतिजी वन्दनीय हैं, जिस प्रकार भगवान् लक्ष्मीपति सबके पूज्य हैं, उसी प्रकार गौ भी वन्दनीय और पूजनीय है। जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर गौ और उसके घीका स्पर्श करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है।

गौएँ दूध और घी प्रदान करनेवाली हैं। वे घृतकी उत्पत्ति-स्थान और घीकी उत्पत्तिमें कारण हैं। वे घीकी नदियाँ हैं, उनमें घीकी भँवरें उठती हैं। ऐसी गौएँ सदा मेरे घरपर मौजूद रहें। घी मेरे सम्पूर्ण शरीर और मनमें स्थित हो। 'गौएँ सदा मेरे आगे रहें। वे ही मेरे पीछे रहें। मेरे सब अङ्गोंको गौओंका स्पर्श प्राप्त हो। मैं गौओंके बीचमें निवास करूँ।' इस मन्त्रको प्रतिदिन संध्या और प्रातःकालमें शुद्ध भावसे आचमन करके जपना चाहिये। ऐसा करनेसे उसके सब पापोंका क्षय हो जाता है तथा वह स्वर्गलोकमें पूजित होता है। जैसे गौ आदरणीय है वैसे ब्राह्मण; जैसे ब्राह्मण हैं वैसे भगवान् श्रीविष्णु। जैसे भगवान् श्रीविष्णु हैं वैसी ही श्रीगङ्गाजी भी हैं। ये सभी धर्मके साक्षात् स्वरूप माने गये हैं। गौएँ मनुष्योंकी बन्धु हैं और मनुष्य गौओंके बन्धु हैं। जिस घरमें गौ नहीं है, वह गृह बन्धुरहित है—

घृतक्षीरप्रदा गावो घृतयोन्यो घृतोद्भवाः।
घृतनद्यो घृतावर्तास्ता मे सन्तु सदा गृहे॥
घृतं मे सर्वगात्रेषु घृतं मे मनसि स्थितम्।
गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च॥
गावश्च सर्वगात्रेषु गवां मध्ये वसाम्यहम्।
इत्याचम्य जपेन्मन्त्रं सायं प्रातरिदं शुचिः॥
सर्वपापक्षयस्तस्य स्वर्लोके पूजितो भवेत्।
यथा गौश्च तथा विप्रो यथा विप्रस्तथा हरिः॥
हरिर्यथा तथा गङ्गा एते न ह्यवृषाः स्मृताः।
गावो बन्धुर्मनुष्याणां मनुष्या बान्धवा गवाम्॥
गौश्च यस्मिन् गृहे नास्ति तद्बन्धुरहितं गृहम्।

(सृष्टिखण्ड ५७। १५१—१५६)

अग्निपुराणमें

गावः पवित्रा माङ्गल्या गोषु लोकाः प्रतिष्ठिताः॥
शकृन्मूत्रं परं तासामलक्ष्मीनाशनं परम्।
गवां कण्डूयनं वारि शृङ्गस्याघौघमर्दनम्॥

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिश्च रोचना।
षडङ्गं परमं पाने दुःस्वप्नाद्यादिवारणम्॥
रोचना विषरक्षोघ्नी ग्रासदः स्वर्गगो गवाम्।
यद्गृहे दुःखिता गावः स याति नरकं नरः॥
परगोग्रासदः स्वर्गी गोहितो ब्रह्मलोकभाक्।
गोदानात् कीर्तनाद्रक्षां कृत्वा चोद्धरते कुलम्॥
गवां श्वासात् पवित्रा भूः स्पर्शनात् किल्बिषक्षयः।

[भगवान् धन्वन्तरि आचार्य सुश्रुतसे कहते हैं—हे सुश्रुत!] गौएँ पवित्र एवं मङ्गलमयी हैं। गौओंमें सम्पूर्ण लोक प्रतिष्ठित हैं। गौओंका गोबर और मूत्र अलक्ष्मी (दरिद्रता)-के नाशका सर्वोत्तम साधन है। उनके शरीरको खुजलाना तथा उनका शृंगोदक [शृंगोदकसे स्नान करना] समस्त पापोंका मर्दन करनेवाला है। गोमूत्र, गोबर, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत और गोरोचना—यह 'षडङ्ग' पीनेके लिये उत्कृष्ट वस्तु तथा दुःस्वप्न आदिका निवारण करनेवाला है। गोरोचना विष और राक्षसोंका [राक्षसजन्य कष्टोंका] विनाश करती है। गौओंको ग्रास देनेवाला स्वर्गको प्राप्त होता है। जिसके घरमें गौएँ दुःखित होकर निवास करती हैं, वह मनुष्य नरकगामी होता है। दूसरेकी गायको ग्रास देनेवाला स्वर्गको और गोहितमें तत्पर रहनेवाला ब्रह्मलोकको प्राप्त होता है। गोदान, गो-माहात्म्य-कीर्तन और गोरक्षणसे मानव अपने कुलका उद्धार कर देता है। यह पृथ्वी गौओंके श्वाससे पवित्र होती है। उनके स्पर्शसे पापोंका क्षय होता है।

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम्॥
एकरात्रोपवासश्च श्वपाकमपि शोधयेत्।
सर्वाशुभविनाशाय पुराचरितमीश्वरैः॥
प्रत्येकं त्र्यहाभ्यस्तं महासान्तपनं स्मृतम्।
सर्वकामप्रदं चैतत् सर्वाशुभविमर्दनम्॥
कृच्छ्रातिकृच्छ्रं पयसा दिवसानेकविंशतिम्।
निर्मलाः सर्वकामाप्त्या स्वर्गगाः स्युर्नरोत्तमाः॥
त्र्यहमुष्णं पिबेन्मूत्रं त्र्यहमुष्णं घृतं पिबेत्।
त्र्यहमुष्णं पयः पीत्वा वायुभक्षः परं त्र्यहम्॥
तप्तकृच्छ्रव्रतं सर्वपापघ्नं ब्रह्मलोकदम्।
शीतैस्तु शीतकृच्छ्रं स्याद् ब्रह्मोक्तं ब्रह्मलोकदम्॥
गोमूत्रेणाचरेत् स्नानं वृत्तिं कुर्याच्च गोरसैः।
गोभिर्व्रजेच्च भुक्तासु भुञ्जीताथ च गोव्रती॥
मासेनैकेन निष्पापो गोलोकी स्वर्गगो भवेत्।
विद्यां च गोमतीं जप्त्वा गोलोकं परमं व्रजेत्॥
गीतैर्नृत्यैरप्सरोभिर्विमाने तत्र मोदते।

एक दिन गोमूत्र, गोमय, गोघृत, गोदुग्ध, गोदधि और कुशोदकका सेवन एवं एक दिनका उपवास चाण्डालको भी शुद्ध कर देता है। पूर्वकालमें देवताओंने भी समस्त पापोंके विनाशके लिये इसका अनुष्ठान किया था। इनमेंसे प्रत्येक वस्तुका क्रमशः तीन-तीन दिन भक्षण करके रहा जाय तो उसे 'महासान्तपन-व्रत' कहते हैं। यह व्रत सम्पूर्ण कामनाओंको सिद्ध करनेवाला और समस्त पापोंका विनाश करनेवाला है। केवल दूध पीकर इक्कीस दिन रहनेसे 'कृच्छ्रातिकृच्छ्रव्रत' होता है। इसके अनुष्ठानसे श्रेष्ठ मानव सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको प्राप्तकर पापमुक्त हो स्वर्गलोकमें जाते हैं। तीन दिन गरम गोमूत्र, तीन दिन गरम घृत, तीन दिन गरम दूध और तीन दिन केवल गरम वायु पीकर रहे। यह 'तप्तकृच्छ्र-व्रत' कहलाता है, जो समस्त पापोंका प्रशमन करनेवाला और ब्रह्मलोककी प्राप्ति करानेवाला है। यदि इन वस्तुओंको इसी क्रमसे शीतल करके ग्रहण किया जाय, तो ब्रह्माजीके द्वारा कथित 'शीतकृच्छ्र' होता है, जो ब्रह्मलोकप्रद है। एक मासतक गोव्रती होकर गोमूत्रसे प्रतिदिन स्नान करे, गोरससे जीवन चलाये, गौओंका अनुगमन करे और गौओंके भोजन करनेके बाद भोजन करे। इससे मनुष्य निष्पाप होकर स्वर्गोंमें भी सर्वश्रेष्ठ लोक गोलोकको प्राप्त करता है। 'गोमती-विद्या' के जपसे भी उत्तम गोलोककी प्राप्ति होती है। उस लोकमें मानव विमानमें अप्सराओंके द्वारा नृत्य-गीतसे सेवित होकर प्रमुदित होता है।

गावः सुरभयो नित्यं गावो गुग्गुलगन्धिकाः॥
गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं परम्।
अन्नमेव परं गावो देवानां हविरुत्तमम्॥
पावनं सर्वभूतानां क्षरन्ति च वहन्ति च।
हविषा मन्त्रपूतेन तर्पयन्त्यमरान् दिवि॥
ऋषीणामग्निहोत्रेषु गावो होमेषु योजिताः।
सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम्॥
गावः पवित्रं परमं गावो माङ्गल्यमुत्तमम्।
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावो धन्याः सनातनाः॥

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥
ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधा कृतम्।
एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरेकत्र तिष्ठति॥
देवब्राह्मणगोसाधुसाध्वीभिः सकलं जगत्।
धार्यते वै सदा तस्मात् सर्वे पूज्यतमा मताः॥
पिबन्ति यत्र तत् तीर्थं गङ्गाद्या गाव एव हि।
(२९२।१—२२)

गौएँ सदा सुरभिरूपिणी हैं। वे गुग्गुलके समान गन्धसे संयुक्त हैं। गौएँ समस्त प्राणियोंकी प्रतिष्ठा हैं। गौएँ परम मङ्गलमयी हैं। गौएँ परम अन्न और देवताओंके लिये उत्तम हविष्य हैं। वे सम्पूर्ण प्राणियोंको पवित्र करनेवाले दुग्ध और गोमूत्रका वहन एवं क्षरण करती हैं और मन्त्रपूत हविष्यसे स्वर्गमें स्थित देवताओंको तृप्त करती हैं। ऋषियोंके अग्निहोत्रमें गौएँ होमकार्यमें प्रयुक्त होती हैं। गौएँ सम्पूर्ण मनुष्योंकी उत्तम शरण हैं। गौएँ परम पवित्र, महामङ्गलमयी, स्वर्गकी सोपानभूत, धन्य और सनातन (नित्य) हैं। श्रीमती सुरभिपुत्री गौओंको नमस्कार है। ब्रह्मसुताओंको नमस्कार है। पवित्र गौओंको बारंबार नमस्कार है। ब्राह्मण और गौएँ एक ही कुलकी दो शाखाएँ हैं। एकके आश्रयमें मन्त्रकी स्थिति है और दूसरीमें हविष्य प्रतिष्ठित है। देवता, ब्राह्मण, गौ, साधु और साध्वी स्त्रियोंके बलपर यह सारा संसार टिका हुआ है, इसीसे वे परम पूजनीय हैं। गौएँ जिस स्थानपर जल पीती हैं, वह स्थान तीर्थ है। गङ्गा आदि पवित्र नदियाँ गोस्वरूपा ही हैं।

बृहत्पराशरस्मृतिमें

अनादेयतृणान्यत्त्वा स्रवन्त्युदिनं पयः।
तुष्टिदा देवतादीनां पूज्या गावः कथं न ताः॥
स्पृष्टाश्च गावः शमयन्ति पापं
संसेविताश्चोपनयन्ति वित्तम्।
ता एव दत्तास्त्रिदिवं नयन्ति
गोभिर्न तुल्यं धनमस्ति किंचित्॥
यस्याः शिरसि ब्रह्मास्ते स्कन्धदेशे शिवः स्थितः।
पृष्ठे नारायणस्तस्थौ श्रुतयश्चरणेषु च॥
या अन्या देवताः काश्चित् तस्या लोमसु ताः स्थिताः।
सर्वदेवमया गावस्तुष्येत् तद्भक्तितो हरिः॥
हरन्ति स्पर्शनात् पापं पयसा पोषयन्ति याः।
प्रापयन्ति दिवं दत्ताः पूज्या गावः कथं न ताः॥
यत्खुराहतभूमेर्य उत्पद्यन्ते रजःकणाः।
प्रलीनं पातकं तैस्तु पूज्या गावः कथं न ताः॥
शकृन्मूत्रं हि यस्यास्तु पीतं दहति पातकम्।
किमपूज्यं हि तस्या गोरिति पाराशरोऽब्रवीत्॥

मनुष्योंके व्यवहारके अयोग्य—सामान्य तृण-पत्तों-घात आदिको चरकर जो गौ निरन्तर प्रतिदिन दूधका प्रस्रवण करती है तथा उस दूधसे घी-दही आदिका निर्माण होकर देवता भी [आहुतियोंसे] संतुष्ट होते हैं, भला ऐसी वे गायें पूज्य कैसे नहीं हैं? अर्थात् वे सब प्रकारसे पूज्य हैं। स्पर्श कर लेने मात्रसे ही गौएँ मनुष्यके समस्त पापोंको नष्ट कर देती हैं और आदरपूर्वक सेवन किये जानेपर अपार सम्पत्ति प्रदान करती हैं, वे ही गायें दान दिये जानेपर सीधे स्वर्ग ले जाती हैं, ऐसी गौओंके समान और कोई भी धन नहीं है। जिसके सिरपर ब्रह्माजीका निवास है, स्कन्धदेशपर भगवान् शिव विराजमान रहते हैं, पृष्ठभागपर भगवान् नारायण स्थित रहते हैं और चारों वेद दस गौके चारों चरणोंमें निवास करते हैं, शेष अन्य सभी देवगण गौओंके रोम-समूहमें स्थित रहते हैं, इसलिये गौएँ सर्वदेवमयी हैं, ऐसी उन गौओंकी सेवा-भक्तिसे भगवान् श्रीहरि सर्वथा प्रसन्न हो जाते हैं। जो गायें स्पर्श करनेसे सब पापोंका हरण कर लेती हैं और अपने दूधसे सबका पालन-पोषण करती हैं, दान करनेपर सीधे स्वर्गकी प्राप्ति करा देती हैं, भला ऐसी वे गौएँ कैसे पूजनीया नहीं हैं? जिन गायोंके खुरोंसे आहत होनेके कारण पृथ्वीसे जो धूलिकण उत्पन्न होते हैं उनके छूते ही सभी पाप ध्वस्त हो जाते हैं, ऐसी (महिमामयी) वे गायें कैसे पूजनीया नहीं हैं? अर्थात् सर्वथा पूजनीया ही हैं। जिसके गोबर या मूत्र [पञ्चगव्य] का पान करनेसे सारे पाप भस्म हो जाते हैं, उन गायोंसे प्राप्त कौन-सा द्रव्य है जो अपूज्य है अर्थात् सब कुछ पूज्य ही है—ऐसा महर्षि पराशरजीका कहना है।

एकत्र पृथिवी सर्वा सशैलवनकानना।
तस्या गौर्ज्यायसी साक्षादेकत्रोभयतोमुखी॥

यथोक्तविधिना चैता वर्णैः पाल्याः सुपूजिताः।
पालयन् पूजयन्नेताः स प्रेत्येह च मोदते॥

एक तरफ तो पर्वत, वन तथा अरण्यसे युक्त सम्पूर्ण पृथिवी है और दूसरी तरफ उन सबसे श्रेष्ठ उभयतोमुखी गौ (ब्याती हुई गौ) है। [उसकी प्रदक्षिणासे सारे विश्वकी प्रदक्षिणा हो जाती है।] इस प्रकार यथोक्त-विधिसे ब्राह्मण आदि सभी वर्णोंके द्वारा पालित-पोषित एवं पूजित होनेपर [गायोंकी कृपासे] वह इस लोक तथा परलोकमें सुखपूर्वक निवास करता है।

गावो देयाः सदा रक्ष्याः पाल्याः पोष्याश्च सर्वदा।
ताडयन्ति च ये पापा ये चाक्रोशन्ति ता नराः॥
नरकाग्नौ प्रपच्यन्ते गोनिःश्वासप्रपीडिताः।
सपलाशेन शुष्केण ता डण्डेन निवर्तयेत्॥
गच्छ गच्छेति तां ब्रूयान्मा मा भैरिति वारयेत्।
संस्पृशन् गां नमस्कृत्य कुर्यात् तां च प्रदक्षिणम्॥
प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

गौओंका सदा दान करना चाहिये, सदा उनकी रक्षा करनी चाहिये और सदा उनका पालन-पोषण करना चाहिये। जो मूर्ख इन्हें डाँटते तथा मारते-पीटते हैं वे गौओंके दुःखपूर्ण निःश्वाससे पीडित होकर घोर नरकाग्निमें पकाये जाते हैं। [यदि कोई मारनेवाली गाय घरमें आ गयी है तो] उसे सूखे पलाशके डंडेसे हटा दे और उससे यह कहे कि तुम डरो मत, वापस चली जाओ। गायको देखनेपर छूते हुए उन्हें प्रणाम करे और उनकी प्रदक्षिणा करे। इस प्रकार करनेसे उसने मानो समस्त सप्तद्वीपवती पृथिवीकी ही परिक्रमा कर ली।

तृणोदकादिसंयुक्तं यः प्रदद्यात् गवाह्निकम्॥
सोऽश्वमेधसमं पुण्यं लभते नात्र संशयः।
गवां कण्डूयनं स्नानं गवां दानसमं भवेत्॥
तुल्यं गोशतदानस्य भयतो गां प्रपाति यः।
पृथिव्यां यानि तीर्थानि आसमुद्रं सरांसि च॥
गवां शृंगोदकस्नानकलां नार्हन्ति षोडशीम्।
पातकानि कुतस्तेषां येषां गृहमलंकृतम्॥
सततं बालवत्साभिर्गोभिः श्रीभिरिव स्वयम्।
ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधा कृतम्॥
तिष्ठन्त्येकत्र मन्त्रास्तु हविरेकत्र तिष्ठति।
गोभिर्यज्ञाः प्रवर्तन्ते गोभिर्देवाः प्रतिष्ठिताः॥
गोभिर्वेदाः समुद्गीर्णाः षडङ्गाः सपदक्रमाः।
सौरभेयास्तु यस्याग्रे पृष्ठतो यस्य ताः स्थिताः॥
वसन्ति हृदये नित्यं तासां मध्ये वसन्ति ये।
ते पुण्यपुरुषाः क्षोण्यां नाकेऽपि दुर्लभाश्च ते॥
ये गोभक्तिकरा नित्यं विद्यन्ते ये च गोप्रदाः।

(अध्याय ५)

जो गौओंको भोजनके लिये प्रतिदिन जल और तृणसहित कुछ भोजन प्रदान करता है, उसे अश्वमेधके समान फलकी प्राप्ति होती है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। गौओंको खुजलाना तथा उन्हें स्नान कराना भी गोदानके समान फलवाला होता है। जो भयसे दुःखी (भयग्रस्त) एक गायकी रक्षा करता है, उसे सौ गोदानका फल प्राप्त होता है। पृथिवीमें समुद्रसे लेकर जितने भी बड़े तीर्थ—सरिता-सरोवर आदि हैं, वे सब मिलकर भी गौके सींगके जलसे स्नान करनेके षोडशांशके तुल्य भी नहीं होते। जिनके घर साक्षात् स्वयं लक्ष्मीस्वरूपा सवत्सा गौओंसे अलंकृत हैं उनके पाप-ताप भला कैसे टिक सकते हैं? ब्राह्मण और गौएँ वस्तुतः एक ही कुलकी वस्तुएँ हैं, जिन्हें दो भागोंमें विभक्त कर दिया गया है, एक ओर तो ब्राह्मणमें मन्त्र स्थित हैं और दूसरी ओर गौमें हविष्य स्थित है, गौओंसे ही यज्ञकी पूर्ति होती है और गौओंसे ही देवताओंकी प्रतिष्ठा होती है तथा गौओंसे ही पद, क्रम एवं व्याकरण आदि छः अङ्गोंसहित सभी वेद अभिव्यक्त हुए। गौएँ जिनके आगे, पीछे, हृदयके सामने नित्य निवास करती हैं और गौओंके बीचमें ही जो निवास करते हैं तथा जो गौओंकी नित्य भक्ति करते हैं, उपासना करते तथा प्रतिदिन गौओंका दान करते हैं ऐसे पुण्यात्मा पवित्र पुरुष पृथिवीपर भी दुर्लभ हैं और स्वर्गमें भी दुर्लभ हैं।

गोसेवाकी महिमा

विष्णुधर्मोत्तरपुराणमें

(क)

गवां कण्डूयनान्मर्त्यः सर्वं पापं व्यपोहति।
तासां ग्रासप्रदानेन महत्पुण्यमवाप्नुयात्॥
तासां च प्रचरं कृत्वा तथैव सलिलाशयम्।
स्वर्गलोकमुपाश्नन्ति बहून्यब्दगणानि तु॥
तासां प्रचारभूमिं तु कृत्वा प्राप्नोति मानवः।
अश्वमेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोत्यसंशयम्॥
तासामावसथं कृत्वा नगराधिपतिर्भवेत्।
तथा लवणदानेन सौभाग्यं महदश्नुते॥

[भगवान् हंस कहते हैं—हे ब्राह्मणो!] गौओंके शरीरको खुजलानेसे या उनके शरीरके कीटाणुओंको दूर करनेसे मनुष्य अपने समस्त पापोंको धो डालता है। गौओंको गोग्रास दान करनेसे महान् पुण्यकी प्राप्ति होती है। गौओंको चराकर उन्हें जलाशयतक घुमाकर जल पिलानेसे मनुष्य अनन्त वर्षोंतक स्वर्गमें निवास करता है। गौओंके प्रचारणके लिये गोचरभूमिकी व्यवस्था कर मनुष्य निःसंदेह अश्वमेधयज्ञका फल प्राप्त करता है। गौओंके लिये गोशालाका निर्माणकर मनुष्य पूरे नगरका स्वामी बन जाता है और उन्हें नमक खिलानेसे मनुष्यको महान् सौभाग्यकी प्राप्ति होती है।

आतुरां पङ्कलग्नां वा चौरव्याघ्रभयार्दिताम्।
मोचयित्वा द्विजश्रेष्ठास्त्वश्वमेधफलं लभेत्॥
तासामौषधदानेन विरोगस्त्वभिजायते।
विप्रमोच्य भयेभ्यश्च न भयं विद्यते क्वचित्॥
क्रीत्वा चण्डालहस्ताच्च गोमेधस्य फलं लभेत्।
गोपकस्त्वस्य चान्यस्य क्रीत्वा हस्तात् तथैव च॥
कृत्वा शीतातपत्राणं तासां स्वर्गमवाप्नुयात्।

हे ब्राह्मणो! विपत्तिमें या कीचड़में फँसी हुई या चोर तथा बाघ आदिके भयसे व्याकुल गौको क्लेशसे मुक्त कर मनुष्य अश्वमेधयज्ञका फल प्राप्त करता है। रुग्णावस्थामें गौओंको ओषधि प्रदान करनेसे स्वयं मनुष्य सभी रोगोंसे मुक्त हो जाता है। गौओंको भयसे मुक्त कर देनेपर मनुष्य स्वयं भी सभी भयोंसे मुक्त हो जाता है। चण्डालके हाथसे गौको खरीद लेनेपर गोमेधयज्ञका फल प्राप्त होता है तथा किसी अन्यके हाथसे गायको खरीदकर उसका पालन करनेसे गोपालकको गोमेधयज्ञका ही फल प्राप्त होता है। गौओंकी शीत तथा धूपसे रक्षा करनेपर स्वर्गकी प्राप्ति होती है।

उत्थितासूत्थितस्तिष्ठेद्विष्ठितासु च विष्ठितः॥
भुक्तवत्सु तु चाश्नीयाज्जले पीते पिबेत्तु च।
गोमूत्रेणाचरेत् स्नानं गोपुरीषात् तथा यवैः॥
शरीरयात्रां कुर्वीत गोरसैरथ वा द्विजाः।
एतद्धि गोव्रतं मासात् सर्वकल्मषनाशनम्॥
एकां गां धारयेन्मासं दद्यात् तस्यास्तथा यवान्।
गोमयात् तान् समश्नीयान्मासमेकमतः शुचिः॥
मासान्ते तां तथा धेनुं दद्याद्विप्राय भक्तिमान्।
व्रतमेतत् समुद्दिष्टं सर्वकल्मषनाशनम्॥
राजसूयाश्वमेधाभ्यां व्रतमेतत् तथाधिकम्।
व्रतेनानेन चीर्णेन कामानिष्टानवाप्नुयात्॥
विमानेनार्कवर्णेन ब्रह्मलोकं च गच्छति।
विनापि गोप्रदानेन व्रतमेतन्महत् फलम्॥
त्रिरात्रं सप्तरात्रं वा शक्तिं ज्ञात्वा तथा स्वकाम्।
गवां निर्हारनिर्मुक्तैर्वृत्तिं कृत्वा तथा यवैः॥
पापमोक्षमवाप्नोति पुण्यं च महदश्नुते।

गौओंके उठनेपर उठ जाय और बैठनेपर बैठ जाय। गौओंके भोजन कर लेनेपर भोजन करे और जल पी लेनेपर स्वयं भी जल पीये। गोमूत्रसे स्नान करे और हे ब्राह्मणो! अपनी जीवनयात्राका गोदुग्धपर अथवा गोमयसे निःसृत जौ-द्वारा निर्वाह करे। इसीका नाम 'गोव्रत' है। एक माहतक ऐसा करनेवाले गोव्रतीके सम्पूर्ण पाप सर्वथा नष्ट हो जाते हैं। किसी एक गौका पालन करते हुए उसे जौ खिलाता रहे और उसके गोबरसे जौ निकालकर उसे धोकर उसका सेवन करे तो इस प्रकार एक महीनेतक करनेसे वह अत्यन्त पवित्र हो जाता है। एक महीना बीत जानेपर उस गायको भक्तिपूर्वक किसी ब्राह्मणको दान कर दे, यह भी एक प्रकारका 'गोव्रत' कहा गया है, जो सभी पापोंको नष्ट कर देनेवाला है। यह व्रत राजसूययज्ञ तथा अश्वमेधयज्ञ आदिसे अधिक फलदायी है। इस व्रतके अनुष्ठानसे मनुष्य

अनेक अभीष्ट कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। ऐसा करनेवाला सूर्यके समान प्रकाशमान विमानसे ब्रह्मलोकको प्राप्त होता है। बिना गोदानके भी यह व्रत महान् फलदायी कहा गया है। अपनी शक्तिको ठीकसे समझकर तीन दिन या सात दिनोंतक जौ आदिसे गौओंके भोजन आदिकी व्यवस्था करनेसे मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो जाता है और उसे महान् पुण्यकी प्राप्ति होती है।

रजश्च गोखुरोद्भूतं सर्वकल्मषनाशनम्॥
यादृशात् तादृशाद्देशान्नात्र कार्या विचारणा।
मङ्गल्यं च पवित्रं च तदलक्ष्मीविनाशनम्॥
गवां हि परिवासेन भूमिः शुद्धिमवाप्नुयात्।
तद्धि शुद्धं यदा वेश्म यत्र तिष्ठन्ति धेनवः॥
तासां निःश्वासवातेन परं नीराजनं भवेत्।
तासां संस्पर्शनं पुण्यं दुःस्वप्नाघविनाशनम्॥
ग्रीवामस्तकसन्धौ तु तासां गङ्गा प्रतिष्ठिता।
सर्वदेवमया गावः सर्वतीर्थमयास्तथा॥
तासां लोमानि पुण्यानि पवित्राणि तथा द्विजाः।

हे ब्राह्मणो! गायके खुरसे उत्पन्न धूलि समस्त पापोंको नष्ट कर देनेवाली है। वह धूलि चाहे तीर्थकी हो चाहे मगध-कीकट आदि निकृष्ट देशोंकी ही क्यों न हो। इसमें विचार अथवा संदेह करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। इतना ही नहीं वह सब प्रकारकी मङ्गलकारिणी, पवित्र करनेवाली और दुःख-दरिद्रतारूप अलक्ष्मीको नष्ट करनेवाली है। गौओंके निवास करनेसे वहाँकी पृथिवी भी शुद्ध हो जाती है। जहाँ गायें बैठती हैं वह स्थान, वह घर सर्वथा पवित्र हो जाता है। वहाँ कोई दोष नहीं रहता। उनके निःश्वासकी हवा देवताओंके लिये नीराजनके समान है। गौओंको स्पर्श करना बड़ा पुण्यदायक है और उससे समस्त दुःस्वप्न, पाप आदि भी नष्ट हो जाते हैं। गौओंके गरदन और मस्तकके बीचमें साक्षात् भगवती गङ्गाका निवास है। गौएँ सर्वदेवमयी और सर्वतीर्थमयी हैं। उनके रोएँ भी बड़े ही पवित्रताप्रद और पुण्यदायक हैं।

गोमयेनोपलिप्तं तु शुचि स्थानं प्रकीर्तितम्॥
अग्न्यागारसुरागारान् गोमयेनोपलेपयेत्।
गोमये तु सदा लक्ष्मीः स्वयमेव व्यवस्थिता॥
गोमूत्रे च तथा गङ्गा दधिक्षीरघृतेषु च।
सदा व्यवस्थितं सोमं रोचनायां सरस्वती॥
विष्णुर्यज्ञः समाख्यातः स च गोषु प्रतिष्ठितः।
तस्माद् गावो विनिर्दिष्टा विष्णुरेव पुरातनैः॥
पूज्यास्तास्तु नमस्कार्याः कीर्तनीयाश्च तास्तथा।
तासामाहारदानं च कार्यं शुश्रूषणं तथा॥
शुश्रूषणेनेह गवां द्विजेन्द्राः
प्राप्नोति लोकानमलान् विशोकान्।
तस्मात् प्रयत्नेन गवां हि कार्यं
शुश्रूषणं धर्मपरैर्मनुष्यैः॥

(तृतीयखण्ड, अ० २९१)

गायके गोमयसे उपलिप्त स्थान सब प्रकारसे पवित्र स्थान कहा गया है। इसलिये यज्ञशाला और भोजन बनानेके स्थानको गोमयसे लीपना चाहिये। गोबरमें तो साक्षात् लक्ष्मी अपने स्वरूपमें विराजमान रहती हैं। गोमूत्रमें भगवती गङ्गा तथा गोदधि, गोदुग्ध और गोघृतमें सोम तथा गोरोचनामें भगवती सरस्वती सर्वदा प्रतिष्ठित रहती हैं। यज्ञको भगवान् विष्णुका स्वरूप माना गया है और वह सर्वाङ्गतया गौओंमें ही प्रतिष्ठित है, इसलिये गौओंको भी प्राचीन आचार्योंने विष्णुका स्वरूप ही माना है। वे गौएँ सभी प्रकार पूजनीय, कीर्तनीय और नमस्करणीय हैं। उन्हें सदा भोजन देना चाहिये और उनकी सेवा भी करनी चाहिये। हे ब्राह्मणो! गायोंकी सेवासे मनुष्य निर्मल और दुःख तथा शोकरहित श्रेष्ठ लोकोंको प्राप्त करता है। इसलिये धर्मपरायण मनुष्योंको बहुत प्रयत्नपूर्वक गायोंकी सेवा अवश्य करनी चाहिये।

[ख]

[राजनीति एवं धर्मशास्त्रके सम्यक् ज्ञाता पुष्करजी बोले—] हे भृगुनन्दन परशुरामजी! राजाको गोपालनका कार्य अवश्य करना चाहिये। क्योंकि गायोंकी संगति परम पवित्र है और सम्पूर्ण लोक गायोंमें ही प्रतिष्ठित हैं। गायें ही यज्ञका विस्तार करती हैं और गायें ही विश्वकी माता हैं। गौओंका गोबर और मूत्र सम्पूर्ण अलक्ष्मीका नाश करनेवाला कहा गया है। इसलिये उन दोनोंका प्रयत्नपूर्वक आश्रय लेना चाहिये, सेवन करना चाहिये, क्योंकि भगवती लक्ष्मी उनमें निवास करती हैं। गोबर

और गोमूत्रके रहस्यके जाननेवालेको किसी प्रकार उद्विग्न, खेद-खिन्न होनेकी आवश्यकता नहीं है। इसलिये गायों, गोकुल, गोमय आदिपर थूक-खखार नहीं छोड़ना चाहिये। गायोंकी धूलि सब प्रकारसे पवित्रकारिणी और समस्त विघ्नों तथा अलक्ष्मीको दूर करनेवाली है। गायोंके शरीरको खुजलानेसे मनुष्यके सभी पाप-ताप दूर हो जाते हैं। गौओंका शृंगोदक गङ्गाजलके तुल्य है। गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत तथा गोरोचना—यह 'गोषडङ्ग' के नामसे कहा जाता है, जो सब प्रकारसे कल्याण—मङ्गलका विस्तार करनेवाला है और पृथक्-पृथक् भी यह परम पवित्र और शुद्धिकारक है। हे भार्गवजी! गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत और कुशोदक—यह पञ्चगव्य स्नानीय और पेयद्रव्योंमें परम पवित्र कहा गया है। ये सब मङ्गलमय पदार्थ भूत, प्रेत, पिशाच, राक्षस आदिसे रक्षा करनेवाले परममङ्गल तथा कलिके दु:ख-दोषोंको नाश करनेवाले हैं। गोरोचना भी इसी प्रकार राक्षस, सर्पविष तथा सभी रोगोंको नष्ट करनेवाली एवं परम धन्य है। जो प्रात:काल उठकर अपना मुख गोघृतपात्रमें रखे घीमें देखता है उसकी दु:ख-दरिद्रता सर्वदाके लिये समाप्त हो जाती है और फिर पापका बोझ नहीं ठहरता।

'गायोंको भोजनका ग्रास देनेसे महान् पुण्यकी प्राप्ति होती है। अपने घरमें जितनी गौओंको रख सके रखे, पर अत्यन्त सुखपूर्वक ही रखे; उनमेंसे किसीको भी भूखी-प्यासी न रखे। हे परशुरामजी! जो व्यक्ति अपने घरमें गौओंको दु:खी रखता है उसे नरककी ही प्राप्ति होती है, इसमें कोई संदेह नहीं। किसी दूसरेकी गायको भोजन देकर मनुष्य महान् पुण्यका भागी होता है। पूरे जाड़े भर किसी दूसरेकी गायको ग्रास प्रदान करनेवाला व्यक्ति ६०० वर्षोंतक श्रेष्ठ स्वर्गका उपभोग करता है और भोजनके समय पहले ही यदि ६ मासतक गोग्रास निकालकर उन्हें नित्य प्रदान करता है तो वह स्वर्ग-सुखको प्राप्त करता है। जो एक वर्षतक सायंकाल तथा प्रात:काल देवताओंके निमित्त बने सात्त्विक भोजनके प्रथम भागको नित्य निरालस्य होकर गायोंको प्रदान करता है और द्वितीय अवशिष्ट भागका जो स्वयं भोजन करता है वह हे परशुरामजी! एक मन्वन्तरपर्यन्त गौओंके लोकमें निवास करता है। जो गौओंके चलनेके मार्गमें, चरागाहमें जलकी व्यवस्था करता है, वह वरुणलोकको प्राप्तकर वहाँ दस हजार वर्षोंतक विहार करता है और जहाँ-जहाँ उसका आगे जन्म होता है वह वहाँ सभी आनन्दोंसे परितृप्त रहता है। गोचरभूमिको हल आदिसे जोतनेपर चौदह इन्द्रोंपर्यन्त भीषण नरककी प्राप्ति होती है। हे परशुरामजी! जो गौओंके पानी पीते समय विघ्न डालता है, उसे यही मानना चाहिये कि उसने घोर ब्रह्महत्या की। सिंह, व्याघ्र आदिके भयसे डरी हुई गायकी जो रक्षा करता है और कीचड़में फँसी हुई गायका जो उद्धार करता है, वह कल्पपर्यन्त स्वर्गमें स्वर्गीय भोगोंका भोग करता है। गायोंको घास प्रदान करनेसे वह व्यक्ति अगले जन्ममें रूपवान् हो जाता है और उसे लावण्य तथा महान् सौभाग्यकी प्राप्ति होती है। गायोंको औषध प्रदान कर मनुष्य सर्वथा नीरोग हो जाता है। यदि मनुष्य गायकी विपत्तिमें ओषधि, नमक, जल प्रदान करता है, भोजन प्रदान करता है, तथापि वह गाय यदि मर भी जाय तो सहायक व्यक्तिको पाप नहीं लगता और न उसे यमयातना भोगनी पड़ती है*।'

---

* गवां ग्रासप्रदानेन पुण्यं सुमहदश्नुते। यावत्य: शक्नुयाद् गाव: सुखं धारयितुं गृहे॥
धारयेत् तावतीर्नित्यं क्षुधितास्तु न धारयेत्। दु:खिता धेनवो यस्य वसन्ति द्विजमन्दिरे॥
नरकं समवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा। दत्त्वा परगवे ग्रासं पुण्यं सुमहदश्नुते॥
शैशिरं सकलं कालं ग्रासं परगवे तथा। दत्त्वा स्वर्गमवाप्नोति संवत्सरशतानि षट्॥
अग्रभक्तं नरो दत्त्वा नित्यमेव तथा गवाम्। मासषट्केन लभते नाकलोकं समायुतम्॥
सायं प्रातर्मनुष्याणामशनं देवनिर्मितम्। तत्रैवमशनं दत्त्वा गवां नित्यमतन्द्रित:॥
द्वितीयं य: समश्नाति तेन संवत्सरान्नर:। गवां लोकमवाप्नोति यावन्मन्वन्तरं द्विज॥
गवां प्रचारे पानीयं दत्त्वा पुरुषसत्तम:। वारुणं लोकमासाद्य क्रीडत्यब्दगणायुतम्॥

हे परशुरामजी! गायोंको बेचना भी कल्याणकारी नहीं है। गायोंका नाम लेनेसे भी मनुष्य पापोंसे शुद्ध हो जाता है। गौओंका स्पर्श सभी पापोंका नाश करनेवाला तथा सभी प्रकारका सौभाग्य एवं मङ्गलका विधायक है। गौओंका दान करनेसे अनेक कुलोंका उद्धार हो जाता है। मातृकुल, पितृकुल और भार्याकुलमें जहाँ एक भी गौ निवास करती है वहाँ रजस्वला और प्रसूतिका आदिकी अपवित्रता भी नहीं आती और पृथिवीमें अस्थि, लोहा होनेका, धरतीके आकार-प्रकारकी विषमताका दोष भी नष्ट हो जाता है। गौओंके श्वास-प्रश्वाससे घरमें महान् शान्ति होती है। सभी शास्त्रोंमें गौओंके श्वास-प्रश्वासको महानीराजन कहा गया है। हे परशुराम! गौओंको छू देनेमात्रसे मनुष्योंके सारे पाप क्षीण हो जाते हैं। जो एक महीनेतक गौओंको जौ आदिके आहारसे प्रतिदिन संतुष्ट करता है वह जो कुछ भी अभिलषित पदार्थ हो उसे प्राप्त करता है। और गोमती नामकी विद्याकी सायं-प्रातःकाल पढ़ते हुए मनुष्य गोलोकको प्राप्त करता है इसमें कोई संदेह नहीं। सभी लोकोंके ऊपर गौओंका लोक गोलोक प्रतिष्ठित है। जहाँ गौएँ सभी आकाशचारियोंके ऊपर निवास करती हैं वहाँ गौएँ विभिन्न विमानोंके ऊपर अप्सराओंसे घिरी रहती हैं। जिन विमानोंमें किंकिणीका जाल लगा रहता है और वीणा-मुरज आदि वाद्य बजते रहते हैं वहाँ गोलोकमें सभी कामनाओंकी पूर्तिरूपी नदियोंका जल बहता है और दूध, खीर, घी, कीचड़के रूपमें बहता है। जहाँकी पुष्करिणियोंमें वैदूर्य मणिके कमल खिले रहते हैं, जहाँ जल अत्यन्त निर्मल होता है और सुवर्णकणोंसे निर्मित बालुकाएँ होती हैं, हे भृगूत्तम! वहाँ मनमें संकल्प करते ही सिद्धि उपस्थित हो जाती है। गायोंकी भक्ति करनेसे मनुष्य उन्हीं लोकोंमें जाता है।

गोभक्तके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है

गोषु भक्तश्च लभते यद् यदिच्छति मानवः। स्त्रियोऽपि भक्ता या गोषु ताश्च काममवाप्नुयुः॥
पुत्रार्थी लभते पुत्रं कन्यार्थी तामवाप्नुयात्। धनार्थी लभते वित्तं धर्मार्थी धर्ममाप्नुयात्॥
विद्यार्थी चाप्नुयाद् विद्यां सुखार्थी प्राप्नुयात् सुखम्। न किंचिद् दुर्लभं चैव गवां भक्तस्य भारत॥

(महा०, अनु० ८३। ५०—५२)

गोभक्त मनुष्य जिस-जिस वस्तुकी इच्छा करता है, वह सब उसे प्राप्त होती है। स्त्रियोंमें भी जो गौओंकी भक्त हैं, वे मनोवाञ्छित कामनाएँ प्राप्त कर लेती हैं। पुत्रार्थी मनुष्य पुत्र पाता है और कन्यार्थी कन्या। धन चाहनेवालेको धन और धर्म चाहनेवालेको धर्म प्राप्त होता है। विद्यार्थी विद्या पाता है और सुखार्थी सुख। भारत! गोभक्तके लिये यहाँ कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

परां तृप्तिमवाप्नोति यत्र यत्राभिजायते॥
गवां प्रचारभूमिं तु वाहयित्वा हलादिना। नरकं महादाप्नोति यावदिन्द्राश्चतुर्दश॥
गवां पानप्रवृत्तानां यस्तु विघ्नं समाचरेत्। ब्रह्महत्या कृता तेन घोरा भवति भार्गव॥
सिंहव्याघ्रभयत्रस्तां पङ्कमग्नां जले गताम्॥
गामुद्धृत्य नरः स्वर्गे कल्पभोगानुपाश्नुते। गवां यवसदानेन रूपवानभिजायते॥
सौभाग्यं महदाप्नोति लावण्यं च द्विजोत्तम। औषधं च तथा दत्त्वा विरोगस्त्वभिजायते॥
औषधं लवणं तोयमाहारं च प्रयच्छतः। विपत्तौ पातकं नास्य भवत्युद्बन्धनादिकम्॥

(विष्णुधर्मो०, खण्ड २, अ० ४२)

गोविन्दका गोधनके साथ गोवर्धनसे उतरना
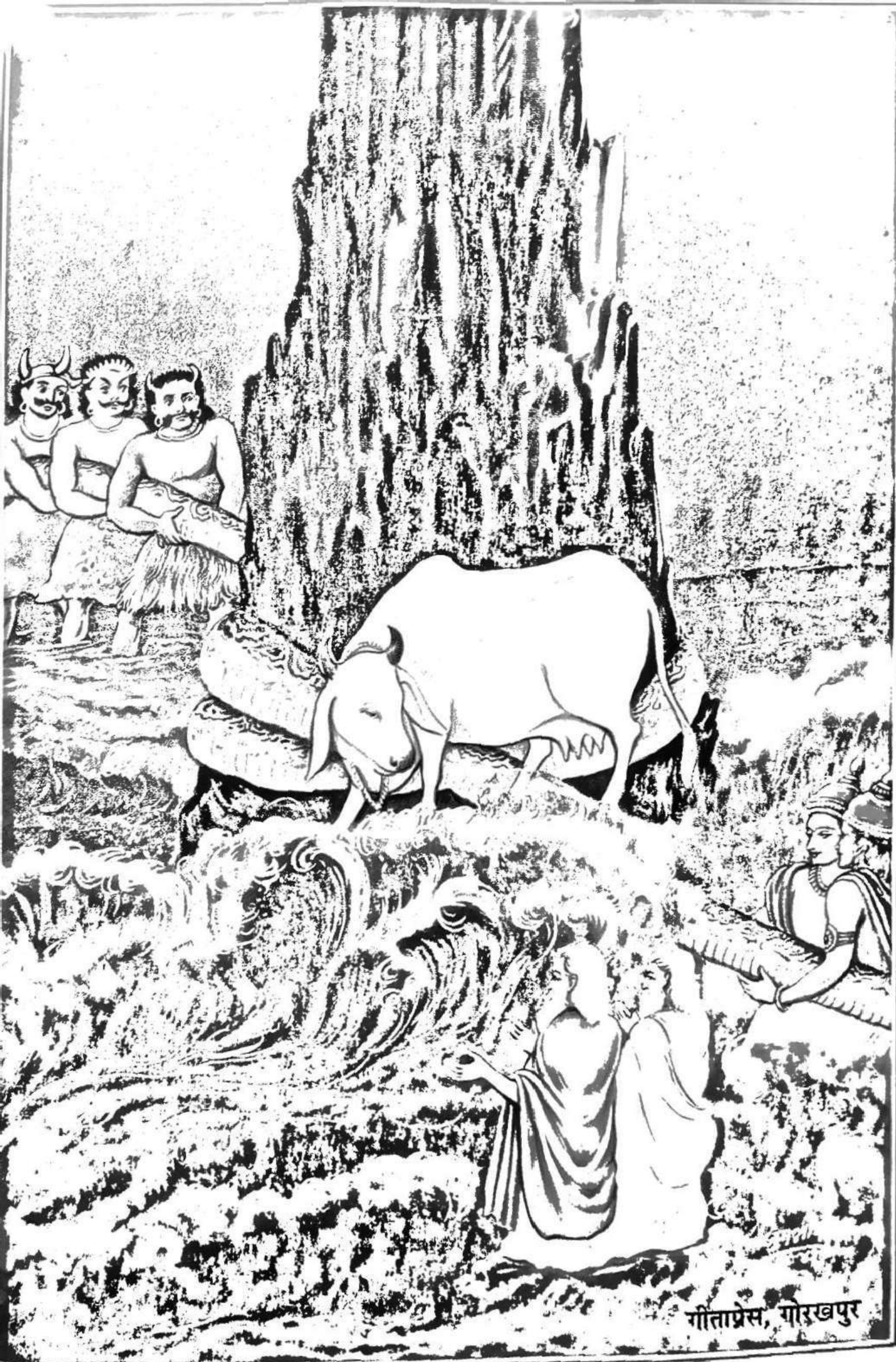
गीताप्रेस, गोरखपुर

समुद्र-मन्थनसे कामधेनुकी उत्पत्ति
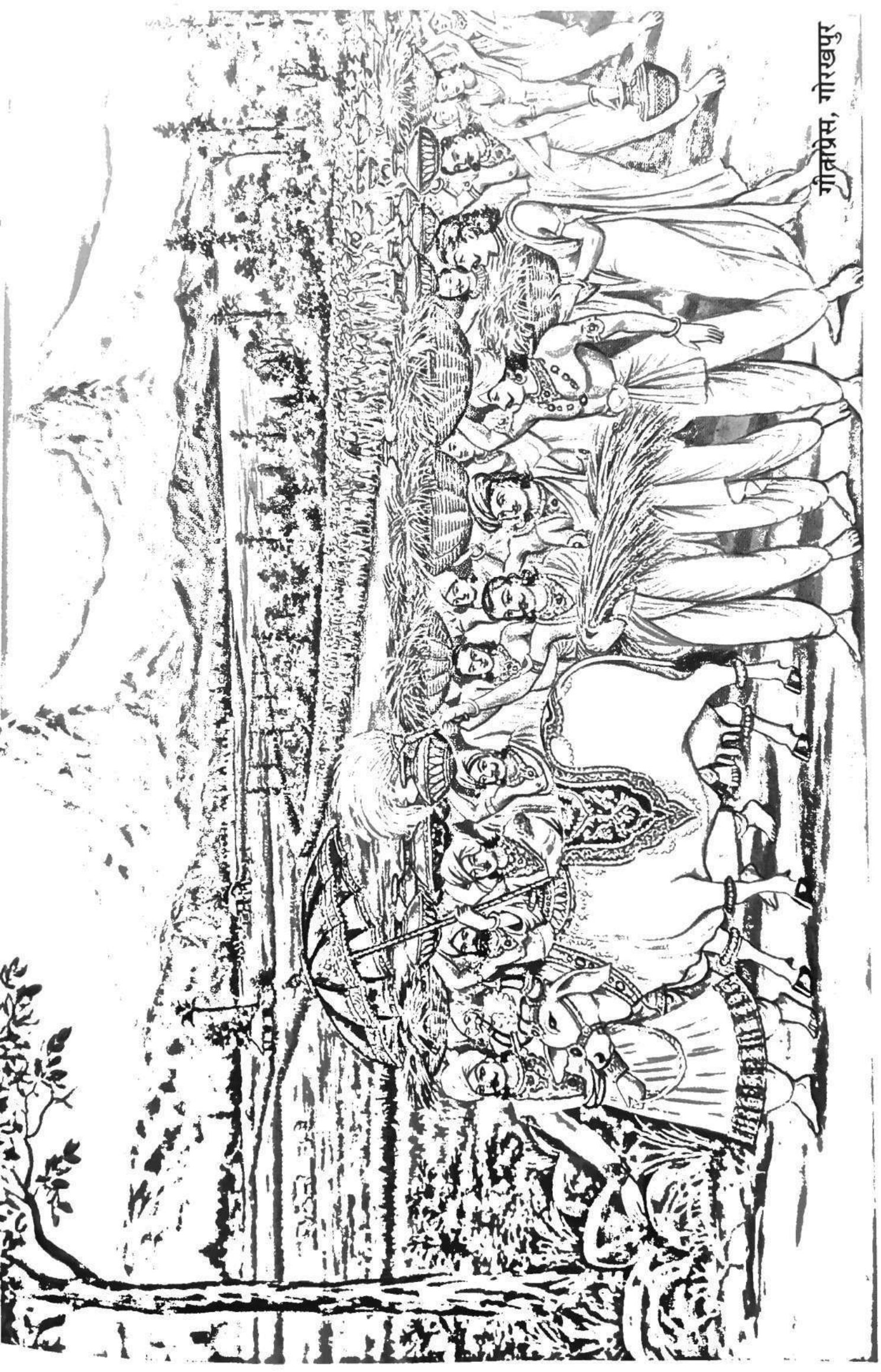
गीताप्रेस, गोरखपुर

गौका जुलूस

गीताप्रेस, गोरखपुर

गो-भक्तिके आदर्श—महाराज दिलीप एवं भगवान् श्रीकृष्ण
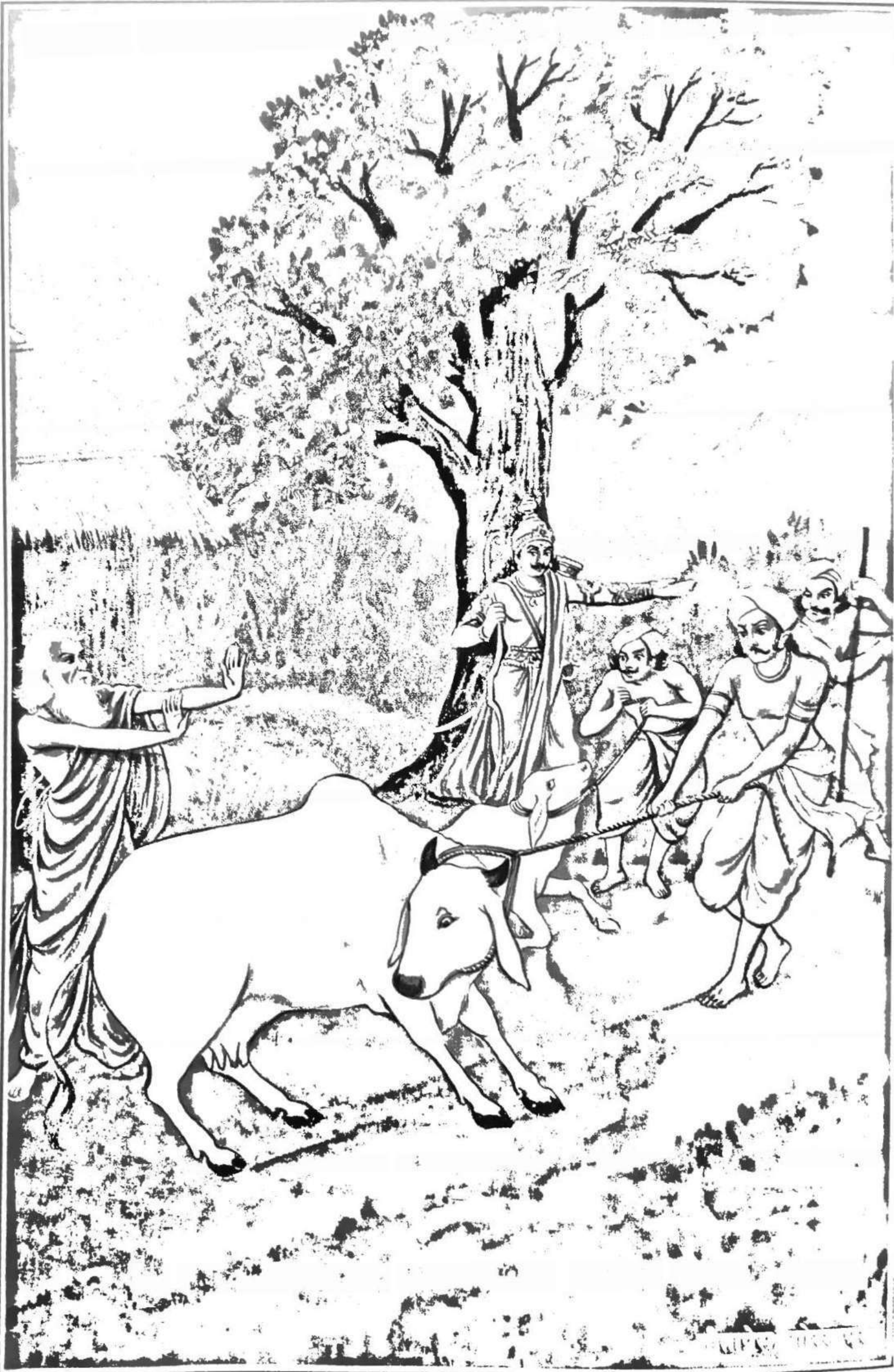
प्रसाद-आशीर्वाद

ब्रह्मा-विष्णु-महेशद्वारा कामधेनुकी स्तुति

त्वं माता सर्वदेवानां त्वं च यज्ञस्य कारणम् । त्वं तीर्थं सर्वतीर्थानां नमस्तेऽस्तु सदानघे॥
शशिसूर्यारुणा यस्या ललाटे वृषभध्वजः । सरस्वती च हुंकारे सर्वे नागाश्च कम्बले॥
क्षुरपृष्ठे च गन्धर्वा वेदाश्चत्वार एव च । मुखाग्रे सर्वतीर्थानि स्थावराणि चराणि च॥

(स्कन्द०, ब्रह्म०, धर्मारण्य० १०। १८—२०)

'हे निष्पापे! तुम सब देवताओंकी माता, यज्ञकी कारणरूपा और सम्पूर्ण तीर्थोंकी तीर्थरूपा हो। हम तुम्हें सदा नमस्कार करते हैं। तुम्हारे ललाटमें चन्द्रमा, सूर्य, अरुण और वृषभध्वज शंकर हैं, हुंकारमें सरस्वती, गलकम्बलमें नागगण, खुरोंमें गन्धर्व और चारों वेद तथा मुखाग्रमें चर एवं अचर सम्पूर्ण तीर्थ विराजमान हैं।'

भगवान् शंकरकी विलक्षण गोनिष्ठा

साक्षात् शंकर ही नीलवृष हैं

एक बार भगवान् शंकरसे ब्रह्मतेजसम्पन्न ऋषियोंका कुछ अपराध हो गया। ऋषियोंने घोर शाप दे दिया, जिसके भयसे त्रस्त होकर शंकरजी गोलोक पहुँचे और पवित्र ब्राह्मणोंके ही दूसरे रूप सुरभि माताका स्तवन करने लगे। उन्होंने कहा—

सृष्टिस्थितिविनाशानां कर्त्र्यै मात्रे नमो नमः॥
या त्वं रसमयैर्भावैराप्याययसि भूतलम्।
देवानां च तथा संघान् पितॄणामपि वै गणान्॥
सर्वैर्ज्ञात्वा रसाभिज्ञैर्मधुरास्वाददायिनी।
त्वया विश्वमिदं सर्वं बलस्नेहसमन्वितम्॥
त्वां माता सर्वरुद्राणां वसूनां दुहिता तथा।
आदित्यानां स्वसा चैव तुष्टा वाञ्छितसिद्धिदा॥
त्वं धृतिस्त्वं तथा तुष्टिस्त्वं स्वाहा त्वं स्वधा तथा।
ऋद्धिः सिद्धिस्तथा लक्ष्मीर्धृतिः कीर्तिस्तथा मतिः॥
कान्तिर्लज्जा महामाया श्रद्धा सर्वार्थसाधिनी।

'सृष्टि, स्थिति और विनाश करनेवाली हे माँ! तुम्हें बार-बार नमस्कार है। तुम रसमय भावोंसे समस्त पृथिवीतल, देवता और पितरोंको तृप्त करती हो। सब प्रकारके रसतत्त्वोंके मर्मज्ञोंने बहुत विचार करनेपर यही निर्णय किया कि मधुर रसका आस्वादन प्रदान करनेवाली एकमात्र तुम्हीं
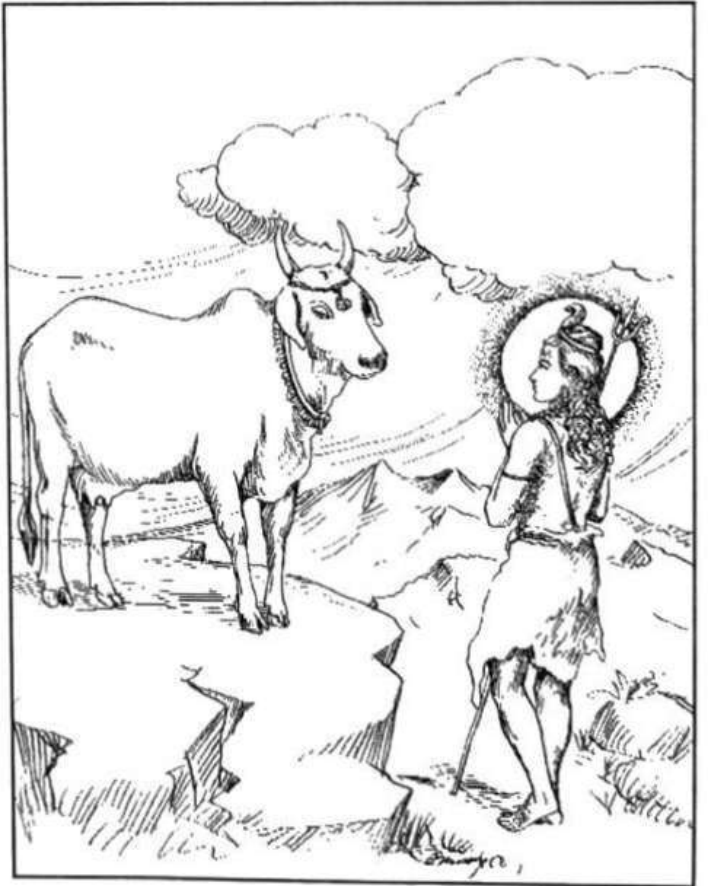
श्रीशंकरजीके द्वारा सुरभिकी स्तुति

हो। सम्पूर्ण चराचर विश्वको तुम्हींने बल और स्नेहका दान

दिया है। हे देवि! तुम रुद्रोंकी माँ, वसुओंकी पुत्री, आदित्योंकी स्वसा हो और संतुष्ट होकर वाञ्छित सिद्धि प्रदान करनेवाली हो। तुम्हीं धृति, तुष्टि, स्वाहा, स्वधा, ऋद्धि, सिद्धि, लक्ष्मी, धृति (धारणा), कीर्ति, मति, कान्ति, लज्जा, महामाया, श्रद्धा और सर्वार्थसाधिनी हो।'

तुम्हारे अतिरिक्त त्रिभुवनमें कुछ भी नहीं है। तुम अग्नि और देवताओंको तृप्त करनेवाली हो और इस स्थावर-जंगम—सम्पूर्ण जगत्में व्याप्त हो। देवि! तुम सर्वदेवमयी, सर्वभूत-समृद्धिदायिनी और सर्वलोकहितैषिणी हो, अतएव मेरे शरीरका भी हित करो। अनघे! मैं प्रणत होकर तुम्हारी पूजा करता हूँ। तुम विश्व-दुःखहारिणी हो, मेरे प्रति प्रसन्न हो। हे अमृतसम्भवे! ब्राह्मणोंके शापानलसे मेरा शरीर दग्ध हुआ जा रहा है, तुम उसे शीतल करो।

इतना कहकर शंकरजी परिक्रमा करके सुरभिके देहमें प्रवेश कर गये। सुरभि माताने उन्हें अपने गर्भमें धारण कर लिया। इधर शिवजीके न होनेसे सारे जगत्में हाहाकार मच गया। तब देवताओंने स्तवन करके ब्राह्मणोंको प्रसन्न किया और उससे पता लगाकर वे उस गोलोकमें पहुँचे, जहाँ पायसका पङ्क, घीकी नदी, मधुके सरोवर विद्यमान हैं। वहाँके सिद्ध और सनातन देवता हाथोंमें दही और पीयूष लिये रहते हैं।

गोलोकमें उन्होंने सूर्यके समान तेजस्वी 'नील' नामक सुरभि-सुतको देखा। भगवान् शंकर ही इस वृषभके रूपमें सुरभिसे अवतीर्ण हुए थे। देवता और मुनियोंने देखा—गोलोककी नन्दा, सुमनसा, स्वरूपा, सुशीलका, कामिनी, नन्दिनी, मेध्या, हिरण्यदा, धनदा, धर्मदा, नर्मदा, सकलप्रिया, वामनलम्बिका, कृष्णा, दीर्घशृंगा, सुपिच्छिका, तारा, तोयिका, शान्ता, दुर्विषह्या, मनोरमा, सुनासा, गौरा, गौरमुखी, हरिद्रावर्णा, नीला, शङ्खिनी, पञ्चवर्णिका, विनता, अभिनता, भिन्नवर्णा, सुपत्रिका, जया, अरुणा, कुण्डोध्नी, सुदती और चारुचम्पका—इन गौओंके बीचमें नील वृषभ स्वच्छन्द क्रीडा कर रहा है। उसके सारे अङ्ग लाल वर्णके थे। मुख और पूँछ पीले तथा खुर और सींग सफेद थे। वह नील वृष ही महादेव थे। वही चतुष्पाद धर्म थे और वही पञ्चमुख हर थे। उनके दर्शनमात्रसे वाजपेय यज्ञका फल मिलता है। नीलकी पूजासे सारे जगत्की पूजा होती है। नीलको चिकना ग्रास देनेसे जगत् तृप्त होता है। नीलकी देहमें विश्वव्यापी जनार्दन नित्य निवास करते हैं। देवता और ऋषियोंने विविध प्रकारसे नीलकी स्तुति करते हुए कहा—
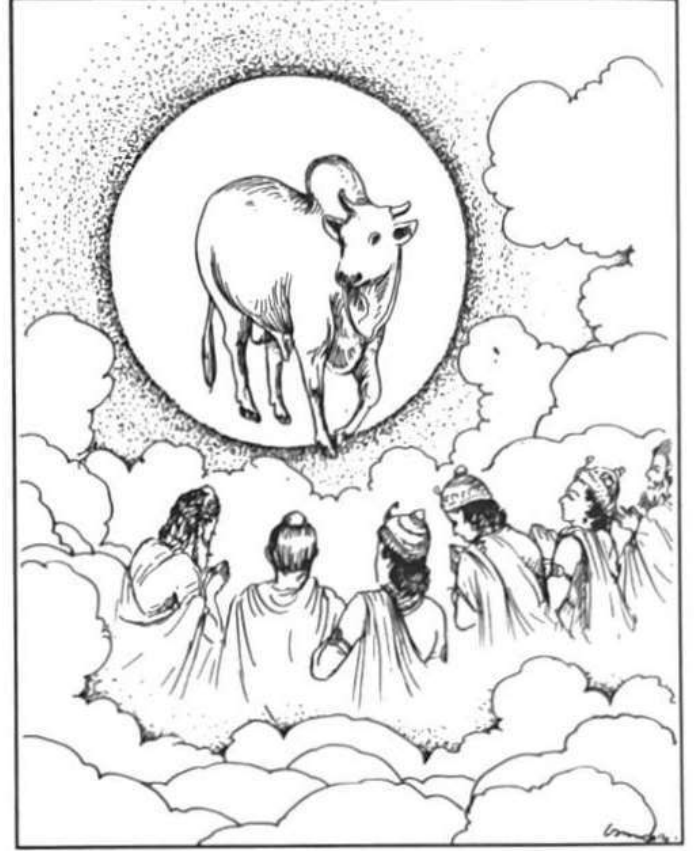
नील-वृषभरूपी शंकर

वृषस्त्वं भगवान् देव यस्तुभ्यं कुरुते त्वघम्॥
वृषलः स तु विज्ञेयो रौरवादिषु पच्यते।
पदा स्पृष्टः स तु नरो नरकादिषु यातनाः॥
सेवते पापनिचयैर्निगाढप्रायबन्धनैः।
क्षुत्क्षामञ्च तृषाक्रान्तं महाभारसमन्वितम्॥
निर्दया ये प्रशोष्यन्ति मतिस्तेषां न शाश्वती।

देव! तुम वृषरूपी भगवान् हो। जो मनुष्य तुम्हारे साथ पापका व्यवहार करता है, वह निश्चय ही वृषल होता है और उसे रौरवादि नरकोंकी यन्त्रणा भोगनी पड़ती है। जो मनुष्य तुम्हें पैरोंसे छूता है, वह गाढ़े बन्धनोंमें बँधकर, भूख-प्याससे पीडित होकर नरक-यातना भोगता है और जो निर्दय होकर तुम्हें पीडा पहुँचाता है, वह शाश्वती गति—मुक्तिको नहीं पा सकता।

ऋषियोंद्वारा स्तवन करनेपर नीलने प्रसन्न होकर उनको प्रणाम किया। फिर ब्राह्मणोंने नील वृषरूप महेश्वरको

वरदान दिया कि मृत प्राणीके एकादशाहके दिन सुन्दर सुदृढ़ शक्तिसम्पन्न नील वृषको, उसके वाम-भागमें चक्र और दक्षिण-भागमें शूल अङ्कित करके गायोंके समूहमें छोड़ दिया जायगा तो वह जगत्का कल्याण करता रहेगा। इस अवस्थामें देवता उसकी रक्षा करेंगे।

(स्कन्द०, नागर० अ० २५८-५९)

श्रीशिवजी वृषभध्वज और पशुपति कैसे बने ?

एक समय सुरभीका बछड़ा माँका दूध पी रहा था। उसके मुखसे दूधका झाग उड़कर समीप ही बैठे हुए श्रीशंकरजीके मस्तकपर जा गिरा। इससे शिवजीको क्रोध हो गया, तब प्रजापतिने उनसे कहा—'प्रभो! आपके मस्तकपर यह अमृतका छींटा पड़ा है। बछड़ोंके पीनेसे गायका दूध जूठा नहीं होता। जैसे अमृतका संग्रह करके चन्द्रमा उसे बरसा देता है, वैसे ही रोहिणी गौएँ भी अमृतसे उत्पन्न दूधको बरसाती हैं। जैसे वायु, अग्नि, सुवर्ण, समुद्र और देवताओंका पिया हुआ अमृत—ये कोई जूठे नहीं होते, वैसे ही बछड़ोंको पिलाती हुई गौ भी दूषित नहीं होती। ये गौएँ अपने दूध और घीसे समस्त जगत्का पोषण करेंगी। सभी लोग इन गौओंके अमृतमय पवित्र दूधरूपी ऐश्वर्यकी इच्छा करते हैं।'

इतना कहकर प्रजापतिने श्रीमहादेवजीको कई गौएँ और एक वृषभ दिया। तब शिवजीने भी प्रसन्न होकर वृषभको अपना वाहन बनाया और अपनी ध्वजाको उसी वृषभके चिह्नसे सुशोभित किया। इसीसे उनका नाम 'वृषभध्वज' पड़ा। फिर देवताओंने महादेवजीको पशुओंका स्वामी (पशुपति) बना दिया और गौओंके बीचमें उनका नाम 'वृषभाङ्क' रखा गया। गौएँ संसारमें सर्वश्रेष्ठ वस्तु हैं। वे सारे जगत्को जीवन देनेवाली हैं। भगवान् शंकर सदा उनके साथ रहते हैं। वे चन्द्रमासे निकले हुए अमृतसे उत्पन्न शान्त, पवित्र, समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली और समस्त प्राणियोंके प्राणोंकी रक्षा करनेवाली हैं। (महा०, अनु० ७७)

भगवान् श्रीरामके लीला-उपकरणोंमें गौकी विशेषता

गौएँ विश्वकी माता मानी गयी हैं। स्वयम्भू श्रीब्रह्माजीने जब लोकसृष्टिकी कामना की थी, तब उन्होंने समस्त प्राणियोंकी जीवन-वृत्तिके लिये पहले-पहल गौओंकी ही सृष्टि की थी—

लोकान् सिसृक्षुणा पूर्वं गावः सृष्टाः स्वयम्भुवा।
वृत्त्यर्थं सर्वभूतानां तस्मात् ता मातरः स्मृताः॥

(महाभा०, अनु० १४५)

गौ माता मातृशक्तिकी साक्षात् प्रतिमा है। जिस दिन विश्वमें गौएँ नहीं रहेंगी, उस दिन विश्व मातृशक्तिसे वियुक्त हो जायगा और उस दशामें कोई भी प्राणी नहीं बचेगा। प्राचीन युगोंमें भारतमें जो विबुध-विस्मयकारी वैभव विद्यमान होनेकी विशद चर्चा पुराणेतिहासोंमें मिलती है, उस वैभवका मूलाधार गौएँ ही थीं। यहाँके ऋषि-मुनियोंका तो जीवन-निर्वाह, धार्मिक क्रिया-कलाप एवं विविध प्रकारकी विद्याएँ गौओंपर ही निर्भर थीं। इसके प्रमाणस्वरूप श्रीवाल्मीकीय रामायणमें उल्लिखित श्रीवसिष्ठजीका यह कथन पठनीय है—

शाश्वती शबला मह्यं कीर्तिरात्मवतो यथा।
अस्यां हव्यं च कव्यं च प्राणयात्रा तथैव च॥
आयत्तमग्निहोत्रं च बलिर्होमस्तथैव च।
स्वाहाकारवषट्कारौ विद्याश्च विविधास्तथा॥

(वा० रा० १।५३।१३-१४)

अर्थात् आत्मवान् पुरुषकी अक्षय कीर्तिके समान सदा मेरे साथ सम्बन्ध रखनेवाली यह चितकबरी गौ मुझसे पृथक् नहीं हो सकती। मेरा हव्य-कव्य और जीवन-निर्वाह इसीपर निर्भर है। मेरा अग्निहोत्र, बलि, होम, स्वाहा-वषट्कार और भाँति-भाँतिकी विद्याएँ इसीके अधीन हैं।

इन उद्धरणोंमें गौओंकी अप्रतिम उपयोगिता व्यक्त है। इतना ही नहीं अखिल ऐश्वर्यागार भगवान् श्रीरामके लीला-प्रसंगोंका अनुशीलन करनेपर श्रीभगवान्के लीला-उपकरणोंमें

भी गौकी विशेषताके दर्शन होते हैं।

परम प्रभु भक्तोंके लिये लीला-शरीर धारण करते हैं—'*भगत हेतु लीलातनु गहई॥*' (मानस १।१४४।७)। किंतु लीला अकेले नहीं हो सकती। लीलामें सहचरों और उपकरणोंकी भी अपरिहार्य भूमिका होती है। प्रभु श्रीरामकी लीला भी इसका अपवाद नहीं। भगवान् श्रीरामकी पाँच लीलाएँ मुख्य प्रतीत होती हैं—बाललीला, विवाहलीला, वनलीला, रणलीला तथा राजलीला। इन सभी लीलाओंमें गौओंका बहुधा उपयोग दर्शनीय है।

भगवान् श्रीरामने महाराज श्रीदशरथ एवं महारानी कौसल्याके पुत्र-रूपमें जन्म ग्रहणकर जो लौकिक बालकवत् लीलाएँ कीं, उसका परोक्षतः श्रेय गौको ही है। असुरोंके अत्याचारसे आकुल पृथ्वीके आधिदैविक रूप गौके साथ ब्रह्मादि देवोंने गुहार की, जिससे द्रवित होकर भगवान् श्रीहरिने महाराज श्रीदशरथ एवं महारानी कौसल्याके घर अवतरित होनेका आश्वासन दिया। आगे चलकर महाराज श्रीदशरथको पुत्र-प्राप्तिमें विलम्ब होने लगा और उनका जीवन चौथेपनमें पहुँच गया; पर उन्हें कोई पुत्र नहीं हुआ। अन्तमें उन्होंने गुरु वसिष्ठके परामर्शसे शृंगी ऋषिसे यज्ञ करवाया। यहाँ ध्यातव्य है कि यज्ञ गौओंद्वारा प्रदत्त हविसे ही होता है। अतः कहा गया है कि गायोंमें ही यज्ञकी प्रतिष्ठा है और गाय ही यज्ञफलका कारण है—

गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।

(महाभा०, अनु० ७८।८)

उस यज्ञके अवसरपर महाराज श्रीदशरथने दस लाख गौएँ दान की थीं—

गवां शतसहस्राणि दश तेभ्यो ददौ नृपः॥

(वा०रा १।१४।५०)

यज्ञफलकी प्राप्तिमें कारण-स्वरूपा गौओंका जहाँ दानमें इतनी बड़ी संख्यामें उपयोग हुआ, वहाँ स्वयं प्राजापत्य पुरुष अग्निदेव स्वर्णपात्रमें दिव्य खीर लिये प्रकट हुए और उन्होंने उसे महाराज श्रीदशरथको देकर रानियोंको खिला देनेके लिये कहा। उस खीरको खाकर रानियाँ गर्भवती हुईं और शुभ समयपर भाइयोंसहित भगवान् श्रीराम अवतरित हुए। उनके अवतरणके उपलक्ष्यमें महाराज श्रीदशरथने पुनः ब्राह्मणोंको बहुत-सी गौएँ दानमें दीं—

हाटक धेनु बसन मनि नृप बिप्रन्ह कहँ दीन्ह॥

(मानस १।१९३)

भगवान् श्रीरामकी बाललीलाके दो भाग हैं। पहला भाग शिशुलीला है और दूसरा भाग बाललीला। शिशुको बोलना नहीं आता। अतः वह अपनी पीड़ाकी बात बोलकर नहीं बता सकता। वह पीड़ित होनेपर बेचैनीसे रोता है। परात्पर ब्रह्म श्रीराम भी शैशवावस्थामें सामान्य शिशुकी तरह ही कभी-कभी बेचैन हो उठते थे। वे ठीकसे दूध नहीं पीते और बैठे, खड़े या पालनेमें झुलानेसे भी रोना नहीं छोड़ते थे। माताएँ दुष्टा स्त्रियोंकी नजर लग जानेकी शंका कर उसके निवारणके लिये देव, पितर और ग्रहोंकी पूजा करतीं तथा शिशु श्रीरामको घीसे तौलकर घीका तुलादान किया करती थीं—

'**देव, पितर, ग्रह पूजिये तुला तौलिये घीके**'

(गीतावली १।१२।२)

गोघृतमें कुरूपता, पाप, राक्षस-बाधा-नाशकादि अनेक गुण कहे गये हैं।

माता-पिता बालकोंके स्वास्थ्य-वर्धनके लिये उन्हें यथासाध्य पुष्टिकर भोजन खिलाना चाहते हैं और बालक आनाकानी करते हैं। श्रीरामचरितमानसमें आया है कि महाराज श्रीदशरथ अपने साथ भोजन करनेके लिये बालक्रीडामें रत श्रीरामको बुलाते थे, पर श्रीराम बालमण्डली छोड़कर नहीं जाते थे। माता कौसल्या उन्हें पकड़कर लातीं और भोजनपर बैठाती थीं। श्रीराम भोजन करते-करते अवसर पाकर मुखमें दही-भात लपेटे भाग जाते थे—

भाजि चले किलकत मुख दधि ओदन लपटाइ॥

(मानस १।२०३)

बालक श्रीरामके भोजनमें दहीका उल्लेख गौका स्मरण कराता है।

भगवान् श्रीरामके विवाहके अवसरपर राजा जनकने महाराज श्रीदशरथसे अनुरोध किया—'राजन्! श्रीराम-लक्ष्मणसे गोदान करवाइये, पितृकार्य भी सम्पन्न कीजिये। तत्पश्चात् विवाहका कार्य आरम्भ कीजियेगा—'

रामलक्ष्मणयो राजन् गोदानं कारयस्व ह।
पितृकार्यं च भद्रं ते ततो वैवाहिकं कुरु॥

(वा० रा० १।७१।२३)

इस अनुरोधपर महाराज श्रीदशरथने उत्तम गोदान किये—'**चक्रे गोदानमुत्तमम्।**' उस समय स्वर्णमण्डित सींगोंवाली चार लाख गौएँ काँसेके दोहनपात्रके साथ ब्राह्मणोंको दानमें दी गयी थीं—

सुवर्णशृंग्यः सम्पन्नाः सवत्साः कांस्यदोहनाः।
गवां शतसहस्राणि चत्वारि पुरुषर्षभः॥

(वा० रा० १।७२।२३)

महाराज श्रीदशरथद्वारा एक-एक पुत्रके मङ्गलार्थ एक-एक लाख गौएँ दान की गयी थीं। चारों कुमार-कुमारियोंके विवाह सम्पन्न हो जानेपर श्रीजनकजीने चक्रवर्ती महाराज श्रीदशरथको कामधेनुसे समता करनेवाली अनेकों गौएँ प्रदान कीं। पुत्रोंके विवाहके बाद भी प्रात:कृत्य करके भूपशिरोमणि महाराज श्रीदशरथने गुरु वसिष्ठके समीप जाकर निवेदन किया—

अब सब बिप्र बोलाइ गोसाईं। देहु धेनु सब भाँति बनाईं॥

(मानस १।३३०।७)

देनेके समय कामधेनु-सदृश चार लाख गौएँ मँगायी गयीं और अलंकृतकर ब्राह्मणोंको दी गयीं—

चारि लच्छ बर धेनु मगाईं। काम सुरभि सम सील सुहाईं॥
सब बिधि सकल अलंकृत कीन्हीं। मुदित महिप महिदेवन्ह दीन्हीं॥

(मानस १।३३१।२-३)

भगवान् श्रीरामकी वनयात्रा परिजनोंके लिये विषादका विषय था, पर स्वयं श्रीरामके लिये विनोदका। उन्होंने उत्साहपूर्वक अकूत अन्न-धन-रत्नादि तथा बहुत-सी गौएँ दानकर वनयात्रा आरम्भ की। उस समय भगवान् श्रीरामने लक्ष्मणजीसे कहा कि महर्षि अगस्त्य एवं विश्वामित्रजीको हजारों गौएँ देकर संतुष्ट करो—'**तर्पयस्व महाबाहो गोसहस्रेण राघव।**' इसी प्रकार उन्होंने सूतश्रेष्ठ सचिव चित्ररथको वस्तु-वाहन-धनादिके साथ एक हजार गौएँ—'**गवां दश शतेन च**' एवं कठ तथा कलाप-शाखाके अध्येता ब्रह्मचारियोंको चावल और चनेका भार वहन करनेवाले बारह सौ बैल और व्यंजन एवं दही-घीके लिये एक हजार गौएँ दिलवायीं—

शालिवाहसहस्रं च द्वे शते भद्रकांस्तथा॥
व्यञ्जनार्थं च सौमित्रे गोसहस्रमुपाकुरु।

(वा० रा० २।३२।२०-२१)

भगवान् श्रीरामकी वनयात्राके अवसरपर गोदानकी एक विनोदपूर्ण कथा श्रीवाल्मीकीय रामायणमें आयी है। श्रीराम वन जानेको तैयार थे। उस बातसे अनभिज्ञ त्रिजट नामक एक दीन-दुर्बल ब्राह्मणको पत्नीने प्रेरित किया—'नाथ! आप श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करें तो अवश्य कुछ पा जाइयेगा, वे बड़े धर्मज्ञ हैं।' त्रिजटने भगवान् श्रीरामके पास पहुँचकर कहा—'मैं निर्धन हूँ, मेरे बहुत-सी संतानें हैं। आप मुझपर कृपा करें।' दुर्बलतासे पीले पड़े हुए ब्राह्मणकी बात सुनकर भगवान् श्रीरामने विनोदमें कह दिया—'विप्रवर! आप अपना डंडा जितनी दूर फेंक सकें, फेंकिये। वह जहाँ जाकर गिरेगा, वहाँतककी सब गौएँ आपकी हो जायँगी।' यह सुनकर त्रिजटने शीघ्रतासे धोतीका फेंटा कसकर डंडेको घुमाकर ऐसे जोरसे फेंका कि वह सरयूजीके पार हजारों गौओंके बीच एक साँड़के पास गिरा। भगवान् श्रीरामने त्रिजटको गले लगा लिया और कथनानुसार सारी गौएँ उनके पास भिजवा दीं। गौओंके समूहको पाकर मुनि त्रिजट पत्नीसहित प्रसन्न हो गये—'**गवामनीकं प्रतिगृह्य मोदितः।**' (वा० रा० २। ३२। ४३)

भगवान् श्रीरामकी रणलीलाका पूर्वाभ्यास विश्वामित्रजीके यज्ञकी रक्षाके समय देखनेको मिलता है। वह रण गो-ब्राह्मणोंके हितार्थ हुआ।

विश्वामित्रजीने भगवान् श्रीरामको गो-ब्राह्मणोंके हितके लिये दुष्ट पराक्रमवाली परम भयंकर यक्षी ताड़काका वध करनेके लिये प्रेरित किया—

'गोब्राह्मणहितार्थाय जहि दुष्टपराक्रमाम्।'

श्रीरामने आदेश शिरोधार्य करते हुए कहा—'गो-ब्राह्मणों एवं समूचे राष्ट्रके हितके लिये मैं आप-जैसे अनुपम प्रभावशाली महात्माके आदेशका पालन करनेको सब तरहसे तैयार हूँ—'

गोब्राह्मणहितार्थाय देशस्य च हिताय च।
तव चैवाप्रमेयस्य वचनं कर्तुमुद्यतः॥

(वा० रा० १।२६।५)

भगवान् श्रीरामने गौ-ब्राह्मणोंके हितके लिये ही पहले-पहल भीषण संग्राम किया और ताड़का-सुबाहुका सेना-समेत संहार किया।

भगवान् श्रीरामका रावणके साथ जो युद्ध हुआ, उसका भी एक कारण रावणका गौओंके साथ शत्रु-भाव था। रावणके आदेशसे उसके अनुचर जिस देशमें गो-ब्राह्मणोंको पाते थे, उस देशके नगर, गाँव एवं पुरमें आग लगा देते थे —

जेहिं जेहिं देस धेनु द्विज पावहिं। नगर गाउँ पुर आगि लगावहिं॥

(मानस १।१८३।६)

इधर भगवान् श्रीराम तो विप्र, धेनु, सुर, संत-हितार्थ अवतरित ही हुए—

'बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।'

(मानस १।१९२)

अतः उन्होंने गोघाती आततायी असुरोंके विनाशके लिये लंकामें ऐसा प्रचण्ड युद्ध किया जैसा **'न भूतो न भविष्यति।'**

भगवान् श्रीरामकी राजलीलाका भी शुभारम्भ गौओंकी भूमिकासे ही होता है। वनवाससे लौटनेपर श्रीराम जब स्वागतमें आगत एक विशाल जनसमूहके साथ राजधानी अयोध्यामें प्रवेश करने लगे, तब उनके आगे-आगे अन्यान्य मङ्गलसूचक प्रतीकोपकरणोंके साथ गौएँ भी चल रही थीं—

अक्षतं जातरूपं च गावः कन्याः सहद्विजाः।
नरा मोदकहस्ताश्च रामस्य पुरतो ययुः॥

(वा० रा० ६।१२८।३८)

अपने राज्याभिषेकके अवसरपर भगवान् श्रीरामने ब्राह्मणोंको एक लाख घोड़े, उतनी ही संख्यामें दुधार गौएँ तथा एक सौ साँड़ दानमें दिये थे—

सहस्त्रशतमश्वानां धेनूनां च गवां तथा॥
ददौ शतवृषान् पूर्वं द्विजेभ्यो मनुजर्षभः।

(वा० रा० ६।१२८।७३-७४)

श्रीवाल्मीकीय रामायणमें कहा गया है कि श्रीरामचन्द्रजीने बहुत-से अश्वमेधयज्ञ और उससे दसगुने वाजपेय तथा अपार धन व्ययकर बहुत-से अग्निष्टोम, अतिरात्र, गोसव तथा अन्य बड़े-बड़े यज्ञ किये। एक गोसव-यज्ञकी दक्षिणामें दस हजार गौएँ देनेका विधान है। सब प्रकारके यज्ञोंमें जितनी गौएँ दान की गयी होंगी, उस संख्याका अनुमान भी नहीं किया जा सकता। श्रीरामचरितमानसमें भी उल्लिखित है कि भगवान् श्रीरामने करोड़ों अश्वमेधयज्ञ किये थे—

कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्हे। दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्हे॥

(मानस ७।२४।१)

गोघृत और दधिके बिना यज्ञ नहीं होता। उन्हींसे यज्ञका यज्ञत्व सफल होता है। अतः गौओंको यज्ञका मूल कहते हैं—

ऋते दधि घृतेनेह न यज्ञः सम्प्रवर्तते।
तेन यज्ञस्य यज्ञत्वमतो मूलं च कथ्यते॥

(महाभा०, अनु० ८३।२)

करोड़ों अश्वमेधके उद्देश्यसे राजराजेश्वर श्रीरामकी राजकीय गोशालाओंमें असंख्य गौओंकी सेवा होती थी और उन्हींका दानोपहारमें उपयोग होता था। रामराज्यमें गौएँ पूज्या थीं, उनकी सेवा राजधर्म था। उस समय गौएँ मनोवाञ्छित दूध देती थीं—

मनभावतो धेनु पय स्त्रवहीं॥

(मानस ७।२३।५)

आनन्दरामायणमें भगवान् श्रीरामकी दिनचर्या उल्लिखित है। उससे पता चलता है कि श्रीराम सोकर उठते ही देव-द्विज-गुरु-माता-पिता एवं कामधेनुका स्मरण किया करते थे। सीताजी नित्य ही सोनेके पात्रमें पूजनकी सामग्रियाँ लेकर कामधेनुकी पूजाकर उसे पक्वान्न खिलाया करती थीं। कामधेनु प्रसन्न होकर विविध प्रकारके भोज्य पदार्थ प्रदान करती थी, जिन्हें सीताजी पाकशालामें रखती थीं और ब्राह्मणों, इष्ट-मित्रों तथा परिजनोंको परोसती थीं।

इस प्रकार भगवान् श्रीरामकी लीलाओंमें गौओंके सहयोगके अनेक प्रसंग भरे हैं। (श्रीरामपदारथसिंहजी)

श्रीकृष्ण-लीलाके उपकरणोंमें गाय

सुर-वनिताओंकी वीणाविनिन्दित स्वरलहरी अन्तरिक्षको चीरकर नन्दप्राङ्गणके मणिमय स्तम्भोंमें प्रतिध्वनित हो उठी—

रिङ्गणकेलिकुले जननीसुखकारी।
व्रजदृशि सुकृतस्फुरदवतारी॥
वलयितबाल्यविलास! जय बलवलित! हरे!*

नन्दरानी चकित-सी होकर एक क्षणके लिये आकाशकी ओर देखने लगीं, पर उनकी आँखें तो अपने नयनानन्द प्राणाराम हृदयधन नीलमणिकी छबिसे निरन्तर परिव्याप्त थीं। उन्हें वहाँ भी उस नीले गगनके वक्ष:स्थलपर भी दीखा—

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, मुख दधि लेप किए॥
चारु कपोल, लोल लोचन, गोरोचन-तिलक दिए।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप-गन मादक मधुहिं पिए॥
कठुला-कंठ, बज्र केहरि-नख, राजत रुचिर हिए।
धन्य सूर एकौ पल इहिं सुख, का सत कल्प जिए॥

नीलमणि श्यामसुन्दरके अरुण करपल्लवमें उज्ज्वलतम नवनीत है; नवनीरद श्रीअङ्गोंको नचा-नचाकर घुटुरुआँ चलते हुए वे घूम रहे हैं; प्राङ्गणके बड़भागी धूलिकणोंसे श्यामल अङ्ग परिशोभित है; अरुण अधर तथा ओष्ठ धवल दधिसे सने हैं; सुन्दर कपोल एवं चञ्चल नयनोंकी शोभा निराली ही है; उन्नत ललाटपर गोरोचनका तिलक है; मनोहर मुखारविन्दपर घनकृष्ण केशोंकी घुँघराली लटें लहरा रही हैं; लटें ऐसी प्रतीत होती हैं, मानो भ्रमर हों, श्यामसुन्दरके मनोहर मुखारविन्दका मधुर मधुपान करने आये हों, मधु पीकर मत्त हो गये हों, सुध-बुध भूले हुए, अरविन्दपर अरबरा रहे हों; कमनीय कण्ठमें कठुला शोभा पा रहा है; विशाल हृदयपर व्याघ्रनख आदि टोना-निर्वारक वस्तुओंसे निर्मित माला झूल रही है। एक ओर इस छबिके क्षणभर दर्शनका आनन्द तथा दूसरी ओर सैकड़ों कल्पोंका समस्त जीवन-सुख—इन दोनोंकी तुलनामें वह एक क्षण ही धन्य है, कल्पोंका जीवन तुच्छातितुच्छ सर्वथा व्यर्थ—अनर्थ है।

श्रीकृष्णका घुटरूँ चलना

नन्दरानीने आकाशसे दृष्टि हटा ली तथा वह आँगनमें किलकते हुए नीलमणिको पुन: देखने लग गयी। आँखोंके कोयोंमें आनन्दाश्रु छलक आये। यही दशा व्रजनरेश नन्दराजकी भी थी, जो कुछ ही दूरपर खड़े हुए अपने पुत्रकी रिङ्गण-लीला निर्निमेष नयनोंसे निहार रहे थे।

अग्रज दाऊ पास ही बैठे आनन्दाम्बुधिमें आकण्ठ निमग्न थे। उनके आनन्दकी सीमा नहीं थी। कभी आगे, कभी पीछे रहकर छायाकी तरह वे श्यामसुन्दरका अनुगमन करते थे। दोनों भाई परस्पर अस्पष्ट कुछ बोलते और दोनों ही खिलखिलाकर हँस पड़ते थे। थोड़ी दूर घुटरूँ चलकर अपने ही नूपुरकी रुनझुन ध्वनिसे चकित हो जाते, स्निग्ध गम्भीर मुद्रामें कुछ क्षण सोचने-से लगते, फिर आगे बढ़ते, फिर रुनझुन शब्द होता, फिर ठिठक जाते। ठहरते ही

* ये नन्दनन्दन बकैयाँ चलते हुए अपनी विविध क्रीडाओंसे माता यशोदाको आनन्दित करते हैं तथा व्रजवासियोंके अपूर्व सौभाग्यसे ही उनके नेत्रोंके सामने स्वयं अवतारी ही स्फुरित हुए हैं। विविध बाल्यविलाससे युक्त बलरामजीसहित श्रीकृष्णकी जय हो।

मणिमय आँगनमें मनोहर मुखकमल प्रतिबिम्बित हो जाता और विस्फारित नेत्रोंसे उसकी ओर देखने लगते। कभी उसे पकड़नेके उद्देश्यसे उसके सिरपर हाथ रख देते। हाथका व्यवधान आनेसे प्रतिबिम्ब लुप्त हो जाता, श्यामसुन्दर आश्चर्यभरी मुद्रामें जननीकी ओर देखने लगते।

इस प्रकार बाललीलाधारी गोलोकविहारीकी अभिनव रिङ्गणलीला प्रारम्भ हुई तथा प्रतिक्षण नयी-नयी होकर बढ़ चली। यह कोई प्राकृत शिशुका स्वभावजात घुटुरुन तो था नहीं कि जिसकी निश्चित सीमा हो। यह तो स्वयं भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन श्यामसुन्दर श्रीकृष्णके चिदानन्दमयस्वरूपभूत रससागरका एक तरङ्ग-विशेष था। चन्द्रकलाकी भाँति जिस अनुपातसे वात्सल्य-स्नेहवती माता यशोदा एवं अन्य व्रजसुन्दरियोंकी भावनाएँ बढ़ रही थीं, उसी अनुपातसे उस अचिन्त्य-अनन्त चिन्मय-रस-सार-सुधा-समुद्रमें सरल वक्र और तीक्ष्ण तरङ्गें उठ रही थीं। बालकृष्णके घुटरूँ चलनेका समाचार विद्युत्की तरह समस्त गोष्ठमें फैल चुका था। यूथ-की-यूथ भाग्यवती व्रज-वनिताएँ प्रतिदिन नन्दद्वारपर एकत्र हो जातीं तथा उस अनुपम लीलारस-सुधाका अतृप्त पान करके बलिहार जातीं। सबका अलग-अलग हृदय था, सबकी अपनी-अपनी भावनाएँ थीं, सभी अपनी भावनाके अनुरूप लीलाका रस लेती थीं। रस लेती-लेती रसके तीव्र स्रोतोंमें वे बह जातीं, न जाने किन-किन मधुमय अभिलाषाओंको अन्तस्तलमें छिपाये रहतीं। इन सबका प्रतिबिम्ब श्यामसुन्दरके हृदयपर पड़ता एवं सबकी रुचिके अनुकूल सर्वसुखदायिनी अत्यन्त मनोहारिणी लीलाका प्रकाश होता। श्यामसुन्दरमें कितना ज्ञान हुआ है, इसका रस लेनेवालीके लिये वैसी ही लीला होती। गोपी पूछती—नीलमणि! तेरा मुख कहाँ है? उत्तरमें नीलमणि मनोहर मुखपर अपनी अँगुली रख देते। आँख कहाँ है? नीलमणि काजल लगे हुए नयनकमलोंको दोनों कर-कमलोंकी नन्ही-नन्ही अँगुलियोंसे मूँदकर गोपीकी ओर मुँह करके बैठ जाते। अच्छा लल्ला! नाक क्या वस्तु है? नन्दनन्दन प्राणायामकी मुद्रामें नाकका स्पर्श करते।

वाह वाह! मेरे प्राण-धन! अच्छा इस बार कान और चोटी तो मुझे दिखा दे। श्रीकृष्ण चटपट कानोंको छूकर दोनों हाथोंसे शिखाके स्थानको दबाकर सिर हिलाने लगते। गोपी आनन्दमें डूब जाती—

क्वाननं क्व नयनं क्व नासिका
क्व श्रुतिः क्व च शिखेति केलितः।
तत्र तत्र निहिताङ्गुलीदलो
वल्लवीकुलमनन्दयत् प्रभुः॥

कोई गोपी देखना चाहती यशोदानन्दनमें खड़े होनेकी शक्ति आयी है या नहीं। उसके लिये व्रजेन्द्रनन्दन धीरे-धीरे उठ खड़े होते। चार-पाँच पग चलकर गिर पड़ते। किसी व्रजवनिताके मनमें आता, यह सलोना साँवरा बोल सकता है या नहीं? उसके मनोरथकी पूर्तिके लिये दोनों भाई परस्पर अस्फुटस्वरमें कुछ बोल जाते; गोपीका हृदय आनन्दसे उछलने लगता। इस तरह लीलामयके लीलारसप्रवाहसे समस्त व्रज प्लावित हो गया। फिर भी व्रजवनिताओंकी आँखें तृप्त नहीं होतीं। उत्तरोत्तर मधुरातिमधुर लीला देखनेकी चाह बढ़ती ही जाती। अतः एक ही साथ सबको वात्सल्य-रस-सिन्धुमें डुबो देनेके उद्देश्यसे एक अत्यन्त मधुर बाललीलाका आस्वादन करनेकी इच्छा श्यामसुन्दरके मनमें जाग्रत् हुई। इच्छाकी देर थी, अचिन्त्यलीलामहाशक्तिने तत्क्षण व्रजराजनन्दनको उसी साजसे सजा दिया और लीला प्रारम्भ हो गयी।

व्रजराज गोशालामें बछड़ोंकी सँभाल करने गये हैं और व्रजरानी अपने प्राणधन ललनके लिये भोजन बनानेमें संलग्न हैं। राम-श्याम दोनों भाई आँगनमें खेल रहे हैं। अबतक दोनों भाई मैया एवं बाबाकी गोदमें चढ़कर ही द्वारदेश एवं गोशाला आदिमें जाते थे। आज स्वतन्त्ररूपसे दोनों भाई तोरणद्वारकी ओर चल पड़े। कभी खड़े होकर कुछ डग चलते, कभी घुटनोंके बल। इस तरह बाहर चले आये। आम्रकी शीतल छायामें कुछ गोवत्स विश्राम कर रहे थे। धीरे-धीरे उनके पास जा पहुँचे। बछड़ेकी सुकोमल पूँछको देखकर आश्चर्यचकित-से होकर विचारने लगे, यह क्या है? फिर दोनों भाइयोंने अपने नेत्रकमलोंको किञ्चित् नचाकर मानो कुछ परामर्श-सा किया और धीरेसे एक ही साथ पूँछको दोनों हाथोंसे मुट्ठी बाँधकर पकड़ लिया। अचानक पूँछ खिंच जानेसे बछड़ा उठ खड़ा हुआ तथा भागने लगा। अचिन्त्यलीलामहाशक्तिने इसी क्षण श्यामसुन्दरकी स्वाभाविक अनन्त असीम सर्वज्ञतापर
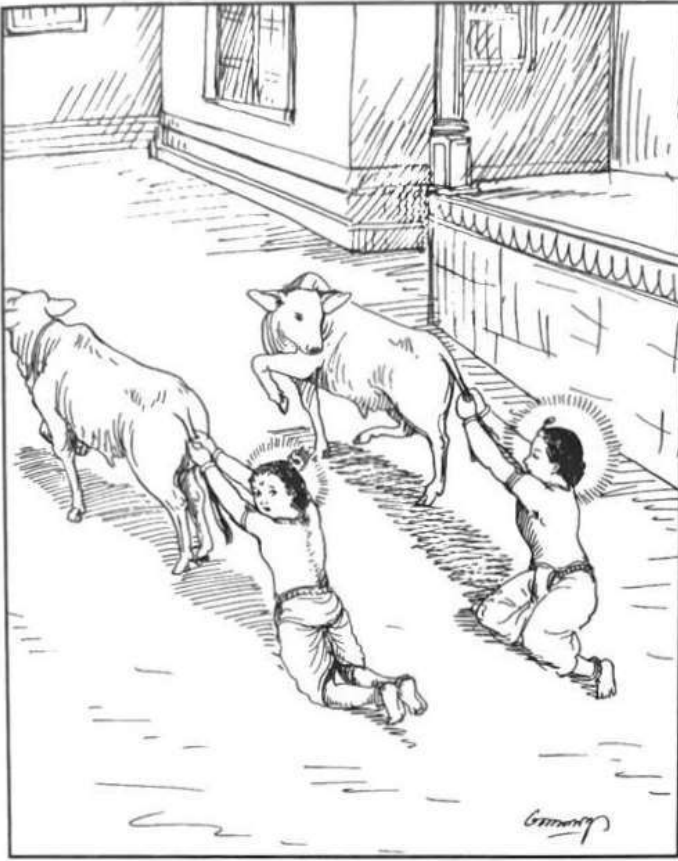
श्रीकृष्ण-बलरामका बछड़ोंकी पूँछ पकड़ना

बाललीलोचित मुग्धताकी यवनिका गिरा दी। दोनों भाई बछड़ेसे खिंचे जाते हुए भयभीत हो उठे। जिसके अनन्तानन्त ज्ञानभण्डारके एक क्षुद्रतम कण-ज्ञानसे समस्त विश्वमें कर्तव्याकर्तव्य-ज्ञानका सञ्चार होता है, वे भगवान् श्रीकृष्ण यह ज्ञान भूल गये कि पूँछ छोड़ देनेसे ही बछड़ेका सम्बन्ध छूट जायगा, बल्कि उन्होंने तो अपनी रक्षाके लिये और भी अधिक शक्ति लगाकर पूँछको जकड़ लिया तथा माँ-माँ! बाबा-बाबा! पुकारकर रोने लगे! उसी क्षण समस्त व्रजवनिताओंकी हृदय-वीणापर माँ-माँ, बाबा-बाबाकी करुणामिश्रित स्वरलहरी झंकृत हो उठी, क्योंकि उनके हृत्तन्तु सर्वथा श्याममय होकर निरन्तर श्यामसुन्दरसे ही जुड़े रहते थे। अत: जो जहाँ जिस अवस्थामें थीं, चल पड़ीं। इतनी शीघ्र कैसे आ पहुँचीं, यह किसीने नहीं जाना, पर सभी आ पहुँचीं। सबने देखा, भयभीत गोवत्स धीरे-धीरे भाग रहा है तथा उसकी पूँछ पकड़े नीलमणि एवं दाऊ माँ-माँ, बाबा-बाबाकी पुकार करते हुए खिंचे चले जा रहे हैं। अचिन्त्यलीला-शक्तिके महान् प्रभावसे कुछ क्षण सभी किंकर्तव्यविमूढ़-सी हो गयीं। इसी समय उपनन्द-पत्नीने शीघ्रतासे बछड़ेके आगे जाकर उसे थाम लिया। इतनेमें नन्दरानी एवं नन्दराय भी आ पहुँचे। 'बेटा नीलमणि! दाऊ! पूँछ छोड़ दे, पूँछ छोड़ दे' कहते हुए दोनोंने हाथसे पकड़कर पूँछ छुड़ा दी। नन्दरानीने नीलमणि एवं दाऊको अपनी गोदमें ले लिया, दोनोंका मुख चूमने लगीं। इधर व्रजसुन्दरियोंमें हँसीका स्रोत उमड़ पड़ा, बाललीलाविहारीकी इस अद्भुत अभूतपूर्व ललित लीलाको देखकर सभी हँसते-हँसते लोट-पोट हो गयीं। एक ग्वालिन बोली—'नीलमणि! अरे दाऊ! तुम दोनों भला इस बछड़ेसे भी दुर्बल हो! अरे, पूँछ पकड़कर बछड़ेको रोक लेते या पूँछ पकड़े-पकड़े सारे व्रजमें घूम आते, यह बछड़ा तुम्हें व्रजमें घुमा लाता। हमलोग अपने-अपने घरहीपर तुम्हें देखकर निहाल होतीं, बछड़े भी निहाल होते।' यों कहते-कहते ग्वालिनकी आँखोंमें प्रेमके आँसू छलछल करने लगे।

श्यामसुन्दर हँसने लगे, मानो संकेतसे कह रहे हैं—'एवमस्तु।' इसके पश्चात् भक्तवाञ्छाकल्पतरु व्रजराजनन्दनने बछड़ोंको अपने करस्पर्शका योगीन्द्र-मुनीन्द्र-दुर्लभ आनन्द देते हुए इस परम सुन्दर लीलाका अनेकों बार प्रकाश किया।
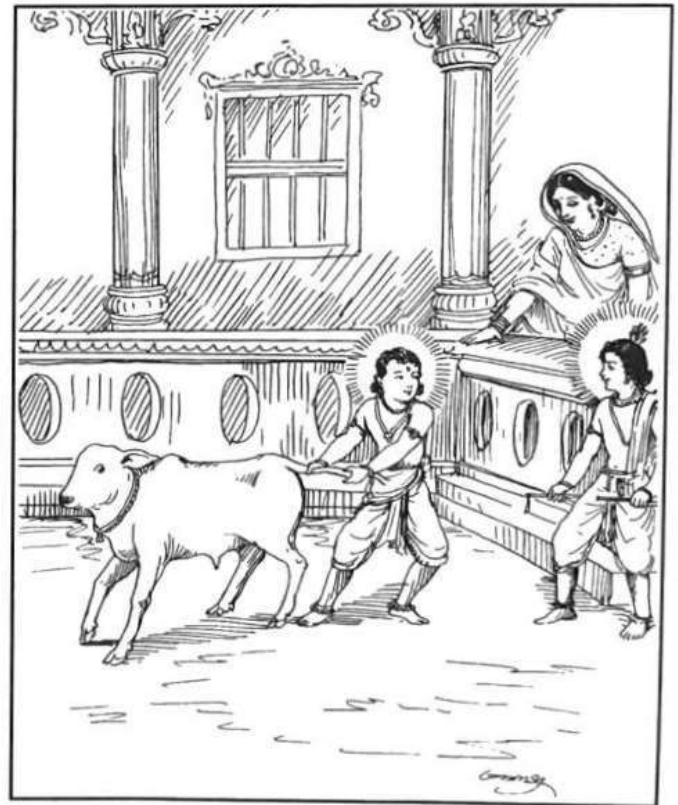
श्रीकृष्णका बछड़ेकी पूँछ पकड़ना

दोनों भाई बछड़ोंकी पूँछ पकड़ लेते; बछड़ा भागता,

कुछ दूर पीछे-पीछे खिंचते हुए चले जाते; फिर पूँछ छूट जाती तो किसी दूसरेकी पकड़ लेते; दूसरेकी छूटनेपर तीसरेकी। कभी एक साथ ही तीन-चार बछड़ोंकी पूँछ पकड़ते; बछड़े कूदते और श्यामसुन्दर हँसने लगते। कितने ही बछड़े स्वाभाविक प्यारवश श्यामसुन्दरके इच्छानुसार उन्हें खींच ले जाते। आगे-आगे करस्पर्शके आनन्दसे पुलकित होता हुआ बछड़ा और पीछे-पीछे पूँछमें टँगे हुए व्रजनयनानन्द पुरुषोत्तम स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण एवं दाऊजी। व्रजदेवियाँ इस परम मनोहर लीलाको देखकर आनन्दसे हँसते-हँसते आत्म-विस्मृत हो जातीं। उनका गृह-कार्य, सब कुछ छूट जाता—

यर्ह्यङ्गनादर्शनीयकुमारलीला-
वन्तर्व्रजे तदबलाः प्रगृहीतपुच्छैः।
वत्सैरितस्तत उभावनुकृष्यमाणौ
प्रेक्षन्त्य उज्झितगृहा जहृषुर्हसन्त्यः॥*

(श्रीमद्भा० १०।८।२४)

X X X

दही बिलोती हुई एक व्रजसुन्दरी धीमे-धीमे गा रही है—

बलकृष्णौ बलवलितविलासौ
खेलत इह सखि! सखिकृतहासौ॥ ध्रु०॥
तर्णकपुच्छधृतिव्यापृतिनौ
प्रणयकलितकलिकलने कृतिनौ॥

(श्रीगोपालचम्पू)

'सखि! देख, दाऊको साथ लिये बालकृष्ण खेल रहा है। कुछ सखा भी साथ हैं, सभी उसकी मधुमयी लीला देख-देखकर हँस रहे हैं। अहा! देख बहन! उसी दिनकी तरह आज भी दोनों पुनः बछड़ेकी पूँछ पकड़े हैं। सचमुच बहन! ये दोनों अब बड़े चञ्चल हो गये हैं, लोगोंको खिझाना सीख गये हैं। आह! उस दिन मैयासे कलह करते हुए तुमने इन्हें देखा नहीं? ओह! इनका प्रेम-कलह अद्भुत ही है, इस कलामें ये दोनों ही बड़े प्रवीण हो गये हैं।'

व्रजसुन्दरियाँ अन्य समस्त कर्म, समस्त उपासनाएँ भूल गयीं। उनके लिये तो अब सम्पूर्ण उपासनाओंका सारसर्वस्व एक यशोदानन्दन ही बन गये हैं। सारा दिन, सारी रात उनकी आँखोंके सामने बाललीला-रसमत्त परमानन्दकन्द नन्दनन्दनकी नयनाभिराम नित्य नयी छटामयी छबि ही नाचती रहती है। दिनका अधिकांश भाग वे नन्दद्वारके समीप खड़ी रहकर बिता देतीं। गुरुजनोंकी बारंबारकी प्रेरणासे घर लौटतीं, पर मन तो नन्दनन्दनके पास ही रह जाता। अन्यमनस्क ही रहकर गृहकार्यमें लगतीं किंतु ठीकसे कर नहीं पातीं। दूध दुहने बैठतीं तो आँखोंके सामने गायोंके थनकी जगह नन्दनन्दन दीखते; धानका छिलका उतारने बैठतीं तो ऊखलमें, मूसलमें, यहाँतक कि धानके कणोंमें श्यामसुन्दर दीखते; दही बिलोतीं तो दीखता मनमोहन नीलमणि मथानीको पकड़े खड़े हैं, घर लीपने बैठतीं तो हाथ चलता नहीं; क्योंकि उन्हें सर्वत्र व्रजेन्द्रनन्दन नाचते-थिरकते दीखते; उनके छोटे बालक रोने लगते, गोपियाँ लोरी देनेका विचार करतीं, पर आँखोंसे बच्चा नहीं दीखता, यशोदानन्दन दीखते; वस्त्र धोने बैठतीं तो जलमें, जलपात्रमें, वस्त्रके धागोंमें, मानो श्यामसुन्दर समाये हों—यह दीखने लगता और वे चकित-सी, मुग्ध-सी होकर बैठी रह जातीं; झाड़ू देने जातीं तो दीखता, मैं तो नन्दरायजीकी गोशालामें बैठी हूँ, गो-रजमें लिपटे नन्दनन्दन सामने खेल रहे हैं; बस फिर झाड़ू हाथमें ही रह जाता। इस प्रकार वे अधिकांश समय भावाविष्ट रहतीं। लीलाशक्तिकी प्रेरणासे जब आवेश कुछ शिथिल होता, तो किसी प्रकार गृहकार्यका समाधान कर पातीं। पर उस समय भी उनका मन तो रसराजशिरोमणि यशोदानन्दनके लीला-रस-सुधा-सागरमें ही डूबा रहता तथा वाणी निरन्तर उन्हींका ललित लीलागान करती रहती; ऐसा प्रतीत होता कि मानो उनके अन्तर्हृदयका सरस रस-स्रोत ही सुरीले शब्द बनकर झर रहा हो—

* जब राम और श्याम दोनों कुछ और बड़े हुए, तब व्रजमें घरके बाहर ऐसी-ऐसी बाललीलाएँ करने लगे, जिन्हें गोपियाँ देखती ही रह जातीं। जब वे किसी बैठे हुए बछड़ेकी पूँछ पकड़ लेते और बछड़े डरकर इधर-उधर भागते, तब वे दोनों और भी जोरसे पूँछ पकड़ लेते और बछड़े उन्हें घसीटते हुए दौड़ने लगते। गोपियाँ अपने घरका काम-धंधा छोड़कर यही सब देखती रहतीं और हँसते-हँसते लोट-पोट हो जातीं।

या दोहनेऽवहनने मथनोपलेप-
प्रेङ्खेङ्खनार्भरुदितोक्षणमार्जनादौ।
गायन्ति चैनमनुरक्तधियोऽश्रुकण्ठ्यो
धन्या व्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः॥

(श्रीमद्भा० १०। ४४। १५)

हरिलीला गावत गोपीजन अति आनँद भरि निसिदिन जाई।
बालचरित्र बिचित्र मनोहर कमलनैन ब्रजजन सुखदाई॥
दोहन मथन खँडन गृहलेपन मंडन सुत-पति-सेवा।
चारि जाम अवकास नहीं पल सुमिरत कृष्ण देवदवा॥
भवन भवन प्रति दीप बिराजत कर कंकन पग नूपुर बाजे।
परमानंद घोष कौतूहल निरखि भाँति सुरपति जिय लाजे॥

आज वह व्रजसुन्दरी भी इसी तरह विशेषरूपसे भावाविष्ट होकर गा रही है। उसके मानस-नेत्रोंके सामने कभी गोवत्सपुच्छधारी श्यामसुन्दरकी, और कभी माताके साथ कमनीय कलहमें संलग्न यशोदानन्दनकी छबि आ रही है। गोपी भावनाके स्रोतमें डूब रही है और इधर उसके प्राणधन श्यामसुन्दर सचमुच ही वत्सपुच्छधारणकी लीलामें मत्त हैं—

खेलत मदनसुंदर अंग।
जुवति जन मन निरखि उपजत बिबिध भाँति अनंग॥
पकरि बछरा पूँछ ऐंचत अपनि दिसि बरजोर।
कबहुँ बच्छ लै भजत हरि कों जुवति जन की ओर॥
देखि परबस भए प्रीतम भयो मन आनंद।
मनहिं आकुल भई ब्याकुल गई लाज अमंद॥
कोउ देखत गहत कोऊ हँसत छाड़त गेह।
करत भायो अपने मन को प्रगट करि निज नेह॥
अति अलौकिक बाललीला क्योंहुँ जानि न जाय।
मुग्धता सों महारस सुख देत रसिक मिलाय॥

यह नियम है कि मिथ्या प्रापञ्चिक मानसिक कल्पनाएँ भी यदि प्राणशक्तिका पर्याप्त बल पा लें तो मूर्तिमती एवं सत्य बनकर प्रत्यक्ष दीखने लग जाती हैं। फिर गोपीकी कल्पना तो सत्यके भी सत्य परमपरात्पर पुरुषोत्तम साक्षात् भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन परमानन्दघन श्रीकृष्णके सम्बन्धकी है! तथा श्रीकृष्णमय बने हुए प्राणोंके बलपर श्रीकृष्णको गोपीकी ओर खींच लानेके लिये दौड़ रही हैं। अतः विलम्ब ही क्या था, श्यामसुन्दर मधुरातिमधुर आकर्षणसे युक्त उस भावनाके सूत्रमें बँधे हुए, खिंचे हुए-से ग्वालिनके घर आ पहुँचे। ग्वालिनने देखा—श्यामसुन्दर खड़े हैं, पर अकेले हैं। वास्तवमें श्यामसुन्दर अकेले ही आये थे; दादा दाऊ एवं साथियोंसे परामर्श करके सबको द्वारपर ही छोड़ दिया था, अकेले भीतर घुसे थे। अस्तु,

ग्वालिनके आनन्दका पार नहीं। उसने सोचा, स्वप्न तो नहीं देख रही हूँ? निर्णय करनेके उद्देश्यसे उसने बाहरकी ओर झरोखेसे झाँका, कुछ सखाओंके साथ दाऊ अतिशय शान्त मुद्रामें छिपे-से खड़े हैं; स्पष्ट था अपने अनुजके किसी संकेतकी प्रतीक्षामें खड़े हैं। ग्वालिन समझ गयी—स्वप्न नहीं है, सत्य है; किसी मधुर गुप्त अभिसन्धिसे मेरे प्राणधन मेरे घर आये हैं। श्यामसुन्दरकी भोली चितवनकी ओर ग्वालिन देखने लगी। अधिक देरतक धैर्य न रख सकी, उसी क्षण दौड़ पड़ी और गोद उठाकर हृदयसे लगा लिया—

बालदसा गोपाल की सब काहू को भावै।
जाके भवन में जात हैं सो लै गोद खिलावै॥
स्यामसुँदर मुख निरखि कै अबला सचु पावै।
लाल लाल कहि ग्वालिनी हँसि कंठ लगावै॥

श्यामसुन्दरका स्पर्श-सुख पाकर ग्वालिनी मानो समाधिस्थ-सी हो गयी, सारी सुध-बुध खो बैठी। गोदमें बैठे हुए अन्तर्यामीने ग्वालिनके अन्तरमें झाँककर देखा। अन्तर्हृदयके तार झन-झन कर रहे हैं—

प्रणयकलितकलिकलने कृतिनौ।

राम-श्याम प्रणय-कलहमें बड़े ही चतुर हैं, बड़े ही चतुर हैं। उस झनकारकी ओटमें एक लालसा छिपी है—कभी श्यामसुन्दर मुझे खिझाते, मैं रोष करती, ये झगड़ते; ऐसे प्रणय-कलहका सौभाग्य मुझे भी मिलता।

नीलमणि ग्वालिनका यही मनोरथ तो पूर्ण करने आये थे। वे चुपचात गोदसे उठ खड़े हुए। ग्वालिन प्रस्तर-मूर्तिकी तरह निश्चल बैठी थी। श्यामसुन्दर अपने सुकोमलतम करपल्लवोंसे धीरे-धीरे ताली बजाने लगे। ताली बजी कि गोपमण्डलीके सहित दाऊ भीतर आ गये। नीलमणिने माखनगृहकी ओर संकेत कर दिया। वे सब चुपचाप बिना

किसी शब्दके भीतर जा पहुँचे। इधर स्वयं नीलमणि गोशालाकी तरफ चल पड़े। गोशालामें बहुत-से बछड़े बँधे थे। गायें रँभा रही थीं। आज अभीतक दुही नहीं गयी थीं। दुहता कौन? ग्वालिन तो आधी रातसे भावाविष्ट थी; तबसे दधि-भाण्डमें मथानी डालकर बिलो रही थी, दो-चार बार मथानी घुमाती, फिर ठहरकर गीत गाती, फिर कुछ देर मथती, फिर गाने लगती; उसे यह ज्ञान ही नहीं था कि कब प्रभात हुआ।

श्यामसुन्दरको देखकर बछड़े अपने सिर हिलाने लगे, गायें हम्बारव करने लगीं। श्यामसुन्दरने एक बार चञ्चल दृष्टिसे सब तरफ देखा कि कोई देख तो नहीं रहा है। फिर एक बछड़ेको खोल दिया। बछड़ा जाकर माँका दूध पीने लगा। उसके पश्चात् एक-एक करके वहाँ जितने बछड़े थे सबको उन्मुक्त कर दिया; सभी अपनी-अपनी माँके थनोंसे हुमक-हुमककर दूध पीने लगे। यशोदानन्दनके मनोहर मुखारविन्दपर एक अनिर्वचनीय उल्लास छा गया। अपने इस कौतुकको देखकर वे आनन्दमें भर गये और गाय तथा बछड़ोंकी ओर परम आह्लादभरे नेत्रोंसे देखने लगे। गाय एवं बछड़ोंकी दशा भी आज विचित्र ही है। गायोंने दूध पीते हुए बछड़ोंको चाटनेकी बात तो दूर देखनातक छोड़ दिया। वे एकटक श्यामसुन्दरकी ओर देख रही हैं। बछड़े भी कुछ क्षण तो थनमें मुँह लगाकर दूध पीते, पर फिर पीना छोड़कर श्यामसुन्दरकी ओर देखने लग जाते। श्यामसुन्दर उन्हें पुचकारकर अपने नन्हें-नन्हें हाथोंको उठाकर शैशवोचित सरलतावश संकेत करते कि 'रे वत्सो! पी लो, पी लो, ग्वालिनीके आनेके पहले-पहले ही सारा दूध आज पी डालो।' सचमुच आज श्रीकृष्णकी अचिन्त्यलीला-महाशक्तिकी प्रेरणासे ही बछड़े दूध पीते रहे, अन्यथा सभी दूध पीना छोड़कर श्रीकृष्णको ही देखते रह जाते।

परमानन्दसुन्दर यशोदानन्दन एक गायके कुछ और निकट जाकर खड़े हो गये। गायने अपनी गर्दन बढ़ायी। यशोदानन्दन एक बार कुछ भयभीत-से हो गये, पर गायकी अतिशय शान्तमुद्रा देखकर उन्हें साहस हो आया। लगे गायकी गर्दनको सहलाने। गायने गर्दन फैला दी।
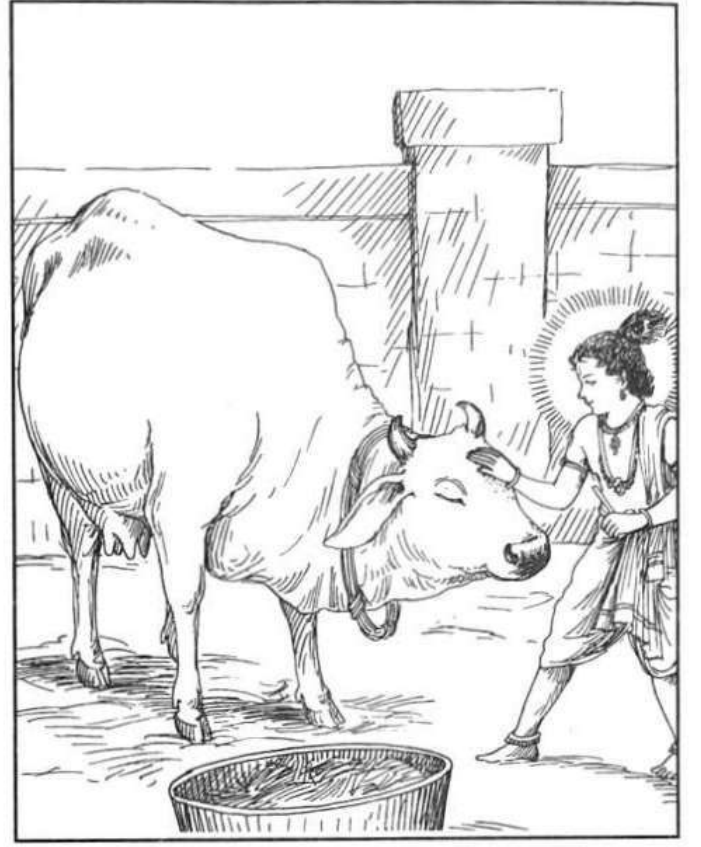
श्रीकृष्णका गौको सहलाना

यशोदानन्दनने देखा—गाय बड़ी सूधी है, मारेगी नहीं। यह सोचकर वे धीरेसे उसके थनके पास बैठ गये। बछड़ा पहलेसे ही थन छोड़कर, अलग हटकर श्यामसुन्दरकी ओर देखने लगा था। श्यामसुन्दरने थन दबाकर दूधकी धार निकालनी चाही। धार निकली तथा उससे श्यामसुन्दरका बायाँ कंधा भींग गया। श्यामसुन्दरके आनन्दकी सीमा न थी। दूसरी बार दबाया। इस बार भी धार निकली। श्यामसुन्दरने चाहा था कि मुँहमें ही गिरे, पर धारने चिबुकका ही अभिषेक किया। तीसरी बारकी चेष्टामें यशोदानन्दन सफल हुए; दूधकी उज्ज्वल धार मुँहमें गिरी। दूधकी घूँट पीकर हर्षोत्फुल्ल नेत्रोंसे नन्दनन्दनने पीछे मुँह फिराकर देखा तो दीखा—दाऊ एक स्तम्भकी ओटमें छिपे संकेत कर रहे हैं कि 'कन्हैया! जल्दी भाग जा।' उनसे कुछ ही दूरपर ग्वालिन दिव्य प्रेमसागरमें डूबती-उतराती खड़ी-खड़ी यशोदानन्दनकी ओर देख रही है। उसकी आँखोंसे दर-दर प्रेमाश्रु बहकर उसके वक्षःस्थलको भिगो रहे हैं।

यशोदानन्दन उठकर भागे; पर ग्वालिनी पथ रोके

खड़ी थी। बहुत चेष्टा करनेपर भी आखिर, श्यामसुन्दर ग्वालिनीके द्वारा पकड़ ही लिये गये। ग्वालिनीके अन्तर्हृदयमें तो आनन्दकी बाढ़ आ रही थी, पर बाहरसे वह गम्भीर होकर बोली—'अरे नटखट! यह तुमने क्या किया, सारे बछड़ोंको खोलकर सारा दूध पिला दिया। और दाऊ!' कहकर ग्वालिनी लपकी तथा बड़ी तेजीसे उसने दाऊको भी पकड़ लिया। वे पास खड़े थे, अनुजके पकड़े जानेसे स्नेह-परवश होकर पास चले आये थे कि देखें ग्वालिनी क्या करती है—उन्हें कल्पना भी नहीं थी कि यह मुझे भी पकड़ लेगी। वे तो समझे हुए थे कि हमलोगोंके माखन खानेकी बात अभी ग्वालिनी जानती ही नहीं। जो हो, ग्वालिनी दोनोंका हाथ पकड़े हुए द्वारपर चली आयी और सब साथी भाग निकले।

अन्यान्य व्रजसुन्दरियाँ यह अनुपम दृश्य देखनेके लिये एकत्र हो गयीं। ग्वालिनी बायें हाथसे यशोदानन्दनको एवं दाहिने हाथसे दाऊको पकड़े खड़ी है। श्यामसुन्दर तरह-तरहकी बातें बना रहे हैं। पहले तो अपनेको निर्दोष सिद्ध करने लगे, फिर छोड़ देनेके लिये कातर प्रार्थना की। पर जब ग्वालिनने न छोड़ा तो उसीपर सारा दोष मढ़कर उससे झगड़ा करने लगे। कहने लगे—'इसीने तो मुझे बुलाया था; मैं जब आया तो मुझे गोदमें लेकर सो गयी; इसे सोयी देख मैं इसकी गोशालामें खेलने चला गया। बछड़े दूध पी गये तो मैं क्या करता।' ग्वालिनी छोटे-से यशोदानन्दनमें इतनी बुद्धि देखकर चकित रह गयी। अन्तर्हृदयका प्रेमसागर उमड़ पड़ा; ग्वालिनीके सारे अङ्ग शिथिल हो गये; हाथ ढीले पड़ने लगे; पर श्यामसुन्दर उसकी प्रेमभरी मुट्ठीसे बिना उसकी इच्छाके निकल नहीं सकते थे। ग्वालिनीने यशोदानन्दनके मुखारविन्दकी ओर देखा, उसपर प्रस्वेद-कण छा रहे हैं। प्रस्वेद-कणोंपर दृष्टि जाते ही ग्वालिनीने हाथ छोड़ दिया। श्यामसुन्दर एवं दाऊ भाग निकले। ग्वालिनी बावली-सी होकर भीतर चली गयी। लगातार छः पहर बीत गये, ग्वालिनी देख रही है—गायोंके थनसे दूधकी धार निकल रही है और यशोदानन्दन पी रहे हैं।

प्रतिदिनका अभ्यास है कि उषःकालसे कुछ पहले ही वे उठ पड़ती हैं; अपने कोटि-कोटि प्राणोपम नयनमनोऽभिराम नित्यनवसुन्दर नीलमणिकी ललित लीलाएँ गाती हुई दही मथती हैं। अभ्यासवश ठीक उसी समय उसे बाह्यज्ञान हुआ; नयन-मन-चोर नीलमणिको देखनेके लिये उसके प्राण व्याकुल हो गये। पर अभी तो रात थी। प्रभातमें तीन घड़ीका विलम्ब था। तीन घड़ियाँ तीन कल्प-सी बीतीं। आखिर प्रभात हुआ। पर इस समय जानेपर नन्दरानी पूछेंगी, क्यों आयी है, तो क्या उत्तर दूँगी? समाधान न पाकर ग्वालिनीके प्राण छटपटा उठे। उसकी व्याकुलतासे द्रवित होकर अन्तर्यामीने तुरंत उपाय बता दिया—'उलाहनेके बहाने चली जा।' फिर देर क्या थी, ग्वालिनी चल पड़ी।

विद्युत-वेगसे नन्दरानीके घर जा पहुँची। नन्दरानीने पूछा—'इतने सबेरे कैसे आयी, बहन?' ग्वालिनी उत्तर देने जा रही थी कि यशोदानन्दन शय्यासे उठकर आँखें मलते हुए वहीं चले आये। आज यह पहला ही अवसर है कि यशोदानन्दन अपने-आप निद्रा त्यागकर शय्यासे उठकर बाहर आये हैं। ग्वालिनीकी दृष्टि श्यामसुन्दरके विधि-हर-मुनि-मोहन वदनारविन्दपर पड़ी। फिर क्या था—

भूली री उराहने को दैबो।
परि गए दृष्टि स्यामघन सुंदर चक्रित भई चितैबो॥
चित्र लिखी-सी ठाढ़ी ग्वालिन को समुझै समुझैबो।
चत्रभुज प्रभु गिरिधर मुख निरखत कठिन भयो घर जैबो॥

कुछ देर निश्चल खड़ी रहकर विक्षिप्त-सी गाती हुई ग्वालिनी पीछेकी ओर लौट पड़ी। श्यामसुन्दरके मनोहर मुखारविन्दपर मधुर मन्द मुसकान है और मैयाके मुखपर अत्यन्त आश्चर्य! ग्वालिनी गाती जा रही है—

तव सूनुर्मुहुरनयं कुरुते।
अकुरुत किं वा व्यञ्जितमुरु ते॥
मुञ्चति वत्सान् भ्रामं भ्रामम्।
साचिव्यं वः कुरुते कामम्॥
असमयमोचनमसुखनिधानम्।
कः किं कुरुते न यदि निदानम्॥
विना निदानं कुरुते स्वामिनि।
क्रोशं न किमिव कुरुषे भामिनि!॥

(श्रीगोपालचम्पू)

'अरी नन्दरानी! तुम्हारा यह लाड़िला बार-बार अनीति करता है। इसने क्या किया है? यह तुम्हें अच्छी तरह

मालूम है। यह चलता-फिरता बछड़ोंको खोल देता है और मैं समझती हूँ कि तुमलोगोंकी सलाहसे ही सब कुछ करता है। यदि तुम्हारा संकेत न हो तो और असमयमें ही बछड़ोंको खोल देनेका अप्रिय कार्य कौन कर सकता है? यदि कहो कि यह तुम्हारी सलाहसे ऐसा नहीं करता तो फिर तुम इसे डाँटती क्यों नहीं।'

x x x

दिन कुछ चढ़ चुका है। यशोदानन्दन व्रजवनिताओंके आँगनमें खेलते हुए घूम रहे हैं—

कण्ठे रुरोर्नखमनुत्तमहेमनद्धं
श्रोणौ महार्हमणिकिङ्किणिदाम बिभ्रत्।
मन्दं पुराद्बहिरुपेत्य करोति खेला-
माभीरनीरजदृशां भवनाङ्गनेषु॥

(श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पू)

गलेमें उत्कृष्ट सोनेसे मँढा हुआ व्याघ्रनख है, कटिदेशमें अतिशय मूल्यवान् मणियोंसे युक्त करधनी पहने हैं। चुपचाप धीरेसे अपने घरसे बाहर आकर यशोदानन्दन व्रजसुन्दरियोंके भवनोंमें जाकर उनके आँगनोंमें खेलते हैं।

खेलते-खेलते अपनी गोशालामें चले गये। वहाँ जाकर—

धेनु दुहत देखत हरि ग्वाल।
आपुन बैठि गए तिन के ढिग, सिखवौ मोहि कहत गोपाल॥
कालि देहौं गोदोहन सिखवै, आज दुहीं सब गाय।
भोर दुहौं जिन नंद दुहाई, उन सों कहत सुनाय सुनाय॥
बड़ो भयो अब दुहत रहौंगो आप आपनी धेनु निबेर।
सूरदास प्रभु कहत सीख दै मोहि लीजिए टेर॥

—अतिशय मनोयोगसे गायोंका दुहा जाना देखने लगे। व्रजनरेश नन्दराय पास ही दोहनीके दूधकी सँभाल कर रहे हैं। चञ्चल नन्दनन्दन पिताकी दृष्टि बचाकर गोशालामें दूर जा निकले। एक बूढ़ा ग्वाला मन्द-मन्द स्वरमें श्यामसुन्दरकी लीला गाता हुआ गाय दुह रहा है। श्यामसुन्दरको देखते ही गाय जोरसे रँभा उठी। ग्वालेने दृष्टि फिराकर देखा। देखते ही उसकी पलकें पड़नी बंद हो गयीं। गोपका रोम-रोम आनन्दसे नाच उठा। यह गोप व्रजनरेश नन्दरायजीको अतिशय प्रिय था; क्योंकि वह उनका बालसखा था। किसी दैवी प्रेरणासे इसने ब्याह नहीं किया था, आजीवन एकाकी नन्दरायजीके पास रहा। नन्दरायजी इसे मित्र ही नहीं, बड़े भाईके रूपमें देखते थे। श्यामसुन्दरके जन्म-दिनके समयसे यह गोप अर्द्धविक्षिप्त-सा रहता; अवश्य ही गायोंकी सेवा जैसे करता था, वैसे ही करता रहा। आज मानो उसके समस्त जीवनकी तपस्याका फल देनेके लिये नन्दनन्दन एकान्तमें उसके सामने चले आये।

नन्दनन्दन उसके पास बैठ गये। बायें हाथसे उसके दाहिने कंधेको तथा दाहिने हाथसे उसके चिबुकको स्पर्श करके बोले—'ताऊ! मुझे भी दुहना सिखा दो!' इस मधुर कण्ठध्वनिमें न जाने क्या जादू भरा है, वृद्ध गोप रो पड़ा। गोपके हाथसे दोहनी नीचे गिर पड़ी तथा नन्दनन्दनको छातीसे चिपटाकर वह बेसुध हो गया। बाह्यदृष्टिमें तो एक-दो क्षण ही बीते, पर वस्तुतः गोपकी दृष्टिमें अनन्त कल्पोंतक वह नन्दनन्दनको हृदयसे लगाये अनिर्वचनीय परमानन्दका रस लेता रहा। इधर नन्दनन्दन अपनी छोटी-छोटी अँगुलियोंसे उसकी आँखें पोंछ रहे हैं तथा कह रहे हैं—'क्यों ताऊ! मुझे नहीं सिखा दोगे?'

गोपकी भावसमाधि शिथिल हुई, पर आज तो सभी गायें दुही जा चुकी हैं। गोप बोला—'मेरे लाल! कल सिखा दूँगा।' नन्दनन्दनका मुखारविन्द परमोल्लाससे जगमगा उठा। बोले—'ताऊ! बाबाकी सौंह है; कल अवश्य सिखला देना, भला! मेरे आनेतक कम-से-कम एक गाय बिना दुहे हुए अवश्य रखना।' गोप एकटक अपने प्राणधनकी ओर देख रहा था। यशोदानन्दन फिर बोले—'ताऊ! अब तो मैं सयाना हो गया, अपनी गायें अपने-आप दुह लूँगा।' गोप प्रस्तरमूर्तिकी तरह निश्चल था। नन्दनन्दन फिर बोले—'अच्छा ताऊ! आज सन्ध्याको सिखा दो तो कैसा रहे?' वृद्ध गोपने कुछ कहना चाहा, पर शब्द कण्ठसे बाहर नहीं निकले। व्रजराजनन्दन चटपट बोल उठे—'नहीं, ताऊ, सायंकाल तो मैया आने नहीं देगी; कल ही सिखा देना, कल तुम गोशाला दुहने जब आओ तो मुझे पुकार लेना।' यह कहकर यशोदानन्दन कुछ सोचने-से लगे। फिर बोले—'नहीं, पुकारनेकी आवश्यकता नहीं, मैं अपने-आप ही आ जाऊँगा; पर तुम भूलना मत, ताऊ!' वृद्ध गोपने कठिनतासे पुचकारका एक शब्द करके

यह सूचित कर दिया कि 'मेरे लाल, ऐसा ही करूँगा।' नन्दनन्दन उल्लसित होकर बाबाके पास लौट गये।

दूसरे दिन जितना शीघ्र हो सकता था, यशोदानन्दन गोपके पास पहुँचे। उनकी आँखोंमें उत्कण्ठा भरी थी। आज दाऊ भी साथ हैं। श्यामसुन्दर कुछ परामर्श करके उन्हें साथ ले आये हैं। आते ही गोपकी दोहनी उन्होंने थाम ली तथा अतिशय उत्सुक होकर बोले—'चलो ताऊ, गाय कहाँ है ? सिखा दो।' अग्रज दाऊ भी प्रार्थनामिश्रित स्वरमें बोले—'हाँ-हाँ, ताऊ, इसे आज अवश्य सिखा दो।'

वृद्ध गोपने श्यामसुन्दरका मुख चूमकर उनके हाथोंमें एक छोटी-सी दोहनी दे दी। श्यामसुन्दर दुहनेकी मुद्रामें गायके थनके पास जा बैठे। गोपने श्यामसुन्दरकी अँगुलियोंको अपनी अँगुलियोंमें पकड़कर थनको दबाना सिखाया। ठीक उसके कथनानुसार वे दबाने लगे। दूधकी धारा गिरने लगी, पर वह दोहनीपर न गिरकर कभी श्यामसुन्दरके पेटपर और कभी पृथ्वीपर गिरती। श्यामसुन्दर दोहनीको कभी धरतीपर रख देते, कभी घुटनोंमें दबा लेते।
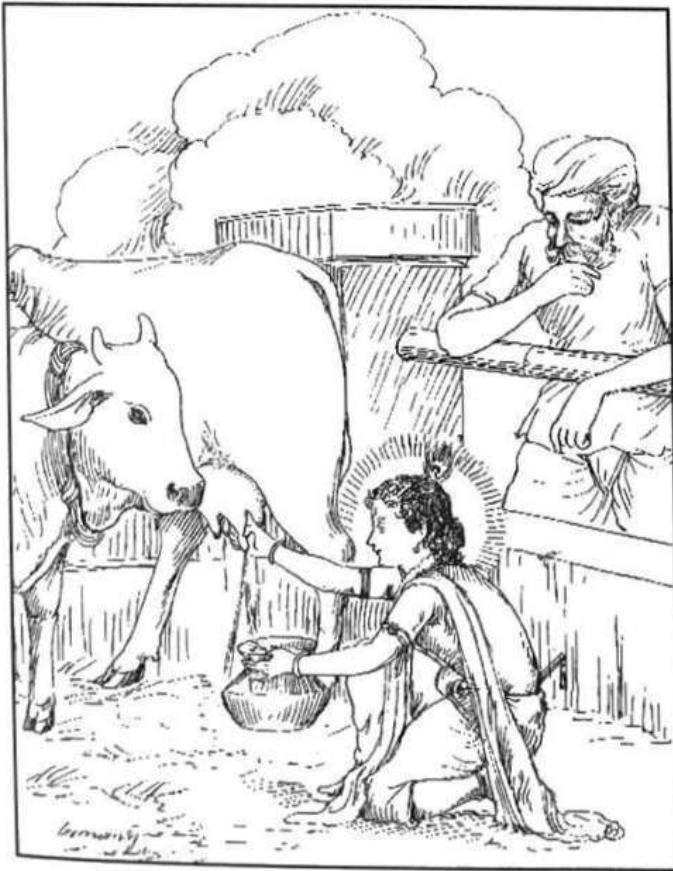
श्रीकृष्णका गोदोहन सीखना

इस क्रियामें एक-दो धारें दोहनीमें, एक-दो श्यामसुन्दरके श्रीअङ्गपर और एक-दो धरतीपर गिरतीं। फिर भी कुछ दूध दोहनीमें एकत्र हो गया। हर्षोत्फुल्ल मुखसे दोहनी लेकर वे उठ खड़े हुए तथा नाच-नाचकर दाऊको दिखाया कि 'देखो, मैं दुहना सीख गया।' दाऊ एवं वृद्ध गोप दोनों ही यशोदानन्दनके हर्षोत्फुल्ल मुखको देख-देखकर मुग्ध हो गये। इस तरह गो-दोहनकी आधी शिक्षा समाप्त हुई।

तीसरे दिन प्रात:काल उठते ही श्यामसुन्दर माताका आँचल पकड़कर प्रार्थना करने लगे—

दे मैया री दोहनी, दुहि लाऊँ गैया।
माखन खाय बल भयो, तोहि नंद दुहैया॥
सेंदुर काजरि धूमरी धौरि मेरी गैया।
दुहि लाऊँ तुरतहि तब, मोहि कर दे धैया॥
ग्वालन के सँग दुहत हौं, बूझौ बल भैया।
सूर निरखि जननी हँसी, तब लेत बलैया॥

नन्दरानी समझाने लगी, पर श्यामसुन्दरने एक भी नहीं सुनी। किसी तरह मनुहार कर-करके माताने माखन खिलाया, शृंगार किया तथा गोदोहनकी बात भुला देनेकी चेष्टा की। माँके अनुरागभरे हृदयमें यह भय था कि मेरा नीलमणि अभी निरा अबोध शिशु है, कहीं दुहते समय कोई गाय लात न मार दे। पर आज तो हठीले मोहन मचले हुए हैं। नन्दरानी अन्तमें गोद लेकर, कोटि-कोटि प्राणोंका प्यार देकर बोली—'मेरे प्राणधन नीलमणि! पहले अच्छी तरह बाबाके पास जाकर दुहना सीख ले, तब मैं दोहनी दूँगी और तू दूध दुह लाना।' माँकी बात सुनकर तत्क्षण नन्दनन्दन बाबाके पास दौड़ गये। उनकी धोती पकड़कर बार-बार हठ करने लगे—

बाबाजू! मोहि दुहन सिखावो।
गाय एक सुधी-सी मिलवो, हौहुँ, दुहौं बलदाउ दुहावो॥

व्रजराज अपने हठीले लालकी मुखभंगिमा देखकर मुग्ध हो गये। गोदमें लेकर शुभ मुहूर्तमें सिखा देनेकी बात कहने लगे, पर व्रजदुलारे आज किसीकी बातपर माननेवाले न थे। पास ही उपनन्द खड़े थे। उनके परामर्शसे यह निश्चित हुआ कि नारायणका स्मरण करके नीलमणिकी साध पूरी कर दी जाय। फिर तो श्यामसुन्दरके उल्लासका

कहना ही क्या। वे उसी क्षण बाबाकी गोदसे कूदकर मैयाकी गोदमें जा पहुँचे—

तनक कनक की दोहनी दे री मैया।
तात दुहन सिखवन कह्यौ मोहि धौरी गैया॥

श्यामसुन्दरके मनोहर मुखारविन्दपर प्रस्वेद-कण मोतीकी तरह चमक रहे थे। माँने उन्हें अञ्चलसे पोंछकर अपने नीलमणिको हृदयसे लगाया, छोटी-सी सुवर्णकी दोहनी हाथमें दे दी और स्वयं साथ चल पड़ीं। नन्दरानीके पीछे-पीछे यूथ-की-यूथ व्रजवनिताएँ नीलमणिकी गोदोहन-लीला देखनेको एकत्र हो गयीं। इष्टदेव नारायणका स्मरण करके व्रजराजने अपने प्राणाधार पुत्रका सिर सूँघा तथा गोदोहनशिक्षाका अभिनय सम्पन्न हुआ। गोपनन्दन गौ दुहने बैठे—

हरि बिसमासन बैठि कै मृदु कर थन लीनो।
धारा अटपटी देखि कै व्रजपति हँसि दीनो॥
गृह गृह ते आयीं देखन सब ब्रजनारी।
सकुचत सब मन हरि लियो हँसि घोषबिहारी॥

व्रजराजके आदेशसे उस दिन नन्दभवन सजाया गया। मङ्गलगान हुए, मङ्गलवाद्य बजे। व्रजराजने ब्राह्मणोंको मुक्तहस्त होकर दान दिया—

द्विज बुलाय दछिना दई, बिधि मंगल गावै।
परमानँद प्रभु साँवरो सुख-सिंधु बढ़ावै॥

आगे चलकर यशोदानन्दन गोदोहन-कलामें अत्यन्त कुशल हो गये। सबसे अधिक आश्चर्य यह था कि जो गायें कठिनतासे दुहने देती थीं, वे श्यामसुन्दरके हाथका स्पर्श पाते ही सर्वथा स्थिर खड़ी रहतीं और अपेक्षाकृत बहुत अधिक दूध देतीं। अतः अपने प्राणधन नीलमणिको गौ दुहनेके लिये व्रजवनिताएँ अपने-अपने घर ले जाने लगीं। अवश्य ही गोदोहन बहानामात्र ही था; इस मिससे वे अपने प्राणधनके दर्शनका परम सुख लेतीं। इस गोदोहनको निमित्त बनाकर चिदानन्दरस-घनविग्रह व्रजराजनन्दनने अनेकों मधुमयी लीलाओंका प्रकाश किया। वह छबि अद्भुत ही होती, व्रजाङ्गनाएँ बछड़ोंके पास खड़ी रहकर निर्निमेष नयनोंसे दिव्य शोभा निहारतीं और लीलारसमत्त स्वयं भगवान् यशोदानन्दन श्रीकृष्णचन्द्र उनकी गायें दुहते। गोदोहनका पारिश्रमिक था श्यामसुन्दरपर बिक जाना—
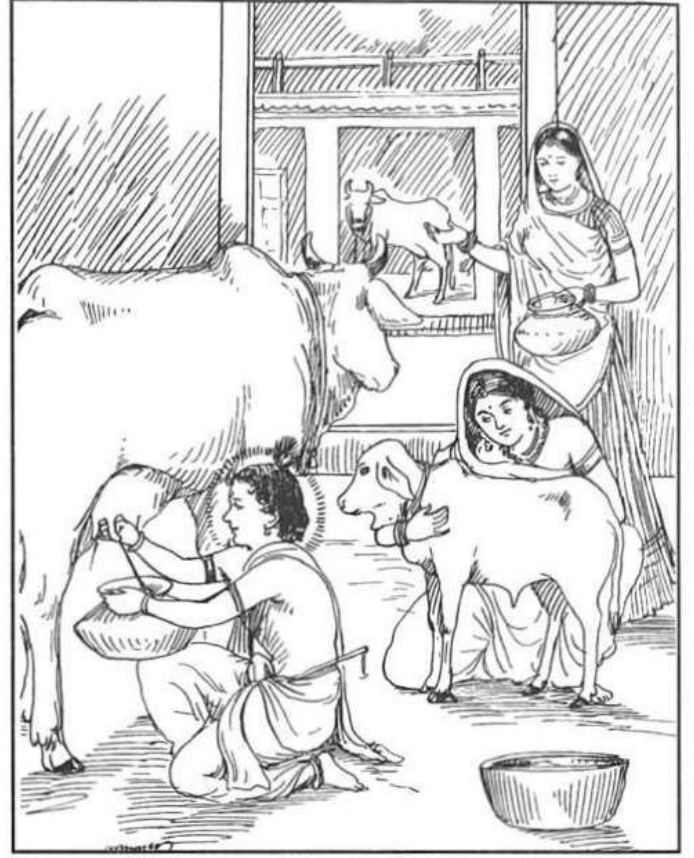
श्रीकृष्णके द्वारा गौओंको दुहा जाना

जा दिन ते गैया दुहि दीनी।
ता दिन ते आप को आपुहि मानहुँ चितै ठगोरी लीनी॥
सहज स्याम कर धरी दोहनी, दूध लोभ मिस बिनती कीनी।
मृदु मुसकाय चितै कछु बोले, ग्वालिनि निरखि प्रेम रस भीनी॥
नितप्रति खिरक सवारें आवत, लोकलाज मनो घृत सो पीनी।
चत्रभुज प्रभु गिरिधर मनमोहन दरसन छल बल सुधि बुधि छीनी॥

चञ्चल यशोदानन्दनके बाललीला-रसका आस्वादन करते हुए सौभाग्यशाली व्रजवासियोंके दिन क्षणके समान बीत रहे थे। अब उलूखल-बन्धनकी परम मनोहारिणी लीलाके पश्चात् उपनन्दके परामर्शसे समस्त नन्दव्रज वृन्दावनमें चला आया। अतः वृन्दावनके अनुरूप ही श्यामसुन्दर नन्दनन्दनके लीलारससिन्धुमें तरंगें उठने लगीं और उससे वृन्दावन प्लावित हो उठा।

श्यामसुन्दर अब वंशी बजाना सीख गये हैं। कब, कैसे, किससे सीखा—यह किसीने नहीं जाना; पर वंशीकी ध्वनिसे समस्त व्रजवासी मोहित हो उठे। श्यामसुन्दर अपनी मैयाकी, बाबाकी गोदमें बैठे रहते। व्रजाङ्गनाएँ आतीं

और कहतीं—

हे कृष्ण मातृकुचचूचुकचूषणेऽपि
नालं यदेतदधरोष्ठपुटं तवासीत्।
तेनाद्य ते कतिपयेषु दिनेष्वकस्मात्
कस्माद् गुरोरधिगतः कलवेणुपाठः॥

(श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पू)

'प्यारे कन्हैया! तुम्हारे ये कोमल अधर तो मातृ-स्तनपानमें भी समर्थ न थे, फिर भला इने-गिने दिनोंमें ही तुमने इतनी मधुर वंशी बजानेकी शिक्षा किस गुरुसे सीख ली।' इस प्रकार व्रजाङ्गनाओंका आग्रह देखकर श्यामसुन्दर वंशी बजाते और वे मुग्ध हो जातीं।

श्यामसुन्दर दिनभर दो कार्योंमें व्यस्त रहते—एक वंशी बजाना और दूसरा सखाओंके साथ विविध क्रीडा करना। अब विशेषतः गाय एवं गोवत्सोंके साथ ही क्रीडा होती थी। कभी दो, चार, छः गोवत्सोंको अथवा गायोंको पकड़ लेते; उनको अपने अधीन करके नचाते तथा स्वयं उनके साथ नाचते! कभी उनके सींगोंको पकड़कर खेलते। कभी गाड़ीमें जुते हुए बैलोंके सींग पकड़कर उनसे विविध क्रीडा करते। नन्दरानी, नन्दराय स्नेहवश भयभीत हो जाते। बार-बार मना करते, पर श्रीकृष्ण एक नहीं सुनते। साथमें दाऊका प्रोत्साहन था। दोनों भाई परामर्श करके बहुत दूर निकल जाते। जननी व्याकुल होकर ढूँढ़ने जाती तो दोनों भाई व्रजकी सीमाके बाहर वनके पास बछड़ा चराते हुए गोपशिशुओंके साथ खेलते मिलते। अपने कोटि-कोटि-प्राणप्रतिम नीलमणिको कण्ठसे लगाकर जननी इतनी दूर अकेले आनेके लिये मना करतीं। नीलमणि कहते—

मैया री! मैं गाय चरावन जैहौं।
तूँ कहि महरि नंदबाबा सों, बडो भयो न डरैहौं॥
श्रीदामा लै आदि सखा सब, अरु हलधर सँग लैहौं।
दह्यो भात काँवरि भरि लैहौं, भूख लगै तब खैहौं॥
बंसीवट की सीतल छैयाँ खेलत में सुख पैहौं।
परमानंददास सँग खेलौं जाय जमुनतट न्हैहौं॥

लालकी बात सुनकर जननीका हृदय आनन्दसे उछलने लगा। एक दिन था, नन्दरानी अपने प्राणधनको दुलराती हुई नाना मनोरथ करती थीं—कब मेरा नीलमणि बकैयाँ चलेगा, कब डगमग करते हुए धरतीपर पैर रखेगा, कब मुझे माँ-माँ कहकर पुकारेगा, कब माखन माँगेगा, कब गाय दुहने बैठेगा और वह दिन कब होगा, जब मैं माथेपर तिलक करके अपने नीलमणिको गाय चराने वन भेजूँगी। नन्दरानीके ये सभी मनोरथ पूर्ण हुए। गाय चरानेका मनोरथ भी मानो नीलमणिकी इस बातसे ही पूर्ण हो गया। पर अभी नीलमणिके तो दूधके भी दाँत नहीं उतरे हैं, यह भला वनमें गोचारण करने कैसे जायगा—इस भावनासे मैया अपने लालको तरह-तरहसे समझाने लगी कि 'मेरे लाल! अभी कुछ दिन बाद गाय चराने भेजूँगी।' नन्दराय भी समझाते, पर चञ्चल श्यामसुन्दर भाग ही जाते। इसीलिये इस भयसे कि खेलते-खेलते पता नहीं किसी दिन किधर जा निकले, नन्ददम्पतिने परस्पर परामर्श करके यह निश्चय किया—

यदि गोसङ्गावस्थानं विना न स्थातुं पारयतस्तर्हि व्रजसदेशदेशे वत्सानेव तावत्सञ्चारयतामिति।

(श्रीगोपालचम्पू)

सचमुच ये राम-कृष्ण दोनों अब बड़े चञ्चल हो गये हैं तथा विशेषतः इन्हें गायोंका सङ्ग बड़ा प्रिय है। 'यदि गायोंके संग बिना ये नहीं रह सकते तो अच्छा यह है कि व्रजके निकट रहकर ये छोटे बछड़ोंको चराया करें।'

उपनन्दने भी यही सम्मति दी। अतः ज्यौतिषियोंको बुलाकर पुण्यतिथि—पुण्यमुहूर्त निश्चय कर लिया गया। व्रजमें बात फैलते क्या देर लगती? सुनते ही सबने निश्चय किया कि हम भी अपने-अपने बच्चोंको उसी दिनसे वत्सचारणके लिये भेजेंगे।

मङ्गलमय प्रभात हुआ। आज यशोदानन्दन वत्सचारण प्रारम्भ करेंगे। नन्दरानीके आनन्दका क्या कहना? माताने तरह-तरहके वस्त्राभूषणोंसे अपने हाथों लालको सजाया, पर स्नेहभरे हृदयमें तुरंत ही आशङ्का उठी—इसका सौन्दर्य तो पहलेसे ही भुवन-मन-मोहन है। मैंने इसको सजाकर और भी सुन्दर बना दिया। कहीं नजर न लग जाय! जननीने उसी क्षण लालके विशाल भालपर काजलकी टेढ़ी रेखा खींच दी। इष्टदेव नारायणको मनाया। ब्राह्मणोंको स्वर्ण-दान किया और श्यामसुन्दरके लिये सबसे आशीर्वाद लिये। बड़ी सुखी हैं नन्दरानी आज। पर जब श्यामसुन्दर चलनेको

तैयार हुए, तब तो वात्सल्य-स्नेहने जननीके मनमें शङ्काओंके

श्रीयशोदाजीके द्वारा श्रीकृष्णका शृंगार

पहाड़ खड़े कर दिये। वे डर गयीं—कहीं जंगलमें मेरे कन्हैयाका अनिष्ट न हो जाय। इसे कोई वन्य कीट-पतङ्ग न काट ले। कहीं यह गिर न पड़े। नन्दरानीकी आँखोंमें आँसू छलक आये। उन्होंने दाऊको समीप बुलाकर उनके हाथमें कन्हैयाका हाथ पकड़ाकर कहा—'बेटा! तुम बड़े हो, यह कन्हैया बड़ा चञ्चल है; अपने इस छोटे भाईकी सँभाल रखना, भला!'

बत्स चरावन जात कन्हैया।
उबटि अंग अन्हवाय लाल कों फूली फिरत मगन मन मैया॥
निज कर करि सिंगार बिबिध बिधि, काजल-रेख भाल पर दीन्हीं।
दीठि लागिबे के डर जसुमति इष्टदेव सौं बिनती कीन्हीं॥
बिप्र बुलाय दान करि सुबरन सबकी सुखद असीसें लीन्हीं।
कर पकराइ नयन भरि अँसुवन सकल सँभार दाउए दीन्हीं॥

नन्दरायजी निर्निमेष नयनोंसे अपने पुत्रका शृंगार और यशोदाकी प्रेमदशा देख रहे हैं। हृदयका आनन्दरस पानी बनकर आँखोंकी राह बाहर आना चाहता है; पर मङ्गल-मुहूर्तकी स्मृति बाँध लगा देती है। मन-ही-मन नन्दराय आजके पुण्यप्रभातको धन्यवाद दे रहे हैं। सब ओर आनन्द छाया है।

आजु ब्रज छायो अति आनंद।
बत्स चरावन जात प्रथम दिन नंदसुवन सुखकंद॥

माताके वात्सल्यपूर्ण हाथोंसे सजकर नीलमणि आँगनमें खड़े हुए। नन्दरायने अपने पुत्रके हाथमें एक छोटी-सी लाल छड़ी पकड़ा दी—**'तनुतरां लोहितयष्टिकामेकां करे धारयित्वा'** (श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पू)। सब बालगोपाल समीप आकर खड़े हो गये।

सोहत लाल लकुट कर राती।
सूथन कटि चोलना अरुन रँग पीतांबर की गाती।
ऐसेहि गोप सबै बनि आए, जो सब स्याम सँगाती॥

नन्दरायकी आज्ञासे आज गोवत्सोंका भी सुन्दर शृंगार किया गया है। वे तोरणद्वारके बाहर सुन्दर सजे हुए सिर उठाये खड़े हैं, मानो नन्दनन्दनकी प्रतीक्षा कर रहे हों।

श्रीकृष्णका बछड़े चराने जाना

सचमुच नन्दनन्दनके आते ही वे सभी आनन्दमें भरकर कूदने लगे। नन्दनन्दन दौड़कर उनके पास जा पहुँचे। उनके बीच खड़े होनेपर वे पुनः शान्त हो गये। तदनन्तर

यशोदानन्दनने सब गुरुजनोंको प्रणाम किया और वत्सचारणके लिये प्रस्थान किया—

चले हरि बत्स चरावन आज।
मुदित जसोमति करत आरती साजे सब सुभ साज॥
मंगलगान करत ब्रजबनिता, मोतिन पूरे थाल।
हँसत हँसावत बत्स-बाल सँग चले जात गोपाल॥

आज नन्दद्वारसे लेकर वनतक समस्त गोपोंके गृह सजाये गये हैं। सबके द्वारपर मङ्गलकलश हैं। घर-घर मङ्गलगीत गाये जा रहे हैं। अपने गृहके सामने आनेपर सभी व्रजाङ्गनाएँ नन्दनन्दनकी आरती उतार रही हैं। आगे-आगे गोवत्स चल रहे हैं तथा उनके पीछे ग्वालसखाओंके बीचमें कंधेपर छींका रखे हुए नन्दनन्दन हैं। उन गोवत्सोंपर, ग्वालसखाओं एवं नन्दनन्दनपर व्रजाङ्गनाएँ पुष्प बरसा रही हैं और उन सबको अपनी प्यारभरी चितवनसे निहाल करते हुए नन्दनन्दन वनकी ओर चले जा रहे हैं—

गोबिंद चलत देखियत नीके।
मध्य गुपाल-मंडली मोहन काँधन धरि लिये छीके॥
बछरा-बृंद घेरि आगें दै ब्रजजन सृंग बजाए।
मानहुँ कमल-सरोवर तजि कै मधुप उनींदे आए॥

परस्पर हँसते-खेलते एवं गोवत्सोंको उछलाते-कुदाते सबने वनमें प्रवेश किया। तृण-लताङ्कुरोंसे अत्यन्त शोभित हरित वनभूमिपर बछड़ोंको चरनेके लिये छोड़ दिया। एवं परस्पर खेलमें संलग्न हो गये। कुछ देर सखाओंके साथ खेलकर फिर नन्दनन्दनने गोवत्सोंसे खेलनेका विचार किया। श्यामसुन्दर अपने सुकोमलतम हाथोंसे हरी-हरी दूब तोड़ते तथा बछड़ोंके मुँहमें जाकर देते। बछड़ा अपना मुख श्यामसुन्दरके हाथोंपर रख देता तथा धीरे-धीरे दूब चरने लग जाता। उसे चरते देखकर सभी गोवत्स श्यामसुन्दरको चारों ओर घेरकर खड़े हो जाते और उनके हाथसे दूब चरनेकी चेष्टा करते। श्यामसुन्दर भी अतिशय प्यारसे क्रमशः सबके मुँहमें हरी-हरी दूब देते। ग्वालसखाओंकी मण्डली श्यामसुन्दरके हाथोंमें तोड़-तोड़कर दूब देती और वे उन्हें खिलाते जाते। उस दिन दोपहरतकका समय श्यामसुन्दरने सखाओंके साथ दूब तोड़-तोड़कर बछड़ोंको खिलानेमें ही बिताया। जब
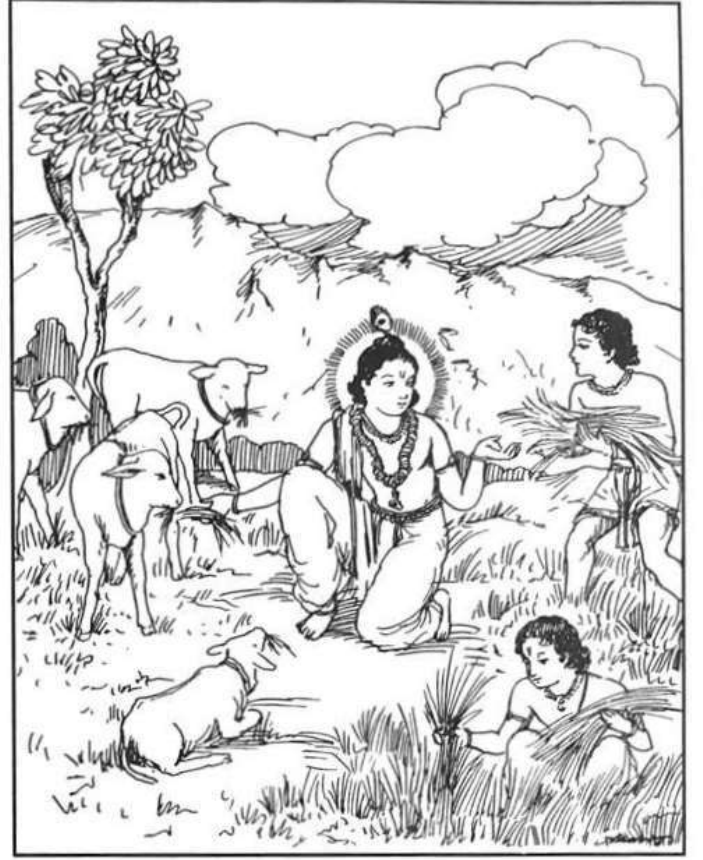
श्रीकृष्णका बछड़ोंको घास खिलाना

बछड़े तृणसे तृप्त हो गये तो उन्हें जलाशयके समीप ले जाकर पानी पिलाने लगे। एक बछड़ेने जल-पान नहीं किया। बाललीला-रसमत्त श्यामसुन्दरने सोचा—अच्छा, अपने हाथोंसे इसे जल पिला दूँ; सम्भवतः यह जलाशयमें जानेसे डरता है। यह सोचकर अपने करकमलोंकी छोटी-सी अञ्जलि बनायी तथा जलाशयसे जल भरकर बछड़ेके मुँहके पास ले गये। छोटी-सी अञ्जलि मुँहतक पहुँचते-पहुँचते खाली हो गयी। श्यामसुन्दर कुछ उदास-से हो गये। दो-चार बार ऐसा करनेपर भी जब सफल नहीं हुए तो अपना पीताम्बर भिगोया। श्यामसुन्दर बछड़ेके सामने अञ्जलि बाँधे रहे एवं दाऊ ऊपरसे भीगे पीताम्बरको निचोड़ने लगे। जल अञ्जलिमें गिरने लगा, पर बछड़ा जलकी धारासे चिहुँककर अलग कूद गया। नन्दनन्दन एवं सभी सखा हँस पड़े।

जलसे तृप्त हुए बछड़ोंको एक वृक्षकी शीतल छायामें बैठाया। फिर उनसे खेलने लगे। एक बछड़ेके पास गये; उसके सारे अङ्गोंको सहलाया; उसके गलेमें अपनी दोनों भुजाएँ डाल दीं; पश्चात् गोवत्सके कपोलपर अपना कपोल

रखा। फिर कानके पास मुँह लगाकर बोले—'क्यों रे वत्स! मातासे मिलना चाहता है? अच्छी बात है, मिला दूँगा।' इस तरह उससे बहुत देरतक बातें करते रहे; बछड़ा श्रीकृष्णके करस्पर्श, कपोलस्पर्शका योगीन्द्र-मुनीन्द्र-दुर्लभ आनन्द पाकर निहाल हो रहा है एवं उसे सुखी देखकर श्रीकृष्ण भी सुखसागरमें निमग्न हो रहे हैं—

xx **मातरं मिलितुमिच्छसि? मेलयिष्यामीति तत्कर्णे मिथः कपोलमेलनपूर्वकवृथावर्णनेन च तमुपचर्य्य सुखमुपलब्धवान्।** (श्रीगोपालचम्पू)

ऐसे ही अनेक कौतुकोंसे बछड़े एवं गोपबालकोंको सुखी कर जननीके द्वारा भेजी हुई छाकका सबने मिलकर भोजन किया। भोजनके बाद विश्राम, विश्रामके बाद वंशीवादन एवं नृत्य आदि हुए। पर अब दिन अधिक ढल चुका था। अतः यशोदानन्दन बछड़ोंको एकत्र कर व्रज लौटे। जननी-जनक एकान्त मनसे वनकी ओर नेत्र लगाये प्रतीक्षा कर रहे थे। अपने हृदयधनको आते देखकर दोनों ही दौड़ पड़े। मार्गमें ही मिलन हुआ, यशोदाने अपने प्राणधनको हृदयसे लगा लिया; अपनी गोदमें नीलमणिको लिये घर पहुँची। बछड़ोंको नन्दरायजी स्वयं उनकी माताओंके पास पहुँचा आये। वनके विविध दृश्योंका एवं अपने खेलोंका वर्णन राम-श्याम एवं सखा करने लगे। व्रजराज, व्रजरानी एवं व्रजाङ्गनाएँ बड़े चावसे सुनने लगीं। यह प्रथम दिनका वत्सचारण हुआ। (शेष पृ० सं० ४७१ से)

महर्षि वसिष्ठकी गोसेवा

ब्रह्मशक्तिके मूर्तिमान् स्वरूप तपोनिधि महर्षि वसिष्ठजीके उज्ज्वल चरित्रसे हमारे धर्मशास्त्र, इतिहास और पुराण भरे पड़े हैं। इनकी सहधर्मिणी अरुन्धती पतिव्रताओंका आदर्श हैं जो सप्तर्षिमण्डलके पास ही इनकी सेवामें लगी रहती हैं। ब्रह्माजीके मानसपुत्र महर्षि वसिष्ठजीने 'भूतलमें भगवान् श्रीरामका आविर्भाव होगा' यह समझकर सूर्यवंशका कुलगुरु-पद स्वीकार किया और भगवान् श्रीरामको अपने शिष्यरूपमें पाकर महर्षिने अपनेको धन्य माना। यहाँ आकर इन्होंने अपनेको सर्वभूतहितमें लगाये रखा। जब कभी अनावृष्टि हुई, दुर्भिक्ष पड़ा तब इन्होंने अपने तपोबलसे वर्षा करायी और जीवोंकी अकालमृत्युसे रक्षा की। इन्हींके उपदेशके बलपर राजर्षि भगीरथ देवनदी गङ्गाको लानेमें समर्थ हुए।

महर्षि वसिष्ठजी महान् तपस्वी थे, एवं क्षमाकी तो वे साक्षात् मूर्ति ही थे। जब विश्वामित्रजीने इनके सौ पुत्रोंका संहार कर दिया, उस समय यद्यपि इन्होंने बड़ा शोक प्रकट किया, परंतु सामर्थ्य होनेपर भी विश्वामित्रके किसी प्रकारके अनिष्टका चिन्तन नहीं किया, बल्कि अन्तःकरणके क्षणिक शोकाकुल होनेपर भी ये अपनी निर्लेपता और असंगताको नहीं भूले।

महर्षि वसिष्ठ योगवासिष्ठके उपदेशकके रूपमें ज्ञानकी साक्षात् मूर्ति हैं। उनका जीवन भगवान् श्रीरामके प्रेममें निमग्न है। वे आज भी सप्तर्षियोंमें स्थित रहकर सारे जगत्के कल्याणमें लगे हुए हैं।

तपोवन-संस्कृतिके जीवन-स्वरूप महर्षि वसिष्ठजीकी गोमातामें कितनी भक्ति थी यह सर्वविदित ही है। किस प्रकार उन्होंने शबला गौके प्रभावसे राजर्षि विश्वामित्रजीका सेनासहित विशिष्ट आतिथ्य किया था, यह बात भी वाल्मीकि आदि रामायणोंमें प्रसिद्ध ही है। वे स्वयं अपने हाथों नित्य गौकी सेवा करते थे। अपने आश्रममें देवी अरुन्धती एवं स्वयं वे नित्य गौकी पूजा करते थे। गौकी कितनी अनन्त महिमा है तथा गोसेवा क्या है, उसका क्या फल है, वे भलीभाँति जानते थे। इसलिये नित्य वे गायोंका सांनिध्य चाहते थे। गोतत्त्ववेत्ताओंके तो महर्षि वसिष्ठ आद्य आचार्य ही हैं। महाभारतमें राजा सौदासको उन्होंने जिस गोतत्त्व और गोसेवाका उपदेश दिया है, वैसा अद्भुत वर्णन अन्यत्र दीखता नहीं, महर्षि गोमहिमाका वर्णन करते हुए कहते हैं—

'राजन्! गौएँ ही मनुष्यों किंवा समस्त प्राणियोंके जीवनका अवलम्ब हैं, गौएँ कल्याण-मङ्गलका परम निधान हैं। पहलेके लोगोंका ऐश्वर्य गौपर अवलम्बित था और आगेकी उन्नति भी गौपर ही अवलम्बित है। गौएँ ही सब समय पुष्टिका साधन हैं—

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत्॥
गावो भूतं च भव्यं च गावः पुष्टिः सनातनी।

(महाभा०, अनु० ७८। ५-६)

महर्षि वसिष्ठजीने अनेक प्रकारसे गोमहिमा तथा उनके दान आदिकी महिमा बताते हुए मनुष्योंके लिये एक महत्त्वपूर्ण उपदेश तथा एक मर्यादा स्थापित करते हुए कहा—

नाकीर्तयित्वा गाः सुप्यात् तासां संस्मृत्य चोत्पतेत्।
सायंप्रातर्नमस्येच्च गास्ततः पुष्टिमाप्नुयात्॥
गाश्च संकीर्तयेन्नित्यं नावमन्येत तास्तथा।
अनिष्टं स्वप्नमालक्ष्य गां नरः सम्प्रकीर्तयेत्॥

(महाभा०, अनु० ७८। १६, १८)

अर्थात् 'गौओंका नामकीर्तन किये बिना न सोये। उनका स्मरण करके ही उठे और सबेरे-शाम उन्हें नमस्कार करे। इससे मनुष्यको बल और पुष्टि प्राप्त होती है। प्रतिदिन गौओंका नाम ले, उनका कभी अपमान न करे। यदि बुरे स्वप्न दिखायी दें तो मनुष्य गोमाताका नाम ले।'

इसी प्रकार वे आगे कहते हैं कि जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक रात-दिन निम्न मन्त्रका बराबर कीर्तन करता है वह सम अथवा विषम किसी भी स्थितिमें भयसे सर्वथा मुक्त हो जाता है और सर्वदेवमयी गोमाताका कृपा-पात्र बन जाता है। मन्त्र इस प्रकार है—

गा वै पश्याम्यहं नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा।
गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्॥

(महाभा०, अनु० ७८। २४)

अर्थात् 'मैं सदा गौओंका दर्शन करूँ और गौएँ मुझपर कृपा-दृष्टि करें। गौएँ हमारी हैं और हम गौओंके हैं। जहाँ गौएँ रहें, वहीं हम रहें, चूँकि गौएँ हैं इसीसे हमलोग भी हैं।'

इस प्रकार महर्षि वसिष्ठजीने हमारे लिये गोसेवाका कितना सुन्दर उपदेश दिया है। त्रिकालदर्शी महर्षिने जीवोंके उद्धारके लिये ही गोसेवा-व्रतका आदर्श सामने रखा और बताया कि यदि मनुष्य गौकी सच्ची सेवा करे तो उसका सर्वविध कल्याण निश्चित ही है।

महर्षि वसिष्ठकी गोसेवा सभी इतिहास-पुराणों तथा काव्योंमें प्रसिद्ध ही है। शबला, नन्दिनी आदिकी कथाएँ भी सम्पूर्ण भारतीय साहित्यमें प्रसिद्ध हैं। नन्दिनी इन्हींकी कामधेनुकी पुत्री थी, जिसकी सेवासे दिलीपकी पत्नी सुदक्षिणाके गर्भसे महाराज रघुका जन्म हुआ और उसीके कारण 'सूर्यवंश'का नाम 'रघुवंश' प्रसिद्ध हुआ। कालिदासके 'रघुवंश' ग्रन्थमें मूलरूपसे यही कथा व्याप्त है। या यों कहिये कि इसी कथाके कारण कालिदास प्रसिद्ध हुए और उनके काव्योंका सर्वत्र प्रचार-प्रसार हुआ। उन्होंने सभी पंडितों तथा प्रारम्भिक संस्कृत विद्यार्थियोंको गोसेवा करनेकी सलाह दी। यह सब कालिदासने महर्षि वसिष्ठकी गो-सेवासे एवं उनके ग्रन्थोंसे प्राप्त किया।

महर्षि वसिष्ठका मुख्य ग्रन्थ योगवासिष्ठ है, जिसको आधार बनाकर स्वामी विद्यारण्यने पञ्चदशी ग्रन्थके मध्य-खण्डमें पञ्चप्रदीप-प्रकरण लिखा। वह प्रदीप गायोंके घीसे ही प्रदीप्त होता है, उसीके आधारपर गोस्वामीजीने ज्ञानदीपकका प्रकरण लिखा। मुख्य प्रसंग है—***'सात्त्विक श्रद्धा धेनु सुहाई'*** से प्रारम्भ होकर ***'एहि बिधि लेसै दीप'*** और ***'दीय सिखा सोइ परम प्रचंडा'*** पर समाप्त होता है। इस दीपशिखाको कालिदासने बड़े आदरसे अपने रघुवंश ग्रन्थमें स्थान दिया है। लिखा है—'**संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।**' जिससे अन्य कवियोंने उनका नाम दीपशिखाका कवि रख दिया है। और यह दीपशिखा गौके घीसे ही जलती है। शबला गायके इतिहाससे तो सभी पुराण, वाल्मीकिरामायण एवं दूसरे भी रामायण भरे पड़े हैं, जिसका कुछ संक्षिप्त अंश यहाँ दिया जा रहा है—

एक बार क्षत्रिय राजा विश्वामित्र अपनी सारी सेनाके साथ वसिष्ठजीके आश्रमसे गुजरे। उनके साथ पूरी चतुरङ्गिणी सेना थी, जिसमें लाखों सैनिक थे। शबला कामधेनु थी,

फलतः उसने सभी लोगोंके लिये स्वादिष्ट भोजन उत्पन्न कर दिया, जिसे ग्रहणकर सेनासहित विश्वामित्र तृप्त हो चकित हो गये और सोचने लगे महर्षि वसिष्ठने ऐसी सामर्थ्य कहाँसे प्राप्त कर ली। क्योंकि उनके पास कोई अन्य धन नहीं दीखता। जब पता लगा कि यह सब शबलाका ही दिव्य विलक्षण प्रभाव है, तब उन्होंने उसे वसिष्ठजीसे माँगा और कहा कि मैं इसके बदले आपको पर्याप्त धन दूँगा। पर महर्षि वसिष्ठ तैयार नहीं हुए। तब राजाने उस शबलाको जबर्दस्ती घसीटकर ले जानेके लिये अपने सिपाहियोंको आज्ञा दी। वे लोग उसे घसीटने लगे। शबलाने उस समय रोकर महर्षि वसिष्ठसे कहा कि आपने मुझे इसे क्यों दे दिया? इसपर वसिष्ठजीने कहा— 'मैंने तुम्हें नहीं दिया, यह राजा बलवान् है। मेरी बात नहीं मानता और तुम्हें बलपूर्वक घसीटता है। तुम्हारी जो इच्छा हो करो, मैं तुम्हें जानेको नहीं कहता।' इसपर शबलाने अपने शरीरसे अनन्त संख्यामें यवन, खस, पह्लव, हूण आदि सैनिकोंको उत्पन्न किया, जिन्होंने महर्षि विश्वामित्रकी सेनाको नष्ट कर दिया। इसका वर्णन महर्षि वाल्मीकिने अपनी रामायणमें बड़े रमणीय एवं आकर्षक शब्दोंमें किया है—

तस्य तद् वचनं श्रुत्वा सुरभिः सासृजत् तदा।
तस्या हुंभारवोत्सृष्टाः पह्लवाः शतशो नृप॥
नाशयन्ति बलं सर्वं विश्वामित्रस्य पश्यतः।
स राजा परमः क्रुद्धः क्रोधविस्फारितेक्षणः॥
पह्लवान् नाशयामास शस्त्रैरुच्चावचैरपि।
विश्वामित्रार्दितान् दृष्ट्वा पह्लवाञ्शतशस्तदा॥
भूय एवासृजद् घोराञ्छकान् यवनमिश्रितान्।
तैरासीत् संवृता भूमिः शकैर्यवनमिश्रितैः॥
प्रभावद्भिर्महावीर्यैर्हेमकिंजल्कसंनिभैः।
तीक्ष्णासिपट्टिशधरैर्हेमवर्णाम्बरावृतैः॥
निर्दग्धं तद्बलं सर्वं प्रदीप्तैरिव पावकैः।

(वाल्मीकिरामा० १।५४।१८—२३)

अर्थात् 'महर्षि वसिष्ठजीके आदेशानुसार उस गौने उस समय वैसा ही किया। उसके हुंकार करते ही सैकड़ों पह्लव जातिके वीर पैदा हो गये। वे सब विश्वामित्रके देखते-देखते उनकी सारी सेनाका नाश करने लगे। इससे राजा विश्वामित्रको बड़ा क्रोध हुआ। वे रोषसे आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगे। उन्होंने छोटे-बड़े कई तरहके अस्त्रोंका प्रयोग करके उन पह्लवोंका संहार कर डाला। विश्वामित्रद्वारा उन सैकड़ों पह्लवोंको पीडित एवं नष्ट हुआ देख उस समय उस शबला गौने पुनः यवनमिश्रित शक जातिके भयंकर वीरोंको उत्पन्न किया। उन यवनमिश्रित शकोंसे वहाँकी सारी पृथ्वी भर गयी। वे वीर महापराक्रमी और तेजस्वी थे। उनके शरीरकी कान्ति सुवर्ण तथा केसरके समान थी। वे सुनहरे वस्त्रोंसे अपने शरीरको ढँके हुए थे। उन्होंने हाथोंमें तीखे खड्ग और पट्टिश ले रखे थे। प्रज्वलित अग्निके समान उद्भासित होनेवाले उन वीरोंने विश्वामित्रकी सारी सेनाको भस्म करना आरम्भ किया।'

महर्षि वसिष्ठजीकी गोसेवा कैसी थी और गोमाताकी शक्ति कितनी प्रबल होती है अथवा हो सकती है उसकी कल्पना भी कठिन है। यह बात इस घटनासे स्पष्ट हो जाती है। अतः अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिसे गौओंकी सेवा करनी चाहिये। क्योंकि गोमाता तो सबके लिये समान फलदायिनी हैं। वे अपने सेवकको समस्त पाप-तापसे मुक्त कर महर्षि वसिष्ठके समान ज्ञानी, पूज्य, वन्द्य, यशस्वी, तेजस्वी एवं सब प्रकार समृद्धिशाली, शक्तिसम्पन्न और सुखी बना सकती हैं।

वेदमें गौका जुलूस

यया द्यौर्यया पृथिवी ययापो गुपिता इमाः। वशां सहस्रधारां ब्रह्मणाच्छावदामसि॥
शतं कंसाः शतं दोग्धारः शतं गोप्तारो अधि पृष्ठे अस्याः। ये देवास्तस्यां प्राणन्ति ते वशां विदुरेकधा॥

अर्थात् जिस गौके द्वारा द्यु, पृथिवी एवं जलमय अन्तरिक्ष—ये तीनों लोक सुरक्षित हैं, उस सहस्रधाराओंसे दूध देनेवाली गौकी हम प्रशंसा करते हैं। सौ दोहनपात्र लिये सौ दुहनेवाले तथा सौ संरक्षक इसकी पीठपर सदा खड़े रहते हैं। इस गौसे जो देव जीवित रहते हैं, वे ही सचमुच उस गौका महत्त्व जानते हैं। (अथर्ववेद १०।१०।४-५)

भगवान् व्यासदेवकी दृष्टिमें गोसेवा

व्यासं वसिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम्।
पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम्॥

भगवान् वेदव्यास वेदोंके भावपूर्वक विभाजन करनेवाले हैं और महाभारत तथा सभी पुराण, उपपुराणों, बृहद् व्यासस्मृति आदि स्मृतियों तथा वेदान्त-दर्शन, योगदर्शन आदि सभीके निर्माता हैं और आजका सम्पूर्ण विश्वसाहित्य इन्हींका उच्छिष्ट है। इसलिये '**व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वम्**' की परम्परासे प्रसिद्धि है। इन्होंने अपने समग्र साहित्यमें गोसेवाको प्रमुख माना है और उसे यज्ञ, तप, धर्म, दान आदिका मूल माना है। स्कन्दपुराण, भविष्यपुराण, पद्मपुराण, अग्निपुराण तथा महाभारतके अधिकांश भाग गो-महिमासे भरे पड़े हैं। बृहद्धर्मपुराण तथा विष्णुधर्मोत्तर, शिवधर्मोत्तर पुराणोंमें भी गो-महिमा भरी पड़ी हैं। धर्मको वृषभ (बैल)-रूप माना गया है—

वृषो हि भगवान् धर्मो यस्तस्य कुरुते ह्यलम्।
वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद् धर्मं न लोपयेत्॥

—इत्यादि श्लोकोंमें गाय और बैलको थोड़ा भी कष्ट देना महान् पाप माना गया है।

पुराणोंमें अनेक जगह '**गोमती-विद्या**' और '**गो-सावित्रीस्तोत्र**'का उल्लेख प्राप्त होता है। वे भगवान् व्यासदेवकी रचनाएँ हैं। इनमें उन्होंने कहा है—'संसारकी रक्षाके लिये वेद और यज्ञ ही दो श्रेष्ठ उपाय हैं और इन दोनोंका संचालन गायके दूध, घी और बैलोंके द्वारा उत्पन्न किये व्रीहिसे निर्मित चरु, पुरोडाश, हविष्य आदिसे ही सम्पन्न होता है। मूलतः ब्राह्मण, वेद और गौ—ये तीनों एक ही हैं। यज्ञकी सम्पन्नताके लिये ब्राह्मण और गौ—ये दोनों अलग-अलग रूपमें दीखते हैं। ब्राह्मणोंके पास तो वेद, मन्त्र और यज्ञ करानेकी बुद्धि और विधियाँ हैं तथा उन्हीं यज्ञोंके लिये हविष्यकी सारी सामग्री गौके उदरमें संनिहित है—'

ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधा कृतम्।
एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरन्यत्र तिष्ठति॥

उनके कथनानुसार गायोंसे सात्त्विक वातावरणका निर्माण होता है। गायें अत्यन्त पवित्र हैं, इसलिये जहाँ रहती हैं, वहाँ कोई भी दूषित तत्त्व नहीं रहता। उनके शरीरसे दिव्य सुगन्धयुक्त वायु प्रवाहित होती है और सब प्रकारका कल्याण-ही-कल्याण होता है—

गावः पवित्रं परमं गावो माङ्गल्यमुत्तमम्।
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावो धन्याः सनातनाः॥

अर्थात् गौएँ स्वर्ग जानेकी सीढ़ी हैं। गौएँ सब प्रकारकी कल्याणमयी हैं। देवता तथा मनुष्य सबको भोजन देनेवाली भी गौएँ ही हैं—

'अन्नमेव परं गावो देवानां हविरुत्तमम्।'

अर्थात् गौएँ समस्त प्राणियोंको खिलाने-पिलाने एवं जिलानेवाली हैं।

भगवान् वेदव्यासने वेदान्तदर्शनमें—'**क्षीरवद्धि**' इस सूत्रमें दिखाया है कि परमात्मा गायके दूधकी तरह शरीरमें स्थित है। बाहर दिखायी नहीं पड़ता, परंतु शास्त्रीय विधानसे उसका साक्षात्कार किया जा सकता है। इस प्रकार और भी दूसरे सूत्रोंमें गायके दूधकी उपमा दी गयी है। उनका महाभारतका सम्पूर्ण वैष्णवधर्म-पर्व गो-उपासनासे ही सम्बन्धित है। इनके पिता पराशरजीने 'कृषिपराशर' ग्रन्थ लिखा था, जिसमें गाय-बैलोंके द्वारा उत्पन्न अन्नको भी श्रेष्ठ कहा है और यह भी बतलाया है कि खेतीके कामोंमें गायोंको बहुत आरामसे प्रयुक्त करना चाहिये। उन्हें सदा सुख देना चाहिये। उन्हें सदा गोशालाओंमें रखना चाहिये। बीमार होनेपर ओषधिकी व्यवस्था करनी चाहिये। गोशालाओंमें किसी प्रकारका भय नहीं होना चाहिये। बारहों महीना उसमें शीत, वर्षा और गर्मीसे रक्षाके लिये साधन होने चाहिये। जिससे उन्हें तथा उनके बच्चोंको कष्ट न हो। ये बातें भविष्यपुराणके उत्तरपर्व, मध्यमपर्व एवं महाभारतके वैष्णवधर्म-पर्व एवं बृहद् व्यासस्मृतिमें भी कही गयी हैं।

मध्यमपर्वमें विस्तारसे कहा गया है कि सभी गाँवोंमें गोचरभूमि रहनी चाहिये। गोचरभूमि गाँवके चारों ओर कम-से-कम एक हजार हाथके परिमाणमें होनी चाहिये। उसमें पीपल आदिके या दूसरे फलदार वृक्ष रखे जा सकते

हैं। उसे कभी भूलकर भी न जोतना चाहिये एवं न खेती-खलिहानके काममें ही लाना चाहिये। आस-पासमें वन-उपवन रहे तो और उत्तम है। पर बड़े खेदकी बात है कि आज गोचरभूमिकी व्यवस्था प्राय: नहीं रह गयी है। इससे गायोंको बड़ा कष्ट हो गया है। उनकी स्वच्छन्दता मिट गयी है। इसलिये भारतमें निवास करनेवाले सभी धर्मात्मा लोगोंसे प्रार्थना है कि गोचरभूमिकी व्यवस्था पुन: प्रवर्तित करें और भविष्य आदि पुराणोंमें व्यासनिर्दिष्ट-पद्धतिसे संकल्पपूर्वक दश दिक्पालों आदिका आवाहन-पूजन-स्थापन कर उसे गौओंके लिये उत्सर्ग कर दें। इससे गौओंका तो कल्याण होगा ही, सभी प्राणियोंमें भगवद्भावना एवं समताकी स्थापना भी होगी। अन्यथा गौ आदि अन्य प्राणियोंकी सर्वथा उपेक्षा कर मनुष्य केवल अपना कल्याण करनेमें कभी सक्षम नहीं हो सकता। केवल मानवतावादी संगठन न बनाकर प्राणिनिकायका कल्याण देखना चाहिये और गौओंका तो सर्वाधिक; क्योंकि उनमें सभी देवताओं और तीर्थोंका निवास है तथा वे भगवान्‌को सर्वाधिक प्रिय हैं। गौओंकी प्रसन्नतासे सभी देवता, ऋषि, भगवान् भी प्रसन्न होंगे। तभी राष्ट्रका कल्याण होगा। यही भगवान् व्यासदेवके समस्त वेद, पुराण, धर्मशास्त्र, महाभारत आदिमें प्रदिष्ट गोसेवा-धर्मके प्रतिपादन-पद्धतिका संक्षिप्त सारांश है।

भगवान् आदिशंकराचार्यकी दृष्टिमें गोसेवाका महत्त्व

आचार्य शंकरकी सम्प्रदाय-परम्परामें प्रतिदिन पढ़े जानेवाले ये श्लोक बहुत प्रसिद्ध हैं—

नारायणं पद्मभवं वसिष्ठं
शक्तिं च तत्पुत्रपराशरं च।
व्यासं शुकं गौडपदं महान्तं
गोविन्दयोगीन्द्रमथास्य शिष्यम्॥
श्रीशंकराचार्यमथास्य पद्म-
पादं च हस्तामलकं च शिष्यम्।
तं त्रोटकं वार्तिककारमन्या-
नस्मद्गुरुं संततमानतोऽस्मि॥
नारायणसमारम्भां शंकराचार्यमध्यगाम्।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम्॥

—इन श्लोकोंमें भगवान् नारायणसे लेकर आचार्य शंकर एवं उनके शिष्योंतककी परम्पराका उल्लेख हुआ है। प्राय: ये सभी-के-सभी अनन्य गोभक्त थे। भगवान् नारायण या कृष्णका आवास ही गोलोकधाम है। उन्होंने कृष्णरूपमें अवतीर्ण होकर सर्वोपरि गोसेवाका अद्भुत आदर्श रखा। जिनके लिये कहा गया है—

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दोग्धा गोपालनन्दनः॥

इसीलिये उनका गोविन्द, गोपालनन्दन आदि नाम भी पड़ गया। गोवर्धन-पर्वत ही उनका मुख्य भ्रमण-रमणका विहार-स्थल था।

भगवान् आदिशंकराचार्यने प्राय: अपने सभी ग्रन्थोंमें गोमहिमाका गान किया है। वे अद्वयवादी ब्रह्मद्रष्टा थे और ब्रह्मसाक्षात्कारको ही सर्वोपरि उपलब्धि मानते थे। इस ब्रह्मोपलब्धिमें भी गोसेवाको सर्वोपरि साधन मानते थे। उपनिषदोंके अनुसार सत्यकाम जाबालको गोसेवासे अतिशीघ्र परमात्मसाक्षात्कार हो गया था। वह जब अपने आचार्य हारिद्रुमत गौतम (हरे वृक्षोंके जंगलमें रहकर गौओंकी सेवा करनेवाले) के पास पहुँचा तो उन्होंने उसे गौ चरानेका ही आदेश दिया और कहा कि जब गौओंकी संख्या एक हजार हो जाय तब वापस आ जाना। उसके साथ चार सौ गौएँ और कुछ साँड़ भी थे। कुछ दिनमें जब उनकी संख्या एक हजार हुई तो वह उन्हें लेकर आचार्यके आश्रमकी ओर चला तो उसकी सात्त्विक श्रद्धासे प्रभावित होकर ब्रह्मविद्याने भी गौ अर्थात् साँड़का रूप धारण कर लिया और उसे ब्रह्मतत्त्वका उपदेश दिया तथा कहा—'ब्रह्म दिव्य प्रकाशसे युक्त होता है। अर्थात् दिव्य विशुद्ध ज्ञानात्मक है।' यह वर्णन विस्तारसे भगवत्पाद शंकराचार्यने अपने शांकरभाष्यमें लिखा है। भगवान् आदिशंकराचार्यके मूल वचन इस प्रकार हैं—

तमेतं श्रद्धातपोभ्यां सिद्धं वायुदेवता दिक्सम्बन्धिनी तुष्टा सत्यृषभमनुप्रविश्यर्षभभावमापन्नानुग्रहाय।

अथ हैनमृषभोऽभ्युवादाभ्युक्तवान् सत्यकाम ३ इति सम्बोध्य तमसौ सत्यकामो भगव इति ह प्रतिशुश्राव प्रतिवचनं ददौ। प्राप्ताः सौम्य सहस्त्रं स्मः, पूर्णा तव प्रतिज्ञा, अतः प्रापय नोऽस्मानाचार्यकुलम्।

यहाँ आचार्यकी भावना या शब्दावली इतनी पवित्र है, जिसकी ठीकसे कल्पना या इयत्ता नहीं मापी जा सकती। भाव यह है कि सत्यकामकी जिज्ञासा, गोसेवाकी चरम परिणति मूर्तिमती श्रद्धा ही ब्रह्मविद्याके रूपमें गौ (वृषभ, ऋषभ या साँड़) में प्रविष्ट हुई, जो हिन्दूशास्त्रोंमें साक्षात् धर्मका मूर्तिमान् विग्रह माना गया है। उसने सत्यकामसे कहा—सत्यकाम! देखो, मैं तुम्हें ब्रह्मज्ञानका उपदेश दे रहा हूँ। ब्रह्म चतुष्पाद और षोडशकला अर्थात् सोलह कलाओंसे संयुक्त है। उसके पूर्व दिशाका जो पाद है वह विशुद्ध ज्ञानमय और प्रकाशस्वरूप है, ये सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि आदि इसीसे प्रकाशित होते हैं[1]। और आगे उसीने हंस, मद्गु आदिसे ब्रह्मके सच्चिदानन्दस्वरूपका पूर्ण उपदेश कराया तथा आश्रमपर आते ही सत्यकामसे आचार्यने कहा—सत्यकाम! तुम्हारे मुखपर ब्रह्मतेज विराजमान है, जिससे निश्चय ही तुम्हें परमात्माकी पूर्णतया प्राप्ति हो गयी है।

आचार्यने यह भी लिखा है कि ब्रह्मवेत्ता ही ज्ञानके प्रसादसे पूर्ण प्रसन्नचित्त और मुखपर तेजयुक्त प्रतिभासित होता है—'**प्रसन्नेन्द्रियः प्रहसितवदनश्च निश्चिन्तः कृतार्थो ब्रह्मविद्भवति**' (छान्दोग्य० ४। ९। २ का भाष्य)।

इसी प्रकार वेदान्तदर्शन '**उपसंहारदर्शनान्नेति चेन्न क्षीरवद्धि।**' (२। १। २४) के भाष्यमें आचार्यने लिखा है कि जैसे गोदुग्ध बिना किसी अन्य वस्तुके आश्रय लिये दहीके रूपमें विवर्तित होता है इसी प्रकार जैसे पकड़ीको जाला बुननेमें अपने मुँहके लारकी आवश्यकता होती है,[2] किसी बाह्य उपकरणकी आवश्यकता नहीं, वैसे ही परमात्मा स्वयं संसारके रूपमें विवर्तित हुआ है। उसे किसी बाह्य उपकरणकी आवश्यकता नहीं होती। आचार्यके मूल वचन इस प्रकार हैं—

क्षीरवद् द्रव्यस्वभावविशेषादुपपद्यते। यथा हि लोके क्षीरं जलं वा स्वयमेव दधिहिमभावेन परिणमतेऽनपेक्ष्य बाह्यं साधनं तथेहापि भविष्यति। ननु क्षीराद्यपि दध्यादिभावेन परिणममानमपेक्षत एवं बाह्यं साधनमौष्ण्यादिकम्।

(वेदान्तदर्शनका शाङ्करभाष्य २। १। २४)

इसी प्रकार इनके अनुयायियोंने रत्नप्रभा, न्यायनिर्णय, भामती, वेदान्त-कल्पतरु, परिमल एवं आभोग आदि टीकाओंमें गो-क्षीरका विस्तारसे विवरण लिखा है। भगवद्गीतामें '**ब्राह्मणे गवि हस्तिनि**' में '**गवि**' पदपर आचार्यने तथा भाष्योत्कर्ष दीपिकाकारने पर्याप्त प्रकाश डाला है। आचार्य शंकरभगवत्पादके अन्य ग्रन्थोंमें भी गोमहिमाकी चर्चा है। विस्तारभयसे सबका संग्रह नहीं किया गया है। श्रद्धालु लोग स्वयं अन्वेषण कर सकते हैं। आचार्यकी दृष्टिसे इस प्रकार सबको गोसेवा आदिके द्वारा भगवत्प्राप्ति या परमात्मसाक्षात्कार एवं सुख-समृद्धिमें पूर्ण अधिकार है।

गौको दाहिने रखे

पवित्रमग्र्यं जगतः प्रतिष्ठा दिवौकसां मातरोऽथाप्रमेयाः।
अन्वालभेद् दक्षिणतो व्रजेच्च दद्याच्च पात्रे प्रसमीक्ष्य कालम्॥

गौ सबसे अधिक पवित्र, जगत्का आधार और देवताओंकी माता है। उसकी महिमा अप्रमेय है। उसका सादर स्पर्श करे और उसे दाहिने रखकर चले तथा उत्तम समय देखकर उसका सुपात्र ब्राह्मणको दान करे।

१-यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम्। यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम्॥ (गीता १५। १२)

२-यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च यथा पृथिव्यामोषधयः सम्भवन्ति। यथा सतः पुरुषात् केशलोमानि तथाक्षरात् सम्भवतीह विश्वम्॥ (मुण्डकोप० १। १। ७)

महर्षि च्यवनकी गो-निष्ठा

पूर्वकालकी बात है एक बार महर्षि च्यवन अभिमान, क्रोध, हर्ष और शोकका त्याग करके महान् व्रतका दृढ़तापूर्वक पालन करते हुए बारह वर्षतक जलके अंदर रहे। जल-जन्तुओंसे उनका बड़ा प्रेम हो गया था और वे उनके आस-पास बड़े सुखसे रहते थे। एक बार कुछ मल्लाहोंने गङ्गाजी और यमुनाजीके जलमें जाल बिछाया। जब जाल खींचा गया, तब उसमें जल-जन्तुओंसे घिरे हुए महर्षि च्यवन भी खिंच आये। जालमें
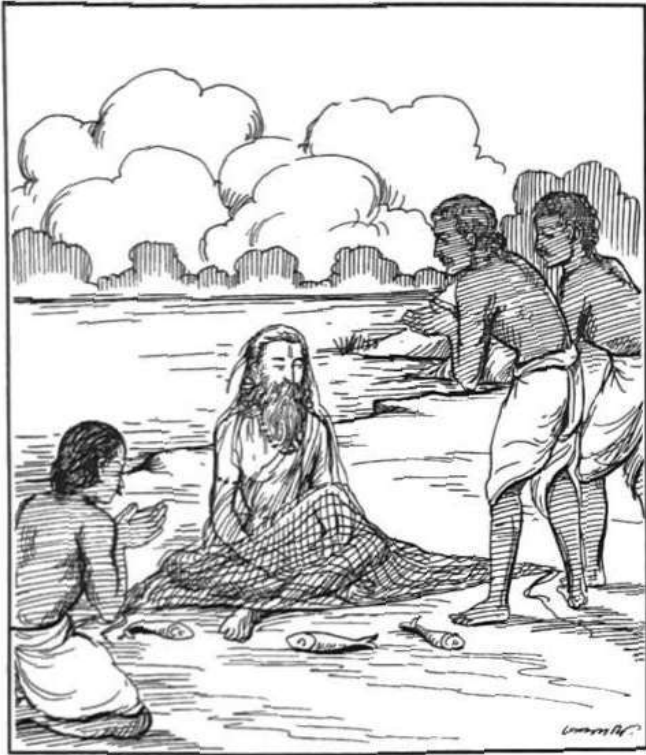
महर्षि च्यवनसे मल्लाहोंकी क्षमा-याचना

महर्षिको देखकर मल्लाह डर गये और उनके चरणोंमें सिर रखकर प्रणाम करने लगे। जालके बाहर खींचनेसे, स्थलका स्पर्श होनेसे और त्रास पहुँचनेसे बहुत-से मत्स्य कलपने और मरने लगे। इस प्रकार मत्स्योंका बुरा हाल देखकर ऋषिको बड़ी दया आयी और वे बारंबार लंबी साँस लेने लगे। मल्लाहोंके पूछनेपर मुनिने कहा—'देखो, ये मत्स्य जीवित रहेंगे, तो मैं भी रहूँगा, अन्यथा इनके साथ ही मर जाऊँगा। मैं इन्हें त्याग नहीं सकता। मुनिकी बात सुनकर मल्लाह डर गये और उन्होंने काँपते हुए जाकर सारा समाचार महाराज नहुषको सुनाया।'

मुनिकी संकटमय स्थिति जानकर राजा नहुष अपने मन्त्री और पुरोहितको साथ लेकर तुरंत वहाँ गये। पवित्र-भावसे हाथ जोड़कर उन्होंने मुनिको अपना परिचय दिया और उनकी विधिवत् पूजा करके कहा—'द्विजोत्तम! आज्ञा कीजिये, मैं आपका कौन-सा प्रिय कार्य करूँ?'

महर्षि च्यवनने कहा—'राजन्! इन मल्लाहोंने आज बड़ा भारी परिश्रम किया है। अत: आप इनको मेरा और मछलियोंका मूल्य चुका दीजिये।' राजा नहुषने तुरंत ही मल्लाहोंको एक हजार स्वर्ण-मुद्रा देनेके लिये पुरोहितजीसे कहा। इसपर महर्षि च्यवन बोले—'एक हजार स्वर्णमुद्रा मेरा उचित मूल्य नहीं है। आप सोचकर इन्हें उचित मूल्य दीजिये।'

इसपर राजाने एक लाख स्वर्णमुद्रासे बढ़ते हुए एक करोड़, अपना आधा राज्य और अन्तमें समूचा राज्य देनेकी बात कह दी; परंतु च्यवन ऋषि राजी नहीं हुए। उन्होंने कहा—'आपका आधा या समूचा राज्य मेरा उचित मूल्य है, ऐसा मैं नहीं समझता। आप ऋषियोंके साथ विचार कीजिये और फिर जो मेरे योग्य हो, वही मूल्य दीजिये।'

महर्षिका वचन सुनकर राजा नहुषको बड़ा खेद हुआ। वे अपने मन्त्री और पुरोहितसे सलाह करने लगे। इतनेहीमें गायके पेटसे जन्मे हुए एक फलाहारी वनवासी मुनिने राजाके समीप आकर उनसे कहा—'महाराज! ये ऋषि जिस उपायसे संतुष्ट होंगे, वह मुझे मालूम है।'

नहुषने कहा—'ऋषिवर! आप महर्षि च्यवनका उचित मूल्य बतलाकर मेरे राज्य और कुलकी रक्षा कीजिये। मैं अगाध दु:खके समुद्रमें डूबा जा रहा हूँ। आप नौका बनकर मुझे बचाइये।'

नहुषकी बात सुनकर मुनिने उन लोगोंको प्रसन्न करते हुए कहा—'महाराज! ब्राह्मण सब वर्णोंमें उत्तम हैं। अत: इनका कोई मूल्य नहीं आँका जा सकता। ठीक इसी प्रकार गौओंका भी कोई मूल्य नहीं लगाया जा सकता। अतएव इनकी कीमतमें आप एक गौ दे दीजिये।'

महर्षिकी बात सुनकर राजाको बड़ी प्रसन्नता हुई और

उन्होंने उत्तम व्रतका पालन करनेवाले महर्षि च्यवनके पास जाकर कहा—'महर्षे! मैंने एक गौ देकर आपको खरीद लिया है। अब आप उठनेकी कृपा कीजिये। मैंने आपका यही उचित मूल्य समझा है।'

च्यवनने कहा—'राजेन्द्र! अब मैं उठता हूँ। आपने मुझे उचित मूल्य देकर खरीद लिया है। मैं इस संसारमें गौओंके समान दूसरा कोई धन नहीं समझता'—

कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव।
गवां प्रशस्यते वीर सर्वपापहरं शिवम्॥
गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते।
अन्नमेव सदा गावो देवानां परमं हविः॥
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ।
गावो यज्ञस्य नेत्र्यो वै तथा यज्ञस्य ता मुखम्॥
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च।
अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः॥
तेजसा वपुषा चैव गावो वह्निसमा भुवि।
गावो हि सुमहत्तेजः प्राणिनां च सुखप्रदाः॥
निविष्टं गोकुलं यत्र श्वासं मुञ्चति निर्भयम्।
विराजयति तं देशं पापं चास्यापकर्षति॥
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।
गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किञ्चित् परं स्मृतम्॥
इत्येतद् गोषु मे प्रोक्तं माहात्म्यं भरतर्षभ।
गुणैकदेशवचनं शक्यं पारायणं न तु॥

(महा०, अ० ५१। २७—३४)

वीरवर! गायोंके नाम और गुणोंका कीर्तन करना-सुनना, गायोंका दान देना और उनके दर्शन करना बहुत प्रशंसनीय समझा जाता है। ऐसा करनेसे पापोंका नाश और परम कल्याणकी प्राप्ति होती है। गायें लक्ष्मीकी मूल हैं, उनमें पापका लेश भी नहीं है। वे मनुष्योंको अन्न और देवताओंको उत्तम हविष्य देती हैं। स्वाहा और वषट्कार नित्य गायोंमें ही प्रतिष्ठित हैं। गौएँ ही यज्ञका संचालन करनेवाली और उसकी मुखरूपा हैं। गायें विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती और दूहनेपर अमृत ही प्रदान करती हैं। वे अमृतकी आधार हैं। समस्त लोक उनको नमस्कार करते हैं। इस पृथिवीपर गायें अपने तेज और शरीरमें अग्निके समान हैं। वे महान् तेजोमयी और समस्त प्राणियोंको सुख देनेवाली हैं। गौओंका समुदाय जहाँ बैठकर निर्भयतासे साँस लेता है वह स्थान चमक उठता है और वहाँका सारा पाप नष्ट हो जाता है। गायें स्वर्गकी सीढ़ी हैं और स्वर्गमें भी उनका पूजन होता है। वे समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली देवियाँ हैं। उनसे बढ़कर और कोई भी नहीं है। राजन्! यह जो मैंने गायोंका माहात्म्य कहा है सो केवल उनके गुणोंके एक अंशका दिग्दर्शनमात्र है। गौओंके सम्पूर्ण गुणोंका वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता।

तदनन्तर मल्लाहोंने मुनिसे उनकी दी हुई गौको स्वीकार करनेके लिये कातर प्रार्थना की। मुनिने उनकी दी हुई गौ लेकर कहा—'मल्लाहो! इस गोदानके प्रभावसे तुम्हारे सारे पाप नष्ट हो गये। अब तुम इन जलमें उत्पन्न हुई मछलियोंके साथ स्वर्गको जाओ।'

देखते-ही-देखते महर्षि च्यवनके आशीर्वादसे वे मल्लाह तुरंत मछलियोंके साथ स्वर्गको चले गये। उनको इस प्रकार स्वर्गको जाते देख राजा नहुषको बड़ा आश्चर्य हुआ। तदनन्तर राजा नहुषने महर्षिकी और गोजातिकी पूजा की और उनसे धर्ममें स्थित रहनेका वरदान प्राप्त करके वे अपने नगरको लौट आये और महर्षि अपने आश्रमको चले गये। (महा०, अनु० ५०-५१)

गोबरसे चौका लगाना चाहिये

लक्ष्मीश्च गोमये नित्यं पवित्रा सर्वमङ्गला।
गोमयालेपनं तस्मात् कर्तव्यं पाण्डुनन्दन॥

(स्कन्द०, अव, रेवा० ८३। १०८)

गोबरमें परम पवित्र सर्वमङ्गलमयी श्रीलक्ष्मीजी नित्य निवास करती हैं, इसलिये गोबरसे लेपन करना चाहिये।

महाराज ऋतम्भरकी गो-सेवा

[गोसेवा-व्रतसे पुत्रप्राप्ति और रामनाम-स्मरणसे गोहत्या-पापका नाश]

ऋतम्भर नामके एक राजा थे। उनके कई स्त्रियाँ थीं, पर उनके कोई संतान नहीं थी। एक दिन अकस्मात् जाबालि मुनि आ पहुँचे। राजाने स्वागत-सत्कारके बाद संतानके लिये उपाय पूछा। मुनिने गायोंकी महिमाका गान करते हुए कहा—

'विष्णोः प्रसादो गोश्चापि शिवस्याप्यथवा पुनः।'

भगवान् विष्णु, गौ और भगवान् शङ्करकी कृपासे पुत्रकी प्राप्ति हो सकती है।

राजाने आदरपूर्वक मुनिसे पूछा—'मुने! गौकी पूजा किस प्रकार की जानी चाहिये और उससे क्या फल होगा।' मुनिने कहा—'महाराज! गो-सेवाका व्रत लेनेवाले पुरुषको गाय चरानेके लिये स्वयं प्रतिदिन जंगलमें जाना चाहिये। गायको जौ खिलाकर उसके गोबरमें जितने जौ निकलें उनको चुनकर संग्रह करना चाहिये और पुत्रकी इच्छा करनेवाले पुरुषको वही जौ खाने चाहिये। जब गौ जल पी चुके तभी उसे भी पवित्र जल पीना चाहिये। गौ जब ऊँची जगहपर रहे तब उससे नीची जगहमें रहना चाहिये। निरन्तर गौके शरीरसे मच्छर और डाँसोंको हटाना चाहिये और उसके खानेके लिये अपने हाथों घास लानी चाहिये। इस प्रकार यदि तुम गोसेवा-व्रतका पालन करोगे तो गौ माता तुम्हें निश्चय ही धर्मपरायण पुत्र देंगी।'

पुत्रकामी धर्मात्मा राजा ऋतम्भरने मुनिके आज्ञानुसार गो-सेवाव्रत ग्रहण कर लिया। एक दिन वनमें राजा प्रकृतिकी शोभा देख रहे थे कि इसी बीच दूसरे वनसे आकर एक सिंहने गौको मार डाला। उस समय गौने बड़े कातर-स्वरसे डकारनेकी ऊँची आवाज की। राजाने दौड़कर देखा और अपनी गौ माताको सिंहके द्वारा निहत जानकर वे विकल होकर रोने लगे। तदनन्तर धैर्य धारण करके वे जाबालि मुनिके पास आये और सारी घटना सुनाकर उनसे इस पापसे छूटनेका और पुत्रप्रद व्रतकी पूर्तिका उपाय पूछा। मुनिने कहा—'पापोंका नाश करनेके लिये शास्त्रोंने भाँति-भाँतिके प्रायश्चित्त बतलाये हैं। नियमानुसार
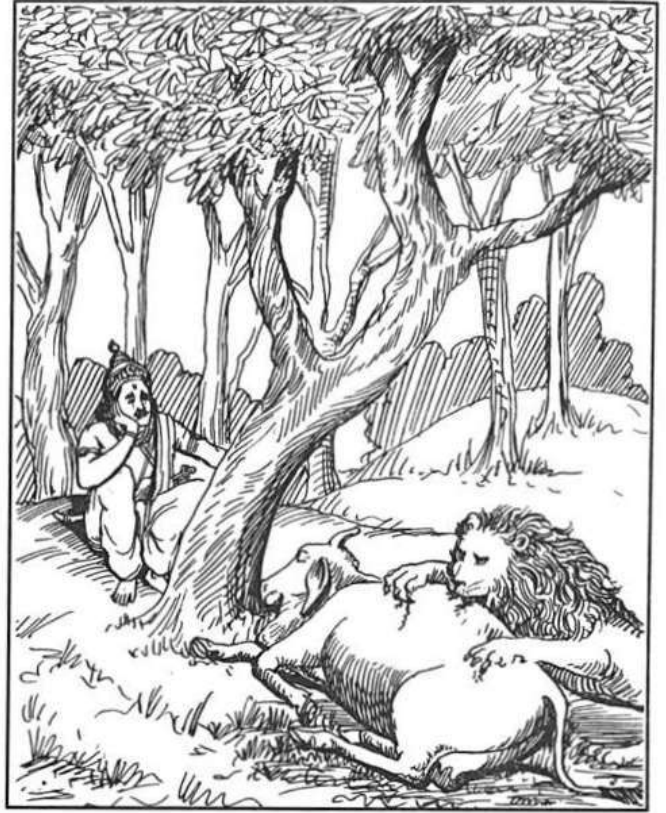
सिंहके द्वारा राजा ऋतम्भरकी गौका वध

उनका अनुष्ठान करनेसे पाप नष्ट हो जाते हैं। परंतु—'

द्वयोर्वै निष्कृतिर्नास्ति पापपुञ्जकृतोस्तयोः।
मत्या गोवधकर्तुश्च नारायणविनिन्दितुः॥
गवां यो मनसा दुःखं वाञ्छत्यधमसत्तमः।
स याति निरयस्थानं यावदिन्द्राश्चतुर्दश॥
योऽपि देवं हरिं निन्देत् सकृद्दुर्भाग्यवान् नरः।
स चापि नरकं गच्छेत् पुत्रपौत्रपरीवृतः॥
तस्माज्ज्ञात्वा हरिं निन्दन् गोषु दुःखं समाचरन्।
कदापि नरकान्मुक्तिं न प्राप्नोति नरेश्वर॥

(पद्म०, पाताल० १९। ३३—३६)

'जान-बूझकर गो-वध और भगवान् नारायणकी निन्दा करनेवाले—इन दोनों महान् पापियोंका निस्तार नहीं हो सकता। जो नराधम मनमें भी गायोंके दुःख होनेकी इच्छा कर लेता है, उसे चौदह इन्द्रोंके कालतक नरकमें

रहना पड़ता है। जो अभागा मनुष्य एक बार भी भगवान् हरिकी निन्दा करता है, वह अपने पुत्र-पौत्रोंके साथ नरकमें जाता है। इसलिये राजन्! जो मनुष्य जान-बूझकर भगवान्‌की निन्दा और गायोंको दुःख देता है, उसका नरकसे छुटकारा कभी नहीं हो सकता।'

परंतु अज्ञानसे किये हुए गो-वधका प्रायश्चित्त है। तुम राजा ऋतुपर्णके पास जाओ, वे तुम्हें उचित परामर्श देंगे।

जाबालि मुनिके आज्ञानुसार राजा ऋतम्भर समदृष्टिसम्पन्न श्रीराम-भक्त राजा ऋतुपर्णके पास गये और सारी कथा सुनाकर उन्होंने उपाय पूछा—प्रतापवान् धर्मविद् बुद्धिमान् ऋतुपर्णने हँसते हुए कहा—'महाराज! कहाँ शास्त्रवेत्ता मुनि और कहाँ मैं। आप उन्हें छोड़कर मुझ पण्डिताभिमानी मूर्खके पास क्यों आये? परंतु यदि मेरे ही प्रति आपकी श्रद्धा है तो मैं निवेदन करता हूँ, आप आदरपूर्वक सुनिये—

भज श्रीरघुनाथं त्वं कर्मणा मनसा गिरा।
नैष्कापट्येन लोकेशं तोषयस्व महामते॥
संतुष्टो दास्यते सर्वं तव हृत्स्थं मनोरथम्।
अज्ञानकृतगोहत्यापापनाशं करिष्यति॥

(पद्म०, पाताल० १९। ४६-४७)

'महामते! अब आप कपट छोड़कर तन, मन, वचनसे सर्वलोकेश्वर भगवान् श्रीरामका भजन कीजिये और उनको संतुष्ट कीजिये। वे संतुष्ट होकर आपके हृदयकी समस्त कामनाओंको पूर्ण कर देंगे और आपके इस अज्ञानकृत गो-हत्या-पापको भी नष्ट कर देंगे।'

महाराज ऋतुपर्णसे आदेश प्राप्त करके गो-सेवाव्रती राजा ऋतम्भर भगवान् श्रीरामके भजन-स्मरणसे पवित्रात्मा होकर पुनः व्रतपालनमें लग गये। वे प्राणिमात्रके हित-साधनमें लगकर निरन्तर भगवान् श्रीरामचन्द्रके नामका स्मरण करते हुए गो-सेवाके लिये महान् वनमें चले गये।
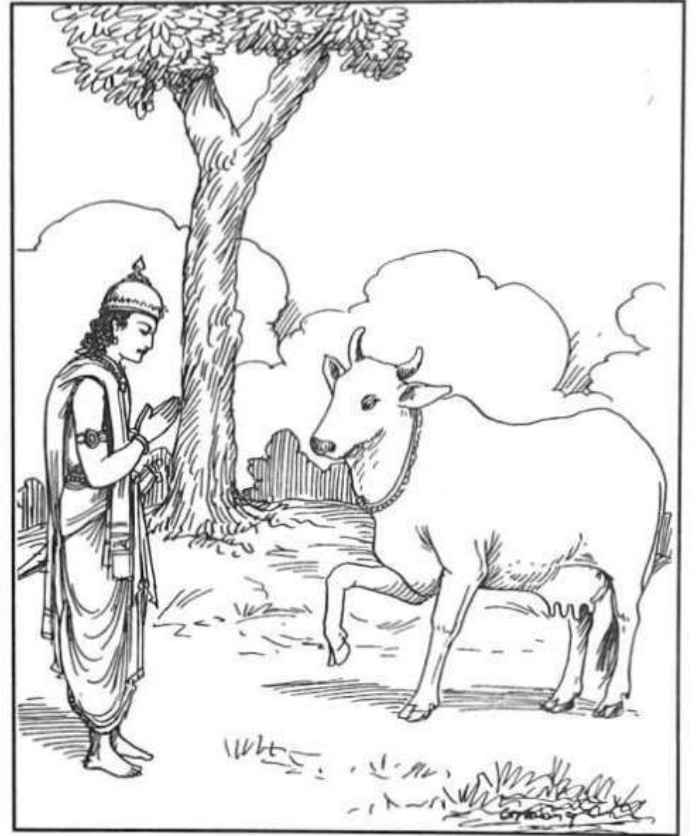
राजा ऋतम्भरपर कामधेनुकी कृपा

कुछ दिनोंके बाद उनकी सेवासे संतुष्ट होकर कृपामयी देवी कामधेनुने प्रकट होकर उन्हें अभीष्ट वर दिया और फिर वे अन्तर्धान हो गयीं। उसी वरके फलस्वरूप नरेन्द्र ऋतम्भरके घर परम भक्त सत्यवान् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। (पद्म०, पाताल० १८। १९)

हलका धर्म्याधर्म्य-विचार

हलमष्टगवं धर्म्यं षड्गवं वृत्तिलक्षणम्। चतुर्गवं नृशंसानां द्विगवं गोजिघांसुमत्॥
x x x । द्विगवं वाहयेत् पादं मध्याह्नन्तु चतुर्गवम्॥
षड्गवं तु त्रियामाहेऽष्टभिः पूर्णे तु वाहयेत्। न याति नरकेष्वेवं वर्तमानस्तु वै द्विजः॥ (पाराशरस्मृति अ० २)

आठ बैलोंका हल धर्मका, छः बैलोंका हल जीविका करनेवालोंका, चार बैलोंका हल निर्दयीका और दो बैलोंका हल गोहत्यारेका है। दो बैलवाले हलको चौथाई दिन, चार बैलवाले हलको आधा दिन, छः बैलवाले हलको तीन प्रहर और आठ बैलवाले हलको दिनभर जोतनेसे द्विज नरकमें नहीं जाते।

जबालापुत्र सत्यकामको गोसेवासे ब्रह्मज्ञान

एक सदाचारिणी ब्राह्मणी थी, उसका नाम था जबाला। उसका एक पुत्र था सत्यकाम। जब वह विद्याध्ययन करने योग्य हुआ, तब एक दिन अपनी मातासे कहने लगा—'माँ! मैं गुरुकुलमें निवास करना चाहता हूँ; गुरुजी जब मुझसे नाम और गोत्र पूछेंगे तो मैं अपना कौन गोत्र बतलाऊँगा?' इसपर उसने कहा कि 'पुत्र! मुझे तेरे पितासे गोत्र पूछनेका अवसर नहीं प्राप्त हुआ; क्योंकि उन दिनों मैं सदा अतिथियोंकी सेवामें ही व्यस्त रहती थी। अतएव जब आचार्य तुमसे गोत्रादि पूछें, तब तुम इतना ही कह देना कि मैं 'जबाला' का पुत्र 'सत्यकाम' हूँ।' माताकी आज्ञा लेकर सत्यकाम हारिद्रुमत गौतमऋषिके यहाँ गया और बोला—'मैं श्रीमान्‌के यहाँ ब्रह्मचर्यपूर्वक सेवा करने आया हूँ।' आचार्यने पूछा— 'वत्स! तुम्हारा गोत्र क्या है?'

सत्यकामने कहा—'भगवन्! मेरा गोत्र क्या है, इसे मैं नहीं जानता। मैं 'सत्यकाम जाबाल' हूँ, बस, इतना ही इस सम्बन्धमें जानता हूँ।' इसपर गौतमने कहा—'वत्स! ब्राह्मणको छोड़कर दूसरा कोई भी इस प्रकार सरल भावसे सच्ची बात नहीं कह सकता। जा, थोड़ी समिधा ले आ। मैं तेरा उपनयन-संस्कार करूँगा।'

सत्यकामका उपनयन करके चार सौ दुर्बल गायोंको उसके सामने लाकर गौतमने कहा—'तू इन्हें वनमें चराने ले जा। जबतक इनकी संख्या एक हजार न हो जाय, इन्हें वापस न लाना।' उसने कहा—'भगवन्! इनकी संख्या एक हजार हुए बिना मैं न लौटूँगा।'

सत्यकाम गायोंको लेकर वनमें गया। वहाँ वह कुटिया बनाकर रहने लगा और तन-मनसे गौओंकी सेवा करने लगा। धीरे-धीरे गायोंकी संख्या पूरी एक हजार हो गयी। तब एक दिन एक वृषभ (साँड़) ने सत्यकामके पास आकर कहा—'वत्स! हमारी संख्या एक हजार हो गयी है, अब तू हमें आचार्यकुलमें पहुँचा दे। साथ ही ब्रह्मतत्त्वके सम्बन्धमें तुझे एक चरणका मैं उपदेश देता हूँ। वह ब्रह्म 'प्रकाशस्वरूप' है, इसका दूसरा चरण तुझे
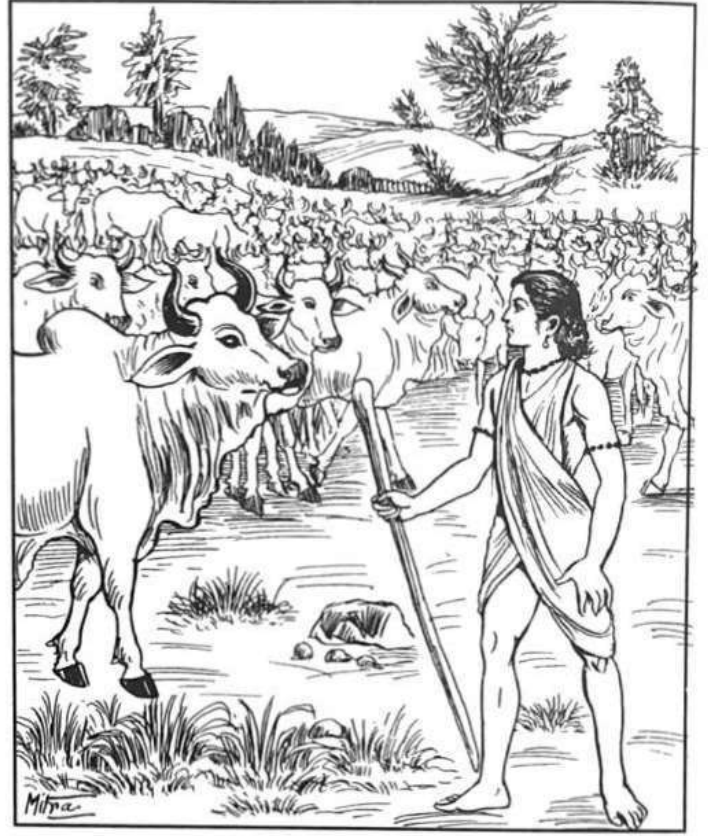
सत्यकामके द्वारा गो-संवर्धन

अग्नि बतलायेंगे।'

सत्यकाम गौओंको हाँककर आगे चला। संध्या होनेपर उसने गायोंको रोक दिया और उन्हें जल पिलाकर वहीं रात्रि-निवासकी व्यवस्था की। तत्पश्चात् काष्ठ लाकर उसने अग्नि जलायी। अग्निने कहा—'सत्यकाम! मैं तुझे ब्रह्मका द्वितीय पाद बतलाता हूँ; वह 'अनन्त' लक्षणात्मक है, अगला उपदेश तुझे हंस करेगा।'

दूसरे दिन सायंकाल सत्यकाम पुनः किसी सुन्दर जलाशयके किनारे ठहर गया और उसने गौओंके रात्रि-निवासकी व्यवस्था की। इतनेमें ही एक हंस ऊपरसे उड़ता हुआ आया और सत्यकामके पास बैठकर बोला—'सत्यकाम!' सत्यकामने कहा—'भगवन्! क्या आज्ञा है?' हंसने कहा—'मैं तुझे ब्रह्मके तृतीय पादका उपदेश कर रहा हूँ, वह 'ज्योतिष्मान्' है, चतुर्थ पादका उपदेश तुझे मुद्‌ग

(जलकुक्कुट) करेगा।'

दूसरे दिन सायंकाल सत्यकामने एक वटवृक्षके नीचे गौओंके रात्रिनिवासकी व्यवस्था की। अग्नि जलाकर वह बैठ ही रहा था कि एक जलमुर्गने आकर पुकारा और कहा—'वत्स! मैं तुझे ब्रह्मके चतुर्थ पादका उपदेश करता हूँ, वह 'आयतनस्वरूप' है।'

इस प्रकार उन-उन देवताओंसे सच्चिदानन्दघन-लक्षण परमात्माका बोध प्राप्तकर एक सहस्त्र गौओंको लेकर सत्यकाम आचार्य गौतमके यहाँ पहुँचा। आचार्यने उसकी चिन्तारहित तेजपूर्ण दिव्य मुखकान्तिको देखकर कहा—'वत्स! तू ब्रह्मज्ञानीके सदृश दिखलायी पड़ता है।' सत्यकामने कहा—'भगवन्! मुझे मनुष्येतरोंसे विद्या मिली है। मैंने सुना है कि आपके सदृश आचार्यके द्वारा प्राप्त हुई विद्या ही श्रेष्ठ होती है, अतएव मुझे आप ही पूर्णरूपसे उपदेश कीजिये।' आचार्य बड़े प्रसन्न हुए और बोले—'वत्स! तूने जो प्राप्त किया है, वही ब्रह्मतत्त्व है।' तदनन्तर आचार्यने उस सम्पूर्ण तत्त्वका पुनः ठीक उसी प्रकार उपदेश किया। (छान्दोग्य० ४। ४—९)

गोसंरक्षक सम्राट् दिलीपका गोप्रेम

महाराज दिलीप और देवराज इन्द्रमें मित्रता थी। देवराजके बुलानेपर दिलीप एक बार स्वर्ग गये। वहाँसे लौटते समय मार्गमें कामधेनु मिली; किंतु दिलीपने पृथ्वीपर आनेकी आतुरताके कारण उसे देखा नहीं। कामधेनुको उन्होंने प्रणाम नहीं किया। इस अपमानसे रुष्ट होकर कामधेनुने शाप दिया—'मेरी संतान यदि कृपा न करे तो यह पुत्रहीन ही रहेगा।'

महाराज दिलीपको शापका कुछ पता नहीं था। किंतु उनके कोई पुत्र न होनेसे वे स्वयं, महारानी तथा प्रजाके लोग भी चिन्तित एवं दुःखी रहते थे। पुत्र-प्राप्तिकी इच्छासे महाराज रानीके साथ कुलगुरु महर्षि वसिष्ठके आश्रमपर पहुँचे। महर्षिने उनकी प्रार्थना सुनकर आदेश दिया—'कुछ काल आश्रममें रहो और मेरी होमधेनु नन्दिनीकी सेवा करो।'

महाराजने गुरुकी आज्ञा स्वीकार कर ली। महारानी सुदक्षिणा प्रातःकाल उस गौकी भलीभाँति पूजा करती थीं। आरती उतारकर नन्दिनीको पतिके संरक्षणमें वनमें चरनेके लिये बिदा करतीं। सम्राट् दिनभर छायाकी भाँति उसका अनुगमन करते, उसके ठहरनेपर ठहरते, चलनेपर चलते, बैठनेपर बैठते और जल पीनेपर जल पीते*। संध्या-कालमें जब सम्राट्के आगे-आगे सद्यःप्रसूता, बालवत्सा (छोटे
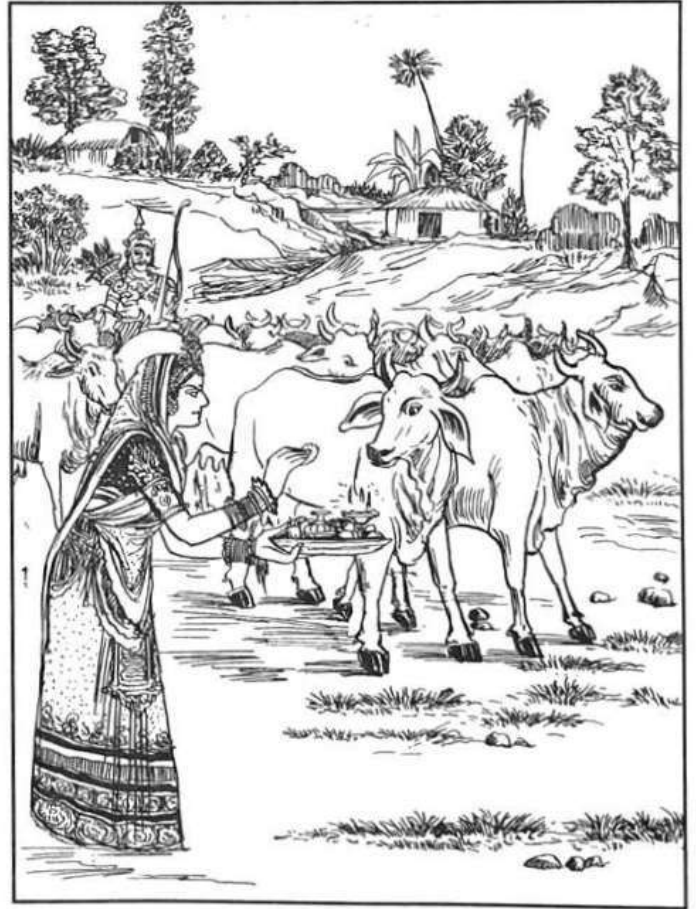
दिलीपपत्नी सुदक्षिणाकी गोसेवा

दुधमुँहे बछड़ेवाली) नन्दिनी आश्रमको लौटती तो सम्राज्ञी

* स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां निषेदुषीमासनबन्धधीरः। जलाभिलाषी जलमाददानां छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्॥

देवी सुदक्षिणा हाथमें अक्षत-पात्र लेकर उसकी प्रदक्षिणा करके उसे प्रणाम करतीं और अक्षतादिसे पुत्र-प्राप्तिरूप अभीष्ट-सिद्धि देनेवाली उस नन्दिनीका विधिवत् पूजन करतीं[१]। अपने बछड़ेको यथेच्छ पय:पान करानेके बाद दुह ली जानेपर नन्दिनीकी रात्रिमें दम्पति पुनः परिचर्या करते, अपने हाथोंसे कोमल हरित शष्प-कवल खिलाकर उसकी परितृप्ति करते और उसके विश्राम करनेपर शयन करते। इस तरह उसकी परिचर्या करते इक्कीस दिन बीत गये।

एक दिन वनमें नन्दिनीका अनुराग करते महाराज दिलीपकी दृष्टि क्षणभर अरण्यकी प्राकृतिक सुषमामें अटक गयी कि तभी उन्हें नन्दिनीका आर्तनाद सुनायी दिया। वह एक भयानक सिंहके पंजोंमें फँसी छटपटा रही थी। उन्होंने आक्रामक सिंहको मारनेके लिये अपने तरकशसे तीर निकालना चाहा, किंतु उनका हाथ जडवत् निश्चेष्ट होकर वहीं अटक गया, वे चित्रलिखे-से खड़े रह गये और मन्त्र-रुद्ध भीषण भुजंगकी भाँति विफल आक्रोशसे भीतर-ही-भीतर छटपटाने लगे, तभी मनुष्यकी वाणीमें सिंह बोल उठा—'राजन्! तुम्हारे शस्त्र-संधानका श्रम उसी तरह व्यर्थ है जैसे वृक्षोंको उखाड़ देनेवाला प्रभंजन पर्वतसे टकराकर व्यर्थ हो जाता है[२]'। मैं भगवान् शिवके गण निकुम्भका मित्र कुम्भोदर हूँ। भगवान् शिवने सिंहवृत्ति देकर मुझे हाथी आदिसे इस वनके देवदारुओंकी रक्षाका भार सौंपा है। इस समय जो भी जीव सर्वप्रथम मेरे दृष्टिपथमें आता है वह मेरा भक्ष्य बन जाता है। इस गायने इस संरक्षित वनमें प्रवेश करनेकी अनधिकार चेष्टा की है और मेरे भोजनकी वेलामें यह मेरे सम्मुख आयी है, अत: मैं इसे खाकर अपनी क्षुधा शान्त करूँगा। तुम लज्जा और ग्लानि छोड़कर वापस लौट जाओ।

किंतु परदु:खकातर दिलीप भय और व्यथासे छटपटाती, नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा बहाती नन्दिनीको देखकर और उस संध्याकालमें अपनी माँकी उत्कण्ठासे प्रतीक्षा करनेवाले उसके दुधमुँहे बछड़ेका स्मरण कर करुणा-विगलित हो उठे। नन्दिनीका मातृत्व उन्हें अपने जीवनसे कहीं अधिक मूल्यवान् जान पड़ा और उन्होंने सिंहसे प्रार्थना की कि वह उनके शरीरको खाकर अपनी भूख मिटा ले और बालवत्सा नन्दिनीको छोड़ दे—

स त्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं
देहेन निर्वर्तयितुं प्रसाद।
दिनावसानोत्सुकबालवत्सा
विसृज्यतां धेनुरियं महर्षेः॥

(रघु० २। ४५)

सिंहने राजाके इस अद्भुत प्रस्तावका उपहास करते हुए कहा—'राजन्! तुम चक्रवर्ती सम्राट् हो। गुरुको नन्दिनीके बदले करोड़ों दुधार गौएँ देकर प्रसन्न कर सकते हो। इस तुच्छ प्राणीके लिये अपने स्वस्थ-सुन्दर शरीर और यौवनकी अवहेलना कर जानकी बाजी लगानेवाले सम्राट्! लगता है, तुम अपना विवेक खो बैठे हो—'

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं
नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च।
अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्
विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्॥

(रघु० २। ४७)

यदि प्राणियोंपर दया करनेका तुम्हारा व्रत ही है तो भी आज यदि इस गायके बदलेमें मैं तुम्हें खा लूँगा तो तुम्हारे मर जानेपर केवल इसकी ही विपत्तिसे रक्षा हो सकेगी और यदि तुम जीवित रहे तो पिताकी भाँति सम्पूर्ण प्रजाकी निरन्तर विपत्तियोंसे रक्षा करते रहोगे[३]। इसलिये तुम अपने सुखभोक्ता शरीरकी रक्षा करो। स्वर्ग-प्राप्तिके लिये तप त्याग करके शरीरको कष्ट देना तुम-जैसे अमित ऐश्वर्यशालियोंके लिये निरर्थक है। स्वर्ग? अरे, वह तो इसी पृथ्वीपर है। जिसे सांसारिक वैभव-विलासके समग्र साधन उपलब्ध हैं, वह समझो कि स्वर्गमें ही रह रहा है। स्वर्गका काल्पनिक आकर्षण तो मात्र विपन्नोंके लिये ही है, सम्पन्नोंके लिये नहीं[४]।

१-प्रदक्षिणीकृत्य पयस्विनीं तां सुदक्षिणा साक्षतपात्रहस्ता। प्रणम्य चानर्च विशालमस्याः शृंगान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः॥

२-अलं महीपाल तव श्रमेण प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात्। न पादपोन्मूलनशक्ति रंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य॥

३-भूतानुकम्पा तव चेदियं गौरेका भवेत् स्वस्तिमती त्वदन्ते। जीवन् पुनः शश्वदुपप्लवेभ्यः प्रजाः प्रजानाथ पितेव पासि॥

४-तद्रक्ष कल्याणपरम्पराणां भोक्तारमूर्जस्वलमात्मदेहम्। महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नमृद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः॥

(रघुवंश २। २१, ३४, ४८, ५०)

भगवान् शंकरके अनुचर सिंहकी बात सुनकर अत्यन्त दयालु महाराज दिलीपने उसके द्वारा आक्रान्त नन्दिनीको देखा जो अश्रुपूरित कातर नेत्रोंसे उनकी ओर देखती हुई प्राणरक्षाकी याचना कर रही थी।

राजाने क्षत्रियत्वके महत्त्वको प्रतिपादित करते हुए उत्तर दिया—'नहीं सिंह! नहीं, मैं इसे तुम्हारा भक्ष्य बनाकर नहीं लौट सकता। मैं अपने क्षत्रियत्वको क्यों कलंकित करूँ?' क्षत्रिय संसारमें इसलिये प्रसिद्ध हैं कि वे 'क्षत'—विनाश या विपत्तिसे औरोंकी रक्षा करते हैं। राज्यका भोग उनका लक्ष्य नहीं। उनका लक्ष्य तो है लोकरक्षासे कीर्ति अर्जित करना। निन्दासे मलिन प्राणों और राज्यको तो वे तुच्छ वस्तुओंकी तरह त्याग देते हैं—

क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः
क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः।
राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः
प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा ॥

(रघु० २।५३)

इसलिये तुम मेरे यश:शरीरपर दयालु होओ—मेरे भौतिक शरीरको खाकर उसकी रक्षा करो; क्योंकि यह शरीर तो नश्वर है, मरणधर्मा है। इसलिये इसपर हम-जैसे विचारशील पुरुषोंकी ममता नहीं होती। हम तो यश:-शरीरके पोषक हैं—

किमप्यहिंस्यस्तव चेन्मतोऽहं
यशःशरीरे भव मे दयालुः।
एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां
पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु॥

(रघु० २।५७)

सिंहके स्वीकृति दे देनेपर राजर्षि दिलीपने शस्त्रोंको फेंक दिया और उसके आगे अपना शरीर मांसपिण्डकी तरह खानेके लिये डाल दिया[१] और वे उसके आक्रमणकी प्रतीक्षा करने लगे, तभी आकाशसे

राजा दिलीपकी गोसवा

विद्याधर उनपर पुष्पवृष्टि करने लगे। नन्दिनीने कहा—'हे पुत्र! उठो! यह मधुर दिव्य वाणी सुनकर राजाको महान् आश्चर्य हुआ और उन्होंने वात्सल्यमयी जननीकी तरह अपने स्तनोंसे दूध बहाती हुई नन्दिनी गौको देखा, किंतु सिंह दिखलायी नहीं दिया[२]। आश्चर्यचकित दिलीपसे नन्दिनीने कहा—'हे सत्पुरुष! तुम्हारी परीक्षा लेनेके लिये मैंने ही मायासे सिंहकी सृष्टि की थी। महर्षि वसिष्ठके प्रभावसे यमराज भी मुझपर प्रहार नहीं कर सकता तो अन्य सिंहक सिंहादिकी क्या शक्ति है। मैं तुम्हारी गुरुभक्तिसे और मेरे प्रति प्रदर्शित दयाभावसे अत्यन्त प्रसन्न हूँ। वर माँगो! तुम मुझे दूध देनेवाली मामूली गाय मत समझो, अपितु सम्पूर्ण कामनाएँ पूरी करनेवाली कामधेनु जानो[३]'। राजाने दोनों हाथ जोड़कर वंश चलानेवाले अनन्तकीर्ति पुत्रकी

१-स न्यस्तशस्त्रो हरये स्वदेहमुपानयत् पिण्डमिवामिषस्य॥
२-उत्तिष्ठ वत्सेत्यमृतायमानं वचो निशम्योत्थितमुत्थितः सन्। ददर्श राजा जननीमिव स्वां गामग्रतः प्रस्रविणीं न सिंहम्॥
३-भक्त्या गुरौ मय्यनुकम्पया च प्रीतास्मि ते पुत्र वरं वृणीष्व। न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम्॥
(रघु० २।५९, ६१,६३)

याचना की—

वंशस्य कर्तारमनन्तकीर्तिं
सुदक्षिणायां तनयं ययाचे॥

(रघु० २। ६४)

नन्दिनीने 'तथास्तु' कहकर उन्हें पत्तेके दोनेमें अपना दूध दुहकर पी लेनेकी आज्ञा दी—

दुग्ध्वा पयः पत्रपुटे मदीयं
पुत्रोपभुङ्क्ष्वेति तमादिदेश॥

(रघु० २। ६५)

राजाने निवेदन किया—'माँ! बछड़ेके पीने तथा होमादि अनुष्ठानके बाद बचे हुए ही तुम्हारे दूधको मैं पी सकता हूँ।'

राजाके धैर्यने नन्दिनीके हृदयको जीत लिया। वह प्रसन्नमना धेनु राजाके आगे-आगे आश्रमको लौट आयी। राजाने बछड़ेके पीने तथा अग्निहोत्रसे बचे दूधका महर्षिकी आज्ञा पाकर पान किया, फलतः वे रघु-जैसे महान् यशस्वी पुत्रसे पुत्रवान् हुए और उनकी गोभक्ति तथा गोसेवा सभीके लिये एक महानतम आदर्श बन गयी। इसीलिये आज भी गोभक्तोंकी परिगणनामें महाराज दिलीपका नाम बड़े ही श्रद्धाभाव एवं आदरसे सर्वप्रथम लिया जाता है।

(डॉ० श्रीदादूरामजी शर्मा, एम० ए० (संस्कृत, हिन्दी), पी-एच० डी०)

राजा विराटकी गोसम्पदा और पाण्डुपुत्र सहदेवकी गो-चर्या

गौ भारतकी राष्ट्रिय समृद्धि और सम्पदाकी विशिष्ट प्रतीक रही है। तपोवन-संस्कृतिकी यह महत्त्वपूर्ण अङ्ग थी। गृहस्थोंकी ही नहीं आश्रममें रहनेवाले ऋषियोंकी समृद्धिका परिचय भी उनके यहाँ रहनेवाली गौओंकी संख्यासे मिलता है। उपनिषदोंमें ऐसी अनेक कथाएँ हैं, जिनमें राजा शास्त्रार्थमें विजयी ऋषियोंको अनेक सोनेसे मढ़ी सींगोंवाली गायें देनेकी घोषणा करते थे। महाभारतमें मत्स्यदेशके राजा विराटके गोहरणकी कथामें इसका ऐतिहासिक प्रमाण मिलता है कि गोसम्पदाको कितना महत्त्व दिया जाता था तथा राजाओंके यहाँ उनके रक्षणकी व्यवस्था क्या थी।

राजा विराटका मत्स्यदेश अपनी विशाल गोसम्पदाके लिये प्रसिद्ध था। यह सम्पदा इतनी विशाल थी कि दूसरे राष्ट्रोंकी आँख इसपर लगी रहती थी। द्रौपदीसहित पाँचों पाण्डव अपने वनवासके तेरहवें वर्षमें छद्म-वेषमें राजा विराटके यहाँ रह रहे थे। इधर दुर्योधन अपने गुप्तचरोंद्वारा चारों ओर उनकी खोज करवा रहा था। इसी क्रममें दुर्योधनने राजा विराटके यहाँ भी गुप्तचरोंको भेजा और राजा विराटके गोधनका अपहरण करनेकी योजना बनायी। दुर्योधनको यह सम्भावना थी कि यदि पाण्डव वहाँ छिपे होंगे तो निश्चय ही वे अपने मित्र विराटके गोधनकी रक्षाके लिये बाहर आयेंगे। यदि उनका पता नहीं भी लगेगा तो गायोंकी विशाल सम्पदा हमारे हाथ लगेगी ही। अतः उन्होंने मत्स्यदेशपर चढ़ाई कर दी। और विशाल गोसम्पदाका अपहरण कर लिया, परंतु पाण्डवोंके सहयोगसे राजा विराटने पुनः उसे प्राप्त कर लिया।
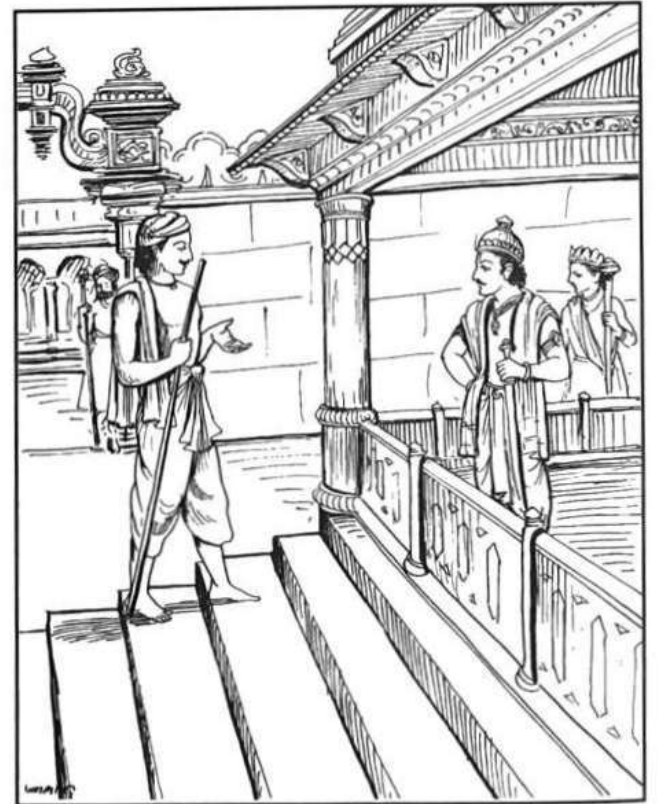
ग्वालाके रूपमें सहदेवकी राजा विराटकी सभामें जाना

सहदेव ग्वालोंका परम उत्तम रूप बनाकर विराटकी

सभामें गये। वहाँ उन्होंने पाण्डवोंकी गोसमृद्धि और उसकी व्यवस्थाका राजा विराटको जो परिचय दिया है उससे यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि राजाओंके यहाँ गायोंके संरक्षण और उनके पालनकी विशेष व्यवस्था थी और उसके लिये पृथक् विभाग हुआ करता था। महाभारतके उल्लेखसे ज्ञात होता है कि विराटके यहाँ गौओंके रहनेका स्थान राजभवनके निकट ही था—

गोष्ठमासाद्य तिष्ठन्तं भवनस्य समीपतः।

(विराटपर्व १०।२)

विराटके समक्ष सहदेवने अपना परिचय दिया कि वे पाण्डवोंके यहाँ गोसंरक्षक थे। उनका काम गौओंकी गणना और उनकी देखभाल करना था। पाण्डवोंकी गौओंकी विशाल संख्या, उनका वर्गीकरण, गणना और देखभालकी व्यवस्थाका परिचय उन्होंने राजा विराटके समक्ष इस रूपमें दिया—'युधिष्ठिरके पास गौओंके आठ लाख वर्ग थे और प्रत्येक वर्गमें सौ-सौ गायें थीं। इनसे भिन्न प्रकारकी गायोंके एक लाख वर्ग तथा तीसरे प्रकारकी गायोंके इनसे दूने अर्थात् दो लाख वर्ग थे। पाण्डवोंकी इतनी गायोंका मैं गणक तथा निरीक्षक था। वे लोग मुझे 'तन्तिपाल' कहा करते थे। गायोंकी मुझे इतनी सूक्ष्म पहचान है कि चारों ओर दस योजनकी दूरीमें जितनी गायें हों उनकी भूत, वर्तमान, भविष्यमें जितनी संख्या थी, है और होगी, उसे बतला सकता हूँ। गौओंके सम्बन्धमें तीनों कालोंमें होनेवाली कोई ऐसी बात नहीं है जो मुझे ज्ञात न हो। महाराज युधिष्ठिर मेरे इन गुणोंसे भलीभाँति परिचित थे, इसलिये वे मुझपर सदा संतुष्ट रहते थे। जिन-जिन उपायोंसे गौओंकी संख्या शीघ्र बढ़ जाती है और उनमें कोई रोग नहीं होता, वह सब मुझे ज्ञात है। इसके अतिरिक्त उत्तम लक्षणवाले उन बैलोंकी भी मुझे पहचान है, जिनके मूत्रको सूँघ लेनेमात्रसे वंध्या स्त्री भी गर्भ धारण करने योग्य हो जाती है—

ऋषभांश्चापि जानामि राजन् पूजितलक्षणान्।
येषां मूत्रमुपाघ्राय अपि वन्ध्या प्रसूयते॥

(विराट० १०।१४)

सहदेवद्वारा कथित विवरणसे ज्ञात होता है कि उस युगका गोलक्षण और संरक्षण-विज्ञान अत्यन्त विकसित था और बड़े राजाओंके यहाँ इसकी विशेष व्यवस्था थी। राजा विराटके राज्यमें भी एक लाख गायें थीं। इनमें कुछ तो एक ही रंगकी थीं और कुछ मिश्रित रंगकी। ये सभी भिन्न-भिन्न गुणोंसे युक्त थीं। विराटने अपनी सम्पत्तिका परिचय इन शब्दोंमें दिया है—

शतं सहस्राणि समाहितानि
सवर्णवर्णस्य विमिश्रितान् गुणैः।

(विराटपर्व १०।१५)

विराटने सहदेवको पशुपालकोंके साथ इन गौओंके संरक्षणका भार सौंपा। गोपाल पशुपालनमें ही नहीं, युद्धकलामें भी निपुण होते थे। जब कौरवोंके मित्र त्रिगर्तोंकी सेनाने गौओंकी बस्तीपर आक्रमण किया और गौओंको हरकर ले जाने लगे तब गोपालोंने अस्त्र-शस्त्रोंसे वीरतापूर्वक युद्ध किया। युद्धमें उन्होंने परशु, मुसल, भिन्दिपाल, मुद्गर तथा कर्षण नामक विचित्र अस्त्रोंका प्रयोग किया। पहली बार तो वे अश्व-सैनिकोंको मार भगानेमें सफल हुए, किंतु सैनिकोंकी शरवर्षाके आगे वे टिक नहीं सके। त्रिगर्तराज गौओंका अपहरण करके ले जाते हैं। विराट उन्हें छुड़ानेके लिये जाते हैं, किंतु बंदी बना लिये जाते हैं। विराटके युद्धके लिये जाते ही कौरव उत्तर दिशासे मत्स्यदेशपर आक्रमण कर देते हैं और वहाँकी साठ हजार गौओंका अपहरण कर लेते हैं। अर्जुन भीषण युद्धद्वारा कौरवोंकी विराट् सेनापर विजय प्राप्त करके गौओंको मुक्त करते हैं। यहीं पाण्डवोंका अज्ञातवास समाप्त होता है और वे अपना छद्मवेष त्यागकर अपने असली रूपमें प्रकट होते हैं।

महाभारतका यह गोहरण-आख्यान महाभारतकालीन गोसम्पदाके महत्त्व तथा गोरक्षण-व्यवस्थाका ऐतिहासिक प्रमाण है। गौ राष्ट्रकी महत्त्वपूर्ण सम्पत्ति समझी जाती थी तथा इसकी अस्मिता और गरिमाका प्रश्न इससे जुड़ा हुआ था।

(डॉ० श्रीजगदीश्वरप्रसादजी, डी० लिट०)

संत नामदेवजीकी गोनिष्ठा

परम गोभक्त संत नामदेवजीने लोगोंको ईश्वर-भक्तिका सच्चा मार्ग दिखाया। ईश्वर-कृपासे समस्त भारतके लोगोंके कल्याणार्थ जब संत नामदेव यात्रापर निकले, उस समय उनके साथ ज्ञानेश्वर, सोपानदेव, निवृत्तिनाथ, बहन मुक्ताबाई, साँवता माली, गोरा कुम्हार, चोखामेला, सेना नाई, नरहरि सुनार, गोणाबाई आदि संत महात्मा अमृत-रस बरसाने महाराष्ट्रसे चल पड़े। धीरे-धीरे संत नामदेवकी कीर्ति समस्त भारतमें फैलने लगी। जब यह संत-मण्डली भारत-भ्रमण करते हुए दिल्ली पहुँची, उस समय दिल्लीमें मुगल-शासन था। बादशाहको सूचना मिली कि नामदेव संत-मण्डलीके साथ दिल्ली पहुँच गया है। वह लोगोंको हरिनाम-संकीर्तन सिखाता है। बादशाहने सिपाही भेजकर सारी संत-मण्डलीको बुला लिया। बादशाहने नामदेवको मुसलमान बनानेकी बात सोचकर कठिन परीक्षा ली। यह सोचकर कि हिंदू गायकी कुर्बानीसे ठिकाने आते हैं, बादशाहने गाय मँगवाकर, कसाईसे उसका सिर कटवा दिया। यह दृश्य देखकर सब दाँतों-तले अँगुली दबाकर रह गये। शान्त एवं गम्भीर वातावरणको चीरती हुई बादशाहकी आवाज आयी—'नामदेव! यदि तुम सच्चे फकीर हो तो इसे (गायकी ओर ईशारा कर) जीवित करो। तभी हिंदूपर तुम्हारा प्रेम माना जायगा और यदि गाय जीवित नहीं हुई तो तुम्हारे संतपनको ढोंग मानकर तुम्हारा सिर कलम कर दिया जायगा।'

नामदेवजीने कहा—'मुझमें कोई शक्ति नहीं जो प्रभुको स्वीकार होता है, वही होता है। इस संसारसे सभीको एक दिन जाना है।'

बादशाहने कहा—'नामदेव! तुम इस्लाम-धर्म स्वीकार करो तो तुम्हें छोड़ दिया जायगा।'

नामदेव बोले—'नहीं-नहीं ऐसा नहीं हो सकता।' इस उत्तरसे बादशाह क्रोधसे तमतमा उठा और उसने आदेश दिया कि इसे मतवाले हाथीके नीचे कुचलवा डालो। मतवाला हाथी नामदेवपर वार करता, परंतु भगवान् विट्ठलकी कृपासे वे बच जाते। अब नामदेवजीके एक हाथमें वीणा थी, दूसरेमें करताल तथा पैरोंमें बेड़ियाँ। नामदेवजी द्रवित-हृदयसे भगवान्‌को पुकारने लगे—

बिनती सुनहु जगदीश हमारी।
तेरो दास आस मोहिं तेरी, इत करो कान मुरारी॥
दीनानाथ दीन ह्वै टेरत, गाईहि क्यों नहिं जिवाओ।
आछे सबे अंग है याको, मेरे यशहिं बढ़ाओ॥
जो कहु याके कर्मन में, नहिं जीवन लिखो विधाता।
तौ नामदेव की आमुर्दा सों, होहु प्रभुहि तुम दाता॥

हे प्रभो! शीघ्र आओ। गायको जीवन देकर धर्मकी रक्षा करो। नामदेवजीकी आँखोंसे अविरल अश्रुधारा बह रही थी। नामदेव बार-बार यही कहते रहे कि 'मुझमें कोई शक्ति नहीं, जो प्रभु करता है वही होता है।' इस घटनाके समय गोणाबाई भी वहाँपर थीं। अपने पुत्रकी ऐसी दशा उनसे देखी नहीं गयी। बोलीं—'हे नामदेव! तू विट्ठलका नाम छोड़कर अल्लाहका नाम ले।'

नामदेव बोले—'ऐसा उपदेश करनेवाली तू मेरी माता नहीं, मैं तेरा पुत्र नहीं।' कहा जाता है कि निश्चित समय बीतनेसे पूर्व भक्तवत्सल आनन्दकन्द भगवान् विट्ठल अपने वैकुण्ठसे गरुडपर चढ़कर वहाँ आये और उन्होंने मृत गायको जीवित कर दिया। बछड़ा गायका दूध पीने लगा। गाय नामदेवको चाटने लगी। वात्सल्यमूर्ति भगवान् विट्ठलका मधुर एवं सुरीला बोल सुनायी दिया—'नामदेव! तुम धन्य हो। धर्म और प्यारी गायकी रक्षा-हेतु अपने प्राणोंको न्योछावर करनेवाले नामदेव! धन्य हो।' फिर भगवान् अन्तर्धान हो गये।

बादशाह शर्मसे पानी-पानी हो गया, नामदेवजीके आगे झुक गया, क्षमा माँगने लगा और नामदेवजीका आदर-सम्मान करने लगा। 'गुरु ग्रन्थसाहिब' में यह घटना पृष्ठ ६३० पर वर्णित है। वह पद्य यहाँ दिया जा रहा है—

सुलतानु पूछै सुनुबे नामा। देखउ राम तुमारे कामा॥
नामा सुलताने बाधिला। देखउ तेरा हरी बीठुला॥
बिसमिलि गऊ देहु जीवाइ। नातरु गरदनि मारउ ठांइ॥
बादिसाह ऐसी किउ होइ। बिसमिलिकी आन जीवै कोइ॥

मेरा कीआ कछू न होइ। करिहै रामु होइहै सोइ॥
बादिसाहु चड़िओ अहंकारि। गजहसती दीनो चमकारि॥
रुदनु करै नामेकी माइ। छोडि रामकी न भजेहि खुदाइ॥
न हउ तेरा पूंगडा न तू मेरी माइ। पिंडु पड़ै तउ हरिगुन गाइ॥
करै गजिंदु सुंडकी चोट। नामा उबरै हरिकी ओट॥
काजी मुलां करहि सलामु। इनि हिंदूमे राम लिआ मानु॥
बादिसाह बेनती सुनेहु। नामे सरभरि सोना लेहु॥
मालु लेउ तउ दोजकि परउ। दीनु छोडि दुनीआ कउ भरउ॥
पावहु वेड़ी हाथहु ताल। नामा गावै गुन गोपाल॥
गंग जमुन जउ उलटी बहै। तउ नामा हरि करता रहै॥
सात घड़ी जब बीती सुणी। अजहु न आइओ त्रिभवनधणी॥
पारवंतण बाज बजाइला। गरुड़ चड़े गोबिंद आइला॥
अपने भगत परि की प्रतिपाल। गरुड़ चड़े आये गोपाल॥
कहहित धरणि इ कोडि करउ। कहहि तले करि ऊपरि धरउ॥
कहहि तमुई गऊ देउ जीआइ। सभु कोई देखै पतीआइ॥
नामा प्रणवै सेलमसेल। गऊ दुहाई बछरा मेलि॥
दुधहि दुहि जब मटुकी भरी। ले बादिसाहके आगे धरी॥
बादिसाहु महलमहि जाइ। अउघटकी घट लागी आइ॥
काजी मुलां बिनती फुरमाइ। बरवसी हिंदू मैं तेरी गाइ॥
नामा कहै सुनहु बादिसाह। इहु किछु पतीआ मुझै दिखाइ॥
इस पतीआका इहै परवानु। साचि सीलि चालहु सुलितानु॥
नामदेउ सभरहि आसमाइ। मिलि हिंदू सभ नामे परि जाहि॥
जउ अबकी बार न जीवै गाइ। त नामदेवका पतीआ जाइ॥
नामेकी कीरति रही संसारि। भगत जनां लेउ धरिआ पारि॥
सगल कलेस निंदक भइआ खेदु। नामे नाराइन नाही भेदु॥

संत नामदेवजी महाराजने गायकी बहुत सेवा की। स्वयं उनके घरपर गाय थी। जिसका दूध वे प्रभुको पिलाकर धन्य होते थे। एक बार जब गाय ब्यायी तो उसका दूध स्वयं नामदेवजीने भगवान् विट्ठलको पिलाया—

दूध कटोरै गड़व पानी। कपिला गाइ नामै दुहि आनी॥
दूधु पीउ गोविंदे राह। दूध पीउ मेरो मनु पतिआइ॥
नाहीं त घरको बापु रिसाइ॥
सोइन कटोरी अमृत भरी। लै नामै हरि आगे धरी॥
एकु भगतु मेरे हिरदे बसै। नामे देखी नराइनु हसे॥
दूधु पीजाइ भगतु घरि गहआ। नामें हरि का दरसनु भइआ॥

नामदेवजीकी वाणीमें जगह-जगह गायका वर्णन मिलता है। भक्तकी भगवान्‌को प्राप्त करनेकी जो व्याकुलतामें तीव्रता एवं आतुरता होती है, उसे नामदेवजीने यों व्यक्त किया—

मोहि लागती तालाबेली। बछरे बिनु बापरो गाइ अकेली॥
पानीया बिनु मीनु तलफै। ऐसे रामनाम बिनु बापरो नामा॥

नामदेवका कहना है कि हरिनामके विषयमें मेरी तालाबेली (व्याकुलता) उसी प्रकारकी है, जिस प्रकार गायका बछड़ा गायसे बिछुड़कर व्याकुल होता है, जिस प्रकार मछलीको पानीसे बाहर निकालनेपर व्याकुलता होती है और पानीके बिना वह अपने प्राण भी त्याग देती है। यहाँ नामदेवने अपनी भगवान्‌के प्रति व्याकुलताकी उपमा बहुत ही सुन्दर ढंगसे गाय और उसके बछड़ेसे की है।

हिंदू और मुसलमानोंको गायका महत्त्व समझाते हुए वे कहते हैं—

पांडे तुमरी गाहत्री लोधे का खेत खाती थी।
लेकरि ढेगा टगरी तोरी लांगत लांगत जाती थी॥

गायके लिये क्या हिंदू क्या मुसलमानका खेत। उसके लिये सारी धरती एक है। गाय दूध देते समय भी कोई भेदभाव नहीं करती। उसका दूध बिना भेदभाव सब सेवन करते हैं तो तुम यह भेद करते हो? डंडा मारकर उसकी टाँगें क्यों तोड़ते हो?

नामदेवजी महाराजने अपनी वाणीमें गोदानकी महत्तापर प्रकाश डालते हुए कहा है—

गौ शत लक्ष बिप्र को दीजै। मन बंच्छित सब पुरवै कामा॥
कोटि गऊ जो दान दे नहि नाम समाना।

इस प्रकार संत नामदेवजी महाराजने विट्ठलकी भक्तिके साथ ही गोसेवा करनेका महत्त्वपूर्ण संदेश लोगोंमें वितरित किया। उनके त्याग, वैराग्यमय, भक्तिमय जीवन-पथमें गौका विशिष्ट स्थान था। यहाँतक कि उन्होंने गोमाताकी रक्षाके लिये अपनी कुर्बानीकी प्रतिज्ञा कर ली, तत्काल विट्ठल भगवान्‌की कृपासे गाय जीवित हो उठी। धन्य हैं गोसेवक नामदेवजी! उनका गोप्रेम स्तुत्य है, वन्द्य है। किंतु विडम्बना है कि आज गोमाताकी स्थिति बड़ी ही दयनीय है। हजारों गोभक्तोंकी कुर्बानियोंपर भी गोरक्षामें

कोई सुधार नहीं हो सका है। हमारे गोमांसाहारी मुसलमान भाइयोंको हमारी नहीं, तो अपने काजी मुल्लाओंकी बात तो माननी ही चाहिये, जिन्होंने कुछ सोच-समझकर और देख-सुनकर ही कहा होगा— '*बखसी हिंदू मै तेरी गाइ॥*'

यह हमारे समाजकी भी कमी है कि वह अपने स्वार्थकी पूर्तिके लिये ऐसा करता है। सरकार आश्वासन देती है, परंतु पूर्ण गोवध और गोरक्षापर स्पष्ट कुछ नहीं कहती। सरकारको सारे राष्ट्रके लिये एक-जैसा कानून बनाना चाहिये। पूर्ण गोवधबंदीकरण कानून बने। गायके चमड़े, गोमांस आदिके निर्यातपर पूर्ण पाबंदी लगे। गाँव तथा शहरोंके बाहर गोचरभूमि जरूर छोड़ी जाय। शहरोंके बाहर जहाँ जल और चारेकी भरपूर मात्रा उपलब्ध हो वहाँ गोशाला खोली जाय। बूढ़ी तथा अपंग गायोंके लिये अलग गोसदनोंकी व्यवस्था की जाय। गायोंकी नस्लमें सुधार तथा उनकी देखभालके लिये योग्य चिकित्सकोंका भी उचित प्रबन्ध हो। इन सब कार्योंको करने तथा करवानेके लिये केवल सरकारके भरोसे ही रहना नहीं होगा, क्योंकि सरकार तो कानून बना देगी, पर इसको सुचारु रूपसे लागू करनेके लिये गोभक्त लोगोंको, समाजसेवी तथा गो-गोविन्दप्रेमी संस्थाओंको ही आगे आना होगा।

(श्रीगिककुमारजी)

बालक शिवाजीकी गोभक्ति

एक समय शिवाजी, जब वे आठ-दस वर्षके बालक थे, अपने पिता राजा शाहाजीके दर्शनके लिये पूनासे बीजापुर गये थे। वहाँ पहुँचनेपर राजा शाहाजीने अपने पुत्रसे शाही दरबारमें चलनेको कहा। बालक शिवाजी अत्यन्त मातृ-पितृ-भक्त थे। बचपनसे ही उनके अन्तःकरणपर रामायण-महाभारतादि ग्रन्थोंके सुननेसे ऐसे सुसंस्कार जम गये थे कि वे माता-पिताकी आज्ञा अस्वीकार नहीं कर सकते थे, किंतु यह प्रसंग ऐसा था कि एक ओर शाही दरबारमें जानेके लिये उनकी अन्तरात्मा उनको मना कर रही थी और दूसरी ओर उनके पिता चलनेको आग्रह कर रहे थे। वे धर्मसंकटमें पड़ गये। अन्तमें उस बुद्धिमान् और तेजस्वी बालकने स्पष्ट किंतु नम्र शब्दोंमें अपनी आन्तरिक व्यथा अपने पितासे निवेदन कर दी। उन्होंने कहा—'पिताजी! हमलोग हिंदू हैं। रास्तेमें आते-जाते समय हमारी आँखोंके सामने गोमाता कट जाती हैं। गोमांसका विक्रय होता है। यह घृणित तथा दुस्सह दृश्य देखकर मन क्षुब्ध हो जाता है और जी चाहता है कि गोहत्या करनेवालेके गर्दन उड़ा दें। हम क्षत्रिय जीते हुए यह गोहत्याका दृश्य देखते हैं, इससे तो मरना अच्छा! धिक्कार है हमारी क्षत्रियताको!! गोवधिकोंपर तत्काल शासन करना अथवा गोप्राण-रक्षणमें आत्मार्पण करना—इन दोमेंसे एक अवश्य होना चाहिये, किंतु ऐसा करनेमें मुझे आपकी अप्रसन्नताका डर है, नहीं तो कसाईको देखते ही मैं उसका सिर उड़ा देता।'

बालक शिवाजीके सच्चे हिंदू-अन्तःकरणकी यह व्यथा बादशाहके कानोंतक पहुँची। बादशाह उस तेजस्वी बालकको देखनेके लिये बहुत उत्सुक हुए। इसलिये उन्होंने कसाइयोंको आज्ञा दी कि 'गोहत्या तथा मांस-विक्रीका सब व्यवहार शहरसे दूर एक अलग मुहल्लेमें हो। इसके विरुद्ध बर्ताव करनेवाले अपराधी समझे जायँगे।' इतना हो जानेपर शिवाजी अपने पिताके साथ दरबारमें जाने लगे। बादशाहने यह हुक्म निकाल तो दिया था, किंतु कसाइयोंने इसपर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। हुक्म तोड़नेवाले कुछ निकल आये। यह देखकर शिवाजीने दरबारमें आना-जाना फिर बंद कर दिया। पूछताछ होनेपर शाहाजी महाराजने बादशाहसे सब कारण बता दिया। इसपर बादशाहने दूसरा कड़ा हुक्म निकाला कि 'कसाई और कलालोंकी सब दूकानें शहरके दक्षिण एक कोसकी दूरीपर होनी चाहिये। यदि कोई बेचनेवाला

इस हुक्मको तोड़कर शहरमें गोमांस या दारू बेचने आयेगा और उसे कोई हिंदू मार देगा तो वह हिंदू अपराधी नहीं समझा जायगा और उसे किसी प्रकारका दण्ड नहीं मिलेगा।'

इतनी कड़ी आज्ञा होनेपर भी एक दिन एक कसाई अभिमान और हठवश एक गायको रस्सीसे बाँधे लिये जा रहा था। गाय आगे जाना नहीं चाहती, डकराती थी और इधर-उधर कातर नेत्रोंसे देखती थी। कसाई उसे डंडेसे बार-बार पीट रहा था। इधर-उधर दुकानोंपर जो हिंदू थे, वे मस्तक झुकाये यह सब देख रहे थे। उनमें इतना साहस नहीं कि कुछ कह सकें। मुसल्मानी राज्यमें रहकर वे कुछ बोलें तो पता नहीं क्या हो। लेकिन लोगोंकी दृष्टि आश्चर्यसे खुली-की-खुली रह गयी। बालक शिवाकी तलवार म्यानसे निकलकर चमकी, वे कूदकर कसाईके पास पहुँचे और गायकी रस्सी उन्होंने काट दी। गाय भाग गयी एक ओर। कसाई कुछ बोले इससे पहले तो उसका सिर धड़से कटकर भूमिपर लुढ़कने लगा था।

जब मृत कसाईके रिश्तेदारने बादशाहके सामने इस मामलेको पेश किया, तब पहले कसाईका ही गुनाह समझकर बादशाहने उसकी फरियाद खारिज कर दी और एक बार फिर कसाइयोंको शहरमें मांस बेचनेसे मना कर दिया।

वीर गोभक्त बालक श्रीशिवजी

गौ माता

(श्रीहरीशजी 'मधुर')

गौ माता! अभिनन्दन तेरा!

तुम जग-जीवनकी जननी हो,
दूध-दही देनेवाली।
तुम गोकुलकी भी गरिमा हो,
मोहनकी हो तुम प्यारी॥
तेरे सबल पुत्र हे माता!
हैं जीवनके भाग्य-विधाता।
कृषकोंके नयनोंके तारे,
मिटा रहे हैं कष्ट हमारे॥
धरती जोते, पानी ढोते,
वाहक बनकर बोझा ढोते।
फैलाते हैं गौरव तेरा,
गौ माता! अभिनन्दन तेरा॥

तुमसे जीवन हैं हम पाते,
दूध, दही, घी, मक्खन खाते।
सन, तृण, तेल, अन्न, पट पाते,
बदलेमें हैं क्या दे पाते॥
तुम घूम-घूम तिनके चरती हो,
दुख सहती पर दुख हरती हो।
नहीं किसीसे कुछ कहती हो,
जगमें जीवन भर देती हो॥
पर तेरी सुधि जब हैं लाते,
नयन अश्रुसे हैं भर आते।
करते हैं हम वन्दन तेरा,
गौ माता! अभिनन्दन तेरा॥

गोस्वामी तुलसीदासजीकी दृष्टिमें गोसेवा और उसका रहस्य

गोस्वामीजीने अपने सम्पूर्ण साहित्यमें गौकी निरन्तर चर्चा की है। वे काशीको भी गायका रूप मानते हुए बड़ी सुन्दर पद रचना करते हुए लिखते हैं—

सेइअ सहित सनेह देह भरि, कामधेनु कलि कासी।
समनि सोक-संताप-पाप-रुज, सकल-सुमंगल-रासी॥
मरजादा चहुँ ओर चरनबर, सेवत सुरपुर-बासी।
तीरथ सब सुभ अंग रोम सिवलिंग अमित अबिनासी॥
अंतरऐन ऐन भल, थन फल, बच्छ बेद-बिस्वासी।
गलकंबल बरुना बिभाति जनु, लूम लसति, सरिताऽसी॥
दंडपानि भैरव बिषान, मलरुचि-खलगन-भयदा-सी।
लोलदिनेस त्रिलोचन लोचन, करनघंट घंटा-सी॥
मनिकर्णिका बदन-ससि सुंदर, सुरसरि-सुख सुखमा-सी।
स्वारथ परमारथ परिपूरन, पंचकोसि महिमा-सी॥
बिस्वनाथ पालक कृपालुचित, लालति नित गिरिजा-सी।
सिद्ध, सची, सारद पूजहिं मन जोगवति रहति रमा-सी॥
पंचाच्छरी प्रान, मुद माधव, गव्य सुपंचनदा-सी।
ब्रह्म-जीव-सम रामनाम जुग, आखर बिस्व-बिकासी॥
चारितु चरति करम कुकरम करि, माता जीवगन घासी।
लहत परमपद पय पावन, जेहि चहत प्रपंच-उदासी॥
कहत पुरान रची केसव निज कर-करतूति कला-सी।
तुलसी बसि हरपुरी राम जपु, जो भयो चहै सुपासी॥

(विनय-पत्रिका २२)

इस पदमें* गङ्गाके अनुकूल गायको उत्तरकी ओर मुख करके खड़ा किया गया है, उसका गलकम्बल और मुख वरुणा नदीके पास और पूँछ अस्सीके पास माना गया है। मुख्य काशी वरुणा और अस्सीके बीच मानी जाती है इसीलिये इसका दूसरा नाम वाराणसी भी है। इस पदका एक-एक अक्षर बहुमूल्य तथा निरन्तर मननीय है।

यद्यपि इसमें सभी काशीके मुख्य देवताओं और पवित्र तीर्थोंका वर्णन संनिविष्ट है, परंतु उसका मुख्य तत्त्व है गो-दुग्ध, जिसे ज्ञानियोंके समान सामान्य प्राणी भी समान-रूपसे परमसुखदायक निर्वाणके रूपमें प्राप्त कर लेता है—

लहत परमपद पय पावन, जेहि चहत प्रपंच-उदासी॥

मानसमें ज्ञानदीपकका, जिसका मुख्य आधार श्रद्धारूपी गौ ही है, उस प्रकरणमें गोस्वामी तुलसीदासजीके वेदान्त-ज्ञान-सम्बन्धी श्रमका अनुमान होता है। वे वहाँ लिखते हैं—

सात्त्विक श्रद्धा धेनु सुहाई। जौं हरि कृपाँ हृदयँ बस आई॥

(रा०च०मा० ७। ११७। ९)

---

* पदका अर्थ हिन्दी होनेसे सरल ही है फिर भी विशेष सुविधाके लिये उसका संक्षिप्त एवं सरल अर्थ दिया जा रहा है। विशेष जानकारीके लिये विनयपीयूष, सिद्धान्ततिलक आदि टीकाएँ देखनी चाहिये—

इस कलियुगमें काशीरूपी कामधेनुका प्रेमसहित जीवनभर सेवन करना चाहिये। यह शोक, संताप, पाप और रोगका नाश करनेवाली तथा सब प्रकारके कल्याणोंकी खान है। काशीके चारों ओरकी सीमा इस कामधेनुके सुन्दर चरण हैं। स्वर्गवासी देवता इसके चरणोंकी सेवा करते हैं। यहाँके सब तीर्थस्थान इसके शुभ अङ्ग हैं और नाशरहित अगणित शिवलिङ्ग इसके रोम हैं। अन्तर्गृही (काशीका मध्यभाग) इस कामधेनुका ऐन (थनोंके ऊपरका भाग जिसमें दूध भरा रहता है) है। अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष—ये चारों फल इसके चार थन हैं, वेद-शास्त्रोंपर विश्वास रखनेवाले आस्तिक लोग इसके बछड़े हैं, विश्वासी पुरुषोंको ही इसमें निवास करनेसे मुक्तिरूपी अमृतमय दूध मिलता है; सुन्दर वरुणा नदी इसकी गलकम्बलके समान शोभा बढ़ा रही है और असी नामक नदी पूँछके रूपमें शोभित हो रही है। दण्डधारी भैरव इसके सींग हैं, पापमें मन रखनेवाले दुष्टोंको उन सींगोंसे यह सदा डराती रहती है। लोलार्क (कुण्ड) और त्रिलोचन (एक तीर्थ) इसके नेत्र हैं और कर्णघण्टा नामक तीर्थ इसके गलेका घण्टा है। मणिकर्णिका इसका चन्द्रमाके समान सुन्दर मुख है, गङ्गाजीसे मिलनेवाला पाप-ताप-नाशरूपी सुख इसकी शोभा है, भोग और मोक्षरूपी सुखोंसे परिपूर्ण पञ्चकोसीकी परिक्रमा ही इसकी महिमा है। दयालु-हृदय विश्वनाथजी इस कामधेनुका पालन-पोषण करते हैं और पार्वती-सरीखी स्नेहमयी जगज्जननी इसपर सदा प्यार करती रहती हैं; आठों सिद्धियाँ, सरस्वती और इन्द्राणी शची इसका पूजन करती हैं; जगत्का पालन करनेवाली लक्ष्मी-सरीखी इसका रुख देखती रहती हैं। 'नमः शिवाय' यह पञ्चाक्षरी मन्त्र ही इसके पाँच प्राण हैं। भगवान् विन्दुमाधव ही आनन्द हैं। पञ्चनदी (पञ्चगङ्गा) तीर्थ ही इसके पञ्चगव्य (दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र) हैं। यहाँ संसारको प्रकट करनेवाले रामनामके दो अक्षर 'रकार' और 'मकार' इसके अधिष्ठाता ब्रह्म और जीव हैं। यहाँ मरनेवाले जीवोंका सब सुकर्म और कुकर्मरूपी घास यह चर जाती है, जिससे उनको वही परमपदरूपी पवित्र दूध मिलता है, जिसको संसारके विरक्त महात्मागण चाहा करते हैं। पुराणोंमें लिखा है कि भगवान् विष्णुने सम्पूर्ण कला लगाकर अपने हाथोंसे इसकी रचना की है। हे तुलसीदास! यदि तू सुखी होना चाहता है तो काशीमें रहकर श्रीरामनाम जपा कर।

अर्थात् श्रद्धा ही सब धर्मोंकी जननी होती है। यदि वह पूर्ण सात्त्विकी श्रद्धा है तो वह धेनु तथा गौका रूप धारण कर लेती है और वह धेनु या गौ यदि निरन्तर हृदयमें वास करती है तथा सभी प्रकारके जप-तप, यम-नियम, आचार-विचार, ज्ञान-विज्ञान सबका अहर्निश तृणके रूपमें सेवन करती है अर्थात् व्यक्ति सदा शास्त्र, वेद आदिमें निर्दिष्ट नियमोंका पालन करता है तो सद्भावना, शुभ-भावनाके योगसे गायका दूध विशुद्ध धर्मके रूपमें उस गायके स्तनोंसे नीचे उतरता है। फिर उसी दूधसे दही और घृतके रूपमें निकला हुआ ज्ञान-तत्त्व तीनों अवस्थासे ऊपर उठकर नित्यसमाधिमें स्थित होकर समस्त विश्वमें एकमात्र परब्रह्मका भान होते हुए अखण्ड दीपज्योतिका काम करता है—

सोहमस्मि इति बृत्ति अखंडा। दीप सिखा सोइ परम प्रचंडा॥
आतम अनुभव सुख सुप्रकासा। तब भव मूल भेद भ्रम नासा॥

(रा० च० मा० ७। ११८। १-२)

यहाँ सारा संसार और उसकी मूल अविद्या भी नष्ट हो जाती है। यही योगवासिष्ठ, उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र, पञ्चदशी, जीवन्मुक्तिविवेक आदि वेदान्त, योग-ग्रन्थोंका निष्कर्ष है।

भगवान्के अवतारके कारणोंका भी जहाँ श्रीगोस्वामीजी निर्देश करते हैं, वे कहते हैं—

गो द्विज धेनु देव हितकारी। कृपासिंधु मानुष तनु धारी॥

(रा०च०मा० ५। ३९। ३)

इसमें ध्यान देनेकी बात है कि इसमें 'गो' और 'धेनु' शब्द दो बार आया है। यह गोभक्तिका ही कारण है। यह बड़ी विचित्र बात है। टीकाकार लोग इसमें किसी एकका पुनरुक्ति होनेके कारण 'पृथ्वी' अर्थ भी ले सकते हैं; क्योंकि पृथ्वी भी गायका रूप धारणकर भगवान्के पास जाती है—

'सँग गोतनुधारी भूमि बिचारी परम बिकल भय सोका॥'

(रा०च०मा० १। १८४ छं०)

तथा—

धेनु रूप धरि हृदयँ बिचारी। गई तहाँ जहँ सुर मुनि झारी॥

(रा०च०मा० १। १८४। ७)

इसी तरह और भी वे लिखते हैं—

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी॥

(रा०च०मा० १। १२१। ६-७)

यहाँ भी धेनुका नाम मुख्य होनेके कारण बीचमें आया है। किंतु सभी स्थानोंमें गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी भगवान्को नहीं भूलते। वे भलीभाँति जानते हैं कि भगवान् ही गौ-ब्राह्मण और पृथ्वीके क्लेश दूर करनेमें समर्थ हैं। इसीलिये गोवत्सका धर्म-रूप प्रसिद्ध है और पृथ्वी धेनुरूप धारणकर ही भगवान्के पास प्रार्थना करने जाती है। भगवान् भी नाम-जप और प्रार्थना आदिसे ही प्रसन्न होते हैं। गोस्वामीजी लिखते हैं—

नाम रामको अंक है सब साधन हैं सून।
अंक गएँ कछु हाथ नहीं अंक रहें दस गून॥

(दोहावली १०)

अतः तीव्रगतिसे नामजपपूर्वक ही गोसेवा और गोरक्षार्थ प्रयास करना चाहिये। साथ ही गौको पशु न समझकर सर्वदेवमयी धेनु—साक्षात् भगवान्का स्वरूप मानकर उसकी सेवा-शुश्रूषा, पूजा करनी चाहिये। भागवतकारने भी लिखा है—

प्रत्युद्गमप्रश्रयणाभिवादनं
विधीयते साधु मिथः सुमध्यमे।
प्राज्ञैः परस्मै पुरुषाय चेतसा
गुहाशयायैव न देहमानिने॥

(श्रीमद्भा० ४। ३। २२)

अर्थात् यदि किसी व्यक्तिके हृदयमें भगवान्की स्थितिको समझकर उसका स्वागत सेवा-शुश्रूषा, दण्ड-प्रणाम आदि कर्मोंका आचरण किया जाता है तब तो वह सफल होता है, ऐसा ही महात्मा लोग करते हैं न कि देहाभिमानी पशु, मनुष्य आदिकी दृष्टिसे। तुलसी, पीपल, शालग्राम आदिमें भी इसी दृष्टिसे पूजा की जाती है। अतः इसी दृष्टिसे अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति और विनयपूर्वक तन-मन और धनसे गोसेवा करनी चाहिये। यही सभी शास्त्रों, संतों, गोस्वामी तुलसीदास, व्यास, वसिष्ठ आदिका मत है।

गोधन

(भगवत्पूज्यपाद अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीशंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर ब्रह्मलीन श्रीब्रह्मानन्द सरस्वतीजी महाराजका उपदेश)

धर्मशास्त्रमें गोधनका विशेष माहात्म्य बतलाया गया है। लिखा है—

सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम्।

हिंदू-संस्कृति इस भावनासे परिपूर्ण है कि—

यद्गृहे दुःखिता गावः स याति नरकं नरः।

किंतु जबसे पाश्चात्त्योंकी सभ्यता-संस्कृतिका हमारी सभ्यता-संस्कृतिके साथ सम्मिश्रण हुआ है, तबसे भारतीय शिक्षा-विधानके लोप होनेसे अधिकांशतः शास्त्र-पुराणादिकी अनभिज्ञताके कारण गो-ब्राह्मणादिके प्रति शास्त्रीय धार्मिक बुद्धिका लोप-सा हो गया है।

गोवंश आज व्यावहारिक उपयोगिताकी दृष्टिसे भौतिक तुलापर तौला जा रहा है; किंतु स्मरण रहे कि आजका भौतिक विज्ञान गोवंशकी उस सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमोत्कृष्ट उपयोगिताका पता ही नहीं लगा सकता, जिसे भारतीय शास्त्रकारोंने अपनी दिव्यदृष्टिसे प्रत्यक्ष कर लिया था। गोवंशकी धार्मिक महानता उसमें जिन सूक्ष्मातिसूक्ष्म कारणरूप तत्त्वोंकी प्रखरताके कारण है, उनकी खोज और जानकारीके लिये आधुनिक वैज्ञानिकोंके भौतिक यन्त्र सदैव स्थूल ही रहेंगे। यही कारण है कि आजका प्रौढ विज्ञानवेत्ता भी गोमाताके लोम-लोममें देवताओंके निवासका रहस्य और प्रातः गोदर्शन, गोपूजन, गोसेवा आदिका वास्तविक तथ्य समझनेमें असफल रहता है। गोधनका धार्मिक महत्त्व भावजगत्से सम्बन्ध रखता है और वह या तो ऋतुम्भरा प्रज्ञाद्वारा अनुभवगम्य है अथवा शास्त्रप्रमाणद्वारा जाना जा सकता है, भौतिक यन्त्रोंद्वारा नहीं।

धर्मशास्त्र तो गोधनकी महानता और पवित्रताका वर्णन करता ही है, किंतु भारतीय अर्थशास्त्रमें भी गोपालनका विशेष महत्त्व है। कौटिलीय अर्थशास्त्रमें गोपालन और गोरक्षणका विस्तृत विवरण मिलता है। जिस भूमिमें खेती न होती हो, उसे गोचर बनानेका आदेश अर्थशास्त्रका ही है। इस प्रकार गोधन 'अर्थ' और 'धर्म' दोनोंका प्रबल पोषक है। अर्थसे ही काम (कामनाओं) की सिद्धि होती है और धर्मसे ही मोक्षकी। अतएव गोधनसे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष—चारोंकी प्राप्ति होती है। इसीलिये भारतीय जीवनमें गोधनका इतना ऊँचा माहात्म्य है। जो हिंदू धर्मशास्त्रपर विश्वास रखते हैं, उन्हें चाहिये कि चतुर्वर्ग-फल-सिद्ध्यर्थ शास्त्रविधानके अनुसार गोसेवा करते हुए गोधनकी वृद्धि करें और जो धर्मशास्त्रपर आस्था नहीं रखते, उन्हें चाहिये कि 'अर्थ' और 'काम' की सिद्धिके लिये अर्थशास्त्रके नियमोंके अनुसार गोपालन करते हुए गोवंशकी वृद्धि करनेका प्रयत्न करें।

प्रत्यक्षवादियोंके लिये इससे अधिक गोमाताकी दयालुता हो ही क्या सकती है कि वह सूखे तृण भक्षण करके जन्मभर उन्हें दुग्ध-घृत-जैसे पौष्टिक द्रव्य प्रदान करे। इतनेपर भी यदि वे गोमाताके कृतज्ञ न हुए, तब तो उनमें मानवताका लेश भी नहीं माना जा सकता। गोमाताके द्वारा मानव-समाजको जो लाभ है, उसे पूर्णतया व्यक्त करनेके लिये सहस्रों पृष्ठोंकी कई पुस्तकें लिखनी होंगी। संक्षेपमें यही कहा जा सकता है कि गोमातासे मानव-समाजको जो लाभ है, उससे मानवजाति गोमाताकी सदा ऋणी रहेगी।

वध आदि हिंसक उपायोंद्वारा गोवंशका ह्रास करना धार्मिक और आर्थिक दोनों दृष्टियोंसे राजा-प्रजा दोनोंके लिये हानिकर है। अतएव ऐसी भयंकर प्रथाओंको सर्वथा रोकनेका प्रयत्न सभीको करना चाहिये। जबतक केन्द्रीय सरकार इसके लिये संकल्प नहीं ले लेती, तबतक संतोषजनक परिणाम असम्भव-सा प्रतीत होता है। इसके लिये देशव्यापी यथेष्ट प्रयत्न होना चाहिये।

साथ-ही-साथ प्रत्येक गृहमें गोपालनकी प्राचीन प्रथाको बढ़ानेका प्रयत्न भी सभी सद्गृहस्थोंको करना चाहिये। धनी-मानी लोगों, श्रीजनों, सेठ-साहूकारों आदिको चाहिये कि गोशालाओंकी वृद्धि करें, जहाँसे आदर्श हृष्ट-पुष्ट गौओं और बैलोंकी प्राप्ति हो सके। गोचरभूमिके सम्बन्धमें आजकलकी व्यवस्था अत्यन्त शोचनीय है। इस सम्बन्धमें मनुजीने लिखा है—'प्रत्येक गाँव और नगरके चारों ओर प्रचुर मात्रामें गोचरभूमि छोड़नी चाहिये।' सभी समर्थ किसानों, श्रीमन्तों और सेठ-साहूकारोंको अपने-अपने केन्द्रोंमें गोचरभूमियोंका यथोचित प्रबन्ध करना चाहिये और गोधनकी वृद्धिका सदैव ध्यान रखना चाहिये। इसीमें भारत और भारतीय सभ्यताका गौरव तथा सच्चा स्वार्थ निहित है।

गोवंश भारतीय जीवनका मूलाधार

(ब्रह्मलीन पूज्य स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥

(ऋग्वेद ८। १०१। १५)

गाय धर्म एवं संस्कृतिकी प्रतीक

गाय वैदिक कालसे ही भारतीय धर्म और संस्कृति-सभ्यताकी प्रतीक रही है। स्वयं वेद गायको नमन करता है—'**अघ्न्ये! ते रूपाय नमः।**'

'**रूपायाघ्न्ये ते नमः।**'

(अथर्व०, शौन० १०। १०। १, पैप्प० १६। १०७। १)

'हे अवध्य गौ! तेरे स्वरूपके लिये प्रणाम है।' ऋग्वेद (१। १५४। ६) के अनुसार 'जिस स्थलपर गाय सुखपूर्वक निवास करती है, वहाँकी रजतक पवित्र हो जाती है, वह स्थान तीर्थ बन जाता है।' हमारे जन्मसे मृत्युपर्यन्त सभी संस्कारोंमें पञ्चगव्य और पञ्चामृतकी अनिवार्य अपेक्षा रहती है। गोदानके बिना हमारा कोई भी धार्मिक कृत्य सम्पन्न नहीं होता। व्रत, जप, उपवास सभीमें गौ और गोप्रदत्त पदार्थ परमावश्यक हैं। गाय अपनी उत्पत्तिके समयसे ही भारतके लिये पूजनीय रही है। उसके दर्शन, पूजन, सेवा-शुश्रूषा आदिमें आस्तिक जन पुण्य मानते हैं। किसी पूज्य-से-पूज्य व्यक्तिकी भी विष्ठा पवित्र नहीं मानी जाती, किंतु गोमूत्र गङ्गाजलके समान पवित्र माना गया है और गोमयमें साक्षात् लक्ष्मीका निवास कहा गया है। चान्द्रायणादि महाव्रतों एवं यज्ञोंमें पञ्चगव्य पीनेका विधान है, जिसमें गोमय-गोमूत्र मिश्रित रहते हैं। शास्त्रोंके अनुसार हमारे अङ्ग-प्रत्यङ्ग, मांस-मज्जा, चर्म और अस्थिमें स्थित पापोंका विनाश पञ्चगव्यके पानसे होता है। गाय सर्वदेवमयी है—

'**सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः।**'

गायके शरीरमें सभी देवताओंका निवास है, अतः गाय सर्वदेवमयी है।

भारतीय संस्कृति यज्ञ-प्रधान है। वेदसे लेकर रामायण, महाभारतादि इतिहास-ग्रन्थोंतक सर्वत्र यज्ञको ही सर्वोच्च स्थान दिया गया है। यज्ञके आधार हैं, मन्त्र और हवि, जिनमें मन्त्र ब्राह्मणके मुखमें निवास करते हैं तो हवि गायके शरीरमें। हविके अभावमें यज्ञकी कल्पना भी सम्भव नहीं। इसीसे गाय भारतीय धर्म और संस्कृतिकी मूलाधार रही है। धर्मग्लानिको दूरकर धर्मसंस्थापनके उद्देश्यसे अवतरित भगवान् एवं भगवद्विभूतियोंने सदैव गो-ब्राह्मणोंकी रक्षाको ही सर्वोच्च प्राथमिकता दी है—

'**बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।**'

आनन्दकन्द, मदनमोहन भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने तो यही कामना की है—

गावो ममाग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे सर्वतः सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

अर्थात् 'गायें मेरे आगे हों, मेरे पीछे हों, गायें मेरे सब ओर हों, मैं गायोंके मध्य वास करूँ।'

चक्रवर्ती नरेन्द्र दिलीपने गोरक्षाके लिये अपना कमनीय-कान्त युवा शरीर ही सिंहके लिये अर्पण कर दिया और कहा कि क्षतसे त्राण करनेके कारण ही 'क्षत्रिय' शब्द संसारमें रूढ हुआ है, यदि मैं नन्दिनी गौकी रक्षा नहीं कर सका तो 'क्षत्र'-शब्दार्थके विपरीत आचरणके कारण राज्य एवं प्राणियोंकी निन्दासे मलीमस प्राणोंसे मुझे कोई प्रयोजन नहीं—

क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः।
राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा॥

दिलीपने सिंहसे यह भी कहा था कि 'जितनी कृपा आप मेरे भौतिक शरीरपर कर रहे हैं, उतनी कृपा मेरे यशः-शरीरपर क्यों नहीं करते? मेरे देखते-देखते यदि नन्दिनी गौकी हत्या हुई तो सूर्यवंशकी कीर्तिमें कलङ्ककी कालिमा लग जायगी।'

श्रीरामचन्द्र राघवेन्द्रके कमल-से कोटिगुणित सुकोमल चरणारविन्दोंमें गो-ब्राह्मण-रक्षणार्थ ही दण्डकवनके कण्टक चुभे थे। भक्तोंके हृदयमें उसी दण्डक-कण्टकविद्ध पादारविन्दको स्थापित करके भगवान् साकेतधाम पधारे—

स्मरतां हृदि विन्यस्य विद्धदण्डककण्टकैः।
स्वपादपल्लवं रामो ह्यात्मज्योतिरगात् प्रभुः॥

भगवान् श्रीकृष्ण तो गोचारण और गोपालनके आदर्श ही हैं। उनकी गोपाङ्गनाएँ उनके नलिनसुन्दर चरणारविन्दोंमें तृण, अंकुर आदिके गड़ जानेकी कल्पनासे ही संतप्त हो उठती हैं—

चलसि यद् व्रजाच्चारयन् पशून् नलिनसुन्दरं नाथ ते पदम्।
शिलतृणाङ्कुरैः सीदतीति नः कलिलतां मनः कान्त गच्छति॥

अर्थ-व्यवस्थाकी रीढ़

धर्म और संस्कृतिका प्रतीक होनेके साथ-साथ गाय भारतकी कृषिप्रधान अर्थव्यवस्थाकी भी रीढ़ है। देशमें सदैवसे गोधनको ही 'धन' माना जाता रहा है। प्राचीन कालमें तो किसी भी वस्तुका मूल्याङ्कन गौके द्वारा ही होता था। हमारे यहाँ गोपालन पश्चिमी देशोंकी भाँति केवल दूध और मांसके लिये नहीं होता। अमृततुल्य दूधके अतिरिक्त खेत जोतने एवं भार ढोनेके लिये बैल तथा भूमिकी उर्वरता बनाये रखनेके लिये उत्तम खाद भी हमें गायसे ही प्राप्त होती है, जिसके अभावमें हमारे राष्ट्रकी अर्थव्यवस्थाका शकट किसी प्रकार चल नहीं सकता।

भारतीय कृषिकी यह अनिवार्य अपेक्षा है कि देशमें पर्याप्त संख्यामें उत्तम बैल उपलब्ध हों। इस समय देशमें उनकी जो स्थिति है, वह उत्कृष्टता और संख्या दोनों दृष्टियोंसे असंतोषजनक है। द्वितीय पञ्चवर्षीय योजनाके अनुमानानुसार देशमें ३९ करोड़ ५२ लाख एकड़ भूमिमें खेती होती है। १९२७ के 'रायल कमीशन' की कृषिसम्बन्धी रिपोर्टके अनुसार प्रति एक सौ एकड़ भूमिके लिये २० (बीस) बैलोंकी आवश्यकता है। 'कैटल मार्केटिंग रिपोर्ट—१९४६, के अनुसार उक्त हिसाबसे ८ करोड़, ६ लाख, ५ हजार बैलोंकी आवश्यकता है। १९६१ की पशु-गणनाके अनुसार देशमें केवल ६ करोड़, ८६ लाख, १ हजार, ६१४ कार्यक्षम बैल उपलब्ध हैं। इस प्रकार देशमें एक करोड़से अधिक बैलोंकी कमी है, जिससे कृषि-उत्पादन उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है। इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष १० प्रतिशत बैल सेवानिवृत्त हो जाते हैं, जिनकी पूर्तिके लिये एक करोड़ नये बैलोंकी प्रतिवर्ष आवश्यकता होती है। यह पूर्ति वर्तमान गोधनसे ही सम्भव है, भले ही उनकी दुग्धोत्पादनकी क्षमता कितनी ही कम क्यों न हो। इसी संदर्भमें भारत-सरकारकी 'मानव तथा पशु-भोजन-विशेषज्ञ समिति' ने अपनी रिपोर्टमें कहा है कि—'चूँकि बैलोंकी वर्तमान संख्याको कृषिके लिये बनाये रखना आवश्यक है और प्रजननके द्वारा उनकी पूर्ति करना भी अनिवार्य है, अतः प्रजननयोग्य गौओंकी संख्या कम करना हितकर नहीं हो सकता, भले ही उनमेंसे अधिकांशकी दूध देनेकी क्षमता कितनी भी कम क्यों न हो।'

ट्रैक्टरोंका प्रयोग

ट्रैक्टर उक्त समस्याका हल नहीं है। स्व० लालबहादुर शास्त्रीके अनुसार 'देशमें लाखों एकड़ भूमि ऐसी है, जहाँ ट्रैक्टरोंका प्रयोग हो ही नहीं सकता। अमेरिकामें ट्रैक्टरोंसे खेती हो सकती है, क्योंकि वहाँ एक किसानके पास कम-से-कम १४ एकड़ भूमिका औसत है, जब कि भारतमें एक एकड़ भूमिका औसत है। ऐसी दशामें हमें भारतमें खेतीके लिये लंबे समयतक बैलोंपर निर्भर रहना पड़ेगा।' (भाषण, हैदराबाद १९६५)

केन्द्रीय गोसंवर्धन-परिषद्के अध्यक्ष श्री उ० न० ढेबरके शब्दोंमें '१९६५ के ताजे आँकड़ोंसे पता चलता है कि देशमें कुल ४० हजार ट्रैक्टर हैं, जिनमें २० हजार बेकार पड़े हैं। इससे प्रकट होता है कि इस देशमें ट्रैक्टरोंकी कितनी कार्यक्षमता है और ट्रैक्टरसे खेती करना कितना लोकप्रिय हो सकता है। जो लोग ट्रैक्टरसे खेती करनेके लिये उतावले हो रहे हैं, उन्हें इस सम्बन्धमें शान्तिसे विचार करना चाहिये।' (भाषण, हैदराबाद १९६५)

देशमें कृषि और अन्य कार्योंमें संलग्न बैलोंकी संख्या लगभग सात करोड़ है। उनके द्वारा बिना किसी अन्य सहायताके ३ करोड़ हॉर्स पॉवर शक्ति पैदा होती है, जिसे उत्पन्न करनेके लिये मध्यम प्रकारके ४० लाख ट्रैक्टरोंकी आवश्यकता होगी। इन ४० लाख ट्रैक्टरोंको प्राप्त करने और चलानेमें कितना धन खर्च होगा, उसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

सर अलबर्ट हॉवर्डने अपने (An Agricultural Testament) में ट्रैक्टरसे खेती करनेकी हानि भी

दिखायी है। आपने लिखा है—'घोड़े और बैलके बदले बिजलीकी मोटर और तेलवाले इंजनोंसे खेती करनेमें एक हानि यह है कि मशीनोंसे गोबर और मूत्र नहीं मिलता। फलत: ये मिट्टीकी उर्वरता बनाये रखनेमें किसी कामके नहीं हैं' (उल्टे उनके तेल और धुएँसे खेतकी उर्वराशक्तिको नुकसान पहुँचता है, पृष्ठ १८)। इसके अतिरिक्त कृषि-विशेषज्ञोंके मतानुसार भी ट्रैक्टर सर्वत्र और सदैव उपयोगी नहीं होते, बंजरभूमिको तोड़ने एवं कृषियोग्य बनानेमें अथवा ऊबड़-खाबड़ भूमिके लिये भले ही वे उपयोगी हों।

उपर्युक्त स्थितिमें भारतमें कृषिके लिये ट्रैक्टरोंका प्रयोग न तो सम्भव है और न उपयोगी ही। इस प्रकार भारतीय कृषिके लिये गायकी संतति बैल ही रह जाते हैं। १९२९ में भारतीय कृषि रायल कमीशनने भी लिखा है कि 'गाय और बैल अपनी दृढ़ पीठपर हमारी अर्थव्यवस्थाका सम्पूर्ण भार उठाये हुए हैं।'

गोमय और गोमूत्र

आर्थिक एवं व्यावहारिक दृष्टिसे अमृततुल्य दूध एवं बैलके पश्चात् गोबर और गोमूत्रका स्थान है। भूमिकी उर्वरता और उत्पादन-शक्ति बनाये रखनेके लिये उत्तम खादकी अनिवार्य अपेक्षा सर्वमान्य है। वृद्धता अथवा रोगके कारण गाय यदि दूध और बछड़े देने योग्य न रहे तो भी खाद तो वह जबतक जीवित रहती है, देती ही है। डॉ० बॉयलरने गायके गोबरका विश्लेषण करके बतलाया है कि एक टन सूखा गोबर १५५ रत्तल 'सलफेट अमोनिया' (Sulphate Ammonia) की खादके बराबर है।' उन्हींके अनुमानानुसार भारतमें गोवंशसे प्राप्त होनेवाले गोबरसे ही एक करोड़ रुपयेके मूल्यकी खाद प्रतिदिन प्राप्त हो सकती है। यह केवल सूखे गोबरके मूल्यका अनुमान है, जो वर्षमें ३६० करोड़ रुपयेका होगा। डॉ० बॉयलर अंग्रेजी शासनकालमें भारतीय कृषिकी उन्नतिकी जाँच करने कृषि-निष्णातोंका कमीशन लेकर भारत आये थे और तेरह मासतक भारतमें दौराकर उन्होंने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की थी।

डॉक्टर इकल्सनने 'दुधारू ढोर और दुग्ध-उत्पादन' (Dairy cattles and milk-production) नामक पुस्तकमें बताया है कि 'एक हजार रत्तल वजनकी गाय वर्षमें ८ हजार रत्तल मूत्र और १८ हजार रत्तल गोबर देती है। ८ हजार रत्तल मूत्रकी खादका मूल्य १३.६० डालर और १८ हजार रत्तल गोबरकी खादका मूल्य १३.१० डालर होता है।' उनका कहना है कि 'यह ठीक है कि व्यवहारमें प्राय: इसका ध्यान नहीं रखा जाता कि पशुओंके गोबर और मूत्रमें उपजाऊ गुणवाले पदार्थ अधिक होते हैं। ऊपरके आँकड़ोंमें ८००० रत्तल मूत्रमें जितना नाइट्रोजन होता है, लगभग उतना ही गोबरमें है' (यह दिखाकर उक्त बात स्पष्ट की गयी है—पृष्ठ ४८१)।

इकल्सनकी गवेषणाको ध्यानमें रखकर यह कहा जा सकता है कि एक करोड़ रुपयेसे अधिक मूल्यकी खाद प्रतिदिन गोवंशके मूत्रसे ही मिल सकती है। इसके अतिरिक्त गायके गोबर और गोमूत्रकी एक मात्रा पौधोंके कचरेकी ५ से १० मात्रातकको कम्पोस्टमें परिणत कर सकती है। यदि कम्पोस्ट खादके लिये गोबरसे अच्छा है तो यह बात हमारी बुद्धिमें सहज ही बैठ सकती है कि गाय खाद देनेमात्रसे ही अपनी उपयोगिता सिद्ध कर देती है।

कृत्रिम रासायनिक खाद

कृत्रिम रासायनिक खादसे प्रारम्भमें भले ही उत्पादनमें कुछ वृद्धि दिखायी दे, पर स्वल्पकालमें ही उससे भूमिकी उत्पादनशक्तिका ह्रास हो जाता है और वह प्राय: ऊसर बन जाती है। इस भावी संकटकी गम्भीरतापर हमें अवश्य विचार करना चाहिये।

सर अलवर्ट हार्वर्डने इस विषयमें जो खोज की है, वह आँखें खोल देनेवाली है। वे भारत-सरकारके इकोनॉमिक बॉटनिस्ट (Economic Botanist) बनकर भारत आये और 'पूसा कृषि-गवेषणा परिषद्' में काम करने लगे। अपने दीर्घकालीन अनुभवको आपने ग्रन्थरूपमें उपस्थित किया है जो 'ऐन एग्रीकल्चरल टैस्टामेण्ट' (An Agricultural Testament) नामसे प्रकाशित है। इस ग्रन्थमें आपने लिखा है कि 'फसलोंके रोग भूमिके अस्वस्थ और रोगी होनेके कारण होते हैं और भूमिके रोगी होनेका कारण है प्राकृतिक खाद, गोबर या हरी खादका न मिलना। अत: गोबर तथा हरी खाद ही भूमिको प्राकृतिक खाद है। रासायनिक खाद भूमिको जीवांश (ह्यूमस) प्रदान नहीं करती।' आप लिखते हैं कि 'ये रासायनिक पदार्थ भूमिको संतुष्ट नहीं रख सकते। इनके उपयोगसे वृद्धि और क्षयका कभी

संतुलन नहीं हो सकेगा। पृथ्वी माताका प्राकृतिक खादका अधिकार छीन लेनेसे वह विद्रोही हो गयी है, उसने हड़ताल कर रखी है। कृषिका उत्पादन घट रहा है। जिस क्षेत्रने ग्रेट ब्रिटेन (Great Britain) जैसे देशकी प्रजाको खिलाया और जहाँसे वहाँकी मशीनोंको कच्चा माल दिया जाता है, उसकी जाँच बताती है कि निस्संदेह वहाँकी भूमि अब भार वहन करनेमें असमर्थ हो रही है। भूमिकी उपज विशेषकर संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्डमें द्रुतगतिसे घट रही है।'

डॉक्टर हॉर्वर्डके निष्कर्षोंसे यह स्पष्ट है कि रासायनिक खादका उपयोग करनेसे केवल यही हानि नहीं कि भविष्यमें उससे उपज कम होगी, अपितु यह भी कि उससे भूमिका स्वास्थ्य बिगड़ेगा। फलस्वरूप अस्वस्थ भूमिसे अन्न और चारा भी दूषित उत्पन्न होगा, जिससे मनुष्यों और पशुओंके स्वास्थ्यपर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। भारतीय कृषिकी उन्नतिके लिये रासायनिक खादका उपयोग कभी हितकर नहीं हो सकता। इसके साथ ही रासायनिक खादमें काम आनेवाला गन्धक और मशीनोंका विदेशोंसे आयात करना पड़ता है, जो भारतकी अर्थ-व्यवस्थापर एक बड़ा भार है। अतः भारतकी कृषि-अर्थव्यवस्थाकी उन्नतिके लिये गोवंशका सम्यक् संरक्षण और संवर्धन परमावश्यक है, जिसे हम किसी प्रकार आँखोंसे ओझल नहीं कर सकते।

गो-दुग्ध

कृषिके लिये बैल, उत्तम खादके अतिरिक्त गाय हमें शरीर और मस्तिष्कको पुष्ट करनेके लिये अमृततुल्य दुग्ध भी प्रदान करती है। हमारे देशकी अधिकांश जनता आज भी शाकाहारी है। अतः दूध ही भारतकी अधिकांश जनताका सर्वश्रेष्ठ पौष्टिक आहार है। स्वास्थ्यकी दृष्टिसे गो-दुग्ध, गोदधि, गोतक्र अत्यावश्यक है। उससे अनेक प्रकारके रोग दूर होते हैं। इसी प्रकार आयुर्वेद एवं आधुनिक विज्ञानके अनुसार भी शरीर-स्वास्थ्य एवं रोगनिवृत्तिके लिये गायके दूध, दही, मट्ठा, मक्खन, घृत, मूत्र, गोबर आदिका अत्यन्त उपयोग है।

किंतु दूधकी जो मात्रा आज हमारे देशमें उपलब्ध है, वह बहुत ही निराशाजनक है। भारतमें प्रतिव्यक्ति दूधकी खपत केवल ४.७५ औंस है, जबकि अमेरिका, डेन्मार्क, स्विट्जरलैण्ड आदि देशोंमें प्रतिव्यक्ति ५० औंसतक है। भोजनविशेषज्ञोंके मतानुसार एक व्यक्तिको प्रतिदिन कम-से-कम १३ औंस दूध चाहिये। ऐसी स्थितिमें देशमें एक भी गायकी हत्या होना कदापि उचित नहीं माना जा सकता। यद्यपि देशके वर्तमान गोधनकी दुग्धोत्पादन-क्षमता बहुत क्षीण है, तथापि हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि देशमें आज जितने परिमाणमें दूधका उत्पादन होता है और जितनी भी संख्यामें बैल तैयार होते हैं, वे सब हमें इन्हीं गौओंसे ही उपलब्ध होते हैं। इस सम्बन्धमें 'मनुष्य तथा पशुभोजन-कमेटी' (Human Nutrition vis-a-vis Animal Nutrition in India) की निम्नलिखित सम्मति विचारणीय है—

'उक्त तथ्योंसे विदित है कि दुधारू पशुओं और विशेषतः गायोंके दूध देनेकी क्षमता बहुत क्षीण है। यह न्यायसंगत नहीं मालूम होता कि दो पौंड या इससे कम प्रतिदिन दूध देनेवाले पशुओंका पालन-पोषण किया जाय। सामान्य दृष्टिसे देखें तो ऐसे पशुओंका निष्कासन कर देना चाहिये, परंतु ऐसा करनेसे पहले यह समझ लेना चाहिये कि इस प्रकारकी नीतिका क्या भयंकर परिणाम होगा? यदि दो पौंडसे कम दूध देनेवाले ऐसे पशुओंको बेकार समझकर नष्ट कर दिया गया तो उसके परिणामस्वरूप हमारी वर्तमान दुधारू गायोंकी ९० प्रतिशत संख्या नष्ट हो जायगी। इसका फल यह होगा कि हमें इस समय जो ९.७ मिलियन टन दूध प्राप्त हो रहा है, उसमेंसे ७ मिलियन टन दूधसे हाथ धोना पड़ेगा।'

उपर्युक्त तथ्योंको ध्यानमें रखते हुए यदि हमें देशमें दूधका वर्तमान उत्पादन कायम रखना है और उसमें वृद्धि करनी है तो एक भी गायकी हत्या होना कदापि उचित नहीं माना जा सकता। हाँ, संतुलित आहार आदि साधनोंसे उसकी दुग्धोत्पादन-क्षमता बढ़ानेका प्रयास ही अधिक उपयोगी हो सकता है। अनुभवी विशेषज्ञोंने अब इस तथ्यको स्वीकार कर लिया है कि गायको पर्याप्त मात्रामें संतुलित आहार देनेमात्रसे उसका दुग्धोत्पादन लगभग ४०-५० प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है। अतः कम दूध देनेवाली गायोंकी दुग्धोत्पादन-क्षमता बढ़ानेके लिये अनुभूत प्रयोग करना देशके सर्वविध हितमें है (अच्छे साँड़ोंके साथ सम्बन्ध

कराने और गो-संतानोंको गौका सम्पूर्ण दूध पिलानेसे दो-तीन पीढ़ियोंमें ही आशातीत गोवंशकी उत्तम स्थिति और दुग्धवृद्धि हो सकती है)। भारत-सरकारद्वारा प्रस्ताव-संख्या एफ २५-८।४७ एल, दिनांक १९ नवम्बर १९४७ के अन्तर्गत गोरक्षण एवं गोसंवर्धन-विशेषज्ञ समितिकी निम्नलिखित सिफारिश उपर्युक्त तथ्योंके प्रमाणित करनेके लिये नि:संदेह पर्याप्त है—

'इस समितिकी रायमें किसी भी अवस्थामें भारतमें गोहत्या होना वाञ्छनीय नहीं है। कानूनद्वारा गोहत्या बंद हो जानी चाहिये। भारतकी सुख-समृद्धि अधिकांशत: गोवंशके ऊपर निर्भर है। भारतकी आत्माको तबतक संतोष नहीं होगा, जबतक पूर्णतया गोहत्या बंद नहीं हो जायगी और गोवंशकी वर्तमान दीन-हीन दशाको सुधारा नहीं जायगा।'

अनुपयोगी पशुओंका हौआ

सम्पूर्ण गोवंशकी हत्यापर प्रतिबन्धके विरुद्ध गोहत्याके समर्थकोंकी ओरसे देशमें अनुपयोगी पशुओंकी संख्याका हौआ खड़ा किया जाता है। इस सम्बन्धमें पहली बात तो यह है कि गोवंशके पशुओंकी विविध उपयोगिता देखते हुए, जैसा कि विस्तारसे दिखाया जा चुका है, देशमें कोई अनुपयोगी पशु है ही नहीं। हमारे यहाँ गोपालन दुग्ध, बैल और खादके लिये किया जाता है। अत: केवल दूध और बैल-शक्तिकी दृष्टिसे गोवंशकी उपयोगिता निश्चित करना ठीक नहीं है। किंतु सरकारी निष्णातोंने सदैव केवल दुग्धोत्पादन और बैल-शक्तिको लेकर ही अनुपयोगी पशुओंकी संख्या बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करनेका प्रयत्न किया है। इतनेपर भी सन् १९५१ की पशुगणना-रिपोर्टके अनुसार तथाकथित अनुपयोगी पशुओंकी संख्या २.५ प्रतिशत अर्थात् लगभग ४० लाख थी। देशके ७ लाख गाँवोंमें फैले ये पशु एक मोटे अनुमानके अनुसार गोबर और गोमूत्रके रूपमें प्रतिपशु ४८ रुपये वार्षिक आय देता है जब कि विशेषज्ञोंद्वारा निर्मित गोसदन-योजनाके अनुसार ऐसे एक अनुपयोगी पशुके पालनपर ३६ रुपये प्रतिवर्ष खर्च आता है। इस प्रकार तथाकथित अनुपयोगी पशु भी वास्तवमें अनुपयोगी नहीं है।

दूसरी बात यह कि गोहत्यापर प्रतिबन्धसे अनुपयोगी गायोंकी संख्याका कोई सम्बन्ध नहीं है। सरकारी आँकड़ोंको देखनेसे पता चलता है कि जिन राज्योंमें गोहत्या बंद है, वहाँ अनुपयोगी पशुओंकी संख्या उन राज्योंकी तुलनामें बहुत कम है, जिनमें गोहत्या जारी है। उदाहरणके लिये जम्मू और कश्मीरमें केवल ०.७७ प्रतिशत निरुपयोगी पशु हैं। राजस्थानमें १.२२ प्रतिशत, बिहारमें १.९२ प्रतिशत, मध्यप्रदेशमें १.५१ प्रतिशत, मैसूरमें २.१५ प्रतिशत, पंजाबमें ०.७ प्रतिशत और उत्तरप्रदेशमें ०.७८ प्रतिशत अनुपयोगी पशु हैं, यद्यपि इन प्रदेशोंमें गोहत्यापर पूर्ण अथवा आंशिक प्रतिबन्ध है। जबकि जिन प्रदेशोंमें गोहत्यापर प्रतिबन्ध नहीं है, उनमें यह संख्या आसाममें ४.३६ प्रतिशत, मद्रासमें ५.२८ प्रतिशत, आन्ध्रप्रदेशमें ३.३४ प्रतिशत और बंगालमें २.४७ प्रतिशत है। इन आँकड़ोंसे सिद्ध होता है कि गोहत्या-बंदीके साथ अनुपयोगी पशुओंकी संख्याका कोई सम्बन्ध नहीं है।

इस प्रकार गोहत्या-बंदीसे देशमें अनुपयोगी पशुओंकी बढ़ोत्तरीके कारण उत्पन्न आर्थिक संकटकी बात सर्वथा निराधार सिद्ध होती है। 'दातार-कमेटी' की रिपोर्ट, जिसमें सभी सरकारी पशु-निष्णात सम्मिलित थे, की पूर्ण गोहत्या-बंदीके लिये सिफारिश तथा प्रोफेसर भाभाके ये शब्द कि 'आज जिस स्थितिमें हम हैं, उसमें गोहत्या बंद होनी चाहिये, क्योंकि इससे देशको हानि है' एवं संविधानकी ४८ वीं धारा उपर्युक्त निष्कर्षकी पुष्ट साक्षी हैं।

गो-संवर्धन

इसमें संदेह नहीं कि गोहत्या-बंदीके साथ-साथ गायोंकी दुग्धोत्पादन-क्षमता बढ़ाने, नस्ल-सुधार एवं गोमय और गोमूत्रके समुचित उपयोगकी व्यवस्थाके लिये गोसंवर्धनका सबल प्रयास अपेक्षित है। किंतु गोहत्यापर प्रतिबन्धके अभावमें गोसंवर्धनकी बात गोरक्षाकी दृष्टिसे विशेष महत्त्वकी नहीं, क्योंकि गोहत्याके चलते सरकारद्वारा प्रस्तावित गोसंवर्धन भी उसके मुर्गा-मुर्ग-संवर्धन, मत्स्य-संवर्धन और शूकर-संवर्धनकी तरह ही केवल अधिक मांसप्राप्तिके लिये ही होगा। अत: सम्पूर्ण गोवंशकी हत्यापर कानूनद्वारा प्रतिबन्ध लगे बिना गोसंवर्धनकी बात केवल धोखाधड़ी ही है।

गौ माताकी सेवा सर्वोपरि धर्म है

(ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजके सदुपदेश)

अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज महान् उच्चकोटिके अद्‌भुत विद्वान्, घोर त्यागी, तपस्वी, शास्त्रानुसार जीवन व्यतीत करनेवाले विलक्षण महापुरुष थे। आपने अपने समस्त जीवनभर बड़ी अद्भुत गोभक्ति की थी और गोरक्षामें खुल करके भाग लिया था तथा गोरक्षार्थ समस्त भारतमें घूम-घूमकर प्रचार किया था और गोरक्षार्थ नाना प्रकारके कष्ट झेले थे। आप जीवनभर गोदुग्धका पान करते रहे। आपका यह नियम था कि आप कहीं भी जा रहे हों यदि रास्तेमें पूज्य गौ माता आती या सामने खड़ी दिखलायी पड़ती थी तो झटसे उसे आप अपने सीधे हाथपर लेते थे और उसे मन-ही-मन बड़ी श्रद्धा-भक्तिके साथ प्रणाम किया करते थे। गोभक्षकोंसे स्पर्श कराना, गोभक्षकोंको देखना और गोभक्षकोंकी वायुका स्पर्श हो जाना भी बड़ा पाप मानते थे और इनसे बिलकुल दूर रहा करते थे। वे गौ माताको पूज्या, प्रातःस्मरणीया और अपने प्राणोंसे भी प्यारा समझा करते थे और गौ माताकी ओर पैर करके कभी नहीं बैठते थे तथा गोरक्षार्थ प्राण दे देना महान् परम सौभाग्य समझा करते थे।

कुछ समय पूर्व भक्त श्रीरामशरणदासजीने श्रीस्वामीजीके श्रीचरणोंमें बैठ करके गोरक्षा-सम्बन्धी जो महत्त्वपूर्ण सदुपदेश प्राप्त किये थे, संक्षेपमें उन्हें यहाँ दिया जा रहा है—

पूज्या गौ माताकी अद्भुत महिमाको समझो

प्रश्न—पूज्य महाराजजी! गौ माताकी रक्षा कैसे हो और धर्मप्राण भारतसे गोहत्याका काला कलंक कैसे मिटे?

उत्तर—गोहत्या बंद करनेकी बात करनेसे पहले पूज्या गौ माताकी अद्भुत विलक्षण महिमाको समझो और गोहत्या कैसे बंद हो फिर इसपर विचार करो तथा जो गोहत्यारे हैं अथवा जो गोहत्याके समर्थक हैं, उनसे अपना सम्बन्ध-विच्छेद करो। तभी कुछ हो सकेगा अन्यथा नहीं। परम पूज्या प्रातःस्मरणीय गौ माताकी बड़ी ही अद्भुत महिमा है। 'गौ मातामें ३३ करोड़ देवी-देवताओंका वास है'—यह कोई कपोलकल्पित बात नहीं है। गौ माताकी रक्षामें हँसते-हँसते बलिदान हो जानेपर निश्चितरूपसे बड़ी महान् उत्तम गति प्राप्त होती है। इनकी रक्षामें प्राण दे देनेवालोंको श्रीगोलोकधामकी प्राप्ति होती है, इसमें तनिक भी संदेह करनेकी आवश्यकता नहीं है। गौ माता जहाँ हमारी पूज्या है वहीं वह साक्षात् अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक परात्पर ब्रह्म भगवान् श्रीकृष्णकी भी पूज्या है और परम इष्टदेवी है। भगवान् श्रीराम-कृष्णके इस धराधामपर अवतार लेनेका एकमात्र कारण पूज्य गौ-ब्राह्मणोंकी रक्षा करना है, यह एक बिलकुल सत्य बात है। पूज्या गौ माताके बिना हिन्दू-जाति, हिन्दूधर्म, हिन्दूसभ्यता-संस्कृतिकी कभी भी रक्षा नहीं हो सकती। याद रखो—पूज्या गौ माताके कारण ही हिन्दू-जातिका अस्तित्व बचा हुआ है और हिन्दू-जाति दिखलायी पड़ रही है। यदि पूज्या गौ माता समाप्त कर दी गयी तो हिन्दू-जाति भी सदा-सर्वदाके लिये समाप्त हो जायगी, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। पूज्या गौ माताका घृत और पूज्य ब्राह्मणोंद्वारा उच्चारित वेदमन्त्र दोनों ही यज्ञमें काम आते हैं और यज्ञ हिन्दू-जातिका प्राण है।

धर्मप्राण भारतमें एक ऐसा सुन्दर समय था और ऐसा भी स्वर्णयुग था जब कि भारतके हिन्दुओंके घर-घरमें पूज्या गौ माताओंकी पूजा-आरती हुआ करती थी। साक्षात् परब्रह्म परमात्मा भी भगवान् श्रीराम-कृष्णके रूपमें अवतार लेकर आते थे और स्वयं अपने हाथोंसे उनकी सेवा-शुश्रूषा किया करते थे तथा नंगे पाँवों जंगल-जंगल जाकर गायोंको चराया करते थे और अपना गोपाल नाम रखाते थे। भारतके बड़े-बड़े चक्रवर्ती सम्राट्‌तक पूज्या प्रातःस्मरणीया गौ माताकी अपने हाथोंसे सेवा करनेमें और उनकी रक्षाके लिये हँसते-हँसते अपने प्राणतक दे देनेमें बड़े गर्व तथा महान् गौरवका अनुभव किया करते थे। घर-घरमें गोदुग्धकी

नदियाँ बहा करती थीं और पूज्य गौ माता निर्भय होकर विचरा करती थीं और सारा भारत तथा सारा हिन्दूसमाज परम गोभक्त था।

मुसलमानी कालमें जब भारतके और हिन्दू-जातिके महान् दुर्दिन आये तो मुसलमानोंने भारतमें प्रवेश किया और यहाँकी धर्म-संस्कृतिको मिटाना प्रारम्भ कर दिया। हमारे परम पवित्र देव-मन्दिर तोड़ डाले गये, पर हमने फिरसे मन्दिर बना डाले। मुसलमानोंने गौको मारना चाहा, पर हमने अपने प्राण देकर भी उसे बचा लिया। उन्होंने अत्याचार किये और बड़े-बड़े जुल्म ढाये, पर लाख प्रयत्न करनेपर भी वे हमारी श्रद्धाको, भावनाको और गौओंके प्रति श्रद्धा-विश्वासको हमारे हृदयसे, मनसे नहीं मिटा सके और हम पुनः पहले-जैसे बनकर और छाती तानकर खड़े हो गये। देशका महान् दुर्भाग्य तो तब सामने आया जब कि हिन्दुओंके अंदर ही कुछ पथभ्रष्ट मनुष्योंने समाजको दिग्भ्रमित कर डाला और गौको एक सामान्य पशुकी संज्ञा दे दी।

जबतक हिंदू गायको पूज्य और ३३ करोड़ देवी-देवताओंका दिव्य मन्दिर मानता रहा, तबतक इसके लिये मरता रहा, परंतु जब गायको उसने केवल कोरा दूध देनेवाला पशु बताकर सामने खड़ा कर दिया तब हिन्दुओंने झटसे गोरक्षासे मुँह मोड़ लिया। हमारी जिस पवित्र भावनाको औरंगजेब, महमूद गजनवी, तैमूरलंग नहीं खतम कर सके उसी परम पवित्र भावनाको, श्रद्धाको हिन्दुओंमें ही उत्पन्न होनेवाले कुछ नेताओंने अपने ही हाथों समाप्त कर डाला, इससे बढ़कर महान् घोर दुःखकी बात और क्या होगी!

गौ माताकी अद्भुत महिमा

महामहिमामयी गौ हमारी माता है। उसकी बड़ी ही अद्भुत महिमा है। वह सभी प्रकारसे पूज्य है। समस्त वेद, शास्त्र, पुराण, रामायण, भागवत, महाभारत आदि गोमाताकी महिमासे भरे पड़े हैं। गोमाताकी रक्षा और सेवासे बढ़कर कोई दूसरा महान् पुण्य नहीं है। हिंदुओंको हमारी आगे कथित बातोंपर अवश्य ही ध्यान देना चाहिये और इन बातोंका मनोयोगसे पालन करना चाहिये—

१-गोमाताको कभी भूलकर भी भैंस, बकरी आदि अन्य पशुओंकी भाँति साधारण पशु नहीं मानना चाहिये। वह सामान्य पशु नहीं है। उसके शरीरमें ३३ करोड़ देवी-देवताओंका वास है। गोमाता परब्रह्म श्रीकृष्णकी परमाराध्या है और गोमाता भवसागरसे पार लगानेवाली साक्षात् देवी है, यह मानना चाहिये।

२-हमें अपने स्थानपर गोमाताको रखना चाहिये और उसकी तन, मन, धनसे सेवा करनी चाहिये।

३-प्रातःकाल उठते ही श्रीभगवत्स्मरण करनेके पश्चात् यदि सबसे पहले गोमाताके दर्शन करनेको मिल जाय तो इसे अपना परम सौभाग्य मानना चाहिये। गोमाताका प्रातः-काल नित्य दर्शन करना चाहिये।

४-गोमाताको देखते ही बड़ी श्रद्धा-भक्तिके साथ प्रणाम करना चाहिये।

५-यदि रास्तेमें जाते समय कहीं गोमाता आती हुई दृष्टिमें पड़ जाय तो उसे अपने दाहिनेसे जाने देना चाहिये।

६-जहाँतक हो सके गोमाताका ही दूध पीना और गोघृतका प्रयोग करना चाहिये। विदेशोंसे आये डिब्बोंका दूध कभी नहीं पीना चाहिये। कोटोजम नामक नकली घी, जो बहुत चला है, उसमें सूअरकी चर्बीका प्रयोग होता है। उसे भूलकर भी कभी प्रयोगमें नहीं लाना चाहिये। गायकी और सूअरकी चर्बीसे बनाया गया साबुन कदापि काममें नहीं लेना चाहिये, बड़ा घोर पाप लगता है।

७-गोमाताको न कभी मारना चाहिये और न कभी सताना चाहिये। उन्हें किसी भी प्रकारका कष्ट नहीं देना चाहिये; नहीं तो २१ पीढ़ी घोर नरकमें जाती है।

८-गोमाताकी ओर कभी भूलकर भी न तो पैर करके बैठना चाहिये और न कभी पैर करके सोना चाहिये। गोमातासे पैरका स्पर्श कभी नहीं होना चाहिये और गोमाताके ऊपर कभी थूकना नहीं चाहिये, इससे बड़ा पाप लगता है।

९-गोमाताको घरपर रखकर कभी भूखी-प्यासी नहीं रखना चाहिये तथा उसे गर्मीकी धूपमें नहीं बाँधना चाहिये। जाड़ेके दिनोंमें उसे सर्दीमें नहीं बाँधना चाहिये। जो गायको भूखी रखता है और जो गायको प्यासी रखता है और

गायको धूपसे तथा सर्दीसे नहीं बचाता और गर्मी-सर्दीसे रक्षा नहीं करता, उसका कभी श्रेय नहीं होता है। गायको पूरा भरपेट खिलाना चाहिये और स्वच्छ पानी पिलाना चाहिये। गायकी खूब सेवा-शुश्रूषा करनी चाहिये और खूब प्रसन्न रखना चाहिये। गायें लोकमाता हैं।

१०-नित्यप्रति भोजन बनाते समय सबसे पहले गायके लिये रोटी बनानी चाहिये। गोग्रास निकालना चाहिये और गायको नित्यप्रति रोटी खिलानी चाहिये। गोग्रासका बड़ा महत्त्व है।

११-गौओंके लिये चरणि बनानी चाहिये और उसमें नित्यप्रति पवित्र ताजा ठंडा जल भरना चाहिये, जिसे पीकर गाय-बैल प्रसन्न हों और तुम्हारी २१ पीढ़ी तर जाय। यह हमारा-तुम्हारा कर्तव्य है।

१२-अनाथ गायोंके लिये अपनी ओरसे हरी-हरी घासकी गठिया मोल लेकर डाल देनी चाहिये, जिससे गायें पेट भरकर खायँ और सुखकी साँस लें।

१३-भूलकर भी कभी अपनी गाय गोभक्षकोंको नहीं बेचनी चाहिये। गायोंको यवनोंके हाथ बेचना पाप मानना चाहिये। उनकी रक्षा और पोषणका ध्यान उस समय भी रखना चाहिये।

१४-गाय उसी ब्राह्मणको दान देना चाहिये जो वास्तवमें गायको पाले और गायकी रक्षा-सेवा करे। यवनोंको और कसाईको न बेचे। अनधिकारीको गायका दान देना घोर पाप करना है।

१५-गायको कभी भूलकर भी अपनी जूठी वस्तु नहीं खिलानी-पिलानी चाहिये। गाय माता साक्षात् जगदम्बा हैं। इन्हें जूठी वस्तु खिला-पिलाकर भला कौन सुखी रह सकता है?

१६-धर्मप्राण भारतकी पूज्या गायोंको कृत्रिम गर्भाधान नहीं कराना चाहिये, यह महान् घोर पाप है और अक्षम्य अपराध है। विदेशी साँड़ जो वास्तवमें साँड़ नहीं होते और जो गाय-भैंसे आदिको मिलाकर वर्णसंकर जानवर होते हैं, उन वर्णसंकरोंके वीर्यको विदेशोंसे मँगाकर और उस वीर्यको मुर्गीके अंडेके साथ गायके गर्भाशयमें चढ़ाना तथा उस घोर पापको नस्ल-सुधार बताना घोर पाप करना है और अपनी इक्कीस पीढ़ियोंको घोर नरकोंमें ढकेलना है। भारतीय गायोंकी नस्लके सुधारके नामपर उनका नस्ल-संहार करना है। इस घोर पापसे बचना चाहिये।

१७-नित्यप्रति गायके परम पवित्र गोबरसे रसोईघरको लीपना और पूजाके स्थानको भी गोमाताके गोबरसे लीपकर शुद्ध करना चाहिये।

१८-गायके दूध, गायके घी, गायका दही, गायके गोबर और गोमूत्र—इन पाँचोंके द्वारा तैयार किये गये पञ्चगव्यके द्वारा मनुष्योंके अस्थिगत पाप भी दूर हो जाते हैं। इसलिये समय-समयपर पञ्चगव्यका सेवन करते रहना चाहिये। गायके गोबरमें लक्ष्मीजीका, गोमूत्रमें गङ्गाजीका वास है। इसके अतिरिक्त इनका दैनिक जीवनमें प्रयोग करनेसे पापोंका नाश और गोमूत्रके औषधरूपमें सेवनसे रोगाणु नष्ट होते हैं।

१९-जिस देशमें गोमाताके रक्तका एक भी बिन्दु गिरता है, उस देशमें किये गये योग, यज्ञ, जप, तप, भजन-पूजन, दान-पुण्य आदि सभी शुभ कर्म निष्फल हो जाते हैं और सब धर्म-कर्म भी व्यर्थ हो जाते हैं। आज इस धर्मप्राण भारत देशमें नित्यप्रति हजारों गौएँ काटी जाती हैं, इससे बढ़कर भला घोर पापकी पराकाष्ठा और क्या होगी? धर्मप्राण भारतसे यदि गोहत्याका काला कलंक नहीं मिटाया गया तो फिर भारतका स्वतन्त्र होना किस कामका? यदि भारत वास्तवमें स्वतन्त्र हो गया तो फिर स्वतन्त्र भारतमें यह गोहत्या क्यों? इन स्वतन्त्रताका राग अलापना कोरा धोखा देना है और कुछ नहीं है।

२०-यदि तुम नित्यप्रति गोमाताकी पूजा-आरती, परिक्रमा किया करो तो यह बहुत ही श्रेष्ठ कार्य है। पर यदि तुम नित्यप्रति ऐसा न कर सको तो वर्षमें एक बार गोपाष्टमीके दिन तो कम-से-कम अवश्य ही तुम्हें व्रत रखकर गोमाताकी श्रद्धा-प्रेमसे पूजा करनी ही चाहिये और उस दिन गोमाताकी आरती, परिक्रमा आदि करनी चाहिये एवं गोमाताको मिष्टान्नादि खिलाना चाहिये।

२१-गाय यदि बीमार हो, लँगड़ी-लूली हो गयी हो, अपाहिज हो गयी हो तो उसकी तन-मन-धनसे सदा सेवा-शुश्रूषा करनी चाहिये और उसको ओषधि देनी चाहिये तथा

उसकी देख-भाल तत्परतासे करनी चाहिये।

२२-गोरक्षार्थ यदि प्राण भी दे देने पड़ें तो सहर्ष दे देनेसे निश्चित रूपसे श्रीगोलोकधामकी प्राप्ति होती है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं करना चाहिये।

२३-गोमाता यदि किसी खड्डेमें गिर गयी हो, किसी कूएँमें गिर गयी हो अथवा किसी दलदलमें फँस गयी हो तो सब काम छोड़कर सबसे पहले गोमाताको निकालनेका और बचानेका प्राणपणसे प्रयत्न करना चाहिये। यह सबसे बड़ा योग है, यज्ञ है, जप-तप है, पूजा-पाठ है तथा दान-पुण्य है, इसे स्मरण रखना चाहिये।

२४-जो गोमाताके बछड़ोंको—बैलोंको हलोंमें जोतकर उन्हें बुरी तरहसे मारते-पीटते हैं, सताते हैं, काँटी चुभाते हैं, गाड़ीमें जोतकर उनके ऊपर उनकी सामर्थ्यसे बाहर बोझा लादते हैं, उन्हें घोर नरककी प्राप्ति होती है और उनके किये हुए दान-पुण्य सब निष्फल हो जाते हैं। ऐसा कभी नहीं करना चाहिये।

२५-जो जल पीती और घास खाती गायको हटाते हैं, वे पापके भागी बनते हैं। गायको कभी भूलकर भी यदि वह जल पी रही हो अथवा घास खा रही हो तो नहीं हटाना चाहिये।

२६-यदि तीर्थयात्रा करनेकी इच्छा हो और मन करता हो, परंतु शरीरमें बल न होनेके कारण और पासमें धन न होनेके कारण असमर्थता हो तो चिन्तित होनेकी आवश्यकता नहीं है। पूज्या गोमाताके दर्शन करो, गोमाताकी पूजा करो और सर्वतीर्थमयी गोमाताकी परिक्रमा करो। गो-माताको मधुर पक्वान्न, गुड़ या मीठी रोटी खिलाओ, इस तरह सब प्रकारसे उसकी सेवा करो। बस, घर बैठे तैंतीस करोड़ देवी-देवताओंका पूजन हो गया, कारण कि गोमातामें समस्त देवताओंका निवास है। इसलिये तुम्हें घर बैठे ही समस्त तीर्थोंकी यात्राका सुफल प्राप्त हो जायगा। यह बड़ा ही सरल और सुलभ साधन है, इसे करनेसे न चूको।

२७-जो लोग गोरक्षाके नामपर, गोशालाओंके नामपर रुपये-पैसे इकट्ठा करते हैं और उन रुपयोंको गोरक्षामें न लगाकर स्वयं ही खा जाते हैं, उनसे बढ़कर पापी और दूसरा कौन होगा। इससे बचना चाहिये। गोमाताके निमित्त आये हुए पैसोंमेंसे एक पाई भी कभी भूलसे भी अपने काममें मत लगाओ और जितना बने अपनी ओरसे गोहितमें तन-मन-धन लगाते रहो। पर गौके हकका द्रव्य और स्वत्व कभी भूलकर भी मत लो। इसीमें भलाई है। गोमाताके नामपर पैसा खानेवालोंको नरकका कीड़ा बनना पड़ता है।

तात्पर्य यह है कि भारतमें रहनेवाले प्रत्येक भारतीय और हिंदूमात्रका गोमाताकी सेवा करनेमें ही सब प्रकारसे श्रेय और कल्याण है।

गोविंदकी गैया

आठों जाम सेवामें दिलीप-से महीप रहे,
पायो पुचकार-प्यार कुँवर कन्हैयाको।
दूध-घृत-अमृत सों पोषत हमारो तनु,
जाको साँड बन्यो डाँड़ भारतकी नैयाको॥
गो-धन रखैयाहीको साँचो धनवान जानो,
नीको सनमानो धेनु-धनके चरैयाको।
गौर करो गायकी गुहारपर दौर परो,
कष्ट हरो भैया! भोरी गोविंदकी गैयाको॥

(एक स्वान्तःसुखाय)

संस्कृतिकी दृष्टिसे गौका महत्त्व

(ब्रह्मलीन योगिराज श्रीदेवराहा बाबाजी महाराजकी अमृत-वाणी)

भारतीय संस्कृतिकी दृष्टिसे गौका महत्त्व तो गायत्री और गङ्गासे भी बढ़कर है। गायत्रीकी साधनामें कठिन तपस्या अपेक्षित है। गङ्गासेवनके लिये भी कुछ त्याग करना ही पड़ता है, परंतु गौका लाभ तो घर बैठे ही मिल जाता है। दु:खकी बात यह है कि आज गौको साधारण पशु समझकर उसकी उपेक्षा की जा रही है और लोग उसका महत्त्व नहीं समझ पा रहे हैं। यदि वाक् गायत्री है, प्राण गङ्गा है तो मन गौ है। मनकी शुद्धिके बिना न तो कोई साधना हो सकती है और न भौतिक उपलब्धिका सुख ही प्राप्त हो सकता है। मनुष्यकी सम्पूर्ण क्रियाओंका मूल मन है और गौ मनकी शुद्धिका मूल हेतु है। मानव-जीवनसे पशु-जगत्‌का यों भी घनिष्ठ सम्बन्ध है, फिर दिव्य पशु तो मानव-जीवनकी आधारशिला है। वेदमें सामान्य और दिव्य पशुओंका पर्याप्त विवेचन हुआ है। गौ और गौकी संतान दोनों ही दिव्य पशु हैं।

ऋग्वेदमें गौको वृषभ कहा गया है। वृषभ गौका ही पुँल्लिङ्ग-रूप है। वेदमें सबसे अधिक वर्णन गौका हुआ है। जिस प्रकार गायत्री और गङ्गा प्रतीक और स्थूल दोनों ही रूपोंमें विश्व-विज्ञान और मानव-जीवनका प्रतिनिधित्व करती हैं, उसी प्रकार गौका भी महत्त्व है। उषाकी रश्मियोंको गौके ही रूपमें चित्रित किया गया है। मेघका भी गौके रूपमें मूर्तीकरण हुआ है। मेघ-रूप गौसे ही विद्युत्-रूप बछड़ेका जन्म होता है। बड़े-बड़े सुन्दर रूपकों और उपमानोंसे वेदमें गौकी महिमा गायी गयी है। अथर्ववेदमें लिखा है—'**विश्वरूपा धेनुः कामदुघा मेऽस्तु**' (४। ३४। ८)। भारतीय संस्कृति कर्म-प्रधान है। यज्ञ भी कर्मका ही एक रूप है। जिस प्रकार यज्ञचक्र गौके बिना सम्भव नहीं, उसी प्रकार कर्मचक्रको भी सुन्दर, सुखद और अनुकूल बनानेके लिये गौकी आवश्यकता है। गौके पाँचों गव्योंका उपयोग जिस प्रकार यज्ञमें होता है उसी प्रकार मानव-जीवनमें भी पञ्चगव्यका बहुत उपयोग है। वेदमें गौकी इतनी महिमा है कि देवताओंकी माता अदितिको 'धेनु' कहा गया है और देवताओंको गोजात बताया गया है। यत्र-तत्र गौके दूध और घीकी आहुतिको 'इडा' कहा गया है। वाजसनेयी संहितामें गौको चित्, मन, धी तथा दक्षिणा आदि अनेक नामोंसे अभिहित किया गया है और उसे हर प्रकारसे पूज्य माना गया है—

चिदसि मनासि धीरसि दक्षिणासि क्षत्रियासि यज्ञियास्यादितिरस्युभयतः शीर्ष्णी। सा नः सुप्राची सुप्रतीच्येधि मित्रस्त्वा यदि बध्नीतां पूषाध्वनस्पात्विन्द्रायाध्यक्षाय॥ अनु त्वा माता मन्यतामनु पिताऽनु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः। सा देवि देवमच्छेहीन्द्राय सोमं रुद्रस्त्वा वर्त्तयतु स्वस्ति सोमसखा पुनरेहि॥ (यजुर्वेद ४। १९-२०)

अर्थात् 'हे सोमक्रयणी गौ! तुम चिदात्मा हो, बुद्धिस्वरूपा हो, मनःस्वरूपा हो, दक्षिणारूप हो, दाताकी कष्टसे रक्षा करनेवाली हो, यज्ञसम्बन्धिनी होनेसे यज्ञके योग्य हो, देवमाता अदितिस्वरूपा हो, पृथ्वी और स्वर्ग दोनों ओर सिर रखनेवाली, अर्थात् दिव्य और भौम भोगोंको देनेवाली हो। तुम हमारे लिये पूर्वमुखी, पश्चिममुखी होओ। सूर्य दक्षिण पादसे तुमको बाँधे। पूषा देवता यज्ञके स्वामी इन्द्र देवताकी प्रसन्नताके लिये मार्गमें तुम्हारी रक्षा करें। हे वाणीरूपी गौ! सोम लानेमें प्रवृत्त तुमको तुम्हारी पृथ्वी माता आज्ञा दे, स्वर्ग पिता आज्ञा दे, सहोदर भाई ईश आज्ञा दे, एक यूथ (समूह) में प्रकट होनेवाला आत्मप्रतिबिम्ब सखा आज्ञा दे। हे दिव्यगुणयुक्त सोमक्रयणि! तुम इन्द्रके लिये सोमलता लानेको जाओ। रुद्र देवता तुमको पुनः हमारी तरफ लौटावें, सोमको लेकर तुम क्षेमपूर्वक फिर हमारे पास आ जाओ। (इन मन्त्रोंद्वारा वाणीरूपी गौकी स्तुति की गयी है।)'

अथर्ववेदमें तो '**रूपायाघ्न्ये ते नमः**' कहकर गौकी देववत् पूजाका विधान है। ऋग्वेदमें उस स्थलको भी परम पवित्र माना गया है जहाँ गाय निवास करती है। सभी प्रमुख स्मृतियों और पुराणोंमें गौकी महिमाका गान है। यह सब प्रशस्ति किसी कारण-विशेषसे की गयी है और इसमें कारण-विशेष यही था कि मानव-जीवनमें गौसे बढ़कर कोई दूसरा पदार्थ नहीं है। गौकी महिमाका सबसे अधिक वर्णन महाभारतके अनुशासनपर्वमें हुआ है। श्रुतिको उद्धृत करते हुए भीष्म कहते हैं—

गौर्मे माता वृषभः पिता मे
दिवं शर्म जगती मे प्रतिष्ठा।

(महाभा०, अनु० ७६ । ७)

ऊर्जस्विन्य ऊर्जमेधाश्च यज्ञे
गर्भोऽमृतस्य जगतोऽस्य प्रतिष्ठा।
क्षिते रोहः प्रवहः शश्वदेव
प्राजापत्याः सर्वमित्यर्थवादः॥

(महाभा०, अनु० ६ । १०)

गायत्री और गङ्गाकी भाँति गौका सम्बन्ध सूर्य और चन्द्रमासे है—इसलिये सौर्य और सौम्य विशेषण गौके लिये प्रयुक्त हुए हैं तथा उशीनरसे लेकर चक्रवर्ती दिलीपतकके गो-प्रेमका वर्णन पुराणों एवं महाभारतमें हुआ है। वेदमें सूर्यकी एक प्रमुख किरणका नाम कपिला है। इसलिये महाभारतमें कपिला गौकी बहुत प्रशंसा की गयी है। यज्ञमें जिस सोमकी चर्चा है वह कपिलासे ही प्राप्त होता है—'**यज्ञैराप्यायते सोमः स च गोषु प्रतिष्ठितः।**' कपिला गौकी उत्पत्ति और स्वरूपका विवेचन महाभारतमें हुआ है। महाभारतकार कहते हैं—

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत्॥
गावो भूतं च भव्यं च गावः पुष्टिः सनातनी।
गावो लक्ष्म्यास्तथा मूलं गोषु दत्तं न नश्यति॥
अन्नं हि परमं गावो देवानां परमं हविः।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ॥
गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।

(महाभा०, अनु० ७८ । ५—८)

दूध, घी और दहीके अतिरिक्त गौका मूत्र और गोबर भी इतने उपयोगी माने गये हैं कि महाभारतमें स्पष्ट कहा गया है कि '**गवां मूत्रपुरीषस्य नोद्विजेत कदाचन।**' फिर आगे लिखा है—'**गोमयेन सदा स्नायाद् गोकरीषे च संविशेत।**' धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंकी सिद्धि गौसे सम्भव है—

गावो महार्थाः पुण्याश्च तारयन्ति च मानवान्।
धारयन्ति प्रजाश्चेमा हविषा पयसा तथा॥
गाश्च शुश्रूषते यश्च समन्वेति च सर्वशः।
तस्मै तुष्टाः प्रयच्छन्ति वरानपि सुदुर्लभान्॥
द्रुह्येन्न मनसा वापि गोषु नित्यं सुखप्रदः।
अर्चयेत सदा चैव नमस्कारैश्च पूजयेत्॥

(महा०, अनु० ८१ । २, ३३-३४)

गौका गोबर श्रीयुक्त होता है, इसकी बड़ी सुन्दर आख्या, अनुशासनपर्वके ८१ वें अध्यायमें आती है। गौकी कृषिके लिये उपयोगिताका उल्लेख भी महाभारतमें है—

धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा।
एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते॥
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च।
ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः॥

(अनुशा० ८३ । १७-१८)

गौके सम्बन्धमें एक विशेष बात लक्ष्य करनेकी यह भी है कि पृथिवीके अर्थमें भी 'गौ' शब्दका प्रयोग अनेक बार हुआ है। इसी प्रकार 'गौ' शब्दका अर्थ इन्द्रिय भी है। इसलिये गो-तत्त्वका विचार पृथिवी और इन्द्रियोंके सम्बन्धसे किया जाता है। किसी इन्द्रियवान् प्राणीका जीवन-तत्त्व पित्त है—यह तथ्य प्रायः सभी ओषधि-विज्ञानोंमें मान्य है। इसी प्रकार पृथिवीका मूलाधार तत्त्व सुवर्ण है, जिसे वेदमें पृथिवीका पित्त बताया गया है। सुवर्ण वास्तवमें पृथिवीका अग्नितत्त्व है और पित्त प्राणिशरीरका अग्नितत्त्व है—'**अग्निर्हि देवताः सर्वाः सुवर्णश्च तदात्मकम्।**' स्वर्णके कारण ही पृथ्वी वसुमती कहलाती है। पौराणिक आख्यानके रूपमें स्वर्णको गङ्गाके माध्यमसे अग्निपुत्र बताया गया है। गौके संदर्भमें इस रहस्यको भलीभाँति समझा जा सकता है। विज्ञानके प्रयोगोंसे यह सिद्ध किया गया है कि पञ्चगव्यमें जितनी पित्तकी मात्रा है—उतनी किसी दूसरे पदार्थमें उपलब्ध नहीं है। पृथिवीके कण-कणमें व्याप्त स्वर्ण सर्वसुलभ नहीं है। इसी प्रकार गाङ्गेय स्वर्ण प्राप्त करनेके लिये भी श्रम और साधना आवश्यक है। परंतु साक्षात् शरीरी वसुमती गौ मातासे पित्तरूपी स्वर्ण सहज ही प्राप्त किया जा सकता है। मानव-जीवनके लिये गौकी उपयोगिताका इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है?

अतः मानवमात्रको गौकी महिमा-महत्तापर ध्यान रखते हुए उसकी प्राणपणसे सेवा करनी चाहिये। गौ सर्वपूज्या है तथा सर्वसेव्या है। [प्रेषक—श्रीमदनशर्माजी शास्त्री]

स्वराज्य एवं गो-रक्षा

(गोलोकवासी संत पूज्यपाद श्रीप्रभुदत्त ब्रह्मचारीजी महाराज)

गोहत्या जहँ होहि तहाँ शुभ करम न होवे।
गोहत्यातें मनुज सकल पुन्यादिक खोवे॥
गोतन-मन्दिर माहिं बसैं सुरगन मिलि सबई।
गोमाता तन कटै भगें सुर तहँते तबई॥
गोहत्या करि जगतमहँ, यश कोई नहिं पाइयो।
गोहत्या जिहि राजमहँ, होवै सो मिटि जाइयो॥

आज गोरक्षाका प्रश्न एक आवश्यक विचारणीय प्रश्न बन गया है। आज ही नहीं, यह प्रश्न सनातन है, गो हमारी दृष्टिमें पशु नहीं वह पृथ्वी माता भू देवीका प्रतीक है। भू माताकी पूजा हम गौके ही रूपमें करते हैं। भूमिपर जब-जब भी विपत्ति पड़ी, तब-तब वह गौका रूप बनाकर भगवान्‌के निकट गयी। गौ हमारे इहलोक और परलोकके आहारकी अधिष्ठात्री देवी है। हमें इस लोकमें भोजन और परलोकमें पुण्य गोमाताकी ही कृपासे प्राप्त होता है। गौ स्वयं तृण खाकर दूध देती है, जिससे अनेक स्वादिष्ट, पौष्टिक पदार्थ बनते हैं, गौओंके बच्चे बैल खेती करके हमें खाद्यान्न देते हैं। इस प्रकार रोटी, दाल, भात और साग तो हमें गौ माताके पुत्र बछड़ोंसे ही मिलता है। और दूध, दही, घी, मक्खन तथा खोयाके अनेक पदार्थ प्रत्यक्ष गौ मातासे मिलते हैं। यह तो इस लोककी बात हुई। अब परलोककी सुन लीजिये।

गर्भाधान-संस्कारसे लेकर दाह-संस्कारतक ऐसा एक भी संस्कार नहीं जिनमें गोदानकी आवश्यकता न पड़ती हो। हम हिन्दुओंका विश्वास है कि मरनेपर जो वैतरणी नदी पार करनी पड़ती है वह गौकी पूँछ पकड़कर ही पार की जा सकती है। अत: प्रत्येक धर्मप्राण हिन्दू मरते समय अब भी कम-से-कम एक गौका दान तो करता ही है। इस प्रकार गौ इस लोकमें भी हमारा उपकार करती है और मरनेपर हमें वैतरणीसे भी पार करती है। ऐसी गौको जो मारता है, वह अपने इहलोक तथा परलोकके समस्त सुकृतों-पुण्यकर्मोंको नष्ट करता है। जिस राज्यमें गौका वध होता है, वह राज्य आध्यात्मिकतासे दूर हटता जाता है, वहाँके निवासियोंको मानसिक शान्ति नहीं होती, वे आध्यात्मिकतासे हीन, अशान्त, संशयालु तथा भोगी होते हैं। जो राष्ट्र गौरक्षामें प्रमाद करता है, वह इस संसारमें यश और श्रीसे हीन हो जाता है।

भारतने गौके महत्त्वको आजसे नहीं, अनादि कालसे समझा है। वेदोंमें, उपनिषदोंमें, पुराणोंमें सर्वत्र गौकी ही महिमा गायी गयी है। जबतक भारतीय शासन रहा, तबतक गोवध हत्याके समान अपराध माना जाता था। जब विधर्मी विदेशी आततायी आक्रमणकारी लोगोंने इस देशपर आक्रमण किये, तब उन्होंने हिन्दूधर्मको नष्ट करनेके अनेक उपाय किये। जैसे यहाँके धार्मिक ग्रन्थोंको जलवा देना, मन्दिरोंको तोड़ना, बलपूर्वक लोगोंका धर्म-परिवर्तन कर लेना इत्यादि। उन्होंने केवल हिन्दुओंकी धार्मिक भावनापर आक्रमण करनेके लिये गौका वध करना आरम्भ कर दिया। पीछे जब वे यहाँ बस गये और इसी देशके हो गये तो उनमेंसे अनेक राजाओंने राजाज्ञा निकालकर गोवध बंद कराया था, जिनमें हमायूँ, अकबर, बहादुरशाह तथा अन्य कई राजाओंका नाम विशेष उल्लेखनीय है, इसके अनन्तर मराठा तथा सिक्खोंका राज्य हुआ, ये राजा तो केवल गो-ब्राह्मणके रक्षार्थ ही उदय हुए थे, इनके राज्यमें तो सर्वथा गोवध बंद था ही।

अँगरेजोंने हिन्दुत्वको मिटानेका प्रयत्न तो किया, किंतु बहुत छिपकर शनैः-शनैः किया। अँगरेजी राज्यमें गोवध होता था, किंतु नियमित संख्यामें नियमके भीतर होता था। इसे मिटानेके लिये आरम्भसे ही बड़े-बड़े प्रयत्न किये गये। लोकमान्य तिलक, महामना मालवीयजी, महात्मा गाँधी, स्वामी हासानन्दजी आदि महानुभावोंने गोहत्या रोकनेके बहुत प्रयत्न किये। काँग्रेसके साथ 'गोरक्षा-सम्मेलन' होते थे, महात्मा गाँधीजीने खिलाफतके आन्दोलनमें सहयोग देते हुए कहा था कि 'मैं मुसलमानोंके इस आन्दोलनमें इसलिये सहयोग देता हूँ कि वे मेरी गौकी रक्षा करें।' उन दिनों प्राय: सभी मुसलमानोंके मौलवीयोंने व्यवस्था दी थी कि गोवध करना इस्लाम-धर्ममें आवश्यक नहीं। उन दिनों सभी मुसलमान नेता गोरक्षाका समर्थन करते थे। काँग्रेसी नेता तो यहाँतक कहा करते थे कि विदेशी वस्त्रोंको इसलिये मत पहिनो कि इनमें गौकी चरबी लगती है। कुछ तो यहाँतक कहते थे कि अँगरेजोंसे इसलिये असहयोग करना चाहिये

कि ये गोहत्या कराते हैं। उन दिनों काँग्रेसी नेताओंकी गोभक्ति और गोरक्षाके विचारोंको सुनकर सभीको पूर्ण विश्वास था कि जिस दिन स्वराज्यकी घोषणा होगी, उसी दिन गोहत्या-बंदीकी भी घोषणा हो जायगी। लोग कहा भी करते थे कि गोवध-बंदीकी बातें अभी क्यों करते हो, हत्याकी जड़ तो ये अँगरेज हैं, जिस दिन ये अँगरेज चले जायँगे, उस दिन एक लेखनीकी नोकसे गोवध बंद जो जायगा।

भगवान्ने वह दिन दिखाया, स्वराज्य हो गया, अँगरेज भारतसे चले गये, हमें आशा थी अब गोवध बंद हो ही जायगा। इसलिये सरकारके पास इतने तार और पत्र आये कि उनकी गणना ही नहीं हो सकी, केवल उनकी तौल की गयी। छ: दिनतक पोस्ट आफिसमें इतने अधिक तार आये कि उन्हें लेना कठिन हो गया।

तब तो शासकोंकी आँखें खुलीं, उन्होंने कहा—'हम गोरक्षाके लिये एक समिति बनाते हैं। तुम आन्दोलन मत करो। उस समितिमें हम गोरक्षाके समर्थकोंको रखेंगे।' समिति बनी, उसमें ६ सरकारी और ७ अ-सरकारी आदमी रखे गये। उस समितिने सुझाव दिया कि दो वर्षमें सर्वथा गोवध बंद कर दिया जाय। उपयोगी पशुओंका वध तो तत्काल बंद हो और दो वर्षमें बूढ़ी, टेढ़ी, लूली, लँगड़ी गौओंके लिये गो-सदन बनें।

समिति सरकारने ही स्थापित की थी, अत: उसके सुझाव माननेको सरकार बाध्य थी, इसलिये सबको विश्वास हो गया कि दो वर्षमें यह गोवध-रूपी भारतके भालका कलंक अवश्य ही दूर हो जायगा। सब निश्चिन्त थे, आन्दोलन करनेकी आवश्यकता ही नहीं समझी। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, सरकारकी कूटनीति आगे आने लगी। अन्तमें सरकारने सभी प्रान्तीय सरकारोंके पास एक गुप्त परिपत्र भेजा। आन्दोलनके समय भारतीय संविधानमें एक धारा स्वीकार की गयी थी, जिसमें स्पष्ट स्वीकार किया गया था कि सभी प्रकारकी गौओंका वध रोकना भारत सरकारकी नीति होगी। जब आन्दोलन ढीला हो गया तो सरकारने प्रान्तीय सरकारोंको आदेश दिया कि उस धाराका अर्थ उपयोगी गौके वधोंको रोकनेसे है, अत: पूर्ण गोवध बंद न किया जाय। जहाँ बंद कर दिया हो, वहाँ उसपर पुन: विचार हो। उससे स्पष्ट हो गया कि सरकार गौओंको काटनेके पक्षमें है। ऐसा भी मत व्यक्त किया गया कि १०० मेंसे ६० दुबली गौएँ अनुपयोगी हैं। अनुपयोगीका अर्थ कम दूध देनेवाली, पतली, लूली, लँगड़ी, बूढ़ी, छोटी और न जाने क्या?

हमारे पश्चिमी सभ्यतामें पले हुए नेताओंका सुझाव था कि लोगोंके खानेकी आदतोंमें परिवर्तन करके धार्मिक क्रान्ति करके फालतू गोवंशको कटवा दिया जाय। उनके मांसके उपयोगसे अन्नकी बचत होगी; उनके चर्म, हड्डी, आँतें, सींग आदिको बेचकर विदेशी डालर कमाये जायँ।

इस सब बातोंको सुनकर हमारी आँखें खुलीं कि सरकार गोवध बंद न करानेके लिये कटिबद्ध है।

आज स्वराज्यको हुए इतना समय हो गया। गोवधको रोकना तो दूर रहा, उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। बंबई सरकार तो सबसे अधिक बढ़ गयी। उसने कसाईखानोंकी उन्नति कैसे हो, इसके लिये एक समितितक बना डाली।

सरकारको गोवध-बंदीके नामसे चिढ़ है। इसका कहना है, गोरक्षा न कहकर गोसंवर्धन कहो। अर्थात् गौओंका पालन करो, उनका दूध बढ़ाओ, उनकी जाति सुधारो, वंश-वृद्धि करो, अनुपयोगी गौओंको कटा दो। अर्थात् जो करना हो सब तुम्हीं करो, सरकार तो गौ काटनेका ही काम करेगी। गौओंमें उपयोगी-अनुपयोगीका भेद करके लोगोंमें भाँति-भाँतिके भ्रम फैलाये जाते हैं। लोगोंको उलटी-सीधी बातें बताकर पथ-भ्रष्ट किया जाता है, अनेक शंकाएँ उठाकर गोवधका अप्रत्यक्ष रीतिसे समर्थन किया जाता है। यहाँपर हमें उन्हीं सब शंकाओंका समाधान करना है—

१-पहली बात तो यह कही जाती है कि गोवध-बंदीके लिये 'नियम' बनानेकी क्या आवश्यकता है? कसाइयोंको गौएँ तो हिन्दू ही बेचते हैं। हिन्दू कसाइयोंको गौएँ देना बंद कर दें तो अपने-आप गोहत्या बंद हो जायगी। लोगोंको समझाओ कि घर-घर गौ रखें, कसाइयोंके हाथ गौ न बेचें।

हम कहते हैं—यदि समझानेसे ही माननेवाले हों तो आप एक-एक उपदेशक रख दें। लोगोंको शिक्षा दें, कोई लड़ाई न करें, चोरी न करें, नियम-भङ्ग न करें, सबका भाग दे दें। फिर फौज, पुलिस, न्यायालय—इन सबको समाप्त कर देना चाहिये। नियम तो उन्हीं लोगोंके लिये होता है, जो उस नियमके भयसे अपराध न करें। जब

चोरी, जारी, लड़ाई सबके लिये नियम है तो गो-हत्या न करनेका नियम क्यों न हो?

२-कुछ लोग कहते हैं गौ तो पशु है, उसको मारनेपर दण्डकी क्या आवश्यकता?

—हम तो गौको पशु नहीं मानते हैं। हम तो गौको माता कहते हैं। भारतीय संस्कृतिमें गौको देवता माना गया है। हम लोग प्रतीक-उपासक हैं। जैसे सभी जानते हैं—मन्दिरोंकी प्रतिमाएँ पाषाणकी होती हैं किंतु हम उनमें देवत्वकी भावना करते हैं। भारतीय दण्ड-विधानमें एक नियम है जो मूर्तिको कोई दूसरे पाषाणसे तोड़ देता है तो उसे दण्ड इसीलिये दिया जाता है कि उसने मूर्ति-पूजाकी भावनाको ठेस पहुँचायी। जब पाषाणकी मूर्तिको न तोड़नेका नियम है तो जिस गौमें हम तैंतीस कोटि देवताओंका वास मानते हैं, उसे जो छुरीसे काटकर हमारी भावनाओंपर आघात करता है तो उसे दण्ड क्यों न दिया जाय? उनके लिये नियम-कानून क्यों न बनाया जाय?

३-कुछ लोग कहते हैं—हमारे घरकी गौ है, हम उसे काटते हैं, इसमें दूसरोंका क्या है, इसके लिये कानून बनानेकी क्या आवश्यकता? हम कहते हैं, माताके पेटमें उसीका बच्चा है। उसे वह पैदा होते ही मार देती है तो उसे दण्ड क्यों दिया जाता है? हम स्वतन्त्र हैं आत्महत्या करनेके लिये, किंतु जो आत्महत्या करता है या करनेका प्रयत्न करता है तो उसे दण्ड क्यों दिया जाता है? जब हम स्त्री, पुत्र, भाई, बन्धु तथा अपने-आपकी हत्या करनेमें स्वतन्त्र नहीं, तो गौ जो हमारी सदासे पूजनीय है उसके मारनेमें क्यों स्वतन्त्र हो सकते हैं? तब इनके वधपर प्रतिबन्ध होना चाहिये।

४-कुछ लोग कहते हैं, ये सब भावुकताकी बातें हैं, तर्कसे ये बातें सिद्ध नहीं होतीं। पशुने जबतक दूध दिया, कामका रहा, बच्चा पाला-पोसा तबतक तो ठीक है किंतु जब अनुपयोगी हुआ उसे मारकर उसकी हड्डी, चर्म, आँत आदिका उपयोग करो।

हम कहते हैं कि भावनाके बिना तो कोई काम होता नहीं। राष्ट्रिय ध्वजमें भावनाके अतिरिक्त और क्या है! भावना निकाल देनेपर वस्त्रका टुकड़ा मात्र है। महापुरुषोंकी समाधियोंपर पुष्प क्यों चढ़ाते हैं। मन्दिरोंमें भावना ही तो है, अपने स्वजनोंकी भस्मको इतना व्यय करके त्रिवेणीमें ले जाते हैं, इसमें भावना ही तो है। भावनाके बिना मानवता नहीं, गौके प्रति हमारी भावना ही है। वह भावना सौ दो सौ या हजारों-लाखोंकी नहीं, अपितु करोड़ों-करोड़ हिन्दुओंकी भावना है, प्रजातन्त्रीय सरकारको इतने लोगोंकी भावनाकी रक्षा करनी ही पड़ेगी।

५-कुछ लोग कहते हैं कि यदि बूढ़ी, टेढ़ी, गौएँ काटी न भी जायँ तो वे मारी-मारी फिरेंगी, हरे-भरे अन्नके खेतोंको खा जायँगी, अन्न और चारेको बरबाद करेंगी, अतः ऐसी गौकी रक्षाका आग्रह व्यर्थ है।

हम कहते हैं—यह लोगोंका भ्रम है। जहाँ भी नियमसे गोवध बंद है, वहाँ ऐसी कोई समस्या नहीं, अतः यह कल्पना निर्मूल है। जो किसान पशु रखता है, वह दो बूढ़े भी रख सकता है। यदि ऐसे कुछ पशु हों भी तो उनका पालन करना सरकारका कर्तव्य है। सरकार उसके लिये गोसदन बनवाये।

६-कुछ लोग कहते हैं—पहले अनुपयोगी पशुओंके लिये गोसदन बनवाओ, गोचरभूमि छुड़वाओ, जब उनका प्रबन्ध हो जाय तभी कानून बनानेकी बात करो, इसके पहले करोगे तो अनुपयोगी पशु कहाँ जायँगे।

हम कहते हैं—गौ तो कभी अनुपयोगी होती ही नहीं। वह दूध और बच्चे न भी दे, तो उसके गोबर-मूत्रसे ही इतनी आय हो सकती है कि उतना चारा वह खा भी नहीं सकती। पहले प्रबन्ध करके गोवध-बंदीका नियम बनावें तो कभी हो ही नहीं सकता '**न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी**'। अँगरेज भी तो यही कहते थे कि पहले स्वराज्यकी योग्यता प्राप्त कर लो तब स्वराज्य माँगो। यदि योग्यताकी कसौटी उन्हींपर छोड़ दी जाती तब तो भारत कभी स्वतन्त्र होता ही नहीं। पहले गोवध-बंदीका नियम बनाओ, फिर जो-जो असुविधाएँ आवें उनके निवारणका प्रयत्न करो।

७-कुछ लोग कहते हैं—'गौओंको इतना उपयोगी बना लो कि उन्हें काटनेका साहस ही न हो। विदेशोंमें गौ मन-मन भर दूध देती हैं। ऐसी गौएँ यहाँ हो जायँ तो उन्हें कौन काटेगा?'

हम विदेशी लोगोंकी भाँति गौका पालन नहीं करते। दूसरे देशोंमें गौ केवल दूधके लिये पाली जाती है। उसके बछड़े तो खानेके ही काममें आते हैं। खेती वहाँ घोड़ोंसे या ट्रैक्टर आदि अन्य साधनोंसे होती है। किंतु हमारे

पूर्वजोंने एक गौसे ही दोनों काम ले लिये। गौका दूध पीओ, उसके बच्चे बैलसे खेती करके अन्न उपजाओ। विदेशोंमें बछड़ोंको, बूढ़ी गौओंको तथा कम दूध देनेवालियोंको मारकर खा जाते हैं। केवल दूधके ही लिये जो गौ पाली जाती है उसके बछड़े खेतीके सर्वथा अनुपयोगी होते हैं। हमें तो गौसे दूध भी लेना है, उसके बछड़ोंसे खेती भी करनी है, अपनी भावनाकी रक्षा भी करनी है। यह तभी सम्भव होगा जब गोवध-बंदीका राजनियम बन जाय। रही उपयोगी-अनुपयोगीकी बात? सो कसाईको सबसे अधिक आय हृष्ट-पुष्ट युवती गौके वधसे होता है, हरियाने आदिसे अच्छी-से-अच्छी दूध देनेवाली गौको कलकत्ते ले जाते हैं। जबतक वह दूध देती है, तबतक ग्वाला उसे रखता है। जिस दिन दूध देना बंद करती है उसी दिन उसे निकालनेकी चिन्ता करता है, कलकत्ते-जैसे बड़े नगरमें ऐसी दूध न देनेवाली गौको रखनेका न स्थान है, न ग्वाला वर्षभर उसे खिलाकर उसके अगले ब्यानतक प्रतीक्षा कर सकता है। कसाई उसके यहाँ आता है, एक दूधकी गौ देकर दो बिना दूधकी गौ उससे ले जाता है। इसलिये जबतक नियम, कानून नहीं बनता, तबतक न गोसंवर्धन हो सकता है, न गोवंशकी वृद्धि हो सकती है, न जाति-सुधार तथा दुग्धोन्नति हो सकती है।

८-कुछ लोग कहते हैं—यदि गौओंका वध बंद कर दिया गया तो चर्मका अभाव हो जायगा।

यह विचार करनेकी बात है, गौ तो एक ही बार मरेगी, एक बार ही चर्म देगी, उसे छूरीसे काटकर चर्म ले लो या अपनी मौतसे मरनेके अनन्तर ले लो। मरे हुए पशुओंके चर्मसे ही सब काम चलते थे और उन्हींके जूते आदि सब व्यवहारमें लाते थे। जितनी गौएँ हैं एक दिन सब मरेंगी, उनके चर्म तुम्हें मिलेंगे ही।

इसपर कुछ लोग कहते हैं कि काटे हुए पशुका चर्म कोमल होता है, मरे हुए पशुका अत्यन्त कठोर होता है, उसके कोमल जूते, बैग आदि न बन सकेंगे।

हमारा कहना है कि जिस विज्ञानने अणुबम-जैसी वस्तुका आविष्कार कर लिया, क्या वह ऐसी कोई ओषधिका आविष्कार नहीं कर सकता जिससे मृतका चर्म कोमल हो जाय, मैंने सुना है जर्मनीमें ऐसे चर्मको मुलामय बनानेके लिये कार्यालय हैं। हम कहते हैं न हो कोमल चर्म, कठिनतासे ही काम चलाया जाय, या कागद-गत्ता अथवा प्लास्टिककी वस्तुओंसे काम चले, किंतु चर्म कोमल हो, इसलिये गौ माताके गलेपर छुरी चले यह उचित नहीं।

९-कुछ लोग कहते हैं जो गौएँ इधर-उधर फिरती रहती हैं अन्न और बाजारके सामानको बिगाड़ती हैं, जहाँ जाती हैं वहाँ मार खाती हैं, भूखों मर जाती हैं, इससे अच्छा यही है कि एक दिनमें उन्हें काटकर उनका भी दु:ख दूर कर दिया जाय और उनके कोमल चर्म, मांस, हड्डी, नस, आँत, सींग आदिसे आय बढ़ायी जाय।

यदि गोवधपर प्रतिबन्ध लग जाय और स्थान-स्थानपर गोसदन खुल जायँ तो ऐसी गौएँ कहीं मिलेंगी ही नहीं। मान लो ऐसी गौएँ भी हों और वे भूखों मरती भी हों, तो मैं यह अच्छा समझूँगा कि वे भूखों अपनी मौतसे तो भले ही मरें किंतु वे कसाईकी छुरीसे न कटें।

१०-कुछ लोग कहते हैं—केवल गोवध न करनेका नियम बनानेसे ही काम न चलेगा। यदि ऐसी ही दशा रही तो फिर कसाईखानेमें तो गौ कटेंगी नहीं, घरोंमें लुक-छिपकर और भी अधिक गोवध होगा, इसलिये कानून बनाना व्यर्थ है।

हम कहते हैं, लोग लुक-छिपकर चोरी करते हैं। लोगोंको ठगते हैं। फिर चोरी करनेपर दण्ड देनेके नियम क्यों बने हैं? लुक-छिपकर जो गोवध करे उसे कड़े-से-कड़ा दण्ड देना सरकारका धर्म है। जो सरकार इतनी निर्बल हो कि अपने नियमका दृढ़तासे पालन नहीं करा सकती उसे शासन करनेका क्या अधिकार है? फिर नियममें अपवाद हो ही जाता है। बिना नियम गोवध बंद हो ही नहीं सकता।

११-कुछ लोग कहते हैं—कुछ जातियोंमें गोवध करना धर्म है। हमारी सरकार धर्म-निरपेक्ष है, वह दूसरेके धर्ममें कैसे हस्तक्षेप कर सकती है। ऐसा नियम बनानेसे उसकी अन्ताराष्ट्रिय ख्याति नष्ट होगी। इसीलिये गोवध-बंदीका नियम बनाना सरकारके नीतिके विरुद्ध है।

जहाँतक मुसलमान और ईसाइयोंके धर्मग्रन्थोंमें हमने सुना है, किसीके यहाँ गोवध करना धर्म नहीं, आवश्यक नहीं। आसाम प्रान्तकी कुछ जातियाँ ऐसी बतायी जाती थीं, किंतु हमने आसाममें स्वयं जाकर देखा वहाँ कोई भी ऐसी

जाति नहीं जिसके यहाँ गोवध करना धर्म हो। इसके विरुद्ध हिन्दुओंके यहाँ गौका वध न करना धर्म है, उनके जीवन-मरणका प्रश्न है, उनकी संस्कृति तथा परस्पर रक्षाका प्रश्न है, तो ऐसी दशामें गोवध कराते रहना हिन्दुओंके धर्ममें प्रत्यक्ष आघात करना है, सरकारकी धर्मनिरपेक्षताकी नीति स्वयं ही नष्ट होती है। करोड़ों-करोड़ हिन्दुओंकी धर्म-भावनापर आघात पहुँचाना क्या यही धर्म-निरपेक्षता है? यह तो धर्मद्वेषता है।

१२-कुछ लोग कहते हैं कि राज्यमें बहुतसे लोग नहीं चाहते कि गोवध-बंदीका कानून बने तो उनके भावोंके विरुद्ध कानून सरकार कैसे बनावे?

हम कहते हैं, बहुतसे लोग तो मद्यनिषेध-नियम बनानेके विरुद्ध हैं और बहुतसे लोग और भी न जाने किस-किस बातके विरुद्ध हैं फिर सरकार इनके लिये नियम क्यों बनाती है, गोवधके पक्षमें तो बहुत ही कम लोग होंगे।

१३-कुछ लोग कहते हैं यह प्रश्न तो प्रान्तोंका है, प्रान्तीय सरकार चाहे तो अपने यहाँ नियम बना ले, केन्द्रीय सरकारको नियम बनानेकी क्या आवश्यकता है?

प्रान्तीय सभी सरकारें नियम बना लें, तब तो गोवध बंद हो ही जायगा, किंतु प्रान्तीय सरकारोंको तो केन्द्रीय सरकार बाध्य करती रहती है, तुम सर्वथा गोवध-बंदीका नियम मत बनाओ। मान लो उन्हें केन्द्रीय सरकार स्वतन्त्रता भी दे दे और उनमेंसे एक-दो भी नियम न बनावे तो सब व्यर्थ है। क्योंकि जो उत्तरप्रदेशमें न कटी, बंबई या मद्रासमें जाकर कट गयी। गौकी रक्षा तो इससे नहीं हुई। इसलिये जबतक केन्द्रीय सरकार नियम बनाकर सम्पूर्ण देशमें गोवध-बंदीका आदेश नहीं देगी तबतक गौकी रक्षा नहीं हो सकती।

१४-कुछ लोग कहते हैं, हम गोवध-बंदीका कानून बना दें तो अमेरिका आदि देश जिन्हें यहाँसे बछड़ोंकी काटी हुई गौकी खालें, आँतें आदि भेजी जाती हैं, वे हमसे अप्रसन्न हो जायँगे, फिर हमें वे जो उन्नतिके नामपर सहायता देते हैं, उसे बंद कर देंगे।

हम कहते हैं कि इससे बढ़कर मूर्खताकी दूसरी बात कोई हो नहीं सकती, कि अपनी माताको कटाकर दूसरे देशोंकी प्रसन्नता प्राप्त करें। दूसरे देशवाले चाहें कि हम सब ईसाई बन जायँ तो क्या उन्हें प्रसन्न करनेके लिये हमारी सरकार हमें ईसाई बननेका आदेश देगी? हमें अपनी ओर देखना चाहिये, अपना हित-अनहित स्वयं ही अपनी दृष्टिसे सोचना चाहिये।

१५-कुछ लोग कहते हैं—मुसलमान अल्प संख्यामें हैं, हमें उनकी भावनाओंका आदर करना चाहिये। जिससे उन्हें दुःख न हो, ऐसा काम करना चाहिये।

आदर करते-करते ही हम आधे देशसे हाथ धो बैठे। भारतका बहुत-सा भाग हिन्दुत्वका विरोधी बन गया, अब भी हम वोटोंके लिये, अल्प स्वार्थके लिये अपनी गौको कटवावें यह कितनी बुद्धिमानी होगी?

ये बातें अब तो गौण हैं, यथार्थ बात तो यह है कि यह हमारा विशुद्ध धार्मिक प्रश्न है, धर्मका पालन घाटा सहकर भी किया जाता है, अतः गोवध बंद करनेसे कितना भी घाटा हो—यद्यपि घाटा नहीं और लाभ भी होगा, तब भी हमें उसे बंद करना ही पड़ेगा। गोवध बंद करनेमें चाहे जितनी अड़चनें हों, करोड़ों-करोड़ हिन्दुओंकी धार्मिक भावनाका आदर करना ही पड़ेगा। जो सरकार गोवधका समर्थन करेगी, उसे प्रोत्साहन देगी वह भारतमें कभी टिक नहीं सकती। अतः गोवधपर अविलम्ब प्रतिबन्ध लगाना चाहिये। गोवध-बंदीका नियम-कानून केन्द्रीय सरकारको शीघ्र-से-शीघ्र बनाना चाहिये। यदि सरकार ऐसा न करे तो इसके विरुद्ध जनमत तैयार करके प्रबल आन्दोलन करना चाहिये।

कैसे भी हो धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक सभी दृष्टिसे गोरक्षा आवश्यक है, चाहे जैसे हो, हमारे देशसे गोवध बंद होना चाहिये। इसके लिये सभी भारतीय नर-नारियोंको सभी प्रकारका बलिदान करना चाहिये।

भगवान् नन्दनन्दन गोपालके पादपद्मोंमें प्रार्थना है कि वे शीघ्र भारतसे गोवध बंद करा दें। गोमाताकी जय!

गोकी रक्षा होइ जाइ सब धारें चितमें।
गोवध होवे बन्द होइ आनन्द जगतमें॥
गौ के हित सब त्याग करें तन, मन, धन देवें।
लोक और परलोक माहिँ अक्षय फल लेवें॥
गोपालक गोविन्द प्रभु, गैयनिकी रक्षा करो।
गोवध करिकें बन्द अब, भारत माँ के दुख हरो॥

[प्रेषक—डॉ० श्रीविद्याधरजी द्विवेदी]

गो-महिमा और गोरक्षाकी आवश्यकता

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

गोरक्षा हिंदूधर्मका एक प्रधान अङ्ग माना गया है। प्राय: प्रत्येक हिंदू गौको माता कहकर पुकारता है और माताके समान ही उसका आदर करता है। जिस प्रकार कोई भी पुत्र अपनी माताके प्रति किये गये अत्याचारको सहन नहीं करेगा, उसी प्रकार एक आस्तिक और सच्चा हिंदू गोमाताके प्रति निर्दयताके व्यवहारको नहीं सहेगा; गोहिंसाकी तो वह कल्पना भी नहीं सह सकता। गौके प्राण बचानेके लिये वह अपने प्राणोंकी आहुति दे देगा, किंतु उसका बाल भी बाँका न होने देगा। मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामके पूर्वज महाराज दिलीपके चरित्रसे सभी लोग परिचित हैं। उन्होंने अपने कुलगुरु महर्षि वसिष्ठकी बछिया नन्दिनीकी रक्षाके लिये सिंहको अपना शरीर अर्पण कर दिया, किंतु जीते-जी उसकी हिंसा न होने दी। पाण्डवशिरोमणि अर्जुनने गोरक्षाके लिये बारह वर्षोंतक वनवासकी कठोर यातना स्वीकार की।

परंतु हाय! वे दिन अब चले गये। हिंदूजाति आज दुर्बल हो गयी है। हम अपनी स्वतन्त्रता, अपना पुरुषत्व, अपनी धर्मप्राणता, ईश्वर और ईश्वरीय कानूनमें विश्वास, शास्त्रोंके प्रति आदरबुद्धि, विचार-स्वातन्त्र्य, अपनी संस्कृति एवं मर्यादाके प्रति आस्था—सब कुछ खो बैठे हैं। आज हम आपसकी फूट एवं कलहके कारण छिन्न-भिन्न हो रहे हैं। हम अपनी संस्कृति एवं धर्मपर किये गये प्रहारों और आक्रमणोंको व्यर्थ करनेके लिये संघटित नहीं हो सकते। हम अपनी जीवनी-शक्ति खो बैठे हैं। मूक पशुओंकी भाँति दूसरोंके द्वारा हाँके जा रहे हैं। राजनीतिक गुलामी ही नहीं, अपितु मानसिक गुलामीके भी शिकार हो रहे हैं। आज हम सभी बातोंपर पाश्चात्त्य दृष्टिकोणसे ही विचार करने लगे हैं। यही कारण है कि हमारी इस पवित्र भूमिमें प्रतिवर्ष लाखों-करोड़ोंकी संख्यामें गाय और बैल काटे जाते हैं और हम इसके विरोधमें अँगुलीतक नहीं उठाते। आज हम दिलीप और अर्जुनके इतिहास केवल पढ़ते और सुनते हैं, उनसे हमारी नसोंमें जोश नहीं भरता। हमारी नपुंसकता सचमुच दयनीय है!

हम सरकारके मत्थे अपनी धार्मिक भावनाओंको कुचलनेका दोष मँढ़ते हैं, हम अपने मुसलमान भाइयोंपर गायके प्रति निर्दयताका अभियोग लगाते हैं, किंतु अपने दोष नहीं देखते। गौओंके प्रति हमारी आदरबुद्धि केवल कहनेभरके लिये रह गयी है। हम केवल वाणीसे ही उसकी पूजा करते हैं। हमीं तो अपनी गौओं और बैलोंको कसाइयोंके हाथ बेचते हैं। हमीं उनके साथ दुष्टता एवं क्रूरताका बर्ताव करते हैं—उन्हें भूखों मारते हैं, उनका सारा दूध दुह लेते हैं, बछड़ेका हिस्सा भी छीन लेते हैं, बैलोंपर बेहद बोझा लाद देते हैं, न चलनेपर उन्हें बुरी तरहसे पीटते हैं, गोचरभूमियोंका सफाया करते जा रहे हैं और फिर भी अपनेको गो-रक्षक कहते हैं और विधर्मियोंको गोघातक कहकर कोसते हैं। हमारी वैश्य-जातिके लिये कृषि और वाणिज्यके साथ-साथ शास्त्रोंने गोरक्षाको भी प्रधान धर्म माना है, परंतु आज हमारे वैश्य भाइयोंने गोरक्षाको अनावश्यक मानकर छोड़ रखा है। हमारी गोशालाओंका बुरा हाल है और उनके द्रव्यका ठीक-ठीक उपयोग नहीं होता। उनमें परस्पर सहयोगका अभाव है। सारांश सब कुछ विपरीत हो गया है।

दूसरी जातियाँ अपने गोधनकी वृद्धिमें बड़ी तेजीके साथ अग्रसर हो रही हैं। दूसरे देशोंमें क्षेत्रफलके हिसाबसे गौओंकी संख्या भारतकी अपेक्षा कहीं अधिक है और प्रतिमनुष्य दूधकी खपत भी अधिक है। वहाँकी गौएँ हमारी गौओंकी अपेक्षा दूध भी अधिक देती हैं। कारण यही है कि वे गौओंको भरपेट भोजन देते हैं, अधिक आरामसे रखते हैं, उनकी अधिक सँभाल करते हैं और उनके साथ अधिक प्रेम और कोमलताका बर्ताव करते हैं। अन्य देशोंमें गोचरभूमियोंका अनुपात भी खेतीके उपयोगमें आनेवाली भूमिकी तुलनामें कहीं अधिक है। इस प्रकार हम देखते हैं कि यद्यपि हम अपनेको गोपूजक और गोरक्षक कहते हैं, वस्तुत: आज हम गोरक्षामें बहुत पिछड़े हुए हैं। गोजातिके प्रति हमारे इस अनादर एवं उपेक्षाका परिणाम भी प्रत्यक्ष ही है। अन्य देशोंकी अपेक्षा हम भारतीयोंकी औसत आयु बहुत ही कम है और अन्य देशोंकी तुलनामें हमारे यहाँके बच्चे बहुत अधिक संख्यामें मरते हैं। यही नहीं, अन्य

लोगोंकी अपेक्षा हमलोगोंमें जीवट भी बहुत कम है। कहना न होगा कि दूध और दूधसे बने हुए पदार्थोंकी कमी ही हमारी इस शोचनीय अवस्थाका मुख्य हेतु है। इससे यह बात प्रत्यक्ष हो जाती है कि किसी जातिके स्वास्थ्य एवं आयु-मानके साथ गोधनका कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। अस्तु,

हमारे शास्त्र कहते हैं कि गायसे अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंकी सिद्धि होती है। दूसरे शब्दोंमें धार्मिक, आर्थिक, सांसारिक एवं आध्यात्मिक—सभी दृष्टियोंसे गाय हमारे लिये अत्यन्त उपयोगी है। पुराणोंमें लिखा है कि जगत्‌में सर्वप्रथम वेद, अग्नि, गौ एवं ब्राह्मणोंकी सृष्टि हुई। वेदोंसे हमें अपने कर्तव्यकी शिक्षा मिलती है, वे हमारे ज्ञानके आदिस्रोत हैं। वे हमें देवताओंको प्रसन्न करनेकी विद्या—यज्ञानुष्ठानका पाठ पढ़ाते हैं। गीतामें भी कहा है—

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥
देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥
इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः॥
यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यामकारणात्॥
अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्॥
एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति॥

(३। १०—१६)

'प्रजापति ब्रह्माजीने कल्पके आदिमें यज्ञसहित प्रजाओंको रचकर उनसे कहा कि 'तुमलोग यज्ञके द्वारा वृद्धिको प्राप्त होओ और यह यज्ञ तुमलोगोंको इच्छित भोग प्रदान करनेवाला हो। तुमलोग इस यज्ञके द्वारा देवताओंको उन्नत करो और वे देवता तुमलोगोंको उन्नत करें। इस प्रकार निःस्वार्थभावसे एक दूसरेको उन्नत करते हुए तुमलोग परम कल्याणको प्राप्त हो जाओगे। यज्ञके द्वारा बढ़ाये हुए देवता तुमलोगोंको बिना माँगे ही इच्छित भोग निश्चय ही देते रहेंगे।' इस प्रकार उन देवताओंके द्वारा दिये हुए भोगोंको जो पुरुष उनको बिना दिये स्वयं भोगता है, वह चोर ही है। यज्ञसे बचे हुए अन्नको खानेवाले श्रेष्ठ पुरुष सब पापोंसे मुक्त हो जाते हैं और जो पापीलोग अपना शरीर पोषण करनेके लिये ही अन्न पकाते हैं, वे तो पापको ही खाते हैं। सम्पूर्ण प्राणी अन्नसे उत्पन्न होते हैं, अन्नकी उत्पत्ति वृष्टिसे होती है, वृष्टि यज्ञसे होती है और यज्ञ विहित कर्मोंसे उत्पन्न होनेवाला है। कर्मसमुदायको तू वेदसे उत्पन्न और वेदको अविनाशी परमात्मासे उत्पन्न हुआ जान। इससे सिद्ध होता है कि सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञमें प्रतिष्ठित है। हे पार्थ! जो पुरुष इस लोकमें इस प्रकार परम्परासे प्रचलित सृष्टिचक्रके अनुकूल नहीं बरतता अर्थात् अपने कर्तव्यका पालन नहीं करता, वह इन्द्रियोंके द्वारा भोगोंमें रमण करनेवाला पापायु पुरुष व्यर्थ ही जीता है।'

ऊपरके वचनोंसे यह प्रकट होता है कि (१) यज्ञकी उत्पत्ति सृष्टिके प्रारम्भमें हुई और (२) यज्ञ हमारे अभ्युदय (लौकिक उन्नति) एवं निःश्रेयस (परम कल्याण) दोनोंका साधन है। यज्ञसे हम जो कुछ चाहें प्राप्त कर सकते हैं। लौकिक सुख-समृद्धि तथा ऐहिक एवं पारलौकिक भोग हमें देवताओंसे प्राप्त होते हैं। देवता भगवान्‌की ही कलाएँ—भगवान्‌की ही दिव्य चेतन विभूतियाँ हैं, जो मनुष्यों एवं मनुष्योंसे निम्न स्तरके जीवोंकी लौकिक आवश्यकताओंको पूर्ण करते हैं—हमारे लिये समयानुसार घाम, चाँदनी, वर्षा आदिकी व्यवस्था करके हमारे वनस्पतिवर्गका और उनके द्वारा हमारे जीवनका पोषण करते हैं। वे ही हमें रहनेके लिये पृथ्वी, हमारी प्यास बुझानेके लिये जल, हमारे भोजनको पकाने तथा हमारा शीतसे त्राण करनेके लिये अग्नि, साँस लेनेके लिये वायु तथा इधर-उधर घूमनेके लिये अवकाश प्रदान करते हैं। सारांश, वे ही इस संसारचक्रकी व्यवस्था करते हैं, जीवोंके कर्मोंकी देख-रेख तथा उनके अनुसार शुभाशुभ फलभोगका विधान करते हैं तथा हमारे जीवन-मरणका नियमन करते हैं। इन भगवत्कलाओंको प्रसन्न रखने—इनका आशीर्वाद, सहानुभूति एवं सद्भाव प्राप्त करनेके लिये और आदान-प्रदानके सिद्धान्तको चालू रखनेके लिये जो जगच्चक्रके परिचालनके लिये आवश्यक एवं अनिवार्य है—यज्ञानुष्ठानके द्वारा इनकी आराधना करना मनुष्यमात्रका परम कर्तव्य है। जबतक भारतमें यज्ञ-यागादिके द्वारा देवताओंकी आराधना

होती थी, तबतक यह देश सुखी एवं समृद्ध था, समयपर यथेष्ट मात्रामें वर्षा होती थी तथा बाढ़, भूकम्प, दुष्काल एवं महामारी आदि दैवी संकटोंसे यह प्राय: मुक्त था। जबसे यज्ञ-यागादिकी प्रथा लुप्तप्राय हो गयी, तभीसे यह देश अधिकाधिक दैवी प्रकोपोंका शिकार होने लगा है।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यज्ञसे अभ्युदय एवं नि:श्रेयस दोनों सिद्ध होते हैं। संसार-चक्रका परिचालन करनेवाले भगवत्कलारूप देवताओंकी प्रसन्नताद्वारा वह हमारी सुख-समृद्धिका साधन बनता है और निष्कामभावसे केवल कर्तव्यबुद्धिपूर्वक किये जानेपर वह भगवत्प्रीतिका सम्पादन कर भगवत्प्राप्ति अथवा मोक्षरूप जीवनके परम लक्ष्यकी प्राप्तिमें सहायक होता है। यही नहीं, यज्ञ-दान-तपरूप कर्मको भगवान्‌ने अवश्यकर्तव्य, अनिवार्य बताया है—'**यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्**' और यज्ञादिकी परम्पराका विच्छेद करनेवालेको पापी—अघायु कहकर उसकी गर्हणा की है। इस यज्ञचक्रको चलानेके लिये ही वेद, अग्नि, गौ एवं ब्राह्मणोंकी सृष्टि हुई है। वेदोंमें यज्ञानुष्ठानकी विधि बतायी गयी है—'**कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि०**' एवं ब्राह्मणोंके द्वारा वह विधि सम्पन्न होती है। अग्निके द्वारा आहुतियाँ देवताओंको पहुँचायी जाती हैं—'**अग्निमुखा हि देवा भवन्ति**' और गौसे हमें देवताओंको अर्पण करने योग्य हवि प्राप्त होता है। इसीलिये हमारे शास्त्रोंमें गौको '**हविर्दुघा**' (हवि देनेवाली) कहा गया है। गोघृत देवताओंका परम प्रिय हवि है और यज्ञके लिये भूमिको जोतकर तैयार करने एवं गेहूँ, चावल, जौ, तिल आदि हविष्यान्न पैदा करनेके लिये गो-संतति—बैलोंकी परम आवश्यकता है। यही नहीं, यज्ञभूमिको परिष्कृत एवं शुद्ध करनेके लिये उसे गोमूत्रसे छिड़का जाता है और गोबरसे लीपा जाता है तथा गोबरके कंडोंसे यज्ञाग्निको प्रज्वलित किया जाता है। यज्ञानुष्ठानके पूर्व प्रत्येक यजमानको देहशुद्धिके लिये पञ्चगव्यका प्राशन करना होता है और यह गायके दूध, गायके दही, गायके घी, गोमूत्र एवं गायके ही गोबरसे तैयार किया जाता है—इसीलिये इसे 'पञ्चगव्य' कहते हैं। इसके अतिरिक्त गायका दूध और उससे तैयार होनेवाले पदार्थ सबके स्वादिष्ट एवं पोषक आहार हैं। दूधमें पकाये हुए चावलको—जिसे आधुनिक भाषामें खीर कहते हैं—संस्कृतमें परमान्न (सर्वश्रेष्ठ भोजन) कहा गया है और घीको हमारे यहाँ सर्वश्रेष्ठ रसायन माना गया है—'**आयुर्वै घृतम्।**' इतना ही नहीं, घृतरहित अन्नको हमारे शास्त्रोंमें अपवित्र कहा गया है। घी और चीनीसे युक्त खीरका भोजन ब्राह्मणोंके लिये विशेष तृप्तिकारक होता है और देवताओंको आहुति पहुँचानेके लिये हमारे यहाँ दो ही मार्ग माने गये हैं—अग्नि और ब्राह्मणोंका मुख। बल्कि भगवान्‌ने तो कहा है कि मैं अग्निके द्वारा यज्ञमें घीसे चूती हुई आहुतियोंका भक्षण करके उतना प्रसन्न नहीं होता, जितना ब्राह्मणोंके मुखमें पड़ी हुई आहुतियोंसे संतुष्ट होता हूँ—

नाहं तथाद्मि यजमानहविर्विताने
श्च्योतद्घृतप्लुतमदन् हुतभुङ्मुखेन।
यद्ब्राह्मणस्य मुखतश्चरतोऽनुघासं
तुष्टस्य मय्यवहितैर्निजकर्मपाकैः॥

(श्रीमद्भा० ३।१६।८)

तात्पर्य यह कि दोनों प्रकारसे देवताओंकी तृप्तिके लिये तथा सर्वोपरि भगवत्प्रीतिके लिये भी गौकी परमोपयोगिता सिद्ध होती है।

भारत-जैसे कृषिप्रधान देशमें आर्थिक दृष्टिसे भी गायका महत्त्व स्पष्ट ही है। जिन लोगोंने हमारे ग्रामीण जीवनका विशेष मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया है, उन सबने एक स्वरसे हमारे जीवनके लिये गौकी परमावश्यकता बतायी है। गोधन ही हमारा प्रधान बल है। गोधनकी उपेक्षा करके हम जीवित नहीं रह सकते। अत: हमारे गोवंशका संख्या एवं गुणोंकी दृष्टिसे जो भयानक ह्रास हो रहा है, उसका बहुत शीघ्र प्रतीकार करना चाहिये और हमारी गौओंकी दशाको सुधारने, उनकी नस्लकी उन्नति करने और उनका दूध बढ़ाने तथा इस प्रकार देशके दुग्धोत्पादनमें वृद्धि करनेका भी पूरा प्रयत्न करना चाहिये। गायों, बछड़ों एवं बैलोंका वध रोकने तथा उनपर किये जानेवाले अत्याचारोंको बंद करनेके लिये कानून बनाने होंगे और विधर्मियोंको भी गौकी परमोपयोगिता बतलाकर गोजातिके प्रति उनकी सहानुभूति एवं सद्भावका अर्जन करना चाहिये। जिस देशमें कभी दूध और दहीकी एक प्रकारसे नदियाँ बहती थीं, उस देशमें असली दूध मिलनेमें कठिनता हो रही है—यह कैसी विडम्बना है!

आध्यात्मिक दृष्टिसे भी गायका महत्त्व कम नहीं है। गायके दर्शन एवं स्पर्शसे पवित्रता आती है, पापोंका नाश

होता है, गायके शरीरमें तैंतीस करोड़ देवताओंका निवास माना गया है। गायके खुरोंसे उड़नेवाली धूलि भी पवित्र मानी गयी है। महाभारतमें महर्षि च्यवन राजा नहुषसे कहते हैं—

मैं इस संसारमें गौओंके समान दूसरा कोई धन नहीं समझता। गौओंके नाम और गुणोंका कीर्तन करना-सुनना, गौओंका दान देना और उसका दर्शन करना—इनकी शास्त्रोंमें बड़ी प्रशंसा की गयी है। ये सब कार्य सम्पूर्ण पापोंको दूर करके परमकल्याण देनेवाले हैं। गौएँ लक्ष्मीकी जड़ हैं, उनमें पापका लेश भी नहीं है, गौएँ ही मनुष्यको अन्न और देवताओंको हविष्य देनेवाली हैं। स्वाहा और वषट्कार सदा गौओंमें ही प्रतिष्ठित होते हैं। गौएँ ही यज्ञका संचालन करनेवाली और उसका मुख हैं। वे विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती और दुहनेपर अमृत ही देती हैं। वे अमृतका आधार होती हैं। और सारा संसार उनके सामने मस्तक झुकाता है। इस पृथ्वीपर गौएँ अपने तेज और शरीरमें अग्निके समान हैं। वे महान् तेजकी राशि और समस्त प्राणियोंको सुख देनेवाली हैं। गौओंका समुदाय जहाँ निर्भयतापूर्वक बैठकर साँस लेता है, उस स्थानकी श्री बढ़ जाती है और वहाँका सारा पाप नष्ट हो जाता है। गौएँ स्वर्गकी सीढ़ी हैं, वे स्वर्गमें भी पूजी जाती हैं। गौएँ समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली देवियाँ हैं, उनसे बढ़कर दूसरा कोई नहीं है। राजन्! यह मैंने गौका माहात्म्य बतलाया है, इसमें उनके गुणोंके एक अंशका दिग्दर्शन कराया गया है। गौओंके सम्पूर्ण गुणोंका वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता।[१]

ब्रह्माजी भी इन्द्रसे कहते हैं—

'हे वासव! गौओंको यज्ञका अङ्ग और साक्षात् यज्ञरूप बतलाया गया है। इनके बिना यज्ञ किसी तरह नहीं हो सकता। ये अपने दूध और घीसे प्रजाका पालन-पोषण करती हैं तथा इनके पुत्र (बैल) खेतीके काम आते और तरह-तरहके अन्न एवं बीज पैदा करते हैं, जिनसे यज्ञ सम्पन्न होते हैं और हव्य-कव्यका भी काम चलता है; इन्हींसे दूध, दही और घी प्राप्त होते हैं। ये गौएँ बड़ी पवित्र होती हैं और बैल भूख-प्यासका कष्ट सहकर अनेक प्रकारके बोझ ढोते रहते हैं। इस प्रकार गोजाति अपने कर्मसे ऋषियों तथा प्रजाओंका पालन करती रहती है। उसके व्यवहारमें शठता या माया नहीं होती, वह सदा पवित्र कर्ममें लगी रहती है।'[२]

इस प्रकार सभी दृष्टियोंसे गाय हमारे लिये बड़े ही आदर और प्रेमकी वस्तु है, हमें सब प्रकारसे उसकी रक्षा एवं उन्नतिके लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये।

---

१. गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किञ्चिदिहाच्युत॥
कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव। गवां प्रशस्यते वीर सर्वपापहरं शिवम्॥
गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ। गावो यज्ञस्य नेत्र्यो वै तथा यज्ञस्य ता मुखम्॥
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च। अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः॥
तेजसा वपुषा चैव गावो वह्निसमा भुवि। गावो हि सुमहत्तेजः प्राणिनां च सुखप्रदाः॥
निविष्टं गोकुलं यत्र श्वासं मुञ्चति निर्भयम्। विराजयति तं देशं पापं चास्यापकर्षति॥
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः। गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किञ्चित् परं स्मृतम्॥
इत्येतद् गोषु मे प्रोक्तं माहात्म्यं भरतर्षभ। गुणैकदेशवचनं शक्यं पारायणं न तु॥
(अनुशासन० ५१। २६—३४)

२. यज्ञाङ्गं कथिता गावो यज्ञ एव च वासव। एताभिश्च विना यज्ञो न वर्तेत कथंचन॥
धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा। एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते॥
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च। ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः॥
पयो दधि घृतं चैव पुण्याश्चैताः सुराधिप। वहन्ति विविधान् भारान् क्षुत्तृष्णापरिपीडिताः॥
मुनींश्च धारयन्तीह प्रजाश्चैवापि कर्मणा। वासवाकूटवाहिन्यः कर्मणा सुकृतेन च॥
(अनुशासन० ८३। १७—२१)

गोरक्षा—अलौकिक वस्तु

[महात्मा गाँधीजीके विचार]

हिंदुस्थानमें अनगिनत पशुधन हैं, जिनकी तरफ हमने ध्यान न देकर गुनाह किया है। गोरक्षा मुझे मनुष्यके सारे विकास-क्रममें सबसे अलौकिक वस्तु मालूम हुई है। गायका अर्थ मैं मनुष्यसे नीचेकी सारी गूँगी दुनिया करता हूँ। इसमें गायके बहाने इस तत्त्वके द्वारा मनुष्यको सम्पूर्ण चेतन सृष्टिके साथ आत्मीयताका अनुभव करानेका प्रयत्न है। मुझे तो यह भी स्पष्ट दीखता है कि गायको ही यह भेदभाव क्यों प्रदान किया गया होगा। हिंदुस्थानमें गाय ही मनुष्यका सबसे अच्छा साथी, सबसे बड़ा आधार था। यही हिंदुस्थानकी एक कामधेनु थी। वह सिर्फ दूध ही नहीं देती थी, बल्कि सारी खेतीका आधारस्तम्भ भी वही थी। गाय दया-धर्मकी मूर्तिमंत कविता है। इस गरीब और शरीफ जानवरमें हम केवल दया ही उमड़ती देखते हैं। यह लाखों, करोड़ों हिंदुस्थानियोंको पालनेवाली माता है। इस गायकी रक्षा करना ईश्वरकी सारी मूक सृष्टिकी रक्षा करना है। जिस अज्ञात ऋषि या द्रष्टाने गोपूजा चलायी, उसने गायसे सिर्फ शुरुआत की, इसके सिवा और कोई ध्येय हो नहीं सकता है। इस पशुसृष्टिकी फरियाद मूक होनेसे और भी प्रभावशाली है। गोरक्षा हिंदू-धर्मकी दुनियाको दी हुई एक कीमती भेंट है।

गोमाता जन्म देनेवाली माँसे कहीं बढ़कर है। माँ तो साल, दो साल दूध पिलाकर हमसे फिर जीवनभर सेवाकी आशा रखती है। पर गोमाताको तो सिवा दाने और घासके कोई सेवाकी आवश्यकता ही नहीं। माँकी तो हमें उसकी बीमारीमें सेवा करनी पड़ती है। परंतु गोमाता स्वयं केवल जीवनपर्यन्त हमारी अटूट सेवा ही नहीं करती, बल्कि उसके मरनेके बाद भी हम उसके चर्म, हड्डी, सींग आदिसे अनेक लाभ उठाते हैं, यह सब मैं जन्मदात्री माताका दर्जा कम करनेको नहीं कहता, बल्कि यह दिखानेके लिये कहता हूँ कि गोमाता हमारे लिये कितनी पूज्य है।

हमारे ढोरोंकी दुर्दशाके लिये अपनी गरीबीका राग हम नहीं अलाप सकते। यह हमारी निर्दय लापरवाहीके सिवा और किसी भी बातकी सूचक नहीं है। हालाँकि हमारे पिंजरापोल हमारी दयावृत्तिपर खड़ी हुई संस्थाएँ हैं तो भी वे उस वृत्तिका अत्यन्त भद्दा अमल करनेवाली संस्थाएँ ही हैं। वे आदर्श गोशालाओं या डेयरियोंमें और समृद्ध राष्ट्रिय संस्थाओंके रूपमें चलनेके बजाय केवल लूले, लँगड़े ढोर रखनेके धर्मादा खाते बन गये हैं। गोरक्षाके धर्मका दावा करते हुए भी हमने गाय और उसकी संतानको गुलाम बनाया है और हम खुद भी गुलाम बन गये हैं।

सवाल यह किया जाता है कि जब गाय अपने पालन-पोषणके खर्चेसे भी कम दूध देने लगती है या दूसरी तरहसे नुकसान पहुँचानेवाला बोझ बन जाती है, तब बिना मारे उससे कैसे बचा जा सकता है? इस सवालका जवाब थोड़ेमें इस तरह दिया जा सकता है कि जानवरोंके पालन-पोषणका विज्ञान सीखकर गायकी रक्षा की जा सकती है। आज तो इस काममें पूरी अंधाधुंधी चलती है। हिंदू गाय और उसकी संतानकी तरफ अपना फर्ज पूरा करके उसे बचा सकते हैं। अगर वे ऐसा करें तो हमारे जानवर हिंदुस्थान और दुनियाके गौरव बन सकते हैं। आज इससे बिलकुल उलटा हो रहा है।

हिंदुस्थानके सारे पिंजरापोलोंका पूरा-पूरा सुधार किया जाना चाहिये। आज तो हर जगह पिंजरापोलका इंतजाम ऐसे लोग करते हैं जिनके पास न कोई योजना होती है और न ये अपने कामकी जानकारी ही रखते हैं।

ऊपर बतायी हुई बातोंके पीछे एक खास चीज है। यह है अहिंसा, जिसे दूसरे शब्दोंमें प्राणीमात्रपर दया कहा जाता है। अगर इस सबसे बड़े महत्त्वकी बातको समझ लिया जाय तो दूसरी सब बातें आसान बन जाती हैं। जहाँ अहिंसा है वहाँ अपार धीरज, भीतरी शान्ति, भले-बुरेका ज्ञान, आत्मत्याग और सच्ची जानकारी भी है। गोरक्षा कोई आसान काम नहीं है। उसके नामपर देशमें बहुत पैसा बरबाद किया जाता है, फिर भी अहिंसाका भान न होनेसे हिंदू गायके रक्षकके बजाय उसके नाश करनेवाले बन जाते

हैं। गोरक्षाका काम हिंदुस्थानसे विदेशी हुकूमतको हटानेके कामसे भी ज्यादा कठिन है।

मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि हम भैंसके दूध-घीका कितना पक्षपात करते हैं! असलमें हम निकटका स्वार्थ देखते हैं। दूरके लाभका विचार नहीं करते हैं। नहीं तो यह साफ है कि अन्तमें गाय ही ज्यादा उपयोगी है। गायके घी और मक्खनमें एक खास तरहका पीला रंग होता है, जिसमें भैंसके मक्खनसे कहीं अधिक कैरोटिन यानी विटामिन 'ए' रहता है। उसमें एक खास तरहका स्वाद भी है। मुझसे मिलने आनेवाले विदेशी यात्री सेवाग्राममें गायका शुद्ध दूध पीकर खुश हो जाते हैं। और यूरोपमें तो भैंसके घी और मक्खनके बारेमें कोई जानता ही नहीं। हिंदुस्थान ही ऐसा देश है, जहाँ भैंसका दूध, घी इतना पसंद किया जाता है। इससे गायकी बरबादी हुई है। इसीलिये मैं कहता हूँ कि हम सिर्फ गायपर ही जोर न देंगे तो गाय नहीं बच सकेगी।

गोरक्षाके प्रश्नका जैसे-जैसे मैं अधिक अध्ययन करता हूँ, वैसे-वैसे मेरा यह मत दृढ़ होता जाता है कि गाँवों और उनकी जनताकी रक्षा तभी हो सकती है, जब कि ऊपर बतायी हुई दिशामें निरन्तर प्रयत्न किया जाय।

× × ×

प्रत्येक किसान अपने घरमें गाय, बैल रखकर उनका पालन भलीभाँति और शास्त्रीय पद्धतिसे नहीं कर सकता। गोवंशके ह्रासके अनेक कारणोंमें व्यक्तिगत गोपालन भी एक कारण रहा है। यह बोझ व्यक्तिगत किसानकी शक्तिके बिलकुल बाहर है।

हमारी आबादी बढ़ती जा रही है और उसके साथ किसानकी व्यक्तिगत जमीन कम होती जा रही है। नतीजा यह हुआ कि प्रत्येक किसानके पास जितनी चाहिये उतनी जमीन नहीं है। ऐसा किसान अपने घरमें या खेतपर गाय, बैल नहीं रख सकता।

इस हालतमें क्या किया जाय? यही कि जितना प्रयत्न पशुओंको जीवित रखने और उन्हें बोझ न बनने देनेका हो सकता है उतना किया जाय। इस प्रयत्नमें सहयोगका बड़ा महत्त्व है। सहयोग अथवा सामूहिक पशुपालन करनेमें अनेक लाभ हैं। मेरा तो विश्वास है कि हम अपनी जमीनको भी जब सामूहिक पद्धतिसे जोतेंगे तभी उससे पूरा फायदा उठा सकेंगे। गाँवकी खेती अलग-अलग सौ टुकड़ोंमें बँट जाय, इसके बनिस्पत क्या यह बेहतर नहीं होगा कि सौ कुटुंब सारे गाँवकी खेती सहयोगसे करें और उसकी आमदनी आपसमें बाँट लिया करें। और जो खेतीके लिये सच है, वह पशुओंके लिये भी सच है।

यह दूसरी बात है कि आज लोगोंको सहयोगकी पद्धतिपर लानेमें कठिनाई है। कठिनाई तो सभी सच्चे और अच्छे कामोंमें होती है। गोसेवाके सभी अंग कठिन हैं, कठिनाइयाँ दूर करनेसे ही सेवाका मार्ग सुगम बन सकता है। यहाँ तो मुझे इतना ही बताना था कि व्यक्तिगत पद्धति गलत है, सामूहिक सही है। व्यक्ति अपने स्वातन्त्र्यकी रक्षा भी सहयोगको स्वीकार करके ही कर सकता है। अतएव सामूहिक पद्धति अहिंसात्मक है।

[प्रेषक—श्रीरामकुमारजी जालान]

गो-सेवा

जो मनुष्य प्रतिदिन जौ आदिके द्वारा गौकी पूजा करता है, उसके पितृगण और देवता सदा तृप्त होते हैं। जो सदाचारी पुरुष नियमपूर्वक प्रतिदिन गायोंको खिलाता है, वह सच्चे धर्मके बलसे सारे मनोरथोंको प्राप्त करता है। जो व्यक्ति गौओंके शरीरसे गंदगी, मच्छर आदिको हटा देता है, वह तथा उसके पूर्वज लोग कृतार्थ होते हैं। यहाँतक कि 'यह भाग्यशाली संतान हमारा उद्धार कर देगी' ऐसा सोचकर वे उस अत्यन्त उत्सवमय कार्यके लिये आनन्दसे नाचने लगते हैं। इसलिये गौओंको कभी हेय दृष्टिसे नहीं देखना चाहिये, मारना तो बहुत ही कोसों दूर है। (पद्मपु०, पाताल०, अ० १८)

[प्रेषक—श्रीअरविन्दजी मिश्र]

गोरक्षाके उपाय

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥
नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥

गौका महत्त्व

गोरक्षण, गोपालन और गोसंवर्धन भारतवर्षके लिये नया नहीं है। यह भारतवर्षका सनातन धर्म है। हमारी आर्य-संस्कृतिके अनुसार अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंके साधनका मूल हमारी 'सर्वदेवमयी' यह गोमाता है। हमारे अपौरुषेय वेदोंने गौकी बड़ी महिमा गायी है और उसे 'अघ्न्या' (अवध्या) बतलाया है। वैदिक वाङ्मयमें सवा सौसे अधिक बार 'अघ्न्या' पदका प्रयोग हुआ है। अथर्ववेदमें तो पूरा 'गोसूक्त' ही है। उपनिषदोंमें भी 'गोमहिमा' है। महाभारतके अध्याय-के-अध्याय गो-महिमासे भरे पड़े हैं। रामायण, इतिहास, पुराण और स्मृतियोंमें गोमाहात्म्य भरा है। गौके रोम-रोममें देवताओंका निवास माना गया है। उसे 'सुरभि', 'कामधेनु', 'अर्च्या' (पूज्या), 'विश्वकी आयु', 'रुद्रोंकी माता', 'वसुओंकी पुत्री' कहा गया है और 'सर्वदेवपूज्या' माना गया है। गोपूजा, गोभक्ति, गोमन्त्र आदिसे महान् लाभ बतलाये गये हैं। वह यहाँ सर्वप्रकारसे अभ्युदय करती है और परलोकमें वैतरणी पार कराती है। 'वृषोत्सर्ग' का अत्यन्त माहात्म्य है। गोचरभूमि छोड़ना बड़ा भारी पुण्य माना गया है। गौका यह आध्यात्मिक तथा धार्मिक महत्त्व चाहे आज किसीकी समझमें न आये, पर है वह निर्विवाद ही। आध्यात्मिक जगत्का यह रहस्य भौतिक साधनोंसे सबकी समझमें नहीं आ सकता। श्रद्धालु पुरुष शास्त्र-प्रमाणसे तथा अन्तर्दर्शी महात्मा ऋतम्भरा प्रज्ञाके द्वारा अनुभवसे ही इसे जान सकते हैं। ऋषि-मुनियोंने उस महत्त्वको समझा था और उसका स्वरूप शास्त्रोंमें सँवारकर हमारे लिये रख दिया है।

गोसेवा सांस्कृतिक और धार्मिक कर्तव्य है

गोसेवा और गोवंशकी उन्नति भारतीय संस्कृतिके अभिन्न अङ्ग हैं। हिंदू, बौद्ध, जैन, सिक्ख सभी धर्मावलम्बियोंके लिये गोरक्षा धार्मिक दृष्टिसे मुख्य कर्तव्य है। अतएव गोरक्षाका आध्यात्मिक तथा धार्मिक दृष्टिकोण भी बड़े महत्त्वका है जो कदापि उपेक्षणीय नहीं है।

इसका सांस्कृतिक महत्त्व भी सर्वविदित है। भारतवर्षमें अत्यन्त प्राचीन कालसे ही बड़े-बड़े महापुरुषोंद्वारा गोसेवन और गोपालन होता चला आया है। रघुवंशी महाराज दिलीप नन्दिनी गौके लिये अपने प्राण देनेको प्रस्तुत हो गये थे। राजा नृगने असंख्य गायें दान दी थीं। भगवान् श्रीरामका अवतार ही 'गोब्राह्मणहितार्थ' हुआ था। उन्होंने दस सहस्र करोड़ गायें विद्वानोंको विधिपूर्वक दान की थीं—

'गवां कोटय्ययुतं दत्त्वा विद्वद्भ्यो विधिपूर्वकम्।'

(वा० रा० १। १। ९५)

भगवान् श्रीकृष्णका बाल्यजीवन गोसेवामें बीता। उन्होंने स्वयं वनोंमें घूम-घूमकर गोवत्सोंको चराया। इसीसे उनका नाम 'गोपाल' पड़ा। कामधेनुने अपने दूधसे तथा देवराज इन्द्रने ऐरावतकी सूँड़के द्वारा लाये हुए आकाशगङ्गाके
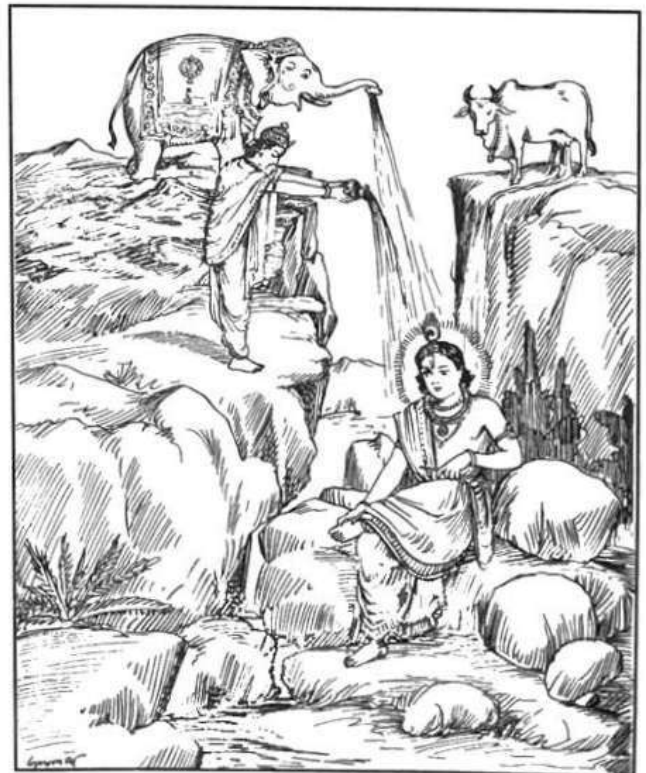
गोविन्दका अभिषेक

जलसे भगवान् श्रीकृष्णका अभिषेक करके उनको 'गोविन्द'

नामसे सम्बोधित किया था। द्वारकामें वे पहले-पहल ब्यायी हुई, दुधार, बछड़ोंवाली, सीधी, शान्त, वस्त्रालङ्कारोंसे समलंकृत तेरह हजार चौरासी गायोंका प्रतिदिन दान करते थे। (देखिये श्रीमद्भागवत १०। ७०। ९)

प्राचीन कालकी गोसम्पत्ति

युधिष्ठिरके यहाँ गायोंके दस हजार वर्ग थे, जिनमें प्रत्येकमें आठ-आठ लाख गायें थीं। लाख-लाख, दो-दो लाख गायोंके तो और भी बहुतसे वर्ग थे।

तस्याष्टशतसाहस्रा गवां वर्गाः शतं शतम्॥
अपरे शतसाहस्रा द्विस्तावन्तस्तथा परे।

(महा०, विराट० १०। ९-१०)

इस गो-विभागकी सारी व्यवस्थाका भार सहदेवपर था। वे गोविज्ञानके महान् पण्डित थे। नन्द-उपनन्दादिके पास असंख्य गौएँ थीं और वे उनका भलीभाँति रक्षण, पालन और संवर्धन करते थे। पिछले बौद्धकालीन भारतमें कितने व्यापकरूपमें गोपालन होता था, इसके लिये यहाँ एक ही प्रमाण पर्याप्त होगा। धनंजय सेठने अपनी कन्याके विवाहमें कुछ गायें देनेकी इच्छासे अपने सेवकोंसे कहा— 'जाओ, छोटा गोकुल खोल दो और एक-एक कोसके अन्तरपर नगारा लिये खड़े रहो। एक सौ चालीस हाथकी चौड़ी जगह बीचमें छोड़कर दोनों ओर आदमी खड़े कर दो, जिसमें गायें फैल न सकें। जब सब लोग ठीक हो जायँ, तब नगारा बजा देना।' सेवकोंने ऐसा ही किया। जब गायें एक कोस पहुँचीं तब नगारा बजा, फिर दो कोस पहुँचनेपर फिर बजा, तीन कोसकी लंबाई और एक सौ चालीस हाथकी चौड़ाईके मैदानमें इतनी गायें भर गयीं कि वे एक-दूसरेके शरीरको रगड़ती हुई चलीं। तब धनंजयने कहा—'बस दरवाजा बंद कर दो।' सेवकोंने दरवाजा बंद किया, परंतु बंद करते-करते भी ६०,००० गायें, ६०,००० बैल और ६०,००० बछड़े तो निकल ही गये। अब अनुमान कीजिये, इस छोटे गोकुलमें कितनी गायें रही होंगी। इसी प्रकार गोपालकोंका यह पशुधन गोकुलोंमें लाखों-करोड़ोंकी संख्यामें था। गायोंके बड़े व्यापारी गौतम कहलाते थे, जिनके पास लाखोंकी संख्यामें गौओंके दल-के-दल होते थे। यह भी हमारी गोसम्पत्ति, और यह था हमारा गोपालन। गायको अब भी गाँवोंके लोग 'धन' कहते हैं। बड़े ही दुःखकी बात है कि उसी गोपालकोंके देशमें आज स्वराज्यके बाद भी निर्बाध गोवध जारी है और गोरक्तसे भारतकी पवित्र भूमि लाल हो रही है।

गोवध बंद होना ही चाहिये

गायको कसाईके हाथसे बचानेकी बड़ी आवश्यकता है। कहना न होगा कि गोवध दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। इसमें प्रधान कारण हैं—चमड़े, हड्डी, सूखे मांस और रक्त तथा आँत-ताँत आदिका व्यापार एवं गोमांसकी अनिवार्य और बेहद माँग! चमड़ेकी रफ्तनी बढ़ती जा रही है। सन् १९१३-१४ में जहाँ २९ लाख खालें गयी थीं, वहाँ सन् ३८-३९में लाख खालें गयीं (मार्केटिंग ऑफ हाइड्स रिपोर्ट, पृष्ठ ४०)। इसी रिपोर्टमें आगरा, बंगलोर, बरेली, बंबई, कलकत्ता, ढाका, दिल्ली, जबलपुर, कराची, लाहौर, मद्रास, पेशावर और पूना—इन बड़े शहरोंके कसाईखानोंमें काटी जानेवाली गाय-भैंसोंकी संख्याका विवरण देते हुए लिखा है कि सन् १९३२-३३ में जितने पशु मारे गये थे, सन् १९३७-३८ में उनकी संख्यामें २१.२ प्रतिशतकी वृद्धि हो गयी। यह युद्धपूर्वका वर्णन है। सन् १९४२ में ६६ लाख गाय-भैंसे सरकारी रिपोर्टके अनुसार काटी गयी थीं। युद्धकालमें जहाँ जहाजोंकी कमीके कारण चमड़े आदिकी रफ्तनी घटी, वहाँ फौजोंके लिये गोमांसकी आवश्यकता अत्यधिक बढ़ गयी और उसके लिये दूध देनेवाली गाभिन गायों और बछड़ियोंका भी अबाध वध हुआ, जो करोड़से भी ऊपर पहुँच गया!! ऐसा विशेषज्ञोंका अनुमान है। अन्यत्र प्रकाशित हिसारके जज साहेब श्रीलायक अली महोदयके उस विचित्र फैसलेको देखिये, जिसमें उन्होंने बिना परमिटके बेकानूनी तौरपर उपयोगी गायों और बछड़ियोंको फौजके लिये ले जानेवाले अपराधियोंको छोड़ते हुए फौजोंके लिये गोमांसकी आवश्यकताका बड़ी ही दर्दभरी भाषामें वर्णन किया है! यह उदाहरण एक दाने चावलसे पके भातको परखनेकी तरह पर्याप्त है। इस अबाध गोवधको बंद करानेके लिये लोकमतको जाग्रत् करके प्रबल आन्दोलन करनेकी आवश्यकता है। यह आन्दोलन केवल हिन्दुओंका ही नहीं रहना चाहिये। मुसलमान, ईसाई

तथा अन्य मतावलम्बी सज्जनोंमें भी सहृदयता तथा प्रेमसे इस बातका प्रचार करना चाहिये कि गौ देशके प्रत्येक मनुष्यके लिये आवश्यक है और गौके न रहनेसे हिन्दू-मुसलमान सभीको समान रूपसे कष्ट होगा, जिससे वे भी इस आन्दोलनमें शामिल हों तथा सरकारको कानून बनाकर गोवध रोकनेके लिये बाध्य कर दें।

हिन्दुओंमें इस बातका खूब प्रचार हो जाना चाहिये कि एक भी गाय कसाईके हाथ जाय नहीं। गाय न मिलेगी तो कसाईखाने आप ही बंद हो जायँगे। जबतक हिन्दू गाय बेचते-बिकवाते हैं, तभीतक कसाईखाने चलते हैं!

जिन पशु-मेलोंमें कसाइयोंको गायें मिलती हैं, उन मेलोंको या उनमें गो-विक्रयको कानूनन चेष्टा करके बंद कराना चाहिये। लोकमत जाग्रत् करने, जनताको प्रभावपूर्ण रीतिसे समझाने तथा सरकारको बार-बार सुझानेसे ऐसा होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

बलिया जिलेके गङ्गातटपर लगनेवाले एक मेलेसे हजारों गायें प्रतिवर्ष कसाइयोंके हाथ जाती थीं। श्रीराघवप्रसादजी नामक एक गो-भक्त सज्जनके विशेष उद्योग और उसीमें लग जानेसे वहाँ गौका बिकना कतई बंद हो गया। ऐसा और जगह भी हो सकता है। यह प्रयत्न भी होना चाहिये कि मेलोंमें बिकनेके लिये गौएँ आयें ही नहीं।

सरकारने इधर 'भारत-रक्षा-कानून' के अनुसार उपयोगी गायोंके मारनेपर कुछ प्रतिबन्ध लगाये हैं। परंतु वे अस्थायी हैं। भरपूर चेष्टा करके धारा-सभाओंमें नये बिल लाकर उन्हें उचित और आवश्यक संशोधनके साथ स्थायी कानून बनवा लेना चाहिये और प्रत्येक प्रान्तमें उनपर ठीक-ठीक अमल होता है या नहीं, इसकी ओर गोसेवकों तथा 'गो-रक्षिणी संस्थाओं' को एवं म्युनिसिपलिटीके सदस्योंको विशेषरूपसे नजर रखनी चाहिये। ऐसा पता लगा है कि इस समय प्रतिबन्धोंके रहते हुए भी प्रतिबन्धके विरुद्ध गायोंकी हत्या होती है। इसमें हमारी अवहेलना और गो-हत्यारोंका स्वार्थ ही प्रधान कारण है।

जबतक स्थायी कानून न बनें, तबतक भारतके सभी प्रान्तोंमें वर्तमान कानूनके लागू करानेकी और उसपर पूरा-पूरा अमल हो—इसकी सार्वजनिक समितियों, गो-रक्षा-संस्थाओं तथा जिम्मेवार पुरुषोंको व्यवस्था करनी चाहिये। वर्तमान भारत-रक्षा-कानूनकी धारा ८१ के अनुसार—बंबई, मद्रास, बिहार, युक्तप्रान्त, उड़ीसा, आसाम, बंगाल और सिंधमें एक वर्षसे तीन वर्षतकके बछड़े-बछड़ी, पाड़े-पाड़ी, तीनसे दस वर्षतकके काममें आने लायक बैल, गाभिन होने तथा काम देने लायक गाय और सभी आयुकी दुधार और गाभिन गाय (कुछ प्रान्तोंमें दो वर्षतककी मादा भेड़-बकरी भी) वध नहीं की जा सकती। इनका वध करना, वधमें सहायता पहुँचाना और वधके लिये तो जाना अपराध माना जाता है और इस अपराधके लिये तीन सालतककी सख्त कैद और पशु जब्त करनेकी सजा नियत की गयी है। पंजाब तथा सीमाप्रान्तमें भी यह कानून लागू कराना चाहिये और जिन प्रान्तोंमें लागू है, उनमें निम्नलिखित दो काम करने चाहिये। ऐसा किया जायगा तो बहुत-से दुधार उत्तम पशुओंके प्राण बच जायँगे और चेष्टा करनेवाले पुण्यके भागी होंगे।

(क) जहाँ किसी कसाईखानेमें इस कानूनके विरुद्ध पशु मारे जाते हों, वहाँके इससे सम्बन्धित महकमेके स्थानीय अधिकारियोंको सूचना देनी चाहिये और समाचारपत्रोंमें घटना ठीक सत्यरूपमें जरूर प्रकाशित करानी चाहिये।

(ख) सभा करके इसका शान्तिपूर्ण विरोध करना चाहिये और सरकारके ऊँचे अधिकारियोंका भी इसकी तरफ ध्यान आकर्षित करना चाहिये।

स्थायीरूपसे कानून बनानेके लिये जगह-जगह सभाएँ करनी चाहिये। विभिन्न भाषाओंके समाचारपत्रोंमें लगातार लेख निकालने चाहिये। गोहित-सम्बन्धी स्वतन्त्र समाचार-पत्र भी निकलना चाहिये और लोगोंको आवश्यकता पड़नेपर गोवध बंद करानेके लिये आवश्यक त्यागके लिये भी तैयार रहना चाहिये।

न तो पशुओंको खाना और न पशुओंका शिकार ही करना। यह हमारा जरथुश्ती नेक धर्म है। (फिरदौसी)

अब तो चेतें

[आचार्य श्रीविनोबाभावेजीका संदेश]

'हिन्दुस्थान किसानोंका मुल्क है। खेतीका शोध भी हिन्दुस्थानमें ही हुआ है। गाय-बैलोंकी अच्छी हिफाजतपर हिन्दुस्थानकी खेती निर्भर है। हिन्दुस्थानी सभ्यताका नाम ही 'गोसेवा' है, लेकिन आज गायकी हालत हिन्दुस्थानमें उन देशोंसे कहीं अधिक खराब है, जिन्होंने गोसेवाका नाम नहीं लिया था। हमने नाम तो लिया पर काम नहीं किया। जो हुआ सो हुआ। लेकिन अब तो चेतें।'

गोरक्षाके लिये क्या करना चाहिये?

[महामना पण्डित श्रीमदनमोहनजी मालवीयका संदेश]

'यदि हम गौओंकी रक्षा करेंगे तो गौएँ भी हमारी रक्षा करेंगी। गाँवकी आवश्यकताके अनुसार प्रत्येक घरमें तथा घरोंके प्रत्येक समूहमें एक गोशाला होनी चाहिये। दूध गरीब-अमीर सबको मिलना चाहिये। गृहस्थोंको पर्याप्त गोचरभूमि मिलनी चाहिये। गौओंको बिक्रीके लिये मेलोंमें भेजना बिलकुल बंद कर देना चाहिये; क्योंकि इससे कसाइयोंको गायें खरीदनेमें सुविधा होती है। किसानोंकी स्थितिके सुधारके लिये दिये जानेवाले इन सुझावों तथा अन्य ऐसे सुझावोंको कार्यरूपमें परिणत करनेके लिये ग्राम-पंचायतोंका निर्माण होना चाहिये।'

बैलोंके बिना हमारी काश्तकारी नहीं चल सकती

[देशरत्न डॉ० श्रीराजेन्द्रप्रसादजीका संदेश]

देशरत्न डॉक्टर राजेन्द्रप्रसादजी महान् गोभक्त थे। आपने 'बिहार-प्रान्तीय गोशाला-पिंजरापोल-सम्मेलन' के समय पटनामें कहा था—'मवेशियोंसे हमारी जितनी आमदनी होती है और उनसे जो काम हमको मिलता है, उसकी मजदूरी इतनी होती है कि उन सबको जोड़ा जाय तो मालूम होगा कि मुल्कमें इतनी आमदनीका दूसरा कोई जरिया नहीं है, जितनी आमदनी हमको मवेशियोंसे होती है।

देशमें जितना चावल होता है उसकी कीमत मवेशियोंसे हुई आमदनीका $\frac{१}{३}$ और गेहूँकी कीमत $\frac{१}{४}$ है। इसीसे समझ सकते हैं कि किस तरह देशमें फैले हुए जानवर मेंहकी बूँदोंकी भाँति काम कर रहे हैं।

गाय दूध देती है, बैल हल जोतते हैं और बोझा ढोनेका काम करते हैं। दोनों घास आदिका चारा खाते हैं और इस चारे आदिकी कीमत दूध वगैरहके रूपमें वापस देते हैं, मरनेपर कीमती चमड़ा देते हैं और हड्डी आदि सब कुछ फिर जमीनमें खादके रूपमें वापस जाता है। इन सबका रुपयोंमें दाम लगाया गया है। सर आर्थर आलवरने हिसाब लगाकर बतलाया था कि इन सबकी कीमत करीब १९,००,००,००,००० रुपये होती है।'

मवेशियोंकी उपयोगिताका उल्लेख करते हुए आपने अपने भाषणमें एक समय कहा था—'हमारे देशमें गायें ऐसी होनी चाहिये जो अपनी जिंदगीमें काफी दूध दें। खेती और दूसरे कामोंके लिये मजबूत और मेहनती बछड़े दें, अपने मल-मूत्रसे काफी खाद दें और मर जानेपर अपने चमड़े, चर्बी, हड्डी और मांस वगैरहसे ही दूसरी अन्य जरूरी कीमती चीजें दें, तभी गाय ऐसी बन सकती है कि उसका पालन मुनाफेका कारण हो।'

'मरे ढोरोंकी हड्डियाँ जमा करके विदेशोंमें चली जाती हैं जो कि खाद बनकर जमीनकी उर्वरता बढ़ा सकती थीं

उससे देश वञ्चित हो जाता है। ······मांस और हड्डीकी खाद बहुत अच्छी बन सकती है। चर्बीका इस्तेमाल भी होता है।'

'इस प्रकार यदि हम पूरा हिसाब लगा कर देखें और जो कुछ मवेशियोंसे उनके जीते रहनेके समय और मर जानेके बाद मिल सकता है उसका ठीक उपयोग करें, तो मवेशी रखनेमें नुकसान नहीं होगा।'

'जहाँ प्राकृतिक सभ्यतामें जो हम लेते हैं उसे किसी-न-किसी रूपमें वापस कर देते हैं और फिर उसे पैदा कर लेते हैं, वहाँ आधुनिक सभ्यतामें हम संचित द्रव्यको खर्च करते ही चले जाते हैं और उसे फिर हम किसी ऐसे रूपमें वापस नहीं करते कि वह फिरसे अपने पूर्व-रूपमें हमें मिल सके।'

दूर-दूरसे अच्छी नस्लोंके जानवरोंको लाकर दूसरी जगह पालनेके विषयमें उन्होंने यह कहा है कि 'जिस आबोहवा और खुराकमें जो पला है उसीमें वह सबसे ज्यादा तरक्की कर सकता है।'

गोबरकी खादका महत्त्व बताते हुए उनका कहना है कि 'इस बातको भी सभी मानते हैं कि यदि काफी मिकदारमें (मात्रामें) गोबर वगैरहसे बनी खाद दी जाय, तो रासायनिक खादकी बिलकुल जरूरत नहीं होती है। गोबरकी खादसे नफाके बदले नुकसानका किसी हालतमें डर नहीं है। यह भी देखा गया है कि ऐसी चीजें जो इस वक्त बुहारनेमें फेंक दी जाती हैं, या जो गंदगी पैदा करती हैं और सेहतको नुकसान पहुँचाती हैं, उन सबका इस्तेमाल अगर ठीक तरहसे किया जाय तो नुकसानके बदले उनसे फायदा उठाया जा सकता है।'

जानवरोंको खली देनेके सम्बन्धमें आपने एक समय कहा था—'आज खलीका बहुत बड़ा हिस्सा खादके रूपमें खर्च होता है। मैं समझता हूँ यह गलत है, क्योंकि अगर उसी खलीको जानवरोंको दिया जाय तो जानवर ज्यादा स्वस्थ और मजबूत होंगे, बैल ज्यादा काम कर सकेंगे। इसके अलावा उनके पेटोंके कारखानोंमें वह खली फिर खाद बनकर जमीनको भी वापस मिल जायगी।'

नसल-सुधारके सम्बन्धमें आपने कहा है कि 'ऐसी नसल चुनी जाय जो दूध भी दे और अच्छे बछड़े भी दे। अंग्रेजोंको अपनी सेनाके लिये मांस तथा व्यापारके लिये चमड़ा चाहिये। वही प्राप्त करनेके लिये उन्होंने एकाङ्गी (केवल दूध या केवल बछड़ेवाली) नस्लकी उपयोगिताका प्रचार करके हमारे देशके लोगोंको भुलावेमें डाला है।'

मोटर ट्रैक्टरों आदि मशीनोंके जरियेसे खेती करनेके सम्बन्धमें आपका विचार है—

'मैं समझता हूँ कि जो हालत आजकल हिन्दुस्तानकी है, उसमें इस तरहकी कलोंसे थोड़ी दूरतक हम काम चला सकते हैं। मगर बैलोंकी जरूरत तो हमेशा रह जायगी। बैलोंके बिना हमारी काश्तकारी नहीं चल सकती।'

गोवध मनुष्य-वधके समान

[राजर्षि श्रीपुरुषोत्तमदासजी टण्डनके विचार]

२२ जनवरी, सन् १९५६ ई० में कलकत्तेमें आयोजित 'सर्वदलीय गोरक्षा-सम्मेलन' में राजर्षि श्रीपुरुषोत्तमदासजी टण्डनने गोरक्षाके सम्बन्धमें जो विचार व्यक्त किये, उसका सारांश यहाँ प्रस्तुत है—

राजर्षि टण्डनने शास्त्र, पुराण और हिन्दूधर्मका हवाला देते हुए बताया कि गौ यद्यपि पशु है, किंतु हिन्दू जाति और गौका सम्बन्ध अनादिकालसे माता-पुत्रका रहा है।

आज पाश्चात्त्य सभ्यतामें रँग गये मानसकी आलोचना करते हुए आपने दुःख प्रकट किया कि 'हिन्दू जाति अपनी जड़पर ही कुठाराघात करनेको आमादा हो गयी है। जो नेता विदेशोंके उदाहरण देकर हमें समझाना चाहते हैं वे अपनी जाति और देशके मर्मस्थलपर चोट पहुँचा रहे हैं। कोई भी उदाहरण अथवा तर्क हमें अपनी मातृभक्तिसे विलग नहीं कर सकता।'

आपने बिहार, उत्तरप्रदेश और पंजाब सरकारको

बधाई देते हुए कहा कि कलकत्ता और बंबईमें अंग्रेजी राज्यकालसे भी अधिक गोवध हो रहा है और गौ-जातिपर अकथनीय अत्याचार हो रहा है। आपने इस बातपर खेद प्रकट किया कि 'केन्द्रीय सरकार संविधानकी दुहाई देकर एक केन्द्रीय अधिनियम बनानेमें असमर्थता प्रकट कर रही है।'

महात्मा गाँधीके वाक्यको दुहराते हुए आपने कहा कि "प्रत्येक भारतीय उनके इस कथनका समर्थन करता है कि 'गोवध मनुष्य-वधके समान है।"

आपने उस व्यापार-नीतिकी भर्त्सना की जिसके द्वारा गौ, बछड़ेके चमड़ेसे डालर कमानेकी चेष्टा की जाती है। विदेशियोंको गो-मांस देना जरूरी है, इसलिये देशमें गोवधको आवश्यक बतलानेवालोंकी निन्दा की।

आपने कलकत्तेके व्यवसायियोंको भी चेतावनी दी कि वे लोग गौ-बछड़ेके चमड़ेका निर्यात-व्यवसाय कर पैसेके सामने मनुष्यताको कलंकित कर रहे हैं। हर गोभक्तसे आपने गोचर्मसे बने सामानोंका बहिष्कार करनेकी अपील की। बंगाल-सरकारसे जनताके मनोभाव समझकर शीघ्र ही उपयुक्त अधिनियम बनानेकी प्रार्थना की।

बंगालकी गोहत्याका उल्लेख करते हुए श्रीटण्डनजीने कहा कि 'यह पाप यहाँ पराकाष्ठापर पहुँच चुका है और यह देशके लिये महान् कलंक और अभिशाप है। वर्षमें तीन लाखसे अधिक अच्छी-अच्छी गायें यहाँ काट दी जाती हैं। यही हालत बंबईकी है। यदि यही क्रम जारी रहा, इसी तरह गौका ह्रास होता रहा तो देशकी अमूल्य निधिसे हाथ धोना पड़ेगा। औरोंके लिये रुपये-पैसे, सोना-चाँदीका बहुत मूल्य हो परंतु भारतका तो 'गौ' ही प्रधान धन है। यहाँ तो गोधनका ही माहात्म्य है। लाख-लाख गौओंके दानका प्रकरण शास्त्र एवं पुराणोंमें आता है। गोदान यहाँका प्रधान धार्मिक कर्तव्य है। इस गोधनकी रक्षा सब प्रकारके प्रयत्नसे होनी चाहिये।' चमड़ेके वस्तुओंके बहिष्कारके लिये जोर देते हुए टण्डनजीने इन वस्तुओंके निर्माणमें किस नृशंसता एवं निर्दयताके साथ निरीह गायें तथा उनके गर्भके बछड़ेतक मारे जा रहे हैं, इसका हृदयद्रावक चित्र खींचा, जिससे उपस्थित लोगोंकी आँखोंमें आँसू आ गये। आपने कहा कि 'फैशनके फेरमें पड़कर जो चमड़ेकी वस्तुएँ ही इस्तेमाल करते हैं वे गोहत्याके उतने ही जिम्मेदार हैं जितने कि गोमांस खानेके।' वस्तुतः अधिकांश गायें इसी चमड़ेकी वस्तुओंके लिये ही काटी जाती हैं। श्रीटण्डनजीने महिलाओंका आह्वान करते हुए जोरदार शब्दोंमें कहा कि 'चमड़ेके बैग, बिस्तर-बंद, बक्से तथा जूतियोंका पहनना छोड़ दें और अपने पति तथा पुत्रोंको भी इसके लिये तैयार करें।' [प्रेषक—श्रीशिवकुमारजी गोयल]

परम अध्यात्मकी प्रतीक गौ

[योगिराज श्रीअरविन्दके विचार]

(श्रीदेवदत्तजी)

पृथ्वीपर मूर्तिमन्त गौ जिस परम शक्तिकी प्रतीकस्वरूपा है, उसकी व्याख्या वेदोंमें भी साध्य नहीं है। गौ विश्वकी माता है, यह पार्थिव जगत्में जितना सत्य है उससे भी अधिक इसका महत्त्व आध्यात्मिक दृष्टिसे है। ऋग्वेदोक्त **'गोभिः श्रीणीत मत्सरम्'** (९।४६।४) का आशय है कि जो कुछ भी गौसे सम्बन्धित है वह सब कुछ इस परम आनन्दमय सोममें निहित है।

'गौ' वैदिक शब्द है, अतः वेदोंमें निहित परम ज्ञानको अभिव्यंजित करनेकी प्रणालीका अनुसरण करके इसके अर्थकी झलकमात्र पायी जा सकती है। गौके अर्थको समझनेके लिये वेदोंके अर्थको अभिव्यक्त करनेकी प्रणालीका ध्यान रखना होगा। वैसे भी वैखरी वाणीमें वेदार्थको अभिव्यक्त करना और उसका साधारणीकरण एक जटिल प्रक्रिया है। निघण्टुकारने अपना ग्रन्थ 'गौ' शब्दसे ही प्रारम्भ किया है और **'गौ'**, **'ग्मा'**, **'ज्या'**, **'क्ष्मा'**, **'क्षोणी'**, **'क्षिति'** आदिको पृथ्वी-नामधेय माना है। पुराणोंके

अनुसार पापका भार बढ़नेपर पृथ्वी गौका स्वरूप धारण करके भगवान् विष्णुके पास जाकर गुहार लगाती है। यह इसका भी प्रतीक है कि पृथ्वी तत्त्वमयी भूमा गौके रूपमें ही अपनेको पूर्णतया अभिव्यक्त कर सकती है और भगवान् भी गौकी गुहारको परम आदरके साथ सुनते हैं। पृथ्वीकी अभिव्यक्ति-हेतु इला और अदिति देवियोंके नाम भी व्यवहृत हैं। 'गौ' शब्द किरण, प्रकाश, इन्द्रियका अर्थ बोध कराता है और परा-पश्यन्ती-वैखरीवाक्‌का वाचक भी है। इस विषयमें अथर्ववेदमें कहा गया है—

नैतां ते देवा अददुस्तुभ्यं नृपते अत्तवे।
मा ब्राह्मणस्य राजन्य गां जिघत्सो जनाद्याम्॥

(अथर्ववेद ५। १८। १ ब्रह्मगवी सूक्त)

यहाँ राजासे निवेदन किया गया है कि 'हे राजन्! देवताओंद्वारा प्रदत्त ब्राह्मणकी वाणीकी प्रतीक यह गौ खा डालने अर्थात् अवरुद्ध करने-हेतु नहीं है। यह गौ अर्थात् वाणी अनाद्या अर्थात् कभी न खायी जा सकनेवाली है। इसका वह अन्त करनेकी इच्छा न करे।'

गौरूपा वाणीको चतुष्पदा भी कहा जाता है। वह मूलाधारमें परा, नाभिमें पश्यन्ती, हृदयमें मध्यमा और जिह्वासे उच्चरित होकर वैखरी कही जाती है। यह सदा रक्षणीया है। वाणी 'यज्ञाग्नि' और 'अघ्न्या' है। सदा शुद्ध और पालनीया है। भूमि, वाणी, किरण—इन्हें असहाय समझकर नष्ट करनेसे कालकी दुर्गति होती है।

'गौ' अमोघ शक्तिदायिनी है, और '**देवजूतैः**' (अथर्व० ५। १८। ८) यह पद परमात्मासे प्रेरिता सत्यमयी अभिव्यक्तिका बोधक है। इसे ऋत-स्वरूपा कहा गया है। '**सत्यं ऋतं बृहत्**'की अवधारणासे युक्त होनेके कारण प्रतीकार्थमें गौको वेद भी कहा जाता है।

गौ अर्थ, काम, धर्म-मोक्षकी धात्री होनेके कारण कामधेनु है। इसका अनिष्ट-चिन्तन ही पराभवका कारण है।

'**गु**' और '**गावः**'—ये दोनों संज्ञाएँ वैदिक मन्त्रोंमें '**गो**' और '**किरण**'—इन दोनों अर्थोंमें प्राप्त होती हैं। भारतीय चिन्तनमें सत्ता और चेतना एक-दूसरेके प्रतिरूप हैं। अदिति वह अनन्त सत्ता है जो सप्त नाम-धामके साथ देवमाताके रूपमें वर्णित की गयी है। वेद अदितिको अनन्त चेतना, आद्या, ज्योति और 'गौ' भी मानते हैं।

वैदिक ऋषियोंके स्तवनमें उषाकी स्तुतिमें गौका आध्यात्मिक रूप प्रकट होता है। वेदमें गौ इतनी अमूल्य विभूतियोंकी धारिका और वाहिका है कि इन्द्र और बृहस्पति भी देवशुनि सरमा और आङ्गिरस आदि ऋषियोंकी सहायतासे खोयी हुई गौओंको पुनः प्राप्त करते हैं। वैदिक मन्त्रद्रष्टा ऋषियोंने आध्यात्मिक उषाको 'गोमती' भी अभिहित किया है। वह संसारके लिये ज्योतिकी रचना करती है—

ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युषा आवर्तमः॥ (ऋग्वेद १। ९२। ४)

आध्यात्मिक ज्योतिर्मयी उषा गौ अर्थात् दिव्य चेतनाकी प्रसारिका किरणोंकी माता है। महर्षि वसिष्ठने गौको देवकार्यमें भाग-ग्रहणकारिणी माना है। इससे जहाँ वह अवरुद्ध है वह स्थान खुल जाता है और गौ मनुष्योंको दे दी जाती है। गौ अपने आध्यात्मिक वैभवमें इतनी अलंकृत और व्यापक है कि वह वैदिक ऋचाओंके बहुत बड़े भागको समाहित कर लेती है।

वेदोंमें गौओंको खोजना और उन्हें पुनः प्राप्त करना इन्द्रका कार्य वर्णित किया गया है। यह कार्य आङ्गिरस ऋषियोंकी सहायतासे अग्नि और सोमके मन्त्रों तथा यज्ञके द्वारा सम्पन्न होता है। श्रीअरविन्दकृत भाष्यके अनुसार गौ उषाकी छिपी हुई किरण है और अन्धकारसे उनकी मुक्ति अन्धकारमें हुए सूर्यके उदय होनेके कारण होती है। यह उच्चतर ज्योतिर्मय लोक 'स्वः की विजय है। सूर्य प्रतीक है दिव्य ज्योतिदायिनी शक्तिका। स्वः दिव्य शक्तिका लोक है। वेद गौको आङ्गिरस ऋषियोंके कार्यका, साधनाका फल भी वर्णित करते हैं। इस फलका सम्बन्ध पहाड़ियोंके तोड़े जाने और गौकी मुक्तिसे है। 'गौ' आध्यात्मिक उषाकी किरण अर्थात् प्रसारिका शक्ति है।

तद् देवानां देवतमाय कर्त्वमश्रथ्नन् दृळहाव्रदन्त वीळिता।
उद् गा आजदभिनद् ब्रह्मणा वलमगूहत तमो व्यचक्षयत् स्वः॥

(ऋ० २। २४। ३)

उपर्युक्त मन्त्र पणियों (अर्थात् अन्धकारके स्वामियों)-से गौको लाने और समाजके लिये ज्योतिको प्राप्त करनेका कथन करता है। इन्द्र अन्धकारमेंसे गौ-रूपी किरणोंको

दुहता भी है। वेदका इन्द्रके विषयमें कथन है कि—

तवेदं विश्वमभितः पशव्यं यत् पश्यति चक्षसा सूर्यस्य गवामसि गोपतिरेक इन्द्रः॥ (ऋ० ७। ९८। ६)

श्रीअरविन्दने अपने वेदार्थमें इस प्रमेयको सर्वतोभावेन सिद्ध कर दिया है कि वेदोंमें वर्णित गौ, पणियोंकी गौ परम आध्यात्मिक प्रकाशकी गौ है। वेदमें परमदेवके लिये जिस '**सत्यं ऋतम् बृहत्**' तत्त्वकी कल्पना की गयी है उसका आधार गौ है। '**गोदा इद् रेवतो मदः**'—इन्द्र पूर्ण रूपोंको बनानेवाला, भरपूर दूध देनेवाली गौके समान, उसका परम आनन्दमय सोम रससे प्राप्त आनन्द गौका दाता है (ऋ०१। ४। १-२)। क्योंकि गौ ज्ञान-स्वरूप है। '**इमा या गावः स जनास इन्द्रः**' (ऋ० ६। २८। ५, अथर्व० ४। २१। ५)।

गौ तथा सूर्यकी महिमाको वेदोंके मन्त्रद्रष्टा ऋषि एक कथानकके माध्यमसे हमें प्रदान करते हैं। उषा वह देवी है जो गौके बाड़ेकी तरह अन्धकारको खोल देती है। देवोंका सर्वश्रेष्ठ कार्य वह माना गया जिसने दृढ़ स्थानोंको ढीला किया, कठोरको मृदु किया। फिर बृहस्पति गौको हाँक लाते हैं। अन्धकारको दूर करके 'स्वः' को प्रकाशित कर देते हैं। वेदमें इन्द्रको वृषभ भी कहा गया है। जो वज्रको अपना साथी बनाकर ज्योतिके द्वारा अन्धकारमेंसे किरणोंको दुहते हैं। वह वज्र (स्वर्ण अश्मा) है जिसमें 'स्वः' की ज्योति रहती है—'**युजं वज्रं वृषभश्चक्र इन्द्रो निर्ज्योतिषा तमसो गा अदुक्षत्॥**' (ऋ० १। ३३। १०)

गौको चुरानेवाले 'पणि' को श्रीअरविन्दके भाष्यमें अन्धकारकी शक्तियोंका ही प्रतीक माना गया है। जिसे उषा खोल देती है '**व्रजस्य तमसो द्वारो०**' (ऋ० ४। ५१। २)। पणियोंकी इस परम गुप्त निधिकी विमुक्ति परम ज्योतिकी मुक्ति है।

भगवान् श्रीकृष्णकी गोचारणलीला

[गोलोकवासी परमभागवत पं० श्रीरामचन्द्रडोंगरेजी महाराज]

श्रीकृष्णब्रह्मके गोचारणकी, लोकोत्तर अद्भुत लीलाकी और परमपूज्या गोमाताकी बड़ी ही दिव्य विलक्षण महिमा है। शास्त्र घोषणा करते हुए कहते हैं—'**गावो विश्वस्य मातरः**' (विष्णुधर्मोत्तर० २। ४२। २) 'गौ समस्त विश्वकी माता है।'

साक्षात् अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक परात्पर ब्रह्मका उस पूज्या गोमाताकी रक्षा करनेके लिये ही भगवान् श्रीकृष्णके रूपमें अवतार हुआ। भगवान् श्रीकृष्णको गोमाता अपने प्राणोंसे भी प्यारी है। भगवान् श्रीकृष्ण उनके अनन्य भक्त हैं। श्रीकृष्ण जब कुछ बड़े हुए तो वे घुटुरुनके बल चलकर गायोंकी पूँछ पकड़कर खड़े होने लगे। एक दिन भगवान् श्रीकृष्णने अपनी मैया श्रीयशोदासे इस प्रकार वार्तालाप किया—

श्रीकृष्ण—मैया!

श्रीयशोदा—हाँ, बेटा कन्हैया!

श्रीकृष्ण—मैया! मैं तुझे एक बात सुनाता हूँ।

श्रीयशोदा—सुना, बेटा! क्या सुनाता है?

श्रीकृष्ण—मैया! मैं पहले एक बहुत बड़ा आदमी था।

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! तू बहुत बड़ा आदमी कब था?

श्रीकृष्ण—मैया! मैं अपने पहले जन्ममें बहुत बड़ा आदमी था।

श्रीयशोदा—अच्छा बेटा! तू पहले जन्ममें कितना बड़ा आदमी था?

श्रीकृष्ण—हाँ, मैया, मैं बहुत बड़ा आदमी था और मैं एक बहुत बड़ा राजा था।

श्रीयशोदा—अच्छा बेटा कन्हैया! तो तू पहले जन्ममें कौन-सा बड़ा राजा था?

श्रीकृष्ण—मैया! मैं पहले जन्ममें एक महाराजा था और मेरा नाम उस समय महाराजा रामचन्द्र था।

श्रीयशोदा—अच्छा, कन्हैया बेटा! तो तू ही पहले जन्ममें महाराजा रामचन्द्र था? अच्छा तो बतला अब बात क्या है?

श्रीकृष्ण—मैया! मैं उस समय बहुत बड़ा राजा

रामचन्द्र था; और मैं पूज्या गोमाताका बड़ा भारी भक्त था। उन्हें पालता, उनकी सेवा करता और उनका दान भी करता था। मैंने वन जानेके समय हजारों गौओंको त्रिजट ब्राह्मणको दानमें दिया था (वाल्मीकीय रामायण, अयोध्याकाण्ड, सर्ग ३२)। राज्यकालमें भी मैंने खूब गोदान और गोसेवा की; किंतु राजा होनेके कारण मैं अपनी इन पूज्या गोमाताकी पूरी तरहसे सेवा नहीं कर सका और इनकी सेवाकी लालसा मुझे लगी ही रह गयी।

श्रीयशोदा—तो बेटा! अब तू क्या करना चाहता है?

श्रीकृष्ण—मैया! अब मैं गायोंका ही नौकर बन करके आया हूँ और अब मैं गायोंकी खूब सेवा करना चाहता हूँ।

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! तो अब तू गायोंकी खूब सेवा किया कर, तुझे गायोंकी सेवा करनेसे रोकता कौन है?

श्रीकृष्ण—मैया! अब अपनी पूज्या गायोंका नौकर बनकर और गायोंका सेवक बनकर इन गायोंकी खूब जी भर करके सेवा करूँगा।

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! तू इन पूज्या गायोंकी और पूज्य ब्राह्मणोंकी कृपासे ही तो हमारी इस वृद्धावस्थामें उत्पन्न हुआ है। भला, तुझे इनकी सेवा करनेसे कौन रोक सकता है? बेटा कन्हैया! तू अब इन गायोंकी खूब सेवा कर।

श्रीकृष्ण—मैया! अब मैं जंगलोंमें, वनोंमें गायें चरानेके लिये जाया करूँगा।

श्रीयशोदा—अच्छा बेटा कन्हैया! अपने घरके पुरोहितजी महाराजको बुलाकर और उनसे शुभ मुहूर्त दिखाकर तब तुझे गाय चरानेके लिये शीघ्र ही भेजूँगी।

तदनन्तर पुरोहितजी महाराजको नन्दरायके गृहमें बुलाया गया और शुभ मुहूर्त दिखाया गया। जब वह शुभ दिन समीप आ पहुँचा, तब भगवान् श्रीकृष्णने अपनी मैया श्रीयशोदासे कहा—'मैया! मेरे गोचारणका अब शुभ दिन निकट आ गया है और अब मैं गायोंको चरानेके लिये जाऊँगा।'

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! यदि तू जंगलमें, वनोंमें गायें चरानेके लिये जायगा तो बेटा! तेरे इन छोटे-छोटे कोमल पैरोंमें जंगलोंके—वनोंके काँटे चुभेंगे और उन नुकीले काँटोंके चुभनेसे तुझे बड़ा भारी कष्ट होगा, इसलिये कन्हैया बेटा! तेरे लिये इन कोमल पैरोंमें काँटे न चुभें, इसके लिये मैं छोटी-छोटी जड़ीदार जूतियाँ बनवाये देती हूँ। जब वे बनकर आ जायँगी, तब तू उन्हें पहनकर गायोंको चरानेके लिये जाया करना।

श्रीकृष्ण—मैया! तू यह क्या कहती है? क्या मैं अपने इन पैरोंमें जूते पहनकर तब गायोंको चरानेके लिये जाया करूँगा?

श्रीयशोदा— हाँ बेटा कन्हैया! तू जंगलमें जूते पहनकर तब गायें चराने जाया करना।

श्रीकृष्ण—ना मैया! मैं अपने इन पैरोंमें जूते पहनकर गायोंको चरानेके लिये कभी नहीं जाऊँगा।

श्रीयशोदा—बेटा! तो और तू क्या पहनकर जायगा?

श्रीकृष्ण—मैया! मैं कुछ भी नहीं पहनूँगा! मैं तो नंगे पाँव ही जाऊँगा।

श्रीयशोदा—बेटा! तू जूते क्यों नहीं पहनेगा?

श्रीकृष्ण—यदि तू मेरे पैरोंके लिये जूते बनवाती है तो तू मेरी इन परमपूज्या गायोंके लिये भी जूते बनवा दे।

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! तू बड़ा भोला है। तू कुछ बावला भी दीखता है। भला कहीं गायोंके लिये जूता-जूती बन सकती है?

श्रीकृष्ण—तो मैया! मैं नौकर और गायोंका सेवक, तो अपने पैरोंमें सुन्दर जड़ीदार रेशमी जूते पहनकर जाऊँ और जो पूज्या गौ माता हमारी मालिक और प्रात:स्मरणीया परम इष्टदेवी हैं, वे नंगे पाँवों जंगलोंमें जायँगी, क्या ऐसा करना उचित होगा? मैया! भला ऐसा कैसे हो सकता है? यह तो मैया! मर्यादाके सर्वथा विरुद्ध बात होगी।

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! तू तो मनुष्य है और छोटा-सा बालक है और तेरे पैर छोटे-छोटे कोमल-कोमल हैं। तुझे नंगे पाँवों जंगलोंमें जानेसे बड़ा भारी कष्ट होगा और तेरे इन पाँवोंमें जंगलों और वनोंके नुकीले काँटे चुभेंगे। गायें तो पशु हैं। भला ये गायें जूती कैसे पहन सकती हैं?

श्रीकृष्ण—मैया! तू मेरी पूजनीया प्रात:स्मरणीया

परम इष्टदेवी गौ माताको पशु बताती है? पूजनीया गौ माता कहीं पशु होती है माँ! क्या श्रीतुलसी महारानी सामान्य घास होती हैं? पतितपावनी श्रीगङ्गाजी महारानी क्या कहीं सामान्य जलकी नदी होती हैं? क्या कल्पतरु सामान्य वृक्ष और चिन्तामणि पत्थर है? मैया! तैंने आज हमारी गैया मैयाको पशु कैसे बता दिया? उन्हें पशु कैसे कह दिया?

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! यदि ये गायें पशु नहीं हैं तो बता फिर वे क्या हैं?

श्रीकृष्ण—मैया! सभी कामनाओंको देनेवाली यह पूज्या गौ माता तो साक्षात् कामधेनु है। यह हमारी परमपूज्या इष्टदेवी है। इसके रोम-रोममें तैंतीस करोड़ देवी-देवताओंका निवास है। इस देवीके मूत्रमें श्रीगङ्गाजीका वास है और गोबरमें श्रीलक्ष्मीजी महारानीका निवास है। शास्त्र गोमाताको समस्त विश्वकी माता बता रहे हैं, '**गावो विश्वस्य मातरः**', फिर भला गोमाता पशु कैसे हो सकती है? पूज्या गोमाता तो हमें इस भवसागरसे पार लगानेवाली माता है। इसकी रक्षासे और सेवा करनेसे इसकी कृपा प्राप्त होती है और पूज्या गोमाताकी कृपासे इसके लोक—श्रीगोलोकधामकी प्राप्ति होती है। पूज्या गोमातासे बढ़कर भला और कौन देवता है?

श्रीयशोदा—अच्छा बेटा कन्हैया! यदि यह बात है तब तो फिर तू अपने नंगे पाँवों ही गायोंको चरानेके लिये जंगलोंमें जाया कर। अब मैं तुझे कभी भी मना न करूँगी।

बस, अब क्या था? साक्षात् अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक जगन्नियन्ता परब्रह्म परमात्मा नन्दनन्दनके रूपमें—छोटे-से बालकके रूपमें जंगलोंमें गायें चरानेके लिये जाने लगे और गायोंकी अपनी हाथोंसे सेवा करने लगे। श्रीकृष्ण-ब्रह्म गायोंको चरानेके लिये जाते समय अपने हाथमें डंडे नहीं रखते थे और कोई शस्त्र नहीं रखते थे। वे अपने हाथमें केवल वंशी लिये हुए ही गायें चराने जाते थे। इस महान् अद्भुत दृश्यको देखनेके लिये बड़े-बड़े पूज्य देवी-देवता अपने-अपने लोकोंको छोड़-छोड़कर व्रजमें चले आते और यह अद्भुत दृश्य देखकर आश्चर्यचकित रह जाते थे। जो परात्पर ब्रह्म भगवान् श्रीकृष्ण बड़े-बड़े महान् योगियोंके समाधि लगानेपर भी ध्यानमें नहीं आते, वे ही साक्षात् परात्पर ब्रह्म श्रीकृष्ण पूज्या गोमाताके पीछे-पीछे नंगे पाँवों जंगलोंमें, वनोंमें अपने हाथमें वंशी लिये घूम रहे हैं, इससे बढ़कर आश्चर्यकी बात भला और क्या होगी? इससे बढ़कर पूज्या गौ माताकी अद्भुत महत्ताका जीता-जागता ज्वलन्त उदाहरण और प्रत्यक्ष प्रमाण भला और क्या हो सकता है?

समस्त विश्वका पेट भरनेवाला श्रीकृष्णब्रह्म गोमाताके माखनका भूखा

भगवान् श्रीकृष्ण साक्षात् अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक एवं परब्रह्म परमात्मा हैं। वे विश्वके कर्ता-पालक एवं धारणकर्ता हैं। समस्त जीवोंका भरण-पोषण करनेवाले भी वे ही हैं। चींटीसे लेकर हाथीपर्यन्त जीवमात्रको खिलाने-पिलानेवाले वे ही हैं। जो आस्तिक और भक्त हैं, उनके लिये तो वे ही साक्षात् योगक्षेमवाहक हैं—

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

(गीता ९। २२)

वे प्रभु ही उन्हें खिलाते-पिलाते हैं और उनका सब प्रकारसे वे प्रभु श्रीकृष्ण योग-क्षेम वहन करते हैं। परंतु जो घोर नास्तिक हैं और जो ईश्वरको नहीं मानते उन घोर नास्तिकोंका भी भरण-पोषण करते हैं तथा उन्हें भी वे खिलाते-पिलाते हैं और उनका पेट भरते हैं, क्षुधा शान्त करते हैं। समस्त जगत्‌की क्षुधा शान्त करनेवाले वे ही परात्पर ब्रह्म श्रीकृष्ण अपनी मैया श्रीयशोदाजीसे एक दिन बोले—

श्रीकृष्ण—मैया!

श्रीयशोदा—हाँ बेटा कन्हैया!

श्रीकृष्ण—मैया! आज तो मुझे बड़ी भूख लग रही है।

श्रीयशोदा—अच्छा कन्हैया बेटा! तुझे भूख लगी है?

श्रीकृष्ण—हाँ मैया! मुझे बड़ी भूख लगी है।

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! यदि तुझे भूख लगी है तो फिर घरमें खाने-पीनेकी कमी क्या है? खूब मेवा-मिष्टान्न और सब प्रकारके बड़े-बड़े सुस्वादु पदार्थ तैयार हैं, जो भी

तेरा जी चाहे, वह तू खूब खा। बेटा! तुझे मना कौन करता है?

श्रीकृष्ण—ना मैया, मेरी भूख तेरे इन मेवा-मिष्टान्न आदिसे शान्त नहीं होगी और नहीं मिटेगी।

श्रीयशोदा—फिर बेटा! तू क्या खाये-पीयेगा? मैं वही तुझे मँगाकर खिलाऊँ-पिलाऊँगी।

श्रीकृष्ण—मैया! मैं तो गायोंका दूध-दही-माखन-मलाई-मिश्री खाऊँगा, तब तेरी भूख मिटेगी।

श्रीयशोदा—बेटा कन्हैया! तैंने यह बात क्या कही? घरमें खूब गायोंका दूध-दही-माखन-मलाई, मिश्री आदि भरे पड़े हैं। चाहे जितना खाओ, तुझे रोकता कौन है? फिर तू बाहर क्यों जायगा?

श्रीकृष्ण—ना मैया, मैं अपने घरके दूध-दही-माखन-मलाईसे अपनी भूख नहीं मिटाऊँगा। मैं तो गोपियोंके घरपर जाकर उनके घरोंकी गायोंके भी माखन-मलाई-मिश्री खाकर अपनी भूख मिटाऊँगा।

श्रीयशोदा—अच्छा कन्हैया बेटा! यदि तू नहीं मानता है तो तू गोपियोंके घरोंमें ही जाकर और उनके घरोंकी गायोंके दूध-माखन-मलाई-मिश्री खाकर अपनी भूख मिटा ले, पर तू बेटा! भूखा मत रह।

बस, फिर क्या था—'अब तो साक्षात् अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक परात्पर ब्रह्म, सबकी भूख मिटानेवाला भगवान् श्रीकृष्ण गोपियोंके घरोंमें जा-जाकर और उनके घरोंकी गायोंका दूध-दही-माखन-मलाई और मिश्री खा-खाकर अपनी भूख मिटाने लगा।'

परिणाम

और इसी गोदुग्धका पानकर भगवान् श्रीकृष्णने दिव्य गीतामृतका प्रवचन किया—'**दुग्धं गीतामृतं महत्**'। गौओंने स्वदुग्धसे अभिषिक्तकर उन्हें गोविन्द—गौओंका इन्द्र बनाया। उनके ध्यान-स्मरणसे कलियुग समाप्त होकर सतयुग होता है—'**कलौ कृतयुगस्तस्य""""हृदये यस्य गोविन्दः।**' '**गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा**' यही उनका सर्वोत्तम मन्त्र है। वस्तुतः गो-गोविन्द सदा एक साथ हैं।

जाको ध्यान न पावे जोगी। सो ब्रजमें माखन को भोगी॥

कैसी हैं वे महाभागा श्रीगोपिकाएँ, जिनके घरोंमें जा-जाकर श्रीकृष्णब्रह्म माखन-मिश्री माँग-माँगकर खा रहे हैं! कैसी है वह पूज्या गोमाताओंकी अद्भुत विलक्षण महिमा, जिनके माखन-मिश्रीपर, दूध-दहीपर श्रीकृष्णब्रह्म रीझ रहा है और अपनी भूख मिटा रहा है। धन्य हैं ये श्रीगोपिकाएँ और धन्य हैं ये गोमाताएँ!

बोलो गोमाताकी जय!

गोपालन, गोपाल और गो-महिमा

[श्रीराधाकृष्णजी श्रोत्रिय, 'साँवरा']

गोकुलेश गोविन्द प्रभु, त्रिभुवनके प्रतिपाल। गो-गोवर्धन-हेतु हरि, आपु बने गोपाल॥ १॥
द्वापरमें दुइ काज-हित, लियौ प्रभुहि अवतार। इक गो-सेवा, दूसरौ भूतल कौं उद्धार॥ २॥
गोप-वेश रुचिकर लगत, गो-गोपी गो-बाल। सँग सोभित गोधन विपुल, बिहरत वन नँदलाल॥ ३॥
गो-संवर्धन काज-हित, धरि गोवर्धन हाथ। गो-गोपन रक्षा करी, रक्षक गोपीनाथ॥ ४॥
जिन चरननकी धूरि कौ, ब्रह्मादिक ललचात। वे ही गउअन सँग फिरैं, गो-रज रंजित गात॥ ५॥
गउअनके सँग जात जब, मधुवन बाल मुकुन्द। गो-वृन्दनके सिन्धु ज्यों, बह्यौ जात गोविन्द॥ ६॥
लीलाधर लीला करन, जब गोचारण जात। गो-परिकर गो-गोष्ठकी, गो-रज लिपटत गात॥ ७॥
लीला मात्र न जानिये, है अति मरम विशाल। गो-विभूति गोलोककी, गोपालक गोपाल॥ ८॥
इष्टदेव प्रभु सबहिके, जिनकी गउएँ सेव। तिनकी सेवा सौं स्वयं, चार पदारथ लेव॥ ९॥
जिनके सेवक हैं स्वयं गोकुलेश गोपाल। उनकी सेवासे कहौ, क्यों न कटै भवजाल॥ १०॥

गोसेवा ही सच्ची राष्ट्र-सेवा एवं सर्वोत्तम भगवदाराधना है

[अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु निवृत्त शंकराचार्य स्वामी श्रीनिरञ्जनदेवतीर्थजी महाराज]

भारतीय संस्कृतिकी सच्ची रीढ़ गो-संस्कृति ही है। स्वतन्त्रताप्राप्तिका मुख्य उद्देश्य भारतीय संस्कृतिकी सारसर्वस्व प्राणभूता गोमाताकी आराधना ही थी। पर स्वतन्त्रता प्राप्त होते ही राजनीतिके नामपर धर्म और संस्कृतिके सर्वथा विरुद्ध नेताओंके मनमें कोई एक पाश्चात्त्य अनुकृतिरूपा पिशाचिनी प्रविष्ट हो गयी, जिसका प्रत्यक्ष प्रचण्ड नग्न ताण्डव आज सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा है। बस केवल लूट-पाट, डाका, हत्या तथा महान् अनर्थकी विभीषिका सर्वत्र व्याप्त है। सुख, शान्ति, सद्भावना, परस्पर प्रेमका व्यवहार इस राजनीतिके द्वारा सर्वथा लुप्त कर दिया गया। आज सदाचार, सद्विचार, भगवद्भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, सत्संगका प्रायः सर्वथा लोप-सा हो रहा है और विश्वके नित्य सच्चे स्वामी भगवान्‌परसे श्रद्धा, विश्वास, आस्था उठ चुकी है। यहाँतक कि संत, महात्मा, भक्त और धर्मात्माओंकी भी महान् उपेक्षा एवं कभी-कभी हत्या भी कर दी जाती है। भारतमें बृहस्पति, शुक्र, कौटिल्य, सोमदेव, चंडेश्वर आदिके अनेक धर्म एवं ईश्वर-सापेक्ष श्रेष्ठ प्राचीन राजनीति-ग्रन्थ आज भी विद्यमान हैं। रामायण, महाभारत, मनुस्मृति तथा विष्णुधर्मोत्तर आदि पुराणोंमें राजनीति और कला-विज्ञान आदिका भंडार भरा पड़ा है, जिनके सामने विश्वका सारा नवीन ज्ञान-विज्ञान कौड़ी-मूल्यका नहीं है। पर देशका दुर्भाग्य है कि देशके कर्णधारोंने उनपर किये गये शोधपूर्ण पाश्चात्त्योंके ग्रन्थोंपर भी दृष्टिपात नहीं किया। रामचरितमानस-जैसे विश्वके सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थसे भी वे पूर्णरूपसे परिचित नहीं हैं। अब सोचिये कि ऐसे लोग क्या कर सकते हैं, जो कर सकते हैं, वही कर रहे हैं। इन्हें गोमाताका ध्यान कहाँसे होगा?

गोमाता विशुद्ध सत्त्वमयी भगवती पृथ्वीकी प्रतिमूर्ति है, समग्र धर्म, यज्ञ, सत्कर्म और विश्वसंचालनका आधार है और सूधेपन तथा वात्सल्यकी तो सीमा ही है। इसके दर्शन, स्पर्श, वन्दन, अभिनन्दन आदिसे सारे पाप-तापका शमन होकर परम कल्याण एवं सुख, शान्ति, आनन्दका संचार होता है तथा सब प्रकारके मङ्गलमय अभ्युदयका आगमन होता है, यह सबका हृदय जानता है। इसलिये यह निरन्तर पूजनीय, वन्दनीय एवं अभिनन्दनीय है। वेदसे लेकर रामचरितमानसतककी प्रत्येक पंक्तिमें इसीकी ही सर्वाधिक महिमा भरी पड़ी है।

आजकल एक बात विशेष ध्यान देनेकी है। एक तो सामान्य जनताकी गोपालनकी प्रवृत्ति कम होती जा रही है तथा जो लोग गोपालन करते हैं वे भी स्वार्थवश दूधके लोभमें [विदेशी] जर्सी गायको रखना चाहते हैं जो वास्तवमें गाय ही नहीं है। इसका पालन गोसेवा नहीं है। गोबर, गोमूत्र और गायोंका आवास स्वास्थ्यप्रद माना जाता है जो विदेशी गायोंमें नहीं है। गौ माताके जो लक्षण अपने शास्त्रोंमें बताये गये हैं वे लक्षण केवल भारतवर्षकी देशी गायोंमें ही उपलब्ध हैं। भारतीय गायोंका विशिष्ट लक्षण है उनका गलकम्बल और पीठका ककुद्, इसलिये गोदान आदिमें भी जर्सी गायोंको देना धनका अपव्यय मात्र है। गौ माताकी सेवासे जो भी आध्यात्मिक और आर्थिक लाभ है, वह देशी गौकी सेवासे ही है। आजकल दूध बढ़ानेके लिये देशी गायोंका जर्सी आदि विदेशी साँड़ोंसे सम्पर्क कराया जाता है, जिसके परिणाम-स्वरूप देशी गौकी नस्ल ही समाप्त होती जा रही है।

'कल्याण' के प्रस्तुत विशेषाङ्कमें हमारे पाठकोंने गोमहिमाकी समग्र बातोंको ध्यानसे पढ़ा होगा, पढ़ेंगे। सभी शास्त्रों एवं अपने-अपने धर्मग्रन्थोंके आकर्षक दिव्य वचन भी प्रमाण-रूपमें देखे होंगे। यहाँ उस सम्बन्धमें अब कुछ भी अधिक लिखना पिष्ट-पेषण-जैसा होगा। हम तो यहाँ हिन्दू, मुसलमान, जैन, बौद्ध, ईसाई—सभी भाइयोंसे यही प्रार्थना करेंगे कि आपके सभी धर्मग्रन्थोंमें गोमाताका अपार आभार स्वीकार किया गया है। आप सभी लोग गोसेवक हैं। अतः ताजिया, दुर्गापूजा तथा विभिन्न चुनावों आदि-जैसे उत्सवोंमें खर्च होनेवाले तीन-चार दिनोंके अंदर अरबों-खरबों रुपयेमेंसे कुछ या अधिक-से-अधिक कटौती कर प्रत्यक्ष संतस्वरूपा तथा दूध, घी आदि प्रदान करनेवाली भारतीय गोमाता [फ्रिजियन आदि नहीं] की सेवामें लगायें।

यह कोई कठिन बात नहीं होगी; प्रत्युत इससे आप अपना एवं दूसरोंका लोक-परलोक सुधार लेंगे।

गौओंकी उपेक्षासे आज पृथ्वी नरक बन गयी है। पर पूरा विश्वास कीजिये इन देवता-देवियों और उत्सवोंकी जगह सच्ची महामहिमामयी देवी गोमाताकी सेवासे साक्षात् स्वर्ग या गोलोक ही इस भूमण्डलपर उतर जायगा तथा सच्चे सुख, शान्ति, आनन्द और कल्याणकी मधुमयी सुधाधारा निरन्तर प्रवाहित होने लगेगी। सब लोगोंके विचार बदल जायँगे। परस्पर सौहार्दका वातावरण उपस्थित होकर प्रतिक्षण दिव्य ज्ञान-विज्ञान एवं भक्तियोग आदिके चमत्कारपूर्ण प्रचार-प्रसार सर्वत्र दीखने लगेंगे। सभी प्रकारकी विद्याएँ, विशुद्ध बुद्धि एवं धर्म-पुण्यके सभी अङ्ग-प्रत्यङ्ग प्रस्फुटित होने लगेंगे। '**वृषो हि भगवान् धर्मः।**' जब साक्षात् धर्मरूप वृषभ चतुष्पादसे सम्पन्न होकर पृथ्वीपर विचरण करेगा, तब पूर्ण सत्ययुग आ जायगा एवं सभी जितेन्द्रिय होकर भक्त, संत, धर्मात्मा, महात्मा एवं विद्वान् बन जायँगे। किसीको किसी वस्तुका स्वप्नमें भी अभाव नहीं होगा। परिपूर्ण परमानन्दकी व्याप्ति एवं प्राप्ति होने लगेगी। इससे अधिक क्या चाहिये। सर्वत्र कृतार्थता और कृतकृत्यता ही दीखेगी। सभीसे करबद्ध प्रार्थना है कि आप हमारी इस अभ्यर्थनाको स्वीकार करें।

अनाद्या अवध्या गौ

(वीतराग स्वामी श्रीनन्दनन्दनानन्दजी सरस्वती, एम० ए०, एल-एल० बी०, भूतपूर्व संसद्-सदस्य)

'**मा गामनागामदितिं वधिष्ट**' (ऋग्वेद)। विश्वके पुस्तकालयमें ऋग्वेद सर्वप्राचीन अथवा सर्वप्रथम ग्रन्थ है। नित्य अपौरुषेय ज्ञान विश्वके जीवमात्रको आदेश देता है कि गौ अदिति तथा अनागा है, इसका वध न करो। 'गो' शब्द वाणी तथा पृथ्वीवाचक भी है और समस्त मौलिक, दिव्य तथा पारमार्थिक जगत्का सार है। '**दितिर्वै नाशः**' 'दिति' नाम नाशका है, 'अदिति' अविनाशी अमृतत्वका नाम है। गौको अदिति कहकर वेदने अमृतत्वका प्रतीक बताया है। अमृतत्व स्वयं अमृत होकर औरोंको अमृत होनेका मार्गदर्शक और प्रेरक है। इसकी रक्षा और वृद्धिसे समस्त विश्व सुरक्षित और समृद्ध होगा। इस कारण भारतीय संस्कृतिके प्राचीन चिन्तकोंने इसको सदा पूज्य और अपने तथा विश्वके जीवनका केन्द्र मानकर इसकी सदा पूजा और रक्षा मातृसदृश की। भारतीय जीवनके सभी विभागोंमें गौका अनुपम मातृस्थानीय सहयोग है, इसलिये '**गावो विश्वस्य मातरः**' कहा गया है।

श्रीमद्भगवद्गीतामें विष्णु, जीवन और कर्मको यज्ञ-रूप कहा गया है।

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति॥

(३।१६)

यज्ञके बिना जीवनको सर्वथा निरर्थक माना गया है। विश्व-कल्याणका प्रमुख साधन यज्ञ है। गौ और ब्राह्मणको यज्ञका मुख्यतम अङ्ग कहा गया है। दोनोंका एक कुल है—'**एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरन्यत्र तिष्ठति।**' यज्ञ मन्त्र (ब्राह्मण) और हवि (गौ) की समष्टि है। इनके विरोधी विश्वके तथा जीवनके शत्रु हैं। सर्वजगन्नियन्ता परमेश्वरको भी इसी कारण गो-ब्राह्मणरक्षक कहा गया है। द्वापरान्तमें परब्रह्मके परिपूर्णावतार गोपाल ही थे। वृन्दावन, भाण्डीरवन, कामद आदि क्षेत्रोंमें गौओंके पीछे सर्वथा निरावरण वनमें विचरण करते हुए श्रीभगवान्के मुखसे गौके चरणरजसे पवित्र होनेकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा निकली है।

अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः।

गोचरणरज उड़-उड़कर परब्रह्मके श्रीअङ्गको पूत करती है, जिससे परब्रह्म अपनेको धन्य मानते हैं। इस कारण कोई भी विवेकशील प्राणी गौके द्वारा पवित्र होनेके अतिरिक्त और क्या सौभाग्य समझ सकता है? गोकुल परब्रह्मका घर है। नन्दबाबा, वृषभानु आदि दूसरे गोपालधुरन्धर बड़ी मात्रामें गोदुग्ध और मक्खनका प्रसारकर विश्वको हृष्ट-पुष्ट और समृद्धिशाली बनानेमें सहायक थे। श्रीकृष्णद्वारा ११ वर्षकी अवस्थामें मुष्टिक, चाणूर, कुवलयापीड हाथी

और कंसका वध गोरसके अद्भुत चमत्कारके प्रमाण हैं।

दर्शनशास्त्रमें 'गो' नाम इन्द्रियोंका और वासुदेव नाम अन्तरात्माका आश्रयण करता है और भगवान् वासुदेव इन्द्रियोंका आप्यायन करते हैं, इसीलिये वे वासुदेव कहलाते हैं। वासुदेव परब्रह्म और उसकी शक्तियाँ—ये विश्वके पालक हैं। इनकी रक्षासे धर्मरक्षा और विश्वरक्षा स्वाभाविक सिद्ध है। महात्माओंने धर्मरक्षाको ही समाज, राष्ट्र और विश्वरक्षाका साधन माना है। कुछ लोगोंने धर्मरक्षा और गोरक्षाको राष्ट्रके लिये अहितकर कहकर इसका कड़ा विरोध किया, कुछ राजनीतिज्ञ इस्लाम आदि दूसरे मतावलम्बियोंको प्रसन्न करनेके लिये गोरक्षाका पूर्ण विरोध कर रहे हैं। गोरक्षापर भारतवासियों और हिंदू जातिके किसी पक्षका भी मतभेद न होनेसे सभीने इसका समर्थन किया, तब भी देश और हिंदू जातिको विभाजन-दुर्भाग्यका प्रमाण मिला और हिंदू गोरक्षाके मोर्चेपर कितने ही वर्षोंसे विफल होता आ रहा है। हिंदू जाति कटी-फटी और असहाय सभी मोर्चोंपर विफल हो रही है, परंतु परमपूज्य शंकराचार्यके नवावतार अनन्तश्री करपात्री स्वामीजी महाराजने सम्पूर्ण गोवध-बंदीके लिये सर्वथा शान्त और अहिंसक धर्मयुद्धका सूत्रपात किया, किंतु हिंदू जातिके दुर्भाग्यसे लाखोंकी जेलयात्रा और प्राण-त्यागके बाद भी तथा अनन्तश्री जगद्गुरु शंकराचार्य पुरीपीठाधीश्वर स्वामी निरंजनदेवतीर्थके ऐतिहासिक अनशन और जेलयात्राके बाद भी सरकारने गोरक्षाके राष्ट्रिय कलंकको चालू रखा।

सभी राजनीतिक दल हिंदू-जागरण और एकात्मतासे त्रस्त हैं। गोरक्षामें असफल हिंदू-धर्म सभी मोर्चोंपर अरक्षित, सभी राष्ट्रविरोधी, समाज-विरोधी, धर्म-विरोधी व्यक्तियों—गठबन्धनों और दानवीय अत्याचारका शिकार बन रहा है। कुछ हिंदू युवकोंमें जीवन और जागरणके लक्षण दीख रहे हैं। यदि स्वाध्याय और धार्मिक जागरणका वातावरण बना तो सम्भव है, यह अर्धसुप्त जर्जरित हिंदू सिंह जग उठे। हिंदू रिजर्व फोर्स अभी मैदानमें नहीं आयी। हनुमान्, परशुराम, व्यास आदि महाशक्तियाँ उपयुक्त अवसरकी वैसे ही प्रतीक्षामें हैं, जैसे कि बाबर, अकबर और औरंगजेबके शासन-अत्याचारमें समर्थ स्वामी रामदास, वीर मराठा, वीर छत्रसाल, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवा, राणा लाजसिंह आदि मोर्चा सँभालने और हिंदुओंको जीवनदान देनेके लिये पूर्ण दलबलसे प्रकट हुए थे। **'धर्मो जयति नाधर्मः'** **'विष्णुर्जयति नासुराः'** का दृढ़ विश्वास आस्तिक वर्गकी शाश्वत शक्ति और विभूति है। आजका हिंदू उस विभूतिका स्वागत एवं प्रयोग करेगा तो उसके जीवित एवं विजयी होनेमें संदेह नहीं—

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥

गौ माताकी जय हो, गोपाल कृष्णकी जय हो, बजरंगबलीकी जय हो, जगदम्बाकी जय हो, धर्मवीरोंकी जय हो।

आर्य-साहित्यमें गो-गौरव

[श्रीरामानन्दजी द्विवेदी]

गोकी बड़ी महिमा बताता आर्य-जन-साहित्य है।
गो-रोम-रोम निवास करते देवता सब नित्य हैं॥
गो-पुच्छ द्वारा झाड़नेसे रोग भय जाते सभी।
गो-मूत्र गो-मयके बिना शुचिता नहीं होती कभी॥
तब एक गोका मूल्य-अंकन बृहद राज्याधिक्य था।
गो ही नहीं बछड़े वृषभ सबका उचित आतिथ्य था।

गोके लिये थे गोत्र जिससे श्रेष्ठ गो-रक्षा बने।
कश्यप, भरद्वाजादि सब मिल गोत्रके कक्षा बने॥
परम्परासे गोत्र अबतक वंश-परिचय दे रहा।
गो-एषणा प्राचीन आर्योंका सदान्वेषण रहा॥
सब तुच्छ है पुत्रैषणा वित्तैषणा दारैषणा।
सुर-असुर-वन्दित मोक्षदायिनि लोक-ख्यात गवेषणा॥

(गो-भारती)

गोमहिमा

[अनन्तश्रीविभूषित दक्षिणाम्नायस्थ शृंगेरी-शारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीभारतीतीर्थजी महाराज]

हम सभी भारतीयोंके लिये गाय पूजनीय है। उसकी पूजासे अति विशिष्ट फलकी प्राप्ति होती है और उसकी अवमाननासे भारी अनर्थकी प्राप्ति होती है, यह बात भी सर्वसामान्यको अच्छी तरह ज्ञात है।

जैसा कि कहा जाता है कि संतानरहित महाराज दिलीपने पुत्रकी कामनासे भगवान् वसिष्ठकी शरण ली। इसपर भगवान् वसिष्ठने उनसे इस प्रकार कहा—'राजन्! बहुत पहलेकी बात है कि एक बार जब आप इन्द्रकी राजधानीसे उनसे मिलकर पृथ्वीपर लौट रहे थे तो आपको मार्गमें कल्पतरुकी छायामें विश्राम करती हुई कामधेनु मिली। वह प्रदक्षिणाके योग्य थी, किंतु आप उसे बिना नमस्कार किये चले आये। इस अपमानसे दु:खी होकर उसने आपको नि:संतान रहनेका शाप दे दिया। इसलिये अबतक आपको पुत्रमुख-दर्शनका सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। अब तो आप उसकी पुत्री नन्दिनीकी आराधनासे अपना अभीष्ट प्राप्त कर सकते हैं।' तदनन्तर महर्षिकी आज्ञाको शिरोधार्यकर राजा दिलीपने उस नन्दिनीकी भक्तिपूर्वक महान् सेवाकर उसकी कृपासे 'रघु' नामक कुलदीपक पुत्रको प्राप्त किया। इसी कथाका, बड़ी श्रद्धासे महाकवि कालिदासने अपने रघुवंश महाकाव्यमें बड़े सुन्दर ढंगसे वर्णन किया है।

श्रुति गायको 'अघ्न्या' कहकर श्रद्धेय और अवध्य बताती है। श्रुतिका प्रत्यक्ष वचन है। '**मा गामनागामदितिं वधिष्ट।**' इस श्रुतिका तात्पर्य यह है कि गाय निरपराधिनी है, निर्दोष है तथा पीडा पहुँचाने योग्य नहीं है और अखण्डनीय है, अत: इसकी किसी प्रकार भी हिंसा न करो, तनिक भी कष्ट न पहुँचाओ। इस श्रुतिसे यह स्पष्ट है कि गाय किसी भी प्रकार दण्ड देने योग्य या पीडा पहुँचाने योग्य नहीं है।

देवीके नामोंमें 'गोमाता' का भी उल्लेख हुआ है। इसलिये गाय साक्षात् देवी है, यह स्पष्ट प्रतीत होता है।

गौ न केवल अदृष्ट-रूप सौभाग्य-संवर्धनकारिणी होनेके कारण पूजनीय है, प्रत्युत उसके द्वारा प्रत्यक्ष भी हमारे महान् उपकार सम्पन्न होते हैं। जैसे कि हम देवताओंकी पूजामें गायके ही दूधका उपयोग करते हैं, अन्य किसी दूसरे प्राणीका नहीं। गोदुग्ध पीनेसे बुद्धिकी भी वृद्धि होती है। यज्ञोंमें देवताओंकी आहुतियोंके लिये प्राय: दुग्ध, दधि, घृत आदि गव्य पदार्थोंका प्रयोग होता है। गायका घी, दूध, दही, गोमय तथा गोमूत्रको शास्त्रोक्त विधिसे तैयार कराकर सेवन किया जाय तो वह सभी प्रकारके पापोंको नष्ट कर देता है, शास्त्रोंमें कहा गया है—

यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति मामके।
प्राशनात् पञ्चगव्यस्य दहत्वग्निरिवेन्धनम्॥

'जो मेरे शरीरकी हड्डियोंमें पाप प्रविष्ट हो गया है, वह सब पञ्चगव्यके पानसे उसी प्रकार नष्ट हो जाय जैसे अग्नि सूखे लकड़ियोंको जलाकर भस्म कर देती है।'

अतएव शास्त्रीय विधानोंके निर्देशक पापोंके उपशमनके लिये पञ्चगव्य-पान करनेका विधान बतलाते हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण गौओंका पालन करते थे और उनकी पूजा भी करते थे। गायोंकी रक्षाके लिये उन्होंने गोवर्धन पर्वतको ऊपर उठाकर अपने हाथपर धारण किया था। श्रेष्ठ लोग जो आचरण करते हैं, सामान्य व्यक्तियोंके लिये वही आदर्श एवं उदाहरण बन जाता है। भगवान् श्रीकृष्णने बड़े ही आदर एवं प्रीतिसे गायोंकी परिपालना एवं गोपरिचर्या की थी, अत: हमलोगोंको भी उनके आदर्शको ध्यानमें रखकर गायोंकी सेवा अवश्य करनी चाहिये। इसलिये गायोंको किसी भी व्यक्तिको किसी भी समय किसी प्रकारका कष्ट नहीं देना चाहिये।

गौका दान सभी दानोंमें सर्वोत्तम है तथा सर्वोत्कृष्ट फल उत्पन्न करता है, यह सभी शास्त्र बार-बार घोषित करते हैं। गायोंकी महिमा अपार है, इसीलिये गोदानकी विशेषता बतलायी गयी है।

इस प्रकार श्रुति-स्मृति, इतिहास तथा पुराणोंकी एकवाक्यताके कारण यह निष्कर्ष निकलता है कि गाय सदा पूजनीय है, इसलिये उसका किसी प्रकार कभी भी तनिक भी अनिष्ट नहीं करना चाहिये।

गौ माताकी अपूर्व महिमा

[पद्मश्री डॉ० श्रीकृष्णदत्तजी भारद्वाज]

वैदिक ऋचाओंके आविर्भावसे आजतक गौ माताकी महिमाके प्रति स्तवाञ्जलियाँ प्रस्तुत होती रही हैं और उसकी सुरक्षाके प्रति सभी सत्त्व-गुण-सम्पन्न व्यक्ति जागरूक रहते आये हैं—

'मा गामनागामदितिं वधिष्ट'

(ऋक्संहिता ८। १०१। १५)

सृष्टिमें सहस्रों जीव-जन्तु हैं, किंतु जितना आदर-सम्मान गौ माताने पाया है उतना किसी अन्य पशुने नहीं।

गौके उपकारोंको मानव कभी भुला नहीं सकता।

गौकी गणना शुद्ध शाकाहारी जीवोंमें होती है; क्योंकि वह घास-फूस खाकर ही उदर-पूर्ति कर लेती है।

देव-पूजामें जो पञ्चामृत बनाया जाता है, उसमें मधु और मिश्रीके अतिरिक्त दूधके साथ घी और दही गायसे प्राप्त होते हैं। एवं अन्य शरीर-शोधक धार्मिक विधियोंमें जब पञ्चगव्यका प्रयोग किया जाता है तब तो घी, दूध, दहीके साथ गोमय (गोबर) तथा गोमूत्रका भी मिश्रण किया जाता है।

'गो'-शब्दके साथ कई अन्य शब्दोंके व्यवहारसे गायकी महत्ता स्वयं सिद्ध है। दिग्दर्शनार्थ गोप=ग्वाला, गोपी=ग्वालिन, गोकुल=गायोंका समूह, गोविन्द=श्रीकृष्ण, गोष्ठी=सभा अथवा वार्तालाप, गव्यूति=दो कोसकी दूरी, गवाक्ष=झरोखा, गोस्तनी=दाख या मुनक्का, गो-ग्रास=अपने भोजनसे पहले गायको दिया जानेवाला भोजन।

यदि प्रचुर जलमें कुछ अशुद्धि हो जाय तो उसकी शुद्धि जाननेके लिये शास्त्रकी आज्ञा है कि '**शुचि गोतृप्तिकृत् पयः**' अर्थात् यदि वह जल इतना है कि एक गायकी प्यास बुझा सकता है तो वह जल पवित्र माना जायगा।

गौ माता परम आदरणीय है। किसी भी प्रकारसे उसका अनादर निन्दनीय माना गया है। उसका उत्पीडन तो आसुरी अथवा राक्षसी वृत्ति है। कविकुल-गुरु कालिदासने रघुवंशमें लिखा है कि एक बार महाराज दिलीप स्वर्गलोकमें देवराज इन्द्रके आराधनसे निवृत्त होकर जब भूलोककी ओर आ रहे थे तब वे मार्गमें कल्पवृक्षकी छायामें बैठी कामधेनुका प्रदक्षिणापूर्वक सम्मान करना भूल गये। उनका चित्त अपने ही घरकी बातोंमें व्यस्त था। कामधेनुने राजाके इस व्यवहारको अपना अपमान समझा और कहा कि 'मेरी इस अवज्ञाके दुष्प्रभावसे तुम्हारे प्रासादमें राजकुमारका जन्म नहीं होगा। मेरी संतानकी आराधनासे ही यह दोष दूर होगा और तुम्हें पुत्ररत्नकी प्राप्ति हो सकेगी।' महर्षि वसिष्ठने ध्यानस्थ होकर महाराजको लगे शापकी बात जान ली और अपनी नन्दिनी नामकी गौकी सेवा करनेके लिये महाराजको आदेश दिया। महाराज दिलीपने महारानी सुदक्षिणाके साथ २१ दिनतक नन्दिनीकी आराधना करके उससे पुत्र-प्राप्तिका आशीर्वाद प्राप्त किया था। दिलीपके पुत्र-रत्न थे रघु।

गोसेवाका अनन्त फल

गाश्च शुश्रूषते यश्च समन्वेति च सर्वशः। तस्मै तुष्टाः प्रयच्छन्ति वरानपि सुदुर्लभान्॥
द्रुह्येन्न मनसा वापि गोषु नित्यं सुखप्रदः। अर्चयेत सदा चैव नमस्कारैश्च पूजयेत्॥
दान्तः प्रीतमना नित्यं गवां व्युष्टिं तथाश्नुते। (महा०, अनु० ८१। ३३—३५)

जो पुरुष गौओंकी सेवा और सब प्रकारसे उनका अनुगमन करता है उसपर संतुष्ट होकर गौएँ उसे अत्यन्त दुर्लभ वर प्रदान करती हैं। गौओंके साथ मनसे भी कभी द्रोह न करे, उन्हें सदा सुख पहुँचाये, उनका यथोचित सत्कार करे और नमस्कार आदिके द्वारा उनका पूजन करता रहे। जो मनुष्य जितेन्द्रिय और प्रसन्नचित्त होकर नित्य गौओंकी सेवा करता है, वह समृद्धिका भागी होता है।

गावो विश्वस्य मातरः

[अनन्तश्रीविभूषित द्वारकाशारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज]

भारतीय संस्कृतिमें यज्ञोंका बहुत महत्त्व है, क्योंकि भारतीय संस्कृतिका दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक है, यह समग्र विश्वको लेकर चलती है, यज्ञ भी कर्ताके साथ-साथ वायुमण्डलको दूर-दूरतक पवित्र एवं आधुनिक भाषामें कीटाणुरहित करते हैं, ऐसे प्रयोग आजके परिप्रेक्ष्यमें और भी सारगर्भित हो गये हैं, आज जबकि पर्यावरणको शुद्ध करने एवं बचानेवाले उपाय स्वयं भी प्रदूषित करते हैं, अतः ऐसे मनमानी-रहित शास्त्रीय विधि-विधानोंसे युक्त प्रयोगोंकी नितान्त आवश्यकता है, जो कि शत-प्रतिशत पर्यावरणकी रक्षा करनेमें समर्थ हैं। इनमें गायका स्थान प्रमुखतम है। गायका इतना महत्त्वपूर्ण स्थान इसी बातसे अवगत होता है कि समस्त प्राणियोंको धारण करनेके लिये पृथ्वी गोरूप ही धारण करती है। जब-जब पृथ्वीपर द्रोही असुरोंका भार बढ़ता है, तब-तब वह देवताओंके साथ श्रीमन्नारायणकी शरणमें गोरूप ही धारण करके जाती है, वह यह अनुभव करती है—

गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही। जस मोहि गरुअ एक पर द्रोही॥

उसकी इस व्यथाको जानकर भगवान् उसके भारको दूर करनेके लिये विविध अवतार धारण करते हैं। भगवान् पूर्णब्रह्म मर्यादापुरुषोत्तम रामभद्रका अवतार सूर्यवंशमें, त्रेतायुगमें हुआ था, उनके पूर्वज राजा दिलीपको वंशावरोधका संकट आ पड़ा था। महाकवि कालिदासने अपने रघुवंश महाकाव्यमें राजा दिलीपका वर्णन किया है। देवासुरसंग्राममें देवराज इन्द्रके निमन्त्रणपर राजा दिलीपने देवोंको विजय दिलायी थी। वे जब इस सहयोगसे निवृत्त हुए तब उन्हें स्मरण हुआ कि गृहस्थधर्मके नियमानुसार उन्हें ऋतुस्नाता धर्मपत्नीके सामने जाना चाहिये। राजा दिलीप शीघ्रतासे राजधानी अयोध्याकी ओर आने लगे। रास्तेमें कल्पवृक्षके नीचे खड़ी कामधेनुको न देख पानेसे प्रणाम न कर सके। कामधेनुने कहा 'जिस लिये मेरी अनदेखी कर पूज्य-व्यतिक्रम तुम कर रहे हो, उस फलकी प्राप्ति मेरी संततिकी सेवा किये बिना नहीं होगी।' आकाशगङ्गाकी हर-हर ध्वनिके कारण यह भी दिलीप सुन न सके। बहुत दिन व्यतीत हो जानेपर जब चिन्ता हुई, तब उन्होंने अपने कुलगुरु महर्षि वसिष्ठने, उनके आश्रमपर जाकर निवेदन किया; तब वसिष्ठजीने शापवाली बात बतायी और कहा—'कामधेनु तो इस समय लोकपाल वरुणके यहाँ दीर्घकालीन यज्ञमें गयी है। उसकी कन्या नन्दिनी आश्रममें है, उसकी सेवासे तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध होगा।'

राजा दिलीपने गुरु वसिष्ठजीके बताये नियमानुसार सेवा की। सेवासे प्रसन्न हुए नन्दिनीसे वर प्राप्त किया; फलस्वरूप एक बालक हुआ, जिसका नाम 'रघु' रखा। रघुके कारण ही सूर्यवंश 'रघुवंश' नामसे प्रसिद्ध हुआ। यदि दिलीपने गोसेवा न की होती तब वंशावरोध तो हो ही गया था। रघुके बाद अज, अजके बाद दशरथ और दशरथके चार पुत्र—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न हुए।

कृष्णावतारमें कृष्णने इन्द्रकी पूजा न करके गोवर्धनकी पूजा गोपोंसे करवायी तो इन्द्रने क्रोधके वशीभूत होकर प्रलयकालीन मेघोंसे वर्षा करवायी, पर श्रीकृष्णके प्रभावसे वह वर्षा कुछ बिगाड़ न सकी। श्रीकृष्णने गोवर्धनको ही छत्रवत् धारण कर लिया। उस समय कामधेनु आयी। उसने श्रीकृष्णका अपने थनोंसे निकलनेवाली दुग्धधारासे अभिषेक किया और कहा कि 'जिस प्रकार देवोंके राजा देवेन्द्र हैं, उसी प्रकार आप हमारे राजा 'गोविन्द' हैं।'

इन दो पूर्णावतारोंमें गायका सम्बन्ध प्रमुख रूपसे सिद्ध होता है। सनातन धर्मके शास्त्रीय विधानोंमें सर्वत्र गायका प्रथम स्थान है। भूमि पूजनके योग्य तभी मानी जाती है जब वह गोबरसे लीपी गयी हो। यज्ञ-कुण्ड और स्थण्डिल आदि अग्नि-स्थापनके स्थान, पञ्चभू-संस्कारोंसे संस्कृत किये जाते हैं, जिनमें **'गोमयेनोपलिप्य'** वाक्य आया हुआ है। गौका पञ्चगव्य आयुर्वेदकी दृष्टिसे तथा शास्त्रीय दृष्टिसे अत्यन्त उपयोगी है। रक्षाबन्धनके दिन ब्राह्मणगण श्रावणीकर्म करते हैं, उस दिन हेमाद्रिकृत स्नान-संकल्प करते हैं। उसमें पञ्चगव्य-प्राशन भी अनिवार्य-रूपसे होता है। पञ्चगव्य-प्राशन द्विजातिगण समन्त्रक करते हैं और द्विजातिसे भिन्न लोग अमन्त्रक। आयुर्वेदिक दृष्टिसे शरीर-शोधनमें उदरगत विकारोंके प्रशमनके लिये यह निरापद प्रयोग है। गायका मूत्र ओषधियोंके शोधनमें

प्रयुक्त होता है। गोमूत्रका प्रयोग ग्रामोंमें सामान्यजन भी किया करते हैं। लीवर, तिल्ली, पाचन-यन्त्रोंमें विकार होनेपर इनके सुधारके लिये गोमूत्रका प्रयोग सफलता देता है। गोबरका प्रयोग भी शोथादि विकारोंके शमनके लिये किया जाता है। भगवान् धन्वन्तरि अमृत-कलश हाथमें लिये क्षीर-समुद्रसे निकलकर सारभूत बात कहते हैं—

अच्युतानन्दगोविन्दनामस्मरणभेषजात् ।
नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥

गायके गोबरकी क्षमता आजके वैज्ञानिकोंने भी पहचानी है। गायके गोबरमें आणविक दुष्परिणामोंको अवरुद्ध करनेकी शक्ति है। ये दुष्परिणाम गोबरसे लिपे-पुते मकानोंमें अन्य स्थानोंकी तुलनामें कम प्रतिशतमें होते हैं।

शास्त्रोंको देखें तो गायकी महिमाके विषयमें एक पूरा ग्रन्थ ही बन जायगा। अतः आवश्यकता है इसके वैज्ञानिक महत्त्वको समझनेकी। इस दिशामें समस्त वैज्ञानिक एकमतेन कहते हैं कि पर्यावरणके संरक्षणकी दृष्टिसे गायका कोई विकल्प नहीं है। गाय अपने श्वास-प्रश्वासके द्वारा अनगिनत कीटाणुओंसे क्षेत्रको शुद्ध करती है। विश्वके प्रायः सभी जीवोंका मल-मूत्र अत्यन्त विषाक्त होता है। धार्मिक दृष्टिकोणसे भी कई ऐसे उपपातक हैं, जिनके प्रायश्चित्तमें पञ्चगव्य-प्राशनका विधान किया गया है। मन्त्रकी जागृतिके लिये पुरश्चरणके योग्य भूमिमें गोशाला (गोष्ठ) को लिया गया है। अधिक क्या, जपसंख्याके लिये गायके गोबरमें सिन्दूरादि मिलाकर गोली बनायी जाती है। गौरी भगवती जो सौभाग्यकी अधिष्ठात्री देवी हैं, उनकी मूर्ति गोबरकी ही बनती है, चाहे छोटा-से-छोटा पूजन-कार्य हो या बड़े-से-बड़ा यज्ञादि।

गायके प्रति वर्तमानमें जो व्यावसायिक दृष्टिकोण स्थिर किया जा रहा है, वह अदूरदर्शितापूर्ण है। पाश्चात्त्य तौर-तरीकोंका अन्धानुकरण करके डेयरीफार्म आदिमें अधिक दुग्ध-उत्पादनके व्यामोहमें नित नये प्रयोग गोवंशको, जो निरन्तर कम होता जा रहा है, भविष्यमें उसकी पारम्परिक विभिन्न क्षेत्रोंमें होनेवाली नस्लोंके रूप, क्षमता, विशेषता आदि गुणोंका विलय करनेवाले होंगे। गायोंका संकरीकरण, उन्हें जरसी बनाना स्थायी लाभदायक नहीं है और भारतीय भावनापर कुठाराघात अत्यन्त ही स्पष्ट है कि हमें जन्म देनेवाली माँ जहाँ हमें कुछ ही समयतक स्तनपान करानेसे जीवनभरके लिये पूज्या माँ बन जाती है, वहीं जो जन्मसे लेकर मरणपर्यन्त हमें दूध दे वह माँ न हो सके, पशु ही समझी जाय, इससे बढ़कर विडम्बना और क्या हो सकती है। इस स्वतन्त्र भारतमें मनुष्योंके लिये बहुत बड़ा जो कलंक बना हुआ है वह है, निरन्तर बढ़ती हुई संख्यामें प्रत्येक सूर्योदयतक गायोंका बूचड़खानोंमें कट जाना। इस कलंकको दूर करना नितान्त आवश्यक है। गायसे चारों पुरुषार्थोंकी सिद्धि होती है। वह जन्मसे लेकर मरणपर्यन्त उपयोगी है। मरनेके बाद भी उसका मृत शरीर काम आता है। कैसी भी बूढ़ी गाय क्यों न हो, वह ईंधन तो देती ही है, जो पर्यावरण-शोधनमें काम आता है।

पृथ्वीको धारण करनेवालोंमें गायका प्रमुख स्थान माना गया है। राजा पृथुसे, जिनके नामके कारण भूमिका नाम पृथ्वी पड़ा, पृथ्वीने कहा कि 'सभी अपना-अपना वत्स निश्चित करके मुझसे अपना-अपना प्राणधारक दूध ले लें।' तदनन्तर देव-गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, दैत्य, दानव, पितृगण और मनुष्यादिकोंने अपना-अपना वत्स नियुक्त कर पृथ्वीसे अपना-अपना प्राणधारक पय प्राप्त किया।

गायको तृण खिलानेका बहुत ही पुण्य बताया गया है—कहा है—तीर्थस्थानोंमें जानेसे, ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे जो पुण्य प्राप्त होता है तथा सभी व्रतों और उपवासोंमें एवं तपस्याओंमें जो पुण्य स्थित है, महादान देनेमें जो पुण्य है, श्रीहरिकी पूजामें जो पुण्य है, पृथ्वीकी परिक्रमामें जो पुण्य है तथा समस्त सत्यवाक्योंमें—शास्त्रीय वेद-वाक्योंमें जो पुण्य है और मनुष्यको समस्त यज्ञोंमें यज्ञ-दीक्षा ग्रहण कर जो पुण्य अर्जित होता है—वे सभी पुण्य केवल गायोंको तृण खिलानेभरसे तत्क्षण ही मिल जाते हैं। यथा—

तीर्थस्थानेषु यत्पुण्यं यत्पुण्यं विप्रभोजने।
सर्वव्रतोपवासेषु सर्वेष्वेव तपःसु च॥
यत्पुण्यं च महादाने यत्पुण्यं हरिसेवने।
भुवः पर्यटने यत्तु सत्यवाक्येषु सर्वदा॥
यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु दीक्षया च लभेन्नरः।
तत्पुण्यं लभते सद्यो गोभ्यो दत्त्वा तृणानि च॥

गायें मेरे आगे हों, गायें मेरे पीछे हों, गायें मेरे हृदयमें स्थित रहें और गायोंके बीचमें ही मैं सदा निवास करूँ—

गावो मे ह्यग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

गोविन्दकी गाय

[दण्डी स्वामी श्री १०८ विपिनचन्द्रानन्द सरस्वतीजी 'जज स्वामी']

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥

भगवान् श्रीकृष्णको गौ अत्यन्त प्रिय है। भगवान्ने गिरिराज धारण करके इन्द्रके कोपसे गोप-गोपी एवं गायोंकी रक्षा की। अभिमान भंग होनेपर इन्द्र एवं कामधेनुने भगवान्को उपेन्द्र-पदपर अभिषिक्त किया और भगवान्को 'गोविन्द' नामसे विभूषित किया। गौ, ब्राह्मण तथा धर्मकी रक्षाके लिये ही भगवान् भूतलपर पधारते हैं—

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार॥

(रा० च० मा० १। १९२)

कृष्णलीलामें कुछ बड़े होते ही भगवान्ने गोवत्स-चारणके लिये यशोदा मैयासे आज्ञा माँगी। मैयाने कहा— 'बेटा! अभी तुम छोटे हो, पुरोहितजीसे मुहूर्त दिखायेंगे, तब तुम जाना।' गोपाष्टमीपर मुहूर्त निकला। मैयाने प्रातःकालसे ही समस्त मङ्गल-कार्य किये और भगवान्को नहला-धुलाकर भलीभाँति सुसज्जित किया। सिरके ऊपर मोर-मुकुट, गलेमें माला तथा पीताम्बर धारण कराया। हाथमें बेंत तथा नरसिंहा दिया, फिर जब चरणोंमें छोटी-छोटी जूतियाँ पहनाने लगीं, तब ठाकुरजी बोले—'मैया! मैं इनको नहीं पहनूँगा, यदि तू मेरी सारी गौओंको जूती पहना दे तो मैं इनको पहन लूँगा, जब गैया धरतीपर नंगे पाँव चलेगी तो मैं भी नंगे पाँव जाऊँगा।' समस्त व्रजलीलामें भगवान्ने पदत्राण नहीं पहने, सिले हुए वस्त्र नहीं पहने और न कोई शस्त्र उठाया। फलस्वरूप भूदेवी भगवान्के नंगे पैरोंको निष्कण्टक एवं कोमल स्पर्श ही प्रदान करती थीं और अपनेको सौभाग्यशालिनी मानती थीं।

भगवान्ने गोमाताकी रक्षाके लिये क्या-क्या नहीं किया। उन्हें दावानलसे बचाया, ब्रह्माजीसे छुड़ाकर लाये, इन्द्रके कोपसे रक्षा की। 'गोधनकी सौं' शपथ प्रचलित करायी। '**मणिधरः क्वचिदागणयन् गाः**' वह अपने गलेमें पहनी हुई मणिमालाके मनकोंसे गायोंकी गिनती करके नन्दग्रामसे गोचारणके लिये चलते थे। वंशीकी ध्वनिसे प्रत्येक गायको नाम ले-लेकर पुकारते थे। समस्त गायें उनसे आत्मतुल्य प्रेम करती थीं।

श्रीमद्भागवतके अनुसार भगवान् श्रीकृष्ण गायोंके समूहके पीछे-पीछे चलते थे। इस विषयपर हृदय-प्रदेशमें एक नया भाव समुद्भूत हुआ है, जो इस प्रकार है—गायोंसे एक भक्तने बातचीत की—

भक्त—गोमाता! तुम अपने इष्टदेवके आगे-आगे क्यों चलती हो? उनके तो पीछे-पीछे चलनेका विधान है।

गौ—आप भूल करते हैं। अधिष्ठान तो सदा पीछे ही रहता है।

भक्त—यह तो तुमने वेदान्तकी बात कह दी। चर्चा भक्त और भगवान्की है।

गौ—भगवान् मेरे इष्टदेव और संरक्षक हैं। भगवान्के द्वारा सुरक्षित एवं संचालित हम सब अपने गन्तव्य स्थानपर बिना भय और संकोचके शीघ्र पहुँच जाती हैं तो मैया हमारा दूध निकालकर, उबालकर, शीघ्र लालाको पिला देती है। भगवान् यदि हमसे आगे चलेंगे तो हमको अपने विवेक-पुरुषार्थ एवं बलका प्रयोग करके उनका अनुगमन करना पड़ेगा, तब भय है कि हम कहीं मार्गमें पानी एवं घास देखकर विचलित हो जायँ, परंतु उनके द्वारा हाँके जानेपर हम निष्कण्टक राजमार्गपर निर्भय चली जाती हैं।

भक्त—यह तो आप ठीक कहती हैं, परंतु आगे-आगे चलनेपर तुम भगवान्के रूप-माधुर्यके दर्शनसे तो वञ्चित रह जाती हो।

गौ—भक्तजी! आप बड़े भोले हैं, भगवान् जब पीछे चलते हैं तो कभी-कभी मेरी पीठपर हाथ लगा देते हैं। कभी बेंतसे मधुर स्पर्श कर देते हैं और हम अपना मुँह मोड़कर उनका दर्शन करके परमानन्दमें मग्न हो नेत्र बंद करके चलती रहती हैं। यदि भगवान् आगे चलेंगे तो हम उनके मुखारविन्दके दिव्य दर्शन और स्पर्श-सुखसे वंचित रह जायँगी। यदि भगवान्ने कभी गरदन मोड़कर हमारी

ओर देखा भी तो हमारे इष्ट प्रियतमको इसमें कितना श्रम होगा। यह विचारणीय है।

भक्त—तुम्हारे सौभाग्यकी बात तो अलौकिक है, परंतु तुम्हारा इस प्रकार चलना धर्म-विरुद्ध है। बड़ोंके आगे नहीं, पीछे चला जाता है।

गौ—धर्मशास्त्रके अनुसार मैं मुमुर्षु जीवोंको वैतरणी पार करा देती हूँ, वह मेरी पूँछ पकड़कर सरलतासे तर जाते हैं। मुझमें और मेरी पूँछमें यह शक्ति भगवान्‌के स्पर्शसे ही प्राप्त होती है।

भक्त—गोमाता! तुम्हारी बात तो अकाट्य है। फिर भी श्रेष्ठ पुरुषोंको अपना पृष्ठ-अङ्ग दिखाते हुए चलना अनुचित है।

गौ—शास्त्रानुसार मेरा गोबर और मूत्र पवित्र है, परंतु मेरा मुँह जूठा एवं अपवित्र है। अब बताओ कि मैं अपने इष्टकी ओर पवित्र अङ्ग करूँगी अथवा अपवित्र? (यह सुनकर भक्तका सिर श्रद्धासे झुक जाता है।)

भारतवर्षमें सनातनधर्मियोंका अधिदेववाद मौलिक सिद्धान्त है। जल, स्थल, नक्षत्र, दिशा, देश, पत्र, पुष्प आदि सबमें अधिदेवका वास बताया जाता है। वेद कहते हैं—

'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव।'

भगवान् श्रीकृष्णने गीताके दसवें अध्यायमें अपनी विभूतियोंका सविस्तार वर्णन किया है। अतएव गङ्गा, गीता, गायत्री, गोविन्द एवं गौ हमारी संस्कृतिकी आधारशिलाके प्रतीक हैं। इस सम्बन्धमें एक यह कथानक है कि सृष्टि-रचनाके समय जब गौका निर्माण हुआ, तब उसे देखकर सब देवता उसके रोम-रोममें प्रविष्ट हो गये। लक्ष्मीजीको गौके गुह्य-स्थान और गोबरमें निवास मिला। इससे हमारे देशमें गोसेवा और गोदानका विशेष महत्त्व है। राजा दिलीपकी गोसेवा सुप्रसिद्ध है। सत्यकाम जाबालने गोसेवा करके ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त किया था। (छान्दोग्य-उपनिषद्)

एक कथामें वर्णन है कि एक ऋषि जलमें डुबकी लगाये समाधिस्थ पड़े थे। वे एक मछुवेके जालमें फँस गये। बाहर निकालनेपर उन्हें देख सभी भयभीत हो गये। सूचना मिलनेपर देशका राजा उपस्थित हुआ, उसने ऋषिकी पूजा एवं स्तुति की तथा सादर राज्यमें चलनेका आग्रह किया। ऋषिने कहा—इस मछुवेको मेरे बराबर तौलकर धन दे दो, तब हम चल सकते हैं। यह सुनकर राजाने ऋषिको तराजूके एक पलड़ेमें बिठाया और दूसरे पलड़ेमें वह प्रचुर धन-धान्य-सोना-चाँदी आदि रखता गया, परंतु वह सब हलका रहा और ऋषिके भारका पलड़ा भारी रहा। निराश होकर राजाने ऋषिसे ही समाधानकी प्रार्थना की। ऋषि बोले—यह सब हमारे बराबर नहीं हो सकते। अमूल्य धन होनेसे एक गौ अवश्य हमारे समान हो सकती है। तब राजाने प्रसन्न होकर मछुवेको धन-धान्यसहित एक गौ देकर संतुष्ट किया और ऋषिको अत्यन्त आदरपूर्वक अपने राजभवनमें ले गया।

गौके प्रति आध्यात्मिक दृष्टिके अतिरिक्त एक लौकिक एवं आर्थिक दृष्टि भी है। भारतवर्ष एक कृषि-प्रधान देश रहा है। यहाँपर बैलोंसे खेती होती थी और गायके दूध, दही, घी, मक्खन, मट्ठेसे समस्त प्राणियोंका पोषण होता था। गोबरमें मिट्टी आदि मिलाकर मकानोंपर पलस्तर एवं फर्शकी सफाई की जाती थी। गोमूत्रसे संजीवनी-बटी आदि आयुर्वेदिक ओषधियाँ बनायी जाती हैं।

आजकल भारतमें बड़े-बड़े उद्योग-धंधोंका प्रचलन है। अतः इस समय तो गायका पालना एवं उसके दूध, दही, घी आदिका प्रयोग करना देशवासियोंके लिये अत्यन्त हितकारी तथा आवश्यक है। विदेशोंमें जहाँ गोमांस खानेकी सामान्य रीति है, वहाँ भी गोपालन एवं उसके दूधके संरक्षणपर स्वास्थ्य, आर्थिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिसे पर्याप्त ध्यान दिया जाता है, जब कि अपने देशमें उसके आध्यात्मिक दृष्टिकोणको छोड़, उससे लौकिक लाभ प्राप्त करनेकी भी उपेक्षा हो रही है।

भारतवर्षमें नगरोंमें गाय रखना आज सचमुच एक समस्या बन गयी है। गायके चारे एवं भूमिकी कमी है। इसकी उचित व्यवस्था होना आवश्यक है। नगरसे बाहर अच्छी-अच्छी गौशालाओंकी स्थापनाका प्रबन्ध किया जाना चाहिये। वहाँ अच्छी नस्लकी गाय और बछड़े पैदा कराये जायँ। गायोंको पर्याप्त दाना-चारा मिले। उनकी

स्वच्छता, सेवा और चिकित्साकी उचित व्यवस्था हो। नगरके जो लोग गाय पालना चाहें, वे अपनी गाय गौशालामें रख दें और उनके पालनका खर्चा दें। इन दूध देनेवाली गायोंके अतिरिक्त एक ऐसा अन्य विभाग भी होना चाहिये, जहाँ लूली, लँगड़ी, अपाहिज, बूढ़ी गायें रह सकें और उनपर होनेवाला खर्च दानी-मानी सज्जनोंसे प्राप्त किया जाय। वर्तमान भारतीय संविधानकी धारा ४८ में गोसंवर्धनकी आज्ञा निर्धारित है। उसका पालन उत्साहपूर्वक किया जाना चाहिये।

दुर्भाग्यकी बात है कि देशवासियोंकी कथनी और करनीमें बहुत अन्तर आ गया है। हम 'गोमाताकी जय' के नारे जोरसे लगाते हैं, परंतु क्रिया करते समय अपने धर्म, सत्य और कर्तव्यको भूल जाते हैं। एक छोटा-सा उदाहरण देते हैं।

सन् १९८१ में हमको काशीमें कुछ लंबे समयतक रहनेका अवसर मिला। उन दिनों श्रद्धेय धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी भूतलपर विराजमान थे। उनके दर्शनके लिये हम रिक्शेमें बैठकर केदारघाट जा रहे थे। एक गाय रास्तेमें बैठी थी, जब वह रिक्शाकी घंटी बजानेसे नहीं उठी तो रिक्शेवालेने पैरसे मारकर उसे उठा दिया। यह देखकर पासके दूकानदारोंने हल्ला किया, हाय-हाय गौके लात मारता है। इस घटनासे हमारे चित्तपर बड़ा प्रभाव पड़ा कि काशी हिन्दू-संस्कृतिका गढ़ है, देखो! यहाँ गौका कितना सम्मान है। दो-चार दिन पीछे हमें दशाश्वमेध-घाटकी सब्जी-मंडीमें जानेका अवसर मिला तो वहाँ देखा—एक गाय किसी दूकानदारकी गोभीका फूल उठाकर ले जा रही थी तो दूकानदारने लाठी मारकर उससे अपना फूल छीन लिया। यह देखकर हमको विचार हुआ कि लोग समझते हैं कि गायको पैर लगाना पाप है, पर उसे लाठीसे मारना पाप नहीं है। गोवध होना अवश्य आपत्तिजनक है, परंतु गायके द्वारा हमारे गोभीके फूलका खाया जाना उससे भी अधिक कष्टदायक है। अतएव हमारी गायें जबतक गली-कूचोंमें मल खाती हुई और दूकानदारोंद्वारा प्रताड़ित होकर घूमती हैं, तबतक उनकी केवल जय-जयकार करना निरर्थक है। जो लोग उनके दूधका उपयोग कर उन्हें खानेके लिये सड़कपर खुला छोड़ देते हैं, तो उनकी गोसेवा विडम्बना नहीं तो क्या है!

हमारी संस्कृतिमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—ये चार पुरुषार्थ हैं। शास्त्रका आदेश है कि पुरुषार्थ काम और अर्थ, धर्म-नियन्त्रित हो तथा धर्म मोक्षोन्मुख हो, परंतु आजकल प्रायः अर्थ-नियन्त्रित धर्म तथा कामोन्मुख मोक्ष देखनेमें आता है। अर्थलाभ अथवा यशलाभके लिये धर्म-कार्यमें प्रवृत्ति होती है, एवं मोक्षके साधन ज्ञान और भक्तिका विनियोग प्रायः कामकी पूर्तिमें ही किया जाता है। अतएव गोसेवाका धार्मिक प्रश्न आर्थिक दृष्टिको सम्मुख रखकर हल करना आवश्यक है। उदाहरणार्थ, हमारा एक परिचित किसान था। वह बैलसे खेती करता था। उसका एक बैल बूढ़ा हो गया। उस बूढ़े बैलका मूल्य दूसरा किसान ढाई सौ रुपये देता था, जबकि उसी बैलकी कीमत चार सौ रुपये देकर एक कसाई खरीदना चाहता था। ऐसी परिस्थितिमें उस किसानके सामने बड़ा धर्मसंकट उपस्थित हुआ। बात हमारे पास आयी तो हमने कहा कि तुम वह बैल कसाईको मत बेचो। ढाई सौ रुपयेमें ही दूसरे किसानको दे दो, शेष एक सौ पचास रुपये हमसे सहायतारूपमें लेकर अपना धर्म और अर्थ दोनों ही साधो। उसने ऐसा ही किया, परंतु यह समस्या एक-दो व्यक्तियोंकी ही नहीं है, सारे देशकी है। जो व्यक्तिगत सद्भावनासे हल नहीं की जा सकती। इस विषयपर गम्भीरतासे विचार करनेकी आवश्यकता है। देशके धर्म और संस्कृतिके संरक्षकों, मनीषियों एवं विशेषकर गोविन्दके भक्तोंको विचार करके ऐसा मार्ग प्रशस्त करना चाहिये, ऐसी शुभ योजना बनाकर जनताके सामने रखनी चाहिये, जिससे गोसेवाके लिये उत्साह बढ़े और उसके द्वारा धर्म और अर्थ दोनों पुरुषार्थोंकी सिद्धि सहजमें ही सुलभ हो सके, तभी गोविन्दकी गायकी सेवा भगवान्की प्रसन्नताकी हेतु बन सकेगी।

गौकी तात्त्विक मीमांसा और गो-संरक्षणकी महत्ता

[अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य पुरीपीठाधीश्वर स्वामी श्रीनिश्चलानन्द सरस्वतीजी महाराज]

गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च।
गावो मे सर्वतश्चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

(महाभारत, अनुशा० ८०। ३)

'गो' शब्द गाय, पृथ्वी, सरस्वती, सूर्य तथा सूर्यरश्मिके अर्थमें प्रयुक्त है।

तुल्यनामानि देयानि त्रीणि तुल्यफलानि च।
सर्वकामफलानीह गावः पृथ्वी सरस्वती॥

(महाभा०, अनु० ६९। ४)

'गाय, भूमि और सरस्वती—ये तीनों समान नामवाली हैं—इन तीनोंका दान करना चाहिये। इन तीनोंके दानका फल भी समान ही है। ये तीनों वस्तुएँ मनुष्योंकी सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण करनेवाली हैं।'

प्राप्त्या पुष्ट्या लोकसंरक्षणेन
गावस्तुल्याः सूर्यपादैः पृथिव्याम्।
शब्दश्चैकः संततिश्चोपभोगा-
स्तस्माद् गोदः सूर्य इवावभाति॥

(महाभा०, अनु० ७१। ५४)

'प्राप्ति, पुष्टि तथा लोकरक्षा करनेके कारण गौएँ इस पृथ्वीपर सूर्यकी किरणोंके समान मानी गयी हैं। एक ही 'गो' शब्द धेनु और सूर्य-किरणोंका बोधक है। गौओंसे संतति और उपभोग प्राप्त होते हैं; अतः गोदान करनेवाला मनुष्य किरणोंका दान करनेवाले सूर्यके ही समान समझा जाता है।'

'गौरिति पृथिव्या नामधेयम्', आदित्योऽपि गौरुच्यते'

(निरुक्त २। २)

इसी प्रकार चन्द्र, स्वर्ग, दिशा, जल, नव (९) संख्या, वृषभ, माता और इन्द्रादि चौबीस अर्थोंमें 'गो' शब्द प्रयुक्त है। निरुक्त (३। ९) के अनुसार उक्षा (सेक्ता-सींचनेवाला, सोम), वशा (आदित्यरश्मियोंका प्रकार-विशेष), मही (पृथ्वी) आदि 'गो' शब्दके विविध अर्थ हैं।

'पृथ्वी' सच्चिदानन्दस्वरूप परमेश्वरकी सत्प्रधान अभिव्यक्ति है। 'सूर्य' उसकी चित्प्रधान अभिव्यक्ति है। 'चन्द्र' उसकी आनन्दप्रधान अभिव्यक्ति है। गोवंशमें परमेश्वरकी त्रिविध शक्तियोंका संनिवेश है। गौ 'स्वर्ग'-तुल्य सुखप्रद है। गोरस आदिके द्वारा यह सबको सुख देती है। गोसेवा और गोदानके फलस्वरूप मिलनेवाले आभूत-सम्प्लव जनलोक, तपोलोक, सत्यलोक और गोलोकरूप अक्षय्य लोकोंकी प्रतिष्ठा गौके रोम-रोममें है—

गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।

(महाभा०, अनु० ५१। ३३)

रोम्णि रोम्णि महाभाग लोकाश्चास्याऽक्षयाः स्मृताः।

(महाभा०, अनु० ७३। ३६)

गो-सेवाके फलस्वरूप प्राची-प्रतीची आदि दसों दिशाओंमें गोसेवककी कीर्ति फैलती है तथा दिशाओंका आधिपत्य प्राप्त होता है। इससे परिलक्षित होता है कि गौमें दसों दिशाओंकी प्रतिष्ठा है। 'जल' जीवन है। 'जल' रस है। गोमूत्र सर्वजलोंमें श्रेष्ठ है। गोरस सर्वरसोंमें श्रेष्ठ है। गोरस यज्ञमें प्रयुक्त होकर पर्जन्य बनकर जन-जीवन सिद्ध करता है।

गौएँ ही सर्वोत्तम अन्नकी प्राप्तिमें कारण हैं। वे ही देवताओंको उत्तम हविष्य प्रदान करती हैं। स्वाहाकार (देवयज्ञ) और वषट्कार (इन्द्रयाग)—ये दोनों कर्म सदा गौओंपर ही निर्भर हैं।

निःसंदेह गौएँ यज्ञफलरूपा हैं। उन्हींमें यज्ञोंकी प्रतिष्ठा है। गौएँ ही भूत और भविष्य हैं। उन्हींकी रक्षा, प्रतिष्ठा और सेवाके अनुसार भूत और भविष्यकी सिद्धि है। उन्हींमें यज्ञ प्रतिष्ठित है—वे स्वयं यज्ञस्वरूपा हैं।

अन्नं हि परमं गावो देवानां परमं हविः।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ॥
गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।
गावो भविष्यं भूतं च गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः॥

(महाभा०, अनुशा० ७८। ७-८)

गोभक्तोंको धनदकी नव निधियोंका स्वामित्व सुलभ होता है। सेवकके प्रति वात्सल्यसम्पन्न होनेके कारण तथा मातृवत् दुग्धपानसे सुपुष्ट करनेवाली होनेके कारण गौ 'माता' है।

'गो' शब्द स्त्रीलिङ्ग और पुलिङ्ग दोनोंमें प्रयुक्त होता है। 'गो' गायरूपसे विष्णुपत्नी भूदेवीका आधिदैविक रूप

होनेसे प्रतिष्ठा है और माता है। 'गो' वृषभरूपसे धर्मका आधिदैविक रूप होनेसे विश्वकी प्रतिष्ठा है और वह सबका पिता है।

मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।
वृद्धिमाकांक्षता नित्यं गावः कार्याः प्रदक्षिणाः॥

(महाभा०, अनुशा० ६९। ७)

गौर्मे माता वृषभः पिता मे दिवं शर्म जगती मे प्रतिष्ठा।

(महाभा०, अनुशा० ७६। ७)

गौएँ सम्पूर्ण प्राणियोंकी माता हैं। वे सबको सुख देनेवाली हैं। जो अपने अभ्युदयकी इच्छा रखता हो, उसे गौओंको सदा दाहिने करके चलना चाहिये।

गौएँ मेरी माता हैं। वृषभ (बैल) मेरे पिता हैं। वे दोनों मुझे स्वर्गसुख तथा ऐहिक सुख प्रदान करें। गौएँ ही मेरा आधार हैं।

गो-सेवा और गोरस-सेवनसे प्रज्ञाशक्ति और प्राणशक्ति पुष्ट होती है। इन्द्रियोंमें अनुपम बलका संचार होता है। जैसे इन्द्रियोंको प्रयोक्ता, प्रेरक और प्रकाशक जीवेश्वरकी अपेक्षा है, वैसे ही गौओंको गोपालकी अपेक्षा है। इन्द्रियोंसे प्रत्यक्, प्रत्यगात्मा और अन्तरात्मा रहते हुए जैसे इन्द्रियोंके प्रयोक्ता, प्रेरक और प्रकाशक जीवेश्वर होते हैं, वैसे ही गायोंके पीछे रहते हुए गोपाल उनके प्रयोक्ता, प्रेरक और प्रकाशक होते हैं। इन्द्रियाँ जैसे अनुग्राहक देवोंसे अधिष्ठित होनेसे देवमयी होती हैं, वैसे ही गौएँ प्रत्यङ्गमें प्रतिष्ठित अनुग्राहक देवोंसे अधिष्ठित होनेसे देवमयी हैं—

शृङ्गमूले स्थितो ब्रह्मा शृङ्गमध्ये तु केशवः।
X X X
सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः॥

(बृहत्पराशरस्मृति ३। ३२, ३५)

'गो' पद 'वाक्' और वाग्देवी सरस्वतीके अर्थमें भी विनियुक्त है। गोघृत आदि गोरससे वागिन्द्रियका पोषण होता है। इस दृष्टिसे गोकी वाग्रूपता सिद्ध है। ब्रह्मविद्याकी अधिष्ठात्री होनेसे सरस्वती वाग्देवी हैं। ब्रह्माणी होनेसे सरस्वती बुद्धिकी अधिष्ठात्री हैं। गोरस-सेवनसे सत्त्वगुण उद्दीप्त होता है। सत्त्वोद्रेकके कारण बुद्धि विशद होती है। इस दृष्टिसे गोकी 'सरस्वती' संज्ञा है।

'गो' पद जहाँ वागर्थमें प्रत्युक्त होता है, वहाँ चन्द्र-अर्थमें भी 'गो' की वाग्रूपता सिद्ध की जा चुकी है। रसात्मक सोमकी ओषधि (अन्न)-रूपता वेद और व्यवहार-सिद्ध है। 'गो' की यज्ञरूपता, यज्ञकी पर्जन्यरूपता और पर्जन्यकी अन्नरूपताके कारण 'गो' की अन्नरूपता है। गोरस साक्षात् सोमरस और अन्न है।

यज्ञैरवाप्यते सोमः स च गोषु प्रतिष्ठितः।

(महाभा०, अनुशा० ७७। १४)

उक्त रीतिसे 'गो' की अन्नरूपता और चन्द्ररूपता सिद्ध है। वाक्‌से निष्पन्न पद 'नाम' है। मनके अनुग्राहक देव चन्द्र हैं। मनसे निष्पन्न पदार्थ रूप है। नाम और रूप अधिभूत हैं। आधिभौतिक रीतिसे जगत् नाम-रूपात्मक है। वाक् और मन—अध्यात्म हैं। आध्यात्मिक रीतिसे जगत् वाङ्मय और मनोमय है। वाक्‌के अनुग्राहक देव अग्नि हैं। आधिदैविक रीतिसे जगत् अग्नि-सोमात्मक है। इस प्रकार 'गो' की विश्वरूपता सिद्ध है। इसी अभिप्रायसे 'गो' को विश्वकी प्रतिष्ठा कहा गया है—

'गर्भोऽमृतस्य जगतोऽस्य प्रतिष्ठा।'

(महाभा०, अनुशा० ७६। १०)

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत्॥

(महाभा०, अनुशा० ७८। ५)

'एतद्वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम्'

(अथर्व० ९। ७। १। २५)

'गो' शब्द आत्मार्थक भी है। **'दुहन्ति सप्तैकाम्'** (ऋग्वेद ८। ७२। ७)। 'आत्मबुद्धिसे गोदान करनेवाला गोदानका अक्षय्य फल प्राप्त करता है।'

या वै यूयं सोऽहमद्यैव भावो
युष्मान् दत्त्वा चाहमात्मप्रदाता।

(महाभा०, अनुशा० ७६। १३)

आत्मा सच्चिदानन्द है। यह अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमयको सत्ता (अस्तित्व), चित्ता (चेतना) और प्रियता (आनन्द) प्रदायक है। अभिप्राय यह है कि अन्नमयादिकोश आत्माकी सत्ता, चित्ता और प्रियताके अभिव्यञ्जक हैं। गौएँ गोरसप्रद होकर अन्नमयादिकी पोषक हैं। तैत्तिरीयोपनिषद्‌में परोवरीयक्रमसे (उत्तरोत्तर उत्कृष्टक्रमसे) अन्नमयादिकी आत्मरूपताका

उल्लेख है। आत्माभिव्यञ्जक अन्नमयादिकी अभिव्यञ्जक होनेसे 'गो' आत्मा है।

'गो' नाम 'ओम्'-तुल्य स्मरण करने योग्य है। दोनोंका अर्थ भी तुल्य ही है। ग्+अ+उ=गो। अ+उ+म्=ओम्। गो और ओम्में 'अ', 'उ'के योगसे निष्पन्न ओकी एकरूपता है। ओङ्कारगत 'म्' के स्थानपर गोपदमें गकार है। प्रणवत 'अ' का अर्थ 'वैश्वानर', 'उ' का अर्थ 'हिरण्यगर्भ' और 'म्' का अर्थ प्राज्ञेश्वर है। 'गो' गत 'अ' का अर्थ वैश्वानर और 'उ' का अर्थ हिरण्यगर्भ है। 'ग्' का अर्थ गणेश और शेष रहनेवाला अर्थात् शेष है। प्रलयमें शेष रहनेके कारण उपनिषदोंने गणेशको अव्याकृत-संज्ञक 'प्राज्ञेश' माना है—

अनिर्वाच्योऽप्रमेयः पुरातनो गणेशो निगद्यते।
स आद्यः सोऽक्षरः सोऽनन्तः सोऽव्ययो महान् पुरुषः॥

(गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् २। ४)

अनिर्वचनीया सैव माया जगद्बीजमित्याह।
सैव प्रकृतिरिति गणेश इति प्रधानमिति च मायाशबलमिति च॥

(गणेशोत्तर० ४। २)

प्रणवगत मकारके स्थानपर गकारका तथा तृतीयत्वके स्थानपर प्रथमत्वका व्यत्यास 'गो' नामके संकीर्तन, जप और स्मरणादिकी सर्वसुलभताके अभिप्रायसे है।

गाय सूर्य-चन्द्रके अंशसे प्रादुर्भूत है तथा प्रजापतिकी पुत्री है—'**प्राजापत्याः**', '**सौर्यास्तथा सौम्याः**' (महा०, अनु० ७६। १०-११)। 'सूर्य' अग्निरूपसे भोक्ता है। 'चन्द्र' अन्नरूपसे भोग्य है। 'गो' चेतन होनेसे भोक्ता है और गोरसरूपसे भोग्य है।

'**गच्छत्यनेन**' के अनुसार 'गो' नाम अन्वर्थक है। गायको घूमना बहुत ही प्रिय है। गोष्ठ, गोष्ठी, वात्सल्यादि शब्द गोमहिमाके द्योतक हैं। दृतिकण्ठ और ककुद्पृष्ठ (गलकम्बल-लड़ली और कूबड़से युक्त) सुपुष्ट गायोंको सुपात्रके प्रति सविधि देनेका अद्भुत माहात्म्य है। मरणासन्न व्यक्तिके निमित्त गोदान उसे वैतरणी (भवसिन्धु) से तारनेवाला माना गया है।

ध्यान रहे, विश्वमें परम्परासे गोमांस-सेवन करनेवाली यवनादि जितनी भी जातियाँ हैं, उनके पूर्वज श्रीवसिष्ठजीकी नन्दिनी नामक गौके श्रीविग्रहसे विश्वामित्रके चंगुलसे नन्दिनीकी रक्षाके लिये उसके संकल्पसे उत्पन्न किये गये थे।

इस भौतिकवादी युगमें व्यक्तिका माता, पिता, गुरु, पुत्र और शिष्यादिसे भी सम्बन्ध शिथिल होता जा रहा है। उपयोगिताके आधारपर ही व्यक्ति किसीसे सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। यद्यपि भगवान्ने गौको यावज्जीवन और मरणोपरान्त भी उपयोगी बनाकर भेजा है, परंतु वह उपयोगिता भौतिकवादियोंके गले उतरे, इसके लिये प्रयास अपेक्षित है। ईश्वरीय मङ्गलमय विधानमें संस्कारसे वस्तु और व्यक्तिकी उपयोगिता बढ़ानेका पथ भी प्रशस्त है। ऐसी स्थितिमें बिहार, बंगाल, उड़ीसा आदिकी गायोंको देशी उत्तम कोटिके साँड़ोंके द्वारा उन्नत करना आवश्यक है। ट्रैक्टर, भैंसा और ऊँट आदिने बैलोंकी उपयोगिता क्षीण कर दी है। अंडा आदि दूषित पदार्थ, जरसी गाय, भैंस और बकरी आदिने गायोंकी उपयोगिता क्षीण कर दी है। साथ ही गोचरभूमिकी अल्पता, महँगाईकी प्रबलता और गोभक्षकोंसे प्राप्त प्रलोभनकी प्रचुरता तथा शहरकी स्वच्छता आदिके नामपर एवं गोपालनमें प्रतिबन्धता आदिके कारण भी गोसेवा और रक्षामें न्यूनता छाती जा रही है। ऐसी स्थितिमें प्रत्येक तहसीलमें धनी-मानी गोभक्तोंके सहयोगसे एक गोशाला गोवंशको उन्नत करने तथा यावज्जीवन उनकी उपयोगिता सिद्ध करनेकी भावनासे खोलनेकी आवश्यकता है और दूसरी रुग्ण, घायल, अङ्गहीन और वृद्ध होनेके कारण अनुपयोगी समझे जानेवाले गाय, बैल, बछिया, बछड़े आदिकी सेवाकी दृष्टिसे खोलनेकी आवश्यकता है तथा सुचारुरूपसे इनके संचालनकी आवश्यकता है। अराजक और शोषक तत्त्वोंसे इन गोशालाओंको सुरक्षित रखनेकी आवश्यकता तो है ही। परलोकमें आस्था अभिव्यक्त करनेवाले तथा देहनाशसे आत्माके अनाशको युक्तियुक्त ढंगसे सिद्ध करनेवाले ग्रन्थोंकी रचना और उनके प्रचार-प्रसारकी आवश्यकता है। जिनके अभावमें हर हिंदू नास्तिकताके ताण्डवनृत्यका ग्रास हो रहा है।

भारत स्वतन्त्र है, फिर भी दिन-प्रति-दिन गोहत्या बढ़ रही है। जब गोवंश ही शेष नहीं रहेगा, तब 'गोहत्या बंद हो' यह घोष भी व्यर्थ ही सिद्ध होगा। यदि केवल गोहत्यारे विधर्मियोंका गोहत्यामें हाथ हो तो उन्हें कठोरतम दण्ड दिया जाय। यदि केवल सरकार गोहत्यारी

हो तो उसे रसातलमें पहुँचा दिया जाय। यदि गोरक्षक और गोपूजक हिंदू गोहत्यारे हों तो उन्हें भी कठोरतम दण्ड दिया जाय। परंतु जब तीनों ही गोहत्यारे हों तो कौन किसको दण्ड दे!

ध्यान रहे, विदेशी दुर्नीति, सरकारकी तुष्टीकरणकी रीति और व्यापारियोंकी अर्थलोलुपतासे भरी हुई दृष्टि—इन तीनों हेतुओंसे भारतमें गोहत्या हो रही है। गो, द्विज, सुर, संत और भूदेवीका हृदय भारतपर संकटकी स्थिति जिन राजनेताओंके द्वारा उत्पन्न की जा रही है, उन्हें सावधान रहना चाहिये, इन्हींकी रक्षाके लिये भगवान् अवतरित होते हैं, ऐसा ध्यान रखना चाहिये।

गाय 'अघ्न्या' है। इसका वध सर्वथा अनुचित है।

अघ्न्या इति गवां नाम क एता हन्तुमर्हति।
महच्चकाराकुशलं वृषं गां वाऽऽलभेत् तु यः॥

(महाभा०, शान्ति० २६२। ४७)

'श्रुतिमें गौओंको अघ्न्या (अवध्य) कहा गया है। ऐसी स्थितिमें कौन उन्हें मारनेका विचार करेगा? जो पुरुष गाय और बैलोंको मारता है, वह महान् पाप करता है।'

हिन्दुओंके कर्णधार कहे जानेवाले अधिकांश राजनेता ही हिंदुओंके सर्वनाशमें और शेष देशको भी खण्ड-खण्ड करनेमें तुले हैं। जब रक्षक ही भक्षक हो रहे हैं, मार्गदर्शक ही भटक और भटका रहे हैं, तब क्या किया जाय! जब नरहत्या अवैध होनेपर भी नर गाजर-मूलीकी तरह आये दिन काटे जाते हैं, तब आंशिकरूपसे वैध गोवध कैसे बंद किया जाय।

इस संदर्भमें यथाशीघ्र प्रभावशाली और सफल कार्यक्रम प्रस्तुत करनेकी आवश्यकता है।

ऊर्जस्विन्य ऊर्जमेधाश्च यज्ञे
गर्भोऽमृतस्य जगतोऽस्य प्रतिष्ठा।
क्षिते रोहः प्रवहः शश्वदेव
प्राजापत्याः सर्वमित्यर्थवादाः॥
गावो ममैनः प्रणुदन्तु सौर्या-
स्तथा सौम्याः स्वर्गयानाय सन्तु।
आत्मानं मे मातृवच्चाश्रयन्तु
तथानुक्ताः सन्तु सर्वाशिषो मे॥

(महाभा०, अनुशा० ७६। १०-११)

'गौएँ उत्साहसम्पन्न, शक्ति और बुद्धिसे युक्त, यज्ञमें प्रयुक्त होनेवाले अमृत-स्वरूप हविष्यके उत्पत्तिस्थान, इस जगत्‌की प्रतिष्ठा (आश्रय), पृथ्वीपर बैलोंके द्वारा खेती उपजानेवाली, संसारके अनादि प्रवाहको प्रवृत्त करनेवाली और प्रजापतिकी पुत्री हैं। यह सब गौओंकी प्रशंसा है।

सूर्य और चन्द्रमाके अंशसे प्रकट हुई वे गौएँ हमारे पापोंका नाश करें। हमें स्वर्गादि उत्तम लोकोंकी प्राप्तिमें सहायता दें। माताकी भाँति शरण प्रदान करें। जिन इच्छाओंका इन मन्त्रोंद्वारा उल्लेख नहीं हुआ है और जिनका हुआ है, वे सभी गोमाताकी कृपासे पूर्ण हों।'

पूज्या गोमाता साक्षात् श्रीनारायण हैं

[माध्वगौडेश्वराचार्य गोसेवी श्रीअतुलकृष्णजी महाराज]

पूज्या गोमाता कोई साधारण पशु नहीं है। गोमाताएँ हमारी पूज्या और प्रातःस्मरणीय हैं। ये जगदम्बा हैं। श्रीकृष्ण परब्रह्म भी पूज्या गोमाताको अपनी पूज्या माता मानकर अपने हाथोंसे उनकी सेवा करते हैं, पूजा करते हैं, आरती करते हैं और उन्हें अपने प्राणोंसे भी प्यारी मानते हैं। गोरक्षा करनेके लिये ही निराकार परब्रह्म श्रीकृष्णके रूपमें प्रकट होते हैं। पूज्या गोमाता साक्षात् श्रीनारायण हैं। इनमें तथा श्रीनारायणमें कोई अन्तर नहीं है। जो श्रीनारायण हैं वही साक्षात् पूज्या गोमाता हैं। आज जो इस ऋषि-मुनियोंके देश धर्मप्राण भारतमें नित्यप्रति हजारों-लाखोंकी संख्यामें गोमाताएँ धड़ाधड़ काटी जा रही हैं, यह एक प्रकारसे बड़ा भारी घोर पाप किया जा रहा है। इस गोहत्यासे बढ़कर और कोई दूसरा घोर पाप नहीं है।

याद रखो, यह पूज्या गोमाता जो आज इस धर्मप्राण भारत देशमें धड़ाधड़ काटी जा रही हैं यह गोमाता नहीं काटी जा रही हैं अपितु यह तो साक्षात् श्रीनारायणकी

गर्दनपर छुरी चल रही है और एक प्रकारसे यह साक्षात् हमारे श्रीनारायण ही काटे जा रहे हैं। पूज्या गोमाताओंको आर्थिक दृष्टिसे देखना और बूढ़ी, लँगड़ी-लूली, अपाहिज तथा अनुपयोगी आदि बताकर इन्हें काटनेकी बातें करना और काटनेकी सलाह देना तथा इनके काटनेका किसी भी प्रकारसे समर्थन करना—यह तो एक बड़ा ही घोर पाप है और यह अक्षम्य अपराध है। हमारे पूज्य साक्षात् भगवान् श्रीवेदने पूज्या गोमाताकी बड़ी भारी स्तुति की है। वेदोंमें इन्हें अघ्न्या बताया गया है—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां
स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय
मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥

(ऋ० ८।१०१।१५)

जिस पूज्या गोमाताकी साक्षात् वेद भगवान् स्तुति कर रहे हैं और गुणगान कर रहे हैं तथा जिये 'अघ्न्या' बता रहे हैं वह पूज्या गाय क्या कोई साधारण पशु है। यदि पूज्या गोमाता साक्षात् श्रीनारायण नहीं होतीं तो क्या हमारे साक्षात् वेद भगवान् कभी गायकी इस प्रकारसे स्तुति करते? हमारे भगवान् श्रीवेदने तो पूज्या गोमाताकी हत्या करनेवाले पापात्माको प्राणदण्ड देनेका आदेश दिया है—

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नोऽसो अवीरहा॥

(अथर्ववेद १।१६।४)

'गोहत्यारोंको सीसेकी गोलीसे मार देना चाहिये' ऐसा वेद भगवान्ने आदेश दिया है।

जबतक हमारी पूज्या गोमाताकी इस देशमें हत्या होती रहेगी, तबतक भला इस देशमें सुख-शान्तिकी क्या आशा? जिस देशमें, जिस भूमिमें पूज्या गोमाताके रक्तका एक बिन्दु भी गिरता है, उस भूमिमें किये गये योग, यज्ञ, जप, तप, दान, पुण्य, भजन-पूजन आदि सब-के-सब शुभ कर्म व्यर्थ हो जाते हैं और निष्फल हो जाते हैं। यदि देशमें सुख-शान्ति चाहते हो तो इस गोहत्याके काले कलंकको अविलम्ब बंद करानेका भरसक प्रयत्न करो। गायकी रक्षाके लिये ही साक्षात् अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक परमात्मा गोविन्दके रूपमें प्रकट हुआ करते हैं।

गोदुग्धकी विलक्षण महिमा

याद रखो, पूज्या गोमाताका दुग्ध कोई अन्य पशुओंके दूधकी भाँति साधारण दुग्ध नहीं है। गोदुग्धकी बड़ी अद्भुत विलक्षण महिमा है। गोदुग्ध साक्षात् अमृत है, इसमें तनिक भी संदेह करनेकी आवश्यकता नहीं है। आप भले ही कितने ही कालोंतक खूब योग करें, साधना करें और नाना प्रकारकी घोर तपस्या करें इनमें आपको सफलता मिले या न मिले संदेह हो सकता है, पर यदि आप यह सब योग-साधना, तपस्या आदि कुछ भी न करें बस खाली ६ महीनेतक श्रद्धा-भक्तिपूर्वक नित्यप्रति पूज्या गोमाताकी अपने हाथोंसे सेवा कर गोमाताका गोदुग्ध-पान करें तो आपको गोदुग्धके अमृत-पान करनेसे स्वतः ही समाधि लगने लगेगी। यह गोदुग्ध-पान करनेकी अद्भुत विशेषता है। गोदुग्धमें यह दिव्य गुण है और गोदुग्धकी ऐसी अद्भुत विलक्षण महिमा है।

आजके बहुतसे भारतीय हिन्दू अपनी पूज्या प्रातः-स्मरणीया गोमाताकी और उसके दुग्धकी अद्भुत विलक्षण महिमाको भुलाकर, अमृतके समान उस गोदुग्धको छोड़कर भैंस-बकरीके दुग्धको महत्त्व दे रहे हैं, पी रहे हैं तथा डिब्बेका दूध पी रहे हैं और चायकी चुसकी ले रहे हैं, यह हमारे घोर अधःपतनका प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं तो और क्या है। जिस गोमाताके परम पवित्र अमृतके समान गोदुग्धका पान करनेसे अनेक प्रकारके रोग-शोक स्वतः ही शान्त हो जाते हैं और जिस गोमाताके गोदुग्धके पान करनेसे अनायास ही समाधि लगने लगती है तथा प्राणीकी बुद्धि सात्त्विक और निर्मल होकर प्रभु-भजनमें संलग्न होने लगती है, लोक-परलोक दोनों बन जाते हैं, उसी गोमाताको काटकर आज उनके गोमांसके डिब्बे विदेशोंको भेज-भेजकर डालर कमाये जा रहे हैं और उस रुपयेसे देशोन्नतिका स्वप्न देखा जा रहा है यह कैसे आश्चर्यकी और कैसे घोर दुःखकी बात है?

गोवध-वारण हमारा पवित्र कर्तव्य है

[अनन्तश्रीविभूषित ऊर्ध्वाम्नाय श्रीकाशी-सुमेरुपीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीचिन्मयानन्द सरस्वतीजी महाराज]

'गो' का अर्थ गाय, पृथ्वी, इन्द्रिय, किरण तथा रत्न आदि होता है। पृथ्वीको धारण करनेवाली विप्र, वेद, सती आदि सात वस्तुओंमें गौका उल्लेख सर्वप्रथम है। अघ्न्या, रोहिणी, माहेन्द्री, इज्या, कल्याणी, दोग्ध्री, शतौदना, घटोध्नी, पावनी, बहुला, भद्रा, अदिति, जगती, इन्द्राणी, अर्च्या, ज्योतिः, कामदुघा, विश्रुता, चन्द्रा, वशा, पर्जन्यपत्नी, आतिथेयी, यज्ञपदी, विश्वायुः, सावित्री, सरस्वती आदि गौके प्रसिद्ध पर्याय हैं।

'गौ' का यौगिक अर्थ गतिशील है—**'गच्छति इति गौः'**—जो चलती है—गतिशील है, वह गौ है। सम्पूर्ण संसार गतिशील होनेसे गोरूप है। विश्वकी आध्यात्मिकी और आधिदैविकी अभिव्यक्ति गौ है। इसकी रक्षासे विश्वरक्षा और इसकी हत्यासे विश्वहत्या सुनिश्चित है। गोरस आदिसे विश्वका पोषण करनेवाली गौकी जहाँ लौकिक उपयोगिता है, वहाँ गोसेवा, गोदान और गोरक्षा आदिके फलस्वरूप गोलोक आदिको देनेवाली गौकी पारलौकिक उपयोगिता भी शास्त्रसिद्ध है।

'एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम्' (अथर्ववेद, शौनकसंहिता ९। ७। १। २५) के अनुसार गौ विश्वरूप—सर्वरूप है। उपनिषदोंमें त्रिगुणको धेनु, गोमयको विद्या, गोमूत्रको उपनिषद् और वत्सको स्मृति माना गया है—

विद्याशक्तिः समस्तानां शक्तिरित्यभिधीयते।
गुणत्रयाश्रया विद्या सा विद्या च तदाश्रया॥
गुणत्रयमिदं धेनुर्विद्याभूद् गोमयं शुभम्।
मूत्रं चोपनिषत्प्रोक्तं कुर्याद् भस्म ततः परम्॥
वत्सस्तु स्मृतयश्चास्य तत्सम्भूतं तु गोमयम्।

(बृहज्जाबालोपनिषद् ३। १—३)

आर्यभूमि, सनातनभूमि, हिन्दुभूमि, वैदिकभूमि, देवभूमि, यज्ञभूमि, कर्मभूमि, अवतारभूमि—इस भारतमें गोवंशकी उपेक्षा और हत्या महान् आश्चर्य और अपराध है। यह स्पष्ट ही लोकहत्या है। गोरस यज्ञमें प्रयुक्त होकर सुवृष्टिके द्वारा सर्वोपकारक सिद्ध होता है। विदुरनीतिके अनुसार गोसेवकको दो घड़ीके पश्चात् गायकी खोज-खबर लेनी ही चाहिये। तभी गौओंकी सेवा और सुरक्षा सम्भव है। सांकर्यदोषसे गोवंशको बचानेके लिये जरसी साँड़ोंके सम्पर्कमें आनेसे देशी गौओंको बचाना बहुत ही आवश्यक है। विदेशी दुरभिसंधि और उसके ग्रास-लाञ्छित राजनेताओंके कारण दिन-प्रति-दिन हिन्दुओंकी मानसिकता विकृत होती जा रही है। जिसके फलस्वरूप देशी गोवंशकी योजनाबद्ध हत्या हो रही है। गोहत्या स्वतन्त्र भारतके लिये दुर्भाग्यपूर्ण अभिशाप है।

समृद्ध गोशालाओंके माध्यमसे गोसेवा और गोसंरक्षण जहाँ आवश्यक है, वहाँ बूचड़खाने आदिके माध्यमसे होनेवाली गोवंशकी हत्याका पूर्ण निवारण भी आवश्यक है। उशीनर, विष्वगश्व, नृग, भगीरथ, मान्धाता, मुचुकुन्द, भूरिद्युम्न, नल, सोमक, पुरूरवा, भरत और श्रीरामके राज्यमें पूर्ण पोषण और संरक्षणको सम्प्राप्त गौएँ तथा श्रीकृष्णचन्द्रके द्वारा पालित-पोषित गौएँ आज यान्त्रिकविधाका आलम्बन लेकर प्रतिवर्ष लाखोंकी संख्यामें काटी जा रही हैं, यह जघन्य अपराध है, महापाप है। इससे देशको मुक्त करना हमारा पूर्ण कर्तव्य है। गोवंशकी एक इकाईकी हत्या भी हमें असह्य है।

गो-ग्रास-दानकी महिमा

बैलोंको जगत्का पिता समझना चाहिये और गौएँ संसारकी माता हैं। उनकी पूजा करनेसे सम्पूर्ण पितरों और देवताओंकी पूजा हो जाती है। जिनके गोबरसे लीपनेपर सभा-भवन, पौंसले, घर और देवमन्दिर भी शुद्ध हो जाते हैं, उन गौओंसे बढ़कर और कौन प्राणी हो सकता है? जो मनुष्य एक सालतक स्वयं भोजन करनेके पहले प्रतिदिन दूसरेकी गायको मुट्ठी भर घास खिलाया करता है, उसको प्रत्येक समय गौकी सेवा करनेका फल प्राप्त होता है।

(महा०, आश्वमेधिकपर्व, वैष्णवधर्म०)

गोसेवासे ही सुखकी प्राप्ति

[जगद्‌गुरु रामानुजाचार्य स्वामी श्रीश्यामनारायणाचार्यजी]

आज देश दु:खी है—प्रजा दु:खी है तथा संत-महात्मासहित सारा चराचर जगत् दु:खी है। इसका एकमात्र कारण है गोमाताका दु:खी होना। जबसे भारत एवं अन्यान्य देशोंमें गोवध होने लगा है, तबसे समस्त विश्वकी प्रजा—जीव-जन्तु दु:खी रहने लगे हैं। राजाका धर्म होता है प्रजाकी रक्षा करना, परंतु आजका शासक प्रजाको दु:खी देखकर चुप लगाकर बैठ जाता है, क्योंकि शासकमें स्वयं देशके प्रति निष्ठा, सद्भावना एवं समझदारी नहीं है कि मुझे क्या करना चाहिये, क्या नहीं करना चाहिये। गोमाताकी सेवा करना तो अलगकी बात है।

गोसेवाकी शिक्षा स्वयं श्रीरामजी अयोध्यावासियोंको देते हुए कहते हैं—'मैं इस रामावतारमें 'गोसेवा' नहीं कर सका। लोगोंने मुझे महाराज श्रीदशरथजीका पुत्र समझकर गोसेवा नहीं करने दिया, इसलिये मैं गोसेवाके लिये ही अगला कृष्णावतार धारण करूँगा।' आगे भगवान् श्रीकृष्णकी लीलामें सबसे अधिक गोसेवाका ही वर्णन किया गया है। लाखों संत-महात्माओंने गोरक्षाके लिये अपने प्राणोंकी आहुति दे दी, परंतु आजतक 'गोवध' बंद नहीं हो सका। लोग कहते हैं—मुसलमान बहुत बुरे हैं। गायोंका वध करते हैं, परंतु मुसलमानोंसे कहीं अधिक आज देशका अधिकतर हिन्दू दोषी है। अपने घरके माता-पिता जब वृद्धावस्थाको प्राप्त हो जाते हैं, तब उनको घरसे बाहर कर देते हैं क्या? भले हों, बुरे हों, कैसे भी हों, परंतु माता-पिताकी सेवा करनी ही पड़ेगी। आज प्राय: हर जगह यही हो रहा है। किसीने पाँच हजारकी गौ खरीदी, और दो साल बाद दूध कम देनेके कारण उसने गोमाताको तीन हजारमें ही बेच दिया। उसी गायको दूसरे साल दूसरे सज्जनने दो हजारमें बेच दिया। इसी प्रकार धीरे-धीरे वह गोमाता ज्यों-ज्यों जीर्ण होती गयी, त्यों-त्यों उसे कम दामोंमें बेचते हुए एक दिन कसाईके हाथों बेचकर वधका शिकार बना दिया। आज देशका प्रत्येक हिन्दू अपने-अपने घरोंमें एक-एक गौ रखनेका तथा किसी भी हालतमें गौको न बेचनेका संकल्प करे तो स्वत: ही वह सुखी हो जायगी। गोसेवासे अपुत्री पुत्रको, धनहीन व्यक्ति धनको प्राप्त करता है तथा किसी भी कामनासे गौकी सेवा करनेवाला मनोऽभिलषित फलको प्राप्त करता है। गौ-सेवासे सत्यकाम जाबाल आदिको ब्रह्मज्ञान-प्राप्तिकी बात प्रसिद्ध ही है।

गौसे हमारा आध्यात्मिक सम्बन्ध भी है। मरनेके बाद गौ वैतरणी पार कराती है। इसलिये गौ सदैव पूज्या है। गौका दूध सात्त्विक है और बुद्धि-बलको बढ़ानेवाला है तथा इसके अलावा सभी जानवरोंका दूध रजोगुणी है जो मन-बुद्धिमें विकार उत्पन्न करता है। परीक्षाकी दृष्टिसे देखें तो सैकड़ों गायोंके बीचमें आपकी गाय बँधी हो तो उस समय अपने गायके बछड़ेको खोल दीजिये, वह बछड़ा सैकड़ों गायोंके बीचमें भी अपनी माँको ढूँढ़ लेगा। भैंसका पाड़ा दस भैंसोंके बीचमें बँधी अपनी माँको नहीं ढूँढ़ पायेगा। गाय भयंकर गर्मीमें भी जंगलोंमें चरकर आती है। उसे तनिक भी गर्मी नहीं लगती। भैंस माघके महीनेमें भी थोड़ी-सी गर्मी पड़ी, उसी वक्त चाहे गंदा पानी-कीचड़ क्यों न हो, उसमें जाकर लोटने लगेगी। इस प्रकार हर दृष्टिसे गौ माता पूज्या है। गौकी सेवासे ही सुख-शान्ति प्राप्त हो सकती है।

गौओंका दूध जूठा नहीं होता

गौओंका दूध बछड़ोंके पीनेसे जूठा नहीं होता। जैसे चन्द्रमा अमृतका संग्रह करके फिर उसे बरसा देता है, उसी प्रकार ये रोहिणी गौएँ अमृतसे उत्पन्न दूध देती हैं। जैसे वायु, अग्नि, सुवर्ण, समुद्र और देवताओंका पीया हुआ अमृत—ये वस्तुएँ उच्छिष्ट नहीं होतीं, उसी प्रकार बछड़ोंके पीनेपर उन बछड़ोंके प्रति स्नेह रखनेवाली गौ भी दूषित या उच्छिष्ट नहीं होती। (तात्पर्य यह कि दूध पीते समय बछड़ेके मुँहसे गिरा हुआ झाग अशुद्ध नहीं माना जाता।)

(महाभा०, अनु० ७७। २४—२६ १/२)

गोमहिमा

[अनन्तश्रीविभूषित तमिलनाडुक्षेत्रस्थ काञ्चीकामकोटिपीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीजयेन्द्र सरस्वतीजी महाराज]

सनातन वैदिक धर्म ही हमारा धर्म है। इसका मूल ग्रन्थ है वेद। इसकी घोषणा है '**मातृदेवो भव**'।

प्रत्येक व्यक्तिके जीवनमें चार माताएँ होती हैं—पहली है जन्मदात्री जननी, दूसरी गोमाता, तीसरी भूमाता और चौथी है जगन्माता परमेश्वरी।

बच्चोंको माताके दूधके स्थानपर विराजता है गोमाताका दूध। यह बालोंसे लेकर बूढ़ोंतक सभीका पूर्णाहार होता है। गायोंके शरीरमें चौदह लोक विराजते हैं। '**गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश**'—यह स्मृतिवाक्य इसकी उद्घोषणा करता है। सूर्यवंशके महाराज दिलीपने भी गोसंरक्षण करके ही पुत्रलाभ प्राप्त किया, यह एक पौराणिक कथा है। जब विश्वामित्र महर्षि वसिष्ठके दर्शन करने आये थे तब दैवी गौ कामधेनुने स्वादिष्ट भोजका प्रबन्ध कर दिया।

अत: गायोंकी महिमा अवर्णनीय होती है। गाय सभी देवताओंका निवास-स्थान है। गायोंका शरीर खासकर इसका पृष्ठ-भाग श्रीमहालक्ष्मीजीका निवास-स्थान है। श्रीमहालक्ष्मी तो आर्थिक सम्पत्तिकी अधिष्ठात्री देवता होती हैं। अत: गायोंकी हिंसा होती है तो वह रुष्ट हो उठेंगी और आर्थिक सम्पत्तिकी हानि कर डालेंगी।

बूढ़ी माताओंके समान ही बूढ़ी गायोंकी भी सेवा-शुश्रूषा करना हमारा कर्तव्य है। गोहत्या माने मातृहत्या ही है। जबतक गायोंके दूध-दही-घीके खाने-पीनेकी रीति थी, तबतक मनुष्यको 'कैन्सर'से पीड़ा नहीं थी, क्योंकि गायोंकी हर वस्तु कृमिनाशक शक्तिसे भरपूर होती है। इसीलिये घरोंके अंदर-बाहर भी गोमयसे शुद्धि कर देते थे।

'**पञ्चगव्यप्राशनं महापातकनाशनम्।**' यह है स्मृति-घोषणा। पञ्चगव्य है सर्वपापविनाशक। गायकी खादसे उत्पन्न किये जानेवाले खाद्य भी सात्त्विक थे। अत: किसीको भी गायोंकी हिंसा नहीं करनी है। इस जगत्में जैसे शिशुओंके, अङ्गहीनोंके, बूढ़ोंके, विधवाओंके रक्षणालय होते हैं, वैसे ही गायोंके भी संरक्षणालय होने चाहिये। अत: हर एकको चाहे वह नगरवाला हो या ग्रामवाला हो गायकी महिमा समझा लेना है, समझानेके लिये जहाँ-तहाँ पशु-संरक्षणालयोंकी स्थापना अनिवार्य है।

'कल्याण'का 'गोसेवा'-विशेषाङ्क इसकी ओर जनताका ध्यान आकर्षित करनेमें सफल विराजे।

नारायणस्मृतिः।

यतो गावस्ततो वयम्

[स्वामी श्रीओंकारानन्दजी महाराज, सदस्य बदरी-केदार-मन्दिर-समिति]

नि:स्वार्थ सेवाभावकी चूडान्त आदर्श 'गौ' की सार्वभौमिक उपादेयताको परिभाषित करना पुरुषके पौरुषसे परे है; क्योंकि स्वयं अपौरुषेय वेद भी जिसका गुणानुवाद गा रहे हैं—

नमस्ते जायमानायै जाताया उत ते नमः।
बालेभ्यः शफेभ्यो रूपायाघ्न्ये ते नमः॥
यया द्यौर्यया पृथिवी ययापो गुपिता इमाः।
वशां सहस्रधारां ब्रह्मणाच्छावदामसि॥

(अथर्व० १०।१०।१, ४)

'हे अवध्य गौ! जन्म लेते समय तुम्हारा वन्दन और जन्म हो जानेपर भी तुम्हें प्रणाम। तुम्हारे स्वरूप, रोम और खुरोंको भी नमस्कार। जिसने द्युलोक, पृथ्वी और जलोंको सुरक्षित रखा है, उस सहस्रों धाराओंसे दूध देनेवाली गौको लक्ष्यमें रखकर हम स्तोत्रका पाठ करते हैं।'

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु॥

(अथर्व० ४।२१।६)

'गौओ! तुम दुर्बल शरीरवाले व्यक्तिको हृष्ट-पुष्ट

कर देती हो एवं निस्तेजको देखनेमें सुन्दर बना देती हो। इतना ही नहीं, तुम अपने मधुर शब्दसे हमारे घरोंको मङ्गलमय बना देती हो। इसी कारण सभाओंमें तुम्हारा यशोगान होता रहता है।'

भारतीय संस्कृति और दर्शनके केन्द्र-विन्दु उपनिषद्का यह आख्यान जिसमें विश्वजित्-यज्ञमें सर्वस्व दान करनेवाले वाजश्रवाके पुत्रने जब अपने पिताको देखा कि वे ब्राह्मणोंको दक्षिणामें बूढ़ी गायें दे रहे हैं, तब नचिकेताकी आस्तिक्य-बुद्धि अपने पिताके हितमें जाग्रत् हो जाती है और वह सोचता है—

पीतोदका जग्धतृणा दुग्धदोहा निरिन्द्रियाः।
अनन्दा नाम ते लोकास्तान् स गच्छति ता ददत्॥

(कठ० उप० १। ३)

'जो जल पी चुकी हैं, घास खा चुकी हैं, जिनका दूध भी दुह लिया गया है तथा जिनमें बच्चा जन्म देनेकी सामर्थ्य नहीं रही, ऐसी गायोंका दान करनेसे वह दाता उस निम्न लोकमें जाता है जो आनन्दसे सर्वथा शून्य है।'

गौके प्रति विचार-मन्थन इस तीव्र अभिव्यक्तिके फलस्वरूप पिताके क्रोधकी परवाह किये बिना नचिकेताने पूछ ही लिया—'**कस्मै मां दास्यसीति**' मुझे आप दक्षिणार्थ किसे देंगे? और प्रत्युत्तरमें पिताने कहा—'मैं तुझे मृत्युको दूँगा।' कठोपनिषद्का यह लंबा आख्यान और उसके प्रमुख पात्र नचिकेताका गौ-विषयक चिन्तन गोदान तथा गोसेवाकी महिमाको प्रकट करता है। महाभारतमें भगवान् वेदव्यास तो यहाँतक कहते हैं कि—

गोकुलस्य तृषार्तस्य जलान्ते वसुधाधिप।
उत्पादयति यो विघ्नं तमाहुर्ब्रह्मघातकम्॥

(महा०, आश्व०, वैष्णव०)

'जो प्याससे व्याकुल गायोंको जल पीनेसे रोकता है, उसे ब्रह्मघातक कहा जाता है।'

'**यद्गृहे दुःखिता गावः स याति नरकं नरः**' की भावनामें श्रद्धा करनेवाली हिन्दू-संस्कृति इस सिद्धान्तपर विश्वास करती है कि गोरक्षा ही एकमात्र देशोन्नतिका मूल साधन है।

प्राचीन कालमें धन ही समृद्धिका सूचक था। जिसके पास जितना अधिक गोधन होता था, वह उतना ही यशस्वी माना जाता था। श्रीमद्भागवतमें कहा गया है—

धेनूनां रुक्मशृङ्गीणां साध्वीनां मौक्तिकस्रजाम्।
पयस्विनीनां गृष्टीनां सवत्सानां सुवाससाम्॥
ददौ रूप्यखुराग्राणां क्षौमाजिनतिलैः सह।
अलंकृतेभ्यो विप्रेभ्यो बद्वं बद्वं दिने दिने॥

(१०। ७०। ८-९)

तात्पर्य यह कि भगवान् श्रीकृष्ण प्रतिदिन संध्या-तर्पण और गुरुजन-पूजनोपरान्त सद्यः-प्रसूता दुधारू, बछड़ोंवाली, सौम्य, शान्त गौओंका दान करते। उस समय उन्हें सुन्दर वस्त्र और मोतियोंकी माला पहना दी जाती। सींगमें सोना और खुरोंमें चाँदी मढ़ दी जाती। वे ब्राह्मणोंको वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित करके रेशमी वस्त्र, मृगचर्म और तिलके साथ प्रतिदिन तेरह हजार गौएँ इस प्रकार दान करते।

वाल्मीकीय रामायणके अनुसार भगवान् रामने वन जानेके पूर्व विनोदमें त्रिजट नामक ब्राह्मणको अपना डंडा घुमाकर फेंके गये हजारों गायोंके झुंडके मध्य आनेवाली सभी गायें दान कर दी थीं।

स तीर्त्वा सरयूपारं दण्डस्तस्य कराच्च्युतः।
गोव्रजे बहुसाहस्रे पपातोक्षणसंनिधौ॥

(वा० रा० अयो० ३२। ३८)

महाभारतके विराट-पर्वके आख्यानसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि धर्मराज युधिष्ठिर कितने निष्ठावान् गोसेवी थे। अज्ञातवासके उन दिनोंमें कीचककी मृत्युके पश्चात् जब दुर्योधन पाण्डवोंके अन्वेषणके लिये सम्मति चाहता है तो कौरव-पक्षके वरिष्ठ नायक पितामह भीष्म अपना मन्तव्य स्पष्ट करते हुए कहते हैं—

गावश्च बहुलास्तत्र न कृशा न च दुर्बलाः।
पयांसि दधिसर्पींषि रसवन्ति हितानि च॥

(महा०, विराट० २८। २२)

जिस जनपदमें युधिष्ठिर निवास कर रहे होंगे, वहाँ गायोंकी संख्या बहुत बढ़ी होगी, वे गौएँ न तो कमजोर होंगी और न दुर्बल; बल्कि वे पूर्ण स्वस्थ होंगी तथा उनके दुग्धादि पदार्थ भी सुमधुर एवं लाभप्रद होंगे।

इस संक्षिप्त विवेचनसे ही हम तात्कालिक भारतकी समृद्धिका किंचित् आकलन कर सकते हैं।

परमात्माने मानवको बौद्धिक एवं आत्मिक गुणोंसे सम्पन्न कर धरतीपर इस आशासे भेजा है कि वह सृष्टिको सौन्दर्य प्रदान करनेमें उसकी कल्पनाको साकार बनायेगा, पर कैसी विडम्बना है कि अपने स्वार्थ-साधनोंमें उलझकर अपनी हठ-बुद्धिके कारण वह न केवल संसारको कुरूप बना रहा है वरन् अपनेको अमानवीय घोषित करनेमें गौरवका अनुभव कर रहा है। आज हमने वैदेशिक सभ्यताके अंधानुकरण और अपनी ही दुर्बलताओंके कारण 'मानव-मात्रकी धाय—गाय' को आदर देनेमें कमी कर दी। तभी हम दिग्भ्रान्त पथिककी भाँति इधर-उधर दीख रहे हैं। अपनी संस्कृतिके प्रति निष्ठावान् न होना सत्य-सनातन धर्मके लिये भारी आघात सिद्ध हुआ। हम अपनी ही आस्थासे टूट गये तो संसार पथ-भ्रष्ट क्यों न होगा!

हम भारतीय ही थे, जिन्होंने कभी '**कृण्वन्तो विश्वमार्यम्**' का यह उद्घोष कि 'हम समस्त पृथ्वीको आर्य (सुसंस्कृत) बनायेंगे' कहकर समूचे विश्वको न केवल ज्ञान दिया वरन् संसारमें फैलकर उसे सुसंस्कृत भी बनाया, पर विडम्बना है कि आज हम भारतीय संस्कृतिके सर्वथा प्रतिकूल चलकर स्वयं ही अपने पाँवोंपर कुल्हाड़ी मारनेकी उक्तिको चरितार्थ कर रहे हैं। गौके सम्मानके आदर्शने ही हमें समस्त मानव-जातिमें गौरवमय स्थानपर प्रतिष्ठित किया था।

इस नश्वर शरीरके प्रति अपनी आस्था एवं स्पृहाकी अवहेलना प्रकट कर सिंहके समक्ष अपने शरीरको मांसके पिण्डकी भाँति पटककर गौकी रक्षा करनेवाले रघुवंश महाकाव्यके महानायक महाराज दिलीपकी भावनामें छिपे रहस्यको हमें समझना होगा।

महाराज जनकका विमान यमराजकी संयमनीपुरीके निकटसे होकर जा रहा था। विमान अभी आगे बढ़नेको ही था कि नरककी यन्त्रणाओंको भोगते हजारों नारकीयोंके करुण स्वर जनकको सुनायी दिये—'राजन्! आप यहाँसे न जायँ, आपके शरीरको स्पर्शकर आनेवाली वायुसे हमें शान्ति मिल रही है।' इस करुण पुकारको सुनकर महाराज जनकने अपने जीवनभरके पुण्य प्रदान कर समस्त नारकीय जीवोंको मुक्त किया। अन्तमें जब जनकने धर्मराजसे पूछा—'मैंने कौन-सा ऐसा पाप किया था जो मुझे नरकद्वारतक लाया गया?'

यमराजने कहा—'राजन्! तुम्हारा तो समस्त जीवन पुण्योंसे भरा पड़ा है, परंतु—

एकदा तु चरन्तीं गां वारयामास वै भवान्।
तेन पापविपाकेन निरयद्वारदर्शनम्॥

(पद्म०, पाता०)

'एक बार तुमने चरती हुई गायके कार्यमें विघ्न डाला था, उसी पापके कारण तुम्हें नरकका द्वार देखना पड़ा।'

इस उपाख्यानसे महर्षि व्यासदेव मानवमात्रको उद्बोधित करना चाहते हैं कि गौकी सेवामें विश्वास न करनेवालोंका इहलोक ही नहीं परलोक भी बिगड़ जाता है।

अपनी जीवन-यात्राके लिये न्यूनतम पदार्थ स्वीकार कर परोपकारके लिये अधिकतम त्याग करनेकी अपरिग्रही भावनाका परम आदर्श है गौ। उसके गोबर, मूत्र, सींग, त्वचा, खुर, हड्डियाँ, बाल—सभी किसी-न-किसी रूपमें उपयोगी हैं ही। कौटिल्यके अर्थशास्त्रमें गोपालन और गो-संरक्षणका व्यापक वर्णन मिलता है। गोधनका धार्मिक महत्त्व तो ऋतम्भरा प्रज्ञाद्वारा ही अनुभवगम्य है, पर गोसंरक्षण अर्थकी वृद्धिमें प्रमुख भूमिका निभाता है। गोधन 'अर्थ' और 'धर्म' दोनोंका प्रबल पोषक है। अर्थसे 'काम' की सिद्धि होती है और 'धर्म' से मोक्षकी।

गौ, विप्र, वेद, सती, सत्यवादी, निर्लोभी और दानी—इन सप्त महाशक्तियोंके बलपर पृथ्वी टिकी है, तब फिर गौके माहात्म्यको कहाँतक समझा जाय! इन सातोंमें भी गौको मुख्य बतलानेके लिये उसका प्रथम परिगणन किया गया है—

गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः।
अलुब्धैर्दानशीलैश्च सप्तभिर्धार्यते मही॥

वेद-शास्त्र-पुराण और महर्षियोंकी ये वाणियाँ—ये वचन हमें गौके सम्मानके प्रति कितना आकृष्ट कर पायेंगे यह कहना तो कठिन कार्य है, क्योंकि हम गौकी प्रतिष्ठामें कहे गये धम्मपद, कुरान, बाईबिल और गुरुग्रन्थसाहब

आदि धर्मग्रन्थोंकी भाषा सुननेमें आना-कानी कर रहे हैं तो राष्ट्रपिताके ये शब्द कि 'गोरक्षा आज जिस ढंगसे हो रही है उसे देखकर मेरा हृदय एकान्तमें रोता है' या ये शब्द कि *'गाय कहूँ या तुमको माय?'* क्या हमारे लिये मात्र अरण्य-रोदन नहीं होंगे?

तथापि निराशावादी दृष्टिकोण मनुकी संतानोंको शोभा नहीं देता, अतः आइये महर्षि वसिष्ठके शब्दोंमें अपनी निष्ठा प्रकट करते हुए हम भी कहें—

गावो मामुपतिष्ठन्तु हेमशृंग्यः पयोमुचः।
सुरभ्यः सौरभेय्यश्च सरितः सागरं यथा॥
गा वै पश्याम्यहं नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा।
गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्॥

'नदियाँ जिस प्रकार समुद्रमें जा मिलती हैं, उसी प्रकार सुनहरी शृंगोंवाली और दूध देनेवाली गौएँ मुझे प्राप्त हों। ऐसा हो कि मैं नित्य गौओंको देखूँ और गौएँ मेरी ओर देखें, कारण, गौएँ हमारी हैं और हम गौओंके हैं, 'गौएँ हैं, इसीसे हमलोग भी हैं।'

गोमाता भारतकी आत्मा है

[अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीश्रीजी महाराज]

गौ समस्त प्राणियोंकी परम श्रेष्ठ शरण है, यह सम्पूर्ण विश्वकी माता है—'**सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम्**', '**गावो विश्वस्य मातरः।**' यह निखिलागमनिगमप्रतिपाद्य सर्ववन्दनीया एवं अमितशक्तिप्रदायिनी दिव्यस्वरूपा है। कोटि-कोटि देवताओंकी दिव्य अधिष्ठान है। इसकी पूजा समस्त देवताओंकी पूजा है। इसका निरादर समस्त देवताओंका निरादर है। यह भारतीय संस्कृतिकी प्रतीक-स्वरूपा है। परम दिव्यामृतको देनेवाली सकलहितकारिणी तथा सम्पूर्ण विश्वका पोषण करनेवाली है। इसकी आराधनासे सकल देववृन्द एवं विश्वनियन्ता भगवान् श्रीसर्वेश्वर अतिशय प्रसन्न होते हैं। तभी तो वे व्रजराजकिशोर 'गोपाल' एवं 'गोविन्द' बनकर व्रजके वनोपवनोंमें, गिरिराजकी मनोरम घाटियोंमें तथा कालिन्दीके कमनीय कूलोंपर नंगे चरणों असंख्य गोसमूहोंके पीछे-पीछे अनुगमन करते हुए उनकी सेवामें निरत रहा करते थे। अग्निपुराण (२९२। १८) में कहा गया है—

गावः पवित्रं परमं गावो माङ्गल्यमुत्तमम्।
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावो धन्याः सनातनाः॥

'गायें परम पवित्र, परम मङ्गलमयी, स्वर्गकी सोपान, सनातन एवं धन्यस्वरूपा हैं।'

गवां हि तीर्थे वसतीह गङ्गा
पुष्टिस्तथा तद्रजसि प्रवृद्धा।
लक्ष्मीः करीषे प्रणतौ च धर्म-
स्तासां प्रणामं सततं च कुर्यात्॥

(विष्णुधर्मो० २। ४२। ५८)

'गौ-रूपी तीर्थमें गङ्गा आदि सभी नदियों तथा तीर्थोंका आवास है, उसकी परम पावन धूलिमें पुष्टि विद्यमान है, उसके गोमयमें साक्षात् लक्ष्मी है तथा इन्हें प्रणाम करनेमें धर्म सम्पन्न हो जाता है। अतः गोमाता सदा-सर्वदा प्रणाम करने योग्य है।'

शास्त्रोंमें स्थल-स्थलपर गौकी गरिमा, महिमा एवं सर्वोपादेयता निर्दिष्ट की गयी है। गौका दर्शन, स्पर्श और अर्चन परम पुण्यमय है। गायके स्पर्शमात्रसे आयु बढ़ती है। भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन श्रीश्यामसुन्दरने गाण्डीवधारी अर्जुनको महाभारतके अनुशासन-पर्व (५१। २७। ३२) में इस प्रकार उपदेश किया है—

कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव।
गवां प्रशस्यते वीर सर्वपापहरं शिवम्॥
निविष्टं गोकुलं यत्र श्वासं मुञ्चति निर्भयम्।
विराजयति तं देशं पापं चास्यापकर्षति॥

'गोमाताकी पुण्यमयी महिमाका कीर्तन, श्रवण, दर्शन एवं उसका दान सम्पूर्ण पापोंको दूर करता है। निर्भय होकर जिस भूमिपर गाय श्वास लेती है वह परम शोभामयी है, वहाँसे पाप पलायित हो जाता है।'

भगवान् मनुने गोदानका फल कितना उत्कृष्ट बताया है—

'अनडुहः श्रियं पुष्टां गोदो ब्रध्नस्य विष्टपम्'

अर्थात् 'बैलको देनेवाला अतुल सम्पत्ति तथा गायको देनेवाला दिव्यातिदिव्य सूर्यलोकको प्राप्त करता है।'

जिस भारतके धर्म, संस्कृति और विविध शास्त्र तथा सर्वद्रष्टा तत्त्वज्ञ ऋषि-मुनियों एवं आप्त महापुरुषोंके अनेक उपदेश गोमाताकी दिव्य महिमासे ओत-प्रोत हैं, जिस भारतकी पुण्य वसुन्धरा सदा-सर्वदासे गौके विमल यशसे समग्र विश्वमें अपनी दिव्य धवलिमा आलोकित करती आयी है, जिस भारतमें अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक, सर्वनियन्ता श्रीसर्वेश्वर भी 'गोपाल' बनकर गोमहिमाकी श्रेष्ठता, सर्वमूर्द्धन्यता बतलाते हैं, उस पवित्र भारतकी दिव्य अवनि गोदुग्ध, गोदधि, गोघृतके स्थानपर गोमाताके रक्तसे रंजित की जा रही है। हमारी जनतन्त्र सरकार प्रतिदिन हजारों-हजार गायोंको विविध प्रकारसे निर्दयतापूर्वक भीषण यान्त्रिक यातनाओंके द्वारा मौतके घाट उतारती है। कैसा अकल्पनीय घोर अत्याचार है। जहाँ शास्त्र इस प्रकारका संदेश देता है—'**अन्तकाय गोघातकम्**' अर्थात् गोघातकको प्राणदण्ड दिया जाना चाहिये। और अथर्ववेदका कहना है—

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नोऽसो अवीरहा॥

'यदि तू हमारी गौ, घोड़े एवं पुरुषोंकी हत्या करता है तो हम सीसेकी गोलीसे तुझे बींध देंगे, जिससे तू हमारे वीरोंका वध न कर सके।'

—वहाँ हत्याकी तो बात दूर रही गौकी ताड़ना, उसे अपशब्द कहना, पैरसे आघात करना, भूखी रखना तथा कठोरतासे हाँकना आदिका भी शास्त्रोंमें निषेध किया गया है। इस सम्बन्धमें वेदादि निखिल शास्त्रोंका एक स्वरसे महान् उद्घोष है, किंतु महाघोर दुःखका विषय है कि उसके सर्वथा विपरीत आचरण करनेवाली हमारी सरकार भारतकी संस्कृति और धर्मको ठुकराकर मदान्धतासे गोहत्याके जघन्यतम कृत्यमें संलग्न है। क्या उसे अतीतका इतिहास स्मरण नहीं है? हिरण्यकशिपु, रावण, कुम्भकर्ण, शिशुपाल तथा कंसादिका अभिमान चूर-चूर होकर विनष्ट हो गया। उनके अत्याचारका भीषण परिणाम उन्हें भोगना पड़ा। अतएव सत्ताके महामदमें आकर सन्मार्गको नहीं छोड़ बैठना चाहिये।

अहिंसाके पोषक भारतके शीर्षस्थ नेता लोकमान्य तिलक और महात्मा गाँधीके उपदेशोंको विस्मरण कर सरकारका स्वेच्छाचारिताका अवलम्ब लेना देशकी महान् प्रतिष्ठाको गहरी खाईमें डालना है। भारतकी सम्पूर्ण जनताकी इस पवित्र माँगकी सरकार उपेक्षा करती जा रही है। यह लोकतन्त्रका महान् उपहास और स्वार्थपरताका प्रत्यक्ष उदाहरण है। सरकार नाना प्रकारके तर्कहीन हेतु बता-बताकर भ्रान्त धारणामें डालकर स्वार्थ-सिद्धिके चक्करमें है, किंतु यह भारतकी धर्मप्राण जनता धर्मके महत्त्वको भली प्रकार जानती है और अपनी गोमाताकी रक्षाके लिये सर्वस्व बलिदान करनेमें कभी पीछे नहीं रहेगी।

सरकारको अब भी देशकी समृद्धि तथा प्रतिष्ठाको ध्यानमें रखते हुए सम्पूर्ण गोवधपर प्रतिबन्ध लगा देना चाहिये। धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक आदि सभी दृष्टियोंसे गोमाता परमोपकारिणी है, इसका विनाश राष्ट्रका विनाश है। यह भारतकी अतुलनीय अमूल्य सम्पत्ति है, अतः इसकी रक्षा राष्ट्रकी रक्षा है।

गवां सेवा तु कर्तव्या गृहस्थैः पुण्यलिप्सुभिः।
गवां सेवापरो यस्तु तस्य श्रीर्वर्धतेऽचिरात्॥

अर्थात् प्रत्येक पुण्यकी इच्छा रखनेवाले सद्गृहस्थको गायोंकी सेवा अवश्य करनी चाहिये, क्योंकि जो नित्य श्रद्धा-भक्तिसे गायोंकी प्रयत्नपूर्वक सेवा करता है उसकी सम्पत्ति शीघ्र ही वृद्धिको प्राप्त होती है और नित्य वर्धमान रहती है।

'मैं यह चाहता हूँ कि लोग बलिकी अपेक्षा दयाको अधिक महत्त्व दें तथा यह समझें कि जोशमें आकर बलिदान समर्पण करनेकी अपेक्षा परमात्माका अधिकाधिक ज्ञान ही प्रथम वाञ्छनीय है।'— (होसिया ६।६)

गायकी महत्ता और आवश्यकता

[श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज]

गाय विश्वकी माता है—'**गावो विश्वस्य मातरः।**' सूर्य, वरुण, वायु आदि देवताओंको यज्ञ, होममें दी हुई आहुतिसे जो खुराक, पुष्टि मिलती है, वह गायके घीसे ही मिलती है। होममें गायके घीकी ही आहुति दी जाती है, जिससे सूर्यकी किरणें पुष्ट होती हैं। किरणें पुष्ट होनेसे वर्षा होती है और वर्षासे सभी प्रकारके अन्न, पौधे, घास आदि पैदा होते हैं, जिनसे सम्पूर्ण स्थावर-जंगम, चर-अचर प्राणियोंका भरण-पोषण होता है*।

हिन्दुओंके गर्भाधान, जन्म, नामकरण आदि जितने संस्कार होते हैं, उन सबमें गायके दूध, घी, गोबर आदिकी मुख्यता होती है। द्विजातियोंको जो यज्ञोपवीत दिया जाता है, उसमें गायका पञ्चगव्य (दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र) का सेवन कराया जाता है। यज्ञोपवीत-संस्कार होनेपर वे वेद पढ़नेके अधिकारी होते हैं। अच्छे ब्राह्मणका लड़का भी यज्ञोपवीत-संस्कारके बिना वेद पढ़नेका अधिकारी नहीं होता। जहाँ विवाह-संस्कार होता है, वहाँ भी गायके गोबरका लेप करके शुद्धि करते हैं। विवाहके समय गोदानका भी बहुत माहात्म्य है। पुराने जमानेमें वाग्दान (सगाई) के समय बैल दिया जाता था। जननाशौच और मरणाशौच मिटानेके लिये गायका गोबर और गोमूत्र ही काममें लिया जाता है; क्योंकि गायके गोबरमें लक्ष्मीका और गोमूत्रमें गङ्गाजीका निवास है।

जब मनुष्य बीमार हो जाता है, तब उसको गायका दूध पीनेके लिये देते हैं; क्योंकि गायका दूध तुरंत बल, शक्ति देता है। अगर बीमार मनुष्यको अन्न भी न पचे तो उसके पास गायके घी और खाद्य पदार्थोंकी अग्निमें आहुति देनेपर उसके धुएँसे उसको खुराक मिलती है। जब मनुष्य मरने लगता है, तब उसके मुखमें गङ्गाजल या गायका दही देते हैं। कारण कि कोई मनुष्य यात्राके लिये रवाना होता है तो उस समय गायका दही लेना माङ्गलिक होता है। जो सदाके लिये यहाँसे रवाना हो रहा है, उसको गायका दही अवश्य देना चाहिये, जिससे परलोकमें उसका मङ्गल हो। अन्तकालमें मनुष्यको जैसे गङ्गाजल देनेका माहात्म्य है, वैसा ही माहात्म्य गायका दही देनेका है।

वैतरणीसे बचनेके लिये गोदान किया जाता है। श्राद्ध-कर्ममें गायके दूधकी खीर बनायी जाती है; क्योंकि पवित्र होनेसे इस खीरसे पितरोंकी बहुत ज्यादा तृप्ति होती है। मनुष्य, देवता, पितर आदि सभीको गायके दूध, घी आदिसे पुष्टि मिलती है। अतः गाय विश्वकी माता है।

गायके अङ्गोंमें सम्पूर्ण देवताओंका निवास बताया गया है। गायकी छाया भी बड़ी शुभ मानी गयी है। यात्राके समय गाय या साँड़ दाहिने आ जाय तो शुभ माना जाता है और उसके दर्शनसे यात्रा सफल हो जाती है। गाय महान् पवित्र होती है। उसके शरीरका स्पर्श करनेवाली हवा भी पवित्र होती है। उसके गोबर-गोमूत्र भी पवित्र होते हैं। जहाँ गाय बैठती है, वहाँकी भूमि पवित्र होती है। गायके चरणोंकी रज (धूल) भी पवित्र होती है।

गायसे अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष—इन चारोंकी सिद्धि होती है। गोपालनसे, गायके दूध, घी, गोबर आदिसे धनकी वृद्धि होती है। कोई भी धार्मिक कृत्य गायके बिना नहीं होता। सम्पूर्ण धार्मिक कार्योंमें गायका दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र काममें आते हैं। कामनापूर्तिके लिये किये जानेवाले यज्ञोंमें भी गायका घी आदि काममें आता है। बाजीकरण आदि प्रयोगोंमें भी गायके दूध और घीकी मुख्यता रहती है। निष्कामभावसे गायकी सेवा करनेसे मोक्ष होता है। गायकी सेवा करनेमात्रसे अन्तःकरण निर्मल होता है। भगवान् श्रीकृष्णने भी बिना जूतीके गायोंको चराया था, जिससे उनका नाम 'गोपाल' पड़ा। प्राचीन कालमें ऋषिलोग वनमें रहते हुए अपने पास गायें रखा करते थे। गायके दूध-घीका सेवन करनेसे उनकी बुद्धि बड़ी विलक्षण होती थी,

* अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते। आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजा॥ (मनु० ३। ७६)

जिससे वे बड़े-बड़े ग्रन्थोंकी रचना किया करते थे। आजकल तो उन ग्रन्थोंको ठीक-ठीक समझनेवाले भी कम हैं। गायके दूध-घीसे वे दीर्घायु होते थे। गायके घीका एक नाम 'आयु' भी है। बड़े-बड़े राजालोग भी उन ऋषियोंके पास आते थे और उनकी सलाहसे राज्य चलाते थे।

गाय इतनी पवित्र है कि देवताओंने भी उसको अपना निवास-स्थान बनाया है। जिसका गोबर और गोमूत्र भी इतना पवित्र है, फिर वह स्वयं कितनी पवित्र होगी! एक गायका पूजन करनेसे सब देवताओंका पूजन हो जाता है, जिससे सब देवताओंको पुष्टि मिलती है। पुष्ट हुए देवताओंके द्वारा सम्पूर्ण सृष्टिका संचालन, पालन, रक्षण होता है।

प्रश्नोत्तर

प्रश्न—आजकल प्राय: लोग गायके घीसे यज्ञ, होम आदि नहीं करते तो भी वर्षा होती ही है—इसका कारण क्या है?

उत्तर—प्राचीन कालसे जो यज्ञ, होम होते आये हैं, उनका संग्रह अभी बाकी है। उसी संग्रहसे अभी वर्षा हो रही है। परंतु अभी यज्ञ आदि न होनेसे वैसी व्यवस्था नहीं रही है, इसलिये कहीं अतिवृष्टि और कहीं अनावृष्टि हो रही है। वर्षा भी बहुत कम हो रही है।

प्रश्न—वर्षा अग्निमें आहुति देनेसे ही होती है या कर्तव्यका पालन करनेसे होती है?

उत्तर—कर्तव्य-पालनके अन्तर्गत यज्ञ, होम, दान, तप आदि सब कर्म आ जाते हैं। गीताने भी यज्ञ आदिको कर्तव्य-कर्मके अन्तर्गत ही माना है। अगर मनुष्य अपने कर्तव्यका पालन करेंगे तो सूर्य, वरुण, वायु आदि देवता भी अपने कर्तव्यका पालन करेंगे और समयपर वर्षा करेंगे।

प्रश्न—विदेशोंमें यज्ञ आदि नहीं होते, फिर वहाँ देवतालोग वर्षा क्यों करते हैं?

उत्तर—जिन देशोंमें गायें नहीं हैं अथवा जिन देशोंके लोग यज्ञ आदि नहीं करते, वहाँ भी अपने कर्तव्य-कर्मका पालन तो होता ही है। वहाँके लोग अपने कर्तव्यका पालन करते हैं तो देवता भी अपने कर्तव्यका पालन करते हैं अर्थात् वहाँ वर्षा आदि करते हैं।

प्रश्न—ट्रैक्टर आदि यन्त्रोंसे खेती हो जाती है, फिर गाय-बैलकी क्या जरूरत है?

उत्तर—वैज्ञानिकोंने कहा है कि अभी जिस रीतिसे तेल खर्च हो रहा है, ऐसे खर्च होता रहा तो लगभग बीस वर्षोंमें ये तेल आदि सब समाप्त हो जायँगे, जमीनमें तेल नहीं रहेगा। जब तेल ही नहीं रहेगा, तब यन्त्र कैसे चलेंगे? उस समय गाय-बैल ही काम आयेंगे।

प्रश्न—तेल नहीं रहेगा तो उसकी जगह कोई नया आविष्कार हो जायगा, फिर गायोंकी क्या आवश्यकता?

उत्तर—नया आविष्कार हो अथवा न हो, पर जो चीज अभी अपने हाथमें है, उसको क्यों नष्ट करें? जो चीज अभी हाथमें नहीं है, भविष्यपर निर्भर है, उसको लेकर अभीकी चीजको नष्ट करना बुद्धिमानी नहीं है। जैसे, गर्भके बालककी आशासे गोदके बालकको समाप्त करना बुद्धिमानी नहीं है, प्रत्युत घोर पाप, अन्याय है। गायोंकी परम्परा तो चलती रहेगी, पर आविष्कारोंकी परम्परा भी चलती रहेगी—इसका क्या भरोसा? अगर विश्वयुद्ध छिड़ जाय तो क्या आविष्कार सुरक्षित रह सकेंगे? पीछेको कदम तो उठा लिया और आगे जगह मिली नहीं तो क्या दशा होगी? इसलिये आगे आविष्कार होगा—इस विचारको लेकर गायोंका नाश नहीं करना चाहिये, प्रत्युत प्रयत्नपूर्वक उनकी रक्षा करनी चाहिये।

प्रश्न—भैंसे और ऊँटके द्वारा भी खेती हो सकती है, फिर गाय-बैलकी क्या जरूरत?

उत्तर—खेतीमें जितनी प्रधानता बैलोंकी है, उतनी प्रधानता अन्य किसीकी भी नहीं है। भैंसेके द्वारा भी खेती की जाती है, पर खेतीमें जितना काम बैल कर सकता है उतना भैंसा नहीं कर सकता। भैंसा बलवान् तो होता है, पर वह धूप सहन नहीं कर सकता। धूपमें चलनेसे वह जीभ निकाल देता है, जबकि बैल धूपमें भी चलता रहता है। कारण कि भैंसेमें सात्त्विक बल नहीं होता, जबकि बैलमें सात्त्विक बल होता है। बैलोंकी अपेक्षा भैंसे कम भी होते हैं। ऊँटसे भी खेती की जाती है, पर ऊँट भैंसोंसे भी कम होते हैं और बहुत महँगे होते हैं। खेती करनेवाला हरेक आदमी ऊँट नहीं खरीद सकता। आजकल बड़ी संख्यामें अच्छे-अच्छे जवान बैल मारे जानेके कारण बैल भी महँगे हो

गये हैं, तो भी वे ऊँट-जितने महँगे नहीं हैं। यदि घरोंमें गायें रखी जायँ तो बैल घरोंमें ही पैदा हो जाते हैं, खरीदने नहीं पड़ते। विदेशी गायोंके जो बैल होते हैं, वे खेतीमें काम नहीं आ सकते; क्योंकि उनके कंधे न होनेसे उनपर जुआ नहीं रखा जा सकता। अत: अपने देशकी गायोंका पालन करना चाहिये, उनकी विशेषरूपसे रक्षा करनी चाहिये।

बैलोंसे जितनी बढ़िया खेती होती है, उतनी ट्रैक्टरोंसे नहीं होती। देखनेमें तो ट्रैक्टरोंसे और रासायनिक खादसे खेती जल्दी हो जाती है, पर जल्दी होनेपर भी वह बढ़िया नहीं होती। बैलोंसे की गयी खेतीका अनाज बड़ा पवित्र होता है। गोबर-गोमूत्रकी खादसे जो अन्न पैदा होता है, वह बड़ा पवित्र, शुद्ध, निर्मल होता है।

खेतका और गायका घनिष्ठ सम्बन्ध है। खेतमें पैदा होनेवाले घास आदिसे गायकी पुष्टि होती है और गायके गोबर-मूत्रसे खेतकी पुष्टि होती है। विदेशी खाद डालनेसे कुछ ही वर्षोंमें जमीन खराब हो जाती है अर्थात् उसकी उपजाऊ शक्ति नष्ट हो जाती है। परंतु गोबर-गोमूत्रसे जमीनकी उपजाऊ शक्ति ज्यों-की-त्यों बनी रहती है। विदेशोंमें रासायनिक खादसे बहुत-से खेत खराब हो गये हैं, जिनको उपजाऊ बनानेके लिये वे गोबर काममें ले रहे हैं।

प्रश्न—गायके दूधकी क्या महिमा है?

उत्तर—गायका दूध जितना सात्त्विक होता है, उतना सात्त्विक दूध किसीका भी नहीं होता। हमारे देशकी गायें सौम्य और सात्त्विक होती हैं, इसलिये उनका दूध भी सात्त्विक होता है, जिसको पीनेसे बुद्धि तीक्ष्ण होती है और स्वभाव सौम्य, शान्त होता है। विदेशी गायोंका दूध तो ज्यादा होता है, पर उनके दूधमें उतनी सात्त्विकता नहीं होती तथा उनमें गुस्सा भी ज्यादा होता है। अत: उनका दूध पीनेसे मनुष्यका स्वभाव भी क्रूर होता है। विदेशी गायोंके दूधमें घी कम होता है और वे खाती भी ज्यादा हैं।

भैंसके दूधमें घी ज्यादा होनेसे वह शरीरको मोटा तो करता है, पर वह दूध सात्त्विक नहीं होता। गाड़ी चलानेवाले जानते ही हैं कि गाड़ीका हार्न सुनते ही गायें सड़कके किनारे हो जाती हैं, जब कि भैंस सड़कमें ही खड़ी रहती है! इसलिये भैंसके दूधसे बुद्धि स्थूल होती है। सैनिकोंके घोड़ोंको गायका दूध पिलाया जाता है, जिससे वे घोड़े बहुत तेज होते हैं। एक बार सैनिकोंने परीक्षाके लिये कुछ घोड़ोंको भैंसका दूध पिलाया, जिससे घोड़े खूब मोटे हो गये। परंतु जब नदी पार करनेका काम पड़ा, तब वे घोड़े पानीमें बैठ गये! भैंस पानीमें बैठा करती है, इसलिये वही स्वभाव घोड़ोंमें भी आ गया।

ऊँटनीका दूध भी निकलता है, पर उस दूधका दही, मक्खन होता ही नहीं। उसका दूध तामसी होनेसे दुर्गतिमें ले जानेवाला होता है। स्मृतियोंमें ऊँट, कुत्ते, गधे आदिको अस्पृश्य बताया गया है। बकरीका दूध नीरोग करनेवाला एवं पचनेमें हल्का होता है, पर वह गायके दूधकी तरह बुद्धिवर्धक और सात्त्विक बात समझनेके लिये बल देनेवाला नहीं होता।

गायके दूधसे निकला घी 'अमृत' कहलाता है। स्वर्गकी अप्सरा उर्वशी राजा पुरूरवाके पास गयी तो उसने अमृतकी जगह गायका घी पीना ही स्वीकार किया—**'घृतं मे वीर भक्ष्यं स्यात्'** (श्रीमद्भा० ९। १४। २२)।

प्रश्न—गायके गोबर और गोमूत्रकी क्या महिमा है?

उत्तर—गायके गोबरमें लक्ष्मीजीका और गोमूत्रमें गङ्गाजीका निवास माना गया है। इसलिये गायके गोबर-गोमूत्र भी बड़े पवित्र हैं। गोबरसे लिपे हुए घरोंमें प्लेग, हैजा आदि भयंकर बीमारियाँ नहीं होतीं। इसके सिवाय युद्धके समय गोबरसे लिपे हुए मकानोंपर बमका उतना असर नहीं होता, जितना सीमेंट आदिसे बने हुए मकानोंपर होता है।

गोबरमें जहर खींचनेकी विशेष शक्ति होती है। काशीमें कोई आदमी साँप काटनेसे मर गया। लोग उसकी दाह-क्रिया करनेके लिये उसको गङ्गाके किनारे ले गये। वहाँ एक साधु रहता था। उसने पूछा कि इस आदमीको क्या हुआ? लोगोंने कहा कि यह साँप काटनेसे मरा है। साधुने कहा कि यह मरा नहीं है, तुमलोग गायका गोबर ले आओ। गोबर लाया गया। साधुने उस आदमीकी नासिकाको छोड़कर पूरे शरीरमें नीचे-ऊपर गोबरका लेप कर दिया। आँखें मीचकर, उनपर कपड़ा रखकर उसके ऊपर भी गोबर रख दिया। आधे घंटेके बाद गोबरका फिर

जिससे वे बड़े-बड़े ग्रन्थोंकी रचना किया करते थे। आजकल तो उन ग्रन्थोंको ठीक-ठीक समझनेवाले भी कम हैं। गायके दूध-घीसे वे दीघार्यु होते थे। गायके घीका एक नाम 'आयु' भी है। बड़े-बड़े राजालोग भी उन ऋषियोंके पास आते थे और उनकी सलाहसे राज्य चलाते थे।

गाय इतनी पवित्र है कि देवताओंने भी उसको अपना निवास-स्थान बनाया है। जिसका गोबर और गोमूत्र भी इतना पवित्र है, फिर वह स्वयं कितनी पवित्र होगी! एक गायका पूजन करनेसे सब देवताओंका पूजन हो जाता है, जिससे सब देवताओंको पुष्टि मिलती है। पुष्ट हुए देवताओंके द्वारा सम्पूर्ण सृष्टिका संचालन, पालन, रक्षण होता है।

प्रश्नोत्तर

प्रश्न—आजकल प्राय: लोग गायके घीसे यज्ञ, होम आदि नहीं करते तो भी वर्षा होती ही है—इसका कारण क्या है?

उत्तर—प्राचीन कालसे जो यज्ञ, होम होते आये हैं, उनका संग्रह अभी बाकी है। उसी संग्रहसे अभी वर्षा हो रही है। परंतु अभी यज्ञ आदि न होनेसे वैसी व्यवस्था नहीं रही है, इसलिये कहीं अतिवृष्टि और कहीं अनावृष्टि हो रही है। वर्षा भी बहुत कम हो रही है।

प्रश्न—वर्षा अग्निमें आहुति देनेसे ही होती है या कर्तव्यका पालन करनेसे होती है?

उत्तर—कर्तव्य-पालनके अन्तर्गत यज्ञ, होम, दान, तप आदि सब कर्म आ जाते हैं। गीताने भी यज्ञ आदिको कर्तव्य-कर्मके अन्तर्गत ही माना है। अगर मनुष्य अपने कर्तव्यका पालन करेंगे तो सूर्य, वरुण, वायु आदि देवता भी अपने कर्तव्यका पालन करेंगे और समयपर वर्षा करेंगे।

प्रश्न—विदेशोंमें यज्ञ आदि नहीं होते, फिर वहाँ देवतालोग वर्षा क्यों करते हैं?

उत्तर—जिन देशोंमें गायें नहीं हैं अथवा जिन देशोंके लोग यज्ञ आदि नहीं करते, वहाँ भी अपने कर्तव्य-कर्मका पालन तो होता ही है। वहाँके लोग अपने कर्तव्यका पालन करते हैं तो देवता भी अपने कर्तव्यका पालन करते हैं अर्थात् वहाँ वर्षा आदि करते हैं।

प्रश्न—ट्रैक्टर आदि यन्त्रोंसे खेती हो जाती है, फिर गाय-बैलकी क्या जरूरत है?

उत्तर—वैज्ञानिकोंने कहा है कि अभी जिस रीतिसे तेल खर्च हो रहा है, ऐसे खर्च होता रहा तो लगभग बीस वर्षोंमें ये तेल आदि सब समाप्त हो जायँगे, जमीनमें तेल नहीं रहेगा। जब तेल ही नहीं रहेगा, तब यन्त्र कैसे चलेंगे? उस समय गाय-बैल ही काम आयेंगे।

प्रश्न—तेल नहीं रहेगा तो उसकी जगह कोई नया आविष्कार हो जायगा, फिर गायोंकी क्या आवश्यकता?

उत्तर—नया आविष्कार हो अथवा न हो, पर जो चीज अभी अपने हाथमें है, उसको क्यों नष्ट करें? जो चीज अभी हाथमें नहीं है, भविष्यपर निर्भर है, उसको लेकर अभीकी चीजको नष्ट करना बुद्धिमानी नहीं है। जैसे, गर्भके बालककी आशासे गोदके बालकको समाप्त करना बुद्धिमानी नहीं है, प्रत्युत घोर पाप, अन्याय है। गायोंकी परम्परा तो चलती रहेगी, पर आविष्कारोंकी परम्परा भी चलती रहेगी—इसका क्या भरोसा? अगर विश्वयुद्ध छिड़ जाय तो क्या आविष्कार सुरक्षित रह सकेंगे? पीछेको कदम तो उठा लिया और आगे जगह मिली नहीं तो क्या दशा होगी? इसलिये आगे आविष्कार होगा—इस विचारको लेकर गायोंका नाश नहीं करना चाहिये, प्रत्युत प्रयत्नपूर्वक उनकी रक्षा करनी चाहिये।

प्रश्न—भैंसे और ऊँटके द्वारा भी खेती हो सकती है, फिर गाय-बैलकी क्या जरूरत?

उत्तर—खेतीमें जितनी प्रधानता बैलोंकी है, उतनी प्रधानता अन्य किसीकी भी नहीं है। भैंसेके द्वारा भी खेती की जाती है, पर खेतीमें जितना काम बैल कर सकता है उतना भैंसा नहीं कर सकता। भैंसा बलवान् तो होता है, पर वह धूप सहन नहीं कर सकता। धूपमें चलनेसे वह जीभ निकाल देता है, जबकि बैल धूपमें भी चलता रहता है। कारण कि भैंसेमें सात्त्विक बल नहीं होता, जबकि बैलमें सात्त्विक बल होता है। बैलोंकी अपेक्षा भैंसे कम भी होते हैं। ऊँटसे भी खेती की जाती है, पर ऊँट भैंसोंसे भी कम होते हैं और बहुत महँगे होते हैं। खेती करनेवाला हरेक आदमी ऊँट नहीं खरीद सकता। आजकल बड़ी संख्यामें अच्छे-अच्छे जवान बैल मारे जानेके कारण बैल भी महँगे हो

गये हैं, तो भी वे ऊँट-जितने महँगे नहीं हैं। यदि घरोंमें गायें रखी जायँ तो बैल घरोंमें ही पैदा हो जाते हैं, खरीदने नहीं पड़ते। विदेशी गायोंके जो बैल होते हैं, वे खेतीमें काम नहीं आ सकते; क्योंकि उनके कंधे न होनेसे उनपर जुआ नहीं रखा जा सकता। अत: अपने देशकी गायोंका पालन करना चाहिये, उनकी विशेषरूपसे रक्षा करनी चाहिये।

बैलोंसे जितनी बढ़िया खेती होती है, उतनी ट्रैक्टरोंसे नहीं होती। देखनेमें तो ट्रैक्टरोंसे और रासायनिक खादसे खेती जल्दी हो जाती है, पर जल्दी होनेपर भी वह बढ़िया नहीं होती। बैलोंसे की गयी खेतीका अनाज बड़ा पवित्र होता है। गोबर-गोमूत्रकी खादसे जो अन्न पैदा होता है, वह बड़ा पवित्र, शुद्ध, निर्मल होता है।

खेतका और गायका घनिष्ठ सम्बन्ध है। खेतमें पैदा होनेवाले घास आदिसे गायकी पुष्टि होती है और गायके गोबर-मूत्रसे खेतकी पुष्टि होती है। विदेशी खाद डालनेसे कुछ ही वर्षोंमें जमीन खराब हो जाती है अर्थात् उसकी उपजाऊ शक्ति नष्ट हो जाती है। परंतु गोबर-गोमूत्रसे जमीनकी उपजाऊ शक्ति ज्यों-की-त्यों बनी रहती है। विदेशोंमें रासायनिक खादसे बहुत-से खेत खराब हो गये हैं, जिनको उपजाऊ बनानेके लिये वे गोबर काममें ले रहे हैं।

प्रश्न—गायके दूधकी क्या महिमा है?

उत्तर—गायका दूध जितना सात्त्विक होता है, उतना सात्त्विक दूध किसीका भी नहीं होता। हमारे देशकी गायें सौम्य और सात्त्विक होती हैं, इसलिये उनका दूध भी सात्त्विक होता है, जिसको पीनेसे बुद्धि तीक्ष्ण होती है और स्वभाव सौम्य, शान्त होता है। विदेशी गायोंका दूध तो ज्यादा होता है, पर उनके दूधमें उतनी सात्त्विकता नहीं होती तथा उनमें गुस्सा भी ज्यादा होता है। अत: उनका दूध पीनेसे मनुष्यका स्वभाव भी क्रूर होता है। विदेशी गायोंके दूधमें घी कम होता है और वे खाती भी ज्यादा हैं।

भैंसके दूधमें घी ज्यादा होनेसे वह शरीरको मोटा तो करता है, पर वह दूध सात्त्विक नहीं होता। गाड़ी चलानेवाले जानते ही हैं कि गाड़ीका हार्न सुनते ही गायें सड़कके किनारे हो जाती हैं, जब कि भैंस सड़कमें ही खड़ी रहती है! इसलिये भैंसके दूधसे बुद्धि स्थूल होती है। सैनिकोंके घोड़ोंको गायका दूध पिलाया जाता है, जिससे वे घोड़े बहुत तेज होते हैं। एक बार सैनिकोंने परीक्षाके लिये कुछ घोड़ोंको भैंसका दूध पिलाया, जिससे घोड़े खूब मोटे हो गये। परंतु जब नदी पार करनेका काम पड़ा, तब वे घोड़े पानीमें बैठ गये! भैंस पानीमें बैठा करती है, इसलिये वही स्वभाव घोड़ोंमें भी आ गया।

ऊँटनीका दूध भी निकलता है, पर उस दूधका दही, मक्खन होता ही नहीं। उसका दूध तामसी होनेसे दुर्गतिमें ले जानेवाला होता है। स्मृतियोंमें ऊँट, कुत्ते, गधे आदिको अस्पृश्य बताया गया है। बकरीका दूध नीरोग करनेवाला एवं पचनेमें हल्का होता है, पर वह गायके दूधकी तरह बुद्धिवर्धक और सात्त्विक बात समझनेके लिये बल देनेवाला नहीं होता।

गायके दूधसे निकला घी 'अमृत' कहलाता है। स्वर्गकी अप्सरा उर्वशी राजा पुरूरवाके पास गयी तो उसने अमृतकी जगह गायका घी पीना ही स्वीकार किया—**'घृतं मे वीर भक्ष्यं स्यात्'** (श्रीमद्भा० ९। १४। २२)।

प्रश्न—गायके गोबर और गोमूत्रकी क्या महिमा है?

उत्तर—गायके गोबरमें लक्ष्मीजीका और गोमूत्रमें गङ्गाजीका निवास माना गया है। इसलिये गायके गोबर-गोमूत्र भी बड़े पवित्र हैं। गोबरसे लिपे हुए घरोंमें प्लेग, हैजा आदि भयंकर बीमारियाँ नहीं होतीं। इसके सिवाय युद्धके समय गोबरसे लिपे हुए मकानोंपर बमका उतना असर नहीं होता, जितना सीमेंट आदिसे बने हुए मकानोंपर होता है।

गोबरमें जहर खींचनेकी विशेष शक्ति होती है। काशीमें कोई आदमी साँप काटनेसे मर गया। लोग उसकी दाह-क्रिया करनेके लिये उसको गङ्गाके किनारे ले गये। वहाँ एक साधु रहता था। उसने पूछा कि इस आदमीको क्या हुआ? लोगोंने कहा कि यह साँप काटनेसे मरा है। साधुने कहा कि यह मरा नहीं है, तुमलोग गायका गोबर ले आओ। गोबर लाया गया। साधुने उस आदमीकी नासिकाको छोड़कर पूरे शरीरमें नीचे-ऊपर गोबरका लेप कर दिया। आँखें मीचकर, उनपर कपड़ा रखकर उसके ऊपर भी गोबर रख दिया। आधे घंटेके बाद गोबरका फिर

दूसरा लेप किया। कुछ घंटोंमें उस आदमीके श्वास चलने लगे और वह जी उठा! अगर किसी अङ्गमें बिच्छू काट जाय तो जहाँतक विष चढ़ा हुआ है, वहाँतक गोबर लगा दिया जाय तो विष उतर जाता है। हमने सुना है कि शरीरमें कोई भी रोग हो, जमीनमें गहरा गड्ढा खोदकर उसमें रोगीको खड़ा कर दे और उसके गलेतक वह गड्ढा गोबरसे भर दे। लगभग आधे घंटेतक अथवा जितनी देरतक रोगी सुगमतापूर्वक सहन कर सके, उतनी देरतक वह गड्ढेमें खड़ा रहे। जबतक रोग शान्त न हो जाय, तबतक प्रतिदिन यह प्रयोग करता रहे।

आजकल गोबरसे गैस पैदा की जाती है। उस गैससे बिजली भी पैदा की जाती है, जिसको कई जगह काममें लिया जाता है। गैस निकलनेके बाद गोबरकी तेजी कम हो जाती है और वह खेतोंमें देनेके लिये बढ़िया खाद हो जाती है।

संखिया, भिलावा आदि बड़े-बड़े जहरोंकी शुद्धि भी गोमूत्रसे ही होती है। सोना, चाँदी आदि धातुएँ भी गोमूत्रसे शुद्ध की जाती हैं। भस्म बनाते समय उन धातुओंको तपाकर तेलमें, गायके दूधकी छाछमें और गोमूत्रमें बुझाकर शुद्ध किया जाता है।

छोटी बछड़ीका गोमूत्र प्रतिदिन तोला-दो-तोला पीनेसे पेटके रोग दूर होते हैं। यकृत्-पीडामें भी गोमूत्रका सेवन बड़ा लाभदायक होता है। एक संतको दमारोग था। उन्होंने छोटी बछड़ीका गोमूत्र प्रात: खाली पेट एक तोला प्रतिदिन लेना शुरू किया तो उनका रोग बहुत कम हो गया। छातीमें, कलेजेमें दर्द होता हो तो एक बर्तनमें गोमूत्र लेकर उसको गरम करे। उस बर्तनपर एक लोहेकी छलनी रखकर उसपर कपड़ा या पुरानी रुई रख दे। वह कपड़ा या रुई गरम हो जाय तो उससे छातीपर सेक करता रहे। इससे दर्द दूर हो जाता है। गोमूत्रसे स्नान करनेसे शरीरकी खुजली मिटती है।

—इस प्रकार गोबर और गोमूत्रसे अनेक रोग दूर होते हैं।

प्रश्न—गोरक्षासे क्या लाभ हैं?

उत्तर—गायकी रक्षासे मनुष्य, देवता, भूत-प्रेत, यक्ष-राक्षस, पशु-पक्षी, वृक्ष-घास आदि सबकी रक्षा होती है। पृथ्वीपर कोई भी ऐसा स्थावर-जंगम प्राणी नहीं है, जो गायसे पुष्टि न पाता हो। गाय अर्थ, धर्म, काम और मोक्षको सिद्ध करनेवाली, लोक-परलोकमें सहायता करनेवाली और नरकोंसे उद्धार करनेवाली है।

गोरक्षाके लिये बलिदान करनेवालोंकी कथाओंसे इतिहास, पुराण भरे पड़े हैं। बड़े भारी दु:खकी बात है कि आज हमारे देशमें पैसोंके लोभसे प्रतिदिन हजारोंकी संख्यामें गायोंकी हत्या की जा रही है! अगर इसी तरह गोहत्या होती रही तो एक समय गोवंश समाप्त हो जायगा। जब गायें नहीं रहेंगी, तब देशकी क्या दशा होगी, कितनी आफतें आयेंगी—इसका अंदाजा नहीं लगाया जा सकता। जब गायें खत्म हो जायँगी और जमीनसे तेल निकलना बंद हो जायगा, तब खेती कैसे होगी? खेती न होनेसे अन्न तथा वस्त्र (कपास) कैसे मिलेगा? लोगोंको शरीर-निर्वाहके लिये अन्न, जल और वस्त्र मिलना भी मुश्किल हो जायगा। राजस्थानके गाँवोंमें मैंने देखा है कि पहले वहाँ बैलोंके द्वारा जमीनसे पानी निकाला जाता था। फिर वहाँ बिजली आनेसे बिजलीसे पानी निकलने लगा और बैलोंको लोगोंने बिक्री कर दिया। अब अगर बिजली बंद हो जाय तो पानी भी बंद हो जाता है और लोग दु:ख पाते हैं!

गोरक्षासे सब तरहका लाभ है—इस बातको धर्मप्राण भारतवर्ष ही समझ सकता है, दूसरे देश नहीं समझ सकते; क्योंकि उनके पास गहरी धार्मिक और पारमार्थिक बातोंको समझनेके लिये वैसी बुद्धि नहीं है और वैसे शास्त्र भी नहीं हैं। जो लोग विदेशी संस्कृति, सभ्यतासे प्रभावित हैं तथा केवल भौतिक चकाचौंधमें फँसे हुए हैं, वे भी गायका महत्त्व नहीं समझ सकते। वे ऋषि-मुनियोंकी बातोंको तो मानते नहीं और स्वयं जानते नहीं! ऋषि-मुनियोंने, राजा-महाराजाओंने, धर्मात्माओंने गोरक्षाके लिये बड़े-बड़े कष्ट सहे तो क्या वे सब बेसमझ थे? क्या समझ अब ही आयी है?

प्रश्न—लोगोंमें गोरक्षाकी भावना कम क्यों हो रही है?

उत्तर—गायके कलेजे, मांस, खून आदिसे बहुत-सी अँग्रेजी दवाइयाँ बनती हैं। उन दवाइयोंका सेवन करनेसे गायके मांस, खून आदिका अंश लोगोंके पेटमें चला गया

है, जिससे उनकी बुद्धि मलिन हो गयी है और उनकी गायके प्रति श्रद्धा, भावना नहीं रही है।

लोग पापसे पैसा कमाते हैं और उन्हीं पैसोंका अन्न खाते हैं, फिर उनकी बुद्धि शुद्ध कैसे होगी और बुद्धि शुद्ध हुए बिना सच्ची, हितकर बात अच्छी कैसे लगेगी?

स्वार्थबुद्धि अधिक होनेसे मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, बुद्धि तामसी हो जाती है, फिर उसको अच्छी बातें भी विपरीत दीखने लगती हैं*। आजकल मनुष्योंमें स्वार्थ-भावना बहुत ज्यादा बढ़ गयी है, जिससे उनमें गोरक्षाकी भावना कम हो रही है।

गायके मांस, चमड़े आदिके व्यापारमें बहुत पैसा आता हुआ दीखता है। मनुष्य लोभके कारण पैसोंकी तरफ तो देखता है, पर गोवंश नष्ट हो रहा है, परिणाममें हमारी क्या दशा होगी, कितने भयंकर नरकोंमें जाना पड़ेगा, कितनी यातना भोगनी पड़ेगी—इस तरफ वह देखता ही नहीं! तात्पर्य है कि तात्कालिक लाभको देखनेसे मनुष्य भविष्यपर विचार नहीं कर सकता; क्योंकि लोभके कारण उसकी विचार करनेकी शक्ति कुण्ठित हो जाती है, दब जाती है। लोभके कारण वह अपना वास्तविक हित सोच ही नहीं सकता।

प्रश्न—गायमें सब देवताओंका निवास है, फिर वे गायकी हत्या क्यों होने देते हैं?

उत्तर—गायमें देवताओंका निवास पवित्रताकी दृष्टिसे कहा गया है। इसका अर्थ यह नहीं है कि देवता गायमें साक्षात् रूपसे निवास करते हैं। जैसे दियासलाईमें अग्नि रहती हैं, पर उसको रुईके भीतर रख दिया जाय तो उससे रुई नहीं जलती; क्योंकि अग्नि दियासलाईमें अप्रकटरूपसे, निराकाररूपसे रहती है। परमात्मा सम्पूर्ण प्राणियोंके हृदयमें रहते हैं, फिर भी प्राणी मरते हैं; क्योंकि परमात्मा निर्लिप्तरूपसे, अप्रकटरूपसे रहते हैं। ऐसे ही गायके शरीरमें सम्पूर्ण देवता अप्रकटरूपसे, निर्लिप्तरूपसे रहते हैं। जैसे परमात्माको सम्पूर्ण प्राणियोंके हृदयमें विद्यमान कहनेका तात्पर्य है कि हृदय पवित्र और परमात्माका उपलब्धि-स्थान है, ऐसे ही देवताओंको गायके शरीरमें विद्यमान कहनेका तात्पर्य है कि गाय महान् पवित्र है।

प्रश्न—गोसेवासे क्या लाभ है?

उत्तर—जैसे भगवान्की सेवा करनेसे त्रिलोकीकी सेवा होती है, ऐसे ही निष्कामभावसे गायकी सेवा करनेसे विश्वमात्रकी सेवा होती है; क्योंकि गाय विश्वकी माता है। गायकी सेवासे लौकिक और पारलौकिक—दोनों तरहके लाभ होते हैं। गायकी सेवासे अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष—ये चारों पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं। रघुवंश भी गायकी सेवासे ही चला था।

प्रश्न—गोरक्षाके लिये क्या करना चाहिये?

उत्तर—गायोंकी रक्षाके लिये उनको अपने घरोंमें रखना चाहिये और उनका पालन करना चाहिये। गायके ही दूध-घीका सेवन करना चाहिये, भैंस आदिका नहीं। गायोंकी रक्षाके उद्देश्यसे ही गोशालाएँ बनानी चाहिये, दूधके उद्देश्यसे नहीं। जितनी गोचर-भूमियाँ हैं, उनकी रक्षा करनी चाहिये तथा सरकारसे और गोचर-भूमियाँ छुड़ाई जानी चाहिये। सरकारकी गोहत्या-नीतिका कड़ा विरोध करना चाहिये और वोट उनको ही देना चाहिये, जो पूरे देशमें पूर्णरूपसे गोहत्या बंद करनेका वचन दें।

खेती करनेवाले सज्जनोंको चाहिये कि वे गाय, बछड़ा, बैल आदिको बेचें नहीं। गाय और माय बेचनेकी नहीं होती। जबतक गाय दूध और बछड़ा देती है, बैल काम करता है, तबतक उनको रखते हैं। जब वे बूढ़े हो जाते हैं, तब उनको बेच देते हैं—यह कितनी कृतघ्नताकी, पापकी बात है! गाँधीजीने 'नवजीवन' अखबारमें लिखा था कि 'बूढ़ा बैल जितना घास (चारा) खाता है उतना गोबर और गोमूत्र पैदा कर देता है अर्थात् अपना खर्चा आप ही चुका देता है।'

बंबईके देवनार-कसाईखानेमें मैंने देखा है कि वहाँ अच्छे-अच्छे, जवान-जवान बैल ट्रकोंमें भरकर लाये जाते हैं और खड़े कर दिये जाते हैं। दूरतक सींग-ही-सींग दीखते थे। ऐसे बैलोंको मशीनोंके द्वारा बड़ी बुरी तरहसे मारते हैं।

---

* अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता। सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी॥ (गीता १८। ३२)
'तमोगुणसे घिरी हुई जो बुद्धि अधर्मको धर्म और सम्पूर्ण चीजोंको उल्टा ही मानती है, वह तामसी है।'

जीते-जी उनका चमड़ा उतारा जाता है; क्योंकि जीते हुएका चमड़ा उतारा जाय तो वह बहुत नरम होता है। जो गायों और बैलोंको बेचते हैं, उनको यह हत्या लगती है! अत: अपनी पूरी शक्ति लगाकर हर हालतमें गायोंकी रक्षा करना, उनको क़त्लखानोंमें जानेसे रोकना तथा उनका पालन करना, उनकी वृद्धि करना हमारा परम कर्तव्य है।

उपसंहार

स्वराज्य-प्राप्तिसे पहले जितनी गोहत्या होती थी, उससे बहुत गुना अधिक गोहत्या आज होती है। चमड़ेके निर्यातमें भारतका मुख्य स्थान है। पशुओंको निर्दयतापूर्वक बड़ी तेजीसे नष्ट किया जा रहा है। गायोंका तो वंश ही नष्ट हो रहा है। पैसोंके लाभसे बड़ी मात्रामें गोमांसका निर्यात किया जा रहा है। रुपयोंके लोभसे बुद्धि इतनी भ्रष्ट हो गयी है कि पशुओंके विनाशको 'मांस-उत्पादन' माना जा रहा है! भेड़-बकरियों, मछलियों, मुर्गियों आदिका तो पालन और संवर्धन किया जा रहा है, पर जिनका गोबर-गोमूत्र भी उपयोगी होता है, उन गायोंकी हत्या की जा रही है! खुदमें तो अक्ल नहीं और दूसरेकी मानते नहीं—यह दशा हो रही है!

रुपयोंसे वस्तुएँ श्रेष्ठ हैं, वस्तुओंसे पशु श्रेष्ठ हैं, पशुओंसे मनुष्य श्रेष्ठ हैं, मनुष्योंमें भी विवेक श्रेष्ठ है और विवेकसे भी सत्-तत्त्व (परमात्मतत्त्व) श्रेष्ठ है। परंतु आज सत्-तत्त्वकी उपेक्षा हो रही है, तिरस्कार हो रहा है और असत्-वस्तु रुपयोंको बड़ा महत्त्व दिया जा रहा है। रुपयोंके लिये अमूल्य गोधनको नष्ट किया जा रहा है। गायोंसे रुपये पैदा किये जा सकते हैं, पर रुपयोंसे गायें पैदा नहीं की जा सकतीं। गायोंकी परम्परा तो गायोंसे ही चलती है। जब गायें नहीं रहेंगी, तब रुपयोंसे क्या होगा? उल्टे देश निर्बल और पराधीन हो जायगा। रुपये तो गायोंके जीवित रहनेसे ही पैदा होंगे। गायोंको मारकर रुपये पैदा करना बुद्धिमानी नहीं है। बुद्धिमानी तो इसीमें है कि गायोंकी वृद्धि की जाय। गायोंकी वृद्धि होनेसे दूध, घी आदिकी वृद्धि होगी, जिनसे मनुष्योंका जीवन चलेगा, उनकी बुद्धि बढ़ेगी। बुद्धि बढ़नेसे विवेकको बल मिलेगा, जिससे सत्-तत्त्वकी प्राप्ति होगी। सत्-तत्त्वकी प्राप्ति होनेपर पूर्णता हो जायगी अर्थात् मनुष्य कृतकृत्य, ज्ञात-ज्ञातव्य और प्राप्त-प्राप्तव्य हो जायगा।

सच्ची गोसेवा स्वर्ग या गोलोकको पृथ्वीपर प्रत्यक्ष उतार लायेगी

(काशी षोडशी (शक्ति) पीठाधीश्वर अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु दण्डी स्वामी श्रीलक्ष्मणाचार्यजी महाराज, एम्० ए०, डी० लिट्०)

भारतीय सिद्धान्त है कि जीवन्मुक्ति प्राप्त किये बिना मृत्यु होनेपर विभिन्न योनियों तथा नरकोंमें भटकना पड़ता है। गौ माता ही एकमात्र इससे त्राण दिलानेवाली शक्ति है। अत: जीवनके अन्तिम क्षणोंमें गोदानकी परम्परा है। वेद-शास्त्र ही ईश्वरके संविधान या सच्चे कानून हैं और वे ही वास्तवमें सच्ची भारतीयताके मूर्तिमान् रूप हैं। धर्मात्मा लोग काशी, प्रयाग आदि मुक्ति-क्षेत्रोंका सदा सेवन करते हैं और मोक्षमें ही सुख देखते हैं, जो गोमाताके ही हाथमें है। इसलिये विचारशील भारतीय बन्धुओंको अब भी होशमें आ जाना चाहिये और गोमाताकी महिमाको ध्यानमें रखते हुए, इस विनाशमयी विभीषिका, अभारतीय शिक्षा-दीक्षा तथा विचारमुक्त राजनीतिके ज्ञान आदिसे दूर हटकर गीता, रामायण, भागवत आदिका ही पठन-मनन करना चाहिये और तदनुसार भगवान् राम-कृष्णके समान ही गोमाताकी अहर्निश सेवा करते हुए राम-कृष्ण ही बन जानेका प्रयास करना चाहिये। यही जीवन्मुक्ति है। आपकी सच्ची गोसेवा भगवान् श्रीकृष्णके गोलोकको भगवान् श्रीकृष्णके साथ-साथ इस धराधामपर प्रत्यक्ष उतार लायेगी। आप स्वयं श्रीकृष्ण बनकर उनकी गोसेवा और उनके ज्ञानका निरन्तर आनन्द प्राप्त करते रहेंगे। यही भगवान्‌के शाश्वत संविधान, वेदके सारभूत भगवान् श्रीकृष्णकी वाणी, भगवती गीता आदिका भी सारभूत अमृतमय संदेश है—'**दुग्धं गीतामृतं महत्।**'

हमारी गोमाता

[गोभक्त-शिरोमणि महाकवि महात्मा श्रीरामचन्द्रजी वीर *]

सनातन वैदिक धर्मका प्राण गोमाताका वंश है। गोमाताकी महिमा वेदों, पुराणों और समस्त धर्मग्रन्थोंमें हम पढ़ते हैं। वैष्णव, शैव, शाक्त और बौद्ध, जैन तथा आर्यसमाजमें गोमाताका जय-जयकार किया गया है।

भगवान् कृष्णका परम प्रिय गोकुल और गोवर्धन पर्वत था। भगवान् कृष्णका नाम गोपाल, गोविन्द कहा जाता है। रावणकी लंकामें विभीषण तथा उनके अनुयायियोंको छोड़कर समस्त राक्षस मांसाहारी थे, किंतु लंकामें कभी भी गोहत्या नहीं हुई। रावणकी आज्ञासे लंकामें गोमाताके वंशकी रक्षा की जाती थी।

हमारा आर्यावर्त जिसे भारत और हिन्दुस्तान कहते हैं, यहाँ और नेपालमें गोमाताकी पूजा की जाती है।

गोमाताका दूध पीनेसे अनेक रोगोंका नाश होता है। गोमाताके दूध-दही-घी और छाछके सेवनसे शरीर स्वस्थ और सबल होता है। महामारी प्लेग जब भारतके गाँवोंमें फैलती थी, तब हमारे पूर्वज गायके गोबरसे अपने घरोंके प्राचीरोंपर चार अंगुल चौड़ी बड़ी रेखा लीप देते थे।

गोमाताका मूत्र पीनेसे अनेक रोगोंका नाश होता है। मैंने अनेक रोगियोंको कई मासतक गोमूत्र पिलाकर महारोगसे मुक्त किया है। गोमाताके मूत्रके पीनेसे पाण्डुरोग, पीलिया मिट जाता है, किंतु पंद्रह दिनोंतक प्रतिदिन एक पाव गोमूत्र पीना चाहिये।

गोमाताकी रक्षाके लिये और जरासंधसे मथुरा, वृन्दावन तथा गोकुलको बचानेके लिये हमारे भगवान् श्रीकृष्ण द्वारका चले गये थे। भगवान् कृष्णको इसीलिये 'रणछोड़' कहा गया।

भगवान् श्रीरामके पूर्वज महाराज दिलीपने गुरुदेव वसिष्ठ महाराजकी गाय नन्दिनीकी रक्षाके लिये अपने-आपको सिंहके आगे अर्पित कर दिया था। मुगल-सम्राट् बाबरने मरनेके पूर्व अपने पुत्र हुमायूँको कहा था कि 'गाय और गायके वंशकी तुम सदा इज्जत और हिफाजत करना।'

रुस्तम खाँ पठान थे और वे भगवान् कृष्णके भक्त होकर रसखान बन गये। हिन्दी-कविताके इतिहासमें रसखानका नाम अमर रहेगा। रसखान मुसलमान होकर भी गोमाताके भक्त थे। उन्होंने अपने कवित्तमें कहा था—

जो पसु हौं तौ कहा बसु मेरो,
चरौं नित नन्दकी धेनु मँझारन॥

अहा! रसखान धन्य थे, जो नन्द महाराजकी गायोंके साथ पशु बनकर घास चरनेकी इच्छा रखते थे।

हिन्दुओंके अन्तिम सम्राट् पृथ्वीराज महाराजने मुहम्मद गोरीको अनेक बार पराजित करके भगा दिया था; किंतु देशद्रोही जयचन्दके षड्यन्त्रसे मुहम्मद गोरीने अपनी सेनाके आगे सैकड़ों गायें खड़ी करके पृथ्वीराज महाराजको छल-बलसे पकड़कर अफगानिस्तान ले जाकर मार डाला था। महाराज पृथ्वीराज, गोमाताको मेरा बाण न लग जाय इसी उद्देश्यसे युद्धमें शिथिल हो गये और पकड़े गये।

महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी महाराज महान् गोभक्त थे। शिवाजी महाराजने सोलह वर्षकी किशोरावस्थामें बीजापुरमें एक गोहत्यारे कसाईका सिर काट डाला था और रक्तमें रँगी हुई तलवार लेकर वे बीजापुरके नवाबके सामने जाकर खड़े हो गये थे, नवाब शिवाजीसे भयभीत हो गया था। सन् १८५७ में अंग्रेजोंके विरुद्ध गोभक्त मंगल पाण्डेने 'गोमाताकी जय' बोलकर कई अंग्रेजोंके सिर काट डाले थे।

नामधारी सिक्खोंके नेता रामसिंहजीने अनेक गोहत्यागृह—कसाईखानोंके पास जाकर सैकड़ों कसाइयोंको काट डाला था और वे अंग्रेजोंद्वारा पकड़े जाकर अनेक नामधारी सिक्खोंके साथ तोपोंके गोलोंसे मारे जाकर

* पिछले वर्षोंमें लेखक महोदयने गोहत्या-बंदीके लिये बिहार आदि कितने ही स्थानोंमें लंबी अवधितक अनशन-व्रत किया, जिसके फलस्वरूप कुछ प्रदेशोंमें आंशिक रूपसे गोहत्या बंद भी हुई। सन् १९२९ से इनकी यह प्रतिज्ञा है कि जबतक सम्पूर्ण भारतमें गोहत्या बंद न होगी वे अन्न-लवण ग्रहण नहीं करेंगे।

अमर हो गये। सिक्खोंके महान् नेता गुरु गोविन्दसिंह महाराजने कहा था—

नमो उग्रदन्ती जयंती सवैया
नमो योग योगेश्वरी योग मैया।
यही देहु आज्ञा तुरुक को खपाऊँ
गौ मातका दुख सदा मैं मिटाऊँ॥

आर्यसमाजके जन्मदाता महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराजने 'गोकरुणानिधि' नामकी पुस्तकमें गोमाताकी महिमाका बहुत अधिक वर्णन किया है। सन् १९२२ में बकराईदके दिन दिल्लीके दस हजार कसाई कुँजड़े हाजी काजी एक गायको लेकर दिल्लीके सदर बाजारसे बाजे बजाते हुए कुर्बानी करनेके जोशमें उछलते जा रहे थे। तब पहलवान लोटनसिंह जाट एक गलीसे निकलकर अपने पैंतीस जाट जवानोंके साथ आकर गोहत्यारोंको कूट-पीटकर गायको छुड़ा ले गये।

भारतमें स्वराज्य हुए ४७ वर्ष हो गये, अब भी बंबईमें प्रतिदिन दो हजार बैल काटे जाते हैं। कलकत्तेमें गोहत्या चालू है। टेंगरा और मटियाबुर्जके कसाईखानोंमें प्रतिदिन तीन हजारसे अधिक गाय-बैल-बछड़े काटे जाते हैं और गोमांस अरब आदि देशोंको भेजा जाता है।

गोहत्याके महापापके मुख्य कारण हमारे देशके कुछ हिन्दू भाई हैं जो अब बैलोंको छोड़कर ऊँटों और ट्रैक्टरोंसे खेतोंको जोतने लगे हैं। गायोंको उन्होंने बेच डाला है और भैंस रखने लगे हैं, फलस्वरूप गाय-बैलोंका संहार बहुत अधिक हो गया और अब वह समय आ गया है कि भारतमें गोमाताका वंश दिखायी नहीं देगा। विदेशी गायोंको जो शुद्ध गाय नहीं है, पालकर हमारे देशवासी भारतकी गोमाताके साथ अन्याय कर रहे हैं। हरियाणा, हांसी, हिसारकी गायें बहुत विख्यात थीं। हरियाणाकी लाखों गायें कलकत्ते ले जाकर काट दी गयीं। अब हरियाणामें भैंस-ही-भैंस दिखायी दे रही हैं। राजस्थानके बालोतराके बैल और गाय बहुत प्रसिद्ध थे। सौराष्ट्रकी गिर जातिकी गायें बहुत अधिक दूध देती हैं और वे बड़े आकारकी होती हैं। हमें—प्रत्येक हिंदूको—किसानोंको इस बातको समझना चाहिये और घर-घरमें गायें रखकर उनकी रक्षा करनी चाहिये।

'गो' शब्दके निर्वचन एवं उसके नाना अर्थ

[पूज्य श्रीअनिरुद्धाचार्य वेंकटाचार्यजी महाराज]

'गो' शब्दके नाना निर्वचनों, व्युत्पत्तियों एवं उसके नाना अर्थोंका रहस्यके साथ प्रतिपादन वेदकी कठ, मैत्रायणी आदि शाखाओं एवं वेदके ताण्ड्य, जैमिनीय, शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रन्थोंमें किया गया है। वहाँ **'गम्लृ गतौ'** धातु, **'गोवय तिरोभावे'** वैदिक धातु एवं **'गै शब्दे'** धातुसे 'गो' शब्दका निर्वचन किया गया है। जैसे—

सामवेदके 'ताण्ड्य' ब्राह्मणमें 'गो' शब्दका निर्वचन **'गोवय तिरोभावे'** धातुसे इस श्रुतिमें किया गया है—

गवा वै देवा असुरान् एभ्यो लोकेभ्योऽनुदन्त। यद्वै तद्देवा असुरान् एभ्यो लोकेभ्यो 'गोवयन्' तद्गोर्गोत्वम्।

अर्थात् देवोंने **'गवा'**—गो-प्राण एवं गो-प्राणी—इन दोनोंसे किंवा तीनों लोकोंसे असुरोंको भगा दिया। जो उन देवोंने गो-प्राण एवं गो-प्राणीसे असुरोंको **'गोवयन्'**-तिरोहित कर दिया, वही 'गो' का गोत्व है। अर्थात् असुरोंका विनाश 'गो' का गोत्व है—गोपना है।

'यद्वै तद्देवा असुरान् एभ्यो लोकेभ्यो 'गोवयन्' तद्गोर्गोत्वम्'।

'गो' शब्दके इस निर्वचनके अर्थके रहस्यका आकलन श्रुतिमें निर्दिष्ट देव, असुर एवं 'गो'—इन तीनोंके स्वरूपके यथार्थ ज्ञान बिना कठिन है, अत: यहाँ तीनोंके स्वरूपोंका प्रतिपादन प्रस्तुत है—

इन तीनोंमेंसे देव एवं असुर—इन दोनोंका स्वरूप इस प्रकार है—वेदमें **'प्राणा वाव देवता:'** इस श्रुतिके आधारसे (१) ऋषि, (२) पितर, (३) देव, (४) असुर, (५) गन्धर्व, (६) मनुष्य एवं (७) पशु-भेदसे सात प्रकारके इन प्राणोंको देवता कहा गया है। इनके पीत, शुक्ल एवं कृष्ण आदि भिन्न-भिन्न रंग हैं। इनमें शुक्ल प्राण देव एवं कृष्ण

प्राण असुर हैं। देवोंका आवास सूर्यमण्डल है। असुरोंका आवास पृथिवी-मण्डल है। देवोंकी संख्या तैंतीस एवं असुरोंकी संख्या निन्यानबे है। सूर्यकी एक-एक शुक्ल रश्मिमें सभी देव एवं भूच्छायाकी प्रत्येक कृष्ण रश्मिमें सभी असुर निवास करते हैं।

इन उभय देव एवं असुरोंसे विश्वके इन सभी उच्चावच पदार्थोंका निर्माण होता है। निर्माणके समय स्व-स्व जागरण एवं परस्वापके लिये देवासुर-युद्ध होता है। जिस पदार्थमें देवोंकी विजय अर्थात् देवोंका जागरण एवं असुरोंकी पराजय—स्वाप हो जाता है वह पदार्थ देवमय होता है। जिस पदार्थमें असुरोंकी विजय अर्थात् जागृति एवं देवोंकी पराजय—स्वाप हो जाता है, वह पदार्थ असुरमय हो जाता है।

विश्वके पदार्थोंमें देव देवभावोंका संचार करते हैं एवं असुर असुरभावोंका संचार करते हैं।

'**सत्यं श्रीर्ज्योतिरमृतं सुराः**' ये देव-भाव हैं एवं '**असत्यं पाप्मा तमो मृत्युरसुराः**'—ये असुर-भाव हैं। अर्थात् (१) सत्य, (२) श्री, (३) ज्योति, (४) अमृत—ये देव-भाव हैं तथा (१) असत्य, (२) पाप्मा, (३) तम एवं (४) मृत्यु—ये असुर-भाव हैं। देवमय पदार्थोंके उपयोगसे हमारे अध्यात्म, शरीर, मन, बुद्धि, प्राण एवं आत्मामें देव-भावोंका संचार होगा। एवं असुरमय पदार्थोंके उपयोगसे हमारे अध्यात्म, शरीर, मन, बुद्धि, प्राण एवं आत्मामें आसुर भावोंका संचार होगा। इसलिये शास्त्रोंमें खाद्याखाद्य, पेयापेय एवं गम्यागम्य आदि व्यवस्थाएँ हैं।

'गो'-तत्त्व

जिस तत्त्वके द्वारा अर्थात् प्राणके द्वारा देवगण पदार्थोंसे असुरोंका तिरोभाव कर देते हैं, वही तत्त्व 'गो' कहलाया है। अर्थात् 'गो', प्राण एवं उससे उत्पन्न 'गो'—प्राणी—दोनों 'गो' हैं।

यह 'गो'-प्राण असुरोंका प्रबल विरोधी है। कारण कि यह सौर प्राण है। अर्थात् सूर्य-सम्बन्धी प्राण है। '**आदित्या वा गावः**' यह ऐतरेय ब्राह्मणकी श्रुति इसमें प्रमाण है। अर्थात् 'गो'-प्राणीका जन्म आदित्य प्राणसे हुआ है। अतः 'गो' आदित्या कहलायी है। इसलिये असुर-विनाशिनी जो शक्ति सूर्यमें है, वही शक्ति गो-प्राण एवं गो-प्राणीमें भी है, अतः गोमाताके श्वास-प्रश्वास, गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, दधि, गोस्पर्श आदिमें वे सभी शक्तियाँ संनिहित हैं जो गो—प्राण एवं सूर्यमें हैं।

'गो' शब्दका '**गम्लृ गतौ**' धातुसे निर्वचन शतपथ ब्राह्मणकी कण्डिकामें इस प्रकार किया गया है—'**इमे वै लोका गौः। यद्धि किंचन गच्छति इमांल्लोकान् गच्छति।**'

—इस श्रुतिके आधारसे 'गो' शब्दका निर्वचन '**गच्छति इति गौः**' है। तथा '**गम्यते इति गौः**' इस प्रकार भी अर्थ किया गया है। जो गतिशील है वह 'गो' है। अथवा जो गतिसे प्राप्त किया जाता है वह भी 'गो' है। श्रुति कहती है कि ये तीनों लोक गतिशील होनेसे गो कहलाते हैं। ये गतिसे प्राप्त भी किये जाते हैं, अतः 'गो' हैं।

अथर्ववेदकी 'पिप्पलाद' शाखाका प्रतिपादन है कि गतिशील कोई भी पदार्थ 'गो' कहलाता है जैसे '**अथ गोर्वै सार्पराज्ञी**' अर्थात् यह 'गो' प्राण एवं 'गो' प्राणी—ये दोनों गमनशीलोंमें रानी हैं। दोनों अभिन्न हैं। दोनों गतिशील हैं, अतः दोनों 'गो' हैं।

'अथ इयं पृथिवी वे सार्पराज्ञी'

अर्थात् यह पृथिवी भी गतिशीलोंकी रानी है, अतः 'गो' है। पृथिवीकी गतिशीलताका वर्णन खगोलविद् विद्वान् श्रीआर्य भट्टने 'आर्यभट्टि' में इस प्रकार किया है—

अनुलोमगतिर्नौस्थः
पश्यत्यचलं विलोमगं यद्वत्।
अचलानि भानि तद्वत्
समपश्चिमगानि लंकायाम्॥

गतिशील नौकामें बैठा हुआ और सीधा जाता हुआ पुरुष तटस्थ अचल स्थिर वृक्ष आदि वस्तुओंको विलोम—पीछे जाती हुई जैसे देखता है, वैसे ही गतिशील पृथिवीपर बैठा हुआ पुरुष अचल भूमण्डल, तारा-मण्डलको लंकामें पश्चिम जाता हुआ देखता है। इसलिये यह पृथिवी भी गतिशील होनेके कारण 'गो' है।

'**अथ वाग्वै सार्पराज्ञी।**' अर्थात् यह 'वाक्' भी गमनशीलोंमें रानी है। अतः वह भी 'गो' है। न्यायदर्शनमें तरंग-वीचि-न्यायसे 'वाक्' की गतिशीलताका वर्णन किया

गया है।

'**गच्छति इति गौः**' इस निर्वचनसे निष्पन्न 'गो' शब्दके 'अनेकार्थ', 'तिलक' आदि कोशोंमें दिये गये हैं, वे सभी अर्थ गतिशील होनेसे 'गो' कहलाते हैं।

वज्र (विद्युत्), जल, बैल, धेनु, वाक्, दिक्, बाण, पृथिवी, किरण, सुख, स्पर्श, सत्य, वह्नि, अक्षि, अक्षमातृका, स्वर्ग, चन्द्र, लोम—ये सब गतिशील होनेसे 'गो' हैं।

'शाश्वत' कोश कहता है कि नाक, स्वर्ग, वृषभ, चन्द्र—इनका वाचक 'गो' शब्द पुँल्लिङ्ग है। वाक्, भूमि, दिक् एवं धेनु—इनका वाचक 'गो शब्द' स्त्रीलिंग है। रश्मि, चक्षु, बाण, स्वर्ग, वज्र, जल एवं लोम—इनका बोधक 'गो' शब्द स्त्रीलिंग एवं नपुंसक लिंग दोनोंमें है।

'गै शब्दे' धातुसे 'गो' शब्दका निर्वचन 'मैत्रायणी' संहिताके निम्न मन्त्रमें इस रूपमें उपलब्ध है—

गातुमविदाम इति तद् आसां गोत्वम्।

शब्दोंके उच्चारणके लिये जिनसे सामर्थ्य प्राप्त होता है, वही उनका गोत्व है।

'छान्दोग्योपनिषद्' कहता है कि '**अन्नमयं हि सौम्य मनः, तेजोमयी वाक्, आपोमयाः प्राणाः।**' जैसे अन्नसे मनन करनेमें मन समर्थ होता है, जैसे जलसे प्राण प्रबल होते हैं, वैसे ही घृतरूप तेजसे 'वाक्' को सामर्थ्य प्राप्त होता है, जिससे वह शब्दोच्चारमें समर्थ होती है। यही कारण है कि सामवेदके गानके प्रथम घृतपानका विधान है।

वैदिक आर्योंका कृषि-कर्म तथा पशु-पालन

[पद्मभूषण आचार्य श्रीबलदेवजी उपाध्याय]

वैदिक संहिताओं तथा ब्राह्मणोंमें उस कालके प्राचीन वैदिक आर्योंके आर्थिक जीवनका विशिष्ट वर्णन उपलब्ध होता है। उनके देखनेसे ज्ञात होता है कि वैदिक आर्योंमें कृषि-कर्मका प्रचार तथा प्रसार विशेष रूपसे होता था। ऋग्वेद तथा इतर संहिताओंमें खेतके लिये 'उर्वर' तथा 'क्षेत्र' शब्द साधारण रूपसे प्रयुक्त किये गये हैं। खेत दोनों प्रकारके होते थे—उपजाऊ (अप्नस्वती) तथा पड़ती (आर्तना[१])। खेत बिलकुल एक चकला ही नहीं होता था, बल्कि उसे नाप-जोखकर अलग-अलग टुकड़ोंमें बाँट दिया करते थे, जो विभिन्न कृषकोंकी जोतमें आते थे। खेतपर किसी जातिका अधिकार नहीं होता था, वह वैयक्तिक अधिकारका विषय था। इसकी पुष्टिमें कुछ मन्त्रोंका प्रमाण दिया जा सकता है, जिसमें अपालाने अपने पिताके खेतको अपने सिरके समान कोटिमें उल्लिखित किया है[२]। 'राजा ही उस समय खेतका तथा भूमिका एकमात्र स्वामी है'—यह कल्पना वैदिक युगमें प्रबल नहीं जान पड़ती। वैदिक कालमें कृषि-कर्म आजके समान ही होता था। खेतोंको हलोंसे जोतकर बीज बोनेके योग्य बनाया जाता था। हलका साधारण नाम 'लाँगल' या 'सीर' था, जिसके अगले नुकीले भागको फाल कहते थे।

फाल (फार) बड़ा ही नुकीला तथा चोखा होता था। हलकी मूँठ बड़ी चिकनी होती थी। इसे '**सोमसत्सरु**' नामसे अथर्ववेदमें कहा गया है (३। १७। ३)। हल जोतनेवाला हलवाहा 'कीनाश' शब्दके द्वारा निर्दिष्ट है। उसके हाथमें बैलोंको हाँकनेके लिये जो पैना होता था उसको 'तोद' या 'तोत्र' नामसे पुकारते थे। शतपथ ब्राह्मणमें चार ही शब्दोंमें कृषि-कर्मकी पूरी प्रक्रियाका वर्णन कर दिया गया है। ये शब्द हैं—कर्षण (जोतना), वपन (बोना), लवन (काटना) तथा मर्दन (माड़ना)। मर्दनके बाद चलनी (तितऊ) अथवा सूप (शूर्प) से अनाजको भूसेसे अलग किया जाता था (ऋ० १०। ७१। २)। इसे करनेवाले व्यक्तिको 'धान्यकृत्' कहते थे।

बोये जानेवाले अनाजोंके जो नाम मन्त्रोंमें मिलते हैं, वे इस प्रकार हैं—व्रीहि (धान), यव (जौ), मुद्ग (मूँग),

१-ऋग्वेद १। १२७। ६। २-ऋग्वेद ८। ९१। ५।

गोधूम (गेहूँ), नीवार (जंगली धान), मसूर, तिल तथा खीरा (उर्वारु या उर्वारुक)। तैत्तिरीय संहितामें सफेद तथा काले धानमें अन्तर किया गया है। धानके तीन प्रकार मुख्यरूपसे बताये गये हैं—कृष्ण (काला), आशु (जल्दी जमनेवाला) तथा महाव्रीहि (अर्थात् बड़े दानोंवाला धान)। इन वेदोंमें 'आशु' 'साठी' नामक धानको लक्षित करता है। क्योंकि यह धान साठ ही दिनोंमें पककर तैयार हो जाता है। इन धानोंके नामसे उस युगके प्राणियोंके भोजनोंके प्रकारका भी निर्देश हो जाता है।

आजकलकी भाँति उस समय भी किसानोंके सामने हानि पहुँचानेवाले कीड़ोंसे खेतीको बचानेकी समस्या उपस्थित थी। अवर्षण तथा अतिवर्षणसे भी खेतीको हानि पहुँचती थी, परंतु कीड़ोंसे इनकी अपेक्षा अधिक। अथर्ववेदमें बहुत-से कीड़ोंके नाम दिये गये हैं, उनसे रक्षाके लिये अनेक मन्त्र एवं उपाय सुझाये गये हैं। उस समय भी टिड्डियोंसे बड़ी हानि होती थी। टिड्डीका वाचक शब्द है—'मटची'*। कभी-कभी ये पूरा-का-पूरा देश साफ कर डालती थीं। एक बार टिड्डियोंके कारण पूरा कुरु-जनपद नष्ट हो गया था, जिस घटनाका उल्लेख छान्दोग्य-उपनिषद्में मिलता है—'**मटचीहतेषु कुरुषु**' (छा० १।१०।१)। वैदिक कालीन कृषिके इस संक्षिप्त विवरणसे पता चलता है कि आजकी हमारी कृषि-पद्धति वैदिक ढंगपर ही चल रही है।

वैदिक आर्य लोग कृषि-कर्मके लिये वृष्टिपर विशेष अवलम्बित रहते थे। वृष्टिके देवताका इसी कारण वेदमें प्राधान्य माना गया है। ये देवता इन्द्र थे, जो अपने वज्रके द्वारा वृष्टिको रोकनेवाले दैत्यको (जिसका नाम वृत्र था और जो अपनी प्रबल शक्तिके द्वारा मेघोंके गर्भमें होनेवाले जलको रोक देता था) वज्रसे मारकर छिपे हुए जलको वर्षा देता था तथा नदियोंको प्रगतिशील बनाता था। वैदिक देवता-मण्डलमें इन्द्रकी प्रमुखताका रहस्य आर्योंके कृषिजीवी होनेकी घटनामें छिपा हुआ है। उस समय खेतोंकी सिंचाईका भी प्रबन्ध था। एक मन्त्रमें दो प्रकारके जलका नाम निर्दिष्ट है—'खनित्रिमा' (खोदनेसे उत्पन्न होनेवाला) तथा 'स्वयंजा' (अपने-आप होनेवाला नदी आदिका जल)।

या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति
खनित्रिमा उत वा याः स्वयंजाः।

(ऋ० ७।४९।२)

वैदिक आर्योंके जीवन-निर्वाहके लिये कृषिका इतना अधिक महत्त्व तथा उपयोग था कि उन्होंने 'क्षेत्रपति' नामक एक स्वतन्त्र देवताकी सत्ता मानी है तथा उनसे क्षेत्रोंके शस्यसम्पन्न होनेकी प्रार्थना की है। इस प्रकारका एक प्रसिद्ध मन्त्र है जिसमें कहा गया है कि हमारे फार (हलके नुकीले अग्रभाग) सुखपूर्वक पृथ्वीका कर्षण करें। हलवाले (कीनाश) सुखपूर्वक बैलोंसे खेत जोतें। मेघ मधु जलसे हमारे लिये सुख बरसायें तथा इन्द्र भगवान् (शुनासीर) हमलोगोंके लिये सुख उत्पन्न करें। यह प्रार्थनावाला मन्त्र इस प्रकार है—

शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभि यन्तु वाहैः।
शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम्॥

(ऋ० ४।५७।८)

पशु-पालन

कृषिके महत्त्वपूर्ण होनेके लिये पशु-पालन वैदिक आर्योंके लिये प्रधान साधन था। कृषीबल समाजके लिये पशुओंकी और विशेषतः गाय-बैलोंकी कितनी महत्ता होती है, इसे प्रमाणोंसे सिद्ध करनेकी जरूरत नहीं है। हल जोतनेके लिये बैल ही प्रधान साधन है। वही खींचकर हलको आगे बढ़ाता है। आज तो हल खींचनेवाले बैलोंकी संख्या दो है, परंतु उस युगमें बैलोंकी संख्या चार, छः, आठ, बारह अथवा चौबीसतक होती थी, जिससे हलके भारी तथा बड़ा आकार होनेका अनुमान भलीभाँति किया जा सकता है। वैदिक कालमें वैश्य लोग ही अधिकतर खेती किया करते थे; क्योंकि उनका चिह्न 'अष्ट्रा' बतलाया गया है। अष्ट्रा, तोद तथा तोत्र—ये तीनों शब्द हलवाहेके

* शांकरभाष्यमें 'मटची'का अर्थ 'ओला' तथा 'पत्थर' किया गया है, परंतु लेखकके अनुसार कन्नड़ भाषामें टिड्डीको 'मेडिची' कहते हैं जो वेदमें प्रयुक्त मटचीका ही अपभ्रंश है। अतः लेखक महोदयकी दृष्टिमें भाषाशास्त्रके अनुरूप यही अर्थ समीचीन है।

पैनेके लिये आते हैं और ये तीनों ही वैश्यके चिह्न बतलाये गये हैं। कृषिकर्मके लिये बैलोंकी लंबी संख्या होती थी, इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि गायोंकी बड़ी संख्या होती थी, जिनका पालन-पोषण वैदिक आर्य बड़े प्रेम तथा उत्साहसे करते थे। वैदिक आर्योंमें यज्ञ करनेकी प्रथा थी, जिसके लिये दूधसे बने हुए खीरका हवन किया जाता था। उस युगमें गायका दूध आर्योंके भोजनालयोंकी एक प्रधान वस्तु होता था। सोमरसके मिलानेमें दूध काममें आता था तथा खीर बनानेके काममें भी नितान्त उपयोगी था। इससे दही और घी तैयार किया जाता था।

प्राचीन कालमें किसी व्यक्तिकी धन-सम्पत्तिका माप उसके पास होनेवाली गौओंकी संख्यासे होता था। यज्ञोंमें ऋत्विजोंके लिये दक्षिणा-रूपमें गाय ही देनेका विधान था। यहाँतक कि 'दक्षिणा' शब्द अनेक स्थलोंपर गौका पर्यायवाची बन गया था। राजा लोग प्रसन्न होकर ब्राह्मणोंको सौ या हजार गायोंका दान किया करते थे। उस युगमें गायोंका उपयोग ऊपर बताये गये प्रकारसे भी अतिरिक्त सिक्केके रूपमें किया जाता था। वैदिक कालमें सिक्कोंका प्रचलन बहुत ही कम था। अतः लेन-देन, व्यवहार-बट्टा, क्रय-विक्रयके कार्यके लिये विनिमयका मुख्य माध्यम गाय ही थी। गायके बदले वस्तुएँ खरीदी जाती थीं। पदार्थोंका मूल्य गायके ही रूपमें विक्रेताको दिया जाता था। इस विषयका उल्लेख ऋग्वेदके अनेक मन्त्रोंमें किया गया है। एक मन्त्र (३। २४। १०) में वामदेव ऋषिका कथन है कि कौन मनुष्य ऐसा है जो मेरे इन्द्रकी इस मूर्तिको दस गायोंसे खरीद रहा है। अन्य मन्त्रोंमें भी सौ, हजार या दस हजार भी गायें इन्द्रको खरीदनेके लिये पर्याप्त नहीं मानी गयी हैं। एक मन्त्र इस प्रकार है—

महे चन त्वामद्रिवः परा शुल्काय देयाम्।
न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ॥

(ऋ० ८। १। ५)

भारतमें ही नहीं, पश्चिमी देशोंमें भी प्राचीन कालमें सम्पत्तिकी परम्पराका आधार गाय ही थी। लैटिन भाषाका 'पेकुस' (Pecus) शब्द जिसका अर्थ सम्पत्ति है और जिससे अंग्रेजीका 'पैक्यूनियरी' (Pecuniary) शब्द बनता है, भाषा-शास्त्रकी दृष्टिमें संस्कृत पशुः (पशुस्) शब्दसे सम्बन्ध रखता है (संस्कृतमें मुख्य पशु गो ही है)। इस प्रकार खेती, भोजन तथा द्रव्य-विनिमयका मुख्य साधन होनेके कारण वैदिक आर्योंके लिये गाय नितान्त उपादेय तथा आवश्यक वस्तु थी। वैदिक कालमें गायके गौरवका रहस्य इसी सामाजिक अवस्थाकी सत्तामें अन्तर्निहित है। इसी कारण वैदिक आर्यलोग गौको अघ्न्या (न मारने योग्य) नामसे पुकारते थे तथा उसे समधिक श्रद्धा एवं आदरकी दृष्टिसे देखते थे।

वैदिक कालमें गायें दिनमें तीन बार दुही जाती थीं—प्रातःकाल (प्रातर्दोह), दोपहरसे कुछ पहले (संगव) और सांयकाल (सायंदोह)। तीन बार वे चरनेके लिये चरागाहमें भेजी जाती थीं। वैदिक कालमें गायें भिन्न-भिन्न रंगोंकी होती थीं—लाल (रोहित), सफेद (शुक्ल), चित्रित (चितकबरी) तथा काली। चरागाहमें वे गोप या गोपालकी देख-रेखमें चरती थीं। गायोंके सजग रहनेपर भी वे कभी-कभी संकट तथा विपत्तिमें पड़ जाती थीं, कभी वे कुओं या गड्ढोंमें गिर जातीं तो कभी अङ्ग-भङ्ग हो जाता। कभी वे भूल जाया करतीं और कभी दस्यु या पणि लोग उसे चुरा लिया करते थे। इन विपत्तियोंसे पशुओंकी रक्षा करनेवाले वैदिक देवताका नाम 'पूषन्' था, जो इसीलिये 'अनष्ट-पशु' (गोरक्षक) विशेषणसे विभूषित किया गया है। उस युगमें गायोंकी संख्या इतनी अधिक होती थी कि उनकी पहचानके लिये उनके कानोंके ऊपर नाना प्रकारके चिह्न बनाये जाते थे। जिन गायोंके कानोंके ऊपर ८ (आठ) का चिह्न बना होता था वे अष्टकर्णी कहलाती थीं। मैत्रायणी-संहितामें निर्दिष्ट चिह्न ये हैं—वंशी (**कर्करिकर्ण्यः**), हँसुआ (**दात्रकर्ण्यः**), खम्भा (**स्थूणाकर्ण्यः**)। कभी सभी गायोंके कान छेदे भी जाते थे (**छिद्रकर्ण्यः**)। गायोंके कानोंको चिह्नित करनेकी यह प्रथा बहुत दिनोंतक भारतमें प्रचलित रही, क्योंकि पाणिनीके सूत्रोंमें ऐसे चिह्नोंका उल्लेख मिलता है (अष्टा० ६। ३। ११५)।

गायोंकी भिन्न-भिन्न अवस्थाओंके द्योतक अनेक शब्द वैदिक ग्रन्थोंमें मिलते हैं, जिनसे आर्योंका इस पशुके साथ

गाढ़ परिचय अभिव्यक्त होता है। सफेद रंगकी गायको 'कर्की' शब्दसे पुकारते थे, बच्चा देनेवाली जवान गायको 'गृष्टि', दूध देनेवाली गायको 'धेना' या 'धेनु', बाँझ गायको 'स्तरी' या धेनुष्टरी, बच्चा देकर बाँझ होनेवाली गायको 'सूतवशा' तथा अकालमें ही गिरकर गर्भ नष्ट होनेवाली गायको 'बेहत्' कहते थे। वह गाय जिसका अपना बच्चा मर जानेसे नये बछड़ोंके द्वारा मनानेकी आवश्यकता होती थी, 'निवान्या' या केवल 'वान्या' शब्दसे अभिहित की जाती थी। वैदिक ऋषियोंको गायका अपने बछड़ेके लिये रँभाना कानोंको इतना सुखद प्रतीत होता था कि वे देवताओंको बुलानेके लिये प्रयुक्त अपने शोभन गानोंकी इससे तुलना करनेमें कभी तनिक भी नहीं सकुचाते थे—

अभि विप्रा अनूषत गावो वत्सं न मातरः।
इन्द्रं सोमस्य पीतये॥ (ऋ० ९। १२। २)

वैदिक समाजमें बैलोंका उपयोग अनेक प्रकारसे किया जाता था। वे हल जोतनेके लिये तथा बोझवाली गाड़ी खींचनेके लिये नियमतः काममें लाये जाते थे। वैदिक ग्रन्थोंमें बैलोंकी भिन्न-भिन्न अवस्थाओंको सूचित करनेके लिये अनेक शब्द पाये जाते हैं। बैलके लिये प्रयुक्त साधारण शब्द हैं—उक्षा=सेचनक्षम वृष। ऋषभ= जवान बैल।

शुक्ल यजुर्वेदसंहिताके १८ वें अध्यायकी दो कण्डिकाओं (२६ तथा २७) के अन्तर्गत गाय तथा बैलोंके विभिन्न नाम निर्दिष्ट किये गये हैं। उनका यहाँ निर्देश किया जा रहा है—षण्मासात्मक कालका वाचक शब्द है 'अवि' और इसी शब्दकी सहायतासे भिन्न-भिन्न अवस्थावाले गाय तथा बैलके शब्द वेदमें उपलब्ध होते हैं—

(१) डेढ़ वर्षके बछड़ेका नाम—त्र्यवि, डेढ़ वर्षवाली बछियाका नाम—त्र्यवी।

(२) दो वर्षके बछड़ेका वाचक शब्द है—दित्यवाट्।

(३) दो सालकी बछियाका नाम है—दित्यौही।

(४) ढाई सालके बछड़ेका नाम है—पञ्चावि।

(५) ढाई सालकी बछियाका नाम है—पञ्चावी।

(६) तीन सालके वत्सका नाम है—त्रिवत्स।

(७) तीन सालकी बछिया—त्रिवत्सा।

(८) साढ़े तीन सालका वत्स—तुर्यवाट्।

(९) साढ़े तीन सालकी बछिया—तुर्यौही।

(१०) चार सालका बछड़ा—पष्ठवाट्।

(११) चार सालकी गौ—पष्ठौही।

महींधर भाष्यके द्वारा ये शब्द व्याख्यात हैं। इनके द्वारा गायके प्रति अपूर्व प्रेमका परिचय मिलता है। वैदिक युगमें गायोंके प्रति जो आदर-बुद्धि चली वह आजतक निर्विघ्न-रूपसे चलती आ रही है। आज भी गाय हमारे लिये सत्कार, आदर तथा पवित्रताकी प्रतीक है।

भरद्वाज ऋषि अपने एक मनोज्ञ मन्त्रमें कहते हैं—गाय भग देवता है, गाय ही मेरे लिये इन्द्र है, गाय ही सोमरसकी पहली घूँट है, ये समग्र गायें इन्द्रकी प्रतिनिधि हैं। मैं हृदयसे, मनसे इसी इन्द्रको चाहता हूँ—

गावो भगो गाव इन्द्रो मे अच्छान्
गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः।
इमा या गावः स जनास इन्द्र
इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्॥

(ऋग्वेद ६। २८। ५)

गोरक्षाके दस साधन

१-बूचड़खानोंको हर तरहके उचित उपाय करके बंद करवाना चाहिये। २-गौओंकी उत्तम वंश-वृद्धिके उपाय करने चाहिये। ३-गौओंके लिये पर्याप्त चारे-दानेकी व्यवस्था होनी चाहिये। ४-घासके लहलहाते मैदान गौओंके लिये सर्वत्र खुले होने चाहिये। ५-प्रत्येक सद्गृहस्थको अपने घरमें गौ अवश्य रखनी चाहिये और उसका प्रेमके साथ पालन करना चाहिये। ६-कोई भी हानिकारक वस्तु गौओंको कभी नहीं खिलानी चाहिये। ७-बैलोंके काम और चारे-दानेपर विशेष ध्यान रखना चाहिये। ८-गौओंकी तंदुरुस्ती और स्वच्छतापर विशेष ध्यान देना चाहिये। ९-उत्सवोंपर गौओंका विशेष पूजन होना चाहिये। १०-गो जातिके लिये हृदयमें अगाध प्रेम होना चाहिये।

गोरक्षा-प्रश्नावली

१-गौको विश्वमाता क्यों कहा जाता है?

२-गौके विश्वरूपमें, शरीरमें, अङ्ग-प्रत्यङ्गमें देवताओंका निवास बताया है। इस ढंगसे गौके अतिरिक्त अन्य प्राणियोंमें वास नहीं है। ऐसा क्यों है? इसका हमारे साथ आध्यात्मिक भावोंके अतिरिक्त क्या कोई भौतिक विज्ञान-दृष्टिसे भी सम्बन्ध है या नहीं?

३-'**यतो गावस्ततो वयम्**' शास्त्रमें ऐसा क्यों कहा है?

४-गौके श्वासोंमें चारों वेद षडङ्ग-पदक्रमसहित विराजमान बताये गये हैं। उसका क्या श्वासके साथ गान होता है या श्वासके साथ मूर्तिवत् शब्दाक्षर प्रवाहित होते हैं? ऋषि मन्त्रद्रष्टा कहलाते हैं तो वे मन्त्र-दर्शन कहाँ करते थे? गौके श्वासोंसे सुखी अवस्थामें वेद प्रस्रवित होता है तो दुखी श्वासोंमें क्या प्रस्रवित होता है?

५-छान्दोग्योपनिषद्में वर्णित सत्यकाम जाबालने गोसेवा करके जो ब्रह्मवेत्तापद प्राप्त किया था, उसके साथ गौके श्वासोंमें स्थित वेदोंका सम्बन्ध है या नहीं?

६-सायंकालमें गौके चरणोंसे उठी धूलिके कारण चारों दिशाएँ पवित्र होती हैं, क्या इसलिये गोधूलि-वेला शुभकामोंमें शुभ मानी जाती है? प्रातःकाल जब गौ घरसे जंगलमें चरने जाती है, उस समयको भी गोधूलि-वेला क्यों नहीं माना गया? गोधूलि तो भौतिक वस्तु है, अतः क्या भौतिक विज्ञानसे यह बात सिद्ध होती है?

७-क्या सब गोजाति ही कामधेनु है या वह अन्य कोई गौ-विशेष होती है, गौमें कामधेनुत्व हमारी तपस्यासे आता है या नहीं?

८-क्या भारतीय नस्लकी गायें ही वास्तविक गौ हैं? विदेशी नस्लके साँड़ोंसे वर्णसंकरीकरण होनेसे क्या भारतीय गायोंकी नस्ल समाप्त नहीं हो रही है?

९-गौके गोबर-मूत्र परम पावन, प्राशनीय और देवपूजन, पितृश्राद्ध, हवनादिमें अनिवार्य आवश्यक हैं। जब कि सभी अन्य प्राणियोंके मल-मूत्र धर्मशास्त्रानुसार अपावन हैं, तो ये ही पावन क्यों हैं?

१०-भैंस भी दूध, दही, घी, गोबर-मूत्र देती है और भैंसे खेती तथा बोझ ढोनेके लिये हैं। आर्थिक दृष्टिसे, कुछ कम-ज्यादा भले हो, परंतु भैंसका महत्त्व भी है। अतः इसे गौके सदृश महत्त्व क्यों नहीं दिया गया?

११-**यावदस्या गोपतिर्नोपश्रृणुयादृचः स्वयम्।**
चरेदस्य तावद् गोषु नास्य श्रुत्वा गृहे वसेत्॥
यो अस्या ऋच उपश्रुत्याथ गोष्वचीचरत्।
आयुश्च तस्य भूतिं च देवा वृश्चन्ति हीडिताः॥
वशा चरन्ती बहुधा देवानां निहितो निधिः।
आविष्कृणुष्व रूपाणि यदा स्थाम जिघांसति॥
आविरात्मानं कृणुते यदा स्थाम जिघांसति।
अथो ह ब्रह्मभ्यो वशा याञ्च्याय कृणुते मनः॥

(अथर्ववेद १२।४।२७—३०)

क्या उपर्युक्त मन्त्रोंका सम्बन्ध गौके श्वासमें स्थित वेद-मन्त्रोंसे भी है?

१२-गौका आर्थिक महत्त्व रहते हुए भी उसे केवल आर्थिक दृष्टिसे ही देखना क्या पाप नहीं है?

१३-पद्मपुराणमें गौके दूध, दही, घी, गोबर तथा मूत्रका सेवन न करनेवाले मानवको मांस-पिण्डवत् कहकर निन्दनीय क्यों ठहराया गया है?

१४-गो-स्पर्श करना एवं गो-पुच्छका शरीरपर फेरना लाभकारी क्यों बताया गया है?

१५-गौके मांसको मुस्लिम-धर्ममें रोग-रूप कहा है। बादशाह हुमायूँ गोमांससे घृणा करते थे, इसका क्या रहस्य है?

१६-सुना है, अमेरिकाने नये अनुसंधानद्वारा जिस खेतमें गौ बैठे, चले, फिरे (यानी गोधूलि, गोचरण-अङ्ग-स्पर्शसे) और गोबर-मूत्र गिरनेसे, खेतीमें उपजे पदार्थोंमें अनेक लाभ माने हैं, जो अन्य खादोंमें नहीं; यह कहाँतक सत्य है और क्यों है?

१७-सुना है, जर्मनीके फील्ड मार्शलने कहा कि गौके स्तनोंको मुँहमें लेकर दुग्धपान करना विशेष लाभदायक है। गौ शरीरको चाटते हुए प्रेमपूर्वक दूध दे, वह और भी लाभदायक है, यह कहाँतक ठीक है और कैसे है?

१८-इसी ढंगसे गोवध चालू रहा तो भविष्यमें भारतमें गोधन कितने वर्षोंतक बना रहेगा? क्या गो-दर्शन दुर्लभ हो जायगा?

१९-जिस संकटमयी स्थितिमें महर्षिगण भगवान्‌से प्रार्थना किया करते थे, क्या वैसी स्थिति आज उपस्थित नहीं है?

२०-कलकत्ताके भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश सर जॉन उडरफने 'तन्त्र-सिद्धान्त' में शास्त्रीय आधारपर लिखा है कि 'जहाँ गोवध हो वहाँ मन्त्र-तन्त्र कैसे सफल हों!' इसका शास्त्रीय प्रमाण कहाँ है तथा बुरा प्रभाव कैसे होता है?

२१-वर्तमान स्थितिमें भगवान्‌का अवतार होकर गोरक्षा करनेके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय गोवध-बंदीका है क्या? जब कि जनतामें मानवताहीन दानवताका प्रसार हो रहा है। कायरता, निराशा और हृदयहीनता घर कर चुकी है।

२२-सन् १८५७ ई० से भारतमें गोवध चालू है। जब गत वर्षोंके राजनैतिक आन्दोलनोंसे सफलता न मिली, तो अब कैसे मिलेगी? इस प्रकार समय निकल जानेपर क्या गोवंशका लोप नहीं हो जायगा?

२३-गौ-सेवासे संतानकी प्राप्ति कैसे होती है? गौको चक्रवर्ती सम्राट् क्यों चराते थे?

२४-गौ-द्वारा वैतरणी पार लँघानेका क्या रहस्य है?

२५-'**सद्यः शक्तिकरं पयः**', '**भोजनान्ते पिबेत् तक्रम्**' का क्या रहस्य है?

२६-'**आयुर्वै घृतम्**', '**घृतं वै अग्निः**' का क्या रहस्य है?

२७-और क्या उपर्युक्त प्रश्नोंपर गो-सम्मेलनोंमें विचार होकर जनताका अज्ञान दूर किया जायगा?

गोभिर्न तुल्यं धनमस्ति किंचित्

तृणानि खादन्ति वसन्त्यरण्ये पिबन्ति तोयान्यपरिग्रहाणि।
दुह्यन्ति वाह्यन्ति पुनन्ति पापं गवां रसैर्जीवति जीवलोकः॥
तुष्टास्तु गावः शमयन्ति पापं दत्तास्तु गावस्त्रिदिवं नयन्ति।
संरक्षिताश्चोपनयन्ति वित्तं गोभिर्न तुल्यं धनमस्ति किंचित्॥
शष्पं समश्नाति ददाति नित्यं पापापहं मित्रविवर्धनं च।
स एव चाऽऽर्यः परिभुज्यते च गोभिर्न तुल्यं धनमस्ति किंचित्॥
तृणानि शुष्कानि वने चरित्वा पीत्वापि तोयान्यमृतं स्रवन्ति।
यद्गोमयाद्याश्च पुनन्ति लोकान् गोभिर्न तुल्यं धनमस्ति किंचित्॥

गौएँ जंगलमें निवास करती हैं, तृणोंका भक्षण करती हैं और बिना किसीके अधिकृत क्षेत्रका जल अथवा गड्ढा, नदी, तालाबका जल पीती हैं, वे दूध देती हैं, भार वहन करती हैं, पापोंको दूर करती हैं, गायोंके इस गोरस (दूध-दही) आदिपर सारा विश्व—प्राणिसमुदाय टिका है—जीवनयापन करता चला आ रहा है। प्रसन्न होनेपर गायें सारे पाप-तापको धो डालती हैं और दान देनेपर गायें सीधे स्वर्गलोकको ले जाती हैं। ये ही विधिपूर्वक पालन करनेपर वैभव-धन या समृद्धिका रूप धारण कर लेती हैं। ऐसी गायोंके समान संसारमें कोई सम्पत्ति या समृद्धि नहीं है। गौएँ सामान्य घास चरती हैं और बदलेमें दूध-दही, गोमय आदि निरन्तर कुछ-न-कुछ देती ही रहती हैं, लेती भी कुछ नहीं। ये पापको दूर करती हैं और मित्रोंका संवर्धन करती हैं। बैल भी सबसे सीधा देवता है और अन्न-उत्पादन कर सबको खिलाता-जिलाता रहता है। उसीके द्वारा जो अन्न उत्पन्न किया जाता है उससे संसार जीता है। गायके तुल्य ही सजातीय गोधन अर्थात् बैलके समकक्ष कोई सम्पत्ति नहीं है। जंगलमें रूखे-सूखे तृणोंका भक्षणकर साधारण जलका पान कर गौएँ दुग्धरूपी अमृतका क्षरण करती हैं और जिसकी गोबर-गोमूत्र आदि वस्तुएँ संसारको पवित्र कर डालती हैं, ऐसी गौओंके समान और अन्य कोई सम्पत्ति नहीं है।

गोतत्त्व-विमर्श

गो-जननी आदिगौ 'सुरभी' का आख्यान

[सिद्धिप्रद सुरभि-मन्त्र और स्तोत्र]

एक बार देवर्षि नारदके पूछनेपर भगवान् नारायणने उन्हें बतलाया कि गौओंकी अधिष्ठात्री आदिजननी सुरभी गोलोकमें प्रकट हुईं। वह गौओंकी अधिष्ठात्री देवी, गौओंकी आदि, गौओंकी जननी तथा सम्पूर्ण गौओंमें प्रमुख थीं। मुने! समस्त गौओंसे प्रथम वृन्दावनमें उन सुरभीका ही जन्म हुआ है। अत: मैं उनका चरित्र कहता हूँ, सुनो।

एक समयकी बात है—राधापति कौतुकी भगवान् श्रीकृष्ण श्रीराधाके साथ गोपाङ्गनाओंसे घिरे हुए पुण्य वृन्दावनमें गये। कौतूहलवश थक जानेके बहाने सहसा किसी एकान्त स्थानमें बैठ गये और उन स्वेच्छामय प्रभुके मनमें दूध पीनेकी इच्छा हो गयी। उसी क्षण उन्होंने अपने

श्रीकृष्णके वामभागसे सुरभीका प्रकट होना

वामभागसे लीलापूर्वक सुरभी गौको प्रकट कर दिया। उस गौके साथ बछड़ा था। सुरभीके थनोंमें दूध भरा था। उसके बछड़ेका नाम 'मनोरथ' था। उस सवत्सा गौको सामने देखकर श्रीदामाने एक नूतन पात्रमें उसका दूध दुहा। वह दूध जन्म और मृत्युको दूर करनेवाला एक दूसरा अमृत ही था। स्वयं गोपीपति भगवान् श्रीकृष्णने उस स्वादिष्ट दूधको पिया। फिर हाथसे वह भांड गिरकर फूटा और दूध धरतीपर फैल गया। गिरते ही वह दूध सरोवरके रूपमें परिणत हो गया। उसके चारों ओरकी लंबाई और चौड़ाई सौ-सौ योजन थी। वही यह सरोवर गोलोकमें 'क्षीरसरोवर' नामसे प्रसिद्ध है। गोपिकाओं और श्रीराधाजीके लिये वह क्रीडा-सरोवर बन गया। सभी वहाँ मनोरञ्जन करने लगीं। अमूल्य रत्नोंद्वारा उस परिपूर्ण सरोवरके घाट बने थे। भगवान् श्रीकृष्णकी इच्छासे उसी समय अकस्मात् असंख्य कामधेनु गौएँ प्रकट हो गयीं। जितनी वे गौएँ थीं, उतने ही गोप भी उस सुरभी गौके रोमकूपसे निकल आये। फिर उन गौओंसे बहुत-सी संतानें हुईं, जिनकी संख्या नहीं की जा सकती। यों उन सुरभी देवीसे गौओंकी सृष्टि कही जाती है, जिससे जगत् व्याप्त है।

मुने! उस समय भगवान् श्रीकृष्णने देवी सुरभीकी पूजा की थी। तत्पश्चात् त्रिलोकीमें उस देवीकी दुर्लभ पूजाका प्रचार हो गया। दीपावलीके दूसरे दिन भगवान् श्रीकृष्णकी आज्ञासे देवी सुरभीकी पूजा सम्पन्न हुई थी—यह प्रसंग मैं अपने पिता धर्मके मुखसे सुन चुका हूँ। महाभाग! देवी सुरभीका ध्यान, स्तोत्र, मूल मन्त्र तथा पूजाकी विधिका क्रम मैं तुमसे कहता हूँ, सुनो! '**ॐ सुरभ्यै नमः**' सुरभी देवीका यह षडक्षर मन्त्र है। एक लाख जप करनेपर यह मन्त्र सिद्ध होकर भक्तोंके लिये कल्पवृक्षका काम करता है। ध्यान और पूजन यजुर्वेदमें सम्यक् प्रकारसे वर्णित है। 'जो ऋषि, वृद्धि, मुक्ति और सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण करनेवाली है, जो लक्ष्मीस्वरूपा, श्रीराधाकी सहचरी, गौओंकी अधिष्ठात्री, गौओंकी आदिजननी, पवित्ररूपा; भक्तोंके अखिल मनोरथ सिद्ध करनेवाली हैं तथा जिनसे

यह सारा विश्व पावन बना है, उन भगवती सुरभीकी मैं उपासना करता हूँ। कलशमें तथा गायके मस्तक, गौओंके बाँधनेके स्तम्भ, शालग्रामकी मूर्ति, जल अथवा अग्निमें देवी सुरभीकी भावना करके द्विज इनकी पूजा करें। दीपमालिकाके दूसरे दिन पूर्वाह्णकालमें भक्तिपूर्वक पूजा होनी चाहिये। जो भगवती सुरभीकी पूजा करेगा, वह जगत्में पूज्य हो जायगा।'

एक समयकी बात है, वाराहकल्प बीत रहा था। देवी सुरभीने दूध देना बंद कर दिया। उस समय त्रिलोकीमें दूधका अभाव हो गया था। तब देवता अत्यन्त चिन्तित होकर ब्रह्मलोकमें गये और उनकी स्तुति करने लगे। तदनन्तर इन्द्रने ब्रह्माजीकी आज्ञा पाकर देवी सुरभीकी स्तुति आरम्भ की—

इन्द्रने कहा—'देवीको नमस्कार है। महादेवी सुरभीको बार-बार नमस्कार है। जगदम्बिके! तुम गौओंकी आदिकारण हो; तुम्हें नमस्कार है। श्रीराधा-प्रियाको नमस्कार है। देवी पद्मांशाको बार-बार नमस्कार है। श्रीकृष्ण-प्रियाको नमस्कार है। गौओंको उत्पन्न करनेवाली देवीको बार-बार नमस्कार है। सबके लिये जो कल्पवृक्षस्वरूपा हैं तथा क्षीर, धन और बुद्धि प्रदान करनेके लिये सदा तत्पर रहती हैं, उन भगवती सुरभीको बार-बार नमस्कार है। शुभा, सुभद्रा और गोप्रदा नामसे शोभा पानेवाली देवीको बार-बार नमस्कार है। यश, कीर्ति और धर्म प्रदान करनेवाली देवीको बार-बार नमस्कार है[१]।'

इस प्रकार स्तुति सुनते ही जगज्जननी भगवती सुरभी संतुष्ट और प्रसन्न हो उस ब्रह्मलोकमें ही प्रकट हो गयीं। वन सनातनी देवी देवराज इन्द्रको परम दुर्लभ अभीष्ट वर देकर गोलोकको चली गयीं। देवता भी अपने-अपने स्थानोंको चले गये। नारद! अब विश्व सहसा दूधसे परिपूर्ण हो गया। दूधसे घृत बना और घृतसे यज्ञ सम्पन्न होने लगे तथा उनसे देवता संतुष्ट हुए।

जो मानव इस महान् पवित्र स्तोत्रका भक्तिपूर्वक पाठ करेगा, वह गोधनसे सम्पन्न, प्रचुर सम्पत्तिवाला, परम यशस्वी और पुत्रवान् हो जायगा। उसे सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान करने तथा अखिल यज्ञोंमें दीक्षित होनेका फल सुलभ होगा। ऐसा पुरुष इस लोकमें सुख भोगकर अन्तमें भगवान् श्रीकृष्णके धामको प्राप्त होता है। वह वहाँ चिरकालतक रहकर भगवान्‌की सेवा करता रहता है। पुनः इस संसारमें उसे नहीं आना पड़ता। वह ब्रह्मलोकमें ब्रह्माजीका पुत्र होकर वहीं निवास पाता है।[२] (देवीभागवत)

गोदावरीकी उत्पत्ति-कथा

उन दिनोंकी बात है, जब महर्षि गौतम ब्रह्मगिरिके आश्रममें रहते थे। अनावृष्टिके कारण घोर अकाल पड़ा। अन्नके बिना चारों ओर हाहाकार मच गया। उस समय मुनिवर श्रीवसिष्ठजी कुछ मुनियोंके साथ गौतमके आश्रमपर पहुँचे। महर्षि गौतमने उनका सादर अभिनन्दन किया और अन्न देकर उनके प्राणोंकी रक्षा की। वे प्रतिदिन प्रातःकाल अन्नके बीज मैदानमें बो देते। बीज उनके तपके प्रभावसे संध्याके पूर्व ही बढ़कर फल दे देते। अन्न एकत्रित कर लिया जाता। वही ऋषियोंके आहारके काम आता।

बारह वर्षके बार पुनः वृष्टि हुई। तप्त वसुन्धरा शीतल हो गयी। सर्वत्र हरियाली दीखने लगी। उस समय कैलास पर्वतपर महासती श्रीपार्वतीने श्रीशंकरजीसे कहा—'आप

---

१. पुरन्दर उवाच—
नमो देव्यै महादेव्यै सुरभ्यै च नमो नमः। गवां बीजस्वरूपायै नमस्ते जगदम्बिके॥
नमो राधाप्रियायै च पद्मांशायै नमो नमः। नमः कृष्णप्रियायै च गवां मात्रे नमो नमः॥
कल्पवृक्षस्वरूपायै सर्वेषां सततं परे। क्षीरदायै धनदायै बुद्धिदायै नमो नमः॥
शुभायै च सुभद्रायै गोप्रदायै नमो नमः। यशोदायै कीर्तिदायै धर्मदायै नमो नमः॥
(देवीभागवत ९। ४९। २४—२७)

२. ब्रह्मवैवर्तपुराणके प्रकृतिखण्ड अध्याय ४७ में यही आख्यान प्रायः यथावत् वर्णित है।

गङ्गाजीको सिरपर और मुझे अपने अङ्कमें रखकर मेरा अपमान करते हैं।' परंतु श्रीशंकरजीने उनकी बातपर कोई ध्यान नहीं दिया।

खिन्न होकर श्रीपार्वतीजीने अपने आज्ञाकारी पुत्र श्रीगणेशजीके पास जाकर अपनी व्यथा-कथा कह सुनायी। माताके दुःखसे दुखित होकर श्रीगणेशजी अपने बड़े भाई कार्तिकेयके साथ दीन ब्राह्मणके वेशमें महर्षि गौतमकी कुटियापर पहुँचे। वहाँपर उन्होंने ऋषियोंसे कहा—'ऋषियो! दुर्भिक्ष समाप्त हो गया। पृथिवी अन्न-जलसे पूरित हो गयी है। अब आप लोगोंका इस आश्रमपर अधिक समयतक ठहरना उचित नहीं है।'

ब्राह्मण-वेषधारी श्रीगणेश और कार्तिकेयकी यह बात ऋषियोंके मनमें बैठ गयी। वे चलनेके लिये तैयार हो गये। उस समय महर्षि गौतमने कहा—'दुष्कालके समय अन्न देकर मैंने आपलोगोंके प्राणोंकी रक्षा की है। अब मेरी इच्छाके विपरीत आपलोगोंका जाना उत्तम नहीं है। यहाँ कुछ समयतक और रहनेके लिये मैं आपलोगोंसे अनुरोध करता हूँ।'

गौतमकी बात सुनकर ऋषियोंने अपने जानेका विचार छोड़ दिया।

तब श्रीगणेशजीने श्रीकार्तिकेयजीसे कहा—'आप गौतम ऋषिके खेतमें गायका रूप धारण करके चले जायँ। ऋषिकी दृष्टि पड़ते ही आप गिर पड़ें, जैसे मृत्यु हो गयी हो।' कार्तिकेयने वैसा ही किया। गायके वेषमें वे गौतम ऋषिके खेतमें जाकर खेती नष्ट करने लगे। गौतमने इन्हें देखा, बस, वे मृत्युतुल्य हो धराशायी हो गये।

यह दृश्य देखते ही ऋषिगण वहाँसे चलनेकी तैयारी करने लगे। गौतमके आग्रह करनेपर ऋषियोंने कहा—'गायकी मृत्युसे यह पापस्थली हो गयी है। अतः नृपश्रेष्ठ भगीरथकी भाँति यदि आप श्रीगङ्गाजीको यहाँ लाकर गायको जीवित और इस स्थानको पवित्र करें तो हमलोग यहाँ रह सकते हैं।'

ऋषियोंकी बात सुनकर महर्षि गौतम श्रीगङ्गाजीको लानेके लिये त्र्यम्बक पर्वतपर जाकर तपस्या करने लगे। अन्तमें प्रसन्न होनेपर श्रीशंकरजीने उन्हें श्रीगङ्गाजीको देनेका वचन दिया। तब गौतमने पुनः कहा—'भगवन्! ये गङ्गाजी गायका उद्धार करके सागरमें मिलें और मेरे नामको भी प्रसिद्ध करें।' श्रीशंकरजीने कहा—'यह गङ्गा गौतमी और गोदावरीके नामसे प्रसिद्ध होगी तथा अत्यन्त पुण्य देनेवाली होगी।'

इतना कहकर श्रीशंकरजीने श्रीगङ्गाजीको महर्षि गौतमके हाथों दे दिया। गौतम प्रसन्नचित्त हो ब्रह्मगिरि लौटे। वहाँपर श्रीगङ्गाजीकी तीन धार हो गयी। एक धार मृत गौको जीवित कर दक्षिणकी ओर सागरमें मिल गयी। दूसरी

गौतम ऋषिका गोदावरी लाना

धार पृथिवीको वेधकर पातालमें और तीसरी आकाश-मार्गसे स्वर्गको चली गयी। दक्षिण सागरमें मिलनेवाली पुण्यतोया गङ्गा गोदावरी और गौतमीके नामसे प्रसिद्ध है।

(ब्रह्मपुराणान्तर्गत गौतमी-माहात्म्य)

गोकृते स्त्रीकृते चैव गुरुविप्रकृतेऽपि वा। हन्यन्ते ये तु राजेन्द्र शक्रलोकं व्रजन्ति ते॥

गोरक्षा, अबला स्त्रीकी रक्षा, गुरु और ब्राह्मणकी रक्षाके लिये जो प्राण दे देते हैं, राजेन्द्र युधिष्ठिर! वे मनुष्य इन्द्रलोक (स्वर्ग) में जाते हैं। (महा०, आश्व०, वैष्णव०)

गौका अग्रपूजासे सम्मान

[श्रीजगन्नाथजी वेदालङ्कार]

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां
न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु॥

इस स्वस्ति-बोधक श्लोकका आशय यह है कि पृथ्वीतलके सभी राजा न्यायपूर्ण मार्गसे सब प्रजाओंका पालन करें, गौओं और ब्राह्मणोंका सदा-सर्वदा कल्याण हो तथा समस्त प्राणी सुखी रहें।

प्राचीन कालमें गौओंका अग्रपूजासे सम्मान किया जाता था। उन्हें सब प्रकारकी सुख-सुविधा प्रदान की जाती थी।

अथर्ववेदके सूक्त ६। २७। ३ से लेकर ६। २८। १-२ तक कहा गया है कि '**शिवो गोभ्य उत पुरुषेभ्यो नो अस्तु।**' '**परि गां नयामः।**' '**परीमे गामनेषत।**' अर्थात् मनुष्य अपने लिये ही नहीं गो-देवताओंके लिये भी कल्याणकारी बनें। वे गौओंको चरनेके लिये बाहर ले जायँ, जिससे वे संतुष्ट रहें, चरकर पूर्णतया तृप्त हो जायँ, नीरोग रहें। वे मनुष्यों और गौओंको समानरूपसे सुखी रखें। गायोंको सर्वप्रथम मान्यता मिले—इस प्रकारकी बुद्धि हमें प्राप्त हो। गौको अग्रभागमें रखनेका अर्थ उसका मुख्यतया सत्कार करना है। प्राणियोंको अग्रपूजाका मान देते हुए सर्वप्रथम मान गौओंको देना चाहिये। उन्हें प्रमुख स्थान दें, तभी मानवजातिका कल्याण होगा। सभी प्रकारके धनों और अन्नोंमें गोरसका स्थान प्रमुख है। खाने-पीनेमें दूध, दही, घी, छाछ आदि गव्य पदार्थ प्रमुख रहने चाहिये। इसके लिये अग्रपूजाका स्थान गौको देना चाहिये।

गौओंके चरनेके लिये गोचरभूमिकी प्रथा अत्यन्त प्राचीन है। अथर्ववेदमें कहा गया है—

एता एना व्याकरं खिले गा विष्ठिता इव।
रमन्तां पुण्या लक्ष्मीर्याः पापीस्ता अनीनशम्॥

(७। १२०। ४)

अर्थात् 'गोचरभूमिपर बैठी हुई गायोंके समान इन मनोवृत्तियोंको मैं अलग-अलग करता हूँ। जो पुण्यकारक सुविचाररूप लक्ष्मियाँ हैं वे आनन्दसे मेरे अंदर रहें। जो पापी वृत्तियाँ हैं उनका मैं नाश कर चुका हूँ।' इस मन्त्रमें गोचरभूमिमें गौओंके बैठनेका उल्लेख है। गोचरभूमिमें गौओंको रहने देना है और अन्य पशुओंको वहाँसे दूर करना है। गोचरभूमिमें केवल गौएँ ही चरती रहें, अन्य पशु वहाँका घास न खायें। गोचरभूमिपर जल-सिंचनकी उत्तम व्यवस्था करनी चाहिये। उसपर जल-सिंचन करे, जिससे पर्याप्त मात्रामें जल मिलकर उत्तम घास जमे, जो गौओंको खानेके लिये मिले। वेद कहता है—गौएँ जौके खेतकी ओर जाती हैं—

सोम रारन्धि नो हृदि गावो न यवसेष्वा।
मर्य इव स्व ओक्ये॥ (ऋ० १। ९१। १३)

'हे सोमदेव! हमारे अन्तःकरणमें तू जिस प्रकार गौएँ जौके खेतोंमें आनन्दपूर्वक संचरण करती हैं और मानव अपने निजी घरमें सुखी होता है, वैसे ही रमण कर।'

इसके अतिरिक्त गायोंको घास और पानी शुद्ध मिलना चाहिये। उनके लिये उत्तम प्याऊ बनाने चाहिये।

ऋग्वेद (१। ७। ३) में गौओंको चरनेके लिये पहाड़ोंपर भेजनेका निर्देश किया गया है। पर्वत भी गोचरभूमि है। पर्वत गायोंका संरक्षण करनेवाला है। '**गोभिरद्रिमैरयत्।**' अर्थात् अनेक गौएँ साथ लेकर उन्हें पर्वतपर चरानेके लिये जाना उचित है। पर्वतको गोत्र कहा गया है। वह गौओंका संरक्षक है।

हमारी गौएँ जिधर पानी पीती हैं, उन नदियोंकी स्तुति की जाती है। गौओंके कारण नदियोंका महत्त्व बढ़ जाता है। हमारी गौएँ जहाँ पानी पीती हैं, वे दिव्य जल-प्रवाह पवित्र हों।

'अपो देवीरुप ह्वये यत्र गावः पिबन्ति नः।
सिन्धुभ्यः कर्त्वं हविः।'

(ऋ० १। २३। १८, अथर्व० १। ४। ३)

'उन नदियोंको मैं हविर्भाग देता हूँ। जलके अंदर

अमृत है—'**अप्सु अन्तः अमृतम्**', जलोंमें ओषधि गुण है—'**अप्सु भेषजम्**।'

गोमाता पूज्य है

यजुर्वेद (३। २०) में कहा गया है कि 'हे गौओ! तुम पूज्य हो, मैं भी तुम्हारी-जैसी पूज्यता प्राप्त करूँ—**महस्थ महो वो भक्षीय यूयं महः स्थ पूज्यरूपाः स्थ। अतो वो युष्माकं पूज्यानां प्रसादात् अहमपि महो भक्षीय पूज्यत्वं सेवेय**।'

पश्वे तोकाय शं गवे। (ऋ० ८। ५। २०) अर्थात् हमारे पशु, संतान और गौके लिये सब प्रकारकी शान्ति प्राप्त हो।

गाय धरतीके लिये वरदान है

[योगिराज श्रीबलिराजसिंहजी]

वेदों, पुराणों, स्मृतियों, श्रीमद्भागवत, महाभारत तथा अन्यान्य ग्रन्थोंमें गोमहिमापर प्रचुर साहित्य उपलब्ध होता है। गोमातामें समस्त देवताओं, ऋषियों, मुनियों और तीर्थोंका निवास बताया गया है। गोरक्षाके लिये ईश्वरको स्वयं अवतार लेना पड़ता है। गाय धरतीके सदृश मानी जाती है। राक्षसोंके अत्याचारसे पीडित होकर धरतीद्वारा गायका रूप धारण कर परमात्माकी गुहार लगानेकी घटना धर्मग्रन्थोंमें वर्णित है। गोमहिमा अनन्त है, जिसके पीछे परमब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णके स्वरूपमें विचरण करता है।

गोदुग्धसे चमत्कारी उपचार

हमारे यहाँ गायको माता और दुग्धको अमृत माना जाता है और इसका चमत्कारी प्रभाव आज भी दिखायी पड़ता है। घटना सम्भवतः १९४५ के आस-पासकी है। काशीके प्रख्यात वैद्य पं० राजेश्वरदत्त शास्त्रीके यहाँ बिहारके एक सम्पन्न जमींदार अत्यन्त क्षीण अवस्थामें अपनी पत्नीको लेकर उपचारके लिये आये। उनकी पत्नी ३० वर्षकी आयुमें ही सूखकर काँटा हो गयी थीं। पूरा शरीर झँवरा गया था और वे भयानक पीड़ासे बेचैन थीं। जमींदारने बताया कि कई वर्षोंसे वे उपचारके लिये चारों ओर दौड़कर थक गये, किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। किसीको इनके रोगका थाह नहीं लगता। यह सुनकर वैद्यजीने मुस्कराते हुए कहा—'अच्छा अब आप शान्त हो जायँ।' इतना कहकर वैद्यजीने उनकी पत्नीकी नाड़ी देखी। कुछ देर विचार किया और जमींदारको एकान्तमें बताया कि इन्हें कैंसर हुआ है, किंतु घबरानेकी कोई बात नहीं है। भगवान्का नाम लेकर धैर्य और परहेजसे यदि दवा करेंगे तो छः माहमें ठीक हो जायँगी। इनकी दवा और भोजन केवल काली (श्यामा) गायका दूध और काली तुलसीकी पत्ती होगा। अतः ये जितना खा-पी सकें वही दूध और पत्ती दीजिये। यदि स्वाद बदलनेकी इच्छा हो तो मूँगकी दालका रस और जौकी रोटी दे सकते हैं। साथमें कोई भी दवा लेना गोदुग्ध और तुलसीका अपमान होगा और उससे हानि भी हो सकती है। गाय और तुलसी दोनों हमारी माताएँ हैं। वैद्यजीकी बतायी दवापर पूर्ण विश्वास रखते हुए वे अपनी पत्नीके साथ वापस लौट आये और तदनुसार ही गोदुग्ध और तुलसीका सेवन करने लगे। धीरे-धीरे समय बीतता गया।

छः माह बाद जमींदार अपनी पत्नीके साथ जब वाराणासीमें वैद्यजीके यहाँ आये तो स्वस्थ, सुन्दर एवं प्रसन्न महिलाको देखते ही वे पहचान गये और स्वयं हर्षित होकर बोल पड़े—'देखा न गोदुग्ध और तुलसीका चमत्कार।' जमींदारने बताया—उन्होंने काली तुलसीका एक बड़ा बगीचा ही लगवा दिया था और चार-पाँच काली गायें रख ली थीं। महीनेभर सेवन करते-करते उनकी पत्नी पर्याप्त स्वस्थ हो गयीं। जमींदारने श्रद्धापूर्वक वैद्यजीको बहुत आग्रहपूर्वक कुछ देना चाहा और ग्रहण करनेकी प्रार्थना भी की, किंतु वे बोले—'मैंने अपने औषधालयसे आपको कोई दवा दी नहीं तो पैसे किस बातके लूँ। हाँ, गोमाताने आपपर कृपा की है, अतः यह धन किसी गोशालाको दान दे दीजिये।'

वैद्य पं० शास्त्रीके दुग्धोपचारकी इस चमत्कारी घटनाकी चर्चा वाराणसीके बुजुर्ग आज भी करते हैं।

कैंसरपर सम्पूर्ण विश्वमें रिसर्च हो रहा है और अभीतक यह रोग असाध्य ही माना जाता है, किंतु शास्त्रीजीने पचासों वर्ष पूर्व गोदुग्धके बलपर सफलता प्राप्त की थी। इसमें निश्चित ही गोमहिमाके साथ ही उनकी आस्था एवं परोपकारी भावना जुड़ी हुई थी।

गोघृतके चमत्कार

श्यामा गायके घृतके प्रयोगसे मैंने स्वयं अनेक दुःखी व्यक्तियोंको रोगमुक्त होते देखा है। इससे गठिया, कुष्ठरोग, जले तथा कटे घावके दाग, चेहरेकी झाँईं, नेत्र-विकार, जलन, मुँहका फटना आदिपर आश्चर्यजनक लाभ होता है।

इसी प्रकारकी एक घटना और है। कुछ वर्ष पूर्व एक व्यक्तिको गठिया रोग हो गया। रुग्ण व्यक्ति स्वयं सम्पन्न थे और उनके यहाँ सौभाग्यसे एक श्यामा गाय भी थी। उस गायको एक माहतक हरे चारेके अतिरिक्त ढाई-ढाई सौ ग्रामकी मात्रामें गेहूँ, गुड़, कच्ची गरी, कच्ची मूँगफली, आमा हल्दी, चना, सफेद दूब, बेलकी पत्ती, महुआ, सेंधा नमक, सफेद नमक तथा अजवाइन और मेथी ५०-५० ग्राम प्रतिदिनके हिसाबसे एक माहतक खिलाया गया। गर्मीका समय था, अतः गायको अत्यन्त स्वच्छ वातावरणमें रखकर दोनों समय नहलाया-धुलाया जाता था। प्रातः और सायं थोड़ा गुड़ खिलाकर तीसरे दिनसे निकाले गये उक्त गायके दूधसे ग्रामीण पद्धतिके अनुसार गोहरीकी आँचपर मिट्टीके पात्रमें पकाये गये दूधसे दही तैयार कर उसका घी निकाला गया और इसी घीकी मालिशसे हफ्ते भरमें गठिया गायब हो गया। इस घटनासे आश्चर्यमिश्रित प्रसन्नता हुई और उस घीका प्रयोग कई लोगोंपर किया गया। जिसमें शत-प्रतिशत सफलता मिली। मेरे एक मित्रकी ऑपरेशनके दौरान नाकमें हफ्तों नली पड़नेके कारण आवाज चली गयी थी। प्रयास करनेके बावजूद १५-२० दिन बाद भी वे कुछ बोल नहीं पा रहे थे। मजबूर होकर वे अपनी बातें कागजपर लिख देते थे। तीन-चार दिन गलेमें उक्त घीकी मालिश करते ही उनकी आवाज खुलने लगी और ८-१० दिनमें वे पूर्ववत् बोलने लगे।

तीसरी घटना एक युवकसे सम्बन्धित है। प्रिंटिंग मशीनसे दबकर उसके बायें हाथकी हथेली तथा कई अंगुलियाँ बुरी तरह फट गयीं। अँगूठा तो कटकर अलग हो गया। तत्परतासे ऑपरेशन एवं दवाके बाद दो-ढाई माहमें जब उसका हाथ ठीक हो गया तो चमड़ेके तनाव और ऑपरेशनके दागसे उसकी अंगुलियाँ खुल नहीं पाती थीं और पूरी हथेली बदसूरत लग रही थी। इस घीकी मालिशसे महीने भरमें ही शेष चारों अंगुलियाँ और हथेली पूर्ववत् हो गयीं और ऑपरेशनका दाग एक सामान्य रेखाके रूपमें शेष रह गया।

इसी प्रकार एक और घटना है। वाराणसी नगरके एक सम्भ्रान्त परिवारकी सुशील एवं सुन्दर कन्याके गलेमें जगह-जगह सफेद दाग हो जानेसे पूरा परिवार चिन्तित था। लड़की स्वयं हीन भावनाके कारण उदास दिखायी देती थी। उनके आग्रहपर उस लड़कीको श्यामा गायका वही घृत लगानेके लिये दिया गया। महीना बीतते-बीतते सफेद दागके स्थानपर लाली आने लगी और दूसरे माहमें उसकी त्वचा एक रंगकी हो गयी। उसे देखकर कोई कह नहीं सकता कि गलेमें कभी कोई दाग था।

इसी प्रकार जोड़ोंमें दर्द, नेत्र-सम्बन्धी विकार, चोट, सूजन, फोड़े-फुंसी आदि अनेक विकारोंसे पीडित अनेक लोगोंका उक्त घृतसे उपचार किया गया, जिसमें आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त हुई।

गोमूत्र एवं गोमयके दिव्य गुण

आयुर्वेदिक ग्रन्थोंमें गायकी बड़ी महिमा गायी गयी है। धार्मिक अनुष्ठानोंमें पञ्चगव्यका प्रयोग सर्वविदित है। गायका गोबर इतना पवित्र माना जाता है कि उससे लीपे बिना पूजा अथवा यज्ञस्थल पवित्र नहीं होता। गोबरमें रोग-निवारणके आश्चर्यजनक गुण पाये जाते हैं। इसकी गन्धसे हानिकारक विषैले जीव-जन्तु मर जाते हैं। गोमूत्रके बारेमें 'भावप्रकाश' कहता है कि यह चरपरा, कड़ुआ, तीक्ष्ण, गर्म, खारा, कसैला, हल्का, अग्निप्रदीपक, मेधाके लिये हितकर, कफ, वात, शूल, गुल्म, उदर, खजुली, नेत्ररोग, मुखरोग, किलास, आमवात-रोग, बस्तिरोग, कोढ़, खाँसी, श्वाँस, सूजन, कामला एवं पांडुरोग-नाशक है। कानमें डालनेसे कानका दर्द दूर हो जाता है।

अंग्रेजी दवाओंसे प्रथम चरणमें फाइलेरियाको कुछ दिनोंके लिये भले दबा दिया जाय, किंतु पतले धागेकी तरह लंबे इसके कीड़ोंको केवल गोमूत्रसे ही समाप्त किया जा

सकता है। ज्ञातव्य है कि ये कीड़े शरीरके भीतर रातमें डोलकर पीड़ा पहुँचाते हैं और पीलपाँव आदिको उभारकर शरीरको विकृत तथा स्वास्थ्यको चौपट कर देते हैं। फाइलेरियासे पीडित कई व्यक्तियोंने चालीस दिनतक लगातार गोमूत्र पीकर फाइलेरियासे मुक्ति पायी है, यह मेरा अपना अनुभव है।

यह सत्य है कि गोवंशसे सम्पूर्ण भारत उऋण नहीं हो सकता, क्योंकि अनादिकालसे इसपर हमारा भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन आधारित रहा है, किंतु इधर कुछ दशकोंसे वैज्ञानिक प्रयोगोंके कारण कृषिका मशीनीकरण हो गया और बाजारू डिब्बे-बंद घृत और दूधसे लोग अब काम चलाने लगे। ऐसी दशामें हमें गोवंश अर्थहीन-सा प्रतीत होने लगा।

नास्तिकता, स्वेच्छाचरण एवं धर्मदर्शनके प्रति उपेक्षित भाव होनेके कारण गायके धार्मिक एवं पारम्परिक मूल्योंको लोग भूल गये। यही कारण है कि आज गोवंशपर कुठार उठानेमें कोई हिचक और भय नहीं रह गया। गोवंशकी रक्षाके लिये आन्दोलन और सत्याग्रह करनेवालोंकी भी कमी नहीं है, किंतु इसमें पूर्ण सफलता तभी मिलेगी, जब सम्पूर्ण मानव-समाज गोमहिमाकी जानकारी प्राप्त कर लेगा। प्राणी जब यह जान जायगा कि गाय धरतीके लिये वरदान है तो उसकी रक्षामें वह स्वयं तत्पर होगा। किसीके उपदेश, आदेशकी आवश्यकता नहीं होगी।

गौ भारतीय संस्कृतिका मेरुदण्ड

[डॉ० श्रीबुद्धसेनजी चतुर्वेदी]

गौ हमारी संस्कृतिका प्राण है। यह गङ्गा, गोमती, गायत्री, गीता, गोवर्धन और गोविन्दकी भाँति पवित्र है। गोपालन, गोसेवा, गो-दान हमारी संस्कृतिकी महान् परम्परा रही है। गोसेवा सुख और समृद्धिका मार्ग प्रशस्त करती है। यह लक्ष्मी-प्राप्ति, विद्या-प्राप्ति और पुत्र-प्राप्तिका साधन है। गो-दर्शन, गोस्पर्श, गो-पूजन तथा गो-स्मरणसे मनुष्यके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। गोमूत्र, गोबर, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत आदि सभी पदार्थ अति पावन, आरोग्यप्रद, आयुवर्धक और शक्तिवर्धक हैं।

गौके समान इस संसारमें कोई क्षमाशील प्राणी नहीं है। गौ अपने अमृतमय गोरसका पान कराकर इस भौतिक जगत्में हमारा कल्याण करती है और मृत्युके पश्चात् भी हमारे कल्याणका मार्ग प्रशस्त करती है। परलोकगामी गोदायी पथिक गौ माताकी पूँछ पकड़कर वैतरणी पार कर लेता है। महाभारतके अनुशासनपर्व (५१। ३३) में लिखा है—

गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।
गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किंचित् परं स्मृतम्॥

'गौएँ स्वर्गकी सीढ़ी हैं, गौएँ स्वर्गमें भी पूजनीय हैं। गौएँ समस्त मनोवाञ्छित वस्तुओंको देनेवाली हैं। अतः गौओंसे बढ़कर और कोई श्रेष्ठ वस्तु नहीं है।'

गौसे चारों पुरुषार्थों—धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी सिद्धि होती है। गौ सर्वदेवमयी और सर्वतीर्थमयी है। गोदर्शनसे समस्त देवताओंके दर्शन और समस्त तीर्थोंका पुण्य-लाभ प्राप्त होता है। जहाँ गौएँ निवास करती हैं, वहाँ सर्वत्र सुख और शान्तिका वास होता है। गौके शरीरमें ३३ कोटि देवता निवास करते हैं। गौके खुरसे उड़नेवाली धूल भी अत्यन्त पवित्र है। श्रीकृष्ण गाय चराकर संध्या-समय जब घर लौटते हैं तो गोरजसे अलंकृत उनके मुखकी अलौकिक शोभा देखने योग्य होती है।

गौएँ सर्वदा लक्ष्मीकी मूल हैं। गौमें पापकी स्थिति नहीं होती। गौ और मनुष्यमें परस्पर बन्धुत्वका सम्बन्ध है। गौ-विहीन गृह बन्धुशून्य गृह है—

गावो बन्धुर्मनुष्याणां मनुष्या बान्धवा गवाम्॥
गौश्च यस्मिन् गृहे नास्ति तद् बन्धुरहितं गृहम्।

(पद्म०, सृष्टि० ५०। १५५-१५६)

समुद्र-मन्थनके समय प्राप्त होनेवाले रत्नोंमें कामधेनुका भी उल्लेख है, जो गोधनकी श्रेष्ठताको इंगित करता है। पुराणोंमें लिखा है कि सर्वप्रथम वेद, अग्नि, गौ और ब्राह्मणोंकी उत्पत्ति यज्ञ-चक्र चलानेके प्रयोजनसे हुई। ब्राह्मणद्वारा यज्ञानुष्ठान सम्पादित किये जाते हैं। अग्निद्वारा देवताओंको आहुतियाँ दी जाती हैं—'**अग्निमुखा हि देवा**

भवन्ति' तथा गौ ही हमें देवताओंको अर्पित करने योग्य हवि प्रदान करती है। गौके घृतसे देवताओंको हवि दी जाती है तथा गो-संतति (बैलों) द्वारा भूमिको जोतकर गेहूँ, चावल, जौ, तिल आदि हविष्यान्नका उत्पादन किया जाता है। यज्ञभूमिको गोमूत्रसे शुद्ध करके गोबरके कंडोंद्वारा यज्ञाग्निको प्रज्वलित किया जाता है। यज्ञ प्रारम्भ करनेसे पूर्व शरीर-शुद्धिके लिये पञ्चगव्य लेना होता है, जो गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, गोमूत्र और गोबरसे बनाया जाता है।

अग्निपुराणमें लिखा है कि गायमें सब देवताओंका निवास होनेसे इसका दान अत्यन्त पुण्यकारी है। पौराणिक आख्यानों आदिसे स्पष्ट होता है कि प्राचीन कालसे ही सम्माननीय अतिथियोंकी गोदानद्वारा अभिनन्दन करनेकी परम्परा प्रतिष्ठित थी। अक्रूरके व्रजमें पहुँचनेपर श्रीकृष्णने उनका मधुपर्क, पवित्र अन्न तथा गौ भेंट करके अभिनन्दन किया (श्रीमद्भा० १०। ३८। ३८-३९)। इसी प्रकार सुदामाके द्वारकापुरी पहुँचनेपर श्रीकृष्णने उनका स्वागत 'गौ' भेंट करके किया। इतना ही नहीं जनकपुरीमें राजा बहुलाश्वने श्रीकृष्णका सम्मान उन्हें मधुपर्कके साथ-साथ गाय और बैल भेंट करके किया। हिंदू-विवाहमें कन्या-पक्षके लोग वरको कन्यादानके बाद उपहारस्वरूप आज भी गोदान करना अच्छा समझते हैं।

महाभारतमें लिखा है कि अनेक पुण्योंके प्रभावसे गोलोककी प्राप्ति होती है। गोलोकमें न कोई अनिष्ट होता है, न कोई व्याधि होती है और न किसी प्रकारकी कोई आपत्ति आती है।

भगवान् श्रीकृष्ण 'गोविन्द' और 'गोपाल' बनकर गोवर्धनको धारण किया और गौ-गोपोंकी रक्षा की। श्रीकृष्णका गौओंके साथ अभिन्न सम्बन्ध है। गौएँ भी अपनेको श्रीकृष्णके सम्पर्कमें आकर धन्य समझती हैं। वे उन्हें स्नेहमयी दृष्टिसे निहारती हैं। वंशीकी टेर सुनकर चाहे वे कितनी भी दूर क्यों न हों दौड़कर उनके पास पहुँचकर चारों ओरसे उन्हें घेरकर खड़ी हो जाती हैं। व्रजके भक्त कवियोंने लिखा है—

'गोविन्द गिरि चढ़ गाय बुलावत।
गायँ बुलाई धूमर-धौरी टेरत वेणु बजाय॥'

गोविन्दको गायोंके बीच रहना ही रुचिकर लगता है। छीतस्वामीने लिखा है—

आगे गाय पाछें गाय इत गाय उत गाय
गोविन्द को गायन बिच रहिबौ ही भावै।
गायन के संग धावै गायन में सचुपावै
गायन की खुर रज अंग लपटावै॥
गायन सों बृज छायौ वैकुण्ठ हूँ कौ
सुख बिसराय कै गायन हेतु गिरि कर लै उठायो।
'छीत स्वामी' गिरिधारी विट्ठलेश वपुधारी
गोपन कौ वेष धारें गायन में आवै॥

गौओंके सम्मानकी गाथाएँ हमारे इतिहासमें भी भरी पड़ी हैं। सम्राट् दिलीपने गौकी रक्षाके लिये अपने प्राणोंकी आहुति देनेमें भी संकोच नहीं किया। महर्षि वसिष्ठ, महर्षि जमदग्नि, छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप, पंजाब-केसरी महाराजा रणजीतसिंह—सभी महान् गो-भक्त थे। मुसलमान सेनानायक जब यह अनुभव करते थे कि वे यहाँके वीर राजपूत योद्धाओंसे मोर्चा न ले सकेंगे तो अपनी सेनाके आगे गायें कर देते थे। वीर राजपूत पराधीनता स्वीकार कर लेते थे, लेकिन गौओंपर कभी शस्त्र नहीं उठाते थे। स्वामी दयानन्द सरस्वतीने स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि गौकी हत्या पूर्णतः त्याज्य है, क्योंकि इससे राजा और प्रजा दोनोंका समूल नाश हो जाता है।

उपर्युक्त दृष्टान्तोंसे यह स्पष्ट होता है कि गौ हमारी सभ्यता और संस्कृतिकी मेरुदण्ड है। गौविहीन भारतीय संस्कृतिकी तो कल्पना ही नहीं की जा सकती। गौ हमारी राष्ट्र-लक्ष्मी है। वह हमारी समृद्धिकी आधारशिला है। गौने हमें जीवनदायिनी शक्ति दी है, हमें आरोग्य, आनन्द और शान्ति प्रदान की है। गौ हमारी सारी आर्थिक योजनाओं और सारी आध्यात्मिक शक्तियोंकी स्रोत है। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि गौ तो हमारी कल्याणकारिणी माता है। कैसी विडम्बना है कि जिस गौको हम कामधेनु, अवध्या और वन्दनीया मानते हैं, उसीका वध करनेमें हमें आज तनिक भी संकोच नहीं होता! कितने दुःखका विषय है कि आज भौतिकवादी चकाचौंधसे हम इतने भ्रमित हो गये हैं कि हमें अपने कर्तव्योंका भी ज्ञान नहीं रहा। हमें यह भलीभाँति समझ लेना चाहिये कि गौके बिना हम शून्य हैं, अतः हमें उसे सदा नमस्कार करना चाहिये, सदा उसकी सेवा करनी चाहिये।

भारतीय संस्कृतिकी मूलाधार—गौ

[योगी श्रीआदित्यनाथजी]

गौ प्राचीन कालसे ही भारतीय धर्म और संस्कृति-सभ्यताकी मूलाधार रही है। भारतीय संस्कृतिने प्राचीन कालसे ही गोभक्ति, गोपालनको अपने जीवनका सर्वोत्कृष्ट कर्तव्य माना है। वेद-शास्त्र, स्मृतियाँ, पुराण तथा इतिहास गौकी उत्कृष्ट महिमाओंसे ओत-प्रोत हैं। स्वयं वेद गायको नमन करता है—

'अघ्न्ये ते रूपाय नमः'।

हे अवध्या गौ! तेरे स्वरूपको प्रणाम है। ऋग्वेदमें कहा गया है कि जिस स्थानपर गाय सुखपूर्वक निवास करती है, वहाँकी रजतक पवित्र हो जाती है, वह स्थान तीर्थ बन जाता है। हमारे जन्मसे मृत्युपर्यन्त सभी संस्कारोंमें पञ्चगव्य और पञ्चामृतकी अनिवार्य अपेक्षा रहती है। गोदानके बिना हमारा कोई भी धार्मिक कृत्य सम्पन्न नहीं होता। गौ अपनी उत्पत्तिके समयसे ही भारतके लिये पूजनीय रही है। उसके दर्शन, पूजन, सेवा-शुश्रूषा आदिमें आस्तिक जन पुण्य मानते हैं। व्रत, जप, उपवास सभीमें गौ और गोप्रदत्त पदार्थ परमावश्यक है। गायका दूध अमृततुल्य होता है जो शरीर और मस्तिष्कको पुष्ट करता है। गोमूत्र गङ्गाजलके समान पवित्र माना जाता है और गोबरमें साक्षात् लक्ष्मीका निवास है। शास्त्रोंके अनुसार हमारे अङ्ग-प्रत्यङ्ग, मांस-मज्जा-चर्म और अस्थिमें स्थित पापोंका विनाश पञ्चगव्य (गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, गोमूत्र एवं गोमय) के पानसे होता है। आयुर्वेद और आधुनिक विज्ञानके अनुसार भी शरीर-स्वास्थ्य एवं रोग-निवृत्तिके लिये गायके दूध, दही, मट्ठा, मक्खन, घृत, मूत्र, गोबर आदिका अत्यन्त उपयोग है।

गायके शरीरमें सभी देवताओंका निवास है। अतः गौ सर्वदेवमयी है। पुरातन कालसे ही भारतीय संस्कृतिमें गाय श्रद्धाका पात्र रही है। भगवान् श्रीरामने यौवनमें प्रवेश करते समय अपने जीवनका लक्ष्य **'गोब्राह्मणहितार्थाय देशस्यास्य सुखाय च'** के पवित्र संकल्पकी पूर्तिके लिये ही उद्घोषित किया था। गायके प्रति भारतीय भावना कितनी श्रद्धा और कृतज्ञतासे ओत-प्रोत थी, यह इस श्लोकसे स्पष्ट होता है—

गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च।
गावो मे सर्वतश्चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

पुराणोंमें पद-पदपर गौकी अनन्त महिमा गायी गयी है। भारतीय संस्कृति ही नहीं, अपितु सारे विश्वमें गौका बड़ा सम्मान था। जैसे हम गौकी पूजा करते हैं, उसी प्रकार पारसी लोग साँड़की पूजा करते हैं। मिश्रके प्राचीन सिक्कोंपर बैलोंकी मूर्ति अङ्कित रहती है। ईसासे कई वर्ष पूर्व बने हुए पिरामिडोंमें बैलोंकी मूर्ति अङ्कित है।

भारतीय संस्कृति यज्ञ-प्रधान है। वेद, रामायण, महाभारत आदि धार्मिक तथा ऐतिहासिक ग्रन्थोंमें यज्ञको ही सर्वोच्च स्थान दिया गया है। यज्ञ करनेसे पृथिवी, जल, वायु, तेज, आकाश—इन पञ्चभूतोंकी शुद्धि होती है। पञ्चभूतोंके सामञ्जस्यसे मानव-शरीर बना है। अतः शरीरको सुरक्षित रखनेके लिये पञ्चभूतोंका शुद्ध रूपोंमें उपयोग आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। यज्ञ करनेसे जो परमाणु निकलते हैं, वे बादलोंको अपनी ओर खींचते हैं। जिससे वर्षा होती है। यज्ञमें गायके सूखे गोबरका प्रयोग किया जाता है। इस सूखे गोबरसे एक प्रकारका तेज निकलता है, जिससे लाखों विषैले कीट तत्क्षण ही नष्ट हो जाते हैं। गौके सूखे गोबरको जलानेसे मक्खी-मच्छर आदि मर जाते हैं। गौके दूध, दही और घी आदिमें वे सब पौष्टिक पदार्थ वर्तमान हैं जो अन्य किसी दुग्धादिमें नहीं पाये जाते। गोमूत्रमें कितने ही छोटे तथा बड़े रोगोंको दूर करनेकी शक्ति है, इसके यथाविधि सेवन करनेसे सभी प्रकारके उदर-रोग, नेत्ररोग, कर्णरोग आदिको मिटाया जा सकता है। कई संक्रामक रोग तो गौओंके स्पर्श की हुई वायु लगनेसे ही निवृत्त हो जाते हैं। गौके सम्पर्कमें रहनेसे चेचक-जैसे रोग नहीं होते। धर्म और संस्कृतिकी प्रतीक होनेके साथ-साथ गाय भारतकी कृषि-प्रधान अर्थ-व्यवस्थाकी भी रीढ़ है। कौटिल्य-अर्थशास्त्रमें गोपालन और गोरक्षणको बहुत महत्त्व दिया गया है। जिस भूमिमें खेती न होती हो उसे गोचर बनानेका सुझाव अर्थशास्त्रका ही है। गौ धर्म और अर्थकी प्रबल पोषक है। धर्मसे मोक्षकी प्राप्ति होती है तथा अर्थसे कामनाओंकी सिद्धि

होती है। इस प्रकार गौसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति होती है। इसीलिये प्राचीन कालसे ही गौका भारतीय जीवनमें इतना ऊँचा महत्त्व है। हमारे देशमें गोपालन पश्चिमी देशोंकी भाँति केवल दूधके लिये नहीं होता है, प्रत्युत अमृततुल्य दूधके अतिरिक्त खेत जोतनेके लिये एवं भार ढोनेके लिये बैल तथा भूमिकी उर्वरता बनाये रखनेके लिये उत्तम खाद भी हमें गायसे प्राप्त होती है, जिसके अभावमें हमारे राष्ट्रकी अर्थव्यवस्थाका संकट किसी प्रकार दूर नहीं किया जा सकता। हमारे देशमें लाखों एकड़ भूमि ऐसी है जहाँ ट्रैक्टरोंका उपयोग ही नहीं किया जा सकता।

आज गौको व्यावहारिक उपयोगिताकी दृष्टिसे भौतिक तुलापर तौला जा रहा है। हमें याद रखना चाहिये कि आजका भौतिक विज्ञान गौकी इस सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमोत्कृष्ट उपयोगिताका पता ही नहीं लगा सकता, जिसे भारतीय शास्त्रकारोंने अपनी दिव्य दृष्टिसे प्रत्यक्ष कर लिया था। गौकी धार्मिक महानता उसमें जिन सूक्ष्मातिसूक्ष्म-रूप तत्त्वोंकी प्रखरताके कारण है, उनकी खोज तथा जानकारीके लिये आधुनिक वैज्ञानिकोंके भौतिक यन्त्र सदैव स्थूल ही रहेंगे। यही कारण है कि इक्कीसवीं सदीकी ओर अग्रसर 'गैढ' विज्ञानवेत्ता भी गोमाताके लोम-लोममें देवताओंके निवास-रहस्य और प्रातः गोदर्शन, गोपूजन, गोसेवा आदिका वास्तविक तथ्य समझनेमें असफल रहा है। गौका धार्मिक महत्त्व भाव-जगत्से सम्बन्ध रखता है और वह शास्त्र-प्रमाणद्वारा शुद्ध भारतीय संस्कृतिके दृष्टिकोणसे ही जाना जा सकता है। इन सब विशेषताओंके कारण गौको भारतीय संस्कृतिका मूलाधार कहा गया है।

मा हिंस्यात् सर्वाभूतानि

[स्वामी श्रीविज्ञानानन्दजी सरस्वती]

भारतीय संस्कृतिका मूल वेद है, इसलिये विश्वभरकी संस्कृतियोंमें वह सर्वप्राचीन संस्कृति है। एकमात्र आर्य संस्कृति ही वैदिक कालसे लेकर आजतक अविच्छिन्न-रूपमें चलती चली आ रही है, यह इसकी विशेषता है। विश्वमें कितनी ही नवीन संस्कृतियाँ उत्पन्न हुईं तथा धर्म-मजहब उत्पन्न हुए और कालके मुखमें समा गये, इनकी कोई गिनती नहीं है। इस आर्य-हिन्दू-संस्कृतिपर भी समय-समयपर बड़ी-बड़ी विपत्तियाँ आती रहीं और उत्थान-पतन भी होता रहा, परंतु फिर भी वह आजतक जीवित है।

खेदकी बात है कि आज अदूरदर्शी अपने ही लोगोंको भारतीय धर्म-संस्कृतिमें न्यूनता दृष्टिगोचर होने लगी है और वे अन्य धर्मोंकी ओर आकृष्ट होते देखे जाते हैं। यदि हिन्दूधर्मकी वास्तविकता तथा वैज्ञानिकताका यथार्थ रहस्य ज्ञात हो जाता तो सम्भवतः उन्हें ऐसी भ्रान्ति नहीं होती। परंतु—'**स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।**' इस भगवद्वाक्यका हमें सदा स्मरण रखना चाहिये तभी हमारा कल्याण हो सकता है, अन्यथा नहीं।

इस संदर्भमें हमें पशुहिंसाके विषयमें कुछ विचार करना है, जो इस युगके लिये नितान्त आवश्यक है। हिन्दू-संस्कृतिमें गौका स्थान बहुत ऊँचा है। वैदिक कालके आर्यलोग मुख्य रूपसे गो-सेवक और गो-भक्त ही थे। गो-दुग्ध ही प्रधान पेय पदार्थके रूपमें आर्योंको अति प्रिय था। दूधसे पर्याप्त मात्रामें घी भी बनाते थे, जो यज्ञादिक कार्योंमें उपयोग करते थे और खानेके काममें भी आता था। गो-पालनसे बैल भी मिल जाते थे जो हल जोतने तथा बोझ ढोनेके लिये गाड़ीमें जोत दिये जाते थे। आज भी मनुष्य बैलोंका ऐसे कार्योंमें उपयोग करते हैं। गो-पालनसे हमें पर्याप्त मात्रामें गोबर भी मिल जाता है जो खेतके खादके रूपमें काम आता है।

गोधन आर्योंका प्रधान धन माना जाता था। वेदमें गायको 'अघ्न्या' नामसे कहा गया है, जिसका अर्थ है अवध्य, अर्थात् जो वधके योग्य नहीं है। बैलको वेदमें 'अघ्न्य' कहा है यथा—'**गवां यः पतिरघ्न्यः**' (अथर्व० ९। ४। १७)। यहाँ बैलको गायका पति 'अघ्न्य' कहा गया है।

बृहदारण्यकोपनिषद् (६।४।१८) में एक प्रसंग आया है, जिसमें आर्य लोगोंमें बैलका मांस खानेका भ्रम उत्पन्न हो जाता है। जो इस प्रकार है—

'अथ य इच्छेत् पुत्रो मे पण्डितो विगीतः समितिंगमः शुश्रूषितां वाचं भाषिता जायेत सर्वान् वेदाननुब्रुवीत सर्वमायुरियादिति माः सौदनं पाचयित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयाता-मीश्वरौ जनयित वा औक्षेण वार्षभेण वा।'

—इस बृहदारण्यकोपनिषद्के मन्त्रमें 'मांसौदन' और 'औक्षण' शब्दोंको देखकर साधारण व्यक्तियोंकी तो बात ही क्या बड़े-बड़े विद्वानोंको भी भ्रम हो जाता है कि प्राचीन कालमें आर्यलोग गो-मांसका उपयोग करते थे, जो वस्तुतः सरासर भ्रमात्मक है, असत्य है। इस मन्त्रका अर्थ इस प्रकार है कि—'जो पुरुष यह चाहता हो कि मेरा पुत्र जगत्में विख्यात पण्डित उत्पन्न हो और विद्वानोंकी सभामें निर्भीक होकर प्रगल्भतापूर्वक संस्कृत वाणी बोलनेवाला हो, वेद-शास्त्रोंको पढ़नेवाला तथा वेदके रहस्योंको जाननेवाला हो, पूर्ण आयु—सौ वर्षतक जीनेवाला हो , ऐसी संतान चाहनेवाले माता-पिताको चाहिये कि 'मांस' (ओषधि या फल-विशेषके गूदे) को घृतसिक्त करके गौके दूधसे खीर पकाये और उसके साथ 'उक्षा'—'सोम ओषधि और 'ऋषभ'—ऋषभक ओषधिको मिलाकर पकाये और उसका सेवन करे।' ऐसा करनेसे बलवान् तथा मेधावी पुत्र उत्पन्न होता है।

जहाँ वेदमें गायको 'अघ्न्या' और बैलको 'अघ्न्य अर्थात् अवध्य कहा है, वहाँ बैलके मांस खानेका स्वप्न देखना तो असंस्कृत मस्तिष्कवालेकी निराली सूझ ही हो सकती है, वैदिकोंकी नहीं। वेद-भाष्यकार सायणाचार्यने ऋग्वेदके (१।१६४।४३) मन्त्रके भाष्यमें 'उक्षा' शब्दका अर्थ 'सोम' नामक ओषधि ही बताया है। यथा—'**सोम उक्षाऽभवत्।**' सोम-रूप ओषधिका नाम उक्षा है। ऋषभ भी चिकित्सा-शास्त्रका ऋषभक नामक ओषधि ही है। अतः उक्त श्रुति-वाक्योंमें मांस-भक्षणकी गन्धतक नहीं है।

ऋग्वेदमें भी एक मन्त्र आता है, जिसमें लोगोंको गो-वधकी बात सूझती है। मन्त्र यह है—

कर्हि स्वित् सा त इन्द्र चेत्यासदघस्य यद्भिनदो रक्ष एषत्। मित्रक्रुवो यच्छसने न गावः पृथिव्या आपृगमुया शयन्ते॥

(ऋ० १०।८९।१४)

अर्थात्—'हे इन्द्र! जिस अस्त्र-वज्र या बाणको फेंककर तुमने पापी राक्षसको मारा था वह कहाँ फेंकने योग्य है? निश्चय ही जैसे पशुको मारनेवाला पशुको पीडित करके हनन करता है, वैसे ही तुम्हारे इस अस्त्रसे मित्रद्रोही दुष्ट शत्रुओंको भी युद्धमें पीडित करके सदाके लिये सुला दें। क्योंकि युद्धमें विपक्षी शत्रुओंको अस्त्रोंसे पीडित करके ही मारा जाता है।'

यहाँ विचारणीय यह है कि मन्त्रमें 'न' शब्द आया है, 'न' कार शब्द उपमा वाचक है, उपमासे विधि नहीं बनायी जाती है। अतः उक्त मन्त्रमें गो-वधका अर्थ निकालना सरासर भ्रम है, अवैदिकता मात्र है। यदि वैसा ही अर्थ होता तो उसी ऋग्वेदमें गोमांस-भक्षणका निषेध क्यों किया जाता? देखिये वेद-मन्त्र क्या कहता है—

यः पौरुषेयेण क्रविषा समङ्क्ते यो अश्व्येन पशुना यातुधानः।
यो अघ्न्याया भरति क्षीरमग्ने तेषां शीर्षाणि हरसापि वृश्च॥

(ऋ० १०।८७।१६)

अर्थात् 'जो सर्वभक्षी दानवीय वृत्तिवाला बनकर मनुष्यका, घोड़ेका और गायका मांस भक्षण करता हो, खाता हो तथा दूधकी चोरी करता हो, उसके सिरको कुचल देना चाहिये।' इस प्रमाणसे जब वेदने ही गौ, घोड़े तथा नर-मांस-भक्षणका निषेध किया है तब वही वेद गो-मांस-भक्षणका विधान कैसे कर सकता है। अर्थात् कदापि नहीं कर सकता, यह निश्चित है। मनु महाराजने कहा है—

नाकृत्वा प्राणिनां हिंसां मांसमुत्पद्यते क्वचित्।
न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांसं विवर्जयेत्॥

(५।४८)

इस श्लोकमें जीवहत्या तथा मांस-भक्षण आदिका जहाँ निषेध किया गया है वहाँ मांस-भक्षणके लिये गाय-बैलोंको मारना मांस-भक्षियोंके ललकभरे निकृष्ट विचार नहीं तो और क्या हो सकते हैं? अतः वेद तथा स्मृति आदि ग्रन्थोंमें कहीं भी गाय-बैलोंके मांस-भक्षणका विधान नहीं है। इस विषयमें हमारे वैदिक विद्वानोंने खूब विचार-विमर्श किया है और यही निष्कर्ष निकाला है कि प्राचीन वैदिक

कालमें आर्य लोग गो-वध नहीं करते थे और न वे उनका मांस ही भक्षण करते थे। अत: इस विषयमें प्रचलित ये बातें अनर्गल और भ्रमात्मक मात्र हैं, यथार्थ नहीं। इसलिये देशभरमें गो-वध-निषेधका आन्दोलन भी चलाया गया था, पर भारत सरकार इस ओर कतई ध्यान नहीं देती। इससे पता चलता है कि देश तो स्वतन्त्र हो गया, पर गुलामी अभी नहीं गयी, यह बड़े आश्चर्यकी बात है। कृषि-प्रधान देशमें गाय-बैलोंका उपयोग कितना महत्त्वपूर्ण है, इसका अनुभव सभी कर सकते हैं। अत: कहा जा सकता है कि '**मा हिंस्यात् सर्वाभूतानि**' यही हिन्दूधर्मका महान् आदर्श है।

ईश्वरका प्रत्यक्ष स्वरूप—गोमाता

[डॉ० श्रीसत्यस्वरूपजी मिश्र]

गोसेवा ईश्वर-सेवा है। गोसेवासे ही ईश्वरसेवाका अभ्यास होता है एवं अनुभव होता है। सनातन आर्य-परम्परामें गायको गोमाता कहा गया है। किसी अन्य प्राणीके लिये इस प्रकारका विशेषण नहीं है। इस तत्त्वका अनुभव करनेके लिये गोसेवा ही माध्यम है। पुराणोंमें, शास्त्रोंमें गोसेवाकी भूयसी प्रशंसा है। इसका सम्यक् बोध नहीं होनेसे यह बात अतिशयोक्ति-जैसी प्रतीत होती है, परंतु ईश्वरकी कृपासे गोमाताके स्वरूपका अनुभव हो जानेसे यह भ्रम चला जाता है। सनातन आर्यलोग यज्ञके सम्यक् विधानके लिये गोमाताकी सेवा करते थे। यजुर्वेदका प्रथम मन्त्र—'**इषे त्वोर्जे त्वा**……' इत्यादि गोसेवामें ही प्रयुक्त मन्त्र है। ऋग्वेदमें गोमाताको अघ्न्या (अवध्या) कहा गया है।

प्राचीन समयमें जब आर्यलोग भारतसे बाहर ईरान तथा विभिन्न यूरोपीय देशोंमें गये थे तो गोसेवा भी वैदिक धर्मके साथ वहाँ ले गये थे, संस्कृतमें 'गो' शब्दका अर्थ 'गाय' तथा 'पृथ्वी' है। फारसियोंके प्राचीन धर्मग्रन्थ 'अवेस्ता' में भी गोका रूप 'गाउस' मिलता है जिसका अर्थ 'गाय' तथा 'पृथ्वी' है। यूरोपकी कई भाषाओंमें गायका प्रतिरूप मिलता है। जो कि तुलनात्मक भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे 'गो' शब्दके साथ सम्पृक्त है। यथा—अंग्रेजी काव (Cow) मध्य अंग्रेजी कू (Cū) तथा काउ (Cou), प्राचीन अंग्रेजी कू (Cū), प्राचीन आइसलैण्डिक कूइर (Kyr̄), डच कोए (Koe), स्वीडिश एवं डेनिश को (Ko), जर्मन कू (Kuh), प्राचीन आइरिश बो (bo), वेल्श बुव (buw), लैटिन बोस (bos), ग्रीक बोउस (bous) तथा रसियन गोविआदो (goviado).

गोमाताके माहात्म्यके विषयमें अनेक पौराणिक कथाएँ सुप्रसिद्ध हैं, जैसे राजा दिलीपको सुरभिका शाप तथा महर्षि वसिष्ठके आश्रममें सुरभिकी पुत्री नन्दिनीकी सेवासे पुत्रप्राप्ति तथा रघुवंशके प्रतिष्ठाता रघुका जन्म इत्यादि कथाएँ गोमाहात्म्यसे परिपूर्ण हैं। जिसे पढ़कर-जानकर तथा सुनकर भी सबके मनपर इसका दृढ़ प्रभाव नहीं होता। कुछ लोग इसको कहानी मानकर इसपर विश्वास नहीं करते हैं। कुछ लोगोंके मनपर इसका क्षणिक प्रभाव पड़ता है। बहुत कम भाग्यवान् पुरुष हैं जिनके मनपर इनका दृढ़ प्रभाव पड़ता है। मेरे मनपर भी इसका दृढ़ प्रभाव नहीं था। परंतु ईश्वरकी कृपासे दो घटनाओंका मुझपर विशेष प्रभाव पड़ा और गोमाताके स्वरूप तथा माहात्म्यका किंचित् आभास भी मुझे हुआ। उन दोनों घटनाओंका उल्लेख यहाँ कर रहा हूँ—

सन् १९८८ के नवम्बर मासकी २१ तारीखकी घटना है। मेरी पत्नी उस समय वाराणसीके एक अस्पतालमें चिकित्सा करा रही थीं, परंतु दैवयोगसे दो दिन बाद उन्होंने अपना पार्थिव शरीर छोड़ दिया। जब मैं उनको दूध पहुँचानेके लिये अपने एक विद्यार्थीके घर गया था तो उनके दरवाजेके सामने जब पहुँचा तो दरवाजा बंद था तथा उसके सामने एक गाय खड़ी सूर्य-किरणका सेवन कर रही थी। उसका हटाना मेरे लिये असम्भव था। मैं अपने दुपहिया वाहनसे गया था तथा उसके इतना निकट पहुँच गया था कि उसके हिलनेपर मेरे फ्लास्कके टूटने तथा दूधके गिरनेका डर था। मैंने मन-ही-मन सोचा कि गाय तो गोमाता है। ईश्वर-स्वरूपिणी है तथा इसके शरीरमें विभिन्न

देवताओंका निवास है। अत: ये मेरी प्रार्थना सुनेंगी एवं मेरे लिये रास्ता छोड़ देंगी। ऐसा सोचकर मैंने उसे मन-ही-मन प्रणाम किया और रास्ता छोड़नेके लिये प्रार्थना की। कुछ ही क्षणोंमें गाय वहाँसे हट गयी। इस घटनाका मेरे मनपर बहुत गम्भीर प्रभाव पड़ा तथा उसके प्रकृत स्वरूपका मुझे किंचित् बोध भी हुआ।

इसके लगभग दो महीने बाद एक दूसरी घटना घटी। वाराणसीमें गङ्गातटपर अस्सीघाटपर संगमेश्वरजीका प्रसिद्ध मन्दिर है। मैं गङ्गास्नान करके नित्य उनका दर्शन करता हूँ। कभी-कभी गायें मन्दिरके भीतर प्रवेश कर जाती हैं तथा शिवजीके ऊपर चढ़ाये गये फूल, बेलपत्ती आदि खा जाती हैं। एक दिन एक गाय मन्दिरमें प्रवेश कर फूल-पत्तियाँ आदि खा रही थी। उसका एक पैर शिवलिंगके ऊपर था। मुझे अच्छा नहीं लगा। मेरे मुँहसे निकल गया—'अरे गोमाता! 'शिवलिङ्ग' से तो पैर हटा लो।' गायने तत्क्षण ही शिवलिङ्गसे अपना पैर हटा लिया। इस घटनासे गोमाताके माहात्म्यमें मेरा विश्वास अधिक दृढ़ हो गया।

गोमाता ईश्वरका प्रत्यक्ष स्वरूप है। इसका प्रमाण है गोमाताका स्वाभाविक निष्काम भाव, उसके भोजनकी सात्त्विकता तथा सभीके प्रति समदृष्टि। मनुष्य सर्वदा उसके बछड़ेको दूध पीनेसे रोककर भी उसका दूध दुह लेता है, किंतु गोमाता अपने वत्सकी भी परवा न कर हमें सहज ही दूध उपलब्ध करा देती है। उसका मनुष्य तथा अपने बच्चेके प्रति समभाव ही नहीं अपितु वह इतनी कल्याणकारिणी और परोपकारी है कि अपने वत्सकी भी उपेक्षा कर देती है। पशुरूपमें शरीर धारण करके भी इसका सहज स्वभाव एक ब्रह्मज्ञानीके तुल्य है। उसके मल-मूत्रको शास्त्रमें पवित्र माना गया है। गोबर तथा गोमूत्र भी मनुष्यके लिये विशेष कल्याणकारी हैं। इससे स्पष्ट है कि देवमयी गोमाता ईश्वरका ही प्रत्यक्ष स्वरूप है।

अमृतस्य नाभिः

[प्रो० श्रीरामाश्रयप्रसादसिंहजी]

भारतीय संस्कृति मानवेतर प्राणियोंमें गायको सर्वाधिक महत्त्व देती है। गाय उसी प्रकार रक्षणीया है, जिस प्रकार हम भूमि और राष्ट्रकी रक्षा करते हैं। भूमि, राष्ट्र तथा गौकी रक्षा आर्यत्वकी रक्षा है। हिन्दुत्वकी रक्षा है और रक्षा है मनुष्यके अंदरके शुचित्वकी, उसके भीतरके मानुष-भावकी।

गाय, गङ्गा, गीता और गायत्री—ये चारों हिन्दू-धर्म-भवनके चार सुदृढ़ स्तम्भ हैं। इनसे निर्मित हिन्दू-धर्म-भवनके मध्य गोविन्द भगवान् विराजमान हैं। हर आस्तिक हिन्दूकी अन्तिम लालसा होती है कि उसके मरते समय गोदान किया जाय, अन्तिम साँसके निकलनेके पूर्व मुँहमें गङ्गाका जल डाला जाय, गीताका पाठ हो और गायत्रीका जाप हो।

गो-दुग्ध अमृत है, गङ्गा-जल पवित्र एवं तारक है, गीता निष्कामकर्मद्वारा ब्राह्मी स्थितितक पहुँचा देती है और गायत्री-मन्त्र हमारी बुद्धिको पवित्र एवं परिष्कृत करता है, विवेकको पुष्ट करता है तथा परमात्माके पावन प्रकाशमय प्रेमका द्वार खोलता है। अत: गाय, गङ्गा, गीता और गायत्री—ये चारों शब्द हिन्दू-संस्कृतिके आधार-स्तम्भ हैं। इनको सबलरूपमें पाकर ही हमारी यह उदार एवं उदात्त आर्य-संस्कृति विश्वमें अपना विशिष्ट एवं श्रेष्ठ स्थान बनाये हुए है। पर विडम्बना यह है कि आज हमारी ही गलतियोंके कारण, अपनी ही भूलोंके कारण इन चारोंकी बड़ी दयनीय स्थिति हो गयी है। गङ्गा प्रदूषित हो रही है, गीताका अध्ययन-अध्यापन समाप्तप्राय हो गया है, आजके चकाचौंधके वातावरणने गायत्रीके जपको भी भुला दिया है और निरीह एवं निर्दोष गाय हमारी असीम अर्थलिप्साका शिकार बनकर कत्लगाहों एवं कसाई-घरोंकी शोभा बढ़ा रही है। आर्यत्वका, हिन्दुत्वका ऐसा अध:पतन तो उस समय भी न हुआ था, जब हम सदियोंतक गुलाम थे।

स्वतन्त्रता-प्राप्तिके पश्चात् हमारी उदात्त संस्कृतिकी यात्रामें जो गिरावट आयी है, जो पतन हुआ है, उसे देखकर शर्मसे हमारा माथा झुक जाता है। क्या हो गया है इस राष्ट्रको, क्या हो गया है हमारे सोच और चिन्तनको! गायोंका वध जिस रूपमें आज भारतमें हो रहा है, उससे गोवंशके सर्वनाशकी तथा राष्ट्रके पतनकी भयंकर समस्या उपस्थित हो गयी है। गाय हमारी कृषि-संस्कृतिकी आधारशिला रही है। प्राचीन कालसे ही ऋषि-संस्कृति और कृषि-संस्कृति दोनोंकी आधारशिला गाय ही रही है। ऋषियोंके आश्रम गायोंमें सुशोभित रहते थे। गोसेवा कर गोदुग्धसे अपनी मेधाको पवित्र कर आश्रमों एवं गुरुकुलोंके छात्र गार्हस्थ्यजीवनमें प्रवेश करते थे और अपने चरित्रकी धवलतासे मानवताके पथका विस्तार करते थे तथा वे '**सर्वे भवन्तु सुखिनः**' की भावनाको एवं '**सर्वभूतहिते रताः**' के भावको विकसित करते थे। गोसेवा हमारे पूर्वज ऋषियोंकी सबसे बड़ी देन है। गोवंशके संवर्धन एवं संरक्षणके लिये ही हमारे भगवान् श्रीकृष्ण गोकुलमें आते हैं और गोसेवा करके अपना 'गोपाल' नाम सार्थक करते हैं। गोवर्धन पर्वतद्वारा व्रजकी रक्षा करके गोसंवर्धनका मूलमन्त्र प्रदान करते हैं।

प्राचीन भारत गोसंस्कृतिपर आधारित था। ब्राह्ममुहूर्तमें ही नर-नारी जागकर गोवंशकी सेवा शुरू करते, सानी-पानी देते, नारियाँ गोरसमन्थन करतीं, दूध-दहीका वितरण होता। सारा वातावरण गोरसमय हो उठता। जन-समूह गोरससे पवित्र एवं पुष्ट होता, प्राण और प्रकाशका नवागमन होता और कृषि-संस्कृतिके लिये सामग्री तैयार होती। गायका बछड़ा बैल बनकर खेत जोतता, गायका गोबर उत्कृष्ट खाद बनकर कृषिको समृद्ध करता, गोमूत्र कीटनाशक बनता, अनेक बीमारियोंसे त्राण दिलाता। गायका दूध, गायका दही, गायका मक्खन लंबी आयुके लिये, स्वस्थ जीवनके लिये अमृत है। सभी प्रकारके 'विटामिन' सम्मिलित रूपमें भी गो-दुग्धकी बराबरी नहीं कर सकते। गाय दरवाजेकी शोभा ही नहीं, वह श्रीसम्पदा है, लक्ष्मी है, धरतीकी भाँति पूज्या है। जिस वात्सल्य-रसकी इतनी महिमा और चर्चा है, वह गायका अपने बछड़ेके प्रति अहैतुक स्नेहको देखकर ही है। सचमुच गाय हमारी माँ है। वह माँ और मातृभूमिकी भाँति पूज्या और रक्षणीया है। आदरणीया और सम्माननीया है।

ऋग्वेदमें एक मन्त्र मिलता है, जिसमें गायको अमृतकी नाभि और अमरत्वका केन्द्र माना गया है। पूरा मन्त्र इस प्रकार है—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥

(ऋग्वेद ८। १०। १५)

इसका तात्पर्य है—प्रत्येक चेतनावाले विचारशील मनुष्यको मैंने यही समझाकर कहा है कि निरपराध अहन्तव्या गौको कभी मत मार, क्योंकि वह रुद्र देवोंकी माता है, वसुदेवोंकी कन्या है और आदित्यदेवोंकी बहन तथा घृतरूप अमरत्वका केन्द्र है।

इसीसे मिलता-जुलता एक मन्त्र अथर्ववेदमें भी मिलता है—

मातादित्यानां दुहिता वसूनां प्राणः प्रजानाममृतस्य नाभिः।
हिरण्यवर्णा मधुकशा घृताची महान् भर्गश्चरति मर्त्येषु॥

(अथर्ववेद ९। १। ४)

'गौ आदित्योंकी माता, वसुओंकी बेटी, प्रजाओंका प्राण, अमृतकी नाभि, हिरण्यवर्ण, घृताक्त मधुकशा है। इसीको पाकर महान् तेज मर्त्योंमें, प्राणियोंमें विचरण करता है।'

इन दोनों मन्त्रोंमें गौकी महिमाका उद्घाटन है और बतलाया गया है कि यह अघ्न्या है, अहिंसनीया है, मधुकशा है, स्वर्णवर्णवाली एवं स्नेहमयी है। प्राणियोंमें महान् तेज इसीके दूधके माध्यमसे आता है। गौका अर्थ वाणी और भूमि भी होता है। वाणी और भूमि (राष्ट्रदेवी) की ही भाँति गौ पालनीया एवं रक्षणीया है। गायके अंदर अग्नि एवं वायुके अंश हैं। इसलिये गोदुग्ध नियमित रूपसे पीनेवालेमें आग्नेयता एवं प्राणवत्ता मिलती है। गायका दूध पीनेवाले स्फूर्तिसम्पन्न एवं तेजस्वी होते हैं। ऐसी स्फूर्ति भैंस या अन्य पशुओंके दूधमें नहीं होती। इसीलिये प्राचीन कालमें ऋषियोंके आश्रमोंमें गायें होती थीं, उनकी सेवा होती थी। उनके दूधसे ऋषि और ब्रह्मचारी शिष्य अप्रतिम मेधाशक्तिसे युक्त होते थे। वे विप्र बनते थे, प्रकृष्ट प्रज्ञाके

धनी होते थे।

गायको मारनेका अर्थ है अमृतत्वकी समाप्ति, स्फूर्ति, तेज एवं प्राणवत्ताकी समाप्ति। यही कारण है कि हमारे पूर्वज ऋषियोंने यह नियम बना दिया कि प्रत्येक सद्गृहस्थके घर एक गाय हो और भोजन बननेके पश्चात् गोग्रास निकालकर ही परिवारके सदस्य भोजन करें। गायकी पूजा, गायकी आरती, गोप्रदक्षिणा, गोग्रास देना, गोदान करना तथा गायको धूप-दीप दिखाना इत्यादि हिन्दू-धर्मका अङ्ग बना गया। गायमें तैंतीस करोड़ देवता निवास करते हैं। गायकी एक परिक्रमा कर देनेसे एक साथ तैंतीस करोड़ देवताओंकी परिक्रमा हो जाती है। ऐसी महिमा है गायकी! ब्राह्मण, गौ और वाणी—इन तीनोंमें तेज और ओजकी प्रधानता है। आर्य-संस्कृतिमें गायकी जो इतनी महिमा है, वह इसके इन्हीं तेजस्वी गुणोंके कारण है। इसीलिये प्राचीन भारतमें घर-घर गायकी पूजा होती थी और आज भी कुछ स्थानोंमें गायकी घर-घरमें पूजा होती है। हमारे पूर्वज ऋषियोंने इसीलिये घोषणा की कि गाय अघ्न्या है, इसे नहीं मारना चाहिये। यह धर्म, संस्कृति एवं प्राणकी भाँति तथा मातृभूमिकी भाँति रक्षणीया है, वन्दनीया है, सेवनीया है।

किंतु आज भारतमें गोवंशकी हत्या जिस रूपमें होती है, उससे लगता है कि हमारे अंदर राक्षसत्व प्रविष्ट हो गया है। प्रतिदिन हजारों गायें मारी जा रही हैं, काटी जा रही हैं और विदेशी मुद्राके लोभमें विदेशोंमें गोमांस भेजा जा रहा है। यह कृतघ्नता और क्रूरताकी पराकाष्ठा है। क्या अपनी वृद्धा माता या वृद्ध पिताको हम धनके लालचमें बेच सकते हैं, उन्हें क़त्लगाहमें कसाईके हाथों वध किये जानेके लिये भेज सकते हैं? गायकी हिंसासे गोवंशके नाशकी भयंकर समस्या उपस्थित हो गयी है। गोबरकी खाद सर्वोत्तम खाद है, बैल और हलसे जोते गये खेतकी उर्वराशक्ति नष्ट नहीं होती। आज डी० ए० पी०, यूरिया आदि रासायनिक खादोंने तथा ट्रैक्टरकी गहरी जोताईने हमारे खेतोंकी उर्वराशक्ति मिटा दी है। यदि हम चाहते हैं कि हमारी भारत-भू अन्नपूर्णा बनी रहे, यदि हम चाहते हैं कि हमारे बच्चे तेजस्वी, ओजस्वी, वर्चस्वी और प्राणवान् बने रहें तो हमें गायोंको अच्छी तरहसे पालना होगा, उनकी रक्षा करनी होगी, उनकी सेवा करनी होगी और उनकी हत्याको सर्वांशमें रोकना होगा। हम अहिंसक तरीकेसे सरकारपर और अपने नेताओंपर दबाव डालें कि गोहत्यापर प्रतिबन्ध लगे। यदि आवश्यकता हो तो संविधानमें भी संशोधन लाकर हम इस अनुचित, पापमय, गोवंश-विनाशी गोहत्याके कुकर्मको रोकें। ध्यान रहे, अमृतके केन्द्र और मधु प्रदान करनेवाली गायकी हत्या अपनी संस्कृति और अपने धर्मकी हत्या है, अपने आर्यत्व एवं अस्तित्वकी हत्या है। जय गोमाता! जय भारत!!

स्वप्नमें गोदर्शनका फल

स्वप्नमें गौ अथवा साँड़के दर्शनसे कल्याण-लाभ एवं व्याधि-नाश होता है। इसी प्रकार स्वप्नमें गौके थनको चूसना भी श्रेष्ठ माना गया है। स्वप्नमें गौका घरमें ब्याना, बैल अथवा साँड़की सवारी करना, तालाबके बीचमें घृत-मिश्रित खीरका भोजन भी उत्तम माना गया है। इनमेंसे घीसहित खीरका भोजन तो राज्य-प्राप्तिका सूचक माना गया है। इसी प्रकार स्वप्नमें ताजे दुहे हुए फेनसहित दुग्धका पान करनेवालेको अनेक भोगोंकी तथा दहीके देखनेसे प्रसन्नताकी प्राप्ति होती है। जो बैल अथवा साँड़से युक्त रथपर स्वप्नमें अकेला सवार होता है और उसी अवस्थामें जाग जाता है, उसे शीघ्र धन मिलता है। स्वप्नमें दही मिलनेसे धनकी, घी मिलनेसे यशकी और दही खानेसे यशकी प्राप्ति निश्चित है। इसी प्रकार यात्रा आरम्भ करते समय दही और दूधका दीखना शुभ शकुन माना गया है। स्वप्नमें दही-भातका भोजन करनेसे कार्य-सिद्धि होती है तथा बैलपर चढ़नेसे द्रव्य-लाभ होता है एवं व्याधिसे छुटकारा मिलता है। इसी प्रकार स्वप्नमें साँड़ अथवा गौका दर्शन करनेसे कुटुम्बकी वृद्धि होती है। स्वप्नमें सभी काली वस्तुओंका दर्शन निन्द्य माना गया है, केवल कृष्णा गौका दर्शन शुभ होता है। (पं० श्रीराजेश्वरजी शास्त्री सिद्धान्ती)

संसारकी श्रेष्ठतम पवित्र वस्तु गौ

[श्रीश्यामनारायणजी शास्त्री, रामायणी]

भगवान्‌के अवतारका मूल प्रयोजन गौकी रक्षा है। लोक-परलोकका सुधार एवं स्वार्थ और परमार्थ—इन दोनोंकी सिद्धि गौके द्वारा होती है। भगवान्‌की स्तुति करते हुए देवताओंने प्रथम स्थान गौका ही माना है—

गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिंधुसुता प्रिय कंता॥

(रा० च० मा० १। १८६ छं०)

पृथ्वी, संत, देव, विप्र—ये सभी इसी गौके पूरक तत्त्व हैं। इनमें मुख्य तत्त्व तो गौ ही है; क्योंकि पृथ्वी गौका पोषण करती है एवं उसे धारण करती है और पृथ्वीको धर्म-कर्मद्वारा संत पोषण देते हैं। धर्म-कर्मके समस्त मन्त्र ब्राह्मणोंद्वारा प्रयुक्त किये जाते हैं और समस्त प्रयोज्य मन्त्रोंके लक्ष्य देवगण हैं, जिनसे विश्वके समस्त प्राणियोंका पोषण होता है, वे देवगण मन्त्रोंके अधीन हैं, मन्त्र ब्राह्मणोंके अधीन हैं और ब्राह्मणोंको भी हव्य-कव्य, पञ्चगव्यादि समस्त वस्तुएँ गौके द्वारा ही प्राप्त होती हैं। संक्षेपमें समस्त विश्व देवाधीन, समस्त देव मन्त्राधीन, समस्त मन्त्र ब्राह्मणाधीन और समस्त ब्राह्मण-कर्म गौके अधीन हैं, इसी कारण ब्राह्मणोंसे भी बढ़कर गौकी महिमा निगमागम तथा पुराणादिकोंमें गायी गयी है। इसीलिये '**गावस्त्रैलोक्यमातरः**' कहा गया है। इतना ही नहीं महाभारतके अनुशासनपर्वमें तो यहाँतक मिलता है—

धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा।
एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते॥
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च।
ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः॥
अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः।

(८३। १८-१९; ५१। ३०)

ये अपने दूध-घीसे प्रजाका भी पालन-पोषण करती हैं। इनके पुत्र (बैल) खेतीके काम आते हैं तथा नाना प्रकारके धान्य एवं बीज उत्पन्न करते हैं। उन्हींसे यज्ञ सम्पन्न होते हैं और हव्य-कव्यका भी सर्वथा निर्वाह होता है। ये अमृतकी आधारभूत हैं। सारा संसार इनके सामने नतमस्तक होता है।

भारत तो कृषि-प्रधान देश है, इसलिये इसके कृषि-कर्ममें गौ एवं गोवत्सका परमोपयोग सहज ही सिद्ध है।

आज धर्म-प्रधान भारतवर्षमें जितनी उपेक्षा एवं दुर्दशा गौकी हो रही है, उतनी विश्वभरमें और कहीं नहीं है। जबकि लौकिक एवं पारलौकिक प्रत्येक दृष्टिकोणसे मानवके जीवनमें गौकी परमोपयोगिता है। आज भारतमें जितनी गोहत्या हो रही है, उतनी अन्यत्र कहीं नहीं। इसी कारण सुसम्पन्न होते हुए भी देशवासियोंको नाना प्रकारके कष्ट उठाने पड़ रहे हैं। इसका मूल कारण गोहत्याका पाप ही है। इसकी सर्वोपयोगिता राष्ट्रभरके हितमें कितनी है, इसपर कुछ विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं—

आयुर्वेदिक दृष्टिकोणसे

गौसे प्राप्त होनेवाले पञ्चगव्य (दुग्ध, दधि, घृत, गोमूत्र और गोबर) की अनन्त महिमा गायी गयी है—

गव्यं पवित्रं च रसायनं च
पथ्यं च हृद्यं बलबुद्धिदं स्यात्।
आयुःप्रदं रक्तविकारहारि
त्रिदोषहृद्रोगविषापहं स्यात्॥

अर्थात् पञ्चगव्य परम पवित्र रसायन है, पथ्य है, हृदयको आनन्द देनेवाला है और बल तथा बुद्धि प्रदान करनेवाला है। यह आयु प्रदान करनेवाला, रक्तके समस्त विकारोंको दूर करनेवाला, कफ, वात तथा पित्तजन्य तीनों दोषों, हृदयके रोगों और तीक्ष्ण विषके प्रभावको भी दूर करनेवाला है।

पञ्चगव्य-पानके बिना यजमानको यज्ञ करनेका अधिकार या यज्ञ-मण्डपमें प्रवेश करनेका भी अधिकार नहीं प्राप्त होता। इससे कायिक, वाचिक, मानसिक पाप-ताप-संताप दूर हो जाते हैं। विशेष बात तो यह है कि इसके प्राशन-मात्रसे ही शरीरके चर्म एवं अस्थिगत सारे पाप नष्ट हो जाते हैं—

यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति मामके।
प्राशनात् पञ्चगव्यस्य दहत्वग्निरिवेन्धनम्॥

गौके पञ्चामृत-पानसे समस्त वैदिक कर्म सम्पन्न होते

हैं। पञ्चगव्य एवं पञ्चामृत-सेवनसे शरीरगत समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं। इससे अधिक और क्या कहा जाय?

गोमूत्र—किसी भी औषधका अमृतीकरण गोमूत्रसे किया जाता है। परम विलक्षणता यह है कि कैसा भी विष क्यों न हो गोमूत्रमें मात्र तीन दिनतक पड़े रहनेपर शुद्ध हो जाता है। आयुर्वेदमें स्पष्ट वर्णन किया गया है कि—

'गोमूत्रे त्रिदिनं स्थाप्य विषं तेन विशुद्ध्यति।'

(क) गोमूत्रको कानमें डालनेसे समस्त कर्ण-रोग दूर होते हैं।

(ख) प्रातः बासी मुख एक तोला गोमूत्र-सेवनसे कैंसरतकका नाश होता है।

(ग) प्रथम ब्यायी गौके प्रथम बार दूध (खील) निकालकर बिना रोक-टोकके पी लेनेपर जीवनभरके लिये दमाका रोग नष्ट हो जाता है।

(घ) गोमूत्रमें छोटी हर्रे २४ घंटे भिगोकर छायामें सुखाकर गोघृतमें भूनकर चूर्ण बनाकर दोपहर और सायंकाल भोजनके पश्चात् एक-एक तोला लेनेपर समस्त उदर-रोग नष्ट हो जाते हैं।

(ङ) उदरके समस्त विकृत कीटाणुओंको नष्ट करनेके लिये सर्वोत्तम औषध गोमूत्र है।

संक्षेपमें गोमूत्र कीटाणुनाशक, अग्निदीपक, पित्तहारक बुद्धिवर्धक तथा पाचक है। यह तीक्ष्ण, उष्ण, क्षार, कटु और लघु स्वभाववाला है।

इसकी परम पवित्रता तो इतनेसे ही समझी जा सकती है कि गङ्गाजी जहाँ जगपावनी कही जाती हैं, वहीं वे गौ माताके मूत्रमें निवास करती हैं, वे ही क्या **'मूत्रे गङ्गादयो नद्यः'** समस्त नदियाँ निवास करती हैं और तो और फिर भगवान्पर भी संकट आनेपर गोमूत्रसे ही उनकी रक्षा की जाती है। पूतनाद्वारा विषलिप्तस्तन-पान करानेपर कहा गया है—

गोमूत्रेण स्नापयित्वा पुनर्गोरजसार्भकम्।
रक्षां चक्रुश्च शकृता द्वादशाङ्गेषु नामभिः॥

(श्रीमद्भा० १०।६।२०)

गोमय (गोबर)—गोमाताका गोबर कीटाणु-नाशक, पोषक, कान्तिप्रद दुर्गन्धिनाशक, शोषक, वीर्यवर्धक, रसयुक्त तथा परम पवित्र है।

(क) गौके कंडे (गोबर) को सुखा-जलाकर मंजन करनेसे समस्त दन्तरोग नष्ट होते हैं।

(ख) आज यूरोपीय विज्ञानवेत्ता भी मानते हैं कि गोबरमें प्लेग, हैजेके कीटाणुओंको नष्ट करनेकी अद्भुत शक्ति है।

(ग) भूमिकी उर्वराशक्तिको बढ़ानेके लिये गोबर, परम उपयोगी तत्त्व है। इससे बढ़कर संसारमें दूसरी कोई खाद नहीं है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे गौका महत्त्व

विज्ञानकी दृष्टिसे मांस मानवके लिये अप्राकृतिक भोजन है। साथ-ही-साथ अनेकों रोगोंका उत्पादक है। इसका परम प्रमाण है। मांसाहारी देशोंके मानवोंमें नाना प्रकारके रोगोंकी वृद्धि। मांसाहारसे जब शरीर ही रोगी हो जायगा तो उसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंश मन कैसे स्वस्थ रह सकेगा? गोदुग्ध जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त स्वस्थ एवं अस्वस्थ सभीके लिये परम पौष्टिक आहार तथा औषध है। अमेरिकामें अनुसंधानद्वारा पता लगाया गया है कि विटामिन 'बी' तो गौके पेटमें सर्वदा ही रहता है। इस कारण उसका दूध ही क्या गोमूत्रतक भी पूर्ण पोषक है।

आधिदैविक दृष्टिकोणसे

एकमात्र गोसेवा करनेसे समस्त देवी-देवता संतुष्ट हो जाते हैं, क्योंकि गौके शरीरमें सभी देवताओंका निवास है। कहा भी गया है—

हरिहर, विधि, शशि, सूर्य, इन्द्र, वसु, साध्य, प्रजापति, वेद, महान्।
गिरा, गिरिसुता, गंगा, लक्ष्मी, ज्येष्ठा, कार्तिकेय भगवान्॥
ऋषि, मुनि, ग्रह, नक्षत्र, तीर्थ, यम, विश्वेदेव, पितर, गन्धर्व।
गो माताके अंग अंग में, रहे विराज देवता सर्व॥

विचार कीजिये कि जब एकमात्र गौकी सेवासे ही समस्त देवोंकी सेवा एवं प्रसन्नता हो जाती है तो फिर प्राणीको लोक-परलोक क्या नहीं मिल सकता? कितना सुलभ साधन है!

पृथ्वीधारक शक्तियोंमें गौका ही प्रथम स्थान है। वे शक्तियाँ सात हैं—

गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः।
अलुब्धैर्दानशीलैश्च सप्तभिर्धार्यते मही॥

आर्थिक दृष्टिकोणसे

गाय अपने दूध, दही, घी, मक्खन आदिसे बननेवाले उत्तम एवं श्रेष्ठ भोज्य पदार्थोंके रूपमें पूरे राष्ट्रको शक्ति, ऊर्जा तथा जीवनीशक्ति प्रदान करती है। अपनी जननी तो माँके रूपमें केवल बाल्यकालमें ही पोषण करती है, किंतु गौ माँ तो जन्मसे मृत्युपर्यन्त हमें दूध पिलाती है, हमारा पोषण करती है। अपने शरीरको निचोड़कर अपने बछड़े आदिकी भी उपेक्षा कर हमें पौष्टिकता प्रदान करती है। इस प्रकार यह जननीसे बढ़कर त्याग करती है, यह सर्वथा परोपकारकी मूर्ति है।

आज रासायनिक खादोंके द्वारा यद्यपि अधिक अन्न उपजाओकी योजनामें हमारे राष्ट्रको कुछ बाह्य एवं स्थूल सफलता दीख रही है, किंतु विचार-दृष्टिसे देखा जाय तो रासायनिक खादोंसे खेतोंकी पूरी उर्वराशक्ति खींचकर कुछ लाभ अन्नका मिल जाता है, परंतु उर्वराशक्तिके शिथिल होते ही खेतीकी सहज उत्पादन-शक्ति कालान्तरमें समाप्त हो जाती है। इसके विपरीत गौकी खादसे वह शक्ति सदा सुरक्षित रहती है, साथ ही रासायनिक खादोंकी अपेक्षा व्यय भी कम होता है। और राष्ट्रमें गोसेवाका पुण्य होनेसे धन, जन, सुख, समृद्धि सभी एक साथ बढ़ते हैं। महाभारत (अनु० ५१। २६) में गौके तुल्य कोई धन ही नहीं माना गया—

गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किंचिदिहाच्युत।

समस्त शास्त्र, पुराण, वेदोपनिषदादि जिसकी अनन्त महिमाका गुणगान करते हैं, जो गौ माता धन-सम्पत्तिकी मूल एवं परम निष्पाप, हव्य-गव्यकी दाता हैं, लोक-परलोककी समस्त समस्याओंका एक साथ ही समाधान करती हैं, उनके प्रति हमारा कर्तव्य क्या होना चाहिये? इसपर हमें गम्भीरतासे विचार करना चाहिये। आज विश्वमें अमेरिका एवं यूरोप समृद्ध माने जाते हैं, ये दोनों राष्ट्र गौकी सेवा पूर्णरूपमें करते हुए गौके ऋणी एवं कृतज्ञ हैं। किंतु इस दिशामें गौ और गोविन्दके प्रेमी हमारे भारतकी स्थिति गोसेवासे विरत हो जानेसे परम दयनीय हो गयी है।

वर्तमान समयमें गौकी करुणार्द्र पुकार कौन सुनेगा?

गौ माताके साथ—गोधनके साथ आज भारतीय शासनका क्या व्यवहार हो रहा है? क्या यह किसीसे छिपा है? स्वतन्त्रता-प्राप्तिके पूर्वसे ही गोवध बराबर होता चला आ रहा है। लाखों संतों, आचार्यों, महापुरुषों, विद्वानों, गोभक्तों एवं समाज-सेवकोंने गोवध-आन्दोलनमें बलिदान किया, जेलोंमें गये, अनेकों यातनाएँ सहीं, किंतु गोहत्याका काला कलंक इस देशसे अबतक नहीं मिटाया जा सका। प्रतिदिन कई हजार गोवध सूर्योदयके पूर्व नित्य ही होते जा रहे हैं। क्या गौ माताके साथ राष्ट्रका यही कर्तव्य है?

गौ सारी जवानी हमारे घरका थोड़ा-सा बेकार घास-भूसा खाकर हमें अमृत प्रदान करती, अपने बछड़ोंके द्वारा खेती कराती, बैलगाड़ी-सवारी आदि ढोनेमें रात-दिन अथक परिश्रम करती-कराती है, पर वाह रे गोभक्तो! जब वह बेचारी बूढ़ी हो जाती है और तुम उसके ही दूध-दहीसे हृष्ट-पुष्ट हो जाते हो, जवान होते हो तब तुम्हारा क्या यही कर्तव्य होता है कि तुम अपनी उस गौ माताको कसाईके हाथमें बेंच दो? यह कैसी गोभक्ति है? कसाई जब उसे बूचड़खानेकी ओर घसीटता है और वह तुम्हारी ओर कातर करुणार्द्र-दृष्टिसे देखती है तथा तुम उसकी सहायता करनेके लिये आगे नहीं बढ़ते, क्या तुम्हारी आत्मा उस समय काँपती नहीं? क्या तुम उस मूक माँकी भाषाको नहीं समझ पाते? वास्तवमें वह चिल्ला-चिल्लाकर यही कह रही है कि हमने तुम्हें तो अपने जीवनका सर्वस्व अपने बछड़ेसे भी छीनकर खिलाया, पिलाया, जिलाया, पुष्ट किया और उस त्याग-तपस्याका बदला तुम हमें यही दे रहे हो? क्या तुम्हारा अपनी गौ माताके साथ यही कर्तव्य है?

आज पर्यावरण-प्रदूषणकी बात बड़े जोर-शोरसे चल रही है, पर इन महानुभावोंने इसपर कभी विचार ही नहीं किया कि विशुद्ध पर्यावरणके मूलमें गौका ही अस्तित्व है। गौ घर-घर रहेगी तो उसके गोमूत्र-गोबर मात्रसे ही समस्त राष्ट्रका प्रदूषण दूर किया जा सकता है। इससे उत्तम साधन समस्त राष्ट्रके प्रदूषणको दूर करनेका और क्या हो सकता है?

मत्स्य-पालन, मुर्गी-पालन, सूअर-पालन राष्ट्रमें किया जा रहा है फिर सर्वोपयोगी गौ-पालन क्यों नहीं हो सकता? गोवध क्यों? इसने किसका क्या बिगाड़ा है? फिर इसपर ऐसा अत्याचार क्यों? क्या यह इस राष्ट्रकी समस्या नहीं है? अगर है तो हमारी आस्थाके साथ इतना अन्याय क्यों? गोरक्षामें समस्त ही राष्ट्रका हित निहित है।

ध्रुव सत्य

जबतक समस्त भारत देशमें जन-जनके मानसमें गोपालन, गोभक्ति पूर्ण रूपसे नहीं जाग्रत् होगी, तबतक इस राष्ट्रका कल्याण सर्वतोभावेन नहीं हो सकता। इसे चाहे अभी समझें या राष्ट्रकी पूरी दुर्दशा हो जानेके बाद ही समझें। आज कितनी दयनीय स्थिति इस देशकी हो रही है? क्या यह किसीसे छिपा है? इतना गिरा हुआ मानवताका आदर्श इस राष्ट्रका कभी नहीं था, जो आज सामने दिखायी दे रहा है। इसका मूल कारण गोमाताकी उपेक्षा ही है। जबतक गोवध बंद न होगा देश कभी सुसमृद्ध नहीं हो सकता, चाहे लाखों योजनाएँ बनती रहें। भगवान्से प्रार्थना यही है कि वे हमें सद्बुद्धि प्रदान करें, जिससे क्षुद्र स्वार्थका परित्याग कर गोमाताकी उपयोगिताको समझकर हम सभी राष्ट्रके कल्याणकी ओर अग्रसर हो सकें। अन्तमें यही राष्ट्रके लिये मङ्गलकामना है—

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां
न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः।
गोब्राह्मणेभ्यो शुभमस्तु नित्यं
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु॥

गौ माता

[श्रीमती चन्द्रकला गौर]

गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च।
गावो मे सर्वतश्चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

(महा०, अनु० ८०। ३)

'गायें सदा मेरे आगे रहें, गायें सदा मेरे पीछे रहें, गायें मेरे चारों ओर रहें और मैं गायोंके बीचमें ही निवास करूँ।'

पदार्थोंमें माँ वसुन्धराका, मानवतामें जननीका, सरिताओंमें भागीरथीका, देवोंमें भगवान् पद्मनाभ विष्णुका, नक्षत्र-मण्डलमें भगवान् बृहस्पतिका, ऋषियोंमें अगस्त्यका, देवियोंमें भगवती दुर्गाका तथा वृक्षोंमें सहकार (आम) का जो स्थान है, वही स्थान पशु-परम्परामें गौ माताका है। भारतीय संस्कृतिमें इस प्राणीको मातृत्वका गौरव प्रदान करके इसका जो माहात्म्य दर्शाया गया है वह उसके सहज औदार्यका अंशमात्र है। व्यवहारमें वह मानवकी अर्थसिद्धिका द्वार है। वह सागरके गर्भसे उद्भूत चतुर्दश रत्नोंकी शृंखलाकी एक विलक्षण कड़ी है। उसके भौतिक शरीरसे निकलती हुई स्वेदकी एक-एक बूँद तथा मालिन्यका एक-एक कण भी पवित्रताका एक उत्कृष्ट निदर्शन है और आरोग्यताका अप्रतिम मूल मन्त्र है।

वैदिक परम्परासे अद्यावधि-पर्यन्त हम और हमारे पूर्वज प्रत्येक मङ्गलकारी अनुष्ठानमें उपादानके रूपमें गोधनका आश्रय लेते चले आ रहे हैं। इसकी महिमाको सिर झुकाकर राधावल्लभ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र गोपाल कहलाये। महाराज दिलीपने नन्दिनीकी कृपाका प्रसाद पाकर रघुकुलके विस्तारको आगे बढ़ाया। यदि नन्दिनीने महाराज दिलीपपर अनुग्रह न किया होता तो सम्भवतः आदित्यवंशकी कुल-परम्परा दिलीपतक पहुँचकर विशृंखलित हो चुकी होती और भगवान् रामका मर्यादापुरुषोत्तम-रूप सूर्यवंशका शृंगार न बन पाता। रघुवंशका इतिहास ही बदल गया होता और फिर महाकवि कालिदासकी लेखनीको इस सूर्यप्रभववंशमें महाकाव्यकी सामग्रीका आकर्षण न दिखायी पड़ता।

हमारे शास्त्रोंमें एवं मनीषियोंने जिन वस्तुओं, पदार्थों एवं प्राणियोंको गरिमामण्डित आस्पद प्रदान किया है, उन

सबकी पृष्ठ-भूमिमें विश्व-मङ्गलकी पावन भावना अवश्य निहित रही है। पशुत्वकी जड़तासे मातृत्वकी चोटीतक गायको पहुँचानेका श्रेय समाज अथवा शास्त्रोंको नहीं अपितु इस भोली-भाली मूर्तिमें पायी जानेवाली अद्भुत गुणसम्पदाको है। साहित्य एवं व्यवहारमें मनुष्यकी सज्जनताकी उपमा गायकी नैसर्गिक सरलतासे दिया जाना एक सामान्य बात है। यह पशु नहीं परोपकारका प्रतिमान है, मानदण्ड है—

'परोपकाराय दुहन्ति गावः।'

वह करुणाकी प्रतिमूर्ति एवं त्यागकी पराकाष्ठा है। वाणीसे विहीन होकर भी अपनी जिस प्राकृतिक वत्सलतासे वह बछड़ेके लिये अपने हृदयका रक्त उड़ेलनेको तत्पर रहती है वह वात्सल्य वाग्विलसित, किंतु स्वार्थ-लोलुप मानव-समाजमें अलभ्य नहीं तो दुर्लभ अवश्य है।

तृणोंके आहारपर जीवन धारण कर मानवमात्रके लिये अलौकिक सुधारसका सम्प्रदान करना गौ माताके ही उपयुक्त है। जब हम पशु-समुदायको आहार, निद्रा, भय एवं मैथुनका विशेष्य मात्र स्वीकार करते हैं तो हमारे अन्तश्चक्षु सम्भवतः इस तथ्यसे अनभिज्ञ रह जाते हैं कि जो त्याग एवं निःस्वार्थ-सेवनकी भावना मनुष्यमें वर्षोंकी तपस्याके पश्चात् भी बड़ी कठिनतासे प्रवेश कर पाती है, वही एक माँके रूपमें गोधनमें सहज विद्यमान रहती है। आध्यात्मिक रूपसे एतावता वह हम लुब्ध मानवोंसे कहीं उच्चतर है।

ज्ञानकी सार्थकता आचरणकी पवित्रतामें है—यदि ज्ञानके पश्चात् भी हमारे आचरणमें माधुर्य नहीं तो वह ज्ञान दो कौड़ीका और यदि ज्ञानके अभावमें भी एक पशुमें त्यागकी विलक्षण महिमा विद्यमान है तो उसके लिये अक्षर-ज्ञानकी आवश्यकता ही क्या?

गौ माताकी महिमाका एक वैज्ञानिक आधार भी है। विज्ञानके प्रयोगोंने यह सिद्ध कर दिया है कि गोदुग्धके समस्त तत्त्व मानव माँके दुग्धके तत्त्वोंके ठीक समान होते हैं और माँके दुग्धके अभावमें अमृतरूप गो-दुग्धका सेवन मनुष्य सद्योजात अवस्थासे लेकर वार्धक्य अथवा मृत्युके पूर्व क्षणोंतक कर सकता है। इस निरीह गौ माताका दूध शिशु-पालन-हेतु दुहते समय हम यह भूल जाते हैं कि इस माँकी अपनी संतति भी परिपालनकी अपेक्षा करती होगी, किंतु करुणामयी, परोपकारकी साक्षात् मूर्ति वह गौ माता अपने वत्सकी उपेक्षा करते हुए भी बिना किसी ननु-नचके अमृतमयी दुग्ध-धारासे हमें पूर्ण आप्लावित कर देती है। दूधसे हमारा पात्र भर देती है। कितना महान् त्याग है! कितना सहज स्वाभाविक परोपकारका भाव है! पर गायके प्रति हम कैसा व्यवहार करते हैं? क्या इसपर कभी सोचा है हमने? यदि नहीं तो फिर आज ही संकल्प लें कि 'विश्वजननी गौके पालन-पोषण तथा रक्षणमें चाहे प्राणोंकी भी बलि देनी पड़े, हम पीछे नहीं हटेंगे।'

वंशीधरसे

(श्रीनारायणदासजी चतुर्वेदी)

वंशीधर! वंशीवट बीच निज वंशी आप
कहिये बजाने फिर कब जुट जायँगे?
सार्थक 'गोपाल' नाम कब कीजियेगा नाथ?
गो-विघातकोंके दल कब लुट जायँगे?
होगी धर्म-स्थापना 'नरायण' बताओ कब?
दीन जन कब दीनतासे छुट जायँगे?
आँखें खोल निद्रा छोड़ साहसके साथ जरा,
सोते हुए भारतीय कब उठ जायँगे?

सर्वहितकारी धन—गाय

(स्वामी श्रीअच्युतानन्दजी महाराज)

विश्वके प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेदमें एक मन्त्र आया है—

हिङ्कृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात्।
दुहामश्विभ्यां पयो अघ्न्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय॥

(ऋ० १। १६४। २७, अथर्व० ९। १०। ५)

पूज्यपाद ब्रह्मलीन महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज अपने सत्संगमें इस वेद-मन्त्रका पाठ करके लाखों धर्मप्रेमियोंको सम्बोधित करते थे और कहा करते थे कि 'गाय अपनी मातासे भी श्रेष्ठ है, माताका दूध बच्चे थोड़े दिनतक पीते हैं, परंतु गौ माताका दूध जीवनभर पीते हैं। गायके बछड़ेसे खेतीका काम करते हैं—हलमें जोतते हैं, गाड़ी चलाते हैं। गायके गोबरसे घरद्वारकी लिपाई करते हैं। खेतमें खादका काम उसके गोबरद्वारा होता है। गोबरके खादसे खेतमें उर्वरा-शक्ति बढ़ती है। परंतु आधुनिक कृत्रिम खादसे जमीनकी जीवनी-शक्ति घटती है। इसलिये सबको चाहिये कि गायका पालन अवश्य करें। बूढ़ी गाय और बैलको नहीं बेचना चाहिये। जिस तरह बूढ़े माता-पिताका पालन करते हैं, उसी प्रकार बूढ़ी गाय और बूढ़े बैलका भी पालन करना चाहिये।'

गोवंश-ह्राससे देशकी आर्थिक समृद्धिमें व्यवधान उत्पन्न होगा। यह ध्रुव निश्चित है कि गरीब-से-गरीब लोग जितनी आसानीसे बैलद्वारा खेती कर सकते हैं, उतनी आसानीसे किसी यन्त्रसे नहीं कर सकते। गोपालनसे यह लाभ है कि खेती करनेके लिये उसके बछड़ेसे हल चला सकते हैं, उसके दूधसे जीवन-निर्वाह कर सकते हैं। विचार कीजिये कि गाय खाती है घास और देती है अमृततुल्य दूध। इसीलिये गायका पालन सर्वहितकारी जानकर सबोंको करना चाहिये।

आजकल ट्रैक्टरद्वारा भी खेतीका काम हो रहा है। परंतु वह सर्वसाधारणको सुलभ नहीं है। ट्रैक्टरका दाम बहुत अधिक है। जिसका उपयोग कोई गरीब किसान नहीं कर सकता। परंतु यह हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि मजदूर भी गायका पालन घास-भूसा खिलाकर आसानीसे कर लेते हैं और उसके बछड़ेसे अपनी जमीन नहीं रहनेपर भी बटाई जमीनको जोतकर अन्न उपजाते हैं।

आयुर्वेदमें अनुपानके रूपमें गायके दूध, मक्खन, मूत्र, गोबर, घी, छाछ आदिके प्रयोग निर्दिष्ट हैं। गोमूत्रसे कठिन-से-कठिन उदर-रोगोंकी चिकित्सा की जाती है। चर्मरोगोंमें गोमूत्रका उपयोग किया जाता है। इसलिये स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी गोपालन अति आवश्यक है। भगवान् श्रीकृष्ण गायके महान् रक्षक थे। वे गाय चराते थे। वे गोपालन करके संसारके समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत कर गये हैं। वृन्दावन, गोकुल, व्रज आदि ऐतिहासिक स्थान भी हमलोगोंको गोपालनकी स्मृतिका बोध कराते हैं। भगवान् श्रीरामके गुरु महाज्ञानी मुनि वसिष्ठजीकी कामधेनु नन्दिनीकी कथासे हम उपदेश पाते हैं कि प्राचीन कालके ऋषि-मुनि भी गोरक्षक और गोपालक थे। सारे विश्वमें गायके समान उपयोगी जानवर कहीं भी उपलब्ध नहीं है। गोरक्षा-हेतु भारत सरकारको भी चाहिये कि देशके हर क्षेत्रमें गोचरभूमि और गोशालाका प्रबन्ध करे, ताकि साधारण समाजको विशेष लाभ प्राप्त हो। पौराणिक इतिहास बतलाता है कि राजा नृग नित्यप्रति करोड़ों गाय दान करते थे। उस समय गायका पालन विशेष रूपसे किया जाता था। जो कोई गायका पालन करते हैं वे लक्ष्मीका आदर करते हैं। क्योंकि गायके गोबरमें लक्ष्मीका निवास है। गोमूत्रमें गङ्गाका निवास है।

हमारे गुरुदेव मेँहीँ परमहंसजी महाराज जीवनभर गायके दूधका ही उपयोग करते रहे। वे गायके पालनपर विशेष ख्याल रखते थे। गायके खानेका प्रबन्ध घास-भूसा-पुआल आदिकी व्यवस्था भरपूर करवाते थे। गङ्गा-तटपर स्थित महर्षि मेँहीँ-आश्रममें अभी भी अच्छी नस्लकी गायें पाली जाती हैं। आश्रममें एक गोशाला भी है। विचार करनेपर यह निश्चित होता है कि आध्यात्मिक, आर्थिक और शारीरिक उन्नति एवं लाभके लिये गोपालन सभी वर्गोंके लोगोंको अवश्य करना चाहिये।

गो-महिमा

(डॉ० श्रीरघुबीरजी आर्य)

अखिल विश्वमें गौके सदृश उपकारी अन्य कोई भी प्राणी नहीं है। यह वह अनुपम विभूति है, जिसकी हमारे वेदोंने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। आर्य हिन्दू-जातिने अनादिकालसे निरन्तर गोभक्ति, गोपालन, गोसेवा, गोपूजा एवं गो-सत्कारको अपने जीवनका सर्वोत्कृष्ट कर्तव्य समझा है। इस जातिके वेद, शास्त्र, स्मृतियाँ, पुराण और इतिहास गौके प्रति उत्कृष्ट भावनाओंसे ओत-प्रोत हैं। आर्योंके पवित्र हृदयोंमें पापनाशिनी धेनु-माताका माहात्म्य दृढ़तापूर्वक अङ्कित है, हजारों-लाखोंने गोरक्षार्थ अपना सर्वस्व न्योछावर किया है। अपने प्राणोंतकको बलि चढ़ायी है, संसारके सब प्रकारके कष्ट-क्लेश, आपद्-विपद् झेलकर भी गोरक्षा की है। राजाओंने राज्य त्यागे हैं, योगियोंने योगानन्द छोड़ा है, युग-पुरुषोंने नंगे पाँव वन-वन घूम-फिरकर गौओंको चराया है, गौका अनुसरण करते हुए वे गौके बैठनेपर बैठे हैं, चलनेपर चले हैं, चारा चरनेपर भोजन किया है, पानी पीनेपर पानी पिया है, सोनेपर सोये हैं और जागनेपर जागते रहे हैं। ऐसे महामानवोंकी गोभक्ति प्रशंसनीय, श्लाघनीय एवं अनुकरणीय है।

यद्यपि विधर्मियोंने आर्य-हिन्दुओंकी इन उदात्त भावनाओंका कदाचित् दुरुपयोग ही किया है, अनुचित लाभ ही उठाया है, परंतु आर्योंने अपने सर्वस्व, राज्य-लक्ष्मी, धन-ऐश्वर्य तथा मान-प्रतिष्ठा आदि सबकी प्रत्यक्ष हानिको समक्ष देखते हुए भी गोमातापर आँच नहीं आने दी। एक समय था जब कि समस्त भू-मण्डलपर आर्योंका अखण्ड चक्रवर्ती राज्य था। तब वेदानुकूल निर्मित उनके विधि-विधानके अनुसार सर्वत्र गो-पूजा प्रचलित थी। यदि कोई यातुधान प्रमादवश मर्यादाका उल्लंघन करके कहीं गो-घात-जैसा अक्षम्य अपराध कर बैठता तो प्राणदण्ड पाता था।

परंतु वर्तमान समयका यह एक भारी अभिशाप है कि पाश्चात्त्य-पद्धतिसे जो भी व्यक्ति अंग्रेजीके चार अक्षर पढ़ जाता है, वह सर्वप्रथम वेदपर ही वार करनेका दुष्प्रयास करना आरम्भ कर देता है। यह भी भाग्यकी विडम्बना ही है कि पाश्चात्त्य-पद्धतिका अनुसरण करनेवाले हमारे तथाकथित भारतीय विद्वान् प्रायः अपनी सम्पूर्ण शक्ति, समग्र तत्त्व-ज्ञान, समूची विद्या तथा समस्त युक्ति-भण्डार, इस प्रयासपर व्यय कर देना ही अपने लिये, अपनी जातिके लिये, अपने धर्मके लिये तथा अपनी सभ्यता-संस्कृति-साहित्य एवं परम्पराओंके लिये श्रेयस्कर समझने लग जाते हैं कि येनकेनप्रकारेण वेदको हेय, वैदिक ज्ञानको अपरिपूर्ण, वैदिक सभ्यताको अपरिपक्व, वैदिक संस्कृतिको संकुचित, वैदिक साहित्यको अकिंचन तथा वैदिक परम्पराओंको त्याज्य सिद्ध करना है।

वेद जो (क) अगणित स्थानोंपर गौको अघ्न्या (न मारने योग्य) और अदिति (न काटने योग्य) के नामोंसे पुकारता है,

वेद जो (ख) गोघातकोंको प्राणदण्ड देनेकी आज्ञा देता है,

वेद जो (ग) राजाको आदेश देता है कि गोघातकोंका अन्न-जल, ओषधि-उपचार बंद करके सर्वस्व छीनकर उन्हें देश-निष्कासनका दण्ड दे,

वेद जो (घ) गोघातको मानव-हत्याके समान दण्डनीय अपराध घोषित करता है,

वेद जो (ङ) गौके दूधको अमृतके समान और दुर्बल शरीरवाले व्यक्तियोंको हृष्ट-पुष्ट बना देनेवाला स्वीकार करता है।

वेद जो (च) गौकी महिमाको बड़ी-बड़ी सभाओंमें गाये जानेका वर्णन करता है,

वेद जो (छ) यातुधानों (गोघातकों) के लिये सीसेकी गोलीसे बींध डालनेकी मर्यादा स्थिर करता है,

वेद जो (ज) गौकी कोई उपमा नहीं मानता, **'गोस्तु मात्रा न विद्यते'** (यजु० २३। ४८) उसका कोई मूल्य, कोई मात्रा और कोई परिमाण नहीं मानता अर्थात् गौके समान कोई भी नहीं है ऐसा बताता है,

वेद जो (झ) गौको रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, आदित्योंकी बहिन तथा घी-दूधरूप अमृतका केन्द्र मानता है और उसका वध न करनेकी आज्ञा देता है,

—उसी वेदमें गोवध तथा गोमांस-भक्षणकी कल्पना करना कितनी मूर्खता है, कितनी घृणित कल्पना है। वेदके ज्ञानके अभावमें मन्त्रोंका मनमाना अर्थ लगानेसे ही गो-हत्याको बल मिला है और सरकारके लिये मार्ग प्रशस्त हो गया है। सरकार क़तलखानोंमें गाय कटवाकर गोमांस और चमड़ेका विदेशोंमें व्यापार कर रही है, यह कितनी लज्जाकी बात है।

गोहत्याके इस सुनियोजित षड्यन्त्रको बंद करनेके लिये गोभक्तोंद्वारा समय-समयपर कितने आन्दोलन हुए, कितने बलिदान हुए, कितने संत-महात्माओंका रक्त भूमिपर गिरा। यह एक लंबा इतिहास है, यह तथ्य किसीसे कैसे छिपा रह सकेगा! कुछ सफलता तो मिली, पर वह नगण्य-सी है, तथापि प्रयत्न तो आज भी दृढ़ रहना ही चाहिये। यह सत्यका मार्ग है, न्यायका मार्ग है। एक-न-एक दिन पूर्ण सफलता मिलेगी ही। इस कार्यमें गो-गोविन्दकी कृपा अवश्य ही प्राप्त होगी। अतः पूर्ण श्रद्धा-भक्तिपूर्वक गोसेवाके कार्यमें जुट जाना चाहिये।

विश्वकी सर्वाधिक कल्याणमयी एवं पवित्रतम वस्तु—गौ

[स्वामी श्रीदत्तात्रेयानन्दजी (योगनाथ स्वामी)]

वैदिक धर्म एवं संस्कृतिमें गौ (गाय) का अत्यधिक महत्त्व है। ऋग्वेद (८। १०१। १५) में गौकी इस प्रकार प्रशंसा की गयी है—'गौ अमृतकी नाभि है। देवयजनमें गोदुग्ध, गोदधि और गोघृत अतीव आवश्यक है। गौ रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री तथा आदित्योंकी बहिन है।' 'वेदमें गौका वैशिष्ट्य-वर्णन करते हुए कहा गया है कि '**गावो विश्वस्य मातरः**'—गाय विश्वकी माता है। ऐसा भी कहा गया है कि 'गायकी पीठमें ब्रह्मा, गलेमें विष्णु, दोनों पार्श्वभागमें समस्त देवगण, मुखमें रुद्र, नेत्रोंमें सूर्य-चन्द्र, रोमकूपोंमें ऋषि-मुनिगण और गोमूत्रमें गङ्गा आदि नदियाँ स्थित हैं।'

श्रुति कहती है कि '**आयुर्वै घृतम्।**' गायका घी आयुकी वृद्धि करनेवाला है, बुद्धिवर्धक है। आगे कहा है कि 'गायका दही स्वादिष्ट एवं रुचिवर्धक होता है, गोमूत्र और गोमय अनेक रोगोंके जन्तुओंकी शक्तिका समूल नाशक है। जहाँ गोशाला होती है, वहाँकी हवा कीटाणुरहित शुद्ध होती है। वह स्थान देवमन्दिर-जैसा है। वैदिक यज्ञ-यागमें, देवपूजनमें, पञ्चामृत एवं पञ्चगव्यका उपयोग अवश्य किया जाता है।'

गौको त्यागमूर्ति कहा गया है; क्योंकि उसके सभी अङ्ग-प्रत्यङ्ग दूसरेके उपयोगमें आते हैं। इस महागुणसे गौ 'सर्वोत्तम माता' कही गयी है। 'देवीभागवत' (९। ४९। २४) में कहा गया है—

नमो देव्यै महादेव्यै सुरभ्यै च नमो नमः।
गवां बीजस्वरूपायै नमस्ते जगदम्बिके॥

गौ वस्तुतः जगन्माता है। महाभारतके अनुशासनपर्वमें भीष्मपितामह महाराज युधिष्ठिरको 'गौका माहात्म्य' सुनाते हुए कहते हैं—'**मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।**'—अर्थात् गौ सभी सुखोंको देनेवाली है और वह सभी प्राणियोंकी माता है।

महाभारत (अनु० ७४। ३-४) में आया है कि 'जो उच्छृङ्खलतावश मांस बेचनेके लिये गायकी हिंसा करते या गोमांस खाते हैं तथा जो स्वार्थवश कसाईको गायकी क़त्ल करनेकी सलाह देते हैं, वे सभी महान् पापके भागी होते हैं। गौकी हत्या करनेवाला, गोमांस खानेवाला, गोहत्याका अनुमोदन करनेवाला, गौके देहमें जितने रोएँ होते हैं, उतने वर्षोंतक घोर नरकमें पड़ा रहता है।'

धर्मग्रन्थोंमें स्पष्ट निर्देश है कि—गौको दुःख मत दो। गौको भूखी-प्यासी मत रखो। गौको लकड़ीसे, पत्थरसे, लातसे—किसी भी प्रकारसे ताडित मत करो। उसे प्रसन्न रखनेपर लक्ष्मीदेवी, सरस्वतीदेवी, महाकालीदेवी एवं सभी देव-देवियोंकी प्रसन्नता प्राप्त होती है।

गोमहिमाको बताते हुए अग्निपुराणमें कहा गया है—

'गावः पवित्रा माङ्गल्या गोषु लोकाः प्रतिष्ठिताः।'

गौएँ पवित्र और मङ्गलदायिनी हैं और समस्त लोक गौओंमें ही प्रतिष्ठित हैं।

पारसियोंके महान् धर्मगुरु 'जरथुस्त्र' यश्न (४५।२) में कहते हैं कि 'ईश्वर मनुष्य-जातिके लिये अभ्युदय तथा गौओंका हित करनेके लिये आवश्यक बुद्धि, सदाचार तथा दृढ़ता प्रदान करें।' 'बंदीदाद' ग्रन्थमें गोमहिमा वर्णित है।

इस्लामधर्मके 'हदीस' में कहा गया है कि 'गायके गोश्त (मांस) से बीमारियाँ होती हैं तथा गायका दूध दवाई और गायका घी रसायन है।'

पैगम्बर मुहम्मद साहब 'नाशियातहादी' ग्रन्थमें कहते हैं कि 'गायका दूध और घी तुम्हारी तंदुरुस्तीके लिये बहुत जरूरी है, किंतु गायका गोश्त (मांस) नुकसान करनेवाला है।' ईसाई 'पीटर डी लावेल' सूरत (गुजरात) से अपने पत्रमें लिखता है कि 'खंबातके नवाबका आदेश है कि यदि कोई मुसलमान भी गोहत्या करता है, गोमांस खाता है तो उसे फाँसीपर चढ़ा दिया जाय।' मुगल शहंशाहोंके गोहत्या न करनेके सख्त फरमान जाहिर थे।

'स्वामी रामतीर्थ' कहते थे कि 'गोमांसाहारी व्यक्ति साक्षात् राक्षस है, मांसाहारी व्यक्ति जंगम कब्रिस्तान है।'

गौ दैवी सम्पदा है

[श्रीबन्दीकृष्णजी त्रिपाठी, साहित्यशास्त्री, शास्त्ररत्न, विधि-वाचस्पति, एडवोकेट]

गौ दैवी सम्पदाकी प्रथम निधि है। यह व्यक्तिको स्वावलम्बन प्रदान करती है। व्यक्तिके पास प्रकृति-प्रदत्त शरीर तो है ही और भूमिपर वह जन्म लेता है, अतः व्यक्ति अपने शरीर तथा थोड़ी-सी भूमिके साथ बस देवविग्रह-स्वरूप एक गौ रख ले तो फिर उसे अपने जीवनयापन—सार्थक जीवनपायन-हेतु किसी अन्य सहारेकी आवश्यकता नहीं है। वह अपना सम्पूर्ण जीवन आरामसे परमधर्म 'परोपकार' करते हुए भवबन्धनसे मुक्त रहकर मुक्तिभाक् हो जाता है अर्थात् पूर्णत्व प्राप्त कर लेता है।

गौका गोरस—दूध, दही, मट्ठा, घी, मलाई आदि अनेक पदार्थोंके रूपमें तथा विविध रसोंसे व्यक्तिकी क्षुधा शान्त कर सकता है। गोमूत्र उसे आधि-व्याधिसे दूर रख सकता है। गोबर उसे शुचिताके साथ-साथ अग्नि तथा भोज्य पदार्थके पाचनका साधन, उसकी भूमिको उर्वराशक्ति प्रदान कर सकता है और उसकी संततियाँ उसके लिये तमाम आवश्यक वस्तुएँ सुलभ करानेमें निरन्तरता प्रदान करनेके साथ-साथ उसके लिये आवश्यक होनेपर वाहनकी व्यवस्था भी प्रदान कर सकती हैं। इस प्रकार गौ सर्वार्थसिद्धिका एक सम्पूर्ण साधन तथा भारतीय संस्कृतिका मूलाधार है, भारतीय दर्शनका आध्यात्मिक मूल है।

गोधनसे धनी व्यक्तिके लिये 'परोपकार' कोई अतिरिक्त साधना नहीं रह जाती है, क्योंकि एक गाय जितनी सामग्री प्रदान करती है वह व्यक्ति अकेले अपने निजके प्रयोगमें खर्च नहीं कर सकता। वह यदि किसी समष्टिके साथ है तो उसे वह दूसरोंको देगा ही—देना ही पड़ेगा। यही तो परोपकार है। गाय रखने तथा उसकी सेवामात्रसे ही परोपकारकी साधना स्वयमेव सिद्ध हो जाती है। गोमाता व्यक्तिको अपरिग्रही और परोपकारी बना देती है।

जीवके इतने महान् पुरुषार्थकी साधिका होनेके बाद भी गौका स्वरूप स्वयंमें कितना शान्त, कितना निश्चिन्त, कितना सौम्य तथा कितना प्रसन्न होता है कि उसे देखकर ही व्यक्तिका चित्त शान्त और प्रफुल्लित हो उठता है। गौओंकी स्वाभाविक चालमें एक अजीब-सा मोहक गाम्भीर्य होता है जो कि हमें बिना आतुर हुए अपने कार्योंको पूर्ण करनेकी प्रेरणा प्रदान करता है।

गौ और पृथ्वी एक-दूसरेके पूरक हैं। पृथ्वी जीवोंका आधार है और गौ जीवोंका जीवनाधार है। इस प्रकार गौ और पृथ्वीका तादात्म्य है। गौके गोबर तथा मूत्र पृथ्वीकी

उर्वराशक्तिकी अभिवृद्धि करते हैं और यह अभिवृद्धि भी स्वाभाविक होती है। इसमें स्थायित्व एवं निरन्तरता होती है। अत: यह पृथ्वीको अत्यन्त प्रिय होता है। पुराणों तथा शास्त्रोंमें गौको पृथ्वीका जीवन्त रूप माना गया है।

गौकी प्रकृति, उसके द्वारा प्राप्त नैसर्गिक एवं स्वाभाविक स्वावलम्बन, उसका पृथ्वीके साथ तादात्म्य तथा उसके सौम्यादि गुणोंके खान होनेके कारण ही भारतीय मनीषा, समाज एवं संस्कृतिमें गौका इतना महत्त्व है और इसे सभी दृष्टिसे संरक्षणीय तथा अघ्न्य माना गया है। गौकी प्रकृति एवं स्वरूपका तात्त्विक विवेचन तथा उसका अनुशीलन हमारे अध्यात्मके रहस्यका भेदन करनेमें सार्थक माध्यम बनता है और हम सृष्टिकी प्रक्रियाको उसकी पूर्णतामें समझ सकनेमें सक्षम होते हैं।

अध्यात्मको यदि थोड़ी देरके लिये छोड़ भी दें तो भी आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिसे गौका हमारे जीवनमें बहुत महत्त्व है। विज्ञानकी चरमोत्कर्षकी अवस्थामें भी व्यक्ति निजमें अत्यन्त अपूर्ण होता है, किंतु गौका सांनिध्य हमें बरबस पूर्णता प्रदान करता है जो कि सामाजिक दर्शनकी मूलभूत अवधारणा है। व्यष्टिसे समष्टि बनती है, अत: व्यष्टिकी आवश्यकतासे समष्टिकी आवश्यकताएँ भिन्न नहीं होतीं। मात्र गौकी संख्याकी वृद्धि समष्टिकी आवश्यकताएँ पूरी करेगी, यह तो सामान्य अङ्कशास्त्रकी बात है।

अत: हमें सर्वात्मना सर्वभावेन निरन्तर गौका सांनिध्य एवं गोसेवाको अपनी दिनचर्याका अङ्ग बनाना चाहिये क्योंकि अन्य आसुरी सम्पदाएँ तो हमें अशान्त ही कर सकती हैं।

गो-गरिमा

(श्रीमहावीरप्रसादजी 'मधुप')

गो सब जगकी माता है यह निश्चय है।
गो सर्व-विभव-दात्री है, परम सदय है॥
गो-भक्ति पतितको भी पावन कर देती।
गो-सेवा करती पाप-ताप सब क्षय है॥ १॥
गो-पावन-तनमें देव सभी रहते हैं।
ऐसा सब वेद-पुराण ग्रन्थ कहते हैं॥
माँके समान करते न समादर गोका।
वे मूढ दुखोंकी ज्वालामें दहते हैं॥ २॥
गो घास-फूस तृण-पात स्वयं चरती है।
पर दुग्ध अमृत-सा वह प्रदान करती है॥
गो प्राणिमात्रका करती पालन-पोषण।
गो निबलोंको कर सबल रोग हरती है॥ ३॥
गो है जिस घरमें, है आराम वहाँपर।
गो है जिस घरमें, है सुरधाम वहाँपर॥
गो है जिस घरमें, श्री-सुख-शान्ति वहाँ है।
गो है जिस घरमें, है बस राम वहाँपर॥ ४॥
गोकी सेवासे सुप्त भाग्य जग जाते।
गो-सेवासे सब दैन्य-दुःख भग जाते॥
गोकी सेवासे दनुज देव बन जाता।
गो-सेवासे धन-धान्य ढेर लग जाते॥ ५॥
था समय, मान पाती थी गो भारतमें।
घर-घर पूजी जाती थी गो भारतमें॥
गो-सेवक थे सब भारतके नर-नारी।
सुख-बादल बन बरसी थी गो भारतमें॥ ६॥
गो-वध-कारण गिर रहा, देश दिन-दिन है।
गो-वध-कारण बढ़ रहा क्लेश दिन-दिन है॥
हम दीन-हीन, बल-क्षीण हुए जाते हैं।
गो-वध-कारण घट रहा शेष दिन-दिन है॥ ७॥
गो-वधिक नहीं कुछ भी विचार करते हैं।
भारी पातकसे तनिक नहीं डरते हैं॥
कितना जघन्य अपराध कि जिससे पलते।
उसके गलपर ही हाय छुरी धरते हैं॥ ८॥
गो-सेवाका फिर भाव जगे जन-मनमें।
गो-प्रेम प्रकट हो फिर मानव-जीवनमें॥
गो-रक्षा-हित तन मन धन भेंट चढ़ा कर।
सब जुट जायें दृढ़तासे गो-पालनमें॥ ९॥
फिर तनिक कष्टका नाम न रहने पाये।
फिर नहीं किसीको भी दुख-दैन्य सताये॥
सच कहता हूँ, उपहास न इसे समझना।
यह पिछड़ा भारत फिर ऊँचा उठ जाये॥१०॥

गोसेवाका स्वरूप

गोसेवाकी नीति

भारतीय संस्कृतिमें गायका एक विशिष्ट स्थान रहा है। संस्कृतिके मङ्गल-प्रभातसे ही गाय राष्ट्रके जीवनमें महत्त्वपूर्ण हिस्सा लेती रही है। सांस्कृतिक और धार्मिक दोनों दृष्टियोंसे भारतीय समाजमें गाय परिवारके एक विशिष्ट सदस्यके रूपमें प्रतिष्ठित रही है। आज देशकी गिरी और बिगड़ी हुई हालतमें भी गाय अपना वही योगदान दे रही है। गायको हम कैसे सँभालते हैं तथा कैसे उसका संरक्षण और संवर्धन करते हैं, इसपर ही भारतके भावी आर्थिक जीवनका विकास अवलम्बित रहेगा। भारतके आर्थिक ढाँचेमें कृषिका जो स्थान है, कृषिके विकासमें गायका वही स्थान है।

गाँधीजी आजीवन गायके बारेमें चिन्तित रहे। विनोबाजीकी प्रेरणा, मार्गदर्शन एवं प्रयाससे 'अखिल भारत कृषि-गोसेवा-संघ' आज इस ओर प्रयत्नशील है कि गायके शास्त्रीय विकास और बुनियादी महत्त्वको लोग समझें।

१-गोसेवाकी दृष्टि—विनोबाजीने कहा कि 'गोसेवा-संघ'की नीति 'सेवा' शब्दमें निहित है। गाय एक उदार प्राणी है, वह हमारी सेवा और प्रेमको पहचानती है तथा हमें अधिक-से-अधिक लाभ देनेके लिये तैयार रहती है, इसलिये हमें उसकी सेवा करनी है। सेवासे दो बातें गृहीत हैं—एक तो हम बिना उपयोगके किसीकी सेवा नहीं कर सकते और दूसरे सेवा किये बिना हम उपयोग लेंगे तो वह गुनाह होगा और हमें वह गुनाह हरगिज नहीं करना है।

गायकी बछड़ीका पूरा उपयोग करना है, गायकी दूध देनेकी शक्ति बढ़ानी है। मजबूत बछड़े देनेकी शक्ति बढ़ानी है। उससे जुताईमें भी जितनी मदद मिल सके, लेनी है। गोबर और गोमूत्रका खादके रूपमें अच्छे-से-अच्छा उपयोग करना है। इसके लिये अधिक-से-अधिक शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त करना है तथा प्राप्त ज्ञानका उपयोग करना है। गायको समयपर उचित मात्रामें चारा-दाना देना, उसके रहनेकी अच्छी व्यवस्था करना, काम लेनेमें उसपर ज्यादती न करना, साफ-सफाई रखना, बीमारीका इलाज करना, उसके सुख-दुःखका पूरा ख्याल रखना और बूढ़ी होनेपर ठीकसे उसका भरण-पोषण करना—इतनी बातें सेवामें आती हैं।

ऊपरकी नीतिके अनुसार यह बात स्पष्ट है कि हम गोवंशका शास्त्रीय संवर्धन करना चाहते हैं और उसकी हत्या कतई बंद करना चाहते हैं। हम यह मानते हैं कि गाय धर्मशास्त्रके साथ-साथ अर्थशास्त्रमें भी टिकनी चाहिये और जब अर्थशास्त्रमें भी टिकेगी, तभी उसका पूरा पालन हो सकेगा। इस दृष्टिसे जीवनभर गायको स्वावलम्बी बनानेका हमारा प्रयास रहेगा। शास्त्रीय गोसंवर्धन और सम्पूर्ण गोवंश-हत्या-बंदी ही हमारी नीति रहनी चाहिये। गायसे हमारा मतलब गाय, बैल, बछड़े अर्थात् पूरे गोवंशसे है।

२-राष्ट्रिय संयोजनमें गायका सर्वोपरि महत्त्व है—भारतके आर्थिक संयोजनमें पिछले अनुभवोंके आधारपर अब कृषिको ही सर्वप्रथम स्थान दिया जा रहा है। साथ ही स्थायी कृषि-विकासकी योजनाओंमें गोपालनको प्रथम स्थान देना जरूरी हो गया है। गायसे ही हमें खेतीके लिये अच्छे बैल प्राप्त होते हैं। समाजके स्वास्थ्यको बलवान् बनानेके लिये गोमाता हमें शुद्ध और स्वास्थ्यप्रद दूध प्रदान करती है। गोबरकी खाद खेतोंको अधिक उपजाऊ बनाती है। अब तो गोबर-गैससे बिजली भी पैदा की जा रही है, जो कई तरहकी मशीनोंको संचालित कर सकती है। गोमूत्र अद्वितीय खादके रूपमें सिद्ध हुआ है, गोमूत्र अमोघ औषध है एवं आणविक शक्तिके निर्माणमें सहायक हो ऐसा शोध चल रहा है। मृत्युके बाद भी गायकी हड्डी और चमड़ा स्थानिक ग्रामोद्योगोंके लिये इस्तेमाल किया जा सकता है। इस प्रकार हमारे राष्ट्रिय संयोजन, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रोंमें गायका सर्वोपरि महत्त्व स्पष्ट है।

३-सम्पूर्ण गोवंशकी हत्या बंद हो—भारतीय अर्थशास्त्रमें गाय, बैल सभी समान रूपसे उपयोगी हैं

एवं भारतीय संस्कृतिमें सबका समान आदर है। अतः बैल और साँड़सहित पूरे गोवंशकी हत्या बंद होनी चाहिये। इसके लिये आवश्यक है कि भारतीय संविधानमें संशोधन किया जाय। आजके कानूनमें सुप्रीम कोर्टके निर्णयके अनुसार बूढ़े बैल या साँड़का संरक्षण उपयोगी होनेतक है। बूढ़े अनुपयोगी बैलके क़तलकी इजाजत है। डॉक्टरके झूठे सर्टिफिकेटसे जवान बछड़ेतक कटते हैं। बैलके नामपर गायें भी कटती हैं। इस छूटके कारण संरक्षणके पूरे कानून बेकार हो रहे हैं। गोवंशहत्या बंदीका केन्द्रीय तथा स्टेट कानून बने ऐसी भारत सरकार एवं प्रदेश-सरकारोंसे हमारी माँग रही है।

कुछ लोगोंका ख्याल है कि 'सेक्युलर स्टेट' में गोवंश-हत्या-बंदीका कानून नहीं बन सकता, क्योंकि ऐसा कानून बननेपर गाय और बैलकी हत्या करनेवाले मुसलमान भारतमें कैसे रह सकेंगे? ऐसा कहनेवाले, ऐसा समझनेवाले इस्लामका अपमान करते हैं। कुरानमें गोकुशी—गोहत्या करना आवश्यक विधि नहीं है। इतिहास साक्षी है कि अकबर एवं अनेक मुगल बादशाहोंके राज्योंमें गोवंशकी हत्या पूर्णतः बंद थी। बहादुर शाह जफरके राज्यमें तो ईदपर पहरा रहता था, ताकि कोई गायका क़तल न कर दे। कश्मीर-जैसे मुस्लिम प्रधान प्रदेशमें भी गोवंशकी हत्या पूर्णरूपसे बंद है। बंगाल-केरल छोड़कर प्रायः सारे भारतमें कहीं भी ईदपर गोहत्या नहीं होती।

भारतका भी अपना समाजवाद है। भारतके समाजवादमें यह माना गया है कि मानव-वंशके अंदर गोवंशका समावेश करें और जिस गायके दूधपर हमारे बच्चे पलते हैं, उसे कृतज्ञताके तौरपर रक्षा दें एवं उसका क़तल न करें।

गोरक्षाके सम्बन्धमें गाँधीजीने कहा है कि 'गोरक्षा' भारतकी विश्वको देन है। बापूजीके कहनेका गहराईसे चिन्तन किया जायगा तो ध्यानमें आयेगा कि कितनी बड़ी नैतिक एवं आध्यात्मिक बात बापूजीने कही है। गोरक्षाकी भावनाके पीछे 'कृतज्ञता'-भावनाकी रक्षा है। जीवनभर जिसने सेवा की, उसके प्रति अन्तिम दिनोंमें कृतज्ञता रखना ही मानवकी श्रेष्ठ भावना है। जिस समाजमें कृतज्ञताकी जगह 'कृतघ्नता' की भावना बढ़ती है, वह समाज कभी शान्तिसे नहीं रह सकता। 'गोरक्षा' मानवताके रक्षणकी बुनियाद है।

'गोवध चालू रहना या गोवध बंद होना' इसपर सारे देशकी गोसंवर्धन-नीति अवलम्बित है। यदि पश्चिमकी भाँति गोवध एवं गो-भक्षण चालू रहता है तो संवर्धनमें एकाङ्गी पशुओंका विकास अधिक किया जायगा ताकि एक पशु क़तलके लिये मिलता रहे। जैसे दूध-प्रधान नसल बढ़ायेंगे तो नर पशु क़तलके लिये मिलते रहेंगे। परंतु सम्पूर्ण गोवंश-हत्या-बंदी हो जाय तो गोसंवर्धनकी नीति आमूल बदलनी होगी। गोवध-बंदीके बाद सर्वाङ्गी नसलका ही संवर्धन करना होगा, जिसमें नर और मादा दोनों उपयोगी हों। बछड़ी अच्छी दुधार हो और बछड़ा खेतीके जोत-लायक उत्तम बैल बने, ऐसी नसल तैयार करनी होगी। इसे ही सर्वाङ्गी नसल कहते हैं, इसमें नर और मादा दोनोंका संरक्षण होता है।

४-खेती और गोपालन अभिन्न है—सही बात तो यह है कि खेती और गाय, दोनोंकी जोड़ी है। दोनों एक-दूसरेसे अभिन्न हैं। दोनों एक सिक्केके दो पहलू हैं। दोनों एक-दूसरेके पूरक हैं। खेतीको बैलोंकी जोड़ मिल जानेसे खेतीकी जुताई अच्छी होती है। गोबर और गोमूत्रमें कचरा मिलाकर बड़ी तादातमें कम्पोस्ट खाद बनायी जा सकती है, जिससे खेतीकी उपज बढ़ती है और भूमिकी उपजाऊ शक्ति कायम रहती है। खेती गायको चारा-दाना देती है। गाय अखाद्य घास-चारा खाकर उत्तम-से-उत्तम दूध देती है। उसमें ऐसा दिव्य गुण है कि वह अखाद्यको खाद्य बना देती है। किसानका ग्रामीण जीवन गाय-बैलोंके सहारे ही चलता है। उसे सालभर आमदनीके साधन मिल जाते हैं। उत्तर प्रदेशमें सन् १९४१ से १९४६ तक ६ जिलोंमें 'केवल खेती' और 'गोपालनके साथ खेती'—दोनों प्रकारके प्रयोग किये गये थे। उस बारेमें उत्तर प्रदेशकी सरकारने गोपालन और खेतीके नामसे एक पर्चा (नं० १९९) निकाला था। उसमें बताया गया है कि इस प्रयोगसे ५ वर्ष बाद यह सिद्ध हुआ कि गोपालनके साथ खेती करनेवालोंकी आय प्रति एकड़ रु० ११०.४४ हुई, जबकि बिना गोपालनके केवल खेती करनेवालोंकी औसत आय प्रति एकड़ रु० ५१.५६ आयी।

कई जगह यह सवाल उठाया जाता है कि हम मनुष्योंको खिलायें या गायको खिलायें। ऊपरके प्रयोगोंसे स्पष्ट होता है कि यह सवाल ही गलत है। हम गायको जो कुछ भी खिलाते हैं, वह अपने लिये ही खिलाते हैं, गायपर मेहरबानी नहीं करते। जितना उसे खिलाते हैं, उसके मुकाबले

कई गुना अधिक लाभ गायसे मानवको मिलता है। जैसे खेतमें बीज बोनेको धूल-मिट्टीमें अनाज फेंकना नहीं कहा जायगा, वैसे ही गायको खिलाना भी बीज बोनेके समान तथा उससे कहीं अधिक लाभदायी है। जैसे गायसे खेतीको लाभ है, वैसे ही गायको भी खेतीसे लाभ है। गाय सुखमय जीवन खेतपर ही बिता सकती है। जहाँ खेती नहीं है, वहाँ चारा-दाना महँगा होगा। वहाँ अच्छी-से-अच्छी गायका भी आजके अर्थशास्त्रमें पालन करना कठिन होता है। वर्धाके आस-पास दो-चार जगहोंमें जहाँ खेतीके लिये काफी जमीन थी, परंतु जमीनें उपजाऊ नहीं थीं, वहाँ गोशालाएँ खड़ी की गयीं। उसका नतीजा यह हुआ कि वहाँकी जमीनें उपजाऊ बन गयीं। संघकी निश्चित राय है कि खेती और गोपालन एक-दूसरेके पूरक हैं। वे साथ-साथ चलने चाहिये, यानी हर किसानके पास गायें होनी चाहिये और हर ग्वालेके पास खेतीकी जमीन। इसी अनुभवसे संघने गोपालनके साथ-साथ कृषिका काम भी हाथमें लिया है। और 'गोसेवा-संघका नाम भी 'कृषि-गोसेवा-संघ' कर दिया है। भगवान् श्रीकृष्णने भी गीतामें कृषिके साथ गोसेवाको जोड़ा है '**कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यम्**'। श्रीकृष्ण गोपालक थे तो भैया बलराम—हलधर किसान।

५-गोसंवर्धन-नीति—गोसंवर्धनकी आज जो नीति चल रही है, वह केवल दूध बढ़ानेके लक्ष्यको लेकर है। इस कारण बैल-शक्तिकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। वास्तवमें होना यह चाहिये कि करोड़ों किसान रख सकें, ऐसी सर्वाङ्गी गायें पैदा की जानी चाहिये, जो १,००० से २,००० लीटरतक एक बेंतमें दूध दें और उत्तम बैल दें। संवर्धन-नीतिमें इस बातका भी ध्यान रखना आवश्यक है कि जो सर्वाङ्गी नसलें हैं यानी अधिक दूध और उत्तम बैल दे सकती हैं—जैसे, हरियाणा, थारपारकर, गीर, कांकरेज, कांगायम, देवनी आदि। इन नसलोंको सिलेक्टिव ब्रीडिंगसे शुद्ध रूपमें संवर्धन करना चाहिये एवं जो कम दूधवाली बिना नसलकी गायें हैं, उनको क्रास करके सर्वाङ्गी गाय बनाना चाहिये।

(अ) गोसंवर्धनका लक्ष्य सर्वाङ्गी हो—प्रथम यह तय करना आवश्यक है कि भारतमें गोविकासका लक्ष्य क्या हो? विदेशमें दूध और मांसका लक्ष्य रखकर गोसंवर्धन किया जाता है। भारतको दूध और खेती-जोतकी आवश्यकता है। आज भी हमारी ७५ प्रतिशत खेती बैलोंपर निर्भर है। निकट भविष्यमें भी बैलोंकी आवश्यकता है। इसलिये हमारे गोसंवर्धनका लक्ष्य सर्वाङ्गी नसल तैयार करना होना चाहिये, यानी बछड़ी अधिक दुधार हो और बछड़ा खेती-जोतके लायक उत्तम बैल बने।

जो देश गायको क़तल करते हैं और उसे खाना जायज मानते हैं, उन देशोंमें एकाङ्गी पशु चल सकते हैं। लेकिन भारत-जैसा देश, जो गोरक्षाको धर्म मानता है, गायके उपकारोंको स्मरण रखते हुए कृतज्ञतापूर्वक गोहत्या-निरोध कानून बनाना चाहता है, उस देशमें नर-मादा दोनों उपयोगी होंगे, तभी गोरक्षा हो सकेगी।

(आ) विदेशी रक्त बैल-शक्तिके लिये कम उपयोगी—आज क्रासब्रीडिंके जो प्रयोग चल रहे हैं उनमें ऐसा अनुभव आ रहा है कि बछड़ियोंमें दूध बढ़ जाता है, पर बछड़ोंमें जोत (ड्राफ्ट) की शक्ति घट जाती है। भारतको दूध भी चाहिये और जोत-शक्ति भी। इसलिये आवश्यक है कि विदेशी रक्तकी अपेक्षा भारतीय रक्त ही दिया जाय, जिससे बछड़ोंकी जोत-शक्ति कायम रह सके। किसी भी हालतमें बैल-शक्तिका घटना भारतके लिये अनुकूल नहीं हो सकता है। समतल भूमि और शहरोंकी सड़कोंपर सम्भव है क्रास बैल काम दे सकें, पर देहातोंमें खेतीमें मुश्किलसे काम देंगे, ये कड़ी धूपको बरदाश्त भी नहीं करते।

(इ) अपग्रेडिंग (भारतीय नसलोंसे क्रास करना)—भारतकी आबहवाके अनुकूल नसल तैयार करनी हो तो सिलेक्टिव ब्रीडिंग या अपग्रेडिंगका सहारा लेना चाहिये। आज भी सर्वाङ्गी नसलोंके उत्तम साँड़ मिल सकते हैं। उनको नजरअंदाज नहीं करना चाहिये। उनका सीमेन भी संग्रह करके नसल बढ़ानी चाहिये।

विदेशी नस्लोंसे ब्रीडिंगको क्रास-ब्रीडिंग कहते हैं और भारतीय नस्लोंके क्रासको अपग्रेडिंग कहते हैं। महाराष्ट्रके सतारा जिलेमें धोकमोंड क्षेत्रमें पिछले अनेक वर्षोंसे अपग्रेडिंगका कार्य होता आया है। इसके बहुत ही अच्छे परिणाम आये हैं। 'खिलार' को 'थारपारकर' से अपग्रेड किया गया। इस अपग्रेड नसलका नाम खिलारधारी रखा। खिलारका दूध ४-५ लीटर था तो खिलारधारीका अधिकतम

१४-१५ लीटर तक बढ़ा है। घृतांशका प्रतिशत भी अधिक है, बैल खेतीके लिये उत्तम होते हैं। अत: जहाँतक अपग्रेडिंगसे काम चलता हो, वहाँ अपग्रेडिंग ही किया जाय, क्रास-ब्रीडिंग न किया जाय।

(ई) मान्य नसलोंपर क्रास-ब्रीडिंगको पूर्णतया रोका जाय—भारतमें कुछ नसलें प्राचीन समयसे चलती आ रही हैं। हजारों वर्षोंके प्रयत्न एवं जलवायुके कारण कुछ नसलें स्थिर हुई हैं। इनमें कुछ स्थायी गुण देखे गये हैं। इन नसलोंमें गीर, थारपारकर, हरियाणा, कांकरेज, ओंगोज, कांगायम, देवनी आदि प्रमुख हैं। इनमें अधिकांश नसलें सर्वाङ्गी हैं। इन मान्य नसलोंका विकास भारतीय नसलोंसे सिलेक्टिव ब्रीडिंग या अपग्रेडिंगके जरिये किया जाय। इससे उनके स्थायी गुणोंको आँच आये बिना दूध और बैलशक्ति दोनोंकी वृद्धि हो सकेगी।

आज हमारे पास हरियाणा, थारपारकर, कांकरेज, ओंगोल आदिकी २,००० से २,५०० लीटरतक प्रति ब्याँत दूध देनेवाली और उत्तम बैल देनेवाली गायें मौजूद हैं। जिससे यह स्पष्ट होता है कि दो ढाई हजार लीटरतक दूध और उत्तम बैल पैदा करना सम्भव है। विशेषज्ञोंको अपनी शक्ति इसमें लगानी चाहिये। मान्य नसलोंपर क्रास-ब्रीडिंग करके उनके स्थायी गुणोंको नष्ट करना गोवंश तथा देश दोनोंके लिये हानिप्रद है।

६-गाय बनाम भैंस—आज भारतमें गाय और भैंसके सम्बन्धमें दुविधा चल रही है कि किसको तरक्की दी जाय। हम कुछ ऐसे पेशोपेशमें पड़े हैं कि इधर गायको भी बढ़ावा देते हैं, उधर भैंसको भी बढ़ावा देते हैं। नतीजा यह होता है कि न पूरी तरहसे गाय बढ़ पाती है न भैंस। एक बात समझ लेनी चाहिये कि भारतमें हमारे पास इतनी जमीन नहीं है कि हम गाय और भैंस दोनोंको साथ-साथ पाल सकें।

पशुओंसे राष्ट्रको दो अपेक्षाएँ हैं। पहली—अन्न-उत्पादन अर्थात् खेती-जोतकी और दूसरी दूधकी। दूधकी आवश्यकता भैंस पूरी कर सकती है, ऐसा थोड़ी देरके लिये यदि मान लें तो भी सारे देशकी खेती-जोतकी तथा परिवहनकी आवश्यकता भैंससे पूरी नहीं हो सकती, यह तथ्य है। हम सोचते हैं कि ट्रैक्टरसे पूरी खेती कर ली जाय तो भी आनेवाली कई पीढ़ियोंतक खेतीके लिये बैलोंकी आवश्यकता रहेगी ही। अगर तेलके स्रोत कम होते हैं तो बैल ही एकमात्र आधार रहेगा।

बहुत विचार करने तथा अनुभवसे यह सिद्ध हो जाता है कि गोवंशसे ये दोनों काम पूरे हो सकते हैं। जहाँतक खेती-जोतका प्रश्न है, बैलसे आज वह आवश्यकता पूरी हो ही रही है। शास्त्रीय संवर्धनसे बैल-शक्ति बढ़ानेकी ओर ध्यान देंगे तो जोत-शक्तिमें जो कमी पड़ती है वह भी पूरी हो सकती है। जहाँतक दूधका सवाल है, यह निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि भैंसके मुकाबले गायमें दूध देनेकी शक्ति बहुत अधिक है। आजकी गायें दूध कम देती हैं यह सही है। परंतु अच्छे संवर्धनके बाद गायोंका दूध काफी बढ़ सकता है। आज प्रत्यक्ष अनुभव भी यही है। गायोंमें जो कमी है, वह एक ही बातकी है कि गोदुग्धमें घीका प्रतिशत कम है। भैंसके दूधमें सबसे बड़ा आकर्षण घृतांशका अधिक होना है। जब हम यह मान लेते हैं कि गायमें दूध भैंसके मुकाबले डेढ़ या दुगुना हो सकता है तो यह भी मान लेना चाहिये कि गायके दूधमें घृतांशका प्रतिशत कम होनेपर भी टोटल घी भैंसके मुकाबले कम नहीं रहेगा। सब दृष्टिसे राष्ट्रकी शक्ति गोपालन-गोसंवर्धनमें लगेगी तभी देश आगे बढ़ सकेगा। आज तो गाय-भैंस दोनों ही बेतहाशा कट रहे हैं। बैलोंकी संख्या इतनी कम हो गयी है कि दोनोंकी आवश्यकता है। 'गोसेवा-संघ' ने गोवंशके क़तल-बंदीकी माँगके साथ ही भैंस-भैंसेके क़तल-बंदीकी भी माँग की है।

७-अन्त्योदय (किसानकी गायको बढ़ावा देना)—भारतमें दूधकी उपलब्धिका प्रश्न शहरोंकी कुछ गायोंको तीन-चार हजार लीटरवाली करनेसे हल नहीं होगा। आवश्यकता है करोड़ों गायें जो प्रति ब्याँत ५०० लीटरसे भी कम दूध देनेवाली हैं उनका संवर्धन करके उनमें प्रति ब्याँत १,००० से २,००० लीटर तक दूध बढ़ाया जाय। गोसंवर्धनके क्षेत्रमें अन्त्योदयका सिद्धान्त लगाना होगा अर्थात् जो गायें सबसे कम दूध देनेवाली हैं, उनका संवर्धन प्रथम किया जाय। उनका दूध चार गुना बढ़ाना कठिन नहीं है। भारत-जैसे विशाल और देहातोंमें बसनेवाले देशके लिये अन्तिम गायको उठाना प्रथम कर्तव्य होना चाहिये।

आज तो सभी क्षेत्रोंमें केवल धनी और मध्यम वर्गकी

सेवा चली है। शहरोंको दूध-सप्लाई करनेके अलावा गोसंवर्धनका कोई लक्ष्य नहीं माना जाता। पशुपालनमें होनेवाला अधिकांश खर्च केवल शहरोंकी सेवाके निमित्त हो रहा है। देहातके किसानकी, उसकी खेतीकी, उसमें भी अन्तिम किसानकी, कहीं कोई पूछ नहीं है। क्या हम आशा करें कि हमारे विशेषज्ञ और राजनेता सही दिशामें सोचना आरम्भ करेंगे एवं गिरी हुई करोड़ों गायोंको उठायेंगे?

८-शहरोंसे दुधार पशुओंको हटाना—गोवंशके पतनके कारणोंकी जाँच करनेसे पता चलता है कि उत्तम दुधार नसलोंका विनाश बड़े-बड़े शहरोंमें हो रहा है। बड़े-बड़े शहरोंमें दूधके लिये लोग अच्छी-से-अच्छी गायें ले जाते हैं और दूध कम होते ही वे गायें कसाईके हाथ बेच दी जाती हैं। इस तरहसे भारतका उत्तम-से-उत्तम गोधन इन शहरोंकी बलिवेदीपर नष्ट हो रहा है। 'गोसेवा-संघ' ने राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्रप्रसादजीकी अध्यक्षतामें सन् १९४९ में इस विषयकी जाँचके लिये एक समिति नियुक्त की थी। उस समितिने कलकत्ता और बंबई दो जगहकी जाँच की। जाँचमें यह पाया गया कि बड़े शहरोंमें गायोंकी हालत बहुत बुरी रहती है। न उनके निवासके लिये पूरा स्थान होता है, न दिनमें घूमनेका स्थान होता है। बछड़े-बछड़ियोंको मार दिया जाता है, क्योंकि उन्हें खिला-पिलाकर बड़े करनेमें जितना खर्च होता है, उतनी उनकी कीमत नहीं आती। कृत्रिम उपायोंसे गायोंका इतना दूध निकाला जाता है कि गाय जल्दी गरमाती ही नहीं। अक्सर दूध बंद होनेके बाद गाय कसाईके हाथ बेच दी जाती है। सूखी गायको ब्यानेतक पाँच-छः महीने रखने-खिलानेमें जितना खर्च होता है, उससे कम कीमतमें नयी गायें खरीद लेते हैं और पुरानी कसाईको बेच देते हैं। इस तरह देशकी उत्तम-से-उत्तम दुधार गायें और उनकी संतान नष्ट कर दी जाती है।

इस विनाशको रोकनेके लिये संघकी स्पष्ट राय है कि बड़े शहरोंमें दुधार पशुओंका रखना कतई बंद कर देना चाहिये। जिन लोगोंके पास बहुत कुछ खुली जमीन हो और जो लोग दूध सूखनेपर भी गायका पालन करनेमें समर्थ हों, ऐसे कुछ लोगोंको अपवादके तौरपर गायें रखनेकी इजाजत दी जा सकती है। शहरवालोंको चाहिये कि शहरोंमें पशु रखनेके बदले देहातोंसे दूध शहरोंमें लानेका इंतजाम कर लें। जैसा आज 'गोसंवर्धन-गोरस-भण्डारों' में होता है। मोटर आदिसे सौ-डेढ़-सौ किलोमीटर दूरसे दूध लाया जा सकता है। गाय-भैंस तो वहीं रहने चाहिये, जहाँपर खेतीकी जमीन हो और गोबर-गोमूत्रके खादका उपयोग हो सकता हो। जहाँ चारा-पानी सस्ता हो और जहाँ सूखे जानवरको पालनेमें आसानी हो, ऐसे स्थानोंपर गाय रखनेसे गाय बचेगी, खुली हवामें फिरनेवाली गायका दूध भी स्वास्थ्यकर मिलेगा, खेतीको अच्छी खाद मिलेगी, खेतीकी उन्नति होगी और अनाजकी उपज बढ़ेगी। खेतोंमें घूमनेवाली गायोंका स्वास्थ्यप्रद दूध भी मिल सकेगा। यही ऐसा तरीका है, जिसमें गाय और शहरवाले—दोनोंका लाभ है, दोनों बच सकते हैं। यही 'गोसंवर्धन-गोरस-भण्डार-योजना' है।

९-बूढ़े तथा अनुत्पादक पशु—बूढ़े पशुओंके लिये दूर जंगलोंमें जहाँ पर्याप्त चारा-पानी हो वहाँ गोसदन कायम किये जायँ। वहाँ साँड़ न रखा जाय। इससे बेकार पशुओंकी उत्पत्ति रुक जायगी। गोसदनोंपर जो खर्च होगा वह कहाँसे आये यह सवाल रहता है। आज बड़े-बड़े शहरोंमें व्यापारियोंने स्वयं प्रेरणासे व्यापारपर धर्मादाके नामसे गोरक्षणके खर्चके लिये लाग-बाग लगा रखी है, उन लाग-बागोंको कानूनी बना दिया जाय। जिन शहरोंमें ये लागें न हों वहाँ भी लगायी जा सकती हैं। जहाँ स्थानीय 'गोरक्षण-संस्था' चलती हो, वहाँ आधी आमदनी उसे दी जाय तथा आधी गोसदनोंके लिये रहे। जहाँ 'गोरक्षण-संस्थान' चलता हो, वहाँकी पूरी आमदनी गोसदनोंके लिये रहे। इस तरीकेसे काफी हदतक स्थायी व्यवस्था हो सकती है। इस व्यवस्थाके बाद भी सरकारी सहायताकी जरूरत रहेगी तो उतनी सहायता सरकारको देनी होगी। आज कम्पोस्ट जैविक खादोंका महत्त्व बढ़ रहा है। गोबर-गोमूत्रके खादकी पूरी कीमत मिली तो गोसदन स्वावलम्बी हो सकते हैं।

१०-गाँव-गाँव गोसदन—हर प्रकारसे गाँव स्वावलम्बी बने, ग्रामसभा सक्षम बने। ग्रामसभा तभी अच्छी बन सकती है जब गाँवका जो उत्तम गोधन है और जिनसे आर्थिक लाभ होता हो ऐसे पशु किसान-गोपालकोंके पास रहें और जो गायें बूढ़ी हैं या जवान होनेपर आर्थिक दृष्टिसे कमजोर हो गयी हैं, उनकी सँभालका कार्य गाँवके गोसदन करें। गोसदनमें गोबर-गोमूत्रके कम्पोस्ट खादकी उत्तम व्यवस्था हो। इस खादसे खर्चकी कमी पूरी हो सकती है। पूरी कोशिश की जाय तो

गोसदन स्वावलम्बी भी हो सकते हैं। यह संत विनोबाजीका नया सुझाव था। इस योजनाके अनुसार ग्रामसभा गाँवके बेकार पशुओंको सँभाल सकेगी। इससे 'गोहत्या-बंदी' सफल होगी और 'गोसंवर्धन' बढ़ेगा।

११-पशु-खाद्यका निर्यात बंद हो—विदेशी मुद्रा आयोजित करनेके लोभमें भारतसे बड़ी मात्रामें पशु-खाद्योंका खासकर खलीका विदेशोंमें निर्यात होता है। देशमें जितने पशु हैं, उनके लिये भी पशु-खाद्यकी कमी है, यह निर्विवाद बात है। परंतु मनुष्यका स्वार्थ उसे कहाँ-से-कहाँ ले जाता है, इसकी कोई सीमा नहीं। कृषि-मन्त्रालयके एक सचिव कहते हैं कि पशु-खाद्योंकी बहुत कमी है, इसलिये निर्यात बंद होना चाहिये। उधर प्रोडक्शन सचिव कहते हैं कि खलीका निर्यात जरूरी है, नहीं तो खलीके भाव गिर जायँगे। उसका असर उत्पादकोंपर पड़ेगा और परिणाम-स्वरूप मूँगफली एवं तिलहनोंका उत्पादन कम हो जायगा। तथाकथित बुद्धिमान् लोग अनुकूल-प्रतिकूल मनमानी दलीलें देते रहते हैं। निर्यातसे केवल शहरी व्यापार और कारखानेवालोंका स्वार्थ सधता है, ग्रामवासी मरते हैं।

वास्तविक स्थिति यह है कि पशु-खाद्योंकी देशमें कमी है, निर्यात बंद हुआ तो भारतके पशुओंको वह खाद्य मिलेगा। देशकी गायोंको खली मिलेगी तो दूध बढ़ेगा, खाद उत्तम मिलेगी, गोबर-गैस बढ़ेगी। कुल मिलाकर निर्यातके मुकाबले अधिक ही लाभ होगा।

१२-चारे-दानेकी प्लानिंग हो—गोसंवर्धनके लिये उत्तम साँड़के उत्तम बीजकी आवश्यकता है, ऐसा सभीका मानना है, परंतु उससे भी अधिक आवश्यकता पशुके खाद्योंके बढ़ानेकी है। यदि खाना पूरा न मिलेगा तो नसल-सुधारका सारा कार्यक्रम व्यर्थ जायगा। बिना खुराकके शरीरमें दूध भी नहीं बनता है। आज जो भी गायें जैसी भी हैं उनका नसल-सुधार किये बिना पर्याप्त खाना देंगे तो दूध बढ़ जायगा और बैल-शक्ति भी बढ़ जायगी। हमारा अनेक वर्षोंका अनुभव है कि खुराक अच्छी मिलनेपर यहाँ 'गोपुरी'में तीन गुनातक दूध बढ़ा है। चारे-दानेके बढ़ाये बिना गोसंवर्धन असम्भव है।

सारे देशमें 'मनुष्य-खाद्यों' के लिये प्लानिंग किया जाता है ताकि इसी जमीनमेंसे आवश्यक खाद्य-पदार्थ मिल जायँ। उसी प्रकार 'पशु-खाद्यों' यानी चारे-दानेका भी प्लानिंग, अनाजके प्लानिंगके साथ-साथ होना चाहिये। खेतीमें ऐसे ही बीज बोये जायँ जिनसे पशुओंके लिये अधिक चारा मिल सके।

१३-गोदुग्धकी खरीद उचित भावमें हो—आज भारतमें खासकर सरकारी-गैरसरकारी एवं सहकारी डेयरियोंसे घृतांशके आधारपर दूध खरीदनेके भाव निश्चित किये जाते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि गोदुग्धको बहुत ही कम भाव मिलता है और भैंसके दूधको गोदुग्धसे ड्योढ़ा भाव मिलता है। परिणाम यह होता है कि गोपालकको गाय छोड़कर भैंस पालनी पड़ती है। आज हम देख रहे हैं कि बंबई, दिल्ली, गुजरात, उत्तरप्रदेश आदि जहाँ-जहाँ भी घृतांशके आधारपर दूध खरीदनेके भाव रखे गये हैं, वहाँ-वहाँ डेयरियोंके आस-पास गायें समाप्त हुई हैं और भैंसें बढ़ी हैं।

घृतांशके आधारपर भाव रखनेमें सबसे बड़ी भूल यह है कि दूधमें घृतांशको ही हम सबसे कीमती वस्तु मानते हैं और बाकी तत्त्वों (पाउडर) को गौण। यह शोषणका व्यापारी तरीका है। वास्तविक पोषणकी दृष्टिसे देखा जाय तो घृतांशकी कीमत एक तिहाई और बाकीके दूध पाउडर (एस० एन० एफ०) की कीमत दो तिहाई मानी जायगी। राष्ट्रिय योजनामें राष्ट्रको देशका पोषण देखना चाहिये। इसलिये यह तय करना आवश्यक है कि गोदुग्धको किसी प्रकार भी भैंसके दूधसे कम भाव न मिले। खुशीकी बात है कि इस दृष्टिकोणको महाराष्ट्र सरकारने समझा था। 'भारतीय कृषि उद्योग-संस्थान उरलीकांचन' के सतत प्रयत्नोंसे यह काम हुआ। महाराष्ट्र सरकारकी ओरसे साढ़े चार प्रतिशत घृतांश और साढ़े आठ प्रतिशत एस०एन०एफ० टोटल सॉलीडस १३ प्रतिशतके गोदुग्धको और ७ प्रतिशत घृतांश तथा ९ प्रतिशत एस०एन०एफ० कुल सॉलीडस १६% भैंसके दूध दोनोंका खरीद-भाव समान देती रही। कई सालोंतक यह योजना चली। उसका परिणाम यह हुआ है कि महाराष्ट्रमें काफी मात्रामें गोपालन बढ़ा है। उरलीकांचन-संस्थाके महामन्त्री स्व० मणिभाईका दावा था कि दूध-खरीदीकी यही नीति चलती रही तो दस सालमें सारे महाराष्ट्रमें गोदुग्ध-ही-गोदुग्ध हो जायगा। सर्वत्र गायें फलेंगी-फूलेंगी। श्रीमणिभाईका यह दावा सफल हुआ है। आज वरली डेरीमें ८० % गोदुग्ध आ रहा है।

उचित यही है कि गोदुग्ध और भैंसके दूधके भाव समान हों। उत्पादन-खर्चकी दृष्टिसे यह माना जा सकता है कि गोदुग्धके उत्पादनका खर्च कुछ कम आता है। इसलिये गोदुग्धके भाव भैंसके दूधके मुकाबले दस प्रतिशततक कम रखे जा सकते हैं। परंतु पिछले ४० वर्षोंमें गायके साथ भारी अन्याय हुआ है। गोदुग्धको अधिक भाव देने चाहिये यह बात विशेषज्ञ भी कहने लगे हैं। वे समझ गये हैं कि गोदुग्धको अधिक भाव नहीं मिलेंगे तो उनके सारे कार्यक्रम असफल हो जायँगे।

खुशीकी बात है कि भैंसके हिमायती, राष्ट्रिय डेरी विकास बोर्डके अध्यक्षने भी इस तथ्यको माना है कि आज दूध-खरीदीकी जो नीति है उसमें गायके प्रति भारी अन्याय हो रहा है। इसलिये उन्होंने प्रथम कदमके तौरपर यह स्वीकार किया है कि गोदुग्ध और भैंसके दूधके खरीद-भावमें १०-१५ प्रतिशतसे अधिक अन्तर न हो।

१४-गोदुग्ध-प्रसार—दुनियाका यह नियम है कि जिस वस्तुकी माँग बढ़ती है वह दुनियामें अधिक पैदा होने लगती है और जिसकी माँग घटती है उस वस्तुका धीरे-धीरे लोप होता जाता है। यदि हम चाहते हैं कि गायका हमारे परिवारमें स्थान हो तो उसे अपने नित्यके जीवनमें स्थान देना चाहिये, यानी अपने घरमें गाय रखकर गोपालन करना चाहिये। ऐसा सम्भव न हो सके तो कम-से-कम इतना आग्रह तो रख ही सकते हैं कि अपने घरमें केवल गोदुग्धका ही इस्तेमाल करें। बड़े शहरोंमें गोदुग्ध उपलब्ध होनेमें कठिनाई है फिर भी माँग बढ़नेपर गोदुग्ध मिलने लगेगा। गोरस-भण्डारोंमें यह अनुभव आ रहा है कि गोदुग्धकी कमी नहीं है। गोदुग्धके ग्राहक कम होनेसे गोदुग्धका उत्पादन नहीं बढ़ा सकते हैं। 'वाराणसी-मथुरा-गोरस-भण्डारों' का यही अनुभव है।

गायका दूध स्वास्थ्यके लिये सर्वोत्तम है यह निर्विवाद सत्य है। डॉक्टर-वैद्य बीमारोंके लिये गोदुग्धका सेवन ही हितकर बताते हैं। बच्चों, स्त्रियों और बूढ़ोंके लिये तो गोदुग्ध अमृत है। 'अन्ताराष्ट्रिय स्वास्थ्य-संस्था' ने भी एक रायसे निर्णय दिया है कि मानव-स्वास्थ्यके लिये गोदुग्ध सर्वोत्तम है। उसमें साढ़े तीन-चार प्रतिशत घृतांशकी मात्रा है और यह मात्रा मानवके लिये पर्याप्त है। उससे अधिक घृतांश मानवके लिये हितकारी नहीं है। आज सारी दुनियाकी ओर नजर दौड़ायेंगे तो देखेंगे कि अमेरिका, इंग्लैंड, यूरोप, एशिया आदि बड़े-से-बड़े विकसित देशोंमें केवल गायें ही रखी जाती हैं एवं गोदुग्ध-गोघृतका ही इस्तेमाल होता है। विदेशवाले भारतसे गायें और साँड़ ले गये हैं। वे चाहते तो भैंस भी ले जा सकते थे। परंतु उन्होंने मानवके लिये गोदुग्धको ही हितकारी माना। हमलोग दूधके गुणोंको न देखकर भैंसके दूधके घृतांशपर मोहित हैं। जय-जयकार गोमाताका करते हैं और बढ़ावा भैंसको देते हैं। इस प्रकारकी हमारी ढुलमुल निष्ठा ही गोहत्याको बढ़ा रही है। गोरक्षा चाहनेवाले हर भाई-बहनको इसपर गहराईसे विचार करना चाहिये। १९२४ में राष्ट्रपिता गाँधीजीने गोरक्षाका काम सँभाला। उसी दिन गोरक्षाकी पहली शर्त रखी थी कि अपने घरमें घी-दूध गायका ही इस्तेमाल करें। आज भी इस शर्तका अमल हो तो देखते-देखते घर-घरमें गायें पलने लगेंगी एवं मानवका शरीर-स्वास्थ्य सुधरेगा, आपसी सद्भाव बढ़ेगा। गोहत्या बंद होगी।

गोग्रास—भारतीय संस्कृतिने गायको कामधेनु माना है। मानवके जीवनमें गायसे अधिक सहयोग देनेवाला अन्य कोई प्राणी नहीं है। खेती जोतकर अनाज देती है, उत्तम खाद देती है, गोबर-गैस-प्लान्टसे भोजन पकानेका गैस देती है, गोमूत्रके रूपमें उत्तम औषध देती है। माता सालभर दूध पिलाती है, पर गोमाता बच्चेको और माँको भी जीवनभर दूध पिलाती है। सनातन भारतने इस माताके उपकारोंको स्मरण करके इसे परिवारमें स्थान दिया, अवध्य माना और अपने भोजनसे पहले गोमाताके लिये गोग्रास निकालनेका धर्म प्रचारित किया।

आजकी परिस्थितिमें गोग्रास देनेके लिये हर घरमें गायें मिलना सम्भव नहीं। गोग्रासके लिये यदि गाय न मिले तो गोग्रासके रूपमें हर परिवारको रोजाना कम-से-कम १० नये पैसे निकालना चाहिये और साल भरके बाद जिस गोरक्षण-संस्थामें, आपको गायकी सेवा होती दीखे, उसे समर्पित कर देना चाहिये। इसे धर्मका ही रूप, गोसेवाका ही रूप और गोरक्षाका ही एक रूप समझना चाहिये। इससे आप गोसंवर्धन-जैसे पुण्य-कार्यमें भागी बन सकेंगे।

मन्त्री

—अ० भा० कृषि-गोसेवा-संघ

गो-सेवा-विमर्श

[श्रीशिवनाथजी दुबे, एम्० कॉम०, एम्०ए०, साहित्यरत्न, धर्मरत्न]

प्रजापति ब्रह्माकी सृष्टिमें 'गौ' एक आदर्श प्राणी है। शास्त्रों एवं पुराणोंके अनुसार धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष—इन चारों पदार्थोंको प्रदान करनेवाली एकमात्र गाय ही है। विश्वमें कलियुगके प्रभावसे प्रायः सभी वस्तुओंका प्रभाव लुप्त-सा होता जा रहा है, परंतु गौ माता एवं गो-सेवाका प्रभाव वर्तमान समयमें भी लुप्त नहीं हो सका है। यदि भक्तिपूर्वक गो-सेवा की जाय तो वह अपने भक्तकी सभी इच्छाएँ पूर्ण करनेमें सक्षम है। वेदोंमें मानवके लिये यज्ञानुष्ठान बताया गया है। देववृन्दको आहुतियाँ प्राप्त होती हैं अग्निरूपी मुखसे—'**अग्निमुखा हि देवा भवन्ति**' एवं देवगणको अर्पित करने योग्य हवि प्राप्त होता है गायसे। इसीलिये गायको हविको देनेवाली 'हविर्दुघा' कहा गया है।

यज्ञ-वेदीको पवित्र तथा स्वच्छ करनेके लिये गोबरकी आवश्यकता होती है। पवित्र यज्ञाग्निको प्रज्वलित करने-हेतु गोबरके उपले (कंडे) अपेक्षित होते हैं। यज्ञमें जौ, चावल, तिल इत्यादि जिस हविष्यान्नकी आवश्यकता होती है, उसे उत्पन्न करनेके लिये बैल (गौकी संतान) की जरूरत पड़ती है। यज्ञमें पञ्चगव्यका महत्त्व सर्वविदित ही है।

आध्यात्मिक दृष्टिसे गायका महत्त्व वर्णनातीत है। प्रजापति ब्रह्मा, जगत्-पालक विष्णु एवं देवाधिदेव महादेवद्वारा भी गायकी स्तुति की गयी है—हे पापरहिते! तुम सभी देवताओंकी जननी हो। तुम यज्ञकी कारणरूपा हो, तुम समस्त तीर्थोंकी महातीर्थ हो, तुमको सदैव नमस्कार है, यथा—

त्वं माता सर्वदेवानां त्वं च यज्ञस्य कारणम्।
त्वं तीर्थं सर्वतीर्थानां नमस्तेऽस्तु सदानघे॥

(स्कन्द०, ब्रह्म०, धर्मारण्य० १०। १८)

वेदने तो गायके रूपको अखिल ब्रह्माण्डका रूप बतलाया है, '**एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम्।**' गायके विश्वरूपका उल्लेख ब्रह्माण्डपुराण, महाभारत, पद्मपुराण, अथर्ववेद, भविष्यपुराण तथा स्कन्दपुराण आदिमें मिलता है। अथर्ववेदके अनुसार गायके रोम-रोममें देवताओंका निवास है।

श्रीमद्भगवद्गीतामें आनन्द-कन्द भगवान् श्रीकृष्णने अपने दिव्य-स्वरूपोंका वर्णन करते हुए '**धेनूनामस्मि कामधुक्**' कहा है। महाभारतके अनुसार यज्ञके फलोंका कारण गाय ही है तथा गायमें ही यज्ञकी प्रतिष्ठा है। यथा—

गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।

गो-सेवासे श्रेष्ठतम महान् पुत्रकी प्राप्ति होती है। कुल-गुरु-वसिष्ठद्वारा महाराज दिलीपको सुरभिनन्दिनीकी भक्तियुक्त सेवाका आदेश हुआ। गो-सेवाके परिणामस्वरूप ही राजा दिलीपके पुत्र रघु हुए। महाराज ऋतम्भरने मुनि जाबालिके आदेशानुसार भक्ति-भावनासे गो-सेवा की, परिणामस्वरूप सत्यवान् नामक पुत्रकी प्राप्ति हुई।

गोबर-गोमूत्रकी खाद (उर्वरक) से प्रचुर मात्रामें अन्नरूपी लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। गो-सेवासे लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है—

गवां सेवा तु कर्तव्या गृहस्थैः पुण्यलिप्सुभिः।
गवां सेवापरो यस्तु तस्य श्रीर्वर्धतेऽचिरात्॥

स्वप्न-विज्ञानके अनुसार यदि गायका स्वप्नमें दर्शन हो तो वह महान् कल्याणकारी तथा व्याधिनाशक होता है। ज्योतिष विज्ञानके अनुसार यदि यात्राके प्रारम्भमें गाय सामने पड़ जाय अथवा अपने बच्चेको दूध पिलाती हुई गाय सामने आ जाय या दिखायी पड़ जाय तो यात्रा सफल होती है। गो-सेवासे व्यायाम भी होता है, जो स्वास्थ्यके लिये लाभदायक है। गृहविज्ञानके अनुसार गोबर स्वच्छता एवं पवित्रता प्रदान करनेवाला है। ग्रामवासी वर्तमान समयमें भी अपने आवासको गोबरसे लीपकर पवित्र करते हैं।

ऋषिकुलों एवं गुरुकुलोंमें ब्रह्मचारियोंको गुरु-सेवाके साथ गो-सेवा भी अनिवार्य होती थी। प्रत्येक कुल (आश्रम) की अपनी गायें हुआ करती थीं, उनकी सेवा विद्यार्थियोंको अनिवार्य रूपसे करनी होती थी। परिणामस्वरूप वे आभीरकर्म (डेयरी फार्मिंग) में प्रवीण हो जाते थे।

गो-सेवक एवं गोभक्त जन आज भी परलोक-साधनके लिये प्रतिदिन नियमित रूपसे दोनों समय (सुबह एवं शाम) गोग्रास देनेके उपरान्त ही भोजन ग्रहण करते हैं। गोग्रासका फल यह होता है कि मरणोपरान्त जीवको दूसरे

लोकमें जाते समय मार्गमें यमदूतोंद्वारा होनेवाले आक्रमणसे गायें जीवोंकी रक्षा करती हैं, इसलिये गायोंको गोग्रास देना चाहिये। प्रात:काल उठकर गौ माताको प्रणाम करना चाहिये। इससे अन्नपूर्णा भगवती प्रसन्न होती हैं तथा धन-धान्य-सम्पदा प्राप्त होती है। गोग्रास देनेसे गृहस्थाश्रमी जन आन्तरिक सुखका अनुभव करते हैं। पवित्रतासे बनाया हुआ भोजन गोग्रासके लिये उत्तम होता है। गोग्रासका मन्त्र निम्न प्रकार है—

सौरभेय्यः सर्वहिताः पवित्राः पुण्यराशयः।
प्रतिगृह्णन्तु मे ग्रासं गावस्त्रैलोक्यमातरः॥

आधुनिक कृषि-यन्त्रोंकी अपेक्षा गौकी संतान अर्थात् बैल कृषि-कार्यके लिये अत्यधिक लाभदायक है। कृषि-कार्यकी दृष्टिसे खेत जोतना एवं खाद देना—ये दोनों ही महत्त्व रखते हैं। यन्त्रसे खाद नहीं प्राप्त की जा सकती, खेत जोते जा सकते हैं। आधुनिक कृषि-विज्ञानद्वारा प्रस्तुत रासायनिक उर्वरक (खाद) की अपेक्षा गाय एवं बैलके गोबरकी खाद उत्कृष्ट है। रासायनिक उर्वरकोंकी तुलनामें गाय तथा बैलकी खादसे जो अन्नोत्पादन होता है, वह अधिक सुस्वादु एवं पौष्टिक होता है। कृषि-अर्थशास्त्रके अनुसार कृषि-कार्यमें कोई भी कृषि-यन्त्र बैलका स्थान नहीं ग्रहण कर सकता है। भारतकी सभी कृषि-योग्य भूमि ट्रैक्टरोंसे जोतने योग्य नहीं है।

आधुनिक कृषि-यन्त्रोंसे सर्वाधिक क्षति यह होगी कि कृषि-कार्यमें मशीनयुगके दोषोंका प्रवेश हो जायगा और भारतीय कृषक भी उन दोषोंसे प्रभावित हो जायगा। बहुतसे मजदूरों एवं कृषकोंको बेकारीकी समस्याका सामना करना पड़ेगा।

गायके दूधमें जो पोषक तत्त्व पाये जाते हैं, वे किसी अन्य (भैंस या बकरी) के दूधमें सुलभ नहीं होते। माँके दूधके पश्चात् गो-दुग्धका ही स्थान है। आयुर्वेदमें गो-दुग्ध, गो-दधि एवं गो-नवनीतको बालक, युवा, वृद्ध तथा रोगी—सभीके लिये कल्याणकारी और अमृतके सदृश उपयोगी कहा गया है—

जरासमस्तरोगाणां शान्तिकृत् सेविनां सदा।
तद्धितं बालके वृद्धे विशेषादमृतं शिशोः॥

गायको 'माता' का स्थान प्रदान किया गया है। गायके अतिरिक्त किसी भी पालतू जानवरको 'माता' नहीं कहा जाता। गायको माता इसलिये कहा जाता है कि यह जीवित रहनेपर तो सभी प्रकारसे उपकारिणी है ही, मरणोपरान्त भी गायकी हड्डी, चमड़ा, खुर, सींग इत्यादि उपयोगी होते हैं। गौ माता अपनी सभी संतानोंका समान-रूपसे हित करती है। हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई—किसी भी जाति या सम्प्रदायका व्यक्ति क्यों न हो, गोदुग्ध एवं अन्य वस्तुएँ समान-रूपसे तथा बिना किसी भेद-भावके उन्हें सुलभ होती हैं। अस्तु, गाय हमारे देशकी एक अमूल्य सम्पत्ति है।

हमारे प्राचीन ग्रन्थ गोमहिमासे भरे हुए हैं। अग्नि, भविष्य, मत्स्य, पद्म इत्यादि पुराणोंमें गायोंकी चिकित्सा, गोदुग्धादिकी विशेषताएँ, पञ्चगव्यसे लाभादि स्थान-स्थानपर वर्णित हैं। '**धनं च गोधनं धान्यं स्वर्णादयो वृथैव हि**' हमारे अर्थशास्त्रका यही मूलाधार रहा है। अमेरिकाके 'होर्ड्स डेयरीमैन' नामक पत्रके सम्पादककी निम्नाङ्कित पंक्तियोंसे गायकी चिरन्तन ज्योतिकी महिमा परिलक्षित होती है—

'गाय हमारे दुग्ध-जगत्की देवी है। वह भूखोंको खिलाती है, नग्नोंको पहनाती है एवं मरीजोंको उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करती है। उसकी ज्योति चिरन्तन है।'

परंतु यह एक महान् दुर्भाग्यकी बात है कि आर्यावर्तकी इस पावन धरतीपर पूर्णरूपेण गोवध-निषेध नहीं हो सका। हमारे सनातन धर्म, दर्शन, सम्प्रदाय आदि सभीने उच्च-स्वरसे गो-वधका विरोध किया। हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि किसीने भी गो-वधका समर्थन नहीं किया। प्रत्येक दृष्टिसे गो-वधपर शत-प्रतिशत नियन्त्रण अनिवार्य है। गो-वध भारतके लिये महान् अपराध, महान् पाप एवं महाकलंक है। गो-वधसे भारतीय सभ्यता एवं संस्कृतिकी छवि धूमिल होती है।

भगवान् श्रीकृष्णका नाम 'गोपाल' है। गायोंकी सेवा करना एवं वन-वन भ्रमण कर गायोंको चराना उनकी दिनचर्याका मुख्य कार्य रहा है।

अस्तु, भारतवर्षके उज्ज्वल भविष्यका पुनर्निर्माण गो-सेवा, गोवंशकी रक्षा एवं गोमाताके आशीर्वादपर ही आधारित है।

भारतीय संस्कृति एवं विचारधारामें गोसेवा

[श्रीसुरेशकुमारजी चौरसिया]

भारतीय संस्कृतिका मूलाधार वास्तवमें गौ माता ही है। गौको सर्वदेवमयी बतलाया गया है। अथर्ववेदमें उसे रुद्रोंकी माता, वसुओंकी दुहिता, आदित्योंकी स्वसा और अमृतकी नाभि-संज्ञासे विभूषित किया गया है—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां
स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्य नाभिः।

गोसेवासे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों तत्त्वोंकी प्राप्ति सम्भव है। आज भी गौ माताका दिव्य प्रभाव कहीं-न-कहीं देखने-सुनने-पढ़नेको अवश्य ही मिल जाता है।

भारतीय शास्त्रोंके अनुसार गौमें तैंतीस कोटि देवताओंका वास है। उसकी पीठमें ब्रह्मा, गलेमें विष्णु और मुखमें रुद्र आदि देवोंका निवास है। यथा—

पृष्ठे ब्रह्मा गले विष्णुर्मुखे रुद्रः प्रतिष्ठितः।

यही कारण है कि सम्पूर्ण देवी-देवताओंकी आराधना केवल गौ माताकी सेवासे ही हो जाती है।

गोसेवा भगवत्प्राप्तिके अन्यतम साधनोंमेंसे एक है। इससे भगवान् शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। यह बड़ी ही विचित्र बात है कि भगवान् जहाँ मनुष्योंके इष्टदेव हैं, वहीं गौ उनकी भी इष्टदेवी है। अतएव गोसेवासे लौकिक लाभ तो मिलते ही हैं, पारलौकिक लाभकी प्राप्ति भी हो जाती है।

प्राचीन कालसे ही भारतीय जन-मानस गोमहिमासे प्रभावित रहा है। पद्मपुराणके सृष्टिखण्ड (४५।१३०) में उल्लेख है कि ब्रह्माने प्राचीन कालमें बिना किसी भेदभावके सबके पोषणके लिये ही गौको उत्पन्न किया था—

अस्य कायो मया सृष्टः पुरैव पोषणं प्रति।

भारतीयोंके सम्पूर्ण संस्कार ही गोमय-गोमूत्र-गोघृत तथा गोक्षीरद्वारा सम्पन्न किये जाते हैं। गोघृत बिना यज्ञ सम्पन्न हो नहीं सकता। पुराणादि शास्त्रोंमें गोधनकी महिमापर विशेष बल दिया गया है। गायके गोबरमें अष्ट ऐश्वर्ययुक्त लक्ष्मी सदा ही निवास करती हैं—

अष्टैश्वर्यमयी लक्ष्मीर्गोमये वसते सदा।

गायें पवित्र, मङ्गलकारक होती हैं। इनमें समस्त लोक प्रतिष्ठित हैं। गायें यज्ञका विस्तार करती हैं। वे समस्त पापोंका विनाश करती हैं—

गावः पवित्रं माङ्गल्यं गोषु लोकाः प्रतिष्ठिताः।
गावो वितन्वते यज्ञं गावः सर्वाघसूदनाः॥

गायोंको नियमित ग्रास देनेमात्रसे ही स्वर्गलोककी प्राप्ति हो जाती है। यथा—

गवां ग्रासप्रदानेन स्वर्गलोके महीयते॥

अतः गो-पालन-रक्षण करना अति आवश्यक है। कहा गया है कि जिस घरमें गाय नहीं है, जहाँ वेद-ध्वनि नहीं होती और जो बालकोंसे भरा-पूरा न हो, वह घर घर नहीं है, अपितु श्मशान है—

यत्र वेदध्वनिध्वान्तं न च गोभिरलंकृतम्।
यत्र बालैः परिवृतं श्मशानमिव तद् गृहम्॥

(अत्रिसंहिता, ३१०)

प्रातःकाल और यात्रा-समय गोदर्शनसे पुण्य और सफलता मिलती है। गौ मनुष्योंको सौभाग्य प्रदान करती है। ऋग्वेदमें गौको अघ्न्या कहा गया है, क्योंकि यह प्रजाओंको भाग्यवान् और धनवान् बनाती है। महाभारतमें भी कहा गया है कि गौओंके दूधसे बढ़कर कोई पदार्थ नहीं, अतः गायका दान सबसे बड़ा दान है।

शास्त्रोंमें उल्लेख है कि गोसेवासे धन, संतान और दीर्घायुष्य प्राप्त होते हैं। गाय जब तुष्ट होती है तो वह समस्त पाप-तापोंको दूर कर देती है। दानमें दिये जानेपर वह अक्षय स्वर्गलोकको प्राप्त करती है तथा ठीक प्रकारसे पालन-पोषण किये जानेपर अपार धन-सम्पत्ति प्रदान करती है; अतः गायोंसे बढ़कर और कोई दूसरा धन नहीं है। गोधन ही वास्तवमें सच्चा धन है—

तुष्टास्तु गावः शमयन्ति पापं
दत्तास्तु गावः त्रिदिवं नयन्ति।
संरक्षिताश्चोपनयन्ति वित्तं
गोभिर्न तुल्यं धनमस्ति किंचित्॥

गायें जहाँ जलपान करती हैं अथवा जिस जलमें संतरण करती हैं, वहाँ सरस्वती निवास करती है—

यत्र तीर्थे सदा गावः पिबन्ति तृषिता जलम्।
उत्तरन्त्यथवा येन स्थिता तत्र सरस्वती॥

जो भी व्यक्ति गायकी सेवा-शुश्रूषा करता है, वह सभी पापोंसे छुटकारा पा जाता है।

यदि हम प्राचीन भारतीय इतिहासके दर्पणमें झाँककर देखें तो पता चलता है कि गोसेवासे ही भगवान् श्रीकृष्णको भगवत्ता, महर्षि गौतम, कपिल, च्यवन, सौभरि तथा आपस्तम्ब आदिको परम सिद्धिकी एवं महाराज दिलीपको रघु-जैसे चक्रवर्ती पुत्रकी प्राप्ति हुई थी। महर्षि च्यवन और आपस्तम्बने अपना मूल्य गायसे लगाया था।

गोसेवासे ही अहिंसा-धर्मको सिद्ध कर भगवान् महावीर एवं गौतम बुद्धने अपने महान् धर्मोंको सम्पूर्ण विश्वमें फैलाया था।

वेदोंसे लेकर सभी पुराणों तथा अन्यान्य धर्मशास्त्रोंमें धर्मको वृषका ही रूप माना गया है। शास्त्रोंका यह उद्घोष है कि गाय विशुद्ध एवं अक्षय लक्ष्मीको देनेवाली है। गौएँ वेद एवं शुद्ध ज्ञान-विज्ञानकी जननी हैं और पवित्रताओंकी मूल स्रोत तथा सीमा हैं।

महाभारतकारने कहा है—**'गोधनं राष्ट्रवर्धनम्।'** प्राचीन कालमें जिसके पास जितनी अधिक गौएँ होती थीं, वह उतना ही अधिक धनी माना जाता था। गोपालचम्पूमें उल्लेख है कि नन्दबाबाके पास नौ लाख गौएँ थीं। महाभारतमें भी मत्स्यराज विराटके पास साठ हजार गौएँ होनेका प्रमाण मिलता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन समयमें गोधनका कितना महत्त्व था।

कालिदासने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ रघुवंशमें महाराज दिलीप एवं सिंहके वृत्तान्तमें घड़ेके समान स्तनवाली करोड़ों गायोंके देनेका उल्लेख किया है—

'गाः कोटिशः स्पर्शयता घटोध्नीः।' (२।४९)

राजा नृगके सम्बन्धमें भी आया है कि उन्होंने असंख्य गायोंका दान दिया था। भगवान् श्रीरामने भी दस सहस्र करोड़ गायोंका दान दिया था। इसी तरह महान् योगीश्वर श्रीकृष्णने भी तेरह हजार चौरासी गौएँ प्रतिदिन दान करनेका नियम बना लिया था।

वस्तुतः हमारे राष्ट्रका वैभव-वर्धन तो गोधनके विकास, उसकी रक्षा तथा वृद्धिसे ही जुड़ा हुआ है।

निःसंदेह गोसेवामें सबका हित और कल्याण निहित है। किंतु आज दुर्भाग्य है कि गोवंशकी रक्षापर समुचित ध्यान नहीं दिया जा रहा है। राष्ट्रकविने सखेद एक स्थानपर लिखा है—

है भूमि वन्ध्या हो रही, वृष-जाति दिन-दिन घट रही,
घी दूध दुर्लभ हो रहा, बल वीर्य की जड़ कट रही।
गोवंश के उपकार की सब ओर आज पुकार है,
तो भी यहाँ उसका निरंतर हो रहा संहार है॥

हमारी इस पवित्र भूमिपर प्रतिवर्ष लाखों-करोड़ोंकी संख्यामें गाय और बैल काटे जाते हैं और हम सभी मूकदर्शक बनकर चूँ तक भी आवाज नहीं उठाते। गौके प्रति हमारी आदर-बुद्धि केवल कहने भरके लिये ही मात्र रह गयी है। गो-धन ही हमारा प्रधान बल है। गो-धनकी उपेक्षा करके वस्तुतः हम जीवित नहीं रह सकते।

विष्णुधर्मोत्तरपुराणका तो यहाँतक कहना है कि अपनी आत्मासे भी अधिक गायकी रक्षाका ध्यान रखना चाहिये। गायकी श्वास-वायुसे घर पवित्र होता है, गायके स्पर्शसे पाप दूर होते हैं। अतः गोसेवामें सबका हित और कल्याण निहित है।

गोसेवाका स्वरूप

[श्रीज्ञानसिंहजी चौधरी, राज्य-मन्त्री-कृषि एवं सिंचित क्षेत्रीय विकास]

भारतीय संस्कृतिका मूलाधार गौ माता ही है और गोसेवासे धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षरूप चतुर्विध पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं। भगवत्प्राप्तिके अन्यतम साधनोंमेंसे गोमाताकी सेवा भी एक साधन है। इस कठिनतम युगमें मानवका गौ माताके प्रति सेवा-भाव अत्यन्त ही पुनीत कार्य होगा। मैं इस विशेषाङ्कके लिये अपनी हार्दिक शुभ कामनाएँ दे रहा हूँ।

भक्ति, मुक्ति और शक्तिका स्रोत गोसेवा

[स्वामी श्रीबजरंगबली ब्रह्मचारी]

वेदोंका उद्घोष, पुराणोंकी पुकार और स्मृतियोंकी ललकारका समवेत स्वर अनादिकालसे गोसेवाका आदेश, उपदेश और संदेश सुनाता चला आ रहा है।

वेद प्रभुसम्मित भाषामें, स्मृतियाँ सुहृद्-सम्मित शैलीमें तथा पुराण और काव्यग्रन्थ कान्तासम्मित सरस सुझावके रूपमें गोसेवाकी उपयोगिता तथा आवश्यकताका अनुमोदन करते हैं।

भारतीय जीवनमें गोमहिमा इतने भीतरतक समा गयी है कि वेदोंके सारभाग उपनिषदोंको हम गौकी संज्ञा देते हैं; स्मृतियोंको हम गौका दूध मानते हैं और पुराणों तथा काव्यग्रन्थोंको हम गोघृत-जैसा तुष्टि, पुष्टि और सर्वतोमुखी इष्ट-अभीष्टकी सिद्धिका हेतु मानते हैं। तभी तो '**शब्दा धेनवः**' की सूक्ति-सदुक्ति सर्वत्र प्रचलित है।

आत्मदर्शन (मुक्ति) की प्रेरणा देते हुए बृहदारण्यक-उपनिषद्में याज्ञवल्क्यने मैत्रेयीसे कहा है—

'**आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः।**'

यद्यपि आत्मसाक्षात्कार जो मानव-जीवनका चरम लक्ष्य है—मुण्डकोपनिषद्ने बलहीनके लिये उसे दुर्लभ बताया है। यथा—

'**नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः**' (मुण्डक० ३। २। ४)

परंतु गोसेवासे अर्जित ऊर्जा (शक्ति) इस बलहीनताकी न्यूनताका निवारण सद्यः कर देती है, तभी तो छान्दोग्योपनिषद्के कथनानुसार सत्यकामको केवल गोसेवाके कारण ही विशुद्ध बुद्धिकी प्राप्ति और देव-दुर्लभ आत्मसाक्षात्कारकी उपलब्धि सहज सुलभ हो जाती है।

गोसेवाके प्रभावसे 'सत्यकाम' आप्तकाम, पूर्णकाम होकर ओजस्वी-तेजस्वी-स्थिति प्राप्त कर लेता है। केवल गोचारणके द्वारा ही उसे ब्रह्मज्ञान—आत्मज्ञानकी अनुभूति हो जाती है। जिस समय गौओंको लेकर वह गुरुजीके पास आया, उस समय उसके तेजको देखकर गुरुजीको भी कहना पड़ा—

'**ब्रह्मविदिव वै सोम्य भासि को नु त्वानुशशास**'

(छान्दोग्य० ४। ९। २)

हे सोम्य! तू ब्रह्मवेत्ता-सा जान पड़ता है, तुझे किसने उपदेश दिया है?

भक्तिके क्षेत्रमें भगवान्‌को गौ, गोप और गोपियाँ सर्वाधिक प्रिय हैं। तभी तो नारदभक्तिसूत्र (२१) में '**यथा व्रजगोपिकानाम्**' का उदाहरण देकर पारस्परिक प्रेमकी सराहना की गयी है।

गोचारणमें सदा संग रहनेके कारण, गोप उनसे अभिन्न-जैसे हो गये थे। एक दिन जब 'तिक्कीघोड़ा-खेल' में श्रीदामा नामक गोपसे खेलमें हारे हुए कृष्ण दाँव देनेमें आनाकानी करते हैं, तब गोसेवक श्रीदामाकी भावभरी धमकीसे भगवान् कृष्ण भी घबरा जाते हैं और उन्हें अपने ऊपर बिठा लेते हैं। यथा—

दूरी करौ गइया श्रीदामा ललकारि कह्यो
हारि गये दाँव तबौं करैं लरइया हैं।
नाहिन अधीन हम तुम्हरे नंद बाबाके,
जाति-पाँति एकै बस ज्यादा दो गइया हैं॥
खुट्टु खेल तुमसे सुनिकै घबराय गये,
दाँव देन सखरे केशन कन्हइया हैं।
जगत के स्वामी आजु स्वयं तिक्कीघोड़ा बने,
तिक् तिक् चढ़े हाँकि रहे श्रीदामा भइया हैं॥

यह है भगवान्‌का गौ और गो-भक्तोंसे प्रेमका अद्भुत उदाहरण। जिन भगवान्‌का संस्पर्श बड़े-बड़े योगियोंको दुर्लभ है, गोचारणमें सहयोग करनेवाले गोसेवक श्रीदामाको भगवान् तिक्कीघोड़ा बनकर अपनी पीठके ऊपर बिठाते हैं, अपने सिरके ऊपर बिठाकर गोसेवकको सर्वोपरि बताते हैं।

कृषि-प्रधान देश भारतमें 'शक्ति' का केन्द्र गायको ही माना जाता है। मालवीयजीसे किसी गोसेवकने पूछा कि दूध सबसे अच्छा किसका होता है? मालवीयजीने कहा कि दूध तो सबसे अच्छा भैंसका होता है। लोगोंको आश्चर्य हुआ कि गोभक्त मालवीयजी भैंसके दूधकी प्रशंसा करते

हैं। जब लोगोंने गायके दूधके विषयमें पूछा तब उन्होंने गायके दूधको दूध न मानकर उसे साक्षात् अमृत बताया।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंकी सिद्धि भी गोसेवासे होती है। 'गो' धर्मका साक्षात् स्वरूप तो है ही, गोसेवासे अर्थलाभकी भी अनेकों सूक्तियाँ ग्रामीण अञ्चलोंमें आज भी प्रचलित हैं। यथा—

'जो जानौ पिय संपति थोरी, राखौ गाय बैल की जोरी'

कामकी पूर्तिमें भी गोसेवाका महत्त्व सराहनीय है। गोसेवासे ही महाराज दिलीपको पुत्रप्राप्ति और वसिष्ठजीको अष्टसिद्धियोंकी उपलब्धि सुलभ हुई। गोसेवासे ही सत्यकाम जाबालको मोक्षधर्मकी प्राप्ति हुई।

किंबहुना 'हिंदू' कहलानेका अधिकारी भी वही है, जिसकी श्रद्धा, निष्ठा, भक्ति-अनुरक्ति गोवंशके संरक्षण, संवर्धन और गोसेवामें है।

गो-सेवासे ऐहिक तथा आमुष्मिक कल्याण

[डॉ० स्वामी श्रीमहाचैतन्यजी नैष्ठिक, एम०ए०, पी-एच०डी०, ज्योतिषाचार्य, श्रीगीता-रामायण-विशारद]

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥

(शुक्ल यजु० २२। २२)

'हे परमात्मदेव! हमलोगोंके राष्ट्रमें यज्ञ-देवोपासनादि-समन्वित उत्तम कर्मशास्त्र, ब्रह्मवर्चस्वी-तेजस्वी ब्राह्मण तथा लक्ष्यवेधक, महारथी और अस्त्र-शस्त्रमें निपुण क्षत्रिय एवं राष्ट्रमें प्रभूत दूध देनेवाली गायें, सुपुष्ट कन्धोंवाले भारवहनमें सक्षम बलशाली बैल और वेगवान् अश्व उत्पन्न हों। स्त्रियाँ सुन्दरी, दक्ष, संस्कार-सदाचारसम्पन्न, बुद्धिमती हों तथा इस राष्ट्रमें युवक वीर, जयी, रथी तथा सभाके लिये उपयुक्त सभासद् सिद्ध हों। पर्जन्य (मेघ) यथासमय प्रचुर वृष्टि करें और ओषधियाँ एवं फसलें फलवती होकर पकें—अन्न और फल पर्याप्त सुलभ हों। हमारे योग-क्षेम चलते रहें—अप्राप्तकी उपलब्धि और उपलब्धकी रक्षा होती रहे।'

भारतवर्ष एक धर्मपरायण आध्यात्मिक देश है, जहाँ मानवके जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त समस्त क्रिया-कलापोंके मूलमें ऐहिक तथा आमुष्मिक कल्याण-प्राप्तिकी अभिलाषा निहित रहती है, साथ ही यहाँके जनमानसका विश्वास है कि प्रत्येक वर्ण और समुदायके नर-नारियोंको धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष-रूप पुरुषार्थचतुष्टयको सहज ही प्राप्त करा देनेवाली होनेसे गोसेवाका माहात्म्य सर्वश्रेष्ठ और सर्वोपरि है। भारतीय धर्मशास्त्रोंके पन्ने-पन्ने और पंक्ति-पंक्तिपर भगवत्सेवा, पूजा-उपासना, व्रत-उपवास, त्याग-तपस्या, दान-दया, सत्य-अहिंसा, सेवा-संयम, तीर्थ-दर्शन और गङ्गा-स्नान आदिके करने-करानेका माहात्म्य उल्लिखित है और यह भी वर्णित है कि उक्त समस्त कल्याणमूलक क्रिया-कलापोंके अनुष्ठानसे जो-जो पुण्य प्राप्त होता है, वह सब पुण्य केवल गोसेवा करनेसे सहज ही उपलब्ध हो जाता है। यथा—

तीर्थस्नानेषु यत्पुण्यं यत्पुण्यं विप्रभोजने।
यत्पुण्यं च महादाने यत्पुण्यं हरिसेवने॥
भूमिपर्यटने यत्तु सत्यवाक्येषु यद् भवेत्।
तत्पुण्यं प्राप्यते सद्यः केवलं धेनुसेवया॥

वर्तमान बदलती हुई परिस्थितियोंमें भारतवर्षसे भिन्न भौतिक दृष्टिप्रधान पाश्चात्त्य प्रत्यक्षवादी जो किसी वस्तु, व्यक्ति और जीवका मूल्याङ्कन उसकी उपादेयताके अनुपातसे करते हैं, उन्होंने भी व्यापक अध्ययन और विश्लेषणके अनन्तर जो निष्कर्ष दिया है वह धर्मप्राण गोभक्त भारतवर्षके लिये अतिशय गौरवका विषय है। उनका मन्तव्य है कि मानवके स्वच्छन्द भोगवाद, विस्फोटक अस्त्र-शस्त्रोंकी होड़ एवं प्राकृतिक असंतुलनके रहते मानव-जातिपर चारों ओरसे प्रलयंकारी घनघोर घन घिरते-गहराते जा रहे हैं, ऐसी घोर संक्रमणकालीन संकटकी घड़ीमें गोपालन और

गोसंरक्षण ही जीवित रहनेका प्रमुख आधार सिद्ध होगा। गायको समूची विश्व-मानव-जातिका सर्वाधिक उपयोगी तथा उपकारी पशु घोषित करते हुए अमेरिका-स्थित 'मिसूरी स्टेट डेयरी' के कमिश्नर ई० जी० बेनेट कहते हैं कि भले ही तूफान, ओला, अनावृष्टि या फिर बाढ़का प्रकोप कहर ढाये और हमारी फसलोंको नष्ट करके हमारी जीवित रहनेकी आशाओंपर पानी फेर दे, फिर भी इसके बावजूद जो भी शेष बच रहेगा, उसीसे गाय हमारे लिये जीवनदायिनी पौष्टिक आहार तैयार कर देगी। उन हजारों-हजार बच्चोंके लिये तो गाय साक्षात् जीवन ही है, जो दूधरहित वर्तमान नारीत्वकी रेतपर पड़े हुए हैं। मिस्टर बेनेट आगे कहते हैं कि हमारे ऊपर दुर्भाग्यका हाथ तो होना ही चाहिये, कारण कि हमलोग वर्षोंसे अपने धर्म और कर्मसे गिर गये हैं। हम जानते हैं कि गाय हमारे लिये एक मित्रके रूपमें है, जिससे कभी कोई अपराध नहीं हुआ है और उसकी कृतज्ञतामें कभी कोई कमी नहीं आयी है। वह हमारी पाई-पाई चुका देती है और हमारी रक्षा करती है।

भारतीय धर्मशास्त्रोंके प्रणेता तपःपूत दिव्य-द्रष्टा ऋषियों-महर्षियोंने तो सृष्टिके उषाकालमें ही **'सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम्'**, **'गावः प्रतिष्ठा भूतानाम्'** कहकर गोसेवा और गोपालनका महत्त्व प्रकट कर दिया था। **'मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः'** कहकर गायको सम्पूर्ण प्राणियोंकी माता तथा **'धनं च गोधनं धान्यं स्वर्णादयो वृथैव हि'** बताकर गोवंशको अर्थशास्त्रका मूलाधार निश्चित किया था। महाभारतके अनुशासनपर्वके अन्तर्गत एक कथा आती है जिसमें महर्षि च्यवन राजा नहुषको उपदेश करते हुए कहते हैं कि—**'गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किंचिदिहाच्युत'** अर्थात् मैं इस संसारमें गायके समान कोई दूसरा धन नहीं समझता। इस प्रकार महर्षि च्यवनने राजा नहुषसे अपना मूल्य गायके बराबर स्वीकार करके गायके महत्त्वको राज्य तथा संसारके सभी पदार्थोंसे अधिक निरूपित किया था। वस्तुतः गाय मानवको सभी प्रकारके मनोऽभिलषित भोग और ऐश्वर्य प्रदान करनेवाली है। गोसेवासे लक्ष्मीकी तो सहज ही प्राप्ति हो जाती है। यथा—

गवां सेवा तु कर्तव्या गृहस्थैः पुण्यलिप्सुभिः।
गवां सेवापरो यस्तु तस्य श्रीर्वर्धतेऽचिरात्॥

ऐहिक कल्याणकी दृष्टिसे गोसेवा करनेसे लक्ष्मीकी ही प्राप्ति नहीं होती, अपितु आरोग्य और संतानकी सहज ही प्राप्ति हो जाती है। अनेकानेक वैज्ञानिक परीक्षणोंसे अब यह सिद्ध हो गया है कि वाइरसजन्य अनेक संक्रामक रोग गायोंद्वारा स्पर्श की हुई वायुके लगनेसे अनायास ही नष्ट हो जाते हैं। आयुर्वेदमें बतलाया गया है कि गोमूत्रका सेवन करनेसे समस्त प्रकारके रक्तदोष, उदर-रोग, नेत्ररोग और कर्णरोग नष्ट हो जाते हैं। गोमय सारी अपावनता, दुर्गन्ध एवं विषाक्त कीटाणुओंको नष्ट कर देता है। गोदुग्ध एवं गोघृतका सेवन शरीरको न केवल रसायनवत् बलकारक एवं पुष्टि-प्रदायक है, बल्कि मानवको विशुद्ध बुद्धि एवं मेधासे संयुक्तकर प्रज्ञावान् बना देता है। उसमें शुद्ध सत्त्वका प्रादुर्भाव हो जाता है। धर्मशास्त्रोंमें उल्लेख मिलता है कि पञ्चगव्यका सेवन करनेसे मानवकी समस्त पापराशिका क्षय उसी प्रकार हो जाता है, जैसे प्रज्वलित अग्निसे ईंधन भस्म हो जाता है। यथा—

यत् त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति मामके।
प्राशनात् पञ्चगव्यस्य दहत्वग्निरिवेन्धनम्॥

महाभारतके अनुशासनपर्वमें उल्लेख मिलता है कि जो एक वर्षतक प्रतिदिन भोजन करनेसे पूर्व दूसरेकी गायको एक मुट्ठी घास खिलाता है, उसके इस गोसेवाके पुण्य-प्रतापसे उसके समस्त पाप और संताप नष्ट हो जाते हैं, पुत्र, यश, धन, सम्पत्ति यहाँतक कि उसकी समस्त मनः-कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। कविकुल-गुरु कालिदासके रघुवंश महाकाव्यके अध्ययनसे यह तथ्य और भी निश्चित हो जाता है कि पुत्राभिलाषासे गोसेवा करनेपर अवश्य ही पुत्रकी प्राप्ति हो जाती है। महर्षि वसिष्ठद्वारा निःसंतान महाराज दिलीपको गोसेवा करनेका परामर्श प्राप्त हुआ था। परिणाम-स्वरूप महाराज दिलीपके यहाँ रघु-जैसे महान् पराक्रमी चक्रवर्ती सम्राट् उत्पन्न हुए। श्रीमद्भागवतमहापुराणमें उल्लेख मिलता है कि 'गोसेवा-प्रधान पयोव्रत करनेसे देवमाता अदितिके उदरसे वामन भगवान् प्रकट हुए थे।' यह व्रत प्रतिवर्ष फाल्गुन मासके शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे लेकर द्वादशीपर्यन्त बारह दिनोंमें पूर्ण होता है।

आमुष्मिक कल्याणकी दृष्टिसे धर्मग्रन्थोंमें बताया गया है कि गोसेवा मानवको भयंकर वैतरणी नदी और घोर

असिपत्रादि नरकोंसे सहज ही पार करा देती है। मार्गशीर्ष मासके शुक्ल पक्षकी एकादशीको मोक्षदा एकादशी तथा वैतरणी-एकादशी कहा जाता है। इस व्रतके दिन गोसेवा और गोपूजनके समय प्रार्थना की जाती है कि 'हे गोमाता! तुम्हारी कृपासे मैं असिपत्रवन आदि घोर नरकोंको तथा वैतरणी नदीको पार कर जाऊँगा, मैं तुम्हें बारंबार नमन-वन्दन करता हूँ।' यथा—

असिपत्रादिकं घोरं नदीं वैतरणीं तथा।
प्रसादात् ते तरिष्यामि गोमातस्ते नमो नमः॥

गोसेवा वैतरणी नदी और घोर नरकोंसे तो रक्षा करती ही है, वह साक्षात् परब्रह्म परमात्माकी भी सहज ही प्राप्ति करा देती है। प्रत्येक प्राणीके परम प्राप्तव्य, परमाराध्य और परम इष्टदेव तो एकमात्र अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड-नायक परब्रह्म परमेश्वर ही हैं, परंतु यह कितने रहस्यकी बात है कि उन्हीं आनन्दकन्द सच्चिदानन्द परमात्माकी आराध्या, सेव्या और पूजनीया गोमाता है। गोसेवाके लिये लालायित परमात्माने सगुण-साकार-रूपमें 'गोविन्द' और 'गोपाल' नाम धारण करते हुए गोसेवा तथा गोपूजा की है। उन्होंने अपने आचरण और उपदेश दोनोंके ही द्वारा गोसेवा करनेका अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया है। पद्मपुराणके अनुसार गोलोकविहारी भगवान् श्रीकृष्ण गायोंके प्रति अपनी भक्ति-भावना व्यक्त करते हुए कहते हैं—

गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च।
गावश्च सर्वगात्रेषु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

अस्तु, उपर्युक्त विवेचनसे यह बात निष्पन्न हो जाती है कि '**भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव**' की भव्य भावनाके अनुरूप गोसेवासे ऐहिक और आमुष्मिक कल्याणकी सहज ही उपलब्धि हो जाती है। गोसेवासे जहाँ सर्वदेवमयी गौ माता प्रसन्न होती हैं, वहीं धर्मशास्त्र और भगवदाज्ञाका पालन भी होता है और भगवान्के प्रसन्न होनेपर भला लोक-परलोकका ऐसा कौन-सा सुख है जो गोसेवकको सुलभ न हो सके। 'भुक्ति-मुक्ति' गोसेवक पुरुषके चरणोंकी दासी बना जाती है। इस प्रकार गोसेवा पुरुषार्थचतुष्टयकी प्राप्ति करानेमें जितना उपकारक साधन है उतना दूसरा कोई नहीं है। अतः हम-आप—सबको तन, मन, धनसे गोसेवा और गोरक्षणमें सतत संनद्ध रहना चाहिये।

गोसेवाकी महिमा

[श्रीदेवेन्द्रकुमारजी पाठक 'अचल', रामायणी, साहित्येन्द्रशेखर, साहित्यप्रभाकर, आयुर्वेद-विशारद]

नमो देव्यै महादेव्यै सुरभ्यै च नमो नमः।
गवां बीजस्वरूपायै नमस्ते जगदम्बिके॥
नमो राधाप्रियायै च पद्मांशायै नमो नमः।
नमः कृष्णप्रियायै च गवां मात्रे नमो नमः॥

(देवीभा० ९। ४९। २४-२५)

परम दयामयी, वात्सल्यमयी, सुर-नर-मुनि-सेवित गोमातासे कोई भी उऋण नहीं है। गोमाता करुणावरुणालय है, निर्विकार है, निर्मद एवं निरहंकार है। अपने परम प्रिय सेवककी जितना मधुर दूध प्रदान करती है उतना ही मधुर दूध गोभक्षकको भी देती है। जिस गोमातामें प्रतिशोधाङ्कुर लेशमात्र भी अङ्कुरित नहीं होता, उस माँके समान प्रातः-स्मरणीय और कौन हो सकता है? जननी जन्म देनेके अनन्तर कुछ कालतक ही दुग्धपान कराती है; किंतु आदरणीय गोमाता जीवनके अन्तकालतक अमृतमय दुग्ध-पान कराती है। अतः ऐसी महिमामयी एवं परोपकारिणी गोमाताकी अवश्य सेवा करनी चाहिये। उनकी परिक्रमा करनी चाहिये। वे सदा सबके लिये वन्दनीय हैं। गौएँ मङ्गलका स्थान हैं, दिव्य हैं। स्वयं ब्रह्माजीने इन्हें दिव्य गुणोंसे विभूषित किया है। जिसके गोबरसे घर और देवताओंके मन्दिर भी शुद्ध होते हैं, उन गौओंसे बढ़कर अन्य किसे समझा जाय। गौओंके मूत्र-गोबर, दूध, घी दही—ये पाँचों वस्तुएँ परम पवित्र हैं। गौएँ सम्पूर्ण जगत्को पवित्र करती हैं। गोमाताका सेवक कभी दुःखी एवं दरिद्री नहीं होता। भगवती विष्णुप्रिया लक्ष्मीजी उस स्थानपर स्वाभाविक रूपसे उपस्थित रहती हैं, जहाँपर गोवंशको सदा सम्मान मिलता है। धन-सम्पत्ति, संतति-सुख, स्वास्थ्य एवं सद्गुण

बिना प्रयासके गोभक्तके साथ रहते हैं।

गोसेवासे गोसेवक निष्पाप हो जाता है। गोखुरसे उड़ती हुई धूलिसे आच्छादित आकाश पृथ्वीको ऊसर होनेसे बचाता है। गोपालनव्रत स्वार्थ नहीं वरन् परमार्थ है।

भगवती सुरभीके अंशसे उत्पन्न गायको पशु कहनेवालों-को पाप घेरता है। इनमें देवत्व और मातृत्वका दर्शन करते हुए श्रद्धा समर्पित करनी चाहिये। गौकी सेवासे भगवान् वासुदेव 'गोपाल' कहलाये। आशुतोष शंकरने भी सेवा करके गोमाता सुरभीकी अनुकूलता प्राप्तकर वरदान प्राप्त किया।

गोमाता मन-वचन एवं कर्मसे सम्माननीय, पूजनीय एवं आदरणीय हैं। इन्हें अपमानित करनेका अर्थ होता है देवताओंका कोपभाजन बनना। इनके प्रति अपशब्द कहना और सुनना भी नहीं चाहिये। गोमाताका छोटा-सा अपराध भी वंश-विनाशकी शक्ति रखता है। गौओंको हाँकते-जोतते पीडित नहीं करना चाहिये। यदि वे भूखी-प्यासी होकर देखती हैं तो उत्पीडकके सम्पूर्ण वंशको नष्ट कर देती हैं—

प्रचारे वा निवाते वा बुधो नोद्वेजयेत गाः।
तृषिता ह्यभिवीक्षन्त्यो नरं हन्युः सबान्धवम्॥

(महा०, अनु० ६९। १०)

गौके सेवक भी जिस भूमिपर निवास करते हैं, वह भूमि भी समस्त तीर्थोंद्वारा अभिनन्दित होती है। गोमाताकी सेवासे, पञ्चगव्य-प्राशनसे तथा चरणोदकमार्जनसे तीर्थ-स्नानका फल प्राप्त होता है। गाय जहाँपर पानी पीती है अथवा जिस जलसे पार होती है वहाँ सरस्वतीजी विद्यमान होती हैं—

यत्र तीर्थे सदा गावः पिबन्ति तृषिता जलम्।
उत्तरन्त्यथवा येन स्थिता तत्र सरस्वती॥

गोसेवा बड़ी-से-बड़ी दुस्तर विपत्तियोंसे रक्षा करती है। ज्योतिषशास्त्रमें ग्रहोंकी विपरीत अवस्थामें गोसेवा ही प्रमुख उपाय बताया गया है। आजका मानव गौ माताकी जय बोलता हुआ भी कसाइयोंके हाथ गौ बेचनेमें लज्जित नहीं होता। लोभ और क्षुद्र लालचमें ग्रस्त होकर वे गोहत्याके हेतु बन जाते हैं। सेवाव्रती स्वप्नमें भी गो-अपराधसे भयभीत रहता है। जो गोमाता पञ्चगव्यसे पाप-ताप हरती, यागादिकोंमें दानके द्वारा दानीके यज्ञ-दोष हरती एवं अन्तिम अवस्थामें वैतरणीसे उद्धार करती है, ऐसी माताकी तथा उसके सेवाकी यशोगाथाका कौन गान कर सकता है अर्थात् कोई नहीं।

सच्ची सुख-शान्तिका मूल उपाय—गोसेवा

[श्रीबलरामजी सैनी, एम्० कॉम०]

प्राचीन भारतीय इतिहास इस बातका साक्षी है कि अल्पकालिक गोसेवासे ही भगवान् श्रीकृष्णको भगवत्ता, महर्षि गौतम, कपिल, च्यवन, सौभरि तथा महर्षि आपस्तम्ब आदिको परम सिद्धिकी प्राप्ति एवं महाराज दिलीपको रघु-जैसे चक्रवर्ती पुत्रकी प्राप्ति हुई थी। इसीके आधारपर सम्पूर्ण विश्वमें गोत्रोंका चलन भी हुआ। महर्षि च्यवन एवं आपस्तम्बने अपना मूल्य लगानेके समय स्वयंको सम्पूर्ण पृथ्वी तथा स्वर्गलोकके सम्पूर्ण साम्राज्यसे भी अधिक मूल्यवान् माना, किंतु जब तत्कालीन नरेशोंद्वारा उनके मूल्यके रूपमें एक गायको उपस्थित किया गया तो वे तत्काल प्रसन्न हो गये। अतः गोसेवाका महत्त्व अत्यधिक है।

भगवान् महावीर एवं गौतम बुद्धने भी गोसेवासे ही अहिंसा-धर्मको सिद्धकर अपने महान् धर्मोंको सम्पूर्ण विश्वमें फैलाया था। अहिंसाका सीधा सम्बन्ध गोसेवासे ही है। गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीने भी जीवनके अमूल्य लक्ष्योंकी प्राप्ति-हेतु गायको सर्वोत्तम साधन बताया है—

सात्त्विक श्रद्धा धेनु सुहाई। जौं हरि कृपाँ हृदयँ बस आई॥
जप तप ब्रत जम नियम अपारा। जे श्रुति कह सुभ धर्म अचारा॥
तेइ तृन हरित चरै जब गाई। भाव बच्छ सिसु पाइ पेन्हाई॥

इसीका घृत स्वर्ग-प्राप्तिका आधार बनता है। समस्त देवताओंको तृप्त करनेवाला मन्त्रपूत हविष्य गोदुग्धसे ही तैयार होता है। वस्तुतः गाय तीनों लोकोंको पवित्र करती है। उसके शरीरमें तीनों लोकों, देवताओं और ऋषि-मुनियोंसहित सम्पूर्ण तीर्थोंकी स्थिति है। अतः उसकी सेवासे भला ऐसी कौन-सी सिद्धि है,

जिसकी प्राप्ति न हो?

बड़े खेदकी बात है कि समस्त धर्मों-पुण्यों, सुख-सम्पत्तिके भण्डार एवं समस्त फलदायिनी गौ माताका वर्तमानमें घोर तिरस्कार हो रहा है। इसके परिणाम-स्वरूप देशमें ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्वमें रक्तपात, हिंसा और उपद्रव आदिकी भयावह स्थिति उत्पन्न हो गयी है।

वेदोंसे लेकर सभी पुराणों तथा अन्यान्य धर्मशास्त्रोंमें धर्मको वृष (साँड़) का ही रूप माना गया है। परंतु इसका वर्तमान राजनीतिमें कोई स्थान नहीं है। जबकि प्राचीन परम्परामें धर्मके बिना राजनीति विधवा मानी गयी है। आज विश्वके समस्त राजनीतिज्ञ धर्मके वास्तविक स्वरूपको न समझकर दिशाविहीन, किंकर्तव्यविमूढ़, हतप्रभ एवं ज्ञान-बुद्धिसे शून्य होकर देश-प्रदेशकी जनभावनाओंके साथ जनताका और अपना भी अहित ही कर रहे हैं। निःसंदेह इसमें विश्वरूप-धर्म और विश्वधारिणी गौ माताकी उपेक्षाके साथ-साथ अनीश्वरवादिता एवं देवता आदिके प्रति अश्रद्धाका भाव ही प्रधान कारण है।

समस्त शुभ कर्मोंका फल षड्वर्ग-संयम, मन, बुद्धि एवं आत्माकी परिशुद्धि तथा नित्य पराशान्तिकी प्राप्ति ही कही गयी है और वह गोसेवासे शीघ्र एवं अनायास ही प्राप्त हो जाती है। शास्त्रोंका यह उद्घोष है कि गाय विशुद्ध एवं अक्षय लक्ष्मीको देनेवाली है। उससे विश्व कल्याण-मङ्गलोंसे सुरक्षित होता है। गौएँ वेद एवं शुद्ध ज्ञान-विज्ञानकी जननी हैं और पवित्रताओंकी मूल स्रोत तथा सीमा हैं।

भारतके ऋषि-मुनि सदासे सभी शास्त्रोंमें गोसेवा तथा वृषभस्वरूप भगवान् धर्मका संरक्षण ही सार्वभौम सुख-शान्तिका सर्वाधिक सुगम एवं कल्याणकारी उपाय बतलाते रहे हैं। पाठकोंसे प्रार्थना है कि वे इस बातको जीवनमें उतारकर गोमती-विद्या, गो-सावित्री-स्तोत्र तथा मानसके ज्ञानदीपक आदि प्रसङ्गोंका ध्यानसे पठन-मनन कर स्वल्प गोसेवाद्वारा भी सर्वोत्तम पुरुषार्थ एवं मोक्ष-प्राप्ति-हेतु अग्रसर हों।

गौके प्रति हमारा कर्तव्य

[श्रीरामनिवासजी लखोटिया]

यह निर्विवाद है कि गौकी महिमाका वर्णन प्राचीनतम कालसे भारतमें रहा है और विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों, मनीषियों, संतों और चिन्तकोंकी वाणी एवं साहित्यमें गोरक्षाके लिये बहुत कुछ कहा गया है और लिखा गया है। संविधानमें भी गो-हत्यापर प्रतिबन्ध लगानेकी भावना व्यक्त की गयी है। भारतवर्षके अधिकांश व्यक्ति गोमाताकी महिमाके बारेमें सुनते आ रहे हैं या जानते हैं या विश्वास रखते हैं। फिर भी यह एक बड़ा आश्चर्य है कि अधिकांश गोमाताके प्रेमी हिन्दू, जैन, सिख आदि गौकी रक्षाके प्रति अपना कर्तव्य निभानेमें उदासीन हैं। यही कारण है कि महात्मा गाँधी, विनोबा भावे और देशके अन्य महान् नेताओंके सत्प्रयत्नोंके बावजूद अभीतक पूर्णरूपसे भारतवर्षमें गोहत्या बंद नहीं हो सकी है। प्रस्तुत लेखमें गौके प्रति हमारे विभिन्न कर्तव्य क्या हैं और क्या होने चाहिये, इसपर संक्षिप्त विवेचन किया है। यदि हम अपने कर्तव्योंका पूर्ण निष्ठाके साथ पालन करें तो हम गो-रक्षा करनेमें और उसकी हत्याको रोकनेमें सक्षम हो सकेंगे और भारत देशके बारेमें यह कहा जा सकेगा कि यहाँ पुनः दूधकी नदियाँ बह रही हैं। आज आवश्यकता है हमें जागरूक होनेकी। आजके वर्तमान आर्थिक संकटके समयमें गौके प्रति हमारे कर्तव्योंका पुनः मूल्याङ्कन करना आवश्यक है।

गौकी धार्मिक महिमा

हमारा यह कर्तव्य है कि हम स्वयं गौके महत्त्वको समझें और उसे अपने परिवार, स्वजनों एवं मित्रोंको भी समझायें। ऋग्वेद (८। १०। १५) में गौके लिये कहा गया है—'गाय रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री और आदित्योंकी भगिनी है। गाय अमृततुल्य दूध और घीका एक मात्र स्रोत है।' गो-पालनके कारण ही भगवान् श्रीकृष्णको 'गोपाल' कहते हैं। विद्वानोंका यह कहना है कि गोवध नहीं किया जाना चाहिये; क्योंकि वह मानवकी सेवा करती है। वेदोंने '**गावो विश्वस्य मातरः**' कहा है अर्थात् गौ सारे विश्वकी माता

है, क्योंकि बिना किसी भेदभावके वह सबका भरण-पोषण करती है। गोमाता हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और अन्य धर्मके माननेवालोंका—सबका समान-रूपसे कल्याण करती है।

पशुधनकी उपयोगिता

गौकी सही उपयोगिता हम पूरे गोवंशकी उपयोगितासे ही आँक सकते हैं। यह निर्विवाद है कि गायका दूध माँके दूधके जैसा होता है। हजरत मोहम्मद पैगम्बरने भी गायके बारेमें अपने निम्न विचार रखे हैं—'तुम गायका दूध पीनेके पाबंद हो जाओ। गायके दूधमें सभी तरहके पौधोंका सत्त्व है। गायका दूर हमेशा पीयें, यह दवा है। उसका घी बीमारी दूर करता है। उसके गोश्तसे बचो, चूँकि उसका गोश्त बीमारी है।' दूध ही नहीं गायका घी भी स्वास्थ्यवर्धक है। इसमें 'कैरोटीन' बहुत अधिक मात्रामें होता है तथा इसमें अनेक औषधीय तत्त्व हैं। गायका गोबर और दूर भी बहुत गुणकारी है। गायका गोबर शुद्ध, रोगाणुनाशक, ओषधिगुणसम्पन्न है। खाद तथा जैविक गैस और दूषित परमाणुओंके प्रभावको रोकनेके लिये इसका प्रयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार गायका मूत्र धार्मिक अनुष्ठानोंमें तो काम आता ही है, उसका ओषधिकी दृष्टिसे महत्त्व भी बहुत है। वह रोगाणुनाशक एवं कीटनियन्त्रक है। गायके दूध, दही, घी, मूत्र और गोबरके रसके मिश्रणको आजकी भाषामें स्वास्थ्यप्रद टॉनिक कहते हैं। धार्मिक कार्योंमें यही 'पञ्चगव्य' की संज्ञासे अभिहित होता है।

इन्हीं गुणोंके कारण महात्मा गाँधीने गायके सम्बन्धमें कहा था—'मैं गायको सम्पन्नता और सौभाग्यकी जननी मानता हूँ।' गायसे प्राप्त होनेवाले विभिन्न पदार्थोंका उपयोग हमें समझना चाहिये और अन्य व्यक्तियोंको भी समय-समयपर समझाना हमारा कर्तव्य है। गोधन हमारी राष्ट्रिय सम्पत्ति है और इसकी सुरक्षा एवं संवर्धन हमारा राष्ट्रिय कर्तव्य है। वास्तविक अर्थोंमें गोवंश आज भी हमारी अर्थव्यवस्थाका मूल आधार है। गोवंशसे जहाँ दूध, घी, अनाज, अन्य खाद्य-सामग्री, खाद, ईंधन, सिंचाई और यातायातके साधन प्राप्त होते हैं, वहीं पर्यावरणकी भी सुरक्षा होती है। महर्षि दयानन्दके कथनानुसार तो 'गायकी हत्या करके एक समयमें केवल २० व्यक्तियोंको ही भोजन दिया जा सकता है, जबकि वही गाय अपने पूरे जीवनकालमें कम-से-कम २०,००० लोगोंको अपने दूधसे अमृततुल्य तृप्ति प्रदान कर सकती है।'

गोवंशकी उपलब्धता

यह एक चिन्ताका विषय है कि आजादीके बाद एक हजार जनसंख्याके पीछे गाय और बैलकी संख्या दिन-प्रतिदिन घट रही है। १९५१ में १,००० की जनसंख्याके पीछे ४३० गाय और बैल हुआ करते थे। १९६१ में यह संख्या घटकर ४०० रह गयी और १९८२ तक यह केवल २७१ हो गयी थी। इसके विपरीत दुनियाके अन्य राष्ट्रोंमें जो धार्मिक दृष्टिसे गौको माँ नहीं कहते, वहाँ गायोंकी संख्या बहुत है। जैसे अर्जेनटाइनामें १,००० के पीछे २,०८९ गाय और बैल होते हैं, आस्ट्रेलियामें यह संख्या ३६५, कोलम्बियामें ९१९ और ब्राजीलमें ७२८ है। यदि हमने अपने कर्तव्योंका पालन नहीं किया और सरकारको गोवंश-रक्षाके बारेमें सचेत नहीं किया तो हमारे देशमें गाय और बैलोंकी संख्या दिन-प्रतिदिन और भी कम होती जायगी।

संवैधानिक जानकारी

हमारा यह भी कर्तव्य है कि हम भारतीय संविधानमें वर्णित दिशा-निर्देशके महत्त्वको समझें। संविधानकी निर्देशात्मक धारा ४८ में यह स्पष्ट वर्णन है कि सरकारका यह कर्तव्य होगा कि वह देशमें उपयोगी, सक्षम, दुधारू एवं भारवाले गोवंश-प्राणियोंका संरक्षण और संवर्धन करे। कोई भी लोकतान्त्रिक सरकार इसके विरुद्ध आचरण नहीं करेगी। परंतु यह दुर्भाग्यका विषय है कि सन् १९५८ में सर्वोच्च न्यायालयने 'बिहार सरकार बनाम हनीफ-कुरेशी' मुकदमेमें अपना निर्णय देते समय संविधानकी धारा ४८ की जो व्याख्या की है, उसमें उन्होंने कहा है कि किसी भी आयुकी गायकी तो हत्या रोकनेका निर्देश है, किंतु बूढ़े बैलों और साँड़ोंको उसमें संरक्षण नहीं दिया गया है। अतः सर्वोच्च न्यायालयने कहा है कि जो कानून उनकी हत्यापर कानूनी प्रतिबन्ध लगानेवाले हैं वे भी वैध हैं। आज इस व्याख्याके पुनर्विचारका समय आ गया है। इसलिये हमारा कर्तव्य है कि हम किसी-न-किसी प्रकार सर्वोच्च न्यायालयमें इस मामलेको पुनर्विचारके लिये रखवायें। वस्तुतः जिन आधारोंपर वह निर्णय दिया गया था, उसमें गुणात्मक परिवर्तन हो गया है। इसलिये

सर्वोच्च न्यायालयमें पुनर्विचार-हेतु मामलेको लानेके लिये विशेष प्रयत्न करनेकी आवश्यकता है और इसमें जो व्यक्ति सक्षम हैं, उनका यह कर्तव्य हो जाता है कि वे अपनी तरफसे इस बारेमें पूर्ण चेष्टा करें।

गोरक्षा-हेतु जागरूकता

भारतमें अनुमानतः २,५०० गोशालाएँ हैं। इनकी स्थापना तो अहिंसा, करुणा, जीवदया और सेवाकी भावनासे ही हुई है। इसलिये हमारा कर्तव्य है कि उनका संचालन भी नैतिक भावनासे हो। हम यह देखें कि गोशालाएँ और गोसदन निष्काम सेवा, अध्ययन और प्रशिक्षणके केन्द्र भी बनें। कई बार यह देखनेमें आता है कि कुछ गोशालाओंकी भूमि बेचकर वहाँ कालोनी बनाने और दुकान आदि बनानेकी प्रवृत्ति उनके प्रबन्धक कर रहे हैं। ऐसी प्रवृत्तिको रोकना हमारा कर्तव्य है। गोशालाकी जमीन बेचकर धनके ब्याजसे गोशालाएँ चलाना बिलकुल उचित नहीं है। बल्कि गोशालाओंकी जमीनपर फल-फूलके बाग-बगीचे, प्रशिक्षण-केन्द्र, संशोधन-केन्द्र, गोदुग्ध-विक्रीकेन्द्र और अन्य सहायक रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलानी चाहिये। गो-सदनोंके संचालनके लिये स्वैच्छिक गोसेवकोंका विशेष महत्त्व है। इसलिये हमें सरकारसे विशेष निवेदन करना चाहिये कि वह स्वैच्छिक गोसेवकोंकी 'सलाहकार-समिति' स्थानीय शासनके अन्तर्गत स्थान-स्थानपर कायम करे।

प्रत्येक समृद्ध उच्चस्तरीय मध्यम वर्गके परिवारके गोप्रेमी व्यक्तिको कम-से-कम एक गायका पालन अवश्य करना चाहिये या जो गाय गोसदन या गोशालामें रहती है उसके भरण-पोषणका बेड़ा उठाना चाहिये। भारतवर्षमें जितने व्यक्ति इस कार्यको करनेके लिये सक्षम हैं, यदि वे अपना कर्तव्य निभा लें तो कोई भी गाय कभी भी कसाईके हाथ नहीं बिक सकती। स्वतः ही फिर हम गोवधको रोकनेमें सक्षम हो सकेंगे। बड़े नगरोंमें व्यक्तिगत गाय पालना सम्भव नहीं है। इसलिये गोशालाओं एवं पिंजरापोलोंके माध्यमसे व्यक्तिगत गायें भी पाली जा सकती हैं।

हमें भारत सरकारके केन्द्रीय मन्त्रिमण्डलके सदस्यों, सांसदों और सम्बन्धित प्रशासनिक अधिकारियोंसे सतत सम्पर्क करके जितनी गोसेवी संस्थाएँ हैं, उनकी एक स्थायी समिति कायम करानी चाहिये। इसके कार्योंकी जानकारी सभी जागरूक स्वयंसेवी गोसेवकोंको दी जानी चाहिये। केन्द्रीय सरकारसे हमें यह निवेदन करना चाहिये कि एक 'अखिल भारत-गोसंवर्धन आयोग' स्थापित करे और उसके अन्तर्गत गोपालनके लिये सहायता और मार्गदर्शन प्रदान हो, अनुसंधान और प्रशिक्षणकी प्रवृत्तिका संचालन हो तथा गोशालाओंको नस्ल-सुधार आदिके लिये सहायता प्रदान की जाय। यही नहीं, आयोग पशु-ऊर्जाके उपयोगके लिये समुचित तकनीक आदि विकसित करनेमें शोध-संस्थाओंका सहयोग करे।

गोपालन एवं आयकर कानून

गोशालाओं और गोसेवाभावी व्यक्तियोंको चाहिये कि निरन्तर पत्र लिखकर सरकारको 'गोपालन-उद्योग' अर्थात् 'डेयरी फार्मिंग' के लिये आयकरमें छूटका प्रावधान करनेके लिये कहें। हमें यह जानना चाहिये कि इस प्रकारकी छूट आयकर अधिनियम १९६१ की धारा ८० जेजेके अन्तर्गत ३१-३-८६ तक मिलती रही थी। फिर वित्त-अधिनियम १९८५ के द्वारा १-४-८६ से यह छूट मिलनी बंद हो गयी। लेकिन 'मुर्गी-पालन-व्यवसाय' को प्रोत्साहन-हेतु कुल आयमें $\frac{१}{३}$ भाग करमुक्त छूट १-४-९० से पुनः धारा ८० जेजेके अन्तर्गत मिलती है। इससे 'मुर्गी-पालन-व्यवसाय' को तो प्रोत्साहन मिल रहा है, परंतु वही छूट जो 'दुग्ध-उद्योग' के लिये भी बराबर मिलती थी वह अब नहीं मिल रही है। इसलिये मुर्गी-पालनको मिलनेवाली छूटके बराबर तो धारा ८० जेजेके अन्तर्गत 'गोदुग्ध-उत्पादन-उद्योग' के लिये भी मिलनी चाहिये।

उपसंहार

गायकी धार्मिक महिमा जो वेदों और प्राचीन ग्रन्थोंमें है, केवल उसीका गुणगान करनेसे हम अपने कर्तव्यका निर्वाह नहीं कर सकेंगे, बल्कि बराबर घटती हुई गोवंशकी संख्या और गोहत्याको रोकनेके लिये तथा जीवित गायोंके संवर्धन और संरक्षण आदिके लिये यह नितान्त आवश्यक है कि हम स्वयं गौके प्रति अपने कर्तव्योंके लिये जागरूक बनें और गोरक्षा, गो-संरक्षण आदिके लिये हम अपने कर्तव्यका निर्वाह करें, तभी सच्चे अर्थोंमें हम गोभक्त कहलानेके हकदार हो सकेंगे।

जो गोसेवा नहीं करता वह श्रीविहीन हो जाता है

[श्रीमहन्त नारायण गिरिजी]

'गावो विश्वस्य मातरः' कहकर वेद विश्व (सब) की माताके रूपमें गौ माताकी वन्दना करता है।

ऋग्वेदके एक मन्त्रमें रुद्रोंकी माता एवं वसुओंकी दुहिता, आदित्योंकी स्वसा तथा अमृतकी नाभि कहकर गौ माताका स्तवन किया गया है। गौ अमृतकी अग्रजा है। सागर-मन्थनसे सर्वप्रथम पाँच गौएँ प्रादुर्भूत हुईं। क्षीरसागरसे प्राप्त नन्दा, सुभद्रा, सुरभि, सुशीला तथा बहुला नामक इन गौओंको लोकमाता कहकर देवताओंद्वारा पाँच महर्षियों—जमदग्नि, भरद्वाज, वसिष्ठ, असित तथा गौतमको इसीलिये प्रदान कर दिया गया कि ब्राह्मण और गौ एक ही कुलके दो भाग हैं। अतः गौएँ महाभाग महर्षियोंको दी गयीं।

देव-तृप्ति तथा लोक-पालनके लिये आविर्भूत गौ माताके सींगोंके अग्रभागमें समस्त तीर्थों, मध्यमें सभी कारणोंके कारण-स्वरूप देवाधिदेव भगवान् सदाशिव तथा सींगोंकी जड़में ब्रह्मा-विष्णुका निवास है। गोमाताके नेत्रोंमें प्रकाशस्वरूप भगवान् सूर्य, ज्योत्स्नाके अधिष्ठाता देव चन्द्रमाका निवास है और चारों चरणोंमें सत्य-अहिंसा-दया तथा शान्तिरूप चतुष्पाद धर्मदेवताका अधिष्ठान है। वृषभ ही साक्षात् गोरूपधारी धर्म है।

भगवान् श्रीकृष्ण राजा युधिष्ठिरसे कहते हैं—हे युधिष्ठिर! गोवत्सद्वादशी-व्रतसे कुल तथा गोत्र एवं १८ अक्षौहिणी सेनाके विनाशका महापातक नष्ट हो जायगा और गौ माताकी कृपासे हृदयको शान्ति भी मिल जायगी।

गौके इस स्वरूपका ज्ञान होनेसे ही सर्वज्ञ ब्रह्म गोविन्द, गोपाल तथा गोरक्षक बने। भगवान् सदाशिवको प्रसन्न करनेवाला बिल्वपत्र भी गौकी देन है। गोमयसे ही श्रीवृक्ष या बिल्ववृक्षकी उत्पत्ति हुई। उस बिल्ववृक्षमें पद्महस्ता भगवती श्रीकी नित्यस्थिति है।

यज्ञकी हवि और मन्त्र-ऋचाएँ (वेद) दोनों ही गौके अङ्गोंमें अवस्थित हैं। यज्ञकी प्रवृत्ति गौसे ही संरक्षित है, क्योंकि यज्ञमें प्रतिष्ठित ब्रह्म स्वयं ही गौमें निवास करते हैं, इसीलिये ऋग्वेदने गौको 'अघ्न्या' कहा है।

गौ सभी देवोंकी माता है। यह विश्वधात्री है। हमें गोरस ही नहीं अन्न भी गौसे ही प्राप्त हुआ। पहले खेती गोपुत्रोंके सहारे हुई, गोमयसे भूमि उर्वरा बनी। रत्नगर्भा वसुन्धराकी देन अन्न पहले गोग्रास-रूपमें गायको अर्पित करनेका यही रहस्य है—

त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये।

गोसेवा करके ही गौतम न्यायशास्त्रके प्रवर्तक बने, गोसेवा करके महर्षि जमदग्निको परशुराम-जैसे तेजस्वी पुत्रकी प्राप्ति हुई। गोसेवक गुरुवार वसिष्ठने पुत्रहीन महाराज दिलीपको गोसेवासे ही पुत्रवान् बनाया। करोड़ों गौएँ महाराज दिलीपद्वारा सेवित हुईं। गोसेवक रघुके नामसे रघुवंश चला और उनके ही कुलमें भगवान् श्रीराम अवतरित हुए। नन्द बाबाकी गोसेवासे ही भगवान् श्रीकृष्ण उनके पुत्र बने।

गोसेवासे मनुष्यमें प्रजा-पालनके समस्त गुण निवास करते हैं। आचार्य व्याडिके अनुसार सद्धर्म, सद्बुद्धि, सरस्वती, मङ्गल, सौहार्द, सौजन्य, कीर्ति, लज्जा तथा शान्ति श्रीके लक्षण हैं और गौ श्रीमती है। जो गायकी सेवा नहीं करता वह श्रीविहीन हो जाता है। गौकी उपेक्षासे ऐश्वर्यहीनता आती है तो अघ्न्या गौका वध करनेसे विनाश ही सम्भव है।

भारत आज भिखारी बन गया है मात्र इसीलिये कि यहाँ गोवध होने लगा। गौ हिन्दुओंमें पूजित है, यही जानकर गौओंको सेनाके आगे कर सम्राट् पृथ्वीराज चौहानको पराजित करके भी गोरी उनकी अमरता नहीं छीन सका। आज भी वे अमर हैं। यह भारतका ही कलंक है कि परमपूज्या गौओंका वध हो रहा है।

जहाँ स्वप्नमें भी गोदर्शनसे वास्तविक जीवनके कष्ट नष्ट हो जाते हैं, वहाँ गोवंशकी हत्या राजनीतिका अभिशाप है। बाहरसे आये यवन यहाँ गोभक्षक इसीलिये बन गये ताकि हिन्दू निरन्तर अपनेको अपमानित अनुभव करें। और

मुगलकालमें अंग्रेज आये तो दोनोंको अपमानित करनेके लिये गाय और सूअर दोनोंका ही भक्षण करने लगे। गायकी चर्बीयुक्त कारतूस पाकर भारतीय भड़क उठे। गाय ही हमारी स्वतन्त्रताकी जननी है। वही स्वावलम्बी भारतकी भी जननी बन सकती है। उसी गायकी रक्षाके लिये गुरु गोविन्दसिंहने कहा कि—

यही देह आज्ञा तुर्क को खपाऊँ
गौ घातका दुख जगतसे हटाऊँ।
आस पूर्ण करो तुम हमारी
मिटे कष्ट गौअन छुटे खेद भारी॥

आज स्वतन्त्र कहलाकर भी भारत तुष्टीकरणमें गौ माताकी रक्षासे विरत है, यह महान् विडम्बना है। महान् लज्जाका विषय है।

[प्रे०—श्रीशिवकुमारजी गोयल]

गोग्राससे सर्वार्थसिद्धि

[वैद्य श्रीधनाधीशजी गोस्वामी, आयुर्वेदाचार्य]

पृथ्वीके सप्त आधारभूत स्तम्भोंमें गौ प्रमुख स्तम्भ है। गोसेवा और गोवंशकी उन्नति भारतीय संस्कृतिके अभिन्न अङ्ग हैं। गोसेवाकी नाना विधाओंमें गोग्रासका मुख्य स्थान है। गायके निमित्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक दिया गया खाद्यपदार्थ गोग्रास कहलाता है। गोग्रास ग्रहण करनेके लिये गौ मातासे इस प्रकार प्रार्थना की जाती है—

सौरभेय्यः सर्वहिताः पवित्राः पुण्यराशयः।
प्रतिगृह्णन्तु मे ग्रासं गावस्त्रैलोक्यमातरः॥
सुरभी वैष्णवी माता नित्यं विष्णुपदे स्थिता।
प्रतिगृह्णातु मे ग्रासं सुरभी मे प्रसीदतु॥

गोमात्रकी अधिष्ठातृदेवता कामधेनु-स्वरूपा सुरभी गोवंशकी जननी मानी गयी है। रूढार्थक कामधेनुका निवास गोलोकमें और यौगिक अर्थपरक कामधेनु शब्द गोमात्रका बोधक है। गोसेवासे श्रेय तथा प्रेय—ये दोनों सिद्ध होकर लोक-परलोक सुधरते हैं। गोरससे राजा, रंक, स्त्री, पुरुष, स्वस्थ, रुग्ण तथा आबाल-वृद्ध सभीका पोषण होता है। गोमाता अपने गोबर और गोमूत्रसे अपवित्रको भी पवित्र करके पर्यावरणको भी शुद्ध बनाती है। पञ्चगव्यका सेवन करनेसे त्वचासे अस्थिपर्यन्त शारीरिक धातुओंके रोग तथा विषाणुओंका विनाश होकर नवीन जीवनी-शक्ति प्राप्त होती है।

रसायन तथा व्याधिनिवारणार्थ उपयोगमें आनेवाले दोषाविष्ट खनिज धातुओं, शृंगिक विष, धतूरा, कुचिला, संखिया, भिलावा आदि विषैले पदार्थोंका शोधन गोबर तथा गोमूत्रसे होकर वे अमृततुल्य बनते हैं और कष्टसाध्य रोगोंका उपशमन करनेमें सक्षम हो जाते हैं। तीर्थस्नान, दान, वेदाध्ययन, व्रतोपवास, सेवा आदिसे जो-जो पुण्य प्राप्त होते हैं, वे सब गोग्रासरूप सेवासे प्राप्त हो जाते हैं। गायके घृतादिसे सम्पन्न किये गये यज्ञ-यागादिकोंसे ऊर्ध्वलोकस्थ देवादिकोंकी तृप्ति होती है। दूध, दही, घी आदि गोरसोंसे भूमण्डलके प्राणियोंका भरण-पोषण होता है। गोरसों तथा कृषिकर्मके द्वारा अधोलोकके वैभवादिक बढ़ानेसे गाय तीनों लोकोंकी माता मानी गयी है, इसीलिये **'गावो विश्वस्य मातरः'** कहा गया है। पञ्चमाताओंमें गौको प्रधान माता स्वीकार किया गया है। गोग्रासकी परिसीमामें गोसेवाके उन सभी रूपोंको समाहित किया जा सकता है, जिनसे गोमाता संतुष्ट हों। यथा—हरा-सूखा चारा-दाना खिलाना, जल पिलाना, शरीरको खुजलाना, मक्खी-मच्छर आदिसे रक्षा करना, रुग्णावस्थामें औषधोपचारसे गौकी सेवा करना इत्यादि। गोचारण, गोरक्षण, गोचरभूमिकी व्यवस्था करना आदि—ये सभी गोसेवाके ही रूप हैं। इस प्रकारकी गोसेवासे समस्त मनोरथोंकी पूर्ति होती है। प्रतिदिन गोग्रास देनेवालेके आँगनमें अष्टसिद्धियाँ तथा नव निधियाँ लोटती रहती हैं।

गृहस्थके घरमें पाँच स्थान हिंसाके माने गये हैं—चूल्हा जलाने, चक्की पीसने, झाड़ू देने, धान कूटने तथा जलके स्थानमें प्रतिदिन अनेकशः जीव गृहस्थके न चाहते हुए भी मरते हैं, अतः शास्त्रोंमें इन्हें 'पञ्चसूना' कहा गया

है। हमारे दूरदर्शी कृपालु ऋषियोंने इन पापोंके निवारणार्थ पञ्चमहायज्ञोंका विधान किया है—ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, भूतयज्ञ और मनुष्ययज्ञ (अतिथि-सत्कार)। इन महायज्ञोंके नित्यप्रति करनेसे उपर्युक्त पञ्चसूनाजनित पापोंका परिहार हो जाता है। इन पञ्चमहायज्ञोंके सम्पादनमें गौकी प्रमुख भूमिका रहती है। गोरसके बिना एक भी यज्ञ सम्पन्न नहीं हो सकता तथा मानवको सुसंस्कृत बनानेवाले षोडश संस्कार पञ्चगव्य, पञ्चामृत तथा गोदानके बिना पूर्ण नहीं होते, अत: गोपालन तथा गोसेवा मानवमात्रके लिये नितान्त आवश्यक है। रामराज्यमें सेवासे प्रसन्न हुई गौएँ अपने सेवकोंको आवश्यकतानुसार दूध दिया करती थीं—

मनभावतो धेनु पय स्रवहीं॥

(मानस ७। २३। ५)

श्रीद्वारकाधीशजीकी राजधानी द्वारकामें घर-घर गोसेवाको लोग तन-मन-धनसे किया करते थे। भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं गौओंकी सेवा किया करते थे। और हृष्ट-पुष्ट ब्यायी हुई गायोंको सजा-सजाकर प्रतिदिन तेरह हजार चौरासी गायें दानमें दिया करते थे। (श्रीमद्भा० १०। ७०। ८-९)

भगवान् श्यामसुन्दर वनमें गोचारण करते समय हरी-हरी सुकोमल घासके कवल उन्हें दिया करते थे। गायें भी उनके हाथका ग्रास लेनेको लालायित रहती थीं। गायें बहुत समझदार होती हैं, वे सेवकका हाथ पहचानती हैं। सेवककी गंध, स्पर्श तथा बोलीसे चित्रलिखित-सी हो जाती हैं तथा उसके हाथका परोसा चारा बड़े चावसे खाती हुई बड़े आनन्दका अनुभव करती हैं। भगवान् श्रीकृष्ण गोसेवासे जितने शीघ्र प्रसन्न होते हैं, उतने अन्य किसी सेवासे नहीं। यहाँतक कि अपनी सेवासे भी नहीं।

गौओंके शरीरमें खाज आनेपर जबतक वे शान्तिका अनुभव न करें तबतक खुजलाना चाहिये।

हरी-हरी सुकोमल घासके ग्रास तृप्तिपर्यन्त देनेसे सेवकको समस्त सिद्धियाँ स्वत: प्राप्त हो जाती हैं। गौकी प्रदक्षिणा करनेसे सभी पापोंका विनाश हो जाता है तथा देवगण मनोवाञ्छित सिद्धि प्रदान करते हैं। गोमाताके प्रसन्न होनेपर हृदय पवित्र तथा निर्मल हो जाता है और उसमें भगवान् विराजमान हो जाते हैं।

गोग्रासकी महिमा अतुलनीय है। गोसेवा न करने तथा गोग्रासका पुण्य न लेनेसे अध:पतन तथा नरककी प्राप्ति होती है। एक बार स्वर्गमें जाते हुए महाराज मिथिलेशके विमानको नरकके आगेसे ले जाया गया तो कृपालु नरेशने नारकीय पापी जनोंका आर्तनाद सुन द्रवित हो अपना समस्त पुण्य उन्हें अर्पण कर दिया और उनको मुक्ति प्रदान करवायी। राजाने धर्मराजसे अपने नरकद्वार-दर्शनका हेतु पूछा—धर्मराजने शंकाका समाधन करते हुए बताया—'आपने एक बार एक चरती हुई गायका निवारणकर उसे चरनेसे वञ्चित कर दिया था, अत: यहाँ आना पड़ा। वैसे भगवान्‌का प्रत्येक विधान मङ्गलमय होता है। यदि आप यहाँ नहीं आते तो कोटि-कोटि नारकीय जीवोंका उद्धार कैसे होता?'

इक्ष्वाकुवंशके चक्रवर्ती सम्राट् महाराज दिलीपने नन्दिनी गौकी इक्कीस दिनतक छायाकी तरह वनमें गोचारणके द्वारा सेवा करके पुत्र-प्राप्तिका वरदान प्राप्त किया—

आस्वादवद्भिः कवलैस्तृणानां
कण्डूयनैर्दंशनिवारणैश्च ।
अव्याहतैः स्वैरगतैः स तस्याः
सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्॥

(रघुवंश २। ५)

भाव यह है कि एकच्छत्र महाराज दिलीप नन्दिनीको मीठी-मीठी कोमल घासके ग्रास देकर, उसके शरीरसे मच्छरों तथा डाँसोंका निवारण करके शरीरको खुजलाकर, प्यास लगनेपर मधुर शीतल जल पिलाकर, उसकी इच्छाके अनुकूल अनुगमन करते हुए तन-मनसे सेवा करते थे।

अत: परम श्रद्धा तथा पूर्ण भक्तिभावसे गोग्रास, गोसेवा तथा गोदान देनेसे वैतरणी, असिपत्रादि भीषण यातनागार—नरकोंसे मुक्ति तथा समस्त सिद्धियोंकी सहज प्राप्ति होती है। ऐसी सर्वमङ्गला करुणामयी गोमाताको शतश: वन्दन।

आर्थिक दृष्टिसे गाय

कृषि-विकासमें गोवंशका योगदान

(डॉ० श्रीबलरामजी जाखड़, कृषि-मन्त्री)

गाय हमारी संस्कृतिसे अतीत कालसे सम्बद्ध है। इसे माताकी संज्ञा इसलिये दी गयी है कि यह हमारे जीवनका केन्द्र-बिन्दु रही है। ठीक माँ जिस भाँति बच्चोंकी देख-रेख, भरण-पोषण करती है, उसी भाँति गाय हमारे विकासमें भागीदार है। दूध और उससे बनी वस्तुओंके अतिरिक्त हमारे आर्थिक जीवनमें गोवंशकी बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका और योगदान है।

यह सर्वविदित तथ्य है कि भारत कृषि-प्रधान देश है और यहाँके लगभग ७० प्रतिशत लोग खेतीपर ही निर्भर रहते हैं। यह कहना असंगत न होगा कि खेतीका मूलाधार गोवंश ही है। इतिहास साक्षी है कि जबतक गोवंशका विकास, संवर्धन तथा उसकी पूजा होती रही, तबतक हम आर्थिक तथा आध्यात्मिक दृष्टिसे विकासके सर्वोच्च शिखरपर आरूढ रहे। गोवंशके प्रतापसे ही भारतकी भूमि सोना उगलती थी तथा विश्वमें 'सोनेकी चिड़िया' कहलानेका इसे ही गौरव प्राप्त था। वैदिक धर्म तथा भारतीय संस्कृतिकी चार आधारशिलाएँ—गौ, गङ्गा, गीता एवं गायत्रीमें भी गौका स्थान हर प्रकारसे सर्वोच्च माना गया है। यह कहनेमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि गोवंश हमारी अमूल्य धरोहर है, जिसके विकासपर हमारा विकास भी आधारित है।

कृषिके विकासमें गोवंशका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है और भविष्यमें रहेगा भी। इस संदर्भमें गत वर्षोंमें किये गये शोध तथा परीक्षणोंके आधारपर कई आँकड़े सामने आये हैं। पंजाबमें किये गये शोध-कार्यने स्पष्ट किया है कि डेरी-उद्योग किसानके दिये अन्न-उत्पादनकी अपेक्षा अधिक लाभकर है। सन् १९८९ में प्रकाशित किये गये आँकड़ोंके अनुसार डेरी-उद्योगसे प्रति हैक्टेयर रु० ४५४८ की उत्पत्ति (Return) हुई, जो कि धान-गेहूँ रु० २४४३, मूँगफली-गेहूँ रु० १८७०, गेहूँ-कपास रु० १७९८ तथा मक्का-गेहूँ रु० १७८८ की अपेक्षा कहीं अधिक थी। इसी दिशामें और अधिक परीक्षण करनेपर ज्ञात हुआ कि भैंस-वंश-फार्मिंगकी अपेक्षा गौ-वंश-फार्मिंगमें अधिक लाभ हुआ। आँकड़ोंके अनुसार डेरी-उद्योगके अन्तर्गत भी गौ-वंशपर आधारित फार्मिंगमें प्रति रु० १०० की लागतपर रु० ११७ की आय हुई, जब कि भैंस-वंश-फार्मिंगमें रु० ११४ की आय हुई। इससे स्पष्ट होता है कि यद्यपि भैंस भारतीय डेरी-उद्योगमें प्रमुख इकाई है तथापि गायका योगदान किसानके लिये आर्थिक दृष्टिसे अपेक्षाकृत अधिक है। यह हमारे लिये एक गर्वकी बात है।

गौ-वंशका योगदान एक साधारण किसानके जीवन-स्तरके उठानेमें बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है। श्वेत-क्रान्तिका लक्ष्य केवल गोवंशको बढ़ाना और इसकी उत्पादकताका वर्धन करना ही नहीं था, वरन् राष्ट्रके पिछड़े हुए समाज—कृषक-समाजके उत्थानपर केन्द्रित था। श्वेत-क्रान्तिको इतने थोड़ेसे समयमें लानेका श्रेय किसानोंद्वारा अपनायी सहकारिता तथा कृषि-वैज्ञानिकोंके सतत शोध-कार्य और उपलब्धियोंको ही है। इनके प्रयत्न दुग्ध-उत्पादनमें अधिक प्रभावशील रहे हैं अन्न-उत्पादनकी अपेक्षा। आज हम दुग्ध-उत्पादनमें विश्वमें दूसरी श्रेणीपर आ गये हैं। प्रथम श्रेणीमें अभी भी अमेरिका ही है। दुग्ध-उत्पादन पिछले वर्ष ६ करोड़ टनसे भी अधिक हुआ है जो कि अमेरिकासे केवल लगभग ०.७ करोड़ टन कम है। यदि हमारी प्रगति-दर इस दिशामें लगभग ५.५ प्रतिशत भी रही तो भी हमारा देश इस शताब्दीके अन्ततक लगभग ७.८ करोड़ टन दुग्ध-उत्पादन करके अमेरिकासे भी आगे निकल जायगा और

भारत उस समय दुग्ध-उत्पादनमें विश्वमें प्रथम होनेका कीर्तिमान स्थापित करेगा। यह सब कुछ गौ-वंशकी ही देन होगी, इसमें कोई संदेह नहीं।

गोवंश ऊर्जाका अनन्त स्रोत है। आज दुनियाके तथाकथित विकसित देश निकट भविष्यमें उत्पन्न होनेवाले ऊर्जा-संकटसे चिन्तित हैं। अनुमान है कि पेट्रोल और डीजल तथा मिट्टीके तेलके भंडार २०-२५ वर्षोंमें समाप्त हो जायँगे। लेकिन हमारे देशमें ऐसी स्थिति नहीं आयेगी, यदि हम अपने गोवंशकी रक्षा कर लें। हमारे देशकी कृषिको ९० प्रतिशत ऊर्जा आज भी गोवंशसे मिल रही है। ग्रामोंमें खेतोंकी जुताई, गन्ना-पेराई, रहँट चलाना तथा परिवहनका अधिकांश काम बैलोंद्वारा किया जाता है। यदि यह ऊर्जा पेट्रोल तथा डीजलसे प्राप्त करें तो १०० गुनी अधिक विदेशी मुद्रा खर्च करके उसे तेल-उत्पादक देशोंसे प्राप्त करना होगा, जिसमें मूल्यका बढ़ाना तथा अन्य कई शर्तें लगभग उनकी इच्छापर निर्भर होंगी। हम उनपर आश्रित होंगे। इसके अतिरिक्त जब हम कुल उपभोगकी १० प्रतिशत ऊर्जा पेट्रोल-डीजल आदिसे प्राप्त करनेमें पर्यावरणकी इस चिन्ताजनक स्थितिमें फँसे हैं तो यदि १०० प्रतिशत ऊर्जा डीजलसे प्राप्त की जायगी तो देशमें पर्यावरणकी क्या स्थिति होगी, यह तो उन्हींको पता होगा जो ऐसे पर्यावरणमें श्वास लेंगे।

गोबर मल नहीं है खाद है, जिसका मूल्य भारतीय किसान भलीभाँति जानता है। कृषि-वैज्ञानिकोंने अन्वेषण करनेके उपरान्त यह निष्कर्ष निकाला है कि गोबरके सेन्द्रिय खादके प्रयोगसे भूमिकी उर्वराशक्ति बढ़ती है। इसके विपरीत रासायनिक खादके प्रयोगसे उस समय तो फसल अच्छी हो जाती है, किंतु भूमिकी उर्वराशक्ति धीरे-धीरे क्षीण हो जाती है। फलस्वरूप हर वर्ष अधिकाधिक खाद तथा कीटनाशक दवाइयोंकी आवश्यकता होती है, जिससे खाद्यान्नोंके उत्पादनकी लागत बढ़ती चली जाती है और किसानको अन्तमें मिट्टीकी उत्पादन-क्षमताकी हानि होती है। गोबरसे खाद बनानेकी अब ऐसी विधि उपलब्ध है जिससे खाद मात्रामें कई गुना अधिक एवं बढ़िया बनती है। एक गाय अथवा बैलके एक दिनके गोबरसे लगभग रु० ४०-५० की खाद तैयार होती है। उर्वरकके साथ-साथ गोबर-गैस संयन्त्रोंसे ईंधन और प्रकाशकी भी पूर्ति होती है तथा जनरेटर चलाकर बिजली भी उत्पन्न की जाती है। इस प्रकार निर्धन किसानको पूरे साल रोजगार देने और उसकी आमदनीमें वृद्धि करनेका श्रेय गोवंशको जाता है।

इधर भारत सरकारने गौ-रक्षा तथा दुग्ध-उत्पादनके क्षेत्रमें कई ठोस कदम उठाये हैं। सरकारने 'सेन्ट्रल गवर्नमेंट कौन्सिल ऑफ गौ-संवर्धन' की सन् १९५२ में स्थापना की थी और यह योजना नासिक, उरूलीकांचन (पूना), अमृतसर, इंदौर और अहमदनगरमें प्रगतिके पथपर है और दुग्ध-उत्पादनकी उत्तम क्षमतावाली देशी तथा संकर-जातिकी बछियाँ पैदा करनेमें कार्यरत है। 'बंबई-गौ-रक्षक-मण्डली', जिसने वर्ष १९८६ ई० में अपनी शताब्दी मनायी थी, की दो संस्थाएँ एक अनुसंधान और विकासके लिये तथा दूसरी चारे और घासपर शोध-कार्यके लिये राष्ट्रिय स्तरपर चल रही हैं और अच्छा कार्य कर रही हैं। 'साबरमी-आश्रम-गौशाला' जिसको महात्मा गाँधीने वर्ष १९१५ ई० में विदाज (अहमदाबाद) में स्थापित किया था और जो अब 'राष्ट्रिय डेरी-विकास-बोर्ड' के अन्तर्गत कार्यरत है, सुचारु रूपसे चल रही है। देशमें जितना दूध पैदा होता है उसमें ४४ प्रतिशत गायोंसे मिलता है।

दुग्ध-उत्पादनमें भारतीय गाय अभी बहुत प्रगति करनेकी क्षमता रखती है। भारतीय कृषिमें गौका योगदान सदा रहेगा। गौ-सेवा हमारी संस्कृति और सभ्यताने हमें सिखायी है, इसका एक ठोस आधार है। यदि देशकी कृषिका सर्वाङ्गीण विकास करना है तो दुग्ध-उत्पादन बढ़ाना होगा। वर्तमानकी १८५ ग्राम दुग्ध प्रतिव्यक्ति प्रतिदिनकी मात्राको बढ़ाकर लगभग २२० ग्राम करना होगा जो कि संतुलित आहार और पोषणके लिये आवश्यक है। गौ-दुग्ध-पान प्रत्येक भारतीयकी विशेषतया हमारे किसानकी आवश्यक खुराक है। यदि प्रत्येक नागरिकको स्वस्थ रखना है और खुशहाल रखना है तो गौ-संवर्धन करना होगा। (प्रे०—श्रीरमेशचन्द्रजी द्विवेदी)

गोधनका अर्थशास्त्र

[श्रीचोथमलजी गोयनका]

किसी भी प्रकारका गोवंश—बूढ़ा, अपंग, अनुत्पादक, लूला, लँगड़ा और अंधा देश और पालकपर भार-स्वरूप नहीं है। उसे अनुपयोगी कहना ठीक नहीं है। भारतीय पुराणोंमें स्थान-स्थानपर दर्शाया गया है—'**लक्ष्मीश्च गोमये नित्यं पवित्रा सर्वमङ्गला।**' (स्कन्द०, अव०, रेवा० ८३। १०८) अर्थात् गोबरमें परम पवित्र सर्वमङ्गलमयी श्रीलक्ष्मीजीका नित्य निवास है, जिसका अर्थ यही है कि गोबरमें सारी धन-सम्पदा समायी हुई है। इसी विशेषताके कारण गायको कामधेनुकी संज्ञा दी गयी है। भारतमें गोवंश और पशुओंकी निर्मम हत्याएँ प्रतिसूर्योदयके साथ बढ़ती ही जा रही हैं। सरकारद्वारा निर्धारित गरीबीकी रेखासे नीचे लोगोंकी संख्या भी बढ़ती ही जा रही है, इससे स्पष्ट है कि यान्त्रिक खेती, रासायनिक खाद और कीटनाशक जहरीली औषधियोंके प्रयोगसे स्वास्थ्य और आर्थिक स्थितिमें कोई सुधार नहीं हो पाया, बल्कि हानि ही हुई है और होती ही जा रही है। जिससे यह स्पष्ट प्रमाणित हो जाता है कि गोवंशकी अवहेलना करके, आधुनिक तकनीकसे कोई लाभ, कोई विकास नहीं हो पाया, हानि ही हुई है। धरतीके लिये रासायनिक खाद उसका प्राकृतिक आहार नहीं है। इससे शुरूमें तो उत्पादन बढ़ता है, किंतु बादमें चाहे कितनी ही मात्रामें रासायनिक खाद डाले, उत्पादन घटता ही जाता है, धरतीकी उर्वरा-शक्ति कमजोर होती जाती है। कुछ समय पश्चात् धरती पूर्णतः बंजर हो जाती है। इसके अलावा सभी खाद्य-पदार्थोंमें जहरका समावेश, खेतीकी लागतमें वृद्धि, स्वास्थ्यकी हानि, महँगाई-करोंमें वृद्धि और अन्ततः गरीबी—ये हैं रासायनिक खाद और जहरीली कीटनाशक औषधियोंके दुष्परिणाम। रासायनिक और जहरीली कीटनाशक औषधियोंके कारखानोंकी स्थापनामें अरबों रुपयोंकी लागत आती है, जिसका आर्थिक भार भी देशकी जनतापर ही पड़ता है।

यदि गोवंशकी अवहेलना न होती, उनकी निर्मम हत्याएँ न की जातीं, उनके गोबर-गोमूत्रका समुचित उपयोग सही और आधुनिक ढंगसे किया जाता, उसके गुणोंके विषयमें शोध की जाती, उनके उपयोगके लिये नयी तकनीक विकसित की जाती, तो आज कृषि-उत्पादनकी स्थिति ही बहुत भिन्न होती, देशमें महँगाई नहीं बढ़ती, क्योंकि किसान जो साथ-साथ गोपालक भी हैं, उन्हें खेती करनेमें कोई लागत ही नहीं लगानी पड़ती, उसका उत्पादन अपने परिश्रम और प्राकृतिक सूत्रोंसे स्वतः ही होता। खेतीमें लागत न आनेके कारण अनाज और अन्य उत्पादन महँगे नहीं होते। सरकारको किसी प्रकारकी कोई आर्थिक सहायता, खादपर अथवा अनाजपर नहीं देनी पड़ती, जनतापर करोंका बोझ नहीं पड़ता, जिसके परिणामस्वरूप गरीबी और महँगाई दोनों ही नियन्त्रणमें रहते और विकासके साथ-साथ देशमें समृद्धि भी बढ़ती।

गोबरकी खाद धरतीका प्राकृतिक आहार है, इससे धरतीकी उर्वराशक्ति बनी रहती है, यदि गोबरकी कम्पोस्ट खाद तैयार करके उपयोगमें लाया जाय तो उर्वराशक्ति धीरे-धीरे बढ़ती ही रहती है, घटती नहीं, यही कारण है कि लाखों वर्षोंसे भारतकी धरतीकी उर्वराशक्ति अभी भी बनी हुई है, जब कि विकसित देशोंमें सिर्फ पिछले ६०-७० वर्षोंसे रासायनिक खादके उपयोगसे लाखों हेक्टेयर भूमि बंजर और अनुत्पादक हो गयी है। वहाँकी सरकार, वहाँके लोग रासायनिक खाद और जहरीली कीटनाशक औषधियोंके प्रयोगके घातक परिणामोंसे अच्छी तरह परिचित हो गये हैं। वे रासायनिक खादका त्याग करके गोबरकी खाद तथा अन्य आर्गेनिक खादका उपयोग कर रहे हैं। हमारे देशमें अभी भी हम रासायनिक खादके प्रभावसे भ्रमित हो रहे हैं।

गोबरकी कम्पोस्ट खादके विषयमें पिछले १०-१२ वर्षोंसे, इसके उपयोगके द्वारा बहुत अच्छी तरह प्रमाणित हो चुका है कि यह खाद किसी भी प्रकारसे रासायनिक खादसे कम प्रभावशाली नहीं है। इस खादमें रासायनिक खादकी तुलनामें नाईट्रोजन, फास्फोरस और पोटैशियमकी

मात्रा कम नहीं है। नाईट्रोजन ०.५-१.५ प्रतिशत, फास्फोरस ०.५-०.९ प्रतिशत और पोटैशियम १.२-१.४ प्रतिशत रहता है। यह अनुपात गोबरकी कम्पोस्ट खादको कई बार प्रसिद्ध शोध-शालाओंमें शोध कराकर जाँच लिया गया है। इस कम्पोस्ट खादके बनानेकी विधिको नॅडेप खादके नामसे जाना जाता है। इस खादको बनानेकी विधि भी है, जो बहुत ही सरल है। प्रत्येक किसान और गोपालक अपने ही घरपर अथवा खेतमें, इसे बना सकता है, सिवाय परिश्रमके इसमें कोई लागत नहीं आती है। इस खादको बनानेके लिये १० फुट लंबा, ६ फुट चौड़ा और ३ फुट ऊँचा एक टंकी अथवा हौद बनाना होता है, जिसमें १८० घनफुट गोबरकी कम्पोस्ट खाद तैयार होती है। एक टंकी भरनेके लिये सिर्फ १०० किलोग्राम गोबर, लगभग १५०० किलोग्राम खेतके तथा अन्य वानस्पतिक व्यर्थ पदार्थ जैसे सूखे पत्ते, डंठल, टहनियाँ, जड़ें आदि एवं खेतके हरे झाड़-झंखार, खेतीकी या नाले आदिकी सूखी, छनी हुई मिट्टी १७५० किलोग्राम तथा पानी लगभग १५००-२००० लीटर मौसमके अनुसार आवश्यकता होती है। इन पदार्थोंकी कोई भी लागत नहीं आती, यह सब किसानको खेतीमें ही और पशुओंसे उपलब्ध हो जाता है। इस मिश्रणको गोबर, मिट्टीसे लेप कर टंकीको बंद कर दिया जाता है। ९०-१२० दिनतक सामग्री उसी टंकीमें पड़ी रहती है और कम्पोस्ट खाद तैयार हो जाती है। खादसे तैयार होनेपर उसे उपयुक्त छलनीसे छाना जाता है, उसका वजन लगभग तीन टन होता है। १०० किलोग्राम गोबरसे तीन टन गोबरकी कम्पोस्ट खाद तैयार होती है। आजके वर्तमान भावोंके अनुसार एक बोरी यूरिया-खाद ५० किलोकी कीमत लगभग ढाई सौ रुपयेसे भी अधिक है। एक गायके वार्षिक गोबरसे लगभग ८० टन खाद एक वर्षमें तैयार हो सकती है, जिसकी कीमत आजके रासायनिक खादके भावोंके अनुसार लगभग ४०,००० रुपयेकी होती है। एक गायसे मासिक आय लगभग ३३०० रुपयेकी हो सकती है, सिर्फ उसके गोबरसे।

ऊपरके विवरणसे बहुत स्पष्ट है कि किसी भी प्रकारका निकम्मा कहा जानेवाला गोवंश सिर्फ अपने गोबरसे अपने पालकको जो कुछ वह खाता है, उससे अधिक आय दे देता है, यदि उसके गोबरका, गोमूत्रका समुचित उपयोग किया जाय। किसी भी गोवंशको निकम्मा, अनुपयोगी मानकर उसको मारना अथवा मारनेकी अनुमति देना, देशकी आर्थिक व्यवस्थाके लिये कितना हानिकारक है, यह प्रमाणित हो जाता है।

गायके गोबरमें कितनी विलक्षण शक्ति है, इसका अनुसंधान रसियामें करके अनुभव किया गया है। गायके गोबरका लेप मकानोंके बाहर दीवालों और छतोंपर कर देनेसे बाहरसे रेडियेशनकी किरणें मकानमें प्रवेश नहीं कर सकतीं। यह अनुसंधान किया जा चुका है और इसका प्रमाणित वर्णन विश्वकी विख्यात पत्रिका 'रीडर डाइजेस्ट' में बहुत वर्षों पहले एक लेखमें आया था। रसियामें ही गायके घीसे हवन करके उसके बारेमें अनुसंधान किया गया था। जहाँ-जहाँ जितनी दूरीमें उस हवनके धुएँका प्रभाव फैला, उतने दायरेमें किसी भी प्रकारके कीटाणु अथवा वैक्टीरिया नहीं रहे। वे क्षेत्र कीटाणुओं और वैक्टीरियाके प्रभावसे मुक्त हो गये।

गोमूत्र खेतीके लिये बहुत उपयोगी होता है, उसमें धरतीको बिना किसी प्रकारकी हानि पहुँचाये बहुत अच्छी कीटाणुनाशक शक्ति होती है। गोमूत्रका उपयोग मानवकी कई बीमारियोंमें औषधके रूपमें और पेटमें कृमि-नाशके लिये किया जाता है। गोमूत्रकी उपयोगिता, यह अनुसंधानका एक अच्छा विषय है।

गोबरसे गैस मुफ्तमें प्राप्त होती है, इसकी जानकारी जन-साधारणको हो चुकी है। गैसका उपयोग ईंधन और रोशनीके लिये किया जाता है। दुर्भाग्यकी बात है कि गोबर-गैसके संयन्त्र गाँव-गाँवमें लग जाने चाहिये थे, अबतक नहीं लग पाये, यदि ऐसा हुआ होता तो गाँवोंमें ईंधन और रोशनी लोगोंको मुफ्त प्राप्त हुई होती। वनोंपर ईंधनके लिये जो इतना भार पड़ा है वह समाप्त हो गया होता और वन अबतक वापस हरे-भरे हो गये होते। विद्युत्-प्रणालीपर जो इतना दबाव पड़ रहा है, वह कम होकर उतनी ही विद्युत्, किसी भी औद्योगिक विकासके काममें लायी गयी होती तो देशकी कितनी बड़ी आर्थिक समृद्धि होती। गाँवके लोगोंको बिना धुएँका स्वच्छ ईंधन

मिलता, जिसके कारण उनकी आँखोंमें बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं, आँख कमजोर हो जाती है, उससे छुटकारा मिलता। गोबरकी कोई लागत नहीं आती, गैससे निकला हुआ गोबर खेतीके लिये ज्यादा प्रभावशाली होता है, क्योंकि उसमेंसे गैस निकल जानेसे धरतीकी उर्वराशक्ति बढ़ानेमें वह ज्यादा समर्थ हो जाता है।

गोबरका समुचित उपयोग करनेसे जो आय होती है, उससे गाय-बैलके भरण-पोषणका खर्च निकालनेके पश्चात् भी बचत ही रहेगी, ऐसी स्थितिमें गायका दूध और बैलका परिश्रम उसके पालकोंको मुफ्तमें प्राप्त होगा, जिससे उनके परिवारोंमें समृद्धि आयेगी, उनके रहन-सहनका स्तर ऊँचा होगा, उनके बालकोंको पीनेके लिये दूध मिलेगा। क्योंकि जब दूधकी लागत नहीं आयेगी तभी भारतके गरीब परिवार दूधका उपयोग कर पायेंगे। उपर्युक्त विवरणसे बहुत स्पष्ट है कि गोवंश किसी भी स्थितिमें अनुपयोगी है ही नहीं, मरनेके पश्चात् भी अपने पालकको बोनसके रूपमें चमड़ा, हड्डी तथा अन्य जन-उपयोगी वस्तु अपने शरीरके द्वारा छोड़ जाता है, ऐसे पशुकी हत्या अज्ञानता है।

देशके उच्च और उच्चतम न्यायालयोंके न्यायाधीशोंने गोवंशकी हत्या निषेध करनेके विषयमें जो निर्णय दिये हैं उनका प्रमुख आधार यही है कि अनुत्पादक, अनुपयोगी गोवंश पालक और देशपर आर्थिक रूपमें भार हैं। इसलिये ऐसी स्थितिमें उनकी हत्या करके उनको उपयोगमें लाना आर्थिक दृष्टिकोणसे उचित है, न्यायिक रूपसे मान्य है। ऐसे गलत निर्णय इसलिये हुए हैं कि आजतक गोवंशके गोबरकी अर्थनीतिके बारेमें व्यापक और प्रमाणित रूपमें कोई विस्तृत जानकारीकी दलील नहीं दी गयी।

भारत सरकारकी हिंसक नीतिके द्वारा समृद्धि प्राप्त करना, विदेशी मुद्रा कमानेकी बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाना, शेखचिल्लीके कल्पनाओंके समान ही है। ऐसी हिंसात्मक योजनाएँ अभीतक सभी पूरी तरह असफल ही नहीं हुई हैं बल्कि उनके घातक परिणाम हुए हैं और हो रहे हैं।

भोले-भाले मेढकोंको मारकर उनकी टाँगोंको विदेशी मुद्रा प्राप्त करनेके लिये निर्यात करनेका कार्यक्रम बनाया गया था, जिसके घातक परिणाम सबके सामने हैं। जहाँ खेतीमें मेढक रहते थे वहाँका सारा पर्यावरण मेढकके न रहनेसे असंतुलित हो गया। खेतीके लिये जो घातक कीटाणु थे वे मेढकोंके आहार थे। मेढकोंके न रहनेसे खेतीमें बीज डालनेपर उन कीटाणुओंने अंकुर ही खा लिये, सारी खेती चौपट हो गयी और मजबूर होकर मेढकोंको वहाँपर संरक्षण देकर उनका पुनः उत्पादन करनेकी व्यवस्था करनी पड़ी, कई वर्षोंतक उस क्षेत्रमें सामान्य खेती नहीं हो पायी। पर्यावरणको स्वच्छ और संतुलित रखनेके लिये प्रकृतिका अपना नियम होता है, उसमें छेड़-छाड़ करनेसे उसके दुष्परिणाम होते ही हैं, इसी प्रकार कई प्रकारके सरकारके हिंसात्मक परीक्षण विदेशी मुद्रा कमानेके लोभमें बुरी तरह असफल हुए हैं, देशको और जनताको बहुत बड़ी आर्थिक हानि उठानी पड़ी है।

प्राचीन भारत, गोवंशके कारण कितना समृद्ध था, इसका एक उदाहरण गौतम बुद्धके कालका दिया जा रहा है। उस समय जिसके पास अधिक-से-अधिक संख्यामें गोवंश होता था, उसीको नगर-श्रेष्ठी (नगर-सेठ) की उपाधि दी जाती थी। ऐसे ही एक नगर-सेठने पाटलिपुत्र (पटना) में मगध देशके राजा बिंबिसारको अपने घरमें भोजनके लिये आमन्त्रित किया। जितने बड़े और प्रतिष्ठित व्यक्तिको घरमें भोजन आदिके लिये आमन्त्रित किया जाता है, उसकी प्रतिष्ठाके अनुकूल व्यवस्था भी की जाती है, यह परम्परा सदासे रही है, आज भी है। इसी परम्पराके अनुकूल उस नगर-सेठने अपने घरमें, रात्रिका अंधकार दूर करनेके लिये, स्थान-स्थानपर ऐसे रत्न लगा दिये जो कि अँधेरेमें प्रकाशित होते हैं और सम्राट् बिंबिसारको रत्नोंकी रोशनीमें भोजन कराया। इससे यह सिद्ध होता है कि उस समयका भारत कितना समृद्ध था। एक-एक श्रेष्ठीकी गौशालामें एक लाखसे भी अधिक गोवंश रहता था, यह भी कल्पनाकी बात नहीं है, इतिहासद्वारा प्रमाणित है।

यूरोपके बाजारोंमें गोबरके आर्गेनिक खादसे उपजाये गये साग, फल, अनाज, रासायनिक खादसे उपजाये गये साग, फलों और अनाजोंसे दुगुनीसे तिगुनी कीमतपर बिक रहे हैं, फिर भी इनकी माँग बढ़ती ही जा रही है। वहाँके किसान तथा अन्य उत्पादक आर्गेनिक खादका

प्रयोग ही बढ़ाते जा रहे हैं। भारतकी ही एक चाय-उत्पादक कंपनीको गोबरकी खादसे चाय-उत्पादन करके देनेके लिये सामान्य कीमतसे ढाई गुनी कीमतपर आर्डर मिला है। अन्य खरीददार बहुत बड़े आर्डर देनेको तैयार हैं, परंतु गोबरके खादकी उपलब्धि आवश्यक मात्रामें न होनेके कारण यहाँके चाय-उत्पादक गोबरकी खादसे उपजायी गयी चाय अधिक मात्रामें उन्हें बेचनेमें असमर्थ हैं। गोबर-खादका महत्त्व, उसकी आवश्यकताका प्रत्यक्ष प्रमाण सामने है। इन सब बातोंको देखते हुए, समझते हुए हम सभीको विशेषकर किसानोंको अपनी मनोवृत्ति एवं दृष्टिकोणको बदलना होगा तभी हम गोवंशका पूरा लाभ उठा सकेंगे और इसी लाभकी पृष्ठभूमिमें अनायास गोसेवाका महत्तम कार्य भी सम्पन्न हो जायगा।

गौसे अनन्त लाभ

[स्वामी श्रीदयानन्दजी सरस्वती]

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥

(यजु० ३६। ८)

सर्वशक्तिमान् जगदीश्वरने इस सृष्टिमें जो पदार्थ बनाये हैं, वे निष्प्रयोजन नहीं, किंतु एक-एक वस्तु अनेक-अनेक प्रयोजनोंके लिये रची है। इसलिये उनसे वे ही प्रयोजन लेना न्याय है अन्यथा अन्याय। पक्षपात छोड़कर देखिये, गाय आदि पशु और कृषि आदि कर्मोंसे सब संसारको असंख्य सुख होते हैं या नहीं?

जो एक गाय न्यून-से-न्यून दो सेर दूध देती हो और दूसरी बीस सेर, तो प्रत्येक गायके ग्यारह सेर दूध होनेमें कुछ भी शंका नहीं। इस हिसाबसे एक मासमें सवा आठ मन दूध होता है। एक गाय कम-से-कम छः महीने और दूसरी अधिक-से-अधिक अठारह महीनेतक दूध देती है, तो दोनोंका मध्यभाग प्रत्येक गायका दूध देनेमें बारह महीने होते हैं। इस हिसाबसे बारह महीनोंका दूध ९९ मन होता है। इतने दूधको औटाकर प्रतिसेरमें एक छटाँक चावल और डेढ़ छटाँक चीनी डालकर खीर बनाकर खाये, तो प्रत्येक पुरुषके लिये दो सेर दूधकी खीर पुष्कल होती है। क्योंकि यह भी एक मध्य भागकी गिनती होती है। अर्थात् कोई भी दो सेर दूधकी खीरसे अधिक खाये और कोई न्यून, इस हिसाबसे एक प्रसूता गायके दूधसे एक हजार नौ सौ अस्सी मनुष्य एक बार तृप्त होते हैं। गाय न्यून-से-न्यून ८ और अधिक-से-अधिक १८ बार ब्याती है। इसका मध्यभाग १३ बार आया तो पचीस हजार सात सौ चालीस मनुष्य एक गायके जन्मभरके दूधमात्रसे एक बार तृप्त हो सकते हैं। इस गायकी एक पीढ़ीमें छः बछिया और सात बछड़े हुए, इनमेंसे एकको मृत्यु रोगादिसे होना सम्भव है। तो भी बारह रहे। उन छः बछियोंके दूधमात्रसे उक्त प्रकार एक लाख चौवन हजार चार सौ चालीस मनुष्योंका पालन हो सकता है। अब रहे छः बैल, उनमें एक जोड़ी दोनों साखमें २०० मन अन्न उत्पन्न कर सकती है इस प्रकार तीन जोड़ी ६०० मन अन्न उत्पन्न कर सकती है और उनके कार्यका मध्य भाग आठ वर्ष है। इस हिसाबसे ४,८०० मन अन्न उत्पन्न करनेकी शक्ति एक जन्ममें तीनों जोड़ीकी है। इतने (४,८०० मन) अन्नसे प्रत्येक मनुष्यको तीन पाव अन्न भोजनमें मिले तो २,५६,००० मनुष्योंका एक बारका भोजन होता है। दूध और अन्नको मिलाकर देखनेसे निश्चय है कि ४,१०,४४० मनुष्योंका पालन एक बारके भोजनसे होता है। अब छः गायकी पीढ़ी-पर-पीढ़ियोंका हिसाब लगाकर देखा जाय, तो असंख्य मनुष्योंका पालन हो सकता है। और इसके मांससे अनुमान है कि केवल अस्सी मांसाहारी मनुष्य एक बार तृप्त हो सकते हैं। देखो, तुच्छ लाभके लिये लाखों प्राणियोंको मारकर असंख्य मनुष्योंकी हानि करना महापाप क्यों नहीं? (गो-करुणानिधि)

गोसंवर्धन एवं समृद्धि

[श्रीहरिशंकरजी भाभड़ा, अध्यक्ष राजस्थान विधान-सभा]

भारतमें गायकी महत्ताका वर्णन वैदिक कालसे चला आ रहा है। गाय भारतीय जीवनका अभिन्न अङ्ग है। इसलिये शास्त्रोंमें गायकी मुक्तकण्ठसे महिमा गायी गयी है—

'मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।'

'गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।'

'यद्गृहे दुःखिता गावः स याति नरकं नरः।'

'एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम्॥'

'गावो विश्वस्य मातरः।'

—आदि वचनोंसे गायको जन्मभूमि और जननीके समान स्थान दिया गया है। पृथ्वीको भी गायके रूपमें माना गया है। वेदोंमें गायके प्रकरणपर विभिन्न प्रसंगोंमें विभिन्न कथाएँ कही गयी हैं। ऋग्वेदमें पणियोंद्वारा गायोंकी चोरी करनेकी बात है और उनको मुक्त करनेवालेकी स्तुति तथा इन्द्रके द्वारा गायोंको राक्षसोंसे मुक्त करानेकी बार-बार प्रशंसा की गयी है। इन वर्णनोंसे यह प्रतिपादित होता है कि गाय हमारे जीवनका आधार है। हर पवित्र कार्य तथा संस्कारके पहले पञ्चगव्य जिसमें गोमूत्र, गोबर, गायका दूध, घी, दही शामिल होता है, लेना अनिवार्य होता है।

प्राचीन कालमें गाय ही सम्पत्तिका आधार थी। गायको ब्राह्मणके समकक्ष पूजनीय माना गया है। गरुडपुराणमें मृत्युके बाद वैतरणी पार करनेका माध्यम गायको ही माना गया है। गायके शरीरमें तैंतीस कोटि देवताओंका निवास है, अतः वह पूजनीय है। जन्म देनेवाली स्नेह, वात्सल्य एवं ममतामयी माँ तो कुछ वर्षोंतक ही अपनी संतानको दुग्धपान कराती है; परंतु प्रकृतिकी साक्षात् सजीव-रूपधारिणी गौ माता जीवनभर अपने दुग्धसे हमारे स्वास्थ्यकी रक्षा करती है।

वेद, उपनिषद्, पुराण तथा सारे स्मृति-शास्त्रोंमें गो-रक्षा, गो-सेवा एवं गोदानको बार-बार निर्देशित किया गया है। आज भी वर्तमानमें अनेक समस्याओं—जैसे कृषि, उद्योग, ऊर्जा, पर्यावरण तथा स्वदेशी आदिकी दृष्टिसे भी गायकी उपयोगिता सिद्ध ही है। सदासे ही गायकी उपयोगिता बनी हुई है और सर्वदा उसकी प्रासंगिकता भी स्वतःसिद्ध है।

भारत एक कृषि-प्रधान देश है, इसलिये भी गायका हमारे देशकी आर्थिक स्थितिको सुदृढ़ करनेमें सदैव महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। विदेशी शासनके दौरान भी गोवंशके सहारे ही इस देशका गरीब कृषक जीवित रहा है। ऐसी स्थितिमें भारत-जैसे कृषि-प्रधान देशमें गोमूत्र तथा गोबरकी खाद जहाँ खेतोंको उपजाऊ करनेमें एवं खाद्यान्नका उत्पादन बढ़ाने तथा जमीनकी उर्वराशक्तिको बरकरार रखनेमें अत्यन्त उपयोगी है, वहीं दूसरी ओर आज जिस विदेशी रासायनिक खाद एवं कीटनाशकोंका प्रचुर मात्रामें उपयोग किया जा रहा है, इनके उपयोगके परिणामस्वरूप एक कालावधितक तो उत्पादन बढ़ता है, परंतु धीरे-धीरे भूमिकी नैसर्गिक उर्वरा-शक्ति नष्ट ही नहीं होती, बल्कि रासायनिक खादसे उत्पादित खाद्यानों, फलों और सब्जियोंमें कई प्रकारके विषकी मात्रा भी बढ़ती जा रही है, जिससे उनके स्वाद, उपयोग एवं संरक्षणमें गिरावटको आम आदमी अनुभव करने लगा है। इस प्रकारके उत्पादोंका उपयोग करनेवालोंके स्वास्थ्यमें गिरावट आ रही है तथा तरह-तरहके रोग पैदा हो रहे हैं। वैज्ञानिक इस सम्बन्धमें बार-बार चेतावनियाँ दे रहे हैं कि रासायनिक खादोंका उपयोग सीमित किया जाय। वे गायके गोबर तथा मूत्रकी खादकी उपयोगिताको अधिकृत रूपसे उजागर कर रहे हैं। अतः हमें अपनी विदेशी मानसिकताको शीघ्र ही बदलना होगा।

गायके गोबरसे घरोंको लीपने-पोतनेसे रोगाणु नष्ट होते हैं तथा वातावरण स्वच्छ एवं स्वास्थ्यप्रद रहता है, आजके विज्ञानने इस तथ्यको स्वीकार कर लिया है। आयुर्वेद-चिकित्सा-शास्त्रमें गोमूत्रको रोगनाशक माना गया है तथा गोमूत्रका उपयोग अनेक आयुर्वेदिक औषधियों-जैसे संजीवनी-वटी आदिमें किया जाता है।

शाकाहारकी उपयोगिताको अब पश्चिमके लोग भी समझ गये हैं। आयुर्वेद-चिकित्सा-पद्धतिमें तो यह सिद्धान्त

पहलेसे ही प्रतिपादित है। ऐलोपैथिक चिकित्सा-विज्ञानने भी अब इसे स्वीकार कर लिया है कि मनुष्य शाकाहार तथा गायका दुग्ध सेवन करके अधिक दिनोंतक सुखी एवं स्वस्थ-जीवन बिता सकता है। इसलिये पाश्चात्त्य देशोंके लोग मांसाहारके बजाय शाकाहार अपनानेके लिये स्वतः ही आगे आ रहे हैं, इससे गायके दूधकी महत्ता स्वतः ही प्रतिपादित होती है।

आजके युगमें आम आदमी मानसिक रूपसे तनावग्रस्त है, लोग मानसिक श्रमकी तुलनामें शारीरिक श्रमसे बचनेकी कोशिश करते हैं, इसीका परिणाम है कि हृदयरोग भीषण रूपसे घर-घरमें फैला हुआ है, लेकिन ऐसे लोगोंके लिये गायका दूध तथा घी बहुत उपयोगी है, क्योंकि गायके दूधमें विटामिन 'ए' प्रचुर मात्रामें होता है। इसमें चर्बीकी मात्रा कम होती है। गायका दूध माताके दूधके बाद पूर्णतया सुपाच्य और परिपूर्ण भोजन है। गायके दूधमें अन्य खनिज, विटामिन आदि भी प्रचुर मात्रामें होते हैं, जो भोजनके लिये जरूरी माने जाते हैं। कोई मनुष्य चाहे तो जीवनभर गायके दूधपर निर्भर रहकर अपने-आपको स्वस्थ रख सकता है। इसी प्रकार गायका दूध-दही आदि तथा उससे बने पदार्थ अन्य पशुओंके दूध आदिकी तुलनामें अधिक स्वादिष्ट एवं स्वास्थ्यवर्धक होते हैं।

आज बढ़ती हुई जनसंख्या एवं औद्योगीकरणके प्रसारके परिणाम-स्वरूप दिन-प्रति-दिन ऊर्जाका संकट गहराता जा रहा है। लेकिन गायके गोबरसे खाद ही नहीं गैस-प्लांटमें ऊर्जाका उत्पादन भी सस्ता, सुलभ तथा दैनिक जीवनके लिये उपयोगी है, गैस-प्लांटमें उपयोग किये गये गोबरकी उर्वरा-शक्ति बढ़ जाती है। लेकिन यह गोवंशकी वृद्धिसे ही सम्भव है। गोबर-गैस-प्लांटका प्रसार होनेसे ही ईंधनके लिये वनोंकी कटाईपर नियन्त्रण होने तथा पर्यावरण-संरक्षणकी सम्भावनाएँ हैं। देशमें बिजलीकी कमी है और बड़े-बड़े विद्युत्-उत्पादन-केन्द्रोंकी स्थापनाके पश्चात् भी यह कमी प्रतिवर्ष बनी रहती है। अधिकाधिक गोबर-गैस-प्लांटकी स्थापनासे विद्युत्की कमीकी पूर्ति आसानी तथा सस्तेमें की जा सकती है।

क्या हम यह मान लें कि वेद-शास्त्रोंने बिना किसी कारणके, केवल भावनावश ही गायका गुणगान किया है अथवा हमारे जीवनमें उसकी किसी सीमातक उपयोगिता भी है? भारतीय संस्कृतिकी यह विशेषता रही है कि प्रकृतिके उन सभी तत्त्वोंको देवत्व प्रदान किया गया है, उनकी पूजाका प्रावधान रखा गया है, जिनके आधारपर मनुष्य न केवल अपना शरीर धारण करता है अपितु उनके सहयोगसे जीवनकी रक्षा की जाती है। ये तत्त्व हैं—पृथ्वी, आकाश, अग्नि, जल, वायु और इससे उत्पन्न जीव-जगत्, वनस्पति, वृक्ष, नदी, पहाड़ आदि-आदि, जिनके बिना हमारा जीवन ही सम्भव नहीं है। यह पूजनीय भाव ही प्राकृतिक एवं पारिस्थितिक संतुलन रखनेका एक प्रमुख माध्यम है, जिससे सृष्टिके कार्य सुचारु रूपसे चलते रहें और प्राणिजगत्को प्रकृतिके कोपका भाजन नहीं होना पड़े। लेकिन आज इस पूजनीय भावके अभाव एवं भौतिकताके ऊहापोहमें असंतुलित तरीकेसे प्रकृतिका स्वार्थवश अति दोहन करनेका ही परिणाम है कि हमारे सामने पर्यावरणमें गिरावटकी भीषण समस्या मुँह बाये खड़ी है। यदि मनुष्य भारतीय संस्कृतिकी मान्यताओंके अनुसार संतुलित जीवन जीनेका अभ्यस्त हो जाय एवं प्रकृतिसे अनावश्यक छेड़-छाड़ नहीं करे तो उसके जीवनके अस्तित्वको कोई खतरा उत्पन्न नहीं हो सकता। प्राकृतिक संतुलन और पर्यावरणीय संरक्षणकी दृष्टिसे हमारे अस्तित्वको बनाये रखनेके लिये भी जीवनमें गायका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है।

गोवंशका आर्थिक दृष्टिसे मूल्याङ्कन करें तो निष्कर्ष निकलता है कि जन्मसे मृत्युपर्यन्त, गोवंशका कोई भी अङ्ग अथवा कृत्य ऐसा नहीं है जो अनुपयोगी अथवा प्रकृतिके प्रतिकूल हो। इस प्रकार गोवंशके शरीरका प्रत्येक अङ्ग आज भी हमारे जीवनके लिये अत्यन्त उपयोगी है। मृत गायके चर्म, सींग तथा खुरोंका भी उपयोग मानव-उपयोगकी अनेक वस्तुओंके लिये किया जाता है। चर्मसे निर्मित जूते एवं पर्स आदिपर चर्म-उद्योग चलता है। गायकी हड्डियोंसे भी खाद बनती है जो रासायनिक खादसे अधिक स्थायी उर्वराशक्ति देती है तथा हड्डियोंके चूरेका उपयोग अन्य उद्योगोंमें भी

होता है। भारत अपनी आर्थिक स्थिति गोवंशकी रक्षासे अधिक सुदृढ़ कर सकता है, इसमें कोई संदेहकी गुंजाइश नहीं है। खेतीके लिये भी ट्रैक्टरोंके अधिक उपयोगसे जो सम्भावित हानियाँ हो रही हैं, उसपर गम्भीर चिन्तनकी आवश्यकता है।

यदि थोड़ी देरके लिये आध्यात्मिक एवं धार्मिक पक्षको छोड़ भी दें और हम वैज्ञानिक तथा आर्थिक आधारोंकी तुलनामें भी तोलें तो गोवंशका वध तर्कसम्मत तथा वैज्ञानिक नहीं है। यह भी तर्क दिया जाता है कि अनुपयोगी गोवंशकी रक्षा करना आर्थिक दृष्टिसे उचित और लाभप्रद नहीं है। लेकिन ये सभी तर्क तथ्योंके विपरीत हैं। वेदों, पुराणों, शास्त्रों एवं संस्कृतिमें जब गायको माँका स्थान दिया गया है तो उसकी अनुपयोगिताका प्रश्न कौन-सी नैतिकता एवं न्याय है। क्या वृद्ध माता-पिताको भी इसी दृष्टिसे देखा जायगा? गोंडा, चित्रकूट तथा बनारसकी गोशालाओंमें प्रत्यक्ष रूपसे परीक्षण करनेपर यह तथ्य पूरी तौरसे प्रमाणित हुआ है कि गोवंश किसी भी दशामें अनुपयोगी नहीं होता। केवल दुधार गायें ही उपयोगी हैं, यह कथन भी सर्वथा सत्य नहीं है। गोवंशके केवल गोबर एवं मूत्र तथा उनके खुरोंसे रौंदी हुई मिट्टीसे इतनी खाद पैदा की जा सकती है कि उसको व्यापारिक दृष्टिसे बेचकर जो लाभ कमाया जा सकता है, उससे गोसंरक्षण तथा अपना भरण-पोषण भलीभाँति किया जा सकता है। इस प्रकार यह तथाकथित अनुपयोगी गोवंश भी जीवित रहकर आर्थिक लाभमें योगदान कर सकता है, क्योंकि अनुपयोगी गोवंश प्रत्यक्ष ही नहीं अप्रत्यक्ष-रूपमें लाभ भी पहुँचाता है। गोचरभूमिपर चरनेसे उस भूमिकी उत्पादन-क्षमता बढ़ती है। प्रकृतिमें कई प्रकारके ऐसे बीज होते हैं, जिन्हें उगनेके पूर्व उपचारित करनेकी आवश्यकता पड़ती है, इस प्रकारके बीज फल अथवा फलीके साथ गायके पेटमें जाकर स्वत: ही उपचारित होकर गोबरके साथ उसी गोचर-भूमिपर पुनः वितरित हो जाते हैं। यह बात वास्तविक परीक्षणोंसे सिद्ध की जा चुकी है। ऐसी स्थितिमें गोवंशकी रक्षा करना न केवल धार्मिक दृष्टिसे अपितु आर्थिक दृष्टिसे भी सर्वथा उचित है। भगवान् कृष्णने भी अपने जीवनमें इस बातको सिद्ध कर बताया कि भारतके लोगोंका जीवन गोवंशसे जुड़ा हुआ है। गोवंश केवल हिन्दुओंका ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानव-समाजका पोषक है।

आज गायके महत्त्वको समझकर ही हम उसकी प्रतिष्ठाको पुनः स्थापित करें यह समयकी माँग है। इसलिये सम्पूर्ण भारतमें गोवध-निषेध लागू कर उसका न केवल संरक्षण और संवर्धन करें, अपितु उससे होनेवाले आर्थिक लाभोंसे देशके विकास तथा जन-जनके स्वास्थ्यका भी संरक्षण करें। अन्तमें ऐसी महिमामयी एवं सर्वदा सर्वथा उपयोगी गोमाताको प्रणाम कर विराम लिया जाता है—

त्वं माता सर्वदेवानां त्वं च यज्ञस्य कारणम्।
त्वं तीर्थं सर्वतीर्थानां नमस्तेऽस्तु सदानघे॥

'हे निष्पापे गौ! तुम सभी देवताओंकी माता हो, यज्ञकी आधारभूता हो और तुम्हीं सभी तीर्थोंकी तीर्थरूपा हो, अतः तुम्हें बार-बार नमस्कार है।'

(प्रे०—श्रीजगदीश प्रसादजी शर्मा)

गो-गौरव

[कविसम्राट् पं० श्रीअयोध्यासिंहजी उपाध्याय 'हरिऔध']

भारत-अवनी अन्न बहुत-सा है उपजाती।
इसीलिये है कनक-प्रसविनी मानी जाती।
इसी अन्नसे तीस कोटि मानव पलते हैं।
दीन तम-भरे सदन मध्य दीपक बलते हैं।
गोसुत-गात-विभूतिसे अन्नराशि उद्भूत है।
भारतीय गौरव सकल गो-गौरव-संभूत है॥

गोमाताके अनन्त दिव्य गुण

[श्रीपरमानन्दजी मित्तल, राष्ट्रिय महामन्त्री भारतीय गोवंश-रक्षण-संवर्धन-परिषद्]

बाल्यकालमें मैंने महर्षि च्यवन और महाराज नहुषकी कथा तथा उनके बीच हुआ संवाद पढ़ा था, जो इस प्रकार है—

महर्षि च्यवन अभिमान, क्रोध, हर्ष और शोकका त्याग करके महान् व्रतका दृढ़तापूर्वक पालन करते हुए एक बार बारह वर्षतक जलके अंदर रहे। जल-जन्तुओंसे उनका बड़ा प्रेम हो गया था और वे उनके आस-पास बड़े सुखसे रहते थे। एक बार कुछ मल्लाहोंने गङ्गाजी और यमुनाजीके जलमें जाल बिछाया। जब जाल खींचा गया, तब उसमेंसे जल-जन्तुओंसे घिरे हुए महर्षि च्यवन भी खिंच आये। जालमें महर्षिको देखकर मल्लाह डर गये और उनके चरणोंमें सिर रखकर प्रणाम करने लगे। जालके बाहर खींचनेसे तथा स्थलका स्पर्श होने और त्रास पहुँचनेसे बहुतसे मत्स्य कलपने और मरने लगे। इस प्रकार मत्स्योंका बुरा हाल देखकर महर्षिको बड़ी दया आयी और वे बारंबार लंबी साँस लेने लगे। मल्लाहोंके पूछनेपर महर्षिने कहा—'देखो ये मत्स्य जीवित रहेंगे तो मैं भी जीवित रहूँगा। अन्यथा इनके साथ ही मर जाऊँगा, मैं इन्हें त्याग नहीं सकता।' मुनिकी बात सुनकर मल्लाह डर गये और उन्होंने काँपते हुए जाकर सारा समाचार महाराज नहुषको सुनाया।

मुनिकी संकटमय स्थिति जानकर राजा नहुष अपने मन्त्री और पुरोहितको साथ लेकर तुरंत वहाँ गये। पवित्र भावसे हाथ जोड़कर उन्होंने मुनिको अपना परिचय दिया और उनकी विधिवत् पूजा करके कहा—'द्विजोत्तम! आज्ञा कीजिये, मैं आपका कौन-सा प्रिय कार्य करूँ?' महर्षि च्यवनने कहा—'राजन्! इन मल्लाहोंने आज बड़ा भारी परिश्रम किया है। अतः आप इनको मेरा और मछलियोंका मूल्य चुका दीजिये।' राजा नहुषने तुरंत ही मल्लाहोंको एक हजार स्वर्णमुद्रा देनेके लिये पुरोहितजीसे कहा। इसपर महर्षि च्यवन बोले कि 'एक हजार स्वर्णमुद्रा उचित मूल्य नहीं है। आप सोचकर इन्हें उचित मूल्य दें।'

इसपर राजाने एक हजार स्वर्णमुद्रासे बढ़ाकर एक लाख तथा एक लाखसे बढ़ाकर एक करोड़ स्वर्णमुद्राएँ, अपना आधा राज्य और अन्तमें समूचा राज्य देनेकी बात कह दी, परंतु च्यवन ऋषि राजी नहीं हुए। उन्होंने कहा "आपका आधा या समूचा राज्य मेरा उचित मूल्य है, ऐसा मैं नहीं समझता। आप ऋषियोंके साथ विचार कीजिये और फिर जो मेरे योग्य हो, वही मूल्य दीजिये।"

महर्षिका वचन सुनकर राजा नहुषको बड़ा खेद हुआ। वे अपने पुरोहित और मन्त्रीसे सलाह करने लगे। इतनेहीमें गायके पेटसे जन्मे हुए एक फलाहारी वनवासी मुनिने राजाके समीप आकर उनसे कहा कि 'महाराज! ये ऋषि जिस उपायसे संतुष्ट होंगे वह मुझे मालूम है।'

राजा नहुषने कहा—'ऋषिवर! आप महर्षि च्यवनका उचित मूल्य बताकर मेरे राज्य और कुलकी रक्षा कीजिये। मैं अगाध समुद्रमें डूबा जा रहा हूँ। आप नौका बनकर मुझे बचायें।'

नहुषकी बात सुनकर मुनिने उन लोगोंको प्रसन्न करते हुए कहा—'महाराज! ब्राह्मण सब वर्णोंमें उत्तम हैं। अतः इनका कोई मूल्य नहीं आँका जा सकता। ठीक इसी प्रकार गौओंका भी कोई मूल्य नहीं लगाया जा सकता। अतः इनकी कीमतमें आप एक गौ दे दीजिये।'

मुनिकी बात सुनकर राजाको बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने उत्तम व्रतका पालन करनेवाले महर्षि च्यवनके पास जाकर कहा—'महर्षे! मैंने एक गौ देकर आपको खरीद लिया है। अब आप उठनेकी कृपा कीजिये। मैंने आपका यही उचित मूल्य समझा है।'

च्यवन ऋषिने कहा—'राजेन्द्र! अब मैं उठता हूँ। आपने मुझे उचित मूल्य देकर खरीद लिया है। मैं इस संसारमें गायोंके समान दूसरा कोई धन नहीं समझता।'

वीरवर! गायोंके नाम और गुणोंका कीर्तन करना, सुनना, गायोंका दान देना और उनका दर्शन करना बहुत प्रशंसनीय समझा जाता है। ऐसा करनेसे पापोंका नाश और

परम कल्याणकी प्राप्ति होती है। गायें लक्ष्मीकी जड़ हैं, उनमें पापका लेशमात्र भी नहीं है। वे मनुष्योंको अन्न और देवताओंको उत्तम हविष्य देती हैं। स्वाहा और वषट्कार नित्य गायोंमें ही प्रतिष्ठित हैं। गायें ही यज्ञका संचालन करनेवाली और उसकी मुखरूपा हैं। गायें विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती हैं और दुहनेपर अमृत ही प्रदान करती हैं। वे अमृतकी आधार हैं। समस्त लोक उनको नमस्कार करता है। इस पृथ्वीपर गायें अपने तेज और शरीरमें अग्निके समान हैं। वे महान् तेजोमयी और समस्त प्राणियोंको सुख देनेवाली हैं। गौओंका समुदाय जहाँ बैठकर निर्भयतासे साँस लेता है वह स्थान चमक उठता है और वहाँका सारा पाप नष्ट हो जाता है। गायें स्वर्गकी सीढ़ी हैं और स्वर्गमें भी उनका पूजन होता है। वे समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली देवियाँ हैं, उनसे बढ़कर और कोई भी नहीं है। राजन्! यह जो गायोंका माहात्म्य कहा है यह तो केवल उनके गुणोंके अंशका दिग्दर्शनमात्र है। गौओंके सम्पूर्ण गुणोंका वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता।'

इस प्रकार एक गायका मूल्य एक करोड़ स्वर्णमुद्रा तथा समूचे राज्यसे भी अधिक है, यह जानकर मुझे तब बहुत आश्चर्य हुआ था। गायके सम्बन्धमें मेरी जिज्ञासा उत्तरोत्तर बढ़ती गयी और ज्यों-ज्यों मैंने गायको निकटसे देखना आरम्भ किया, मैंने गायमें अनेक दिव्य गुणोंके दर्शन किये, जिनसे मेरा समाधान हो गया कि गाय वस्तुतः अमूल्य है। उसकी तुलना किसीसे नहीं की जा सकती।

गौ जीवनके चरम लक्ष्यकी प्राप्ति करानेवाली है— हजारों वर्ष साधना एवं गवेषणा करके हमारे आर्ष मनीषियोंने यह अनुभव किया कि सभी प्राणियोंके जीवनका चरम लक्ष्य परम पिता परमात्माको पाना है। प्राणी जबसे परम पितासे अलग हुआ है और उनको भूला हुआ है, तभीसे दुःखी है। परम पिताको प्राप्त करानेमें गुरु, गाय, गङ्गा, गीता एवं गायत्री—ये पाँच परम सहायक हैं। प्राचीन कालमें ब्रह्मचारी जब गुरुकुलमें प्रवेश पाने आता था तो प्रवेशसे पहले गुरु उसको कुछ माह गोचारण करनेकी आज्ञा देते थे। गायोंके सांनिध्यमें रहकर ब्रह्मचारीकी चित्तवृत्ति शान्त हो जाती थी और उसे ब्रह्मविद्या ग्रहण करनेकी पात्रता प्राप्त हो जाती थी। जिनके अन्तःकरण किसी संतकी कृपासे निर्मल हुए हैं, वे जब सेवाभावसे गायके सम्पर्कमें आते हैं तो उनके अन्तःकरणमें परमात्माके स्मरणका स्फुरण स्वतः होने लगता है। यह सम्पूर्ण सृष्टि परमात्माकी रचना है। जिसने परमात्माको पा लिया उसने सब कुछ पा लिया।

गौके रोम-रोमसे सात्त्विक विकिरण— गाय स्वभावसे सात्त्विक, सौम्य एवं संतोष करनेवाली होती है। वह सात्त्विक बल, ओज एवं स्फूर्तिसे परिपूर्ण होती है। गाय स्वभावसे धीर एवं गम्भीर है। उसका गुण तथा स्वभाव सात्त्विक है। उसके रोम-रोमसे सात्त्विक विकिरण होता है। उसके प्रभाव-क्षेत्रमें आनेसे मनुष्यकी चित्तवृत्ति शान्त होती है। सात्त्विक मन और बुद्धिसे ही परमात्माकी प्राप्ति की जा सकती है।

गौ यज्ञीय दैवी-संस्कृतिका मूर्तरूप है— लोक-कल्याणके लिये किया गया प्रत्येक कार्य यज्ञरूप ही है। यज्ञाग्नि अर्पित सामग्रीकी सुगंधको सैकड़ों गुना बढ़ाकर सारे वातावरणमें फैला देती है, जिससे पर्यावरण प्रदूषण-मुक्त होता है तथा वर्षा पुष्टिकारक होती है। इस वर्षासे सिंचित खाद्यान्न एवं वनस्पति भी पौष्टिक एवं आरोग्यकारक होती है। कम ग्रहण करना तथा समाजको अधिक देना, इस आचरणको सिखानेवाली हमारी भारतीय सनातन संस्कृतिको दैवी संस्कृति कहा गया है। गाय घास, भूसा, छिलका, चूनी, चोकर तथा खली आदि ऐसी सामान्य वस्तुएँ ग्रहण करती है जो मनुष्यके ग्रहण करनेके योग्य नहीं है और कम मूल्यवान् होती है, किंतु बदलेमें अमृत-जैसा दूध, सहोदर-जैसे बैल, अत्यन्त उपयोगी और ओषधिरूप गोमय तथा गोमूत्र देती है।

गायका दूध सात्त्विक एवं आरोग्यकारी है— गायके गुण और स्वभावके अनुरूप उसका दूध भी शरीरको स्फूर्ति, तेज एवं सात्त्विक बलसे परिपूर्ण करनेवाला, बुद्धिको कुशाग्र एवं सात्त्विक बनानेवाला तथा हमारे जन-जीवनके आरोग्यका आधार है। परमात्मतत्त्वको प्राप्त करनेकी साधना सात्त्विक मन-बुद्धिसे ही हो सकती है। गायका

दूध, दही, मक्खन, घी तथा छाछ—ये सभी मन और बुद्धिको सात्त्विक बनानेवाले हैं। गायके दूधका कोई विकल्प नहीं है। यह एक दिव्य पदार्थ है।

गौ मनःकामनाओंको पूर्ण करनेवाली है—भगवान्‌ने गायको लोक-कल्याणके लिये ही बनाया है। वह सभीका हित चाहती है। भगवान् ऐसे प्राणीको परोपकारके लिये आशीष देनेका सामर्थ्य प्रदान करता है। गायमें भी वह सामर्थ्य है। कुछ वर्ष-पूर्व एक दिन एक सज्जन जो वेशभूषासे मुसलमान दीख रहे थे, 'श्रीगणपति-गंगा-गोशाला, बृजघाट' में एक ट्रक भूसा लेकर आये। उन्होंने अपनेको एक नवाब खानदानका मुसलमान बताया। उनसे पूछा गया कि 'वे भूसा किस उद्देश्यसे और किसकी प्रेरणासे गोशालामें लाये।' उनके कथनानुसार 'उनकी खानदानी जायदादका एक मुकदमा लंबे अरसेसे चल रहा था। जायदादके सम्बन्धमें मुस्लिम कानून बहुत पेचीदा है और उस मुकदमेका उनको अपनी जिंदगीमें फैसला होनेकी कोई उम्मीद नहीं थी। बहुत ही परेशान थे। उन्होंने अपने एक हिन्दू मित्रसे अपनी इस परेशानीके हल होनेका उपाय पूछा।' उनके मित्रने उन्हें सलाह दी कि 'वे गोसेवा करें, उसका आशीष लें तो उनका काम बन सकता है।' उन्होंने पूछा कि 'सेवा किस तरह करें' तो उनके मित्रने बताया कि 'गायोंके लिये भूसा या हरा चारा दें।' उन्होंने कहा कि 'यदि उनका मुकदमा उनके हकमें हो जाय तो वे गोशाला जाकर गायोंको एक ट्रक भूसा देंगे। उनका कहना था कि जिस दिनसे उन्होंने यह इरादा किया, मुकदमा उनके हकमें जाने लगा और उनके हकमें फैसला हो गया। इसलिये अपना इरादा पूरा करनेके वास्ते वे यह भूसा लेकर आये हैं।'

इस प्रकारकी अन्य भी अनेक घटनाएँ घटी हैं। इस घटनासे केवल यह ही पता नहीं चलता कि गोसेवाका इरादा करनेमात्रसे मनुष्यकी मनःकामना पूर्ण होती है, बल्कि यह भी पता चलता है कि गाय आशीष देनेमें अथवा मनःकामना पूर्ण करनेमें हिन्दू, मुस्लिम अथवा ईसाईमें कोई भेद नहीं करती। लौकिक कामनाओंकी पूर्ति तो साधारण बात है। सच्ची गोसेवासे तो ब्रह्मज्ञान तथा भगवत्प्राप्ति भी सहज हो जाती है।

गौ प्रेम और त्यागकी मूर्ति—गाय जिस परिवारमें रहती है, उस परिवारसे अत्यन्त प्रेम करती है। परिवारके प्रत्येक सुख-दुःखका अनुभव करती है। मेरे एक पड़ोसी रेलवेमें एक बड़े पदपर कार्यरत थे। काफी बड़ा आवास मिला हुआ था। गाय रखे हुए थे। बड़े प्रेम और श्रद्धाभावसे उसकी सेवा करते थे। उनका युवा पुत्र बीमार पड़ गया। उसके स्वास्थ्यमें कोई सुधार नहीं हो रहा था, अतः उसे अस्पतालमें भर्ती कराना पड़ा। जबसे वह लड़का बीमार पड़ा था, गाय सुस्त रहती थी। जिस दिन उसे अस्पताल ले जाया गया गायने ठीकसे चारा खाना छोड़ दिया। कई दिन बाद जब वह अस्पतालसे स्वस्थ होकर वापस घर आया तो गायने उसके कंधेपर अपना मुँह रखकर उसे प्यार किया और उसके पश्चात् ही फिर ठीकसे चारा खाना आरम्भ किया।

मनकी बात या तो भगवान् जानते हैं या गाय जानती है—एक संतने अपने प्रवचनमें शास्त्रोंसे उद्धरण देकर बताया कि मनकी बात दो ही जानते हैं, भगवान् और गाय। मुझे मेरे एक परिचित महानुभावकी एक आपबीती घटनाकी याद आ रही है। वे अपने माता-पिताके साथ एक गाँवमें रहते थे। वे तथा उनके भाई नौकरीके लिये बाहर चले गये। माता-पिता वृद्ध हो गये थे। गायका पालन उनके लिये कठिन हो गया था। एक दिन उन्होंने अपनी गायको नित्यकी भाँति चारा खिलाकर और पानी पिलाकर हाथ जोड़कर मन-ही-मन कहा—'अब हम वृद्ध हो गये हैं, तुम्हारी सेवा करने योग्य नहीं रहे, अतः अब तुम कहीं चली जाओ।' और गायको खोल दिया। गाय सायंकालतक घूम-घामकर घर तो आ गयी, किंतु बड़े संकोचके साथ। अगले दिन वृद्ध दम्पतिने पुनः वही किया। अबकी बार गाय घर वापस नहीं आयी।

गौको संकट अथवा अनिष्टका पूर्वाभास रहता है—सन् १९६६ की घटना है, उन दिनों हमारे घरमें दो गायें रहती थीं। अगस्त १९६६ ई० के आरम्भसे ही दोनोंकी आँखोंसे अश्रुधारा बहती थी। वे चारा बहुत ही कम ग्रहण करने लगी थीं। पानी भी कम ही पीती थीं। मुझे लगा

शायद वे बीमार हैं। पशु-चिकित्सकको दिखाया। देखकर वे बोले कि कोई बीमारी नहीं है। हमलोगोंको समझमें ही नहीं आ रहा था कि क्या बात है, किंतु गौ माता तो आगन्तुक घटनाकी विभीषिकासे शोकग्रस्त थी। मेरा भाई देश-सेवाके कार्यमें दुर्घटनाग्रस्त हो गया, जिसमें उसका देहावसान हो गया। गौ माताको इस घटनाका पहले ही आभास हो गया था, इसीलिये वे दु:खी रहती थीं और उनकी आँखोंसे आँसू झरते रहते थे। हम सभी इस घटनाके सम्बन्धमें पहले कुछ भी नहीं जान सके, किंतु गौ माताको भूत-भविष्यकी सभी बातोंकी जानकारी रहती है।

गाय रक्षा करनेवालेकी रक्षा करती है—प्रेम, दया, करुणा, सहनशीलता-जैसे दिव्य गुणोंकी अधिष्ठात्री गौ माता ठीक माँकी तरह है। वह स्वभावसे अति कोमल है। उसकी रक्षा करनेका दायित्व शासन एवं समाजका है। जो व्यक्ति उसकी रक्षा करता है, उसके उपकारको वह कभी भूलती नहीं। जब कभी रक्षा करनेवालेके प्राण संकटमें होते हैं, वह अपने सूक्ष्म और दिव्य शरीरसे उसके पास उपस्थित होकर उसकी रक्षा करती है। राजस्थानमें एक व्यक्ति कुआँ खोदनेका कार्य करता था। कुआँ खोदकर जलके स्रोतसे जल निकालकर देनेका काम वह ठेकेपर करता था। एक बार उसे कुआँ खोदनेका एक ठेला मिला। खुदाईका सामान लेकर वह कुआँ खोदने जा रहा था। मार्गमें उसने देखा कि एक गाय भूखी, प्यासी और बेहाल पड़ी हुई है। उसको दया आयी, वह वहाँ रुक गया और खुदाईका सामान गायके पास रखकर उसने पासके कुएँसे पानी लाकर उस गायको पिलाया। उसके बाद कुछ दूर जाकर वह गायके लिये चारा लाया और उसको खिलाया। गायकी दशामें सुधार हुआ और वह खड़ी हो गयी तथा वहाँसे चली गयी।

कुआँ खोदनेवाला नियत स्थानपर पहुँचकर कुआँ खोदने लगा। २ दिनके बाद जब वह कुआँ खोद रहा था और कुएँके लगभग मध्यमें उतरा हुआ था कि बहुत जोरका अंधड़ आया और कुएँके आस-पास रखी सारी मिट्टी कुएँमें गिर गयी। कुआँ ऊपरसे पट गया, किंतु उसके द्वारा की गयी गोमाताकी सेवाका ऐसा चमत्कार हुआ कि कुआँ मिट्टीसे पट जानेपर भी वह व्यक्ति जीवित बचा रहा। बादमें लोगोंद्वारा उसे निकाल लिया गया।

इसी प्रकारकी अन्य अनेक सत्य घटनाएँ सुनने और पढ़नेमें आती हैं, जिनसे गायके दिव्य गुणोंका पता चलता है। आधुनिक विज्ञानके लिये गायकी इस दिव्य शक्ति एवं गुणका रहस्य बना हुआ है।

गाय वैतरणी पार करनेवाली है—मेरी माताजी गत वर्ष बहुत बीमार हुईं। वे अत्यन्त कष्टमें थीं। रात्रिमें वे कह रही थीं, अब मेरे जानेका समय आ गया है। मेरे मुँहमें गङ्गाजल डाल दो, उस समय मुझे ध्यान आया कि उनसे गोदानका संकल्प करा लिया जाय; क्योंकि उनकी इच्छा थी कि वे गोदान करें। मैंने उनसे गोदानका संकल्प कराया और उनके हाथोंसे गौका दान करवाया। मैंने देखा उसके पश्चात् धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य सुधरने लगा और वे स्वस्थ हो गयीं। मृत्युके अनन्तर गोदानके प्रतिफलमें गाय किस प्रकार उस व्यक्तिको वैतरणी पार करा देती है यह लोकमें विश्रुत ही है। शास्त्रोंमें इसका विशेष माहात्म्य निरूपित है।

गायका गोबर मल नहीं मलशोधक है—जगत्के प्राणियोंमें गाय ही एक ऐसा प्राणी है, जिसका उच्छिष्ट मल नहीं, अपितु मलशोधक है। जिन खेतोंमें गायके गोबरकी खादका प्रयोग होता है, उनमें उगी फसलोंपर विनाशकारी कीटोंका आक्रमण नहीं होता। अत: वहाँ कीटनाशकोंके छिड़कावकी आवश्यकता नहीं। यज्ञकी वेदीको पवित्र करनेके लिये तथा आवास-गृहोंको सभी प्रकारके प्रदूषणोंसे मुक्त करनेके लिये हजारों वर्षोंसे हमारे देशमें गायके गोबरसे उन्हें लीपा जाता है। गायके गोबरका लेप केवल प्रदूषणसे ही नहीं, अपितु आणविक विकिरणसे भी रक्षा करता है। इसकी खाद श्रेष्ठतम उर्वरक है। प्रदूषणरहित ईंधनके रूपमें भी इसका प्रयोग किया जाता है। गोबर-गैस संयन्त्रके माध्यमसे प्रदूषणरहित खाना पकानेकी गैस प्राप्त होती है तथा उस गैससे जेनेरेटर सैट चलाकर विद्युत् भी उत्पन्न होती है। ईंधनके रूपमें जलनेके पश्चात् जो राख बचती है वह भी एक श्रेष्ठ मलशोधक है। मलकी दुर्गन्ध दूर करनेके लिये शौचालयों तथा कूड़ेके ढेरोंपर उसका

छिड़काव किया जाता है। बर्तनोंकी सफाईके लिये वह प्रदूषणरहित क्लीनिंग पाउडर है। किसान भाई राखका प्रयोग खेतोंमें खाद और कीटनाशकके रूपमें करते हैं।

गोमूत्र एक अद्भुत औषध है—आयुर्वेद अनेक रोगोंमें गोमूत्रको औषधके रूपमें प्रयोग करनेका विधान करता है। जिगर, पीलिया, रक्तचाप, मधुमेहमें यह विशेष उपयोगी है। कुछ लोग गोमूत्र-मिश्रित गोलियाँ बनाकर अनेक रोगोंमें उसका सेवन करते हैं।

गौ माताके अनन्त दिव्य गुणोंमेंसे कुछ गुणोंकी चर्चा ऊपर की गयी है। मैं यहाँ यह बताना उपयुक्त समझता हूँ कि उपर्युक्त गुणोंका दर्शन मैंने शुद्ध भारतीय प्रजातिकी गायोंमें किया है। विदेशी प्रजाति—जैसे आस्ट्रियन, जर्सी, फ्रिजियन अथवा इन नस्लोंके साथ वर्णसंकर हुई भारतीय प्रजातिकी गायोंमें ये गुण उस मात्रामें नहीं पाये जाते।

आर्थिक समृद्धिका प्राण गोधन

[गोलोकवासी श्रीविश्वम्भरप्रसादजी शर्मा]

'गावो विश्वस्य मातरः'—गायको विश्वकी माता कहकर सम्मानित किया गया है। गोवंश न केवल धार्मिक दृष्टिसे भारतमें पूजनीय है, अपितु आर्थिक दृष्टिसे भी वह हमारी आर्थिक समृद्धिका मुख्य स्रोत है। देशकी लगभग ८० प्रतिशत जनता कृषिजीवी है और कृषि पूर्णतया गोवंशपर अवलम्बित है। पाश्चात्त्य विचारधाराके कारण भ्रमित लोग यह समझते हैं कि भारतमें जो करीब १९ करोड़ गोवंश है वह निकम्मा और देशके ऊपर भाररूप है। इस तथ्यसे इनकार नहीं किया जा सकता कि इन पशुओंकी दूध देनेकी और भार ढोनेकी क्षमता विश्वमें सबसे कम है। शताब्दियोंके उपेक्षापूर्ण व्यवहारके कारण भारतीय गोवंश इस स्थितिको पहुँचा है। लेकिन वैज्ञानिक अनुसंधानोंमें पता चलता है कि भारतीय गोवंशमें उत्पादनकी क्षमता है और समुचित सेवा-शुश्रूषासे इसे बढ़ाया जा सकता है। वर्तमान हीन अवस्थामें भी गोवंशका हमारी आर्थिक समृद्धिमें उल्लेखनीय योगदान है। भारत सरकारने कुछ वर्षों-पूर्व अधिक क्षमताशील गोवंशके पशुओंकी रक्षाके लिये जो विशेष समिति गठित की थी, उसकी रिपोर्टमें इस प्रकारका उल्लेख है—

'प्राचीन कालसे गोवंश हमारे देशकी अर्थव्यवस्थामें विशेष योगदान देता आ रहा है। उनसे जमीन जोत कर तैयार करनेमें, कुओंसे पानी खींचनेमें, ग्रामीण क्षेत्रकी परिवहन-सम्बन्धी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेमें और अन्य प्रयोजनोंके लिये चालन-शक्ति (मोटिव पावर) मिलती रही है, उन्होंने मनुष्योंको पोषण—आहारके लिये दूध एवं दूधसे तैयार अन्य सामग्री तथा जमीनोंके लिये खाद प्रदान की है। अतः हमारे देशकी अर्थव्यवस्थामें गोवंशका सबसे अधिक महत्त्व रहा है।'

भारतके सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री और महात्मा गांधीजीके अनन्य भक्त श्रीसतीशचन्द्रदास गुप्तने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'भारतमें गाय' में अपने पुष्ट तर्कोंद्वारा बड़े-बड़े विद्वानोंके इस मतको निर्मूल कर दिया कि 'भारतका गोवंश पृथ्वीपर एक बोझ है तथा भूमि-उपजमें मनुष्योंके भोजनमें हिस्सा बँटाता है जो मनुष्योंके लिये हानिकारक है।'

उक्त पुस्तकमें पूर्व जर्मनीमें बाल्टिक समुद्रके निकट एक रेतीली बंजरभूमिको अनुपयोगी गोवंशके सहयोगसे ऐसा चमत्कार करके दिखाया गया कि वह भूमि भी पूर्ण उपजाऊ बन गयी तथा उसपर रहनेवाले बीमार अपंग पशु भी स्वस्थ और उत्पादक बन गये। उस जमीनमें पहले हरा चारा पैदा किया गया, जिसे खाकर पशु स्वस्थ हुए और कृषिका उत्पादन बढ़ा तथा पशुओंकी नसलका भी सुधार हुआ।

स्पष्ट है कि गोवंशकी रक्षा करने और उनकी हत्यापर प्रतिबन्ध लगानेका प्रश्न धार्मिक और सांस्कृतिक होनेकी अपेक्षा आर्थिक महत्त्व अधिक रखता है।

गोहत्या-बंदीके लिये जब कभी माँग की जाती है तब यह कहा जाता है कि देशमें अनुपयोगी गायोंकी बहुत बड़ी संख्या है और देश उनका भार उठानेमें असमर्थ है। गाँधीजीके सामने भी यह प्रश्न था। परंतु उन्होंने स्पष्ट-रूपमें इन पशुओंकी रक्षाका दायित्व सरकारका माना। जो गाय-बैल जीवनभर हमारी सेवा करते हैं और देशको अपने श्रम तथा तपश्चर्यासे समृद्ध बनाते हैं, उन्हें अनुपयोगी हो जानेपर कसाइयोंके हाथ बेच देना कितना बड़ा अन्याय है।

गोमूत्र और गोबरके वैज्ञानिक गुण भी उल्लेखनीय हैं। इनसे अनेक रोगोंका शमन होता है। Beast and men in India नामक पुस्तकमें लिखा है—बहुत-से देशोंके देहाती औषधालय गोबरका पुलटिसके रूपमें महत्त्व जानते हैं, किंतु भारतमें गौकी पवित्रताके कारण गोबरका प्रयोग शुद्धिके लिये भी बताया जाता है। इसके प्रयोगमें प्रतिष्ठा भी है एवं इसमें फोड़े आदिके ऊपर बाँधनेके पुलटिसके रूपमें आकर्षण है।

गौसे चिकित्सा

आर्य-चिकित्सा-विभागमें गोबरका महत्त्वपूर्ण योग है। गायका गोबर चर्मके ऐसे हिस्सेपर, जिसमें सूजन आ गयी हो या बदरंग हो गया हो लगाया जाता है। यह खिलाया भी जाता है। गोमूत्रके प्रयोगके लाभपर देश और विदेशमें काफी शोध हुआ है। मानवके अनेक रोगोंका गोमूत्रद्वारा शमन होता है। गोमूत्रमें जीवाणुओंका नाश करनेकी अद्भुत शक्ति है। अमेरिकाके डॉक्टरोंकी वैज्ञानिक शोधके अनुसार हृदयकी गति बंद होनेवाले रोगोंमें गोमूत्रका प्रयोग अत्यन्त लाभकारी है। लेकिन हमारे ऋषि-मुनि तो सब प्रकारके रोगोंका शमन करनेके लिये पञ्चगव्य (जिसमें दूध, दही, गोमूत्र, गोबर और घृत होता है) का उपयोग बताते हैं।

हमारे देशकी गरीबीको दूर करने और लाखों बेरोजगारोंको काम दिलानेकी दृष्टिसे भी गोपालनका भारी महत्त्व है। देशमें यदि गोवंशकी हत्या पूर्णतया बंद हो जाय तथा गोसंवर्धनका कार्यक्रम विधिवत् चलाया जाय तो निःसंदेह लाखों लोगोंको काम मिल सकेगा और गोपालनकी रुचि बढ़ेगी। दुग्ध-व्यवसायकी यह विशेषता है कि इससे छोटे किसानोंको जल्दी आय होने लगती है। गायका दूध हाथों-हाथ बिक जाता है। गोदुग्ध सर्वश्रेष्ठ पौष्टिक आहार है। गोदुग्धमें सबसे अधिक विटामिन होते हैं। गोदुग्धके उपयोगसे मनुष्यका शरीर और मस्तिष्क दोनों बलवान् बनते हैं। संसारके प्रायः सभी वैज्ञानिकोंने गोदुग्धको गुणकारी माना है और उसके उपयोगपर बल दिया है।

महर्षि स्वामी दयानन्दजीने गोवंशके आर्थिक महत्त्वको अपनी 'गोकरुणा-निधि' पुस्तकमें प्रदर्शित करते हुए लिखा है कि 'एक गोवंशके दुग्ध तथा अन्नसे असंख्य मनुष्योंका पालन हो सकता है और इसके मांससे अनुमान है कि केवल ८० मांसाहारी मनुष्य एक बारमें तृप्त हो सकते हैं।' उन्होंने दुःखके साथ लिखा—'देखो, तुच्छ लाभके लिये लाखों प्राणियोंको मार असंख्य मनुष्योंकी हानि करना महापाप क्यों नहीं?' गोहत्याको राष्ट्रिय अभिशाप मानते हुए उन्होंने लिखा कि 'गौ आदि पशुओंके नाशसे राजा और प्रजा दोनोंका विनाश हो जाता है।'

स्वतन्त्र भारतमें गोहत्या क्यों?

गोवंशके राष्ट्रिय और आर्थिक महत्त्वको देखते हुए मुसलमान बादशाहोंने अपने शासनकालमें सैकड़ों वर्षतक कानूनसे गोहत्या बंद रखी। खेद है कि स्वतन्त्र भारतमें अभीतक गोहत्या जारी है। यद्यपि संविधानमें गोहत्यापर प्रतिबन्ध लगाना राज्यका कर्तव्य निर्देशित किया गया है, परंतु इस निर्देशका देशमें सर्वत्र पालन नहीं हुआ।

कानूनद्वारा गोहत्या बंद हो जानेसे भी गोरक्षाका उद्देश्य पूर्ण नहीं होगा। जो गाय और बैल बूढ़े तथा अनुपयोगी हैं, उनके भरण-पोषणका उत्तरदायित्व जनताको भी उठाना होगा। उनके लिये जगह-जगह गोसदन स्थापित करने होंगे। गोशालाओंको इस दिशामें विशेष रूपसे सक्रिय बनाना होगा। गोरक्षणके साथ गोसंवर्धनपर भी योजनाबद्ध रूपसे अमल करना होगा ताकि देशमें दुग्धका उत्पादन बढ़े और खेतीके लिये उत्तम बैल तथा दुधार गौएँ उपलब्ध हो सकें। जनता और सरकार दोनोंके संयुक्त प्रयासके बिना राष्ट्रकी इस महान् समस्याको नहीं सुलझाया जा सकता है।

एक बड़े दुर्भाग्यकी बात यह है कि अनेक राज्योंमें

गोहत्या-बंदी कानून होनेपर भी उनका पालन नहीं हो रहा है। जिन राज्योंमें गोवध-बंदी कानून है, वहाँके पशु दूसरे राज्योंमें ले जाये जाकर क़त्ल कर दिये जाते हैं। अनुमान है कि देशमें प्रतिदिन ४० हजार गोवंश कट जाता है।

केरल और बंगाल सरकारोंकी ज़िद

भारतके प्राय: सभी प्रमुख राज्योंमें गोहत्या-बंदी कानून हैं। केरल और प० बंगाल अपनी ज़िदपर अड़े हैं। उन्होंने न तो भारत सरकारका आग्रह माना न विनोबाजीके आमरण अनशनकी परवाह की। प० बंगाल तो गोहत्याका सबसे बड़ा केन्द्र है। हरियाणाकी दुधार गौएँ, बछड़े और बछड़ियाँ लाखोंकी संख्यामें टेंगरा कसाईखानेमें कटते रहे हैं।

गोहत्या-बंदीके प्रश्नको शासक-दलने राजनीतिका रंग दे दिया है। अपने क्षुद्र राजनीतिक स्वार्थके लिये शासनारूढ दल भारतके व्यापक हितकी अवहेलना कर रहा है। देशके मतदाता भोले हैं, राजनीतिज्ञोंके कुचक्रमें फँस जाते हैं। जबतक जनता गोहत्याके समर्थकोंको मत देना बंद नहीं करेगी, तबतक गोहत्या बंद न होगी। अत: चुनावके समय गोभक्त जनताको संगठित होकर गोहत्याके समर्थकोंके खिलाफ मतदान करना चाहिये।

सरकारकी दुर्नीतिके कारण आज गायका हमारे जीवनमें कोई लगाव नहीं रह गया है। सरकारने गोचर-भूमियाँ तुड़वा दीं, पशु-खाद्यका निर्यात जारी कर दिया है, गोशालाओंके ऊपर तरह-तरहके टैक्स लगा दिये हैं। सरकारी डेयरियोंमें गायका दूध नहीं लिया जाता, भैंसका लिया जाता है। इस कारण देशमें गोपालन अनार्थिक बनता जा रहा है। सरकारने अब विदेशी साँड़ोंसे देशी गायोंका प्रजनन कराना शुरू कर दिया है। पहले ग्रामोंमें बलिष्ठ साँड़ (बिजार) रहते थे। उनसे गायें फलती थीं। आज गायोंको कृत्रिम रेतन-केन्द्रोंमें ले जाना पड़ता है। जहाँ प्राय: जर्सी आदि विदेशी साँड़ोंके वीर्यकी पिचकारी देकर गायोंको गाभिन किया जाता है। विदेशी नस्लकी गायें भले ही थोड़ा दूध अधिक दें, परंतु न तो वह दूध भारतकी गायोंके दूधके समान उपयोगी एवं पौष्टिक होता है और न उसके बछड़े खेतीके काम आते हैं। लेकिन सरकार देशमें दूधका उत्पादन बढ़ानेके लिये क्रास ब्रीडिंग (संकर प्रजनन) पर सारी शक्ति लगा रही है। इस कारण देशमें खेतीके लिये बैलकी कमी होती जा रही है। उनकी कीमत बढ़ गयी है और इन गायोंका सारा दूध शहरोंमें सरकारी डेयरियोंद्वारा ले जाया जाता है। अत: क्रास ब्रीडिंग हानिकारक है और इसके विरुद्ध जनमत जाग्रत् होना चाहिये। हमें अपनी देशी गायोंकी ही नस्लको सुधारना चाहिये। उनसे हमें उत्तम दूध भी मिलता है और उनके बछड़े भी बढ़िया बैल होते हैं।

गोग्रास-दानका अनन्त फल

योऽग्रं भक्तं किंचिदप्राश्य दद्याद् गोभ्यो नित्यं गोव्रती सत्यवादी।
शान्तोऽलुब्धो गोसहस्रस्य पुण्यं संवत्सरेणाप्नुयात् सत्यशील:॥
यदेकभक्तमश्नीयाद् दद्यादेकं गवां च यत् । दशवर्षाण्यनन्तानि गोव्रती गोऽनुकम्पक:॥

(महाभा०, अनुशा० ७३। ३०-३१)

जो गोसेवाका व्रत लेकर प्रतिदिन भोजनसे पहले गौओंको गोग्रास अर्पण करता है तथा शान्त एवं निर्लोभ होकर सदा सत्यका पालन करता रहता है, वह सत्यशील पुरुष प्रतिवर्ष एक सहस्र गोदान करनेके पुण्यका भागी होता है। जो गोसेवाका व्रत लेनेवाला पुरुष गौओंपर दया करता और प्रतिदिन एक समय भोजन करके एक समयका अपना भोजन गौओंको दे देता है, इस प्रकार दस वर्षोंतक गोसेवामें तत्पर रहनेवाले पुरुषको अनन्त सुख प्राप्त होते हैं।

गोबर एक जीवनोपयोगी वस्तु

[श्रीपुरुषोत्तमदासजी झुनझुनवाला, अध्यक्ष—भारतीय गोवंश-रक्षण-संवर्धन-परिषद्]

परमात्माने अपने ही अंश हम जीवधारियोंके लिये कई अमूल्य एवं जीवनोपयोगी वस्तुएँ दी हैं, जैसे—जल, वायु, मिट्टी, अग्नि तथा प्रकाश आदि। गायके माध्यमसे प्राप्त गोबर भी उन अमूल्य वस्तुओंमेंसे एक है।

गोबर मल नहीं है, मलशोधक है—सभी प्राणधारियोंके उच्छिष्टोंमेंसे गोबर ही एक ऐसा विशिष्ट पदार्थ है जो मल नहीं है, अपितु मलशोधक है। ऐश्वर्यकी देवी लक्ष्मीको पवित्रता पसंद है और गोबर शुचिताकारक है। गोबरके बिना भूमि पवित्र नहीं होती। भूमिको गोबरके लेपसे पवित्र करके ही देवी लक्ष्मीका आह्वान किया जाता है। गोबरसे पवित्र की गयी भूमिपर देवी लक्ष्मीका प्राकट्य होता है।

गोबर पञ्चगव्यका अंश है—शरीर, मन, बुद्धि और अन्त:करणकी शुद्धिके लिये आयुर्वेदमें पञ्चगव्यका बड़ा महत्त्व बतलाया गया है। पञ्चगव्य गायके दूध, दही, घृत, गोमूत्र तथा गोबरसे तैयार किया जाता है। शास्त्रोक्त विधिसे बनाये गये पञ्चगव्यके सेवन करनेसे शरीर, मन, बुद्धि और अन्त:करणके विकार समाप्त हो जाते हैं।

कूड़े-कचरेको शोधकर खाद बनानेकी गोबरमें क्षमता—गोबरमें ऐसी क्षमता है कि यदि कूड़े-कचरेके ढेरपर गोबरका घोल बनाकर डाला जाय तो वह कूड़ा-कचरा तीन-चार माहमें उपयोगी खाद बन जाता है। गोवर्धन केन्द्र पुसद (यवतमाल) में इसका सफल प्रयोग करनेसे ज्ञात हुआ कि एक किलोग्राम गोबरसे तीस किलोग्राम उपयोगी खाद तैयार हुई। इसका सफल प्रयोग अन्य स्थानोंपर भी किया गया है।

प्रदूषण एवं आणविक विकिरणसे बचावके लिये गोबर रक्षा-कवच है—हमारे देशमें हजारों वर्षोंसे यज्ञकी वेदी तथा आवास-गृहको गोबर एवं पीली मिट्टीसे लीपनेकी परम्परा रही है। गोबरके लीपनेसे सभी हानिकारक कीटाणु-विषाणु नष्ट हो जाते हैं। वायु-प्रदूषण एवं आणविक विकिरणसे रक्षा होती है। जापानमें नागासाकी तथा हिरोशिमामें अणुबमके विस्फोटके बाद जो आणविक विकिरण हुआ उसके कारण हजारों लोग अपंग हो गये तथा उनकी संतति भी अपंग होने लगी। आणविक विकिरणसे बचनेके लिये जापानमें गोबरके महत्त्वको समझा गया। यहाँतक कि वहाँपर अनेक लोग अपने ओढ़नेकी चादरको, गोबरके घोलको छानकर उसके पानीमें भिगोनेके पश्चात् सुखाकर ओढ़ते हैं।

सूखे तेलके कुओंमें पुनः तेल लाने तथा समुद्रमें जहाजसे रिसे तेलोंको जज्ब करनेकी क्षमता गोबरमें है—अमेरिकाके वैज्ञानिकोंने दुधार गायके गोबर, खमीर और समुद्रके पानीको मिलाकर एक ऐसा उत्प्रेरक पदार्थ बनाया है जो केवल बंजरभूमिको ही हरा-भरा नहीं कर देता, बल्कि सूखे तेलके कुओंमें उसे डालनेसे पुनः तेल आना आरम्भ हो जाता है। समुद्रमें जहाजोंसे रिसे तेलको वह अपनेमें जज्ब कर लेता है, जिससे समुद्रका जल प्रदूषणरहित हो जाता है।

गोबरकी राखसे मलकी दुर्गन्ध समाप्त—गोबरकी राखका कोई विकल्प नहीं—गोबरके कंडों (उपलों) को ईंधनके रूपमें जलानेके पश्चात् जो राख शेष रह जाती है वह भी अपनेमें एक उत्कृष्ट मलशोधक है। गाँवोंमें जहाँ फ्लशके शौचालय नहीं हैं, करोड़ों लोग अपने परम्परागत शौचालयोंमें मलकी दुर्गन्ध समाप्त करनेके लिये मलपर इस राखका छिड़काव करते हैं। छिड़काव होते ही मलकी दुर्गन्ध समाप्त हो जाती है और कालान्तरमें यह मल भी खादके रूपमें परिवर्तित हो जाता है।

गोबरकी राखसे बर्तनोंकी सफाई—करोड़ों रुपयेकी बचत—भारतके गाँवों, कस्बों तथा शहरोंमें रहनेवाले करोड़ों लोग भी अपने बर्तनोंकी सफाई गोबरकी राखसे करते हैं। यदि यह सफाई किसी क्लीनिंग-पाउडरसे की जाय तो लाखों टन पाउडर लगेगा, जिसका मूल्य करोड़ों रुपये होगा। क्लीनिंग-पाउडरसे की गयी सफाईमें सफाई

करनेवालेके हाथोंमें चर्मरोग होनेका अंदेशा रहता है। इसके अलावा थोड़ी मात्रामें जो पाउडर बर्तनोंमें लगा रह जाता है, वह मनुष्यके शरीरमें जाकर नुकसान पहुँचाता है, साथ ही इससे पवित्रता नहीं आती। गोबरकी राख बिना मूल्यके लोगोंको मिल जाती है और किसी प्रकारसे हानिकारक भी नहीं है। यह अत्यन्त पवित्र मानी जाती है।

गोबरकी राख खाद तथा कीटनाशकके रूपमें— गोबरकी राखका उपयोग हमारे किसान भाई अपने खेतोंमें खाद और कीटनाशकके रूपमें भी अनेक वर्षोंसे करते आये हैं। खेतमें राख पड़नेसे दीमक आदि कीड़े नहीं पनपते तथा फसल अच्छी होती है।

गोबर एक सस्ता एवं श्रेष्ठ उर्वरक— सन् १९०४ में भारतकी उन्नत कृषि-पद्धतिका अध्ययन करने ब्रिटेनसे भारत आये कृषि-वैज्ञानिक सर एलबर्ट होवर्डने अपने शोध-ग्रन्थ 'एन एग्रीकल्चरल टेस्टामेन्ट' में लिखा है कि पूसा (बिहार) के आस-पासके गाँवोंमें उपजनेवाली फसलें सभी प्रकारके कीटोंसे गजबकी मुक्त थीं। किसानोंकी अपनी परम्परागत कृषि-पद्धतिमें कीटनाशक-जैसी चीजोंके लिये कोई स्थान था ही नहीं। भारतीय कृषि-पद्धतिका ज्ञान और उसमें मेरी दक्षता ज्यों-ज्यों बढ़ती गयी, मेरी फसलोंमें भी त्यों-त्यों रोग कम होते चले गये। मुझे दो प्रोफेसर मिले थे। एक थे वे अनपढ़ किसान और दूसरे थे स्वयं पौधोंके महामारी रोग। इन नये प्रोफेसरोंसे पाँच सालतक ट्यूशन पढ़नेके बाद मैंने जान लिया कि उन सभी पौधोंपर जिनकी जड़ोंके लिये वहाँकी मिट्टी अनुकूल है, कीड़े आदिका आक्रमण नगण्य होता है। नुकसान पहुँचानेवाले कीट, बैक्टीरिया तथा महामारी रोग उन्हीं पौधोंपर जाकर लगते हैं जिनकी मिट्टी रुग्ण है। स्वस्थ भूमिमें उगनेवाले पौधोंपर ये फटकते भी नहीं। जाहिर है कि पौधोंकी रुग्णता भूमिकी रुग्णताका ही परिणाम है। भूमिकी रुग्णता क्या चीज है? यह उसकी उर्वराशक्तिका ह्रास है जो उसे उसके वाजिब हिस्सेसे वञ्चित रखनेके कारण हुआ है। भूमिका वह वाजिब हिस्सा क्या है? गोबर, वनस्पति तथा प्राणियोंके अवशेष जो गोबरकी खादमें होते हैं, वही उसका वाजिब हिस्सा है। यह उसे मिलना चाहिये, तभी भूमि स्वस्थ रह सकती है। जिससे पौधे स्वस्थ होंगे तथा प्राणी भी स्वस्थ रहेंगे।

अगस्त-सितम्बर सन् १९९३ में भारत सरकारकी ओरसे देशमें जैविक खादसे खेतीका जायजा लेनेके लिये ६ व्यक्तियोंकी एक समितिका गठन किया गया। समितिके लोग कानपुर, नागपुर, वर्धा, भोपाल, इन्दौर, बंबई, पाँडिचेरी, मद्रास आदि स्थानोंमें गये और उन्होंने जाँच करनेके बाद पाया कि इन सभी स्थानोंपर जो किसान रासायनिक उर्वरकोंके बजाय जैविक खादका प्रयोग कर रहे हैं, खेतीमें उनकी लागत कम, फसल नीरोग और अच्छी है। कीड़ोंका प्रकोप नहींके बराबर है। कहीं इधर-उधरसे थोड़े-बहुत कीड़े आ भी गये तो नीम या गोमूत्रका घोल बनाकर फसलोंपर छिड़काव करके उससे छुटकारा पा लिया गया।

गोबरकी खादका प्रयोग कीजिये—अन्न, जल तथा वायुको विषैला होनेसे बचाइये— गोबर तथा गोमूत्रसे भूमिकी उर्वरा-शक्ति बढ़ती है। फसल सशक्त होती है, उसे कीटनाशकोंकी आवश्यकता नहीं पड़ती। विदेशोंके प्रभाव, निहित स्वार्थोंके दबाव तथा गोबर और गोमूत्रके अभावके कारण हमारे देशमें कृषिमें रासायनिक खाद तथा कीटनाशकोंका प्रयोग किया जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप खाद्यान्न, फल और सब्जियोंकी पौष्टिकतामें कमी आयी है तथा वह विषैली हो गयी है। उनकी उत्पादन-लागतमें भी अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। विश्व-स्वास्थ्य-संगठनकी रिपोर्टके अनुसार भारतीय माताओंके स्तनोंके दूधमें अन्ताराष्ट्रिय मानकसे २१ गुना विष पाया गया है। कीटनाशकोंका विष भूमिमें व्याप्त होकर अपना प्रभाव आनेवाले कई वर्षोंतक रखता है। यह विष पानीके साथ मिलकर पृथ्वीके तलके नीचे जलके स्रोतोंतक पहुँच जाता है। फलस्वरूप हमको पेयजल भी जहरीला मिल रहा है। जल-संसाधन-मन्त्रालयने १९८६ ई० के अपने परीक्षणमें बताया कि लगभग सभी प्रान्तोंमें पानीमें नाइट्रेट नाइट्राइटकी मात्रा इतनी बढ़ गयी है कि पानी पशुओंके पीने योग्य भी नहीं रहा है। जलप्रदूषणकी यह चेतावनी इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनियाने भी दी है। रासायनिक खाद तथा कीटनाशकोंके प्रयोगसे

भूमिकी उर्वराशक्तिका लगातार ह्रास हो रहा है। परिणाममें प्रतिवर्ष इन दोनों वस्तुओंकी प्रति एकड़ मात्रा बढ़ानी पड़ती है, जबकि उत्पादन उस अनुपातमें नहीं बढ़ता है। तुलनात्मक आँकड़े इस प्रकार हैं—

वर्ष	एक हैक्टेयरमें रासायनिक खादकी प्रयोग-मात्रा	उत्पादन-वृद्धिका प्रतिशत
१९६०-६१	१.९ किलोग्राम	६१.३७
१९८७-८८	५१.२० किलोग्राम	८.३०

भारतीय कृषि-अनुसंधान-परिषद्द्वारा किये गये परीक्षणोंसे ज्ञात है कि रासायनिक खादके प्रयोग करनेसे भूमिकी उर्वराशक्ति २०-२५ वर्षोंमें समाप्तप्राय हो जाती है। रासायनिक खाद तथा कीटनाशकोंके प्रयोगसे मिट्टीके सूक्ष्म जीवाणु दिनोंदिन कम होते जाते हैं। मिट्टीकी नमी—आर्द्रता-क्षमता घटती जाती है। मिट्टीका स्वभाव बदल जाता है। एक मद्यसेवीकी भाँति उसे दिनोंदिन अधिक पानी और अधिक खुराक चाहिये। पंजाब कृषि-विश्वविद्यालयके एक अध्ययन-दलने पाया है कि रासायनिक खादके इस्तेमालके परिणामस्वरूप पंजाबमें पानीका अकाल पड़नेकी सम्भावना गहरी होती जा रही है। भारत-सरकारके कृषि-अनुसंधान-परिषद्के सेवा-निवृत्त महानिदेशकने चेतावनी दी है कि यदि रासायनिक खादपर आधारित कृषि-पद्धति ही चलती रही तो कुछ वर्षोंमें ही पंजाबका क्षेत्र मरुस्थल हो जायगा।

वर्ष १९५१-५२ से १९९१-९२ तक हमारा देश विदेशोंसे १८,१०९ करोड़ रुपयेकी रासायनिक खादका आयात कर चुका है। वर्ष १९९४-९५ में यह आयात लगभग ३,४०० करोड़ रुपयेका होगा। १९९२-९३ में रासायनिक खादपर ६,५७७ करोड़ रुपयेकी सब्सिडी दी गयी थी।

रासायनिक खाद तथा कीटनाशकोंके उत्पादन एवं प्रयोग-प्रक्रिया—इन दोनोंमें वायु एवं जलका भारी प्रदूषण होता है। यदि हमें अन्न, जल एवं वायुके प्रदूषणसे बचना है तो रासायनिक खाद एवं कीटनाशकोंका प्रयोग धीर-धीरे कम करके गोबरकी जैविक खादका प्रयोग बढ़ाना होगा।

पैंतीस ग्राम गोबरसे एक एकड़ भूमि उपजाऊ बनी— कुछ समय पूर्व न्यूजीलैंडके कृषि तथा पशु-वैज्ञानिक पीटर प्रोक्टर भारत आये और उन्होंने एक आश्चर्यजनक प्रयोग किया। उन्होंने दुधार गायके गोबरको मृत गायके सींगमें भरकर सर्दीसे पूर्व जमीनमें गाड़ दिया। पाँच-छः माह बाद निकालकर उसे हवा-बंद डिब्बेमें रख दिया। उसमेंसे ३५ ग्राम गोबरको निकालकर १० लीटर पानीमें मथनीसे खूब मिलाया और उसका छिड़काव एक एकड़ भूमिपर कराया, जिससे वह भूमि उपजाऊ और हरी-भरी हो गयी। आप भी यह प्रयोग करके देखिये।

गोबरसे बिजली, ईंधन तथा प्रकाश

गोबर-गैस संयन्त्रसे वायो-गैस, बिजली और खाद—अरबों रुपयेका उत्पादन— जहाँपर गोबरकी जिस मात्रामें उपलब्धता हो, उसीके अनुसार छोटे अथवा बड़े 'गोबर-गैस संयन्त्र' लगाये जा सकते हैं। गोबर-गैस संयन्त्रसे ईंधनके रूपमें प्रयोग करने योग्य गोबर-गैस प्राप्त होती है। विशेष रूपसे गोबर-गैसके प्रयोगके लिये बनाये गये चूल्हेके माध्यमसे ईंधनके रूपमें गोबर-गैसका प्रयोग होता है। प्रकाशके लिये गोबर-गैसके हंडे पेट्रोलियम गैसके हंडोंकी तरह बिजलीके बल्ब-जैसा ही प्रकाश देते हैं। बड़े गोबर-गैस-संयन्त्रके साथ विशेष रूपसे गोबर-गैसको प्रयोगमें लानेवाले बिजली जनरेटर सेट भी लगाये जा सकते हैं जो गोबर-गैससे ही चलते हैं। उसमें मात्र २०% डीजलका उपयोग होता है। यह साधारण जनरेटर सेट जिसमें केवल डीजलका ही प्रयोग होता है बहुत ही कम प्रदूषणकारी है। जबकि गोबरसे चलनेवाले जनरेटर सेटमें प्रदूषण नहींके बराबर है। जनरेटर सेटसे उत्पन्न हुई बिजलीसे बिजलीद्वारा चलाये जानेवाले मोटर तथा पंखे आदि चलाये जा सकते हैं। गोबर-गैस-संयन्त्रसे बनी खाद गुणवत्ताकी दृष्टिसे भी श्रेष्ठतर होती है।

गोबरके कंडे-ईंधनके रूपमें अरबों रुपयेका बचत, प्रदूषणसे मुक्ति— ग्रामों और छोटे कस्बोंमें निवास करनेवाले भाई और बहनें दूध उबालने तथा खाना बनानेके लिये आज भी कंडोंका उपयोग करते हैं। जो गोबर सूख जाता है वह

जलानेके काम आता है। कंडोंकी आग मंदी एवं प्रदूषणरहित होती है। उससे निकलनेवाला धुआँ हानिकारक नहीं होता, जब कि कोयलेका धुआँ प्रदूषणकारी होता है। जर्मनीके कृषि-पशु-वैज्ञानिक भारतमें आये और तीन माहतक गाँवोंमें रहे। इसके पश्चात् उन्होंने एक पुस्तक लिखी—'भारतमें गाय क्यों पूजनीय है?' इस पुस्तकमें गायके महत्त्वको बताते हुए उन्होंने गोबरके महत्त्वका भी एक पक्ष उजागर किया है। उन्होंने लिखा है कि 'गोबरके बदले कोयला अथवा लकड़ी जलाना पड़े तो हमें क्रमशः साढ़े तीन करोड़ टन कोयला अथवा छः करोड़ अस्सी लाख टन लकड़ीकी आवश्यकता होगी, जो कई अरब रुपये मूल्यका होगा। पर्यावरणकी चिन्ता करनेवाले लोगोंको यह भी विचार करना चाहिये कि साढ़े तीन करोड़ टन कोयला फूँकनेसे पर्यावरणपर उसका कैसा प्रभाव पड़ेगा और ६ करोड़ ८० लाख टन लकड़ीके लिये पेड़ोंको काटे जानेसे हमारे पर्यावरणकी रक्षा किस प्रकार हो सकती है?

गोबरसे त्वचा-रक्षक साबुन, शुद्ध धूपबत्ती तथा शीत-ताप-अवरोधक प्लास्टरका उत्पादन—श्रीनारायणराव देवराव पंढरी पाण्डे उपनाम नॅडेप काकाने गोबरसे न केवल कम्पोस्ट खाद बनानेकी नवीन पद्धतिका आविष्कार किया है, बल्कि गोबरसे एक ऐसा अंगराग भी तैयार किया जो साबुनकी टिकियाके रूपमें है और त्वचाके रोगोंमें ओषधिका काम करता है। उन्होंने गोबरसे धूपबत्ती तैयार की है। इसे जलानेसे वातावरण शुद्ध हो जाता है। गोबरसे ही एक प्लास्टर भी तैयार किया है, जिसे छत तथा दीवारोंपर लगानेसे शीत और तापका प्रभाव कम हो जाता है।

श्रीवेणीशंकर एन० वसुने अपनी पुस्तक 'डंग इज गोल्ड माईन' में लिखा है कि गोबरसे हमें सस्ता और श्रेष्ठ जैविक खाद तथा जैविक खादसे पौष्टिक एवं स्वादिष्ट खाद्यान्न, सब्जियाँ और फल कम लागतपर मिलते हैं। हमारी भूमिकी उर्वराशक्ति बराबर बनी रहती है। सस्ता ईंधन मिलता है। मुफ्तमें उपयोगी राख मिलती है। यदि हम गोबरकी उपयोगिताको समझ लें तो हमारे देशसे बीमारी, गरीबी तथा बेरोजगारी स्वयं समाप्त हो जायगी। आयुर्वेदमें तो अनेक मूल्यवान् भस्मों तथा औषधोंका निर्माण केवल गोबरके कंडोंकी मंदी एवं प्रदूषण-रहित आगसे ही किया जाता है। प्रसूतिका स्त्रियोंके शरीरकी सेकाई भी मंद-मंद प्रदूषण-रहित गोबरके कंडोंकी आगसे ही की जाती है। किंतु दुर्भाग्य है कि आज गायके दूध तथा घीकी तरह गायका गोबर भी दुर्लभ होता जा रहा है। हमारा देश रासायनिक खाद और कीटनाशकोंके फेरमें जबसे पड़ा है, गरीब और कर्जदार होता जा रहा है। भाग्यकी कैसी विडम्बना है और बुद्धिका कैसा दिवालियापन है कि मांस-निर्यातके लिये दूध, ऊर्जा तथा गोबरके स्रोत गोवंशकी हत्या करवायी जा रही है और निर्यातसे अर्जित विदेशी मुद्रासे रासायनिक खाद एवं कीटनाशकोंका आयात किया जा रहा है। हम गोबरमें वास करनेवाली लक्ष्मीको पहचानें और प्रकट करें। इससे सभी कामनाओंको पूर्ण करनेवाली गोमाताकी प्रतिष्ठा फिरसे स्थापित होगी तथा गोवंशकी रक्षा हो सकेगी। उसकी दुआओंसे तथा गोवंश-आधारित कृषि-पद्धतिसे हम और हमारा देश फिरसे समृद्ध बनेगा। हम आरोग्यवान् होंगे और बलवान् होंगे।

गावो मे मातरः सर्वाः पितरश्चैव गोवृषाः। ग्रासमुष्टिं मया दत्तं प्रतिगृह्णीत मातरः॥
इत्युक्त्वानेन मन्त्रेण गायत्र्या वा समाहितः। अभिमन्त्र्य ग्रासमुष्टिं तस्य पुण्यफलं शृणु॥
यत् कृतं दुष्कृतं तेन ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपि वा। तस्य नश्यति तत् सर्वं दुःस्वप्नं च विनश्यति॥

[गोमाताके सामने घास रखकर इस प्रकार कहना चाहिये—] 'संसारकी समस्त गौएँ मेरी माताएँ और सम्पूर्ण वृषभ मेरे पिता हैं। गोमाताओ! मैंने तुम्हारी सेवामें यह घासकी मुट्ठी अर्पण की है, इसे स्वीकार करो।' यह मन्त्र पढ़कर अथवा गायत्रीका उच्चारण करके एकाग्रचित्तसे घासको अभिमन्त्रित करके गौको खिला दे। ऐसा करनेसे जिसे पुण्यफलकी प्राप्ति होती है, उसे सुनो! उस पुरुषने जान-बूझकर या अनजानमें जो-जो पाप किये होते हैं, वह सब नष्ट हो जाते हैं तथा उसको कभी बुरे स्वप्न नहीं दिखायी देते। (महाभा०, आश्वमेधिकपर्व, वैष्णवधर्म०)

राष्ट्र-विकासमें गोवंशका महत्त्वपूर्ण योगदान

[श्रीशरदकुमारजी साधक]

भारतकी गाय केवल दुधार पशु नहीं है अपितु यह लौकिक एवं पारलौकिक सारी कामनाएँ पूरी करनेवाली कामधेनु है। इससे लाखों परिवारोंका पालन-पोषण होता है। 'डेयरी इंडिया १९८७' की रिपोर्टके अनुसार देशके ४९ हजार 'ग्रामीण दुग्ध-उत्पादन-सहकारी-संगठनों' के लगभग पचास लाखसे ज्यादा ग्वाला-परिवार प्रतिदिन ८० लाख टन दूध बेचकर अपनी आजीविका चलाते हैं। सन् १९८७ में दुग्ध-उत्पान चार करोड़ टनके आस-पास रहा, जो बढ़कर लगभग पाँच करोड़ ४९ लाख टन हो गया है। दुग्ध-उत्पादनमें ग्वाला-परिवारके अलावा सरकारी और निजी डेयरियाँ तथा गोभक्तोंकी बड़ी जमात सक्रिय है। भारतीय अर्थव्यवस्थामें पशुधनका १५ हजार करोड़ रुपयेका योगदान माना जाता है। उसमें ७० प्रतिशत दूध तथा उसके उत्पादोंका हिस्सा है। पशुधनकी अपेक्षित साज-सँभाल हो तो गोरस-उत्पादोंमें भारी वृद्धिकी सम्भावना है। समुचित साज-सँभाल तथा संतुलित दाना-पानी देनेकी व्यवस्था कर वाराणसी-स्थित 'रामेश्वर गोशाला' तथा इस प्रकारके अन्य संस्थानोंने सिद्ध कर दिखाया है कि १ लीटर ८०० ग्राम दूध देनेवाली गायें ४ लीटरतक दूध देने लगीं। उनकी बछिया ७ लीटर तथा उसकी भी बछिया ११ लीटर दूध देनेवाली हुई। जहाँ औसत भारतीयके लिये १०० ग्राम दूध दुर्लभ है, वहाँ ५०० ग्रामतक दूध सहज सुलभ हो सकता है तथा दुग्ध-उत्पादोंमें लगकर लाखों परिवार अपनी रोजी-रोटी चला सकते हैं।

माना जाता है कि देशमें ४ करोड़ ६ लाख ७० हजार हल तथा १ करोड़ ३० लाख बैलगाड़ियाँ हैं और उनसे जुड़े तीन करोड़ लोगोंका जीवनयापन होता है। यदि हलोंकी जगह ट्रैक्टर ले लें तो उसके लिये २ लाख ८ हजार करोड़ रुपयोंकी पूँजी अपेक्षित होगी, जो कर्जमें आकण्ठ डूबे हमारे देशके लिये जुटा पाना मुश्किल है। इस समय ट्रैक्टरोंसे जितनी जुताई होती है, उतनी तो भैंसे कर देते हैं। बैल उनसे ८ गुनी अधिक जुताई कर रहे हैं। खेतीमें लगभग ५ करोड़ रुपयेकी पशु-शक्ति लगती है। इसी तरह ट्रक और मालगाड़ियाँ जितना माल ढोती हैं, उससे अधिक ही बैलगाड़ियोंसे ढुलाई होती है। वे ऊबड़-खाबड़ रास्तोंपर जाती हैं और घरके दरवाजेतक माल पहुँचाती हैं। ढुलाईमें पशु-शक्तिका उपयोग होनेसे २५ अरब रुपयेकी डीजलकी बचत होती है।

दुनियाकी २.५ प्रतिशत जमीन भारतके पास है, किंतु पशु १६ प्रतिशत हैं। उनकी शक्तिका पूरा-पूरा उपयोग हो तो बेरोजगारी दूर करनेमें भारी मदद मिल सकती है। दुनियाकी १२ प्रतिशत कृषिभूमि भारतमें है और उसमें भी १८ प्रतिशत भूमि कृषि-योग्य है। जो किसान केवल खेतिहर हैं और उर्वरकोंका इस्तेमाल कर मालामाल होनेकी कोशिशमें हैं, उनपर ***'चार दिनोंकी चाँदनी फिर वही अँधेरी रात'***की कहावत चरितार्थ होती है। जिन किसानोंके पास गोवंश है और उनके गोबर-गोमूत्रका उपयोग खादमें हो रहा है, उनकी आमदनी तथाकथित उन्नत कृषि करनेवाले किसानोंसे डेढ़ गुनी होती है। प्रसिद्ध भू-रसायन-विशेषज्ञ डॉ० एच०एच० कोड़ने कहा भी है कि आधुनिक कृषिसे रोग तथा कीटाणु बढ़ते हैं, क्योंकि उर्वरकोंका इस्तेमाल बढ़ा है, वहीं परम्परागत कृषिसे जमीनकी उर्वराशक्ति कायम रहती है। उपज स्वादिष्ट होती है और पशु तथा मानवकी क्षमताका पूरा उपयोग होता है। किंतु आज वैसा नहीं होनेके कारण भारतकी करोड़ों-करोड़की आबादीमें अधिकांश लोग गरीब हैं और उनमें भी आधे लोग दरिद्र-रेखासे नीचे हैं। बड़े उद्योगोंके भरोसे गरीब परिवारोंका जीवन-स्तर ऊँचा उठेगा, यह कहना कठिन ही नहीं असम्भव-सा ही लगता है। किंतु गोपालनकी मिक्स फार्मिंगसे तत्काल उन्हें लाभ पहुँचानेकी गारंटी दी जा सकती है। योजना-आयोगको इस बारेमें गम्भीरतासे सोचना चाहिये।

'केन्द्रीय यान्त्रिकी अनुसंधान, भोपाल'ने बैलोंकी उत्पादकता बढ़ाने तथा किसानोंका श्रम कम करने-हेतु एक पशु-चालित ट्रैक्टर बनाया है। वह हलके मुकाबले ३-४

गुना अधिक कार्य करता है। इसी तरह पंक्चररहित बैलगाड़ियाँ निर्मित हुई हैं, जिससे बैलोंपर भार कम पड़ता है और परिवहनकी क्षमता बढ़ी है। 'नेशनल इंस्टीट्यूट फार ट्रेनिंग इन इंडस्ट्रीयल इंजीनियरिंग (नाईटी) बंबई' ने ऐसा उपकरण बनाया है, जिससे रहँटके साथ बैलके घूमनेपर विद्युत्-धारा उत्पादित होती है। उस उपकरणके सहारे दो बैल एक हार्सपावर अर्थात् ७८६ वाट बिजली पैदा कर सकते हैं। भारतके नेताओंने स्वयं नैरोबीके ऊर्जा-सम्मेलनमें स्वीकार किया था कि 'भारतमें हमारे सभी बिजलीघरों, जिनकी अधिष्ठापित क्षमता २२ हजार मेगावॉट है, से अधिक शक्ति पशु प्रदान करते हैं। यदि उनको हटा दिया जाय तो बिजली-उत्पादनपर और २,५४० अरब डालरकी पूँजी-निवेश करनेके अतिरिक्त कृषि-अर्थ-व्यवस्थाको खाद और सस्ते ईंधनकी हानि होगी।' गोबर-गैस, नॅडेप खाद, चारा काटनेकी बैल-चालित मशीनसे मिलनेवाले लाभोंको कौन नहीं जानता? विभिन्न रूपोंमें पशुओंसे ४० हजार मेगावॉटके बराबर निष्पन्न ऊर्जासे देशको २७ हजार करोड़ रुपयेका लाभ है। आधे टन वजनकी गाय दिन-रातमें १२०० वॉट गर्मी देती है। जर्मनीके विद्युत्-अभियन्ता-संघने २० गायोंसे एक बड़ा मकान गर्म रखनेका प्रयोग किया और उससे वर्षमें ३ हजार लीटरसे अधिक तेलकी बचत की।

विदेशोंमें जहाँ इस तरह ऊर्जा-स्रोतके रूपमें गायोंको बढ़ावा मिल रहा है, वहाँ गोभक्त कहलानेवाले भारतदेशमें गोहत्या बढ़ रही है, यह कितने दुःखकी बात है। 'भारतीय चमड़ा-अनुसंधान-संस्थान' के अनुसार एक करोड़ आठ लाख गोवंशका वध १९८७में हुआ। १९९३ तक उसमें और वृद्धि ही हुई होगी, क्योंकि ८वीं पञ्चवर्षीय योजनाकी पुस्तकके अनुसार देशमें ३,६०० क़तलखाने हैं। नये आधुनिकतम क़तलखानोंको भी लाइसेंस दिये जा रहे हैं। सरकार इस योजनावधिमें ५०० करोड़ रुपयेका मांस निर्यात करना चाहती है, यह कितनी बड़ी त्रासदी है। इसे देखकर रघुवंशकी वह उक्ति याद आती है, जिसमें गायकी रक्षाके लिये अपने-आपको समर्पित करनेवाले राजा दिलीपसे सिंहने कहा—

'अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्
विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्॥'

अर्थात् 'हे राजन्! तुम मुझे बड़े ही मूर्ख मालूम पड़ते हो, क्योंकि बहुत थोड़ी-सी नगण्य चीजके लिये तुम बहुत बड़ी चीजको छोड़ दे रहे हो। छोटी-सी चीजके लिये बहुत लुटा देनेवाले तुम विचारमूढ नहीं तो और क्या हो!' वास्तवमें यह विचारमूढता ही है, जो बृहद् बंबई नगरपालिकाद्वारा संचालित देवनार-क़तलखानेमें प्रतिवर्ष १८० करोड़ रुपये मूल्यका पशुधन काटा जा रहा है। यदि वह कटना बंद हो जाय तो ३ लाख ७० हजार टन अनाज, १० लाख टन चारा, ३० लाख टन खाद, २० करोड़ ५८ लाख ५७ हजार टन दूध और ९ लाख ८० हजार लोगोंको रोजगार मिल सकता है। अतः ग्राम एवं राष्ट्रविकासके लिये अधिष्ठान-रूप गोवंशका सार्थक उपयोग करें, ताकि कुपोषण रुके, पौष्टिक अनाज प्राप्त हो सके, स्वस्थ पर्यावरण उपलब्ध हो सके, स्थानीय उद्योग बढ़े और चतुर्विध पुरुषार्थ-रूप सम्पत्ति प्राप्त हो सके।

रात हो या दिन, अच्छा समय हो या बुरा, कितना ही बड़ा भय क्यों न उपस्थित हुआ हो, यदि मनुष्य निम्नाङ्कित श्लोकोंका कीर्तन करता है तो वह सब प्रकारके भयसे मुक्त हो जाता है—

गावो मामुपतिष्ठन्तु हेमशङ्ग्यः पयोमुचः। सुरभ्यः सौरभेय्यश्च सरितः सागरं यथा॥
गा वै पश्याम्यहं नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा। गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्॥

'जैसे नदियाँ समुद्रके पास जाती हैं, उसी तरह सोनेसे मढ़े हुए सींगोंवाली दुग्धवती, सुरभि और सौरभेयी गौएँ मेरे निकट आवें। मैं सदा गौओंका दर्शन करूँ और गौएँ मुझपर कृपादृष्टि करें। गौएँ मेरी हैं और मैं गौओंका हूँ, जहाँ गौएँ रहें, वहाँ मैं भी रहूँ।' (महा०, अनु० ७८। २३-२४)

गोवंशकी उपेक्षा क्यों ?

[श्रीलक्ष्मीनारायणजी मोदी, प्रबन्धन्यासी भारतीय गोवंश-संवर्धन-प्रतिष्ठान]

गोवंश-संवर्धन क्या साम्प्रदायिक है ?

जब कोई गोवंशकी बात करता है तो भारत सरकारकी एक ही मन:स्थिति बनती है कि 'यह तो साम्प्रदायिक प्रश्न है।' आइये, विचार करें कि 'यह विज्ञानका विषय है या आर्थिक एवं सामाजिक उन्नतिका केन्द्र-बिन्दु है या संकीर्ण साम्प्रदायिकताका ?'

इस संदर्भमें श्रीअब्दुल गफ्फारकी कविताके कुछ अंश उद्धृत किये जा रहे हैं—

गायने मानव-जीवनको नव-रूप प्रदान किया है,
इसीलिये ऋषियोंने इसको 'माँ' का नाम दिया है॥
आर्य संस्कृतिका गौरव हम नहीं सिमटने देंगे,
शीश भले कट जाये लेकिन गाय नहीं कटने देंगे॥
मेहनत-कश किसानके मनमें खुशियाँ यह भर देती,
श्रमके साथी बैलोंको भी यही जन्म है देती॥
किसी जातिका नहीं, धर्मका नहीं यह हर घरका है,
गौ-हत्याका प्रश्न समूची मानवता भरका है।
गौ-हत्या करनेवाला सभ्यता उचाट रहा है,
गाय काटनेवाला अपनी माँको काट रहा है॥
माँके हत्यारोंको खुलकर दंड दिलाना होगा,
इसकी रक्षाका घर-घरमें अलख जगाना होगा॥
वसुधाके वैभवका दर्शन नहीं चटकने देंगे,
शीश भले कट जाये लेकिन गाय नहीं कटने देंगे॥
जिस आँगनमें गाय नहीं अपशकुन माना जाता,
गोदान तो भारत-भूमिपर महादान कहलाता॥
हिन्दू मुस्लिम सिक्ख सभी अब आगे बढ़कर आओ,
भाल भारतीसे कलंकका ये टीका हटवाओ॥

गाँवमें जो खेती करते हैं या गाड़ी चलाते हैं, वे सभी धर्मोंके व्यक्ति हैं और वे अपने पशुधनको अच्छी तरहसे पालते हैं। मुझे एक बार भोपालके पास गाँवोंमें जानेका अवसर मिला और वहाँ कई मुसलमान किसानोंसे मुलाकात हुई, उनके विचार गोसंवर्धनसे जुड़े थे और एक भी व्यक्ति नहीं चाहता था कि उनका पशुधन बूचड़खानोंमें पहुँचे।

गोवंशका योगदान

गोवंशका योगदान मुख्यत: चार प्रकारका है—(१) पशुशक्ति, (२) गोमूत्र-गोबर, (३) दूध और (४) मरणोपरान्त चमड़ा तथा अन्य अवयवोंका उपयोग।

भारत-जैसे कृषि-प्रधान देशके लिये गोवंश आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्थाका केन्द्र-बिन्दु रहा है और इसीलिये भारतको 'सोनेकी चिड़िया' की संज्ञा दी गयी थी। जबसे गोवंशका ह्रास प्रारम्भ हुआ तबसे आर्थिक दशा बिगड़ने लगी और भारत विदेशी तथा अपने घरेलू ऋण-चक्रमें फँस गया है। अब भी हमारी बहुत-सी समस्याओंका समाधान गोवंशके उचित उपयोगसे सम्भव है।

पशु-शक्ति या यान्त्रिकी उपकरण

खेतीके कार्य—जुताई, निराई, बुवाई, कटाई, पानी खींचनेके लिये, वाहन एवं ग्रामोद्योगके लिये बैल न केवल व्यावहारिक है, बल्कि सामयिक भी है और रहेगा भी। प्रश्न यह उठता है कि किस प्रकार किसानोंको जिन्हें कड़ी मेहनत करनी पड़ती है, उससे बचाया जा सके और बैलोंका उपयोग भी बढ़े ?

जब किसानोंको अपने खेत जिसकी लंबाई-चौड़ाई १०० मीटर हो तो उसे नंगे पाँव कड़ी धूपमें करीब ६५ कि० मी० एक जुताईके लिये चलना पड़ता है और जब वह तीन-चार बार जुताई कर लेता है तब कहीं खेत बोनेके लिये तैयार होता है। इस मेहनतसे बचनेके लिये 'केन्द्रीय कृषि-यान्त्रिकी अनुसंधान-संस्थान भोपाल' ने एक तिपहिया संयन्त्र बनाया है, जिसकी उपयोगिता यह है कि किसान ट्रैक्टरकी भाँति उसपर बैठकर अपने बैलोंद्वारा खेतीके सभी कार्य एवं खेतकी जुताई, निराई और बुवाईतकके कार्य कर सकेगा। इस संयन्त्रको मैंने स्वयं भोपाल जाकर देखा है और जब इस संयन्त्रका खेतमें व्यवहारके लिये बैलोंकी जोड़ी लगायी गयी तभी हरियाणाके दो किसान वहाँ सौभाग्यवश आ गये। दोनोंने बारी-बारीसे मेरे सामने ही खेतकी जुताई कर बड़े स्पष्ट रूपसे कहा कि यह संयन्त्र बहुत उपयोगी है।

बड़े दु:खकी बात है कि एक ओर भारत सरकार ट्रैक्टरोंके प्रचारके लिये हजारों रुपयेका अनुदान देती है, पर इस पशुचालित संयन्त्रके प्रचार-प्रसारके लिये उसने कोई योजना नहीं बनायी है।

'इंस्टीट्यूट ऑफ इक्नोमिक ग्रोथ दिल्ली' ने एक विशेष अध्ययनसे पाया है कि देशमें करीब ८ करोड़ बैल खेतीके कार्योंमें लगे हैं, उनके बदले हमें २ करोड़से अधिक ट्रैक्टरोंकी आवश्यकता होगी। २ करोड़ ट्रैक्टरोंकी लागतका अनुमान ४० खरब रुपये है। ८ वीं पञ्चवर्षीय योजना कुल ८० खरब रुपयोंकी है फिर इतनी बड़ी धनराशि कहाँसे उपलब्ध होगी?

२ करोड़ ट्रैक्टरोंके लिये पेट्रोलियम पदार्थ आयात भी करना होगा, उसका मूल्य २० अरब अमेरिकन डालरके लगभग होगा, जबकि आज भारत केवल छ: अरब डालरका पेट्रोलियम पदार्थ आयात करता है। विदेशी ऋण भी करीब ९१ अरब डालरका पहले ही चढ़ा हुआ है। फिर यदि हम चाहें तब भी देशके पास इतनी विदेशी मुद्रा नहीं होगी और न ही प्रत्येक वर्ष पेट्रोलियम पदार्थ आयात करनेके लिये ऋण मिल सकेगा।

भारतमें पेट्रोलियम पदार्थका भूमिगत एवं सागरके नीचेका भण्डार केवल २५-२६ वर्षोंके लिये पर्याप्त है। जैसा कि आजकी खपतके हिसाबसे बताया जाता है। अत: आनेवाले युगमें भी पशु-शक्तिका व्यवहार हितकर रहेगा।

जहाँतक बैलगाड़ियोंका प्रश्न है, कुछ वर्षोंतक सरकारी आँकड़ेसे जानकारी मिलती थी कि देशमें डेढ़ करोड़ बैलगाड़ियाँ हैं, लेकिन ५ मार्च, १९९४ को हुए एक सम्मेलनमें भारत सरकारके एक उच्च अधिकारीने जानकारी दी कि बैलगाड़ियोंकी संख्या बढ़कर ढाई करोड़ हो गयी है। इससे यह सिद्ध होता है कि वर्तमान यन्त्रीकरणके युगमें भी बैलगाड़ियोंकी उपयोगिता तेजीसे बढ़ रही है।

सरकारी आँकड़ोंके अनुसार बैलोंका उपयोग वर्षमें ५० से १०० दिनका ही हो पाता है। इस उपयोगको बढ़ानेके लिये भोपाल-स्थित अनुसंधानशालाने एक ऐसा उपकरण बनाया है, जिसके द्वारा बैलोंको एक ही स्थानपर घुमाकर ८०० से १००० चक्करकी गति मिल जाती है। इस गति और शक्तिके माध्यमसे नाना प्रकारके ग्रामीण उद्योग बिना बिजली, बिना डीजल खर्च किये सम्भव कर दिखाया है। मुख्यत: कार्य— चारा काटना, अन्न निकालना, आटा-चक्की, दाल-चक्की, खराद, चारेके गट्ठर बाँधना आदि है।

बैलचालित तेलघानीका प्रचार तो बहुत पहलेसे ही था और इसका सबसे बड़ा लाभ होता था गाँवमें ही तेल निकलना। खलीका व्यवहार पशुओंके आहारकी पौष्टिकता बढ़ानेमें सहायक भी होता था।

गोबर एवं गोमूत्रके उपयोग अभीतक खाद या उपले बनाकर जलाने और कभी-कभी गोबरका लेप करनेतक ही सीमित रहा। यद्यपि ऋषियोंने बहुत स्पष्ट रूपसे संकेत दिया था कि 'ऐश्वर्यकी देवी महालक्ष्मीजीका वास गोबरमें है,' लेकिन दुर्भाग्यवश हमारे वैज्ञानिकोंने इसे ढकोसला ही समझा।

अमेरिकाके जेम्स मार्टिनने दुधार गायका गोबर, खमीर और समुद्रके पानीको मिलाकर एक ऐसा उत्प्रेरक बनाया है, जिसके व्यवहारसे बंजरभूमि हरी-भरी, सूखे तेलके कुओंमें दुबारा तेल तथा समुद्रकी सतहपर बिखरे तेलको सोखा जा सकेगा।

यह निश्चित बात है कि यदि भारतमें भी गोबरके उपयोगके लिये अनुसंधान होगा तो बहुत-सी आश्चर्यजनक जानकारियाँ प्राप्त होंगी।

केनियासे एक पुस्तिका आयी है, जिससे जानकारी मिलती है कि 'गोबरसे तरल खाद बनाकर उसका व्यवहार करनेसे पौधोंको बहुत लाभ मिलता है। इस विधिमें गोबरको किसी मोटे कपड़ेमें बाँधकर पानीके ड्रममें लटका देते हैं। १५-२० दिनोंमें गोबरके तत्त्व पानीमें आ जाते हैं और इस पानीका व्यवहार कई गुना अधिक लाभदायक पाया गया है। इसी प्रकार हरी पत्तियोंको भी पानीमें डुबोकर २०-२५ दिन रखनेपर एक काला-सा द्रव तैयार होता है, जिसका व्यवहार भी अत्यन्त लाभदायक है।'

सेन्द्रिय खाद अथवा रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशक

जहाँतक सेन्द्रिय खाद बनानेका विषय है इस कार्यमें श्रीनारायण देवराव पांढरी पांडेका २५ वर्षका श्रम बहुत महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने नॅडेप-विधिकी खोजकर वैज्ञानिकों एवं किसानोंको चकित कर दिया है कि किस प्रकार केवल एक किलो गोबरसे ३० किलो अच्छी किस्मकी खाद बनती है। यदि इस विधिका पूरे देशमें प्रयोग किया जाय तो हमें

रासायनिक उर्वरकोंकी आवश्यकता ही नहीं रहेगी।

रासायनिक उर्वरकोंके व्यवहारसे किसानोंकी भूमि एक शराबीकी तरह हो जाती है। उसे हर वर्ष अधिक मात्रामें उर्वरक चाहिये और उर्वरकके व्यवहारसे फसलमें कीट भी अधिक लगते हैं। इन कीटोंको नष्ट करनेके लिये कीटनाशक दवाओंका व्यवहार भी बढ़ता जा रहा है। उर्वरकका कुछ हिस्सा पानीमें मिलकर भूमिगत जलको प्रदूषित करता है और कुछ हिस्सा हवामें उड़कर ओजोनकी परतको खराब करता है। भारत सरकारके डॉ० बी० के० हांडाने परीक्षण कर पाया है कि देशमें करीब-करीब सभी प्रान्तोंमें भूमिगत जल इतना प्रदूषित हो गया है कि मनुष्यों एवं पशुओंके लिये भी उपयुक्त नहीं रहा। कीटनाशकोंका दुष्प्रभाव यह भी हो रहा है कि साढ़े तीन सौसे अधिक कीट ऐसे उत्पन्न हो गये हैं जिनपर इन दवाओंका कोई असर नहीं होता। कीटनाशक मानवों एवं पशुओंके शरीरमें जमते जाते हैं और वे मल-मूत्रके द्वारा बहुत कम मात्रामें बाहर निकलते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि मनुष्योंमें नपुंसकता बढ़ रही है और भावी संतानके लिये बड़ी संख्यामें विकलाङ्ग होनेका खतरा भी मँडराने लगा है।

दीपावलीके बाद करीब-करीब सभी घरोंमें गोबरधनकी पूजा की जाती है। दीपावलीका पर्व महालक्ष्मीजीकी आराधनाके लिये पूरे देशमें बड़ी धूमधामके साथ मनाया जाता है और तुरंत बाद गोबरधनकी पूजा की जाती है। जरा-सा पदच्छेद कर देखें तो यह 'गोबर' एवं 'धन' दो शब्दोंका एकीकरण है।

इस पूजाके द्वारा भी प्रतिवर्ष एक संकेत दिया जाता है कि गोबरमें धन है, ऐश्वर्यकी देवी महालक्ष्मीजीका वास है गोबरमें, इसे ढूँढ़ो और समृद्धि पाओ, लेकिन अधिकतर लोग पूजा तो कर लेते हैं, परंतु कभी यह नहीं सोचते कि इस पूजाका असली संकेत क्या है और इसके लिये कुछ करना है। इसी प्रकार दशहरेके अवसरपर भी गोबरका एक आकार बनाकर पूजा की जाती है। एक तरफ रुपया और दूसरी तरफ चावल आदि रखे जाते हैं। बच्चोंसे कहा जाता है कि रुपया ढूँढ़ो। जिस बच्चेको रुपया मिलता है वह प्रसन्न होता है। यह पूजा इस बातकी प्रतीक है कि गोबरमें अपरम्पार धन है इसे ढूँढ़ो, इसका उचित व्यवहार करो।

अफ्रीकामें गोबरका प्रयोग मरुस्थलके रोकनेमें भी किया गया है। थोड़ी-थोड़ी दूरपर छोटे-छोटे गड्ढे खोदकर उनमें गोबर भर देते हैं ताकि वहाँ सूक्ष्म कीटाणु पनप सकें और भूमिकी उर्वरा-शक्ति अच्छी हो तथा मरुस्थलका बढ़ना रुक सके।

कलकत्तेके एक सज्जनने गोमूत्रको कड़ाहीमें उबालकर जो बचा द्रव्य है उसकी गोली बनायी है और उन्हें इसका लाभ मधुमेहसे पीडित व्यक्तियोंको मिला है।

रासायनिक उर्वरक

रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशक दवाओंका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। ज्यों-ज्यों उर्वरककी मात्रा बढ़ाते हैं, त्यों-त्यों फसलों एवं फलोंमें कीड़े अधिक लगते हैं और इस प्रकार इन जहरीली दवाओंका अंश हमारे शरीरमें जमता रहता है।

उर्वरकोंकी खपत १९८०-८१ में केवल ५५ लाख टन थी जो १९९१-९२ में बढ़कर लगभग १ करोड़ २५ लाख टन हुई। इसी दौरान गेहूँका उत्पादन ५ करोड़ ३० लाख टनसे बढ़कर ७ करोड़ ४० लाख टन हुआ। अर्थात् उर्वरकोंकी खपत बढ़ी ढाई गुना, पर गेहूँका उत्पादन केवल ५० प्रतिशत ही बढ़ा। इसी प्रकार कीटनाशकोंके व्यवहारमें भी भारी वृद्धि हुई है। किंतु कीटनाशकोंकी खपत बढ़ानेपर भी खाद्यान्नको कीटोंद्वारा जो नुकसान होता था, उसमें कमी नहीं हुई।

उर्वरक एवं कीटनाशक कारखानोंसे भीषण प्रदूषण होता है। इस संदर्भमें पर्यावरण-मन्त्रालयकी नीतिका पैरा ८.३ काफी महत्त्वपूर्ण है, जिसे उद्धृत किया जा रहा है—

जबकि कस्बों और उद्योगोंसहित विशिष्ट स्रोतोंसे होनेवाले प्रदूषणकी ओर ध्यान दिया गया है, लेकिन कीटनाशकों, नाशीकीटों, उर्वरक आदि-जैसे कृषि-निवेशोंसे होनेवाले गैर स्थानीय प्रदूषणकी ओर ध्यान नहीं दिया गया। यह स्थिति दिनों-दिन बिगड़ती जा रही है और इससे न केवल हमारे जल-निकाय प्रदूषित हो रहे हैं, बल्कि उपमृदा, जल-संस्थान भी प्रदूषित हो रहे हैं और इससे मानव-जातिका स्वास्थ्य भी प्रभावित होगा। कीटनाशकोंके प्रयोगसे सम्बन्धित एक दीर्घावधि-नीति सम्बन्धित मन्त्रालयके सहयोगसे तैयार की जायगी, जिसमें पर्यावरण-रूपसे स्वीकार्य कीटनाशकों विशेषकर जैव कीटनाशकों और गैर स्थायी जैव अवक्रमणीय कीटनाशकोंके प्रयोगसे तथा हानिकारक विषाक्त और स्थायी कीटनाशकोंको धीरे-धीरे समाप्त करना

शामिल है और इस नीतिके प्रभाव कार्यान्वयनके लिये सम्बन्धित मन्त्रालयके सहयोगसे आधारभूत समझकर उपलब्ध कराया जायगा। उर्वरकोंके प्रयोगके बारेमें भी इस तरहकी नीति बनाये जानेकी आवश्यकता है।

उर्वरकोंके व्यवहारसे खेतोंकी उत्पादकता २० वर्षोंमें नगण्य हो जाती है, इसका प्रमाण भी भारतीय कृषि-अनुसंधान परिषद्को अपने परीक्षणसे मिला है, जिसकी तालिका निम्न है—

मक्काका प्रति उत्पादन कुंतलमें
(लाल एवं माथुर—१९८८)

वर्ष	१—१२	१३—१८	१९—२४	२५—२८
एनपीके	३१.७	३२.३	८.२	१.२
कंपोस्ट	२२.७	२५.९	२७.५	२५.९

उर्वरकों एवं कीटनाशकोंके व्यवहारसे मिट्टीके सूक्ष्म जीवाणु भी दिनोंदिन कम होते हैं। इन जीवाणुओंके बिना किसी प्रकारकी उपज कर पाना असम्भव है। उर्वरकोंके व्यवहारसे भूमिकी आर्द्रता कम होती जाती है, जिस प्रकार शराबीको थोड़े-थोड़े दिनोंमें मदिराकी मात्रा बढ़ानी पड़ती है उसी प्रकार मिट्टीका स्वभाव भी शराबीके जैसा हो जाता है। उर्वरकोंकी मात्रा बढ़ानेपर भी उत्पादकतामें सुधार नहीं होता। जबकि सेन्द्रिय खादके द्वारा उत्पादकता बढ़ती जाती है या उच्च स्तरपर स्थिर रहती है। प्रारम्भमें जब उर्वरकोंका व्यवहार किया गया था तो एक किलो उर्वरक डालनेपर १५ किलो अन्न मिलता था, पर अब यह घटकर केवल ६ किलो रह गया है और यह अनुपात तेजीसे घट रहा है।

खर-पतवार-नाशक दवाके व्यवहारके कारण एक ऐसा पौधा पनप रहा है जो देखनेमें गेहूँ-जैसा लगता है पर उसमें कोई दाना नहीं पड़ता। यह पौधा आस्ट्रेलिया, मैक्सिको तथा अन्य देशोंमें भी उत्पन्न हो गया है, जिसके कारण वहाँ बड़ी चिन्ता है। उर्वरकोंके व्यवहारसे खाद्यान्नमें प्रोटीनकी मात्रा कम हो जाती है, स्वाद बिगड़ जाता है तथा मानव एवं पशुओं—सभीको पौष्टिक तत्त्व कम मिलते हैं। उर्वरकोंके कारण खेतोंमें पानीकी खपत कई गुना अधिक बढ़ानी पड़ी जिसके कारण नयी-नयी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। विशेषकर भूमिगत जलका स्तर दिनोंदिन कम हो रहा है।

उर्वरक कीटनाशक एवं खर-पतवार-नाशक दवाओंके बदले जब सेन्द्रिय खादके आधारपर खेती करते हैं तो निम्न लाभ मिलते हैं—

(१) भूमिका प्राकृतिक रूप बना रहता है।
(२) भूमिके सूक्ष्म जीवाणु बढ़ते हैं।
(३) सिंचाईके लिये पानी बहुत कम लगाना पड़ता है।
(४) खेत एवं गाँवके कूड़े-कचरेका भी उपयोग होता है।
(५) किसानों और बैलोंको अधिक काम मिलता है।
(६) पर्यावरणमें सुधार होता है, खाद्यान्न पौष्टिक एवं सुस्वादु होता है।
(७) कीटनाशकोंके जहरका अंश हमारे शरीरमें नहीं जमता।
(८) गाँवका धन एवं संसाधन गाँवमें रहता है।
(९) ग्रामीणोंको रोजगार मिलता है।
(१०) विदेशी मुद्राकी बचत होती है।
(११) देश सम्पन्नताकी ओर बढ़ता है।

दूध-शाकाहार एवं मांसाहार

गायके दूधकी तुलना माँके दूधके समान आजके वैज्ञानिक भी मानते हैं।

वर्तमानमें मांसका निर्यात करीब साढ़े तीन अरब रुपयोंका हो रहा है, जिसे बढ़ाकर १० अरब करनेकी योजना चल रही है। आर्थिक दृष्टिसे भी यदि जाँचे तो यह अनुमान किया गया है कि जब १ करोड़की विदेशी मुद्रा मिलती है तो देशको १५ करोड़का नुकसान उठाना पड़ता है। पर न तो सरकार इस प्रकारके होनेवाले घाटेकी जाँच करवाती है और न ही ध्यान देती है।

डॉक्टर एवं आहार-विशेषज्ञ दुनियामें पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि भोजनमें रेशोंको बढ़ाओ जो कि शाकाहारके द्वारा ही सम्भव है। चूँकि मांस और अंडोंमें तो रेशा होता ही नहीं। अमेरिकामें जॉन रोबिन्सने एक पुस्तिका 'डायट फॉर ए न्यू अमेरिका' लिखी है। इस पुस्तिकाकी न जाने कितनी लाख प्रतियाँ बिक चुकी हैं और कम-से-कम १० लाखसे अधिक व्यक्ति इस पुस्तिकाको पढ़कर शाकाहारी हो गये हैं।

मांसाहारके विषयमें जॉन रोबिन्सने बड़े महत्त्वपूर्ण तथ्य उजागर किये हैं, जिनमेंसे कुछ निम्न हैं—

(१) विश्वमें यदि सभी मांसाहारी हो जायँ तो

विश्वका पेट्रोलियम पदार्थका भंडार केवल १३ वर्षोंके लिये पर्याप्त होगा और यदि सभी शाकाहारी हो जायँ तो यह भण्डार २६० वर्षोंके लिये उपलब्ध रहेगा।

(२) एक किलो गेहूँके उत्पादनमें करीब २४० लीटर पानी लगता है जबकि एक किलो मांसके उत्पादनमें २४,००० लीटर पानी लगता है।

(३) गेहूँसे एक किलो प्रोटीनके लिये करीब साढ़े तीन डॉलर (११५ रुपये) खर्च होते हैं और इतना ही प्रोटीन मांससे प्राप्त करनेके लिये तीस डॉलर अर्थात् १० गुणा अधिक खर्च होता है।

(४) मांस-आधारित आहारमें कीटनाशक दवाओंके अंश ५५% पाये गये हैं जबकि सब्जियोंमें केवल ६% रहते हैं।

विश्व-स्वास्थ्य-संगठनने जो जानकारी दी है उनके आधारपर मांसके खानेसे कैंसर, हृदय-रोग, गठिया आदि रोग होते हैं।

चारा

भारत सरकारकी अनेक समितियोंने यह जानकारी दी है कि देशमें पशुधनकी संख्या अधिक होनेके कारण जो चारा उपलब्ध है वह आवश्यकताके अनुपातमें बहुत कम है। पर दुर्भाग्य है कि जो चारेके साधन देशमें उपलब्ध हैं उनका प्रबन्धन भी नहीं किया जाता। जिसका ब्योरा निम्न है—

चीनी मिलोंमें जितना गन्ना-पिराई होता है, उसका एक तिहाई भाग खोईके रूपमें निकलता है। इस खोईको भापके द्वारा हल्का बनाकर पशुओंके लिये चारा बना दिया जाता है। इस विधिका बड़े पैमानेपर मैक्सिको एवं क्यूबामें भी व्यवहार होता है, लेकिन उल्टी दिशामें काम करनेकी प्रक्रियाके अनुसार भारत सरकार इस खोईको जलाकर बिजली पैदा करनेके लिये अनेकों सुविधाएँ दे रही है, पर चारा बनानेके लिये कोई बात भी नहीं करता।

पहले गाँवमें तेलकी घानी हुआ करती थी, जो खली बचती थी उसे पशुओंको खिलाते थे। अब तेलकी घानियाँ प्रायः समाप्त हो गयी हैं और तेल निकालनेके लिये बड़े-बड़े कारखाने लग गये हैं। इन कारखानोंमें जो खली निकलती है उसका निर्यात कर दिया जाता है, जिसकी मात्रा २५ लाख टनतक पहुँच गयी है। खलीके निर्यातसे देशको करीब ६१० करोड़ रुपयेकी विदेशी मुद्रा मिलती है, पर यदि यही खली हमारी गायोंको खिलायी गयी होती तो अतिरिक्त दूध हमें प्राप्त होता, उसका मूल्य ५ रुपये प्रति लीटरके हिसाबसे करीब ७५ अरब मिलता और यदि इस दूधके पदार्थ बनाकर निर्यात किये जाते तो हमें डेढ़ खरब रुपयेके बराबर विदेशी मुद्रा मिलती।

खाद्यान्नकी कटाईके लिये ऐसे यान्त्रिकी उपकरण विदेशोंसे मँगाये गये, जिनके द्वारा ऊपरकी बालियाँ तो काट ली जाती हैं, पर भूसा खेतमें छोड़ देते हैं। यह भूसा पशुओंके लिये अति आवश्यक आहार है, पर करोड़ों टन या तो जला देते हैं या फिर खेतोंमें ही सड़नेके लिये छोड़ देते हैं।

सामाजिक वनीकरणके कार्यक्रममें भी ऐसे वृक्षोंको सम्मिलित नहीं किया गया जिनसे हरा चारा भी मिल सके।

कैसी विडम्बना है कि इंग्लैंडमें गायोंकी हड्डीका चूरा तथा मांसके कुछ पदार्थ दूध बढ़ाने एवं शरीरको मोटा करनेके लिये खिलाये गये, जिसके कारण बहुत-सी गायोंमें 'पागलपन' का रोग हो गया।

हैदराबादमें इस प्रकारके मिश्रण बनानेकी एक योजना चल रही है, जिसका प्रतिकार न्यायमूर्ति श्रीलोढ़ाजीने मुख्य मन्त्रीको पत्र लिखकर किया है।

गोशालाओंका दायित्व

अभीतक गोशालाओंके कार्यक्रममें यही रहा है कि वे दूध देती तथा बूढ़ी गायोंको अपने यहाँ पाल सकें लेकिन उन्होंने शायद ही ऐसा कोई कार्य किया हो जिसके द्वारा बैलोंकी उपयोगिता बढ़ सके। अतः किसी भी गोशालाको ट्रैक्टरका व्यवहार नहीं करना चाहिये, बल्कि उसकी जगह बैलोंकी शक्तिका ही व्यवहार कर किसानोंको भी प्रेरणा देनी होगी कि वे भी बैलोंका अधिकाधिक उपयोग करें। आज सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि भैंसका दूध महँगा बिकता है और गायका दूध सस्ता। जबकि होना यह चाहिये था कि गायका दूध महँगा होता और भैंसका दूध सस्ता।

गोशालाओंमें गोबर और गोमूत्र निकलता है, उसका व्यवहार नॅडेप-पद्धतिके आधारपर सेन्द्रिय खाद बनाकर किसानोंमें जागरूकता पैदा करें।

गोबरकी तरल खादका परीक्षण एवं व्यवहार खासकर चारे तथा पेड़ोंके लिये दिखायें। पञ्चगव्य बनाकर अपने कर्मचारियों एवं अतिथियोंको दें ताकि सभी नीरोग रहें। गोमूत्रका व्यवहार कीट-नियन्त्रणके लिये किसानोंको दिखायें। दूधसे बने उत्तम व्यञ्जन, दहीसे मक्खन एवं घीकी जानकारी दें। जो मक्खन दहीके बिलोनेसे निकलता है उसमें कुछ ऐसे सूक्ष्म जीवाणु होते हैं जो न केवल पाचनशक्तिको बढ़ाते हैं, बल्कि उनका व्यवहार कैंसर-जैसे रोगोंसे भी बचा सकता है। इसी प्रकार तक्र (मट्ठा) के गुणोंका भी प्रचार करें और हो सके तो बिक्रीकी भी व्यवस्था की जाय।

अपनी आवश्यकताओंके लिये भारवाहनका कार्य बैलगाड़ियोंके प्रयोगसे करें एवं खेती तथा चारेके उत्पादनके लिये बैलचालित सुधरे उपकरणोंका व्यवहार करें। साथ-साथ जल-सिंचाईके लिये भी बैलचालित रहँट या अन्य उपकरणोंका व्यवहार दिखायें। बैलोंकी शक्तिका व्यवहार चारा काटने, आटा-चक्की तथा अन्य ग्रामीण उद्योगोंके लिये प्रदर्शन करायें और जहाँ आवश्यकता हो वहाँ इन उपकरणोंकी उपलब्धि करायी जाय।

गोशालाओंमें तेलघानी लगाकर शुद्ध तेल ग्राहकोंको दें एवं खलीका व्यवहार पशुओंके लिये करें। ताकि उनकी भी पौष्टिक तत्त्वोंकी आवश्यकता पूर्ण हो सके।

गोशालाओंमें भारतीय प्रजातियोंके गाय, बैल, साँड़ रखे जायँ, संकर कदापि नहीं। क्योंकि संकर गायोंके बछड़े न तो खेतीके लिये और न ही भार-वहनके लिये उपयुक्त होते हैं।

खेतीमें रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकोंके बदले सेन्द्रिय खाद, नीम एवं गोमूत्रका व्यवहार करें।

जब फसलकी कटायी होती है उस समय चारा सस्ता मिलता है, परंतु चारेको रखनेमें भण्डारणकी कमीके कारण रख नहीं पाते। गट्ठर बाँधनेकी मशीन बन गयी है, जिसके व्यवहारसे भंडारमें स्थानकी आवश्यकता एक तिहाईसे भी कम हो जाती है और इस प्रकार अधिकाधिक चारा रखा जा सकता है।

घासके बीज बहुत हल्के होते हैं और उन्हें बोनेमें काफी कठिनाई होती है। बहुत बड़ा भाग हवामें उड़कर बेकार हो जाता है। मिट्टी और गोबरके साथ मिलाकर गोलियाँ बनानेका एक बहुत सहज उपाय 'भारतीय चरागाह-अनुसंधान-संस्थान, झाँसी' ने बताया है, उसका प्रयोग करें और साथ-साथ किसानोंको भी ये गोलियाँ उपलब्ध करायें ताकि परती भूमिका भी व्यवहार किया जा सके।

भू-जलका स्तर दिनोंदिन कम होता जा रहा है, जिसके कारण गहरे नलकूप लगानेकी योजनाएँ बन रही हैं। 'कृषि-विश्वविद्यालय इंदौर' ने एक बड़ी सरल विधि बनायी है, जिसके उपयोगसे हर खेतकी मिट्टी और वर्षाके जलका संरक्षण सम्भव है और इसका सबसे बड़ा लाभ है कि कुओं और नलकूपोंका जल-स्तर बना रहता है। इस विधिको अपनाकर किसानोंको भी दिखायें।

गाय-बैलोंको जब कोई बीमारी होती है तो उन्हें पाश्चात्त्य दवाएँ अधिक दी जाने लगी हैं, किंतु मनुष्य और मुर्गियोंमें तो इन दवाओंका इतना कुप्रभाव हो गया है कि उनका कोई असर नहीं होता और छोटी-सी बीमारी भी घातक सिद्ध होने लगी है। वह दिन दूर नहीं जब पशुओंमें भी इन दवाओंका असर नगण्य हो जाय। अत: यह आवश्यक है कि आयुर्वेदिक एवं देशी औषधियोंका व्यवहार अधिकाधिक किया जाय।

गोशालाओंको पर्याप्त रूपसे मांसाहार तथा अंडोंके दुष्परिणामका साहित्य रखकर बाँटना चाहिये और साथमें दूध और दूधके पदार्थोंके लाभोंका विवरण भी रखना चाहिये ताकि लोग मांसाहार और अंडोंका व्यवहार न करें और दूध एवं दूधके पदार्थोंका व्यवहार बढ़ायें।

यदि गोशालाओंमें भी भारतीय नस्लोंकी गाय नहीं रखी गयी, विदेशी साँड़ों द्वारा प्रजनन कराया गया तो भारतीय नस्लें समाप्त हो जायँगी और फिर पाश्चात्त्य पद्धतिको अपनाना पड़ेगा, जिसके अन्तर्गत गोमांसका उत्पादन बढ़ेगा और जो गाय थोड़ा भी कम दूध देगी वे भी बूचड़खाने जायँगी, जहाँतक बछड़ोंका प्रश्न है, वे तो कुछ ही सप्ताहमें बूचड़खानोंमें अपना जीवन समाप्त करेंगे ताकि लोगोंको मुलामय मांस जिसे 'वील' (Veal) कहते हैं, बड़ी मात्रामें उपलब्ध हो।

गोधन (बैल) बनाम ट्रैक्टर

[एक अमरीकीका दृष्टिकोण]

(श्रीबलभद्रदास और छायादेवी दासी)

[प्रस्तुत लेख अमेरिकासे, The International Society for Cow protection केप्रबन्ध-निदेशकद्वारा प्राप्त हुआ है, जिसमें कृषि-क्षेत्रमें टैक्टर और बैलोंकी तुलनात्मक उपयोगिताका विवरण प्रस्तुत किया गया है तथा प्रयोगों एवं अनुभवद्वारा यह सिद्ध किया गया है कि विदेशोंमें भी ट्रैक्टरकी अपेक्षा बैलोंद्वारा की गयी खेती ही कृषिभूमिके लिये सर्वोत्तम है, अत: इस लेखमें कृषिभूमिकी उर्वरता बनाये रखनेके लिये बैलोंद्वारा खेती करनेपर जोर दिया गया है।-सम्पादक]

क्या आपने कभी इसपर विचार किया है कि एक छोटे-से ट्रैक्टरके निर्माणमें आपको कितनी खनन-प्रक्रियाएँ करानी पड़ती हैं? और लोहा, कोयला, चूना-पत्थर, मैगनीज, निकल, ताँबा, बाक्साइड, टीन तथा जस्ते-जैसी कितनी ही बहुमूल्य धातुओंका ट्रैक्टरके बनानेमें उपयोग करना पड़ता है? ये धातुएँ धरतीसे प्राप्त होती हैं। इन्हें प्राप्त करनेके लिये धरती माताको खोदना पड़ता है। इस खनन-प्रक्रियामें धरती माताको आपद्वारा किये-कराये गये कितने अत्याचार सहन करने पड़ते हैं, क्या इसपर कभी आपका ध्यान गया? इन खानोंमें काम करनेवाले हजारों मजदूरों, कामगारों तथा कारीगरोंके लिये स्वयमेव नारकीय परिस्थितिका निर्माण हो जाता है और इसके जिम्मेदार भी आप ही हैं। यह तो हुआ ट्रैक्टर-निर्माणका पहला कदम।

इसके पश्चात् क्रम आता है इन धातुओंको गलानेवाले संयन्त्रोंका, जहाँ इन कच्ची धातुओंको तोड़ा, पीसा और खौलाया जाता है। इन विशालकाय कारखानों और फैक्टरियोंमें महान् नारकीय दृश्य तथा बड़े पैमानेपर गंदगी-ही-गंदगी दृष्टिगोचर होती है। इससे बड़ी मात्रामें प्रदूषण फैलता है। गलानेवाले संयन्त्रोंके पश्चात् हम उन फैक्टरियोंको देखते हैं, जहाँ ट्रैक्टर्सके एक-एक पुर्जेको जोड़कर ट्रैक्टर बनाये जाते हैं। यहाँकी कार्य-प्रणाली तो और भी अधिक गंदगी फैलानेवाली होती है।

जब ट्रैक्टर जुट-जुटाकर तैयार कर लिया गया तथा पार्किंग-स्थलपर बगैर टायरोंके तैयार खड़ा हो गया तो अब प्रश्न उठता है कि इन टायरोंको बनानेवाला पदार्थ आया कहाँसे? पता चला कि लोग उष्ण कटिबन्धीय देशोंमें पहुँचे और उन्होंने कामगारोंको कुछ थोड़ेसे पैसे देकर रबरके सुन्दर वृक्षोंपर कुल्हाड़ियाँ चलवा दीं, परिणामस्वरूप लेटेक्सके रूपमें उन सुन्दर वृक्षोंका वनस्पति-क्षीर उनके रक्तके समान बह निकला और फिर उसीसे टायर बनाया गया।

अब हमारा ट्रैक्टर पार्किंग-स्थलपर अपने टायरोंपर खड़ा है। अब हम सोचें कि यह चलेगा किससे? इसे चलानेके लिये तो आपको पेट्रोल अथवा डीजल ही लेना पड़ेगा और वह वस्तु इतनी कठिन होती जा रही है कि शायद इसकी प्राप्तिके लिये तो युद्धतक करना पड़ जाय। जहाज आपका पेट्रोल समुद्र पा करके लायेगा तो वह आधा पेट्रोल समुद्रमें छलका भी सकता है।

आज अमेरिकामें अन्य उद्योगोंकी अपेक्षा कृषि-उद्योगमें ही अधिक पेट्रोल काममें लिया जाता है, वह भी उसकी फार्म मशीनरीपर जो कि सम्पूर्ण ऊर्जा-उपयोगका लगभग $\frac{३}{५}$ हिस्सा है।

जो तेल बचता है वह रिफाइनरी अर्थात् परिष्करण-शालाको भेज दिया जाता है। यदि आपने कभी किसी ऐसे नगरके मध्यसे यात्रा की है जिसमें रिफाइनरी है तो आप वहाँकी बदबूभरी हवासे भी परिचित होंगे, वहाँका तो पानी भी इतना अधिक गंदा हो जाता है कि आप उसे कभी भी पीना पसंद नहीं करेंगे।

अब हमारे कृषकके पास उसका ट्रैक्टर स्टील बेल्टेड रेडियल टायर्स तथा पेट्रोलके साथ तैयार है। वह अपना इंजन चालू करता है और सोचता है कि इस ट्रैक्टरसे मैं ५० बैलोंके बराबर काम कर लूँगा, तब वह अपने बैलोंकी तरफ देखता है और कहता है कि 'अब मुझे तुम्हारी जरूरत नहीं है, मेरे पास मेरा ट्रैक्टर है, मेरा पेट्रोल है, अब तुम्हारा स्थान कसाईखाना है।' इस प्रकार जब आप

ट्रैक्टरको जन्म देते हैं तो उसका सीधा मतलब हुआ गाय-बैलोंको कसाईखाने भेजना और तब आप अपनेको गाय-बैलोंकी हत्याके पापका भागी बनाते हैं।

जो लोग कसाईखानेमें काम करते हैं, उनकी हालत बहुत खराब होती है। अमेरिकी सरकार भी स्वीकार करती है कि कसाईखानोंका काम कारखानों या खदानोंके कामसे भी अधिक भयंकर और नैतिक पतन करनेवाला है।

किंतु अमेरिकाका किसान यह सब कहाँ सोचता है, वह तो सोचता है कि अब मुझे उन बैलोंको कुछ भी खिलाना नहीं पड़ेगा, अब उनकी खुराकका हिस्सा मेरी बचत होगी। और यह सोचकर वह अपने बैल कसाईखानेको बेच देता है।

तब वह अपने हरवाहोंकी ओर देखता है, जो पहले उसके बैल हाँकते थे तथा फल-सब्जियाँ और अन्न उगाते थे, अब वह उनसे कहता है—'भाई! अब तो मैं अपने बैल बेंच चुका हूँ, उन्हें मरवा चुका हूँ। अब मेरे पास मेरा ट्रैक्टर है, इसलिये मेरे पास तुम्हारे लिये कोई काम ही नहीं है, अब तुम जाओ, फैक्टरियोंमें अपने लिये काम ढूढ़ो, मशीनें बनाओ।'

अब कृषक अपने ट्रैक्टरको खेत जोतनेके लिये निकालता है और उसका पेट्रोलभक्षक एंजिन चालू होकर वायुमण्डलको प्रदूषित करने लगता है। उसके भारीभरकम स्टीलबेल्टेड टायर धरतीको दबाने लगते हैं, जिससे पौधोंकी जड़ोंको बढ़ने-फैलनेमें कठिनाई होती है। अब उसके पास इस वसुंधरा—धरतीको उर्वर बनानेवाली गोबरकी खाद भी नहीं है, इसलिये मजबूरीमें वह मँहगे रासायनिक उर्वरकोंका उपयोग करता है जो प्राकृतिक गैसकी बड़ी लागतसे बनाये जाते हैं। ऐसी फसलोंके उगाये जानेसे धरतीका जैविक पदार्थ अपने-आप कम हो जाता है, जो नमीका भण्डार होता है। ऊपर-ऊपरकी मिट्टी पानीके बहावके द्वारा नदियोंमें बह जाती है और जो कमजोर मिट्टी रह जाती है, वह कमजोर पौधे ही उगाती है, इसलिये इनमें खर-पतवार उग आते हैं, साथ ही कीड़े तथा बीमारियाँ भी लग जाती हैं। इसलिये किसानको कीटनाशकोंका उपयोग करना पड़ता है जो धरतीसे नीचे उतरकर पानीकी अन्तर्धाराओंको प्रदूषित कर देते हैं।

सारे संसारमें उर्वरक खादोंका उपयोग जो १९५० में केवल १४ मिलियन टन था, वह १९८९ में १४३ मिलियन टनतक पहुँच चुका है अर्थात् सीधा दस गुनेसे भी अधिक। सम्पूर्ण भूमण्डलपर नाइट्रस आक्साइडकी मात्रा बढ़ जानेसे ६ प्रतिशत ऊष्मा बढ़ चुकी है। तो फिर इसका विकल्प क्या है? गाय अपने सम्पूर्ण प्रजननकालमें ५० प्रतिशत अर्थात् आधे तो नर-बछड़ोंको ही जन्म देती है। गौ-संरक्षणके लिये, जबतक हम बैलोंको काम नहीं देंगे कि हम उनसे कौन-सा और कैसा काम लें, हम उन्हें क़तलसे नहीं बचा पायेंगे। पशुओंके प्रति केवल दया-भाव बतलानेसे काम नहीं चलेगा।

गौ माताके उदरकी फैक्ट्रीसे उत्पन्न होनेवाले हमारे बैल भगवान् कृष्णद्वारा बतलाये और दिये गये हमारे ट्रैक्टर्स हैं। इस फैक्ट्री अर्थात् गायद्वारा न तो किसी प्रकारका प्रदूषण होता है और न ही काम करनेकी नारकीय स्थितियाँ बनती हैं, इनका सारा कार्यकलाप प्रकृतिके नियमोंके अनुसार चलता है, जिसकी व्यवस्था स्वयं भगवान् कृष्णने की है।

बैल तो सदाचारके सिद्धान्तोंका प्रतीक है तथा गाय माँ वसुंधरा—धरतीकी प्रतिनिधि है। जब भी गाय और बैल प्रसन्नता तथा प्रफुल्लताकी मुद्रामें दिखायी दें तो समझ लो कि सम्पूर्ण विश्वके मानवमात्र भी उसी परिपूर्ण प्रसन्नमुद्रामें हैं। इसका एकमात्र कारण यह है कि कृषि-क्षेत्रमें बैल ही अन्नोत्पादनमें सहायता करता है और गाय अमृतके समान दूध देती है जो कि संसारकी समस्त भोज्य-सामग्रीमें एक करामाती चमत्कार है। मानवसमाज भी इन दो प्रमुख पशुओंका लालन-पालन पूरी सावधानीके साथ करता है, जिससे कि वे सर्वत्र प्रसन्नतापूर्वक विचरण कर सकें।

इस बैलरूपी ट्रैक्टरसे कहीं भी रंचमात्र प्रदूषणका भय नहीं है, क्योंकि वे स्वयं अपनी भोजनरूपी ऊर्जाका भण्डार यानी जौ, जई और घास खुद पैदा कर सकते हैं तथा इनके लिये हमारे द्वारा दिया गया दाना, भूसा, छिलका खली भी उपयोगी है; क्योंकि यही सब गोबर-गोमूत्रके रूपमें प्राप्त होता है। गोबर-गोमूत्र हमारे लिये कितने उपयोगी हैं यह बात छिपी नहीं है। गोबरसे तो वायोगैस भी निकाली जा सकती है, जो एक स्वच्छ एवं साफ ईंधन

है। वायोगैस निकल जानेके बादका अवशेष पदार्थ तो सर्वश्रेष्ठ उर्वरक तथा धरतीको सँवारनेवाली वस्तु है। वधगृहोंसे निकलनेवाले उपोत्पादनोंको जैविक पदार्थोंके बनाने-हेतु उपयोगमें लेनेकी कोई जरूरत नहीं है।

हर एकको किसी दूसरेपर निर्भर होना पड़ता है। किंतु हम किसपर निर्भर रहते हैं, इसीपर हमारे जीवनकी गुणवत्ता निर्भर करती है। श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान् कृष्णने कहा है—'अपने हर क्रियाकलापमें केवल मुझपर ही निर्भर रहो और हमेशा मेरे संरक्षणमें अपना हर कार्य करो। इस प्रकारकी भक्तिमय सेवामें मेरे प्रति अपनी कर्तव्यनिष्ठ चेतना सदा बनाये रखो।'

चूँकि हम सब अपने गोसंरक्षण अन्ताराष्ट्रिय संघके अन्तर्गत किसान हैं, हम अपने आपसे ही पूछते हैं कि हम अपनी सम्पूर्ण निर्भरता कृष्णपर कैसे रख सकते हैं? यदि हम ट्रैक्टरपर निर्भर होते हैं तो इसका अर्थ होगा कि हम मानव-निर्मित व्यवस्थापर निर्भर होते हैं। ट्रैक्टरको बनानेके लिये ही तो खदानों, गलानेवाले संयन्त्रों, फैक्टरियों, रिफाइनरीज तेल-कूपों आदिका सहारा लिया जाता है जो कि अनर्थकारी तथा अनुचित लाभ उठानेवाले घोरतम शोषणकारी उद्योग हैं।

ऊर्जाके हमारे दोनों प्रमुख स्रोत प्राकृतिक गैस और तेल हैं एवं हम अपनी तकनीकी-प्रगतिके लिये भी इन दोनोंपर ही पूरी तरह निर्भर हैं। न्यू हैम्पशायर विश्वविद्यालयके काम्पलेक्स सिस्टम्सके अनुसंधान-केन्द्रपर किये गये वैज्ञानिक अध्ययनसे यही निष्कर्ष निकला है कि सन् २०२० तक तेल और प्राकृतिक गैसके भण्डार जो हमारी घरेलू आवश्यकताओंकी पूर्ति करते हैं लगभग समाप्त हो जायँगे। यदि कृषि-तकनीकीके आधार बदले नहीं गये तो तेल-भण्डारका १० प्रतिशत और प्राकृतिक गैसका ६० प्रतिशत जो संयुक्तराज्य अमेरिकामें खर्च किया जाता है, उसे खाद्य-उत्पादनके काममें लेना पड़ेगा। समस्याकी जटिलता इसीलिये बढ़ गयी है, क्योंकि कृषि-तकनीकीका आधार ही प्राकृतिक गैस तथा तेल है और इनका स्थान कोयला ले नहीं सकता है और ईंधन तथा ऊर्जाका विकल्प तेल और गैसके स्थानपर कोयलेको ही माना जाता है।

एक ऐसी कृषि-पद्धति जो भूमिगत ईंधनपर इस प्रकारसे निर्भर है, वह हमेशाके लिये क्या कुछ लंबे समयतकके लिये भी चल नहीं पायेगी।

हर समाजमें जीवन-यापनकी समस्याएँ प्रायः एक समान ही हैं—भोजन कहाँसे मिले? रहनेके लिये घर कैसे मिले? मैं अपना निर्वाह किस प्रकारसे करूँ? इन आवश्यकताओंकी पूर्ति किस प्रकारसे की जाती है, बस यही सब निर्धारित करता है किसी भी समाजकी जीवन-शैलीको।

अतः यदि हम अपने जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति बैलोंकी शक्तिका उपयोग करते हुए धरतीसे सहयोग बनाये रखकर करते हैं तथा ट्रैक्टरद्वारा धरतीका शोषण नहीं करते हैं तो तभी हम सद्भावनापूर्वक शान्तिमय जीवन जी सकते हैं। परिणामस्वरूप तभी यह धरती विपुल उत्पादन भी देगी और यदि हम धरतीके स्रोतोंपर वर्तमान-जैसा बलात्कार तथा लूट-खसोट करते रहे और अपनी जरूरी तथा गैरजरूरी आवश्यकताओंका दोहन करते रहे—अविवेकपूर्ण दोहन करते रहे तो हमें हर प्रकारके दुःख झेलने पड़ेंगे, चाहे वह हवाका प्रदूषण हो अथवा पीनेके पानीका या भूक्षरण अथवा रेगिस्तानीकरणका हो अथवा अनेकों जीव-जन्तुओं तथा पशु-पक्षियोंके विलोपीकरणका ही क्यों न हो।

किंतु यदि हमने बैलोंपर निर्भर रहते हुए उन्हें काममें लेना जारी रखा तो इसका अर्थ होगा कि हम धरतीके साथ सहयोग कर रहे हैं और परिणामस्वरूप हम भगवान् कृष्णद्वारा दी गयी व्यवस्थापर चल रहे हैं। हम यह सोचकर संतुष्ट भी हो सकते हैं कि कृष्ण हमारा ध्यान रखते हुए हमारी रक्षा भी कर रहे हैं। इसके अलावा हमारी आध्यात्मिक प्रगतिके लिये भी हमारे इस प्रकारके अच्छे सम्बन्ध निहायत जरूरी हैं। किसी ट्रैक्टरके साथ तो किसी भी प्रकारके जीवन्त-सम्बन्धका विकसित करना कठिन ही नहीं असम्भव भी है।

गोसंरक्षण-हेतु बनाये गये 'अन्ताराष्ट्रिय गोरक्षण-संघ' के प्रबन्ध-निदेशकका तो यहाँतक कहना है कि 'मैंने स्वयं ट्रैक्टरोंद्वारा खेती की है, इसके एंजिनसे उठनेवाली हृदयविदारक गर्जना तो मेरे कान ही फोड़ देती थी, डीजलसे छोड़ी गयी बदबू भी दम घोंटती थी। वास्तविकता

तो अब यह है कि ट्रैक्टरका विचार आते ही मेरा सिर दर्दसे फटने लगता है। इन सब विकारोंके अलावा ट्रैक्टरमें जो सबसे बुरी बात है, वह है उसपर घंटों बैठे रहकर अपनी हड्डी-हड्डीको चकनाचूर कर लेना, मेरे लिये यह सब मन, मस्तिष्क, आत्मा तथा शरीरको भारी कष्ट देनेवाला अनुभव है। मेरा तो यह साफ-साफ कहना है कि ट्रैक्टरका उपयोग करना यानी सारे शरीर और मन तथा आत्माको ही चकनाचूर कर लेना है। दिनभर कार्य करनेके बाद जब मैं ट्रैक्टरकी सीटपरसे उतरता था तो मुझे लगता था कि जैसे मैं किसी लोहेके जानवरके ऊपर बैठकर अब नीचे उतर रहा हूँ।'

'ट्रैक्टरकी निर्भरता कोई ऐसी निर्भरता नहीं है जिससे किसी प्रकारका आध्यात्मिक लाभ मिले। इसलिये अब तो मैं केवल गीता और व्रज नामवाले दो बैलोंपर निर्भर हूँ। ये दो सशक्त तथा चुस्त-दुरुस्त भूरे रंगके स्विस बैल ही मेरे सहारे हैं और ये दो जीवित हस्तियाँ कृष्णके ही अङ्ग-प्रत्यङ्ग रूप हैं। स्वामी महाराज श्रीभक्तिवेदान्त, जो हमारे आध्यात्मिक गुरु तथा इस्कान (अन्ताराष्ट्रिय कृष्ण-चेतना) नामक अन्ताराष्ट्रिय संगठनके संस्थापक हैं, उन्होंने तो हमें यहाँतक कहा है कि बैल तो मानवमात्रका पिता है, क्योंकि वह मानवमात्र तथा अपने साथी पशुओंके लिये भी खेतोंसे अन्नोत्पादन करता है—उसका अपना वही तरीका है जैसा कि एक पिताका अपने बच्चोंके प्रति है।'

यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि क्या आजकल ट्रैक्टरोंकी अपेक्षा बैलोंसे खेती करना अकुशलताका प्रमाण नहीं है? तो उत्तरमें कहना है कि नहीं भाई—बिलकुल नहीं। सत्य तो यह है कि ट्रैक्टर बनाम बैलोंद्वारा खेती किये जानेपर जितने भी अध्ययन आजतक किये गये हैं, उन्होंने यही सिद्ध किया है कि फसलोंकी हर इकाईपर आनेवाली कीमतोंके आधारपर तो पशुओंद्वारा खेती करना ही फायदेमंद पड़ता है, विशेष कर भारतमें।

यह ठीक है कि एक ३५ हार्सपावरका ट्रैक्टर एक बैलकी जोड़ीकी अपेक्षा दस गुनी जुताई कर सकता है, किंतु ट्रैक्टरके खरीदनेमें बैलोंकी अपेक्षा बीस गुना धन अधिक लगाना पड़ेगा। यदि ट्रैक्टरको एक वर्षमें ९०० घंटोंसे अधिक नहीं चलाया गया तो ट्रैक्टरपर प्रतिघंटेका खर्च बैलोंकी अपेक्षा काफी अधिक आयेगा। इसका अर्थ यही हुआ कि ट्रैक्टर केवल बहुत बड़े-बड़े खेतोंपर ही बैलोंकी अपेक्षा बेहतर कार्य कर सकता है।

आजकी ट्रैक्टर-तकनीकीके द्वारा काम तेजीसे तो किया जा सकता है; परन्तु कृषि-भूमिके लिये इसके परिणाम सुखद नहीं हैं। बैल जो धरतीके साथ सामञ्जस्यपूर्वक कार्य करता है, वह धीरे-धीरे कार्य करता है, किंतु उसके परिणाम आगे चलकर बेहतर सिद्ध होते हैं। बैलकी गति धीमी होनेसे धरतीकी जोती हुई जमीन तथा उसके अन्य प्रतिभाशाली गुण, जो सबके लिये मुफ्तमें प्राप्त होनेवाले वरदान हैं, सभीको मुफ्तमें मिलते रहते हैं। इससे जीवनमें सादगी आती है, मनको शान्ति मिलती है, अतः मनुष्य आध्यात्मिक चिन्तनकी ओर अपना मन अवस्थित कर सकता है।

हर समाजको इस प्रकारकी स्वतन्त्रता है कि वह अपने जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति किस प्रकारसे करे। ट्रैक्टरका उपयोग करनेसे तत्कालका समाधान तो मिल सकता है, जिसे प्रेयस् कहते हैं, किंतु इसके लंबे समयके परिणामों यानी श्रेयस्के बारेमें गम्भीरतासे विचार किया जाना चाहिये। क्या हम यह पसंद करेंगे कि भावी पीढ़ियोंके लिये हम सारे पर्यावरणको ही प्रदूषित करके रख दें? क्या हम धरतीके संतुलनको ही नष्ट करना चाहते हैं? क्या हम यही चाहते हैं कि गायोंके सुन्दर-सुन्दर बछड़े-बछड़ियाँ क़तलघरोंमें क़तल-हेतु भेजे जाते रहें, क्योंकि उनके लिये हमारे पास कोई काम ही नहीं है? क्या हम यह पसंद करेंगे कि जो लोग अच्छे सात्त्विक माध्यमोंसे अपनी रोजी-रोटी कमा लेते थे, अब वे नारकीय परिस्थितियोंकी अनर्थकारी फैक्टरियोंमें भेज दिये जायँ! और वह भी केवल इसीलिये कि अब बैलोंकी जगह ट्रैक्टर्स आ गये हैं। जरा इस परिस्थितिपर गहनतासे सोचिये और विचार कीजिये कि हम क्या चाहते हैं—बैल या ट्रैक्टर।

[अनु०, वी० आर० ठाकुर, एडवोकेट]

हमारा गोधन

[श्रीपरिपूर्णानन्दजी वर्मा]

जिसमें लेशमात्र भी हिंदुत्व है वह अपने देश ही नहीं, संसार भरकी गोमाता तथा गोवंशको पूजनीय, उपासनीय तथा रक्षणीय मानेगा, पर आजकलके युगमें जब धर्म भी आर्थिक तराजूपर तौला जा रहा है, गोभक्त भारतके नये विचारवाले इसका आर्थिक पहलू भी जानना चाहेंगे। हम हिन्दुओंमें कितना पतन होता जा रहा है इसकी प्रत्यक्ष मिसाल तो हिन्दू-मन्दिरोंमें पूजित मूर्तियोंका हिन्दूद्वारा ही चोरी और चुपचाप, चोरीसे विदेशी बाजारमें गैर हिन्दुओंके हाथ बेच देना भी है। हमने स्वयं अपनी विदेश-यात्राओंमें हिन्दू युवकोंको विदेशोंमें गो-मांस खाते देखा है और जब मैंने ऐसोंसे पूछा कि 'इतना अनुचित कार्य क्यों करते हो? तो उत्तर मिला कि 'देशी गाय मना है, विदेशी नहीं।' मैं सर पटककर भी उन्हें समझा न सका। वैसे ही जैसे लन्दनमें एक मुस्लिम भोजनालयमें हमने शुक्रवारके दिन सूअरका मांस बिकते देखकर पूछा कि 'अपने धर्मके विरुद्ध यह निकृष्ट काम क्यों कर रहे हो' तो उत्तर मिला—'यह तो व्यापार है। हम खाते नहीं, खिलाते हैं।' जब मनोवृत्ति इतनी गिर जाय तो आस्था और विश्वास कहाँतक टिक सकेंगे।

भारतमें सभी प्रदेशोंमें गोवधपर प्रतिबन्ध नहीं है। उत्तरप्रदेशमें १९५५ से ही इसकी कानूनन सख्त मनाही है पर पड़ोसी पश्चिम बंगाल हो या सुदूर केरल, वहाँ यह जघन्य प्रथा अभी भी चालू है। उत्तरप्रदेशके बिहारसे सटे नौबतपुर आदि सरहदोंपर नित्य हजारोंकी संख्यामें गाय-बछड़े, बैल छिपकर पश्चिमी बंगाल और फिर उधरसे बांगलादेश तथा पाकिस्तान भेजे जाते हैं। इन सरहदोंपर ऐसे केन्द्र बन गये हैं जहाँ चुपचाप गोहत्या कर मांसके पैकेट भी बाहर जाने लगे हैं। बिहार तथा उत्तरप्रदेशके कई पशु-मेले ऐसे व्यापारके केन्द्र बन रहे हैं। इन मेलोंमें देशी गाय ८००-१००० रुपयेमें बिकती हैं तथा विदेशी बाजारमें ३०,००० से ३५,००० रुपयेतक एकका दाम लगता है। शासनकी सख्तीके बावजूद यह व्यापार चल रहा है। हमारे गोधनका कितना ह्रास हो रहा है, इसका हमें अभी अनुमान भी नहीं है।

केन्द्रीय तथा कम-से-कम ६ प्रादेशिक सरकारें गोवंशकी वृद्धि तथा उनकी नस्लमें सुधारके लिये प्रयत्नशील हैं। १९९०-९१ में देशमें ऐसे १७८ केन्द्र थे, और भी बढ़ रहे हैं, जिनमें गोवंशका कटना मना होनेपर भी चोरी-छिपे गोवध होनेकी भी शिकायत है। पशुधनकी रक्षाके लिये भारतमें १९८४-८५ में १४,९०० पशु-चिकित्सालय थे, १९९१-९२ में इनकी संख्या २०,३१० हो गयी थी। पशु-रक्षणके लिये चल-चिकित्सालयोंकी संख्या भी इसी अवधिमें १८,४०० से बढ़कर १९,३२० हो गयी थी। यद्यपि यह आवश्यकतासे कम संख्या है तथा अनेक प्रदेश पशु-संरक्षणमें जितनी रुचि लेनी चाहिये नहीं ले रहे हैं। फिर भी इस प्रकारके प्रबन्धसे किसानोंको काफी लाभ पहुँच रहा है।

दुग्ध-उत्पादनमें वृद्धिके लिये १९९४ के वर्षमें ही २०० से अधिक दुग्ध-विकास डेयरी सहकारी संस्थाएँ हैं, जो वैज्ञानिक—आधुनिक ढंगसे काम कर रही हैं तथा इनको मिलाकर ३१ दिसम्बर, १९९१ को देशमें दुग्ध-उत्पादन (गोधन) के लिये ६४,२०० सहकारी दुग्ध-विकास केन्द्र थे, जिनके द्वारा देशके ७९ लाख फार्मके किसान-परिवार लाभ उठा रहे थे—जबतक इनकी संख्या ८ गुनी अधिक न हो जायगी, समूचे कृषक-वर्गको लाभ नहीं होगा।

गोधन

१९८७ तकके आँकड़े जो १९९३ में मईके महीनेमें प्रकाशित हुए थे, उसके अनुसार देशमें १९ करोड़ ९७ लाख गाय-बैलकी संख्या थी, भैंसें ७ करोड़ ७० लाख थीं। इस संख्यासे एक बात प्रकट है—१९५१-१९६१ के बीचमें दूध देनेवाली भैंसोंकी संख्या गौसे अधिक हो रही थी जिसमें अब रुकावट आयी है तथा गोवंश बढ़ रहा है। उदाहरणके लिये उत्तरप्रदेशके तीन जिलोंकी मिसाल है—सरकारी आँकड़ेके अनुसार १९६१ में आगरामें २,७४,१४४ गायें तथा ९,१०,२६८ भैंसें थीं, उसी वर्ष

मेरठमें ५,५५,६३७ गौएँ तथा ८,४४,८१० भैंसें तथा लखनऊमें ६,३०,३२८ गौएँ तथा ६,५६,०६७ भैंसें थीं। धीरे-धीरे गोवंशकी वृद्धि होती गयी है। १९८७ में देशमें ४ करोड़ ५० लाख भेड़ें तथा ११ करोड़ २ लाख बकरियाँ थीं। इस संख्यासे प्रकट है कि देशके स्वास्थ्यकी रक्षाके लिये तथा पोषणके लिये असली आधार गौ ही है। भारतमें सबसे अधिक गौ तथा गोवंश उत्तरप्रदेशमें है। १९७८ में कुछ पशु-धन ५,२३,४५,००० था तथा १९८८में ६,००,७५,००० था, जिसमें गोवंशकी स्थिति इस प्रकार थी—

	१९७८	१९८८
गोजातीय	२,५७,५३,०००	२,६३,२३,०००
दूध दे रही गौ	६५,७५,०००	६८,३०,०००
दूध न दे रही	२९,८२,०००	२५,८४,०००

—इसी अवधिमें दूध देनेवाली भैंसोंकी संख्या ७२,१७,००० से बढ़कर ८९,५७,००० हो गयी थी। इस संख्यासे प्रकट है कि हमारे प्रदेशमें, जैसा अन्य प्रदेशोंमें है, गोवंश महिष-कुलसे कहीं कम है। १९८८ में महिष-कुलकी संख्या १,८२,३९,००० थी। इस अवधिके बादके सरकारी आँकड़े अभी प्राप्त नहीं हैं। पर हमें चिन्ता होनी चाहिये कि हमारा गोवंश अभी भी महिष-वंशसे कम क्यों है? दूध देनेवाली भैंसोंकी संख्या १९७८ में ३९,६७,००० तथा १९८८ में ५४,२६,००० थी। गौके दूधसे बढ़कर पोषक तथा पवित्र और कोई दूध नहीं है, यह तो विज्ञानसे सिद्ध है। अत: गोवंशकी बिना आशातीत वृद्धि किये न तो प्रदेशका स्वास्थ्य सुधरेगा, न मस्तिष्कको वह रस मिलेगा जिससे उसकी असली पुष्टि होती है।

गो-रक्षक

गो-रक्षा तथा सेवा आध्यात्मिक विषयसे उठकर शासकीय विषय कौटिल्यके अर्थशास्त्रमें मिलता है, जिसमें 'गो-घातक' को दण्डनीय कहा गया है। सम्राट् अशोकने पशु-हत्याके साथ ही गो-हत्याकी सख्त मनाही की थी। गोवंशकी प्रतिष्ठा तो भारतमें यूनानी नरेश सेल्यूकसने (ईसवी-पूर्व ३००-२८१) भी की थी। उसने अपने सिक्कोंपर सींगवाला बैल बनवा रखा था। गो-रक्षाको देशव्यापी अभियान बनानेका कार्य तो मौर्य साम्राज्यके पतनके बाद शुंग ब्राह्मण शासकोंने अपने ३५ वर्षके शासनमें किया था। पर, नीतिशास्त्रमें भी इसे सम्मिलित करनेका कार्य सातवीं सदीमें शुक्रने शुक्रनीतिमें किया था। भारतमें एकमात्र अकबर महान् ऐसा नरेश था (सन् १५४२-१६०५) जिसने गो-हत्या करनेवालोंको प्राणदण्डकी सजा घोषित कर दी थी और कई लोग इस अपराधमें मारे गये थे। अकबरके हिन्दू राजपूत-पत्नी जोधाबाईके पुत्र तथा दो हिन्दू-क्षत्रियाणियोंके पति जहाँगीरने इस आदेशको रद्द किया था। वह कट्टर हिन्दू-विरोधी था।

राजस्थानके मरुप्रदेशकी अर्थव्यवस्थाका मूलाधार—गाय

[श्रीभँवरलालजी कोठारी]

अनेक विविधताओंको अपनेमें समेटे हुए मरुप्रदेश राजस्थानका अपना एक विशिष्ट स्थान है। यहाँ एक ओर अरावलीकी पहाड़ियाँ हैं, चम्बलकी घाटियाँ हैं, वन हैं और बीहड़ हैं तो दूसरी ओर थार मरुस्थलका वीरान क्षेत्र है, रेतीले धोरोंकी धरती है, लूणी-जैसी सूखी नदियाँ हैं, पानीको तरसते पेड़-पौधे हैं। पर इस बाह्य विषमतामें भी यहाँ एक आन्तरिक समता व्याप्त है। मरु-क्षेत्रमें पानीका अभाव है, पर यहाँकी दूध-घीकी मन्दाकिनीका अजस्र प्रवाह अनेक कस्बों, नगरों और महानगरोंको भी आप्लावित करता है। अक्सर बरसात नहीं होती, पर मामूली बूँदा-बाँदीसे ही शुष्क रेतीली धरतीमें 'मतीरे'-जैसा मिसरी-घुला हुआ पौष्टिक पानीदार फल उपजता है। 'सेवण', 'धामण'-जैसा पौष्टिक चारा, 'खेजड़ी', 'बोरटी'-जैसे सर्वोपयोगी कल्पतरु-सदृश चारा-वृक्ष और 'राठी', 'थारपारकर' नागौरी-

जैसी दुधार कामधेनुके समान उत्कृष्ट गौकी नस्लें इस प्रदेशको प्रकृतिकी अनूठी देन हैं।

'गोधन' आज भी हमारे गाँव और गरीबका जीवनाधार है। यह ऊर्जा, रासायनिक उर्वरक, जहरीले कीटनाशक तथा पर्यावरण-प्रदूषणके विश्वव्यापी संकटसे मुक्ति दिलानेवाला अमोघ उपाय है और स्वावलम्बन, स्वदेशी और विकेन्द्रित अर्थव्यवस्थाकी कुंजी है। ग्रामोदय तथा सर्वोदयकी लक्ष्य-प्राप्ति एवं ग्राम-राज एवं राम-राजकी स्थापनाके स्वप्नको साकार करनेवाली संजीवनी-शक्ति 'गोधन' ही है।

इस यथार्थको व्यवहारमें बदलनेके लिये 'गो-ग्राम'-विकास-योजना' के कुछ बिन्दु कार्य-योजनाके रूपमें यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं—

१-गोहत्या-बंदी प्रभावी कानूनके साथ-साथ गोपालन एवं गोसंवर्धन-हेतु प्रत्येक ग्राम-पंचायत, तहसील, जिला और प्रान्त-स्तरपर चार-पाँच सौ एकड़से लेकर चार-पाँच हजार हैक्टेयरतके गोसदन जलस्रोतोंके निकट सक्रिय गोशालाओं एवं 'गो-ग्राम-विकास-परिषदों' की देख-रेखमें संस्थापित तथा संचारित किये जायँ, जिनमें—

(१) पंचायत, तहसील, जिला, प्रान्त अथवा क्षेत्रके बूढ़े, बीमार गोवंशके संरक्षण एवं प्रजनन-योग्य गोवंशके संवर्धनके अलग-अलग नस्लोंके अनुसार विभाग हो।

(२) चरागाहोंका विकास, चारा-वृक्षारोपण एवं हरे चारेका उत्पादन, भण्डारण तथा सुलभ मूल्योंपर गोपालकोंको वितरणकी समुचित व्यवस्था हो।

(३) आस-पासके कस्बों, नगरोंमें गोरस-भंडारोंके मार्फत दूध-वितरणकी और घी, मक्खन, पनीर आदि गोरस-निर्मित पदार्थोंके विकेन्द्रित स्तरपर उत्पादन-वितरणकी अनुकूल सुविधाएँ हों।

(४) गोबर-गोमूत्रसे वायोगैस, ऊर्जा, जैविक उर्वरक, रासायनिक निषाक्ततासे मुक्त कीटनाशक तथा शुद्ध आयुर्वेदिक ओषधियाँ, बीजोंको उपचारित और संस्कारित करनेकी विधियों आदिपर वैज्ञानिक पद्धतिसे कार्य, शोध, अनुसंधान-प्रयोग, परीक्षण आदि कृषि-विश्वविद्यालयों तथा पशुपालन महाविद्यालयोंको साथ जोड़कर प्रोत्साहित करनेका विभिन्न स्तरोंपर उपक्रम हो।

२-राज्य-स्तरपर भारतीय देशी अच्छी नस्लके बछड़े, बछड़ियाँ, साँड़, गायें, बैल आदिकी उपलब्धि सुलभ कराने तथा नस्ल बिगाड़नेवाले नकारा, वृद्ध, बीमार साँड़ोंको प्रजनन-कार्यसे हटानेकी व्यवस्था की जाय।

३-गायके अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र एवं ग्राम-आधारित विकेन्द्रित स्वरोजगार-मूलक स्वावलम्बी व्यवस्थापर महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयोंमें अध्ययन, अध्यापन तथा शोध-अनुसंधानका समुचित प्रबन्ध कराया जाय।

४-साथ ही पश्चिमी राजस्थानके थार मरुस्थलीय जैसलमेर जिलेके सीमाञ्चल-क्षेत्रमें सेवण-जैसी पौष्टिक घासके हजारों किलोमीटरमें फैले प्रकृति-प्रदत्त चरागाहमें ४-५ हजार हैक्टेयर भूमि राज्य-सरकारसे प्राप्त कर वहाँ उपलब्ध राजस्थान नहरके जलसे छिड़काव-पद्धतिद्वारा सेवण-चरागाहका विकास किया जाय। चारा-वृक्षोंका व्यापक वृक्षारोपण, चारा-भण्डारण, सुलभ मूल्योंमें चारा-उपलब्धि एवं गोपालन, गो-संवर्धनकी आधुनिकतम सुविधाओंसे युक्त गो-बस्तियाँ बसायी जायँ।

इस हेतु प्रान्तीय स्तरपर 'गो-रक्षण-संवर्धन-बोर्ड' अथवा 'गो-ग्राम-विकास-परिषद्' या निगमका गठन अत्यावश्यक है। जिसमें सरकारी अधिकारियोंके साथ गोसेवा, विकास, शोध, अनुसंधान आदि कार्योंमें संलग्न स्वयंसेवी संस्थाओंके प्रतिनिधियों अथवा विशेषज्ञोंको प्रमुखतासे स्थान दिया जाय।

यह एक व्यापक प्रयोगात्मक कार्य होगा। इससे हजारों गायोंके लिये गोसदनोंकी एवं नस्ल सुधारनेकी समुचित व्यवस्था हो सकेगी। गोरस-गोमयके अधिकतम उपयोगसे गोधनपर आधारित प्रदूषण-मुक्त, स्वावलम्बी, स्वदेशी अर्थव्यवस्थाको मूर्तरूप देने और गोपालनको लाभकारी उद्योग बनाकर, बिना अधिक लागतके लाखों लोगोंको गोबर-गोमूत्रके आधारपर स्वरोजगार, रासायनिक विषाक्ततासे युक्त प्रदूषणसे मुक्ति मिलेगी और गौपर आधारित सात्त्विक संस्कृतिकी पुनः स्थापना की जा सकेगी। साथ ही थार मरुक्षेत्रका रूपान्तर कर सीमाञ्चलकी सुरक्षा भी की जा सकेगी।

गाय एवं गोवंश

[श्रीदीनानाथजी झुनझुनवाला]

यह हार्दिक प्रसन्नताकी बात है कि गीताप्रेसद्वारा वर्ष १९९५ ई० में 'गोसेवा-अङ्क' का प्रकाशन किया जा रहा है। प्रसन्नता इसलिये है कि आज हमारे देशमें गोसेवा, गोपूजा, गोरक्षा आदिपर पुनर्विचार करनेकी आवश्यकता है। आज गाय, गोवंश एवं गोदुग्ध-उत्पादन-लाभ आदिपर भारतमें ही नहीं अपितु विश्वमें इतने शोध-कार्य हो रहे हैं कि इसके महत्त्वका प्रकाशन आवश्यक हो गया है।

गाय, गङ्गा, गीता एवं गायत्री हमारे देशमें प्राचीन कालसे ही सभ्यता एवं संस्कृतिके प्रतीक रहे हैं। ये चारों चीजें हमारे तन-मनमें बसी हैं। गायका दूध हमारे तन-मनको पुष्ट करता है, गङ्गा हमारे तन-मनको निर्मल करती है, गीता हमें सोद्देश्य एवं सार्थक जीवन जीनेकी कला बताती है, गायत्री-मन्त्र सूर्यकी उपासनाका मन्त्र है और भगवान् भास्कर ही जीवमात्रके जीवनके स्रोत हैं।

हमारे देशकी सभ्यता एवं संस्कृतिसे गाय क्यों जुड़ी है इसपर विचार करनेकी आवश्यकता है। आजके शिक्षित वर्गको केवल श्रद्धा-विश्वासकी बात समझमें नहीं आती। उसे तार्किक ढंगसे गायकी उपयोगिता बतानेसे समझमें आयेगी। हमारे शास्त्रकारोंने हर उपयोगी चीजको धार्मिक कहा है। तार्किक दृष्टिसे गायके महत्त्वको समझनेके लिये हमें देखना है कि समाजमें गायका योगदान क्या है? गाय क्या खाकर हमें क्या देती है!

दुनियामें गाय ही एक ऐसा प्राणी है, जिसकी सभी चीजें उपयोगी हैं। गायका दूध, गोबर, मूत्र सभी लाभकारी हैं। ये उपयोगी चीजें हमें तब सुलभ होती हैं जब गाय उन चीजोंको खाती है, जिनका उपयोग मनुष्य नहीं करता। जैसे चावल, गेहूँ इंसान खाता है, परंतु गाय उसका भूसा खाती है। इंसान तेलका सेवन करता है, जबकि गाय खली खाती है। मनुष्य दाल खाता है, परंतु दालका छिलका एवं चूनी गाय खाती है। इस प्रकार तार्किक दृष्टिसे देखें तो समाजमें वही आदमी महान् होता है जो समाजसे लेता कम तथा देता ज्यादा है। ठीक इसी प्रकारसे गाय उन चीजोंको ग्रहण करती है जो मनुष्यके लिये सेवन योग्य नहीं है और बदलेमें अमृत-तुल्य दूध देती है। गायको माताकी श्रेणीमें इसलिये भी रखा गया कि माँका दूध तो मनुष्य एक-दो वर्ष ही पी सकता है, जबकि गायके दूधका सेवन जीवनपर्यन्त करता है।

आज विज्ञानकी उपलब्धि आश्चर्यजनक है। नित्य नये आविष्कार हो रहे हैं। विज्ञानने हमें बहुतसे भौतिक साधन सुलभ कराये हैं। यदि विज्ञान ऐसा यन्त्र बना देता जिसमें एक ओरसे भूसा-खली डाली जाती और दूसरी ओरसे दूध निकलता तो गायका महत्त्व कम हो जाता। क्या विज्ञान ऐसा कर सकता है? ईश्वरने कैसी आश्चर्यजनक अनुकम्पा मनुष्य-मात्रपर कर रखी है कि लोक-कल्याणके लिये ऐसा जीव हमें दिया जो बेकार एवं अनुपयोगी पदार्थका सेवन कर सबसे उत्तम अमृत-तुल्य पदार्थ—दूध हमें सुलभ कराता है।

विज्ञानने हमें रासायनिक खाद दी। इस रासायनिक खादके कारण जमीनकी उर्वरा-शक्ति कमजोर होने लगी एवं ऊसर होनेके स्पष्ट प्रमाण मिलने लगे। अब वैज्ञानिकोंको गोबरकी खादकी याद आयी। आज विज्ञान भी इस बातको स्वीकार करता है कि गोबरकी खादका प्रयोग जमीनकी उर्वराशक्तिको बनाये रखता है तथा जिस जमीनमें ऊसर होनेके संकेत दीख रहे हों उन्हें भी उर्वर बनाये रखनेके लिये गोबरकी खाद ही सर्वोत्तम है।

गायका गोबर हमें पवित्रता प्रदान करता है। आयुर्वेदमें पञ्चगव्यका माहात्म्य दिया गया है। हर प्रकारके प्रायश्चित्तमें पञ्चगव्यके सेवनका विधान है तथा धार्मिक कृत्यमें पञ्चामृतका प्रयोग होता है। आयुर्वेदके अनुसार पञ्चगव्यके नियमित सेवनसे शरीरमें व्याप्त मन्द विषका प्रभाव, विषैली ओषधियोंके प्रयोगके कारण गिरता हुआ स्वास्थ्य निश्चित रूपसे ठीक हो जाता है। आयुर्वेदके अनुसार पञ्चामृतके नियमित और नियमपूर्वक सेवनसे कम या अधिक रक्तचापकी बीमारी नहीं होती। हृदय ठीक गतिसे कार्य करता है एवं

पाचन-शक्ति ठीक रहती है। स्नायु-दौर्बल्य तथा स्नायु-सम्बन्धी रोग नहीं होते। संक्रामक रोगोंसे भी रक्षा करनेकी इसमें असाधारण क्षमता है। शरीरकी रोग-प्रतिरोधक शक्तिको बढ़ाकर यह मनुष्यको स्वस्थ रखनेमें पूर्ण सक्षम है।

पूजा-स्थलको गोबरसे लीपनेका विधान है। विज्ञानने यह प्रमाणित किया है कि गोबर-लेपनके उपरान्त वह स्थल पवित्र हो गया और भूमिके विकार नष्ट हो गये। ऐसे भी प्रमाण मिले हैं कि गोमूत्रके प्रयोगसे शाक-सब्जीमें कीड़े-मकोड़े नहीं लगते और गोमूत्रके प्रयोगसे उत्पादित शाक-सब्जी किसी भी प्रकारसे हानिकारक नहीं होती। कारण, रासायनिक दवाओंके प्रयोगसे शाक-सब्जीके स्वास्थ्यपर हानिकारक असर होनेके स्पष्ट प्रमाण मिले हैं। यही कारण है कि विदेशोंमें शाक-सब्जीका विक्रय जहाँ भी होता है, वहाँ स्पष्ट अक्षरोंमें लिखा होता है कि इसमें रासायनिक दवाओंका प्रयोग किया गया है। बिना रासायनिक दवाओंके प्रयोगवाली सब्जी कम-से-कम डेढ़े दाममें ऊँचे भावसे बिकती है।

आजका शिक्षित समाज भले ही धार्मिक मान्यताओंको पूरी तरह स्वीकार न करे, परंतु उसके व्यावहारिक पक्षको तो उसे स्वीकार करना ही होगा। गाय न केवल जीवित अवस्थामें ही वरन् मरनेके बाद भी उसके हर अङ्ग उपयोगी हैं। चमड़ेसे जूते, सींगसे कई प्रकारके खिलौने, हड्डीसे खाद आदि कई उपयोगी चीजें बनती हैं।

गायका बछड़ा हमारी कृषिका प्रमुख अङ्ग है। आज भी हल-बैलसे खेती होती है। खेतकी जुताईसे लेकर बैलका गोबर एवं मूत्रतक खेतीके काम आता है। इस प्रकार गायकी महान् उपयोगिताके कारण ही वह हमारे देशमें हमारी सभ्यता एवं संस्कृतिकी प्रतीक हो गयी। आज आवश्यकता है गोशालाओंके सुचारु रूपसे संचालनकी, गोरक्षा करनेकी और गोहत्या बंद करनेकी। इस पुनीत कार्यके लिये समाजके स्वयंसेवी आगे आयें और सभ्यता एवं संस्कृतिके प्रतीक गाय एवं गोवंशकी रक्षा करें।

गोशालाएँ जितनी ही समृद्ध होंगी मनुष्य भी उतना ही पुष्ट होगा। गाय एवं गोशालासे मनुष्यकी पुष्टता जुड़ी है। बच्चोंको कुपोषणसे बचानेके लिये एवं नीरोग तथा बलिष्ठ मनुष्य तैयार करनेके लिये गोसेवाकी सबसे अधिक आवश्यकता है।

गोमय पदार्थोंका आधुनिक उपयोग और उसकी सुरक्षा

[डॉ० श्रीराज गोस्वामी, डी० लिट्०]

भारतमें ८९ % गाय एवं ६९ % भैंसका उपयोग दूधके लिये होता है। पर पर्याप्त संरक्षणके अभावमें ५८% गायें ही दूध देती हैं। देखा गया है कि गायके दूध एवं घीमें जीवनके सभी आवश्यक खाद्य तत्त्व पाये जाते हैं। रूसके विश्वविख्यात शिरोविचके शोधोंसे यह निष्कर्ष निकला है कि गायके दूधमें रेडियो-विकिरणसे सुरक्षाकी सर्वाधिक क्षमता है। जिन घरोंमें गायके गोबरसे लीपा जाता है, उनपर रेडियो-विकिरणका प्रभाव नहीं होता। यदि घरकी छतपर गायका गोबर लीप दिया जाय तो घरके अंदर रेडिएशन (विकिरण) का घुसना कठिन हो जाता है। यदि बिजली चमक कर गोबरमें गिर जाय तो उसका दूषित प्रभाव वहींपर समाप्त हो जाता है। यही नहीं यदि गोघृत आगमें डालकर धुआँ किया जाय तो वायुमण्डलमें रेडिएशनका प्रभाव बहुत कम हो जायगा। गोघृतका हवन किया जाय तो कार्बनडाईऑक्साइडके बढ़ते खतरेसे बचा जा सकता है।

कृषि भारतीय जीवनकी रीढ़ है और कृषिकी रीढ़ है वृषभ। विडम्बना यह है कि यह रीढ़ आज बड़ी मात्रामें अपने मूलके साथ कट रही है। भूमाताके लिये यदि गोमाताकी रक्षा नहीं हुई तो हमारी कृषि नष्ट हो जायगी, जिससे भारतवर्षकी मूल व्यवस्था एवं समाज-रचना बिखर जायगी। 'वृक्ष लगाओ' आन्दोलनको आज प्रोत्साहन मिला है। भूमिके संरक्षणमें वृक्षोंकी महत्ता तो आजके लोगोंके

समझमें आ रही है; किंतु गाय और उससे प्राप्त होनेवाले पदार्थोंके अप्रतिम लाभकी ठीक जानकारी न होनेके कारण आज उसकी सर्वथा उपेक्षा हो रही है। यदि केवल खादको ही लीजिये तो रासायनिक खादोंसे किस प्रकार भूमिकी उर्वराशक्ति समाप्त होती जा रही है, इसपर लोगोंका ध्यान नहीं है।

पौधोंको एक यूनिट नाइट्रोजनके स्थानपर ५० % यूनिट कार्बनकी आवश्यकता है। रासायनिक खादकी अपेक्षा सेन्द्रिय खादके उपयोगसे दो गुनासे भी अधिक कार्बन उपलब्ध होता है। यदि ठीक पद्धतिसे कम्पोस्ट खाद तैयार की जाय तो भारतके खाद्यकी समीक्षा हल हो सकती है। इस तरह खादके लिये जो पैसे विदेशोंको भेजने पड़ते हैं, वह नहीं भेजने पड़ेंगे। नॅडेप कम्पोस्ट-पद्धतिसे विकसित सेन्द्रिय खाद चार गुना प्रभावशाली है। यह कृषि-भूमिको सभी पोषक तत्त्व देकर उर्वरता और उत्पादन बनाये रखती है।

गोबर-गैस प्लांटकी योजना बड़े रूपसे हाथमें लें तो ईंधनके लिये जो पेट्रोलियम पदार्थ विदेशोंसे आयात करने पड़ते हैं, वह नहीं करने होंगे। इससे देशको करोड़ों रुपयेकी बचत होगी। गाँवोंमें रोजगार प्राप्त होगा, जिससे अभावग्रस्त लाखों भारतीयोंको नवजीवन प्राप्त होगा।

देशकी कुल ६० % करोड़ एकड़ कृषि-भूमिको प्रतिवर्ष २५० करोड़ टन सेन्द्रिय खादकी आवश्यकता है। देशमें प्रतिवर्ष ५० करोड़ टन गोबर निर्यात होता है, जिसमें ४०% यानी १५ करोड़ टनसे जो खाद बनती है, उससे शहरी कम्पोस्टको छोड़कर ८.७ करोड़ टन खाद तैयार होती है। यह हमारी आवश्यकताकी केवल ३७ % है। दूसरी ओर रासायनिक फर्टिलाइजरोंपर आज अरबों रुपया व्यय हो रहा है, इसीके साथ भूमिकी उर्वरा-शक्ति नष्ट होनेका संकट भी बना हुआ है।

डॉ० अग्रवालका कहना है कि पीले रंगका कैरोटीन नामक द्रव्य केवल गायके घीमें है। कैरोटीन तत्त्वकी कमीसे ही मनुष्योंको मुँह, फेफड़ों, मूत्राशयोंकी झिल्लीमें और अन्य प्रकारके कैंसर हो जाते हैं। कैरोटीन तत्त्व शरीरमें पहुँचकर विटामिन 'ए' तैयार करता है। यह त्वचा और आँखोंके लिये आवश्यक है। इससे रतौंधी रोग दूर होता है। यदि गायके चारेमें अधिक हरा चारा दिया जाय तो बहुत अधिक मात्रामें विटामिन 'ए' प्राप्त किया जा सकता है।

गायका गोबर एवं गोमूत्र, खुजली एवं दाद आदि त्वचा-रोगोंसे बचाता है। गोबरसे लीपे स्थानपर मक्खी नहीं आती। गोमूत्र औषध है। जिगर तथा तिल्ली आदि रोगोंके निदानमें भी साधक है। गोमूत्र कीटनाशक होनेके कारण फसलपर लगे कीटोंको भी छिड़काव करनेपर नष्ट कर देता है। वस्तुतः गो अमृतकुण्ड है। पञ्चगव्य-सेवनसे मनुष्य सदैव निरोगी जीवन व्यतीत कर सकता है। रक्तके विषाणुओंपर पञ्चगव्यके प्रयोगसे विजय प्राप्त की जा सकती है। सारांश यह है कि गौ, गङ्गा, गायत्री एवं गोपालके चार 'ग' कारसे युक्त सिद्ध मन्त्र सब मनोरथोंको सिद्ध करनेवाला है।

रासायनिक खाद एवं कीटनाशक पेस्टीसाइडकी बुराइयाँ सामने आयी हैं, जमीनें खराब होने लगी हैं, खाद्यान्न विषाक्त होने लगे हैं, प्रदूषण बढ़ रहा है, मानव-जीवन खतरेमें आ गया है। किसान एवं देशके हितचिन्तक चिन्तित हैं। ऐसे समयमें तारणहार केवल सेन्द्रिय खाद ही है। गैस प्लांटके शोधके कारण गोबरसे खाद भी मिल जाता है और खाना भी पक जाता है। कुल मिलाकर गोबरकी उपयोगिता और उसका मूल्य इतना बढ़ गया है कि बूढ़ा पशु भी भार-रूप नहीं रहा। जितना चारा खाता है, उससे अधिक मूल्यका खाद दे देता है। आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक सभी दृष्टियोंसे गाय, बैल उपयोगी ही नहीं अनिवार्य हो गये हैं।

ब्राह्मणकी गौ चुरानेवाले, बाँझ गायको हलमें जोतनेके लिये नाथनेवाले और पशुओंका हरण करनेवालेके लिये राजाको चाहिये कि उसका आधा पैर कटवा दे। (मनु० ८। ३२५)

गोबरमें लक्ष्मीजीका निवास

एक बार मनोहर रूपधारिणी लक्ष्मीजीने गौओंके समूहमें प्रवेश किया। उनके सौन्दर्यको देखकर गौओंको बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने उनका परिचय पूछा।

लक्ष्मीजीने कहा—'गौओ! तुम्हारा कल्याण हो। इस जगत्में सब लोग मुझे लक्ष्मी कहते हैं। सारा जगत् मुझे चाहता है। मैंने दैत्योंको छोड़ दिया, इससे वे नष्ट हो गये। इन्द्र आदि देवताओंको आश्रय दिया, तो वे सुख भोग रहे हैं। देवताओं और ऋषियोंको मेरी ही शरणमें आनेसे सिद्धि मिलती है। जिसके शरीरमें मैं प्रवेश नहीं करती, उसका नाश हो जाता है। धर्म, अर्थ और काम—ये मेरे ही सहयोगसे सुख देनेवाले हो सकते हैं। मेरा ऐसा प्रभाव है। अब मैं तुम्हारे शरीरमें सदा निवास करना चाहती हूँ। इसके लिये स्वयं तुम्हारे पास आकर प्रार्थना करती हूँ। तुमलोग मेरा आश्रय ग्रहण करो और श्रीसम्पन्न हो जाओ।'

गौओंने कहा—'देवि! बात तो ठीक है, पर तुम बड़ी चञ्चला हो। कहीं भी जमकर रहती नहीं। फिर तुम्हारा सम्बन्ध भी बहुतोंके साथ है। इसलिये हमको तुम्हारी इच्छा नहीं है। तुम्हारा कल्याण हो। हमारा शरीर तो स्वभावसे ही हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर है। हमें तुमसे कोई काम नहीं है। तुम जहाँ इच्छा हो, जा सकती हो। तुमने हमसे बातचीत की, इसीसे हम अपनेको कृतार्थ मानती हैं।'

लक्ष्मीजीने कहा—'गौओ! तुम यह कह क्या रही हो? मैं बड़ी दुर्लभ हूँ और परम सती हूँ, पर तुम मुझे स्वीकार नहीं करतीं! आज मुझे यह पता लगा कि 'बिना बुलाये किसीके पास जानेसे अनादर होता है'—यह कहावत सत्य है। उत्तम व्रतचारिणी धेनुओ! देवता, दानव, गन्धर्व, पिशाच, नाग, मनुष्य और राक्षस बड़ी उग्र तपस्या करनेपर कहीं मेरी सेवाका सौभाग्य प्राप्त करते हैं। तुम मेरे इस प्रभावपर ध्यान दो और मुझे स्वीकार करो। देखो, इस चराचर जगत्में मेरा अपमान कोई भी नहीं करता।'

गौओंने कहा—'देवि! हम तुम्हारा अपमान नहीं करतीं। हम तो केवल त्याग कर रही हैं, सो भी इसलिये कि तुम्हारा चित्त चञ्चल है। तुम कहीं स्थिर होकर रहती नहीं। फिर हमलोगोंका शरीर तो स्वभावसे सुन्दर है। अतएव तुम जहाँ जाना चाहो, चली जाओ।'

लक्ष्मीजीने कहा—'गौओ! तुम दूसरोंको आदर देनेवाली हो। मुझको यों त्याग दोगी, तो फिर संसारमें सर्वत्र मेरा अनादर होने लगेगा। मैं तुम्हारी शरणमें आयी हूँ, निर्दोष हूँ और तुम्हारी सेविका हूँ। यह जानकर मेरी रक्षा करो। मुझे अपनाओ। तुम महान् सौभाग्यशालिनी, सदा सबका कल्याण करनेवाली, सबको शरण देनेवाली, पुण्यमयी, पवित्र और सौभाग्यवती हो। मुझे बतलाओ मैं तुम्हारे शरीरके किस भागमें रहूँ?'

गौओंने कहा—'यशस्विनी! हमें तुम्हारा सम्मान अवश्य करना चाहिये। अच्छा, तुम हमारे गोबर और मूत्रमें निवास करो। हमारी ये दोनों चीजें बड़ी पवित्र हैं।'

लक्ष्मीजीने कहा—'सुखदायिनी गौओ! तुमलोगोंने मुझपर बड़ा अनुग्रह किया। मेरा मान रख लिया। तुम्हारा कल्याण हो। मैं ऐसा ही करूँगी।' गौओंके साथ इस प्रकार प्रतिज्ञा करके देखते-ही-देखते लक्ष्मीजी वहाँसे अन्तर्धान हो गयीं (महा०, अनु०, अध्याय ८२)।

मांस-भक्षणके दोष

(१) मांसभक्षण भगवत्प्राप्तिमें बाधक है, (२) मांसभक्षणसे ईश्वरकी अप्रसन्नता होती है, (३) मांसभक्षण महापाप है, (४) मांसभक्षणसे परलोकमें दुःख प्राप्त होता है, (५) मांसभक्षण मनुष्यके लिये प्रकृतिविरुद्ध है, (६) मांसभक्षणसे मनुष्य पशुत्वको प्राप्त होता है, (७) मांसभक्षण मनुष्यकी अनधिकार चेष्टा है, (८) मांसभक्षण घोर निर्दयता है, (९) मांसभक्षणसे स्वास्थ्यका नाश होता है और (१०) मांसभक्षण शास्त्र-निन्दित है।

(श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

स्वस्थ जीवनके लिये गौका योगदान

आयुर्वेदशास्त्रमें गौद्वारा चिकित्साकी महत्त्वपूर्ण बातें

[डॉ० श्रीअखिलानन्दजी पाण्डेय, आयुर्वेदाचार्य]

आयुर्वेद अत्यन्त प्राचीन शास्त्र है। विशेषकर यह अथर्ववेदमें विस्तारसे वर्णित है। आयुर्वेद शाश्वत एवं अनादि है।

आयुर्वेदकी दृष्टिसे गौ हमारी माता है। भारतीय संस्कृतिकी रीढ़ है। इसका स्थान सर्वोपरि है। सृष्टिकालसे ही गोमहिमा सुविख्यात है।

अथर्ववेदमें गौमें देवताओंका निवास माना गया है। वेदने गायके रूपको सम्पूर्ण विश्व-ब्रह्माण्डका रूप माना है—

एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम्।

पुराकालमें ऋषिकुल और गुरुकुलके आश्रममें गायें होती थीं। ब्रह्मचारियोंको गोमाताकी सेवामें कठोर परिश्रम करना पड़ता था। गौ माताकी सेवामें उन्हें व्यायामसे अधिक परिश्रम पड़ता था। जिससे स्वास्थ्य बहुत ही उत्तम होता था। किसी प्रकारकी व्याधि नहीं होने पाती थी। शरीर पूर्णरूपसे नीरोग रहता था।

गोदुग्ध—विश्वमें गोदुग्धके सदृश पौष्टिक आहार अन्य कोई है ही नहीं; इसे अमृत कहा गया है। बाल्यावस्थामें दुग्ध तीन सालतक बाल्यजीवनका मुख्य आधार है। मातृविहीन बालक दुग्धपानसे जीवित रहता है। जन्मसे मृत्युपर्यन्त किसी भी अवस्थामें दुग्ध निषिद्ध नहीं है। स्वास्थ्यकी दृष्टिसे दुग्धको पूर्णाहार माना गया है। शरीर-संवर्धन-हेतु इसमें प्रत्येक तत्त्व विद्यमान हैं। मानवकी शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक शक्ति बढ़ानेवाला गोदुग्ध ही है। प्राचीन कालमें ऋषि-मुनि गोदुग्ध पीकर तृप्त होते, तपस्या करते तथा गोसेवामें रत रहते थे। सुश्रुतसंहितामें दुग्धको सभी प्राणियोंका आहार बताया गया है। चरक-संहितामें गोदुग्धको जीवनी-शक्तियोंमें सर्वश्रेष्ठ रसायन कहा गया है।

प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तं रसायनम्॥

सुश्रुतने भी गोदुग्धको जीवनीय कहा है। (सुश्रुत०, अ० ४५)

गोदुग्ध जीवनके लिये उपयोगी, जराव्याधिनाशक रसायन, रोग और वृद्धावस्थाको नष्ट करनेवाला, क्षतक्षीण-रोगियोंके लिये लाभकर, बुद्धिवर्धक, बलवर्धक, दुग्धवर्धक तथा किंचित् दस्तावर है और क्लम (थकावट), चक्कर आना, मद, अलक्ष्मी, श्वास, कास (खाँसी), अधिक प्यास लगना, भूख, पुराना ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त—इन रोगोंको नष्ट करता है। दुग्ध आयु स्थिर रखता है, आयुको बढ़ाता है।

गोदधि—यह उत्तम, बलकारक, पाकमें स्वादिष्ट, रुचिकारक, पवित्र, दीपन, स्निग्ध, पौष्टिक और वातनाशक है। सब प्रकारके दहियोंमें गोदधि अधिक गुणदायक है—

उक्तं दध्नामशेषाणां मध्ये गव्यं गुणाधिकम्॥

(भावप्र०, पूर्व० १५। १०)

गोतक्र—गायका मट्ठा—यह त्रिदोषनाशक, पथ्योंमें उत्तम, दीपन, रुचिकारक, बुद्धिजनक, बवासीर और उदर-विकारनाशक है।

गायका मक्खन—यह हितकारी, वृष्य, वर्णकारक, बलकारक, अग्निदीपक, ग्राही, वात-पित्त-रक्तविकार, क्षय, बवासीर, अर्दित और कासको नष्ट करता है। बालकोंके लिये अमृततुल्य लाभकारी है।

गोघृत—यह कान्ति और स्मृतिदायक, बलकारक, मेध्य, पुष्टिकारक, वात-कफ-नाशक, श्रमनिवारक, पित्तनाशक, हृद्य, अग्निदीपक, पाकमें मधुर, वृष्य, शरीरको स्थिर रखनेवाला, हव्यतम, बहुत गुणोंवाला है और भाग्यसे ही इसकी प्राप्ति होती है।

गोमूत्र एवं गोमय—यह कटु, तीक्ष्ण और उष्ण होता है तथा क्षारयुक्त होनेसे वातवर्धक नहीं होता। यह लघु,

अग्निदीपक, मेध्य, पित्तजनक तथा कफ-वात-नाशक होता है। शूल, गुल्म, उदररोग, आनाह, विरेचन-कर्म, आस्थापन, वस्ति आदि व्याधियोंमें गोमूत्रका प्रयोग करना चाहिये।

आयुर्वेदशास्त्रानुसार सम्यक्-रूपसे गोमूत्र-सेवनसे कुष्ठादि अन्य चर्मरोग नष्ट हो जाते हैं। गोमयको स्वच्छता प्रदान करनेवाला पवित्र माना गया है। अधिकांश भारतीय जन अपने घरोंको गोबरसे लीपकर शुद्ध करते हैं। गोबर कीटाणुनाशक होता है। शरीर-शुद्धिकरण-हेतु पञ्चगव्यका प्रयोग होता है।

आयुर्वेदकी दृष्टिसे गौ तथा गव्य पदार्थोंकी अद्वितीय महिमा है। गोसेवासे सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। गोसेवासे समस्त पुण्य अविलम्ब प्राप्त होते हैं। आयुर्वेदके उत्थानके लिये गोरक्षण अति आवश्यक है। इससे पीडित रोगियोंके रोगका निवारण होगा, भारतीय संस्कृतिका पुनरुत्थान होगा और जनता स्वास्थ्य-लाभ कर सकेगी।

गोषडङ्गका चिकित्सामें उपयोग

(डॉ० श्रीसीतारामजी जायसवाल, आयुर्वेद-शास्त्री)

गायके दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्रका एक निश्चित अनुपातमें मिश्रण पञ्चगव्य कहलाता है। ये पाँचों तथा गायसे प्राप्त होनेवाली गोरोचना—ये छः पदार्थ गोषडङ्ग कहलाते हैं। आयुर्वेदिक ग्रन्थोंमें इनके कोटिशः उपयोग निर्दिष्ट हैं। यहाँ संक्षेपमें कुछका निर्देश किया जाता है—

(१) गो-दधिका उपयोग

दधि (दही) उष्ण, अग्निको प्रदीप्त करनेवाला, स्निग्ध, कुछ कषाय, गुरु तथा विपाकमें अम्ल होता है। मूत्रकृच्छ्र, प्रतिश्याय, विषमज्वर, अतिसार, अरुचि तथा कृशतामें इसका उपयोग प्रशस्त है। यह बल एवं शुक्रको बढ़ाता है (भावप्रकाश, पूर्व० १५। १-२)।

१-लघु गङ्गाधर चूर्ण—नागरमोथा, इन्द्रजौ, बेलकी मज्जा (गूदी), लोध्र, मोचरस एवं धायका फूल—इन छः द्रव्योंका चूर्ण बनाकर दधिके साथ गुड़ मिलाकर पीनेसे यह सभी प्रकारके अतिसार एवं प्रवाहिकाको रोकनेमें सर्वोत्तम है। (आरोग्य-प्रकाश)

२-अजमोदादिचूर्ण—अजमोदा, मोचरस, शुण्ठी, धायका पुष्प—इन चार द्रव्योंको पीसकर चूर्ण बनाकर गौके दहीमें चूर्णको अच्छी तरह फेंटकर सेवन करनेसे वह गङ्गाकी धाराके समान प्रवाहित अतिसारको भी रोकनेमें समर्थ है। (शार्ङ्गधरसंहिता)

३-तक्रारिष्ट—अजवाइन, आमला, काली मिर्च—प्रत्येक १२-१२ तोला, पाँचों नमक—प्रत्येक ४ तोला इनका चूर्ण बनाकर मिट्टीके एक प्यालेमें डालकर उसमें तक्र ६ सेर ६ छटाँक २ तोला डाल दें और पात्रका मुख बंद कर संधानके निमित्त एक माहके लिये रख दें। बादमें छानकर सेवन करें।

मात्रा और अनुपात—डेढ़ तोलासे ढाई तोला प्रातः-सायं जल मिलाकर लें।

गुण और उपयोग—यह उत्तम दीपन तथा पाचन करनेवाला है तथा शोथ, गुल्म, अर्श, कृमि, प्रमेह, अतिसार और उदर-रोगको नष्ट करता है। (भावप्रकाश)

(२) गो-दुग्धकी विशेषताएँ

अन्य दुग्धोंकी अपेक्षा गौका दूध विशेष रूपसे रस एवं विपाकमें मधुर, शीतल, दुग्धको बढ़ानेवाला, स्निग्ध वात-पित्तनाशक तथा रक्तविकारनाशक, गुरु और बुढ़ापेके समस्त रोगोंका शामक है, यह सर्वदा सेवन-योग्य है। काली गौका दुग्ध वातनाशक तथा अधिक गुणवान् होता है। पीली (लाल) गौका दुग्ध वात तथा पित्त-शामक होता है। श्वेत गौका दूध कफकारक तथा गुरु होता है और लाल एवं चितकबरी गौका दूध वातनाशक होता है।

गौका धारोष्ण दुग्ध बलकारक, लघु, शीत, अमृतके समान, अग्निदीपक, त्रिदोषशामक होता है। प्रातःकाल पिया हुआ दूध वृष्य, बृंहण तथा अग्निदीपक होता है, दोपहरमें

पिया हुआ दूध बलवर्धक, कफनाशक, पित्तनाशक होता है और रात्रिमें पिया हुआ दूध बालकके शरीरको बढ़ाता है, क्षयका नाश करता है, बूढ़ोंके शरीरमें तेज उत्पन्न करता है। पथ्य है, अनेक विकारोंको शान्त करता है। इसलिये दूध प्रतिदिन पीना चाहिये। (भावप्रकाश, पूर्वखण्ड १४)

पञ्चमूली पय—छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, गोखरू—इन क्षुद्रपञ्चमूलसे यथाविधि साधित दूधको पीनेसे ज्वरका रोगी, कास, श्वास, शिर:शूल, पार्श्वशूल, प्रतिश्याय (जुकाम)—इनसे छूट जाता है। क्षीरपाकका विधान यह है—

यदि प्रमाणका निर्देशन न हो तो सामान्यत: औषधसे आठ गुना दूध और दूधसे चार गुना जल डालकर पकाना चाहिये। जब जल उड़ जाय और दूध रह जाय तो उतार ले और छान ले। यह दूधको सिद्ध करनेकी विधि है। इस परिभाषाके अनुसार क्षुद्रपञ्चमूल २ तोला, दूध १६ तोला, जल ६४ तोला लेकर पकावे। संस्कृत होनेपर छान ले। वात-पित्तका नाशक होनेसे यहाँ स्वल्प पञ्चमूल लिया है। (चरकसंहिता)

त्रिकण्टकादिपय—गोखरू, बलामूल, छोटी कटेरी, गुड़, सोंठ—इनसे साधित गौका दूध मलबन्ध और मूत्रबन्धको नष्ट करता है। शोथ और ज्वरको हरता है। इसमें गुड़को छोड़कर शेष द्रव्योंके कल्कसे यथाविधि दूधको सिद्ध करना चाहिये, पश्चात् वस्त्रसे छानकर गुड़ डालकर रोगी पीवे। (चरकसंहिता)

(३) गौका घृत

गौका घृत विशेष रूपसे नेत्रके लिये उपयोगी है। यह वृष्य, अग्निदीपक, रस एवं विपाकमें मधुर, शीत तथा तीनों दोषोंका शामक है और मेधा, लावण्य, कान्ति, ओज तथा तेजकी वृद्धि करनेवाला, अलक्ष्मी, पाप तथा भूतबाधा-नाशक है। गुरु, बलवर्धक, पवित्र, आयु बढ़ानेवाला, कल्याणकारक, रसायन, उत्तम गंधवाला, देखनेमें मनोहर तथा सब घृतोंमें अधिक बलवान् है। (भावप्रकाश, पूर्व० १८। ४—६)

हिंग्वादि घृत—हींग, सरसों, बालवच, सोंठ, मरीच एवं पीपल २-२ कर्ष, गोघृत १ प्रस्थ तथा गोमूत्र ४ प्रस्थ मिलाकर घृत सिद्ध करे। इसका पान, नस्य एवं अभ्यङ्ग करनेसे देवग्रहसे मुक्ति प्राप्त होती है। (अष्टाङ्ग-हृदय अ० ५)

पञ्चगव्य घृत—गोबरका स्वरस, गोदुग्ध, गौका दही, गोमूत्र तथा गोघृतको मिलाकर सिद्ध करे। यह घृत अपस्मार ज्वर, उन्माद तथा कामलाको शान्त करता है।

पञ्चकोलादि घृत—पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्ता (चित्रकमूल) तथा सोंठ और जौखार १-१ पल, गोघृत १ प्रस्थ (सेर) तथा गोदुग्ध एक सेर मन्द अग्निपर पका ले और फिर छान ले। यह घृत रसवाही स्रोतोंको शुद्ध करता है और गुल्म-ज्वर, उदर-रोग, ग्रहणी-रोग, पीनस, श्वास-कास, मन्दाग्नि, शोथ तथा उद्गारको नष्ट करता है। इस घृतका नाम 'षट्पल घृत' भी है। (अष्टाङ्ग-हृदय राजयक्ष्मादि चिकित्सा)

(४) गोमय (पुरीष)

सामान्यतया गोमय कटु, उष्ण, वीर्यवर्धक, त्रिदोष-शामक तथा कुष्ठघ्न, छर्दिनिग्रहण, रक्तशोधक, श्वासघ्न और विषघ्न है।

उपयोगिता—विषोंमें गोमय-स्वरसका लेप एवं अंजन किया जाता है। गायका गोबर तिमिर-रोगमें नस्य-रूपमें प्रयुक्त होता है। बिजौरा नीबूकी जड़, घी और मन:शिलाको गौके गोबरके रसमें पीसकर लेप करनेसे मुखकी कान्ति बढ़ती है तथा पिटिका (बालतोड़) और व्यङ्गकी बढ़ती कालिमापर इसका लेप करनेसे लाभ होता है।

(५) गोमूत्र

गौका मूत्र कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, खारा, तिक्त, कषाय, लघु, अग्निदीपक, बुद्धिवर्धक, पित्तकारक तथा वात-कफ-नाशक है और शूल, गुल्म, उदररोग, आनाह, कण्डु, नेत्र-रोग, मुख-रोग, किलास, वातरोग, वस्तिरोग, कुष्ठ, कास, श्वास, शोथ, कामला तथा पाण्डुरोगको नष्ट करता है। केवल गोमूत्र पीनेसे कण्डु, किलासरोग (श्वित्र) , शूल, मुखरोग, नेत्ररोग, गुल्म, अतिसार, वातव्याधि, मूत्राघात, कास, कुष्ठ, उदररोग, कृमिरोग तथा पाण्डुरोगका नाश हो जाता है। यह विशेष रूपसे प्लीहोदर, श्वास, कास, शोथ, मलरोध, शूल, गुल्म, आनाह, कामला तथा पाण्डुरोगको नष्ट करता है। यह कषाय तथा तीक्ष्ण है, कानमें डालनेसे कर्ण-शूलको नष्ट करता है। (भावप्रकाश, पूर्व० १९। १—६)

गोमूत्रासव—गौका मूत्र १६ सेर, चित्तामूल, सोंठ, मरिच, पीपलका चूर्ण, मूत्रका दशमांश तथा मधु १ तोला मिलाकर घृतस्निग्ध भाण्डमें धर दे, १५ दिन पश्चात् संधान हो जानेपर श्वित्ररोगी पीये और सब आहार-विहार आदि कुष्ठ रोगीके समान करे।

हरताल १ शाण (२४ रत्ती), बाकुचीके बीज ४ शाण (१२ माशा) को गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे श्वेत कुष्ठ नष्ट होता है। (बृहन्निघण्टुरत्नाकर)

प्रबोधाञ्जन—शिरीषके बीज, पिप्पली, कृष्णमरिच, सेंधा नमक, लहसुन, मन:शिला और वच—इन द्रव्योंको समान मात्रामें लेकर गोमूत्रमें पीस ले और वर्तिका बना ले। इस वर्तिकाको पानीमें घिसकर नेत्रोंमें अञ्जन करनेसे बेहोशीका रोग नष्ट होता है। खदिरकी छाल, नीम और जामुनकी छाल अथवा कुरैयाकी छाल तथा सैन्धवको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे अरुषिका (सिरका छाजन) रोग नष्ट होता है। (शार्ङ्गधरसंहिता)

(६) गोरोचना

गोरोचना रसमें तिक्त, वीर्यमें शीत, मङ्गलकारी, कान्तिकारक और विष, निर्धनता (दारिद्र्य), ग्रहदोष, उन्माद, गर्भस्राव-दोष तथा रक्त-रोग इत्यादिका नाशक है।

गोरोचना गौ तथा बैलके पित्ताशयके पित्त नामक द्रव्य पदार्थका सुखाया हुआ द्रव्य है। यह बालकोंमें श्वास या हब्बा-डब्बा या पसली चलना नामक रोगकी परमौषध है। मात्रा आधासे एक रत्ती दूध आदिमें घोलकर पिलाया जाता है।

स्वर्णक्षीरा (सत्यानासी—भड़भाँड़) की जड़, कासीस, वायविडङ्ग, मैनसिल, गोरोचना और सैन्धव—इन छ: द्रव्योंको समान मात्रामें लेकर जलमें पीसकर लेप करनेसे श्वित्र (श्वेतकुष्ठ-फुलबहरी) (White leprosy Leucoderma) रोग नष्ट होता है। (वृन्दमाधव एवं चक्रदत्त)

मैनसिल, भुना तूतिया, कस्तूरी, जटामासी, श्वेत चन्दन तथा गोरोचना १-१ तोला और सबसे दशमांश कर्पूर मिलाकर पीसा गया अञ्जन 'अशीति गुण' कहलाता है अर्थात् इस अञ्जनमें ८० गुण हैं। (अष्टाङ्ग-हृदय नेत्र-रोग)

इस प्रकार गोदुग्ध तथा गोमय आदि पदार्थोंके बहुतसे उपयोग हैं। किन्हीं योग्य वैद्य आदिके उचित परामर्शपूर्वक इनका यथोचित सेवन तथा पथ्य-सेवनसे अवश्य ही विलक्षण लाभ होता है। न केवल काय-चिकित्सा अपितु अनेकों मन-बुद्धि-सम्बन्धी रोगोंके भी ये परमौषध हैं।

छुई-मुई काया—दूधकी माया

[श्रीमती सुनीता मुखर्जी]

भारतवासियोंको इस बातका सबक सीखना चाहिये कि विदेशोंमें सभी जगह गोदुग्धकी डेयरीका विकास हुआ है, परंतु हमारे यहाँ गाय बेचकर भैंस खरीदी जा रही है जिसके असरसे नयी पीढ़ी आलसी और मंद-बुद्धि होती जा रही है। गायका तो मूत्र भी अमृत-समान है। शरीर सुडौल, सुन्दर और चुस्त बनाना हो तो गायका दूध ही पीये। यहाँ संक्षेपमें दुग्ध-चिकित्साके कुछ प्रयोग दिये जा रहे हैं।

जिगरमें विकार—पाचन-संस्थानके सभी दोष गोदुग्धसे दूर किये जा सकते हैं। भारतकी देखा-देखी रूसने दूध-चिकित्सा करके सारे यूरोपमें इसका प्रचार किया है। 'कुछ मत खाइये और केवल दूध पीते रहिये । शहदका जी भरके प्रयोग करें। जिगर तिल्ली, गुर्दे आदि सही काम करने लगेंगे।'

जुकाम—कुछ डॉक्टर जुकाम-नजलामें दूधकी मनाही कर देते हैं, जबकि जुकाममें पेटको स्वच्छ रखनेका काम दूध आसानीसे कर देता है। जुकाममें दूषित पानी नाकसे बहने दें और दूधमें शहद घोलकर पीते रहें। भोजन सादा करें, आँतों और नस-नाड़ियोंकी पूरी सफाई कर डालें। तीसरे दिनसे सब विकार अपने-आप दूर होने लगेंगे। गोलियाँ खाकर जुकाम हर्गिज न रोके, नहीं तो दूषित पानी नाकसे बहनेकी बजाय खूनमें जहरकी तरह घुल जायगा। बुखार अलग तड़पायेगा।

डिप्थीरिया—आम बोलीमें इसे पसली चलना या हब्बा-डब्बा भी कहा जाता है। बच्चोंका यह रोग जानलेवा भी होता है। इससे बच्चेका दम घुटता रहता है और आँखें बाहर निकल आती हैं। बुखार जोरोंका रहता है। २ चम्मच गुनगुने दूधमें $\frac{१}{२}$ चम्मच घी और एक चम्मच शहद मिलाकर बच्चेको चटाना शुरू कर दें। गले और सीनेकी सफाई होते ही बच्चा सुखकी साँस लेने लगेगा। घीसे दुगुनी मात्रामें शहद डालें। गायका गुनगुना घी बच्चेके सीने और गलेपर भी मलें। इससे कफ पिघलकर हट जायगी और श्वास-नली सहज हो जायगी।

तपेदिक—जो लोग तपेदिकके रोगीको दूध पीनेसे रोकते हैं वास्तवमें वे दूधकी शक्तिको नहीं पहचानते। यूनान, रूस, फ्रांस, अमेरिका, ब्रिटेन, अरब और स्विटजरलैण्डके विख्यात डॉक्टरोंने प्रयोगोंके बाद साबित कर दिया है कि दूधसे तपेदिकका भी सही इलाज किया जा सकता है। ५० ग्राम मिश्री और १० ग्राम पिपली पीस-छानकर २५० ग्राम दूधमें उतना ही पानी मिलाकर काढ़ा तैयार कर लें। दूध बच जानेपर इसे उतार लें और १०-१५ ग्राम गोघृतमें २०-२५ ग्राम शहद घोल लें। इसे इतना फेटें कि दूधपर झाग पैदा हो जाय। इसको चूसते रहें और मनमें विश्वास पैदा करें कि आप अब स्वस्थ होनेकी राहपर चल पड़े हैं। फेफड़ोंमें छेद भी होंगे तो धीरे-धीर भरने लगेंगे।

थकावट—चाहे कोई ५० कोस पैदल चलकर आया हो और उसका रोम-रोम दुख रहा हो तो उसके गाढ़े दूधमें ढेर सारी मलाई डालकर पीनेको दें। इसके साथ ही परातमें गुनगुना पानी डालकर २ चम्मच नमक डालें। इस पानीमें घुटनोंतक पाँव और टाँगें मल-मलकर धोयें। सारी थकान निकल जायगी।

धतूरेका विष—गायके दूधमें गायका ही घी मिलाकर पिलाते रहें। गोघृत-जैसा विषनाशक अमृत शायद ही कोई दूसरा हो।

नकसीर—एक कप उबले दूधमें पुराने-से-पुराना घी डालें और कुछ पल नसवारकी तरह सूँघें। जब दूध गुनगुना रह जाय तो मिश्री घोलकर पियें। इससे रक्तका उबाल शान्त रहेगा और नकसीर भी नहीं फूटेगी। यदि एक मूली निराहार पेट खाते रहें और दूधमें गाजरका रस पीते रहें तो नकसीर फूटनेकी नौबत नहीं आयेगी।

नाभि फूलना—बच्चेकी नाभि फूलने लगे तो हर कोई गोघृत ही चुपड़ा करता है। आप गर्म घीमें हल्दीकी चुटकी भुरककर रूईका फाहा तह कर लें और सुहाता गर्म रह जानेपर नाभिपर रखकर ऊपरसे पट्टी लपेट दें। नाभि सिकुड़कर सहज-रूपमें आ जायगी।

नासूर—यह हड्डीतक पहुँच जानेवाला फोड़ा है। जिसके मवादकी बदबूसे डॉक्टर और सगे-सम्बन्धी भी रोगीसे दूर रहना चाहते हैं। पुराने गायके घीद्वारा नासूर जल्द सूखेगा। पहले नीम-पत्तोंके काढ़ेसे फोड़ा साफ करें। उसके बाद कपड़ेकी बत्ती बनाकर गोघृतमें तर करके नासूरमें डाल दें। दिनमें ३ बार नहीं तो २ बार बत्ती बदल दें। डेढ़-दो महीनोंमें फोड़ेकी जड़ें सूख जायँगी और घाव भरने लगेगा। दूधमें घी डालकर पिलाते भी रहें, ताकि शरीर निर्विष रहे।

पेटमें कीड़े—कड़वी कसैली दवाएँ खानेके बजाय दूधमें शहद मिलाकर पीना शुरू कर दें। इससे धीरे-धीरे पुराने कीड़े मर जायँगे नये पैदा नहीं होंगे।

छाले फूलना—छाले चाहे गर्मीके उबालसे पड़े हों या आगसे जलनेपर—दोनों स्थितिमें गो-दुग्धकी मलाई या घी लेप दीजिये, जलन भी शान्त होगी, छाले बैठनेपर घाव भी भर जायँगे।

एक कप पानीमें २ चम्मच दूध डालकर रोज चेहरेपर मल लिया करें, मुखड़ेपरसे छावँ हट जायगी और चेहरा भी दमकने लगेगा। दूधकी मलाई लगानेसे ओठ या गाल फटनेकी नौबत ही नहीं आयेगी। तेज बुखारमें पुराने घीकी मालिश करनेसे भी शरीर स्वस्थ रहता है।

आज भारतका मुख्य प्रश्न है पर्याप्त परिमाणमें दूधका मिलना और गो-वंशको सुधारना।—कर्नल मैक-करिसन

गोमूत्र तथा गोबरसे रोग-निवारण

[वैद्य श्रीबालकृष्णजी गोस्वामी, आयुर्वेदाचार्य]

सनातन धर्ममें गायको माताके समान सम्मानजनक स्थान प्राप्त है। गाय सदैव कल्याणकारिणी तथा पुरुषार्थ-चतुष्टयकी सिद्धि प्रदान करनेवाली है। मानवजातिकी समृद्धि गायकी समृद्धिके साथ जुड़ी हुई है। गोमाताका हमारे उत्तम स्वस्थ्यसे गहरा सम्बन्ध है। गाय आधिदैविक, आधिदैहिक एवं आधिभौतिक तीनों तापोंका नाश करनेमें सक्षम है। इसी कारण अमृततुल्य दूध, दही, घी, गोमूत्र, गोमय तथा गोरोचना—जैसी अमूल्य वस्तुएँ प्रदान करनेवाली गायको शास्त्रोंमें सर्वसुखप्रदा कहा गया है।

गोमूत्र

गोमूत्र मनुष्यजाति तथा वनस्पति-जगत्‌को प्राप्त होनेवाला दुर्लभ वरदान है। यह धर्मानुमोदित, प्राकृतिक, सहज प्राप्य, हानिरहित, कल्याणकारी एवं आरोग्यरक्षक रसायन है। स्वस्थ व्यक्तिके स्वास्थ्यरक्षण तथा आतुरके विकार-प्रशमन-हेतु आयुर्वेदमें गोमूत्रको दिव्यौषधि माना गया है। आयुर्वेदाचार्योंके मतसे गोमूत्र कटु-तिक्त तथा कषाय-रसयुक्त, तीक्ष्ण, उष्ण, क्षार, लघु, अग्निदीपक, मेधाके लिये हितकर, पित्तकारक तथा कफ और वात-नाशक है। यह शूल, गुल्म, उदररोग, अफरा, खुजली, नेत्ररोग, मुखरोग, कुष्ठ, वात, आम, मूत्राशयके रोग, खाँसी श्वास, शोध, कामला तथा पाण्डुरोगको नष्ट करनेवाला होता है। सभी मूत्रोंमें गोमूत्र श्रेष्ठ है। आयुर्वेदमें जहाँ 'मूत्र' शब्दका उल्लेख है वहाँ गोमूत्र ही ग्राह्य है।

स्वर्ण, लौह आदि धातुओं तथा वत्सनाभ, धत्तूर तथा कुचला-जैसे विषद्रव्योंको गोमूत्रसे शुद्ध करनेका विधान है। गोमूत्रद्वारा शुद्धीकरण होनेपर द्रव्य दोषरहित होकर अधिक गुणशाली तथा शरीरके अनुकूल हो जाता है।

आधुनिक दृष्टिसे गोमूत्रमें पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नेशियम, क्लोराइड, यूरिया, फास्फेट, अमोनिया, क्रिएटिनिन आदि विभिन्न पोषक क्षार विद्यमान रहते हैं।

रोग-निवारण-हेतु विभिन्न विधियोंद्वारा गोमूत्रका सेवन किया जाता है, जिनमें पान करना, मालिश, पट्टी रखना, नस्य, एनिमा और गर्म सेक करना प्रमुख है। पीने-हेतु ताजा तथा मालिश-हेतु २ से ७ दिन पुराना गोमूत्र उत्तम रहता है। बच्चोंको ५-५ ग्राम तथा बड़ोंको रोगानुसार १० से ३० ग्रामतककी मात्रामें दिनमें दो बार गोमूत्रका पान करना चाहिये। इसके सेवनकालमें मिर्च-मसाले, गरिष्ठ भोजन, तंबाकू तथा मादक पदार्थोंका त्याग करना आवश्यक है। व्याधिविनाशार्थ गोमूत्रका प्रयोग निम्न रोगोंमें विशेष उल्लेखनीय है—

(१) **यकृत्‌के रोग**—जिगरका बढ़ना, यकृत्‌की सूजन तथा तिल्लीके रोगोंमें गोमूत्रका सेवन अमोघ ओषधि है। पुनर्नवाके क्वाथमें समान भाग गोमूत्र मिलाकर पीनेसे यकृत्‌की शोध तथा विकृतिका शमन होता है। इस अवस्थामें गोमूत्रका सेक भी लाभप्रद है। गर्म गोमूत्रमें कपड़ा भिगोकर प्रभावित स्थानपर सेक करना चाहिये।

(२) **विबंध**—जीर्ण विबंध या कब्ज होनेपर गोमूत्रका पान करना चाहये। प्रातः-सायं ३-३ ग्राम हरड़के चूर्णके साथ इसका सेवन करनेसे पुराना कब्ज नष्ट हो जाता है।

(३) **बवासीर**—अर्श अत्यन्त कष्टदायक तथा कृच्छ्रसाध्य रोग है। गोमूत्रमें कलमीशोरा २-२ ग्राम मिलाकर पीनेसे बवासीरमें बहुत लाभ होता है। गर्म गोमूत्रका स्थानीय सेक भी फायदा पहुँचाता है।

(४) **जलोदर**—पेटमें पानी भर जानेपर गोमूत्रका सेवन हितकारी है। ५०-५० ग्राम गोमूत्रमें दो-दो ग्राम यवक्षार मिलाकर पीते रहनेसे कुछ सप्ताहोंमें पेटका पानी कम हो जाता है। जलोदरके रोगीको गोदुग्धका ही पान करवाना चाहिये।

(५) **उदावर्त**—उदरमें वायु अधिक बननेसे यह विकार उत्पन्न होता है। प्रातःकाल आधा कप गोमूत्रमें काला नमक तथा नीबूका रस मिलाकर पीनेसे गैसरोगसे कुछ दिनोंमें ही छुटकारा मिल जाता है। इस व्याधिमें गोमूत्रको पकाकर प्राप्त किया गया क्षार भी गुणकारी है। भोजनके प्रथम ग्रासमें आधा चम्मच गोमूत्र-क्षार तथा एक

चम्मच गोघृतको मिलाकर भक्षण करनेसे वायु नहीं बनती।

(६) मोटापा—यह शरीरके लिये अति कष्टदायक तथा बहुतसे रोगोंको आमन्त्रित करनेवाला विकार है। स्थूलतासे मुक्ति पाने-हेतु आधा गिलास ताजा पानीमें चार चम्मच गोमूत्र, दो चम्मच शहद तथा एक चम्मच नीबूका रस मिलाकर नित्य पीना चाहिये। इससे शरीरकी अतिरिक्त चर्बी समाप्त होकर देह-सौन्दर्य बना रहता है।

(७) चर्मरोग—खाज, खुजली, कुष्ठ आदि विभिन्न चर्मरोगोंके निवारणहेतु गोमूत्र रामबाण ओषधि है। नीम-गिलोयके क्वाथके साथ दोनों समय गोमूत्रका सेवन करनेसे रक्तदोष-जन्य चर्मरोग नष्ट होते हैं। जीरेको महीन पीसकर गोमूत्रसे संयुक्त कर लेप करने या गोमूत्रकी मालिश करनेसे चमड़ी सुवर्ण तथा रोगरहित हो जाती है।

(८) पुराना जुकाम—विजातीय तत्त्वोंके प्रति असहिष्णुतासे बार-बार जुकाम होता रहता है। नासारन्ध्रोंमें सूजन स्थायी हो जानेसे पीनस बन जाता है। इस अवस्थामें गोमूत्रका मुखद्वारा सेवन तथा नस्य लेनेसे रोगमुक्ति हो जाती है। फूली हुई फिटकरीका चौथाई चम्मच चूर्ण आधा कप गोमूत्रमें मिलाकर पीनेसे जुकाम ठीक हो जाता है। यह प्रयोग श्वास रोगको भी नष्ट करनेमें समर्थ है।

(९) शोथ—शरीरकी धातुपात-क्रियामें विषमता होनेसे शोथ उत्पन्न होता है। पुनर्नवाष्टक क्वाथके साथ गोमूत्रका सेवन शोथको दूर करता है। इस रोगमें घी तथा नमकका प्रयोग नहीं करना चाहिये। शोथपर गोमूत्रका मर्दन भी लाभकारी सिद्ध हुआ है।

(१०) उदरमें कृमि—इस रोगके होनेपर आधा चम्मच अजवायनके चूर्णके साथ चार चम्मच गोमूत्रका एक सप्ताहतक सेवन करना चाहिये। बच्चोंको इसकी आधी मात्रा पर्याप्त है।

(११) संधिवात—जोड़ोंका नया तथा पुराना दर्द बहुत कष्टकारक होता है। महारास्नादि क्वाथके साथ गोमूत्र मिलाकर पीनेसे यह रोग नष्ट हो जाता है। सर्दियोंमें सोंठके १-१ ग्राम चूर्णसे भी इसका सेवन किया जा सकता है। दर्दके स्थानपर गर्म गोमूत्रका सेक भी करना चाहिये।

(१२) हृदयरोग—गोमूत्रमें स्थित विभिन्न खनिज पदार्थ हृदयहेतु रसायनका कार्य करते हैं। इसके सेवनसे रक्तका प्रवाह नियमित तथा पर्याप्त मात्रामें होता रहता है। गोमूत्रका नित्य सेवन हृदयाघातसे शरीरकी रक्षा करता है।

(१३) कफ-वृद्धि—सीमासे अधिक बढ़े हुए कफका नाश करने-हेतु गोमूत्र प्रभावशाली ओषधि है। इसका सेवन करनेसे विभिन्न कफज-विकार यथा—तन्द्रा, आलस्य, शरीर-गौरव, मुखका मीठा प्रतीत होना, मुखस्राव, अजीर्ण तथा गलेमें कफका लेप रहना आदि नष्ट होते हैं।

(१४) नासूर—इसे नाड़ीव्रण भी कहते हैं। इस रोगकी जड़ गहरी होती है तथा शल्यक्रिया करनी पड़ती है। गोमूत्रका सेवन इस व्याधिको समूल नष्ट करनेकी क्षमता रखता है। प्रात:-सायं ४-४ चम्मच गोमूत्रके पीने तथा प्रभावित स्थलपर गोमूत्रकी पट्टी रखनेसे एक-दो माहमें रोग-मुक्ति हो जाती है।

(१५) कोलस्टेरोलका बढ़ना—कोलस्टेरोल एक वसामय द्रव्य है, जिसकी रक्तमें सामान्यसे अधिक मात्रा होनेपर विभिन्न विकारोंकी उत्पत्ति होती है। गोमूत्रका २-२ चम्मचकी मात्रामें सुबह-शाम सेवन करनेसे बढ़ा हुआ कोलस्टेरोल कम हो जाता है।

इस प्रकार गोमूत्रका सेवन बहुत-सी व्याधियोंका प्रशमन करता है। स्वस्थ व्यक्तिका स्वास्थ्य-रक्षण करने तथा उसे रोगोंसे बचाने-हेतु भी इसका सेवन किया जाता है। राम-वनवासके समय भरत १४ वर्षतक इसी कारण स्वस्थ रहकर आध्यात्मिक उन्नति करते रहे, क्योंकि वे अन्नके साथ गोमूत्रका सेवन करते थे—

गोमूत्रयावकं श्रुत्वा भ्रातरं वल्कलाम्बरम्॥

(श्रीमद्भा० ९। १०। ३४)

गोबर

भारतीय संस्कृतिमें पवित्रीकरण-हेतु विभिन्न अवसरोंपर गोबरकी उपयोगिता प्रतिपादित की गयी है। सिरसे पाँवतक गोबर लगाकर स्नान करते समय इस मन्त्रके बोलनेका विधान है—

अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां वने वने।
तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम्॥
तन्मे रोगांश्च शोकांश्च नुद गोमय सर्वदा।

गोबर पोषण, शोधक, दुर्गन्धनाशक, सारक, शोषक, बलवर्धक तथा कान्तिदायक है। अमरीकी डॉ० मैकफर्सनके अनुसार गोबरके समान सुलभ कीटाणुनाशक द्रव्य दूसरा नहीं है। रूसी वैज्ञानिकोंके अनुसार आणविक विकिरणका प्रतिकार करनेमें गोबरसे पुती दीवारें पूर्ण सक्षम हैं। भोजनका आवश्यक तत्त्व विटामिन बी-१२ शाकाहारी भोजनमें नहींके बराबर होता है। गायकी बड़ी आँतमें इसकी उत्पत्ति प्रचुर मात्रामें होती है पर वहाँ इसका आचूषण नहीं हो पाता, अत: यह विटामिन गोबरके साथ बाहर निकल जाता है। प्राचीन ऋषि-मुनि गोबरके सेवनसे पर्याप्त विटामिन बी-१२ प्राप्तकर स्वास्थ्य तथा दीर्घायु प्राप्त करते थे।

गोबरके मुखद्वारा सेवन तथा लेपनसे निम्न व्याधियाँ नष्ट होती हैं—

(१) **हैजा**—कीटाणु-विशेषके द्वारा यह रोग जनपदोद्ध्वंसके रूपमें फैसला है। शुद्ध पानीमें गोबर घोलकर पीनेसे इस रोगसे बचाव होता है। मद्रासके डॉ० किंगने गोबरकी, हैजेके कीटाणुओंको मारनेकी शक्ति देखकर दूषित जलको गोबर मिलाकर शुद्ध करनेकी सलाह दी है।

(२) **मलेरिया**—गोबरका सेवन करनेसे शरीरमें प्रविष्ट हुए मलेरियाके कीटाणुओंका नाश हो जाता है। इटलीके वैज्ञानिक जी० ई० बिर्गेडने सिद्ध किया है कि गोबरसे मलेरियाके कीटाणु मरते हैं।

(३) **खुजली**—खाज, खुजली तथा दादका निवारण करने-हेतु गोबरका प्रयोग भारतमें आदिकालसे किया जा रहा है। जलमें घोलकर गोबर पीने तथा गोबरको प्रभावित भागपर मर्दन कर गर्म पानीसे स्नान करनेसे बहुतसे चर्मरोग नष्ट हो जाते हैं।

(४) **अग्निदग्ध**—आगसे जल जानेपर गोबरका लेपन रामबाण औषध है। ताजा गोबरका बार-बार लेप करते हुए उसे ठंडे पानीसे धोते रहना चाहिये। यह व्रणरोपण तथा कीटाणुनाशक है।

(५) **सर्पदंश**—विषधर साँप, बिच्छू या अन्य जीवके काटनेपर रोगीको गोबर पिलाने तथा शरीरपर गोबरका लेप करनेसे विष नष्ट हो जाता है। अति विषाक्तताकी अवस्थामें गोबरका सेवन मस्तिष्क तथा हृदयको सुरक्षित रखता है।

(६) **दन्तरोग**—गोबरके उपलेको जलाकर पानी डालकर ठंडा करें। तदनन्तर उसे सुखाकर बारीक पीसकर शीशीमें रखें। इस गोबरकी राखका मंजन करनेपर पायरिया, मसूड़ोंसे खून गिरना, दन्तकृमि तथा दाँतोंके अन्य रोगोंका भी क्षय होता है।

आयुर्वेदीय ग्रन्थोंमें वर्णित पञ्चगव्य-घृतका चिकित्साकी दृष्टिसे बहुत महत्त्व है। इसके निर्माणमें ताजा गोबरका रस तथा गायका ही मूत्र, दूध, दही और घी प्रयुक्त होता है। पञ्चगव्य-घृतके सेवनसे उन्माद, अपस्मार, शोथ, उदररोग, बवासीर, भगंदर, कामला, विषमज्वर तथा गुल्मका निवारण होता है। सर्पदंशके विषको नष्ट करने-हेतु यह उत्तम औषध है। चिन्ता, विषाद आदि मनोविकारोंको दूर कर पञ्चगव्य-घृत स्नायुतन्त्रको परिपुष्ट बनाता है।

मांसका त्याग श्रेयस्कर है

'हमें उन वस्तुओंका अनुसरण करना चाहिये, जिनसे हमें शान्ति मिल सकती हो और जिनसे हम दूसरोंकी उन्नति कर सकते हों।'

मांसके लिये ईश्वरकी बनायी हुई सृष्टिका संहार नहीं करना चाहिये।

मांस खाना, मदिरा पीना या अन्य मानवताकी अवनति, अपमान और निर्बलतामें सहायक होनेवाली चीजोंको सर्वथा त्यागना ही श्रेयस्कर है। (रोमान्स १६। १९—२१)

गो-मूत्रकी तुलनामें कोई महौषधि नहीं

[श्रीरामेश्वरजी पोद्दार]

वर्तमान समयमें करोड़ों रुपये दवाओं, डॉक्टरों और अस्पतालोंमें खर्च हो रहे हैं, फिर भी रोग और रोगियोंकी संख्या बराबर बढ़ रही है। मानव-समाज शारीरिक व्याधियोंसे ऊब गया है। बहुतसे गरीब परिवार दवा और डॉक्टरोंके पीछे अपना धन भी खो चुके हैं; परंतु शरीरसे नीरोग नहीं हुए। गाँवोंकी गरीब जनता धनहीनताके कारण चिकित्सा करानेमें असमर्थ है।

हमारा प्राचीन साहित्य गो-महिमासे भरा हुआ है। विज्ञान गोमूत्र और गोबरके गुणोंको अब समझने लगा है। जबकि हमारे देशवासी इनका प्रयोग हजारों वर्षसे करते आ रहे हैं।

आयुर्वेदमें अनेक रोगोंपर गोमूत्र और गोबरके प्रयोगका उल्लेख है। धर्मग्रन्थोंमें गायको कामधेनु कहा गया है तथा उसकी पाँचों चीजें—दूध, दही, घृत, मूत्र और गोबरको बहुत पवित्र और गुणकारी बताया गया है।

गोमूत्र सर्वरोग-नाशक होनेके कारण इसके सेवन-कालमें शरीरका रोग ढीला होकर, आँतों (मल-मार्गों) से निकलने लगता है। इसलिये आवश्यक परहेजके साथ चिकित्सा चलानेपर किसी एक रोगका नहीं, बल्कि सारे शरीरका इलाज हो जाता है। इसकी विधि अत्यन्त सरल एवं शीघ्र लाभ पहुँचानेवाली है।

आयुर्वेदके प्राचीन आचार्योंने गोमूत्र और गोबरका उपयोग औषधिके रूपमें किया था और इसे बहुत लाभदायक पाया था। शरीरकी रक्षाके लिये आवश्यक क्षार-लवणादिकी कमीसे होनेवाले जितने भी रोग हैं गोमूत्रके सेवनसे दूर हो जाते हैं।

सभी प्रकारके मूत्रोंमें गोमूत्र ही अधिक गुणयुक्त माना गया है। गोमूत्रके प्रयोगसे सूजन शीघ्र ही नष्ट होती है। कुष्ठ-निवारणके लिये गोमूत्र परम औषधि है। गोमूत्र पीनेपर उदरके सभी रोग नष्ट होते हैं। यकृत् और प्लीहाके बढ़नेपर गोमूत्र पीने और सेंकनेसे लाभ होता है। ओकोदशालिका (स्नान-गृह) में चालनीके नीचे बालकको बैठाकर चालनीके छिद्रोंसे गोमूत्र डालकर तथा मिट्टी और राखद्वारा रगड़कर स्नान करानेसे बालकके चर्मरोग आदि नष्ट हो जाते हैं। गोमूत्रके साथ पुराना गुड़ और हल्दी-चूर्ण पीनेसे श्लीपद् (हाथी-पाँव), दाद और कुष्ठ आदि नष्ट होते हैं। एक मासतक गोमूत्रके साथ एरंड-तेल पीनेपर सन्धि-पीड़ा और वातव्याधि नष्ट होती है।

गायके मूत्रमें कारबोलिक एसिड होनेसे उसकी स्वच्छता और पवित्रता बढ़ जाती है। वैज्ञानिक रीतिसे गोमूत्रमें फॉसफेट, पोटाश, लवण, नाइट्रोजन, यूरिया, यूरिक-एसिड होते हैं, जिन महीनोंमें गाय दूध देती है, उसके मूत्रमें लेक्टोज विद्यमान रहता है, जो हृदय और मस्तिष्कके रोगोंमें बहुत लाभदायक होता है। आठ मासकी गर्भवती गायके मूत्रमें पाचक रस (हार्मोन्स) अधिक होते हैं।

गायका दूध २ तोला, गायका मूत्र ५ तोला, गायका दही सवा तोला, गायका घी १० माशा, गायके गोबरका रस ढाई तोला और शहद ४ माशा—इन सबको काँच या मिट्टीके बरतनमें डालकर एक-रस कर लें। स्नान करके सूर्योदयके समय सूर्यकी ओर मुँह करके इसे पीना चाहिये। दो-तीन महीनेतक यह क्रम चलाया जा सकता है। इससे अनेकों रोग नष्ट होते हैं।

अमेरिकाके डॉ० क्राफोड हेमिल्टन तथा मेकिन्तोशने बहुत पहिले ही यह सिद्ध कर दिया था कि गोमूत्रके प्रयोगसे हृदय-रोग दूर होता है और मूत्र खुलकर आता है।

जरथुश्ती धर्मका एक अत्यन्त महान् और पवित्र उत्सव 'निरग दीन' है। उसमें बैलके मूत्रको इकट्ठा किया जाता है और अभिमन्त्रित करके सँभाल कर रख दिया जाता है। सारे शुद्धि-करणात्मक अवसरोंपर इस मूत्रका उपयोग आवश्यक है। इसका पान किया जाता है तथा इसको शरीरपर भी मला जाता है। जैसे हिन्दूधर्ममें गायके प्रति श्रद्धा या मान्यता है वैसे ही पारसी धर्ममें बैल श्रद्धाका पात्र है।

बेलफास्टके प्रो० सिमर्स तथा अल्स्टरके प्रो० कर्कने

गोमूत्रके महत्त्वके विषयमें अनेकों प्रयोग किये हैं और उनका कहना है कि गोमूत्र रक्तमें रहनेवाले दूषित कीटाणुओंका नाशक होता है। सजीव मांस-पेशीके लिये यह हानि नहीं पहुँचाता, घावोंकी विषाक्तताको दूर करता है और पुराने दोषसे रक्तद्वारा संक्रान्त घावमें बढ़ते हुए पीबको रोकता है। मलहम-पट्टीकी प्रारम्भिक चिकित्सामें इसके प्रयोगसे बहुत ही आश्चर्यजनक परिणाम देखनेमें आते हैं।

जिगर और प्लीहाके बढ़नेसे उदर-रोग हो गया हो तो पुनर्नवाके काढ़ेमें आधा गोमूत्र मिलाकर पिलाया जाय। इससे उदर-रोग अच्छा हो जायगा। इस सम्बन्धमें अक्कलकोटके डॉ० चाटी अपना अनुभव इस प्रकार बतलाते हैं—

चालीस वर्षकी अपनी नौकरीमें मैंने कितने ही जलोदर-रोगियोंका इलाज किया और पेट चीरकर २-३-४ बार भी पेटका पानी निकाल दिया, किंतु उनमेंसे अधिकांश रोगियोंकी मृत्यु हो गयी। मैंने सुना और आयुर्वेदिक ग्रन्थोंमें पढ़ा भी था कि इस रोगपर गोमूत्रका उपयोग बहुत लाभकारी होता है, फिर भी मुझे विश्वास नहीं होता था। एक बार एक साधु महात्माने गोमूत्रके गुणोंका बहुत वर्णन कर कहा कि इसका जलोदरपर बहुत ही अच्छा उपयोग होता है। मैंने गोमूत्रका प्रयोग करके देखा तो विलक्षण लाभ हुआ।

जलोदरमें गुर्दे काम नहीं करते, अतएव मूत्र खुलकर नहीं होता। गोमूत्र पीनेसे गुर्देके विकारको निकलनेमें सहायता मिलती है। मूत्र खुलकर साफ होने लगता है, जिससे रोग दूर हो जाता है। इस विषयमें निम्नलिखित घटना बड़ी ही उद्बोधक है—

बरेलीमें एक भिखारी भीख माँगकर निर्वाह किया करता था। एक बार उसे जलोदर रोग हो गया। पेट फूलकर घड़े-जैसा हो गया, भिखारी सूखकर अस्थि-चर्म मात्र रह गया। वह वहाँके सिविल अस्पतालमें पहुँचा। कम्पाउंडर उसे सिविल सर्जनके पास ले गया। सिविल सर्जनने देखकर कहा—'इसकी चिकित्सा यहाँ नहीं हो सकती। यह तो ऑपरेशन करते-करते ही मर जायगा।' बेचारा निराश होकर नगरके बाहर साधुओंकी एक टोलीमें जा बैठा, एक साधुने उससे पूछा—'क्यों? कैसे आया?' भिखारीने कहा—'ऐसा कोई उपाय बतायें, जिससे यह रोग दूर हो जाय।' साधुने कहा—'एक छटाँक गोमूत्र प्रातः और एक छटाँक सायंकाल प्रतिदिन एक वर्षतक पीओ, खानेके लिये जो मिल जाय वही खाओ।' भिखारीने एक वर्षतक गोमूत्रका सेवन किया। एक वर्ष पश्चात् फिर वह उसी अस्पतालमें पहुँचा। कम्पाउंडरने उसे पहचाना और वह उसे उसी सिविल सर्जनके पास ले गया।

डॉक्टरको बताया गया कि यह वही मनुष्य है जो पिछले वर्ष आया था। डॉक्टर देखकर आश्चर्यमें पड़ गया और उससे पूछने लगा—'बताओ, तुम कैसे अच्छे हुए?' भिखारीने उत्तर दिया—'गोमूत्रने मेरी जान बचा ली।'

देहलीके किशनगंज स्टेशनके गुड्स क्लर्कने अपनी बीती बातें सुनायीं। उनकी धर्मपत्नीकी टाँग और पैरोंमें एग्जिमा रोग भयंकर रूपमें था। एलोपैथिक, आयुर्वेदिक आदि अनेक प्रकारकी चिकित्साएँ की गयीं। पर लाभ नहीं पहुँचा। अकस्मात् एक महात्माका उनके पास आगमन हुआ। उन्होंने बताया कि 'गोमूत्रसे पैरोंको प्रतिदिन भिगोते रहो, उससे यह रोग दूर हो जायगा।' उन्होंने तीन मासतक वैसा ही किया और वह रोग दूर हो गया। उसके पश्चात् वह फिर कभी नहीं हुआ।

एक महात्माने ज्ञान-तन्तुओंके रोगों—अपीलत्सी, मिर्गी, हिस्टीरिया तथा पागलपनमें गोमूत्रको बहुत ही उपयोगी माना है।

गोमूत्रमें पुरुषों तथा गर्भवती स्त्रियोंके गुप्त रोगोंका निवारण करनेकी शक्ति विद्यमान है। खुजली, दाद, एग्जिमा तथा अन्य त्वचा-रोगोंमें रोगीको गोमूत्र पीनेसे एवं गोबर तथा गोमूत्रका लेप करनेसे शीघ्र लाभ होता है, शरीरकी गर्मी (ज्वर आदि) और भारीपनमें गोमूत्र लाभप्रद है।

यदि किसी मनुष्यको क्षय हो तो उसे गौके उस बच्चेका मूत्र, जो केवल दूधपर ही रहता है देनेसे रोग दूर होता है।

खूनी बवासीरमें गोमूत्रका एनिमा बहुत लाभप्रद है। कुछ समयतक प्रतिदिन यह एनिमा लेते रहनेसे मस्से सर्वथा सिकुड़ जाते हैं।

गोमूत्र सौम्य और रेचक है। कब्ज हो, पेट फूल गया

हो, डकारें आती हों और जी मिचलता हो तो तीन तोला स्वच्छ और ताजा गोमूत्र छानकर आधा माशा सेंधा नमक मिलाकर पी जाना चाहिये। थोड़ी ही देरमें टट्टी होकर पेट उतर जाता है और आराम मालूम होता है।

छोटे बच्चोंको पेट फूलनेपर उन्हें गोमूत्र पिलाया जाता है। उम्रके अनुसार साधारणतया एक वर्षके बच्चेको एक चम्मच गोमूत्र नमक मिलाकर पिला देना चाहिये, तुरंत पेट उतर जाता है। बालकोंके डब्बेका रोग, श्वास, खाँसी तथा लीवर प्लीहादिके अनेकों रोग गोमूत्रके सेवनसे जाते रहते हैं। (डब्बा रोगमें बच्चेका पेट फूल जाता है, नाभि ऊपर आ जाती है और श्वास तीव्र गतिसे चलने लगती है।)

पेटके कृमियोंको मिटानेके लिये तो गोमूत्रसे बढ़कर दूसरी औषधि है ही नहीं। चमुने (गुदाके कृमि) के निकलनेमें गोमूत्रमें कुछ चिकनाई मिला दी जाती है।

बच्चेको सूखा रोग हो जाय तो गोमूत्रमें केसर मिलाकर कम-से-कम एक महीनेतक पिलायें, यह औषधि दिनमें दो बार दी जाय, आयुके अनुसार मात्रा एक ड्रामसे चार ड्रामतककी हो।

पेटकी व्याधि विशेषत: यकृत् और प्लीहा बढ़ रही हो तो पाँच तोला गोमूत्रमें नमक मिलाकर प्रतिदिन पिलाया जाय, थोड़े ही दिनोंमें आराम हो जाता है।

यकृत् एवं प्लीहा रोग होनेपर तथा पेट फूलनेपर दर्दके स्थानपर गोमूत्रकी सेंक भी की जाती है। एक अच्छी ईंटको गरम करके उसपर चिथड़ा लपेट कर गोमूत्र डालकर उसका सेंक तथा भाप दी जा सकती है।

शरीरमें खाज अधिक आती हो तो गोमूत्रमें नीमके पत्ते डालकर उसका लेप भी किया जा सकता है।

जीर्ण-ज्वरके रोगीको दिनमें दो बार गोमूत्र पिलाते रहनेसे सात-आठ दिनोंमें बुखार जाता रहेगा।

आँखोंमें दाह, शरीरमें सुस्ती हो और अरुचि हो तो गोमूत्रमें गुड़ या शक्कर मिलाकर पीना चाहिये।

आध पाव गोमूत्र कपड़ेसे छानकर पिलानेसे दस्त हो जाता है।

शक्ति और उम्रके अनुसार नित्य सबेरे ताजा गोमूत्र २१ या ४१ दिनोंतक पिलानेसे कामला (पीलिया—जॉन्डिस्) रोगमें निश्चय ही आराम हो जाता है।

आँख और कानकी बीमारीमें गोमूत्र डाला जाता है तथा उसकी सेंक और भाप दी जाती है। गोमूत्रमें रहनेवाला यूरिया कृमिनाशक कार्य करता है।

गोमूत्र शरीरके तन्तुओंके लिये हानिकारक नहीं है। घावोंपर यह अविषाक्त पदार्थके रूपमें प्रयुक्त किया जाता है। इसके प्रयोगसे दूसरे प्रकारकी चिकित्सामें लगनेवाले परिश्रम, खर्च और समयकी बचत होती है।

इससे बीमारीके ठीक होनेकी प्रक्रियामें तनिक भी बाधा नहीं पहुँचती है। तात्कालिक चिकित्साके रूपमें इसका प्रयोग बहुत ही अपूर्व सिद्ध होगा। यह घावमें पुराने रक्त-संक्रमणसे उत्पन्न होनेवाले पीबको रोकता है।

गायके मूत्रको गुन-गुना करके कानमें डालनेसे कर्ण-शूल—कानका दर्द दूर होता है।

कान पकनेपर गोमूत्रको बोतलमें भर लें, निथर जानेपर छानकर शीशीमें अच्छा कार्क लगाकर रख दें, रोगीका कान साफ कर ३-४ बूँद कानमें टपका दें। बंगला कहावत है—

जे खाय गोरूरचोना, तार देह होय सोना।

अर्थात् जो गोमूत्र पीता है, उसकी देह सोनेकी जैसी (नीराग) हो जाती है।

गोमूत्रका आन्तरिक प्रयोग आमाशय तथा यकृत्पर बड़ा लाभ करता है, उसकी मात्रा पाँच तोलातक है। गोमूत्र मृदु, रेचक तथा मूत्रल है। ज्वर आदिमें इसका प्रयोग घरेलू दवाकी तरह किया जाता है। कुछ दिनका रखा हुआ गोमूत्र धातुके बरतनोंको साफ करनेमें काम आता है।

कुछ दिन गोमूत्रके सेवनसे धमनियाँ प्रसारित होती हैं, जिससे रक्तका दबाव स्वाभाविक होने लगता है। गोमूत्रसे भूख बढ़ती है, शोथ आदि कम होती है। यह पुराने वृक्कशोथके लिये उत्तम ओषधि है। गोमूत्र-गोमयकी जितनी प्रशंसा की जाय उतनी थोड़ी है।

[प्रेषक—श्रीशिवकुमारजी गोयल]

विविध धर्म एवं सम्प्रदायोंमें गाय

वेद-शास्त्रोंमें गौ

इस संसारमें 'गौ' एक महनीय, अमूल्य और कल्याणप्रद पशु है। गौकी महिमाका उल्लेख वेदादि सभी शास्त्रोंमें मिलता है। गौ भगवान् सूर्यदेवकी एक प्रधान किरणका नाम है। सूर्यभगवान्‌के उदय होनेपर उनकी ज्योति, आयु और गौ—ये तीनों किरणें स्थावर-जङ्गम समस्त प्राणियोंमें यथासम्भव न्यूनाधिक्यरूपमें प्रविष्ट होती हैं; परंतु इनमें सूर्यभगवान्‌की 'गो' नामकी किरण केवल गो-पशुमें ही अधिक मात्रामें समाविष्ट होती है। अतएव आर्यजाति इस पशुको 'गौ' नामसे पुकारती है।

'गो' नामक सूर्य-किरणको पृथ्वी स्थावरमूर्ति और गो-पशु जङ्गममूर्ति है। शास्त्रोंमें दोनोंको 'गो' शब्दसे व्यवहृत किया गया है। ये दोनों ही अनन्तगुणसम्पन्न भगवान् विराट्‌के स्वरूप हैं। शुक्ल यजुर्वेदमें गौ और पृथ्वी—इन दोनोंके सम्बन्धमें प्रश्न किया गया है कि '**कस्य मात्रा न विद्यते?**' (किसका परिमाण (उपमा) नहीं है?) [शु० य० २३। ४७]। इसका उत्तर दिया गया है—'**गोस्तु मात्रा न विद्यते**' (गौका परिमाण (उपमा) नहीं है) [शु० य० २३। ४८]।

गौ[१] और पृथ्वी—ये दोनों गौके ही दो स्वरूप हैं। इनमें कोई भेद नहीं है। गौ और पृथ्वी—इन दोनोंमें अभिन्नता है। ये दोनों ही परस्पर एक-दूसरीकी सहायिका और सहचरी हैं। मृत्युलोककी आधारशक्ति 'पृथ्वी' है और देवलोककी आधारशक्ति 'गौ' है। पृथ्वीको 'भूलोक' कहते हैं और गौको 'गोलोक' कहते हैं। भूलोक अधोलोक (नीचे)-में है और गोलोक ऊर्ध्वलोक (ऊपर)-में है। भूलोककी तरह गोलोकमें भी श्रेष्ठ भूमि है।

जिस प्रकार पृथ्वीपर रहते हुए मनुष्योंके मल-मूत्रादिके त्याग आदिके कुत्सित आचरणोंको पृथ्वीमाता सप्रेम सहन करती है, उसी प्रकार गो-माता भी मनुष्योंके जीवनका आधार होती हुई मनुष्योंके वाहन, निरोध एवं ताड़न आदि कुत्सित आचरणोंको सहन करती है। इसीलिये वेदोंमें पृथ्वी और गौको 'मही' शब्दसे व्यवहृत किया गया है। मनुष्योंमें भी जो सहनशील अर्थात् क्षमी होते हैं, वे महान् माने जाते हैं। संसारमें पृथ्वी और गौसे अधिक क्षमावान् और कोई नहीं है। अतः ये दोनों ही महान् हैं।

शास्त्रोंमें गौ[२] को सर्वदेवमयी और सर्वतीर्थमयी[३] कहा गया है। अतः गौके दर्शनसे समस्त देवताओंके दर्शन और समस्त तीर्थोंकी यात्रा करनेका पुण्य प्राप्त होता है। जहाँ गौका निवास होता है, वहाँ सर्वदा सुख-शान्तिका पूर्ण साम्राज्य उपस्थित रहता है। गो-दर्शन, गोस्पर्श, गोपूजन, गोस्मरण, गोगुणानुकीर्तन और गोदान करनेसे मनुष्य सर्वविध पापोंसे मुक्त होकर अक्षय स्वर्गका भोग प्राप्त करता है[४]। गौओंकी परिक्रमा करनेसे ही बृहस्पति सबके वन्दनीय, माधव (विष्णु) सबके पूज्य और इन्द्र ऐश्वर्यवान् हो गये।

गौके गोबर, गोमूत्र, गोदुग्ध, गोघृत और गोदधि आदि सभी पदार्थ परम पावन, आरोग्यप्रद, तेजःप्रद, आयुवर्द्धक तथा बलवर्द्धक माने जाते हैं। यही कारण है कि आर्यजातिके

१-(क) गोशब्देनोदिता पृथ्वी सा हि माता शरीरिणाम्। शैशवे जननी माता पश्चात् पृथ्वी हि शस्यते॥

'गो' शब्द पृथ्वीका द्योतक है। वह समस्त देहधारियोंकी माता है। बाल्यावस्थामें अपनी माता जन्म देने तथा दुग्ध पिलानेके कारण 'माता' कही जाती है, पश्चात् पृथ्वी जीवनपर्यन्त अन्न आदि विविध पदार्थ देनेके कारण 'पृथ्वी माता' कही जाती है।

(ख) 'गोरिति पृथिव्या नामधेयम्।' (निरुक्त २। १। १) 'गौ' यह पृथ्वीका वाचक है।

२-(क) 'सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः' (बृहत्पाराशरस्मृति ३। ३३)

(ख) 'वैश्वदेवी वै गौः' 'यद् गां ददाति विश्वेषामेतद् देवानां तेन प्रियं धाम उपैति।' (गोपथब्राह्मण ३। ३। १९)

(ग) अथर्ववेद ९। ७। १—२६।

३-स्कन्दपुराण, आवन्त्यखण्ड, रेवाखण्ड ८३। १०४—११२।

४-पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड ४८। १४५-१४६।

प्रत्येक श्रौत-स्मार्त शुभ-कर्ममें पञ्चगव्य और पञ्चामृतका विधान अनादिकालसे प्रचलित और मान्य है।

गौके जब बछड़ी-बछड़े पैदा होते हैं, तब सर्वप्रथम वे केवल अपनी माताके दुग्धका पान करके ही तत्क्षण वायुके वेगके सदृश दौड़ने लगते हैं। संसारमें गोवत्सके अतिरिक्त अन्य किसी भी मनुष्यसे लेकर कीट-पतङ्गादितकके प्राणीके नवजात शिशुमें इस प्रकारकी विचित्र शक्ति और स्फूर्ति नहीं पायी जाती, जो कि 'गोवत्स'की तरह उत्पन्न होते ही इतस्ततः दौड़ने लग जाय। इसीलिये मानवजातिमें जब बालक पैदा होते हैं, तब उन्हें सर्वप्रथम मेधाजननके लिये '**मधुघृते प्राशयति घृतं वा**' (पार०, गृ०, सूत्र १। १६। ४)। इस सूत्रके अनुसार मधु और गोघृतमें सुवर्ण घिसकर अथवा केवल गोघृतमें सुवर्ण घिसकर वह पदार्थ बालकको चटाया जाता है। पश्चात् उसे गौका दुग्ध पिलाया जाता है। अतएव गौको 'माता' कहा जाता है।

हमारी माताएँ हमें बाल्यावस्थामें ही अधिक-से-अधिक दो-ढाई सालतक अपना दुग्ध पिलाकर हमारा इहलोकमें ही कल्याण करती हैं, किंतु गोमाता हमें आजीवन अपना अमृतमय दुग्ध पिलाकर हमारा इहलोकमें पालन-पोषण करती है और हमारी मृत्युके बाद वह हमें स्वर्ग पहुँचाती है, जैसा कि अथर्ववेद (१८। ३। ४) में भी कहा है—

'अयं ते गोपतिस्तं जुषस्व स्वर्गं लोकमधिरोहयैनम्।'

'**धनं च गोधनं प्राहुः**' के अनुसार विद्वानोंने 'गौ' को ही असली धन कहा है। महाभारतमें लिखा है—

'गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किञ्चिदिहाच्युत॥'

(अनुशासनपर्व ५१। २६)

'हे अच्युत! मैं इस संसारमें गो-धनके सदृश और कोई धन नहीं देखता हूँ।'

हिंदीके एक पद्यद्वारा सांसारिक समस्त वस्तुओंकी अपेक्षा 'गोधन' को ही सर्वश्रेष्ठ धन बतलाया गया है—

सोना-चाँदी और रत्न-मणि, सब धन है केवल नामका।
यदि है कोई धन जगत्में, गो-धन है बस कामका॥

गौ स्वर्ग और मोक्षकी सीढ़ी है। यह परम पावन और सबकी कामना पूर्ण करनेवाली मङ्गलदायिनी देवी है। गोमाताकी सेवासे पुरुषार्थ-चतुष्टयकी प्राप्ति और ऐहिक-आमुष्मिक कल्याणकी प्राप्ति होती है। गोसेवासे मनुष्यके अगणित कुलोंका उद्धार और उनकी यम-यातनासे मुक्ति होती है। गोसेवासे पुत्रप्राप्ति, लक्ष्मीप्राप्ति, विद्याप्राप्ति, यशप्राप्ति, ज्ञानप्राप्ति, बलप्राप्ति और दीर्घायुकी प्राप्ति होती है। गोमातामें अनन्तानन्त गुण विद्यमान हैं, तभी तो शास्त्रकारोंने—

गावः प्रतिष्ठा भूतानाम्। (अग्निपुराण २९२। १५)
गावः प्रतिष्ठा भूतानाम्। (महा०, अनु० ७८। ५)
गावः शरण्या भूतानाम्। (महा०, अनु० ६६।५०)
गावस्तेजो महद्दिव्यम्। (महा०, अनु० ८१। १७)
गावो हि सुमहत्तेजः। (महा०, अनु० ५१। ३१)
मातरः सर्वभूतानाम्। (महा०, अनु० ६९। ७)
गावो बन्धुर्मनुष्याणाम्। (पद्म०, सृष्टि० ५०। १५५)
गावः प्रतिष्ठा सचराचरस्य।
गावो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा।

—इत्यादि कहकर गौकी महत्ताको स्वीकार किया है और भी देखिये—

गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते।

(महा०, अनु० ५१। २८)

'गौएँ सर्वदा लक्ष्मीकी मूल हैं। गौओंमें पापकी स्थिति नहीं होती है।'

गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।
गावः कामदुहो देव्यो नान्यत्किञ्चित्परं स्मृतम्॥

(महा०, अनु० ५१। ३३)

'गौएँ स्वर्गकी सीढ़ी हैं, गौओंकी स्वर्गमें भी पूजा होती है। गौएँ समस्त अभिलषित वस्तुओंको देनेवाली हैं, अतः गौओंसे बढ़कर और कोई श्रेष्ठ वस्तु नहीं है।'

मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।

(महा०, अनु० ६९। ७)

'गौएँ समस्त प्राणियोंको माताके सदृश सर्वविध सुखोंको देनेवाली हैं।'

'**ईश्वरः स गवां मध्ये।**' (महा०, अनु० ७७। २९)

'गौओंके मध्यमें ईश्वरकी स्थिति होती है।'

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत्॥

(महा० अनु० ७८। ५)

'गौएँ मानवोंके जीवनका प्रतिष्ठारूपी परम धन हैं और गौएँ कल्याणकी परम निधान हैं।'

गावो महार्थाः पुण्याश्च तारयन्ति च मानवान्।
धारयन्ति प्रजाश्चेमा हविषा पयसा तथा॥
न हि पुण्यतमं किञ्चिद् गोभ्यो भरतसत्तम।
एताः पुण्याः पवित्राश्च त्रिषु लोकेषु सत्तमाः॥

(महा०, अनु० ८१। २-३)

'गौएँ महान् अर्थको और पुण्यको देनेवाली हैं। गौएँ मनुष्योंका उद्धार करती हैं। गौएँ घृत और दुग्धसे प्रजाका पालन-पोषण करती हैं। अतः हे युधिष्ठिर! गौओंसे बढ़कर और कोई पुण्यतम वस्तु नहीं है। गौएँ तीनों लोकोंमें पुण्य और पवित्र कही गयी हैं।'

गावः प्रतिष्ठा भूतानां तथा गावः परायणम्।
गावः पुण्याः पवित्राश्च गोधनं पावनं तथा॥

(महा०, अनु० ८१। १२)

'गौएँ समस्त प्राणियोंकी प्रतिष्ठा और सबकी आश्रय (रक्षक) हैं। गौएँ पुण्यप्रद और पवित्र हैं। अतः गोधनको पावन कहा गया है।'

गावः श्रेष्ठाः पवित्राश्च पावनं ह्येतदुत्तमम्॥

(महा०, अनु० ८३। ३)

'गौएँ सर्वश्रेष्ठ तथा पवित्र, पूजन करने योग्य और संसारमें सबसे उत्तम हैं।'

गावस्तेजः परं प्रोक्तमिहलोके परत्र च।
न गोभ्यः परमं किञ्चित् पवित्रं भरतर्षभ॥

(महा०, अनु० ८३। ५)

'इस लोक और परलोकमें गौएँ परम तेजःस्वरूप हैं। हे भरतर्षभ! गौओंसे बढ़कर और कोई वस्तु परम पवित्र नहीं है।'

यज्ञाङ्गं कथिता गावो यज्ञ एव च वासव।
एताभिश्च विना यज्ञो न वर्तेत कथंचन॥

(महा०, अनु० ८३। १७)

'गौओंको यज्ञका अङ्ग और साक्षात् यज्ञरूप कहा गया है। गौओंके बिना यज्ञ कथमपि नहीं हो सकते।'

गावो बन्धुर्मनुष्याणां मनुष्या बान्धवा गवाम्।
गौश्च यस्मिन् गृहे नास्ति तद् बन्धुरहितं गृहम्॥

(पद्म०, सृष्टि० ५०। १५५-१५६)

'गौएँ मनुष्योंकी बन्धु हैं और मनुष्य गौओंके बन्धु हैं। जिस घरमें गौ नहीं है, वह घर बन्धुशून्य है।'

गां च स्पृशति यो नित्यं स्नातो भवति नित्यशः।
अतो मर्त्यः प्रपुष्टैस्तु सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
गवां रजः खुरोद्भूतं शिरसा यस्तु धारयेत्।
स च तीर्थजले स्नातः सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(पद्म०, सृष्टि० ५०। १६५-१६६)

'जो मनुष्य प्रतिदिन गौका स्पर्श करता है, वह प्रतिदिन तीर्थजलमें स्नान करनेका फल प्राप्त करता है। गौके द्वारा मनुष्य सर्वविध घोर पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो मनुष्य गौके खुरसे उड़ी हुई धूलिको अपने मस्तकपर धारण करता है, वह समस्त तीर्थोंके जलमें स्नान करनेका फल प्राप्त करता है और समस्त पापोंसे छुटकारा पा जाता है।'

गावः पवित्रा माङ्गल्या गोषु लोकाः प्रतिष्ठिताः।

(अग्निपुराण २९२। १)

'गौएँ पवित्र और मङ्गलदायिनी हैं। गौओंमें समस्त लोक प्रतिष्ठित हैं।'

गवां श्वासात् पवित्रा भूः स्पर्शनात् किल्बिषक्षयः।

'गौओंके श्वास-प्रश्वाससे भूमि पवित्र होती है और गौओंके स्पर्श करनेसे मनुष्यके पापोंका नाश होता है।'

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं परम्।
अन्नमेव परं गावो देवानां हविरुत्तमम्॥
पावनं सर्वभूतानां क्षरन्ति च वहन्ति च।
हविषा मन्त्रपूतेन तर्पयन्त्यमरान् दिवि॥
ऋषीणामग्निहोत्रेषु गावो होमेषु योजिताः।
सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम्॥
गावः पवित्रं परमं गावो माङ्गल्यमुत्तमम्।
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावो धन्याः सनातनाः॥

(अग्निपुराण २९२। १५—१८)

'गौएँ प्राणियोंके जीवनकी प्रतिष्ठा हैं और गौएँ कल्याणका महान् निधान हैं। गौएँ ही अन्नका परम साधन हैं, गौएँ ही देवताओंका उत्तम घृत हैं। गौएँ समस्त प्राणियोंको पवित्र करनेवाले दुग्धको देती हैं और गोवत्स भार वहन करते हैं।'

गौएँ स्वर्गमें ऋषियोंके मन्त्रपूत घृतसे देवताओंको तृप्त करती हैं। अतः गौएँ हवनमें प्रतिष्ठित हैं। गौएँ समस्त प्राणियोंकी उत्तम शरण (आश्रय) हैं। गौएँ परम पवित्र और मङ्गलदायिनी हैं। गौएँ स्वर्गकी सीढ़ी हैं और गौएँ धन्य और सत्य-सनातन हैं।

सर्वे देवा गवामङ्गे तीर्थानि तत्पदेषु च।
तद्गुह्येषु स्वयं लक्ष्मीस्तिष्ठत्येव सदा पितः॥
गोष्पदाक्तमृदा यो हि तिलकं कुरुते नरः।
तीर्थस्नातो भवेत् सद्यो जयस्तस्य पदे पदे॥
गावस्तिष्ठन्ति यत्रैव तत्तीर्थं परिकीर्तितम्।
प्राणांस्त्यक्त्वा नरस्तत्र सद्यो मुक्तो भवेद् ध्रुवम्॥

(ब्रह्मवैवर्त्त०, श्रीकृष्णज० २१। ९१—९३)

'गौके शरीरमें समस्त देवगण निवास करते हैं और गौके पैरोंमें समस्त तीर्थ निवास करते हैं। गौके गुह्यभागमें लक्ष्मी सदा रहती हैं। गौके पैरोंमें लगी हुई मिट्टीका तिलक जो मनुष्य अपने मस्तकमें लगाता है, वह तत्काल तीर्थजलमें स्नान करनेका पुण्य प्राप्त करता है और उसकी पद-पदपर विजय होती है। जहाँपर गौएँ रहती हैं उस स्थानको तीर्थभूमि कहा गया है। ऐसी भूमिमें जिस मनुष्यकी मृत्यु होती है, वह तत्काल मुक्त हो जाता है, यह निश्चित है।'

वेदोंमें भी गोमहिमापरक अनेक मन्त्र उपलब्ध हैं, जिनमेंसे कुछ मन्त्र उद्धृत किये जाते हैं—

ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै
यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः।
अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः
परमं पदमव भाति भूरि॥

(ऋग्वेद १। १५४। ६)

'गोभक्तगण अश्विनीकुमारसे प्रार्थना करते हैं कि— 'हे अश्विनीकुमार! हम आपके उस गोलोकरूप निवासस्थानमें जाना चाहते हैं, जहाँ बड़ी-बड़ी सींगवाली सर्वत्र जानेवाली गौएँ निवास करती हैं। वहींपर सर्वव्यापक विष्णु भगवान्‌का परम पद वैकुण्ठ प्रकाशित हो रहा है।'

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां
स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।

(ऋग्वेद ८। १०१। १५)

गौ एकादश रुद्रोंकी माता, अष्ट वसुओंकी कन्या और द्वादश आदित्योंकी बहन है, जो कि अमृतरूप दुग्धको देनेवाली है।

देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्व मघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत माघशꣳ सो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात॥

(शुक्लयजुर्वेद १। १)

'हे गौओ! प्राणियोंको तत्तत्कार्योंमें प्रविष्ट करानेवाले सवितादेव तुम्हें हरित-शस्य-परिपूर्ण विस्तृत क्षेत्र (गोचरभूमि) में चरनेके लिये ले जायँ; क्योंकि तुम्हारे द्वारा श्रेष्ठ कर्मोंका अनुष्ठान होता है। हे गौओ! तुम इन्द्रदेवके क्षीरमूलक भागको बढ़ाओ अर्थात् तुम अधिक दुग्ध देनेवाली हो। तुम्हारी कोई चोरी न कर सके, तुम्हें व्याघ्रादि हिंसक जीव-जन्तु न मार सकें; क्योंकि तुम तमोगुणी दुष्टोंद्वारा मारे जाने योग्य नहीं हो। तुम बहुत संतति उत्पन्न करनेवाली हो, तुम्हारी संततियोंसे संसारका बहुत बड़ा कल्याण होता है। तुम जहाँ रहती हो, वहाँपर किसी प्रकारकी आधि-व्याधि नहीं आने पाती। यहाँतक कि यक्ष्मा (तपेदिक) आदि राजरोग भी तुम्हारे पास नहीं आ सकते। अतः तुम सर्वदा यजमानके घरमें सुखपूर्वक निवास करो।'

सा विश्वायुः सा विश्वकर्मा सा विश्वधायाः।

(शुक्लयजुर्वेद १। ४)

'वह गौ यज्ञसम्बन्धी समस्त ऋत्विजोंकी तथा यजमानकी आयुको बढ़ानेवाली है। वह गौ यज्ञके समस्त कार्योंका सम्पादन करनेवाली है। वह गौ यज्ञके समस्त देवताओंकी पोषण करनेवाली है अर्थात् दुग्धादि हवि पदार्थ देनेवाली है।'

अन्ध स्थान्धो वो भक्षीय मह स्थ महो वो भक्षीयोर्ज स्थोर्जं वो भक्षीय रायस्पोष स्थ रायस्पोषं वो भक्षीय॥

(शुक्लयजुर्वेद ३। २०)

'हे गौओ! तुम अन्नरूप हो अर्थात् तुम दुग्ध-घृतादिरूप अन्नको देनेवाली हो, अतः तुम्हारी कृपासे हमें भी दुग्ध-घृतादिरूप अन्न प्राप्त हो। तुम पूजनीय हो, अतः तुम्हारे सेवन (आश्रय) से हम श्रेष्ठता प्राप्त करें। तुम बलस्वरूप हो, अतः तुम्हारी कृपासे हम भी बल प्राप्त करें। तुम धनको बढ़ानेवाली हो, अतः हम भी धनकी वृद्धि प्राप्त करें।'

सꣳहितासि विश्वरूप्यूर्जा माविश गौपत्येन।

(शुक्लयजुर्वेद ३। २२)

'हे गौओ! तुम विश्वरूपवाली दुग्ध-घृतरूप हवि प्रदान करनेके लिये यज्ञकर्ममें संगतिवाली हो। तुम अपने दुग्धादि रसोंको प्रदान कर हमारा गोस्वामित्व सर्वदा सुस्थिर रखो।'

इड एह्यदित एहि काम्या एत। मयि वः कामधरणं भूयात्॥

(शुक्लयजुर्वेद ३। २७)

'हे पृथ्वीरूप गौ! तुम इस स्थानपर आओ। घृतद्वारा देवताओंको अदितिके सदृश पालन करनेवाली अदितिरूप गौ! तुम इस स्थानपर आओ। हे गौ! तुम समस्त साधनोंको देनेवाली होनेके कारण सभीकी आदरणीया हो। हे गौ! तुम इस स्थानपर आओ। तुमने हमें देनेके लिये जो अपेक्षित फल धारण किया है, वह तुम्हारी कृपासे हमें प्राप्त हो। तुम्हारी प्रसन्नतासे हम अभीष्ट फलोंको धारण करनेवाले बनें '

वीरं विदेय तव देवि सन्दृशि।

(शुक्लयजुर्वेद ४। २३)

'हे मन्त्रपूत दिव्य गौ! तुम्हारे सुन्दर दर्शनके महत्त्वसे मैं बलवान् पुत्रको प्राप्त करूँ।'

या ते धामान्युश्मसि गमध्यै
यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः।
अत्राह तदुरुगायस्य विष्णोः
परमं पदमव भारि भूरि॥

(शुक्लयजुर्वेद ६। ३)

'मैं तुम्हारे उन लोकोंमें जाना चाहता हूँ, जहाँ बड़ी-बड़ी सींगवाली बहुत-सी गौएँ रहती हैं। जहाँपर गौएँ रहती हैं, वहाँ विष्णु भगवान्का परम प्रकाश प्रकाशित रहता है।'

राया वय ँ ससवा ँसो मदेम
हव्येन देवा यवसेन गावः।
तां धेनुं मित्रावरुणा युवं नो
विश्वाहा धत्तमनपस्फुरन्तीम्॥

(शुक्लयजुर्वेद ७। १०)

'जिस प्रकार देवगण गौके हव्य-पदार्थकी प्राप्तिसे और गौ घास आदि खाद्य-पदार्थकी प्राप्तिसे प्रसन्न होती है, उसी प्रकार हम भी बहुत दुग्ध देनेवाली गौको प्राप्त कर प्रसन्न होते हैं। गौके घरमें रहनेसे हम धनादिसे परिपूर्ण होकर समस्त कार्योंको करनेमें समर्थ हो सकते हैं। अतः हे देवताओ! तुम सर्वदा हमारी गौकी रक्षा करो, जिससे हमारी गौ अन्यत्र न जाने पावे।'

क्षुमन्तं वाजꣳसहस्त्रिणं मक्षु गोमन्तमीमहे।

(सामवेद, उत्तरार्चिक १। ३)

'हम पुत्र-पौत्रादिसहित सैकड़ों-हजारोंकी संख्यावाले धनोंकी और गौ आदिसे युक्त अन्नकी शीघ्र याचना करते हैं।'

धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते।
गामश्वं पिप्युषी दुहे।

(सामवेद, उत्तरार्चिक २०। ७)

'हे इन्द्र! तुम्हारी स्तुतिरूपा सत्य वाणी गौरूप होकर यजमानकी वृद्धिकी इच्छा करती हुई यजमानके लिये गौ, घोड़े आदि समस्त अभिलषित वस्तुओंका दोहन करती (दुहती) है।'

इमा या गावः स जनास इन्द्रः ....॥

(अथर्ववेद ४। २१। ५)

'जिसके पास गौएँ रहती हैं, वह तो एक प्रकारसे इन्द्र ही है।'

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं
चित्कृणुथा सुप्रतीकम्।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो
बृहद्वो वय उच्यते सभासु॥

(अथर्ववेद ४। २१। ६)

'हे गौओ! तुम अपने दुग्ध-घृतादिद्वारा दुर्बल मनुष्योंको हृष्ट-पुष्ट करती हो और निस्तेजोंको तेजस्वी बनाती हो। तुम अपने मङ्गलमय शब्दोच्चारणसे हमारे घरोंको मङ्गलमय बनाती हो। इसलिये सभाओंमें तुम्हारी कीर्तिका वर्णन होता रहता है।'

वशां देवा उप जीवन्ति वशां मनुष्या उत।
वशेदं सर्वमभवद् यावत् सूर्यो विपश्यति॥

(अथर्ववेद १०। १०। ३४)

'वशा (वशमें रहनेवाली) गौके द्वारा प्राप्त गो-दुग्धादि पदार्थोंसे देवगण और मनुष्यगण जीवन प्राप्त करते हैं। जहाँतक सूर्यदेवका प्रकाश होता है, वहाँतक गौ ही व्याप्त है अर्थात् यह समस्त ब्रह्माण्ड गौके आधारपर ही स्थित है।'

धेनुं सदनं रयीणाम्। (अथर्ववेद ११। १। ३४)

'गौ सम्पत्तिका घर है।'

महाँस्त्वेव गोर्महिमा।

(शतपथब्राह्मण ३। ३। ३। १)

'गौकी महिमा महान् है।'

इस प्रकार वेदोंसे लेकर समस्त धार्मिक ग्रन्थोंमें और समस्त सम्प्रदायवादियोंके धर्मग्रन्थोंमें एवं प्राचीन-अर्वाचीन ऋषि-महर्षि, आचार्य विद्वानोंसे लेकर आधुनिक विद्वानोंतक सभीकी सम्मतिमें गोमाताका स्थान सर्वश्रेष्ठ और सर्वमान्य है।

गौ एक अमूल्य स्वर्गीय ज्योति है, जिसका निर्माण भगवान्ने मनुष्योंके कल्याणार्थ आशीर्वाद-रूपमें पृथ्वीलोकमें किया है। अतः इस पृथ्वीमें गोमाता मनुष्योंके लिये भगवान्का प्रसाद है। भगवान्के प्रसादस्वरूप अमृतरूपी गोदुग्धका पान कर मानवगण ही नहीं, किंतु देवगण भी तृप्त और संतुष्ट होते हैं। इसीलिये गोदुग्धको 'अमृत' कहा जाता है। यह अमृतमय गोदुग्ध देवताओंके लिये भोज्य-पदार्थ कहा गया है। अतः समस्त देवगण गोमाताके अमृतरूपी गोदुग्धके पान करनेके लिये गोमाताके शरीरमें सर्वदा निवास करते हैं।

शतपथब्राह्मण (३। ३। ३। २) में लिखा है कि गोमाता मानवजातिका बहुत ही उपकार करती है—

'गौर्वै प्रतिधुक्। तस्यै शृतं तस्यै शरस्तस्यै दधि तस्यै मस्तु तस्याऽआतञ्चनं तस्यै नवनीतं तस्यै घृतं तस्याऽआमिक्षा तस्यै वाजिनम्॥'

गोमाता हमें प्रतिधुक् (ताजा दुग्ध), शृत (गरम दुग्ध), शर (मक्खन निकाला हुआ दुग्ध), दही, मट्ठा, घृत, खीस, वाजिन (खीसका पानी), नवनीत और मक्खन—ये दस प्रकारके अमृतमय भोजनीय पदार्थ देती है, जिनको खा-पीकर हम आरोग्यता, बल, बुद्धि एवं ओज आदि शारीरिक बल प्राप्त करते हैं और गौके दुग्धादि पदार्थोंके व्यापारद्वारा तथा गौके बछड़ा-बछड़ी एवं गोबरद्वारा हम प्रचुरमात्रामें विविध प्रकारके अन्न पैदाकर धनवान् बन जाते हैं। अत: गोमाता हमें बल, अन्न और धन प्रदान कर हमारा अनन्त उपकार करती है। अत: मानवजातिके लिये गौसे बढ़कर उपकार करनेवाला और कोई शरीरधारी प्राणी नहीं है। इसीलिये हिंदूजातिने गौको देवताके सदृश समझकर उसकी सेवा-शुश्रूषा करना अपना परम धर्म समझा है।

प्राचीन इतिहासोंके अवलोकनसे स्पष्ट विदित होता कि गोजातिके रक्षार्थ समय-समयपर बड़े-बड़े शक्तिशाली ऋषि-मुनियोंने और राजा-महाराजाओंने अपने प्राणोंतककी भी परवा न कर गोजातिकी रक्षा की है। राजा दिलीप, छत्रपति शिवाजी और महाराणा प्रताप आदिकी गोरक्षार्थ आत्मसमर्पणकी पवित्र गाथाएँ विश्वविदित ही हैं। अत: हमारा भी परम कर्तव्य है कि हम गोजातिकी सर्वात्मना रक्षा करें। जो गौ हमारा सब प्रकारसे कल्याण करे, जो गौ हमारा सर्वविध दु:ख दूर करे और जो गौ हमारी समस्त आवश्यकताओंकी पूर्ति करे, उस गोमाताकी हमारे समक्ष दुर्दशा हो और हमारी जानकारीमें निरपराध अगणित गौओंका वध हो, यह हम भारतवासी समस्त हिंदू-समाजके लिये बड़ी लज्जा और दु:खकी बात है। जो मनुष्य आलस्य, प्रमाद, लोभ अथवा स्वार्थके वशीभूत होकर गौओंके रक्षार्थ प्रयत्न नहीं करते, उन्हें शास्त्रोंमें आततायी, महापापी और अहिंदू कहा गया है। अत: समस्त हिंदुओंको अपने हिंदुत्वकी रक्षाके लिये सर्वात्मना गोरक्षार्थ पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये।

आज हमारा देश स्वतन्त्र हो चुका है और हम भी स्वतन्त्र कहलाते हैं, फिर भी हमारे पवित्र भारतमें गोवंशकी रक्षा न होकर उसका उत्तरोत्तर ह्रास होता जा रहा है। हजारों-लाखोंकी संख्यामें निरपराध गौएँ प्रतिदिन इसी स्वतन्त्र भारतमें मारी जाती हैं। जबसे भारतभूमिमें गोसंहार होने लगा है, तभीसे हम भारतीय नाना प्रकारके रोग-शोकादि विविध कष्टोंसे पीड़ित हो रहे हैं। हमें ठीक समयपर वर्षाद्वारा न जल प्राप्त होता है और न पृथ्वीमाताद्वारा उचितरूपमें अन्न ही प्राप्त होता है। गोधन भारतीय संस्कृति और सभ्यताका अन्यतम रक्षक है। अत: गोजातिका ह्रास हिंदूजाति और हिंदूधर्मका ह्रास है। इसलिये सभी दृष्टिसे गोवंशकी रक्षा परमावश्यक है। हमें चाहिये, हम संगठितरूपसे समस्त भारतवर्षमें गोरक्षार्थ रचनात्मक दृढ़ आन्दोलन उपस्थित करें और प्रान्तीय तथा केन्द्रीय सरकारसे भी गोरक्षार्थ प्रार्थना करें।

शास्त्रोंमें गोरक्षार्थ 'गो-यज्ञ' भी एक मुख्य साधन कहा गया है। वैदिककालमें बड़े-बड़े 'गो-यज्ञ' और 'गो-महोत्सव' हुआ करते थे। भगवान् श्रीकृष्णने भी गोवर्द्धनपूजनके अवसरपर 'गो-यज्ञ' कराया था। गो-यज्ञमें वेदोक्त गोसूक्तोंसे गोपुष्ट्यर्थ और गोरक्षार्थ हवन, गोपूजन, वृषभ-पूजन आदि कार्य किये जाते हैं, जिनसे गोसंरक्षण, गोसंवर्द्धन, गोवंशरक्षण, गोवंशवर्द्धन, गोमहत्त्व-प्रख्यापन और गो-सङ्गतिकरण आदिमें विशेष लाभ होता है। आज वर्तमान समयकी विकट परिस्थिति देखते हुए गो-प्रधान भारतभूमिमें सर्वत्र गो-यज्ञकी अथवा गोरक्षा-महायज्ञकी विशेष आवश्यकता है। अत: गोवर्द्धनधारी भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रसे प्रार्थना है कि वे भारतवासी धर्मप्रेमी हिंदुओंके हृदयोंमें गोरक्षार्थ 'गो-यज्ञ' करनेकी प्रेरणा करें, जिससे भारतवर्षके कोने-कोनेमें उत्साहके साथ अगणित 'गो-यज्ञ' हों और उन गो-यज्ञोंके फलस्वरूप प्रत्येक हिंदूभाईकी जिह्वामें—

गा वै पश्याम्यहं नित्यं गाव: पश्यन्तु मां सदा।
गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्॥

(महा०, अनु० ७८। २४)

गावो ममाग्रतो नित्यं गाव: पृष्ठत एव च।
गावो मे सर्वतश्चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

(महा०, अनु० ८०। ३)

—इन महाभारतोक्त पुण्यमय श्लोकद्वयकी मधुर ध्वनि सर्वदा नि:सृत होती रहे, जिससे देश और समाजका कल्याण हो।

वल्लभ-सम्प्रदायमें गोसेवाका स्वरूप

[श्रीप्रभुदासजी वैरागी, एम्० ए०, बी० एड्०, साहित्यालंकार]

श्रीकृष्णभक्तिके विभिन्न सम्प्रदायोंमें वल्लभ-सम्प्रदायका भी विशेष महत्त्व है। इसमें श्रीकृष्णचन्द्रके स्वरूप प्रभु श्रीनाथजीकी जिस प्रकार सेवा-आराधना की जाती है ऐसी कदाचित् ही कहीं की जाती होगी। प्रातः-कालसे लेकर रात्रिपर्यन्त प्रभुकी सेवाओंमें अनेक विविधता और श्रेष्ठ सेवा-भावनाएँ विद्यमान हैं। जिस प्रकार एक माता अपने बालकको प्रातःकाल जगनेसे लेकर रात्रि-शयनपर्यन्त उसके दैनन्दिन-क्रमके प्रति सजग रहकर उसे जो अपना स्नेह और सेवाएँ देती है, उसी प्रकारकी सेवाएँ यशोदोत्संगलालित बालभावसे सेवा स्वीकार करनेवाले वल्लभाधीश प्रभु श्रीनाथजीमें ज्यों-की-त्यों की जाती है। व्रजमण्डलमें गिरि-गोवर्धनपर प्यारे श्रीकृष्णचन्द्रके श्रीविग्रहके रूपमें आपका प्राकट्य है, अतः गौ और गोपाल विरला ही समन्वय इस सम्प्रदायमें दृष्टिगोचर होता है।

सम्प्रदायके ग्रन्थोंका अवलोकन करनेसे ज्ञात होता है कि प्रभु श्रीनाथजीका प्राकट्य ही गौ माताके कारण है। एक गौ माता नित्य गिरि-गोवर्धनके ऊपर बने एक टीलेपर जाकर अपने दूधका स्राव करती और वह दूध टीलेके विवरमें प्रविष्ट होकर प्रभुके श्रीविग्रहके ऊपर सीधा ही अभिषेक करता। घर पहुँचनेपर उस गौ माताके स्तनमें दूध नहीं मिलनेपर ग्वालेद्वारा उसके दूधकी वास्तविकताका पता करते समय उसे श्यामसुन्दर प्रभु श्रीनाथजीके इस दिव्य श्रीविग्रहके शुभ दर्शन हुए। ऐसी गौके द्वारा इस भारत-भूतलपर अवतीर्ण हुए वैष्णवोंके परमाराध्य प्रभु श्रीनाथजीकी सेवामें आज भी गोसेवाकी प्रधानता है। यहाँकी गोसेवा देखकर अच्छे-अच्छे गोभक्त आश्चर्यचकित हो जाते हैं और नाथद्वारा आनेपर प्रभु श्रीनाथजीके दर्शनोंके साथ-साथ यहाँकी भारतविश्रुत गोशालामें गौ माताओंके दर्शन अवश्य करते हैं।

वि० सं० १५३५ वैशाख मासके कृष्णपक्षकी एकादशीको मध्यप्रदेशके अन्तर्गत चम्पारणमें सम्प्रदायाचार्य महाप्रभु श्रीमद्वल्लभजीका प्रादुर्भाव हुआ, उसी समय उत्तरप्रदेशके मथुरा जिलान्तर्गत गिरि-गोवर्धनपर प्रभु श्रीनाथजीका मुखारविन्द गिरिगुहासे बाहर आया। प्रारम्भमें व्रजके नर-नारी इन्हें कोई देवता मानकर इनकी आराधना करते और गाय आदिके गुम हो जानेपर इनसे प्रार्थना करते तथा अनुनय-विनय करनेपर व्रजवासियोंकी मनःकामनाएँ पूर्ण हो जातीं और उनकी गुम हुई गाय मिल जाती। इस कारण व्रजके लोग इन्हें प्रेमसे 'गोपालजी' ऐसा कहकर सम्बोधित करने लगे। शनैः-शनैः समग्र व्रजमण्डलमें इन भगवान्‌के चमत्कारोंकी धूम मच गयी और लोग इनके दर्शनार्थ दौड़-दौड़कर गिरि-गोवर्धन आने लगे। इसी समय नरो नामकी एक व्रजभक्तासे इन भगवान्‌ने दूध माँगकर नित्य आरोगना आरम्भ कर दिया। कुछ ही समयमें इन गोपाल भगवान्‌के आस-पास एक गाँव बस गया और गोपालजीके नामपर ही उस गाँवका नाम गोपालपुर पड़ गया।

आचार्यचरण श्रीमद्वल्लभाचार्यजी भरत-परिक्रमा करते समय चम्पारण पधारे। उस समय उस पुण्यभूमिपर इन्हीं गोपाल-स्वरूप प्रभु श्रीनाथजीने आज्ञा देकर श्रीमहाप्रभुजीको गिरिगोवर्धन बुलवाया। भगवदाज्ञा शिरोधार्य कर श्रीमद्वल्लभ मथुरा आये और वहाँसे गिरिगोवर्धन जाकर व्रजभक्त सद्दू पांडेके घर रुके। रात्रि भर दोनोंमें प्रभुके अद्भुत प्राकट्य और उनके अलौकिक चमत्कारोंकी चर्चाएँ चलती रहीं। भोरमें श्रीमहाप्रभुजीके गिरि-गोवर्धन पहुँचनेपर कन्दरासे स्वयं बाहर आकर साक्षात् प्रभु श्रीनाथजीने महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्यजीको अपने गले लगाया तथा अपनी सेवा-व्यवस्थाएँ सँभालनेकी आज्ञा दी। इसी समय आचार्यचरण महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्यको 'गर्गसंहिता' में उल्लिखित महर्षि श्रीगर्गाचार्यजीकी भविष्यवाणी याद आयी—

गोवर्धनगिरौ राजन् सदा लीलां करोति यः।
श्रीनाथं देवदमनं तं वदिष्यन्ति सज्जनाः॥

(७। ३०। ३१)

तदनुसार श्रीमद्वल्लभाचार्यजीने वहाँ समस्त व्रजवासियोंको इन गोपालजीका वास्तविक नाम 'श्रीनाथजी' बतलाया। अब तो प्रभु-आज्ञानुसार आचार्यचरण श्रीमहाप्रभुजी वहीं रह गये और नन्दनन्दन प्रभु श्रीनाथजीको शुद्ध स्नानादि

कराकर वस्त्र अङ्गीकार कराये तथा प्रथम बार अन्नका नैवेद्य अरोगाया। प्रभु श्रीनाथजीको गौ माता बहुत प्यारी लगती है, अतः आपने सद्दू पांडेको अपनी सोनेकी अँगूठी देकर उसकी गौ माताओंमेंसे द्वापरयुगसे श्रीनन्दरायजीके समयसे चले आ रहे गोवंशकी एक 'घूमर' नामवाली गौ माता खरीदी और उसे प्रभु श्रीनाथजीकी सेवामें रखा।

इसी सेवाक्रममें श्रीमहाप्रभुजीने पूरणमल खत्रीको आज्ञा देकर गिरि-गोवर्धनपर मन्दिर बनवाया तथा प्रभु श्रीनाथजीके श्रीविग्रहको उसमें पधराया। सेवा-व्यवस्था आगे बढ़ी। सूरदास प्रभृति चार गायक भक्त कवियोंको सेवामें नियुक्त किया गया तथा प्रभुकी सेवाके लिये आनेवाली गौ माताओंके लिये गोशाला निश्चित की गयी। आगे चलकर श्रीमहाप्रभुजीके यशस्वी सुपुत्र गुँसाईजी श्रीविट्ठलनाथजीने अपनी ओरसे चार गायक भक्त कवियोंको और एकत्रित कर अष्टछापकी स्थापना की। आज अष्टछापके अन्तर्गत प्रभु-लीलाके कई प्रसंगोंमें गोरस-लीला-माध्यमसे अनेकों स्थलोंपर गो-प्रियताका प्रशस्ति-गान किया गया है। कुछ पदोंकी एक-आध पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

'धेनु दुहत देखत हरि ग्वाल',
'दे मैया री दोहनी दुहि लाऊँ गैया',
'धेनु दुहत अति ही रति बाढ़ी',
'मैया! मैं नहीं माखन खायो'

(सूरदास)

'ब्याई गाय बछरुआ चाटत, हौं पीवत हों प्रतिखन धैया।
याही देखी धोरी बिझकानी, मारन को दौरि मोहि गैया।'

(परमानन्ददास)

'अरी हम दान लैहें रस गोरस को, यही हमारो काज',
'मथनियाँ आन उतार धरी'

(कुम्भनदास)

'सात दिवस सुरपति पचि हार्‍यो, गोसुत सींग न भीनो'

(कृष्णदास)

'भाजन फोरि, धोरि सब गोरस, लै माखन दधि खात'

(चतुर्भुजदास)

'कोऊ दह्यो, कोऊ मह्यो, कोऊ माखन, जोरि-जोरि आछौ अछूतो ही लाई।'

(नंददास)

परमानन्ददास और छीतस्वामीने तो विलक्षण उद्‌गार प्रकट किये हैं—

गोधन पूजें गोधन गावें।
गोधन के सेवक संतत हम, गोधन ही को माथो नावें॥
गोधन माता-पिता गुरु गोधन, देव जानि नित ध्यावें।
गोधन कामधेनु कल्पतरु, गोधन पै माँगे सोई पावें॥
गोधन खिरक खोरि गिरि गहवर, रखवारो घर वन जहँ छावें।
'परमानन्द' भावतो गोधन, गोधन कों हमहूँ पुनि भावें॥

आगें गांइ पांछे गांइ, इत गांइ, उत गांइ,
गोविंद कों गांइनि में बसिवोई भावै।
गांइनि के संग धावै, गांइनि में सचु पावै
गांइनि की खुर-रज अंग लपटावै॥
गांइनि सों व्रज छायौ, वैकुंठ विसरायौ,
गांइनि के हित गिरि कर लै उठावै।
'छीत-स्वामी' गिरिधारी, विट्ठलेस वपु-धारी,
ग्वारिया कौ भेषु धरैं गांइनि में आवै॥

अष्ट सखाओंमें श्रीकुंभनदासके लड़के कृष्णदासने तो प्रभु श्रीनाथजीकी गायोंकी रक्षाके लिये स्वयं सिंहसे लड़कर अपने प्राणतक न्यौछावर कर दिये।

व्रजमण्डलमें जैसे-जैसे प्रभु श्रीनाथजीके चमत्कार बढ़े और श्रीगुँसाईजीका प्रभाव बढ़ा, वैसे-वैसे प्रभु श्रीनाथजीकी सेवामें वृद्धि हुई। प्रभुकी गोशालामें गौ माताओंकी संख्या बढ़ने लगी। श्रीगुँसाईजीने व्रजमण्डलमें यत्र-तत्र प्रभु श्रीनाथजीकी गोशालाओंकी स्थापनाएँ कीं तथा तत्कालीन मुगल सम्राट् अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँसे प्रभु श्रीनाथजीकी गौ माताओंके चरने-हेतु असंख्य एकड़ गोचर-भूमियाँ भेंटमें लीं। आज भी उन भूमियोंपर दिये गये पट्टे स्थानीय प्रभु-मन्दिरके श्रीकृष्ण-भण्डारमें अवलोकनीय हैं।

मुगल सम्राट् औरंगजेबके समय वि० सं० १७२८ में प्रभु श्रीनाथजी गिरिगोवर्धन छोड़कर मेवाड़ पधारे और इस वीहड़में अपना वास-स्थान बनाया। जो आज श्रीनाथजीके नामपर ही 'नाथद्वारा' नगरके नामसे प्रसिद्ध है। प्रभु श्रीनाथजी व्रजसे चले तो श्रीमहाप्रभुजीके वंशज तिलकायित श्रीदाऊजी महाराजके साथ सेवावाले, व्रजवासी और

नंदरायजीके घर गोवंशकी घूमर गायके वंशकी कतिपय गौ माताएँ भी व्रजमण्डलसे साथ आयीं। पराक्रमी मेवाड़-महाराणा राजसिंहकी भक्तिसे तिलकायित श्रीदाऊजी महाराजकी भावनाके अनुसार श्रीहरिराय महाप्रभुकी देख-रेखमें मन्दिर सिद्ध हुआ तो साथ-ही-साथ गोशाला भी नियुक्त हुई। मेवाड़में विराजमान होनेसे समग्र भारतके वल्लभ-सम्प्रदायी वैष्णव नाथद्वारा आने लगे। प्रभु-सेवामें प्रभुता बढ़ने लगी। असंख्य गौ माताएँ भेंटमें आने लगीं, अत: नगरसे तीन किलोमीटर दूर नाथूवास नामक स्थलपर एक विराट् गोशालाका निर्माण किया गया। प्रभु श्रीनाथजीकी अनगिनत गौ माताएँ अब यहाँ रहने लगीं। यहाँपर भी गौ माताओंके वासस्थानकी संकुचितताको देखकर तिलकायित श्रीमानोंने नाथद्वाराके आस-पास बारह गोशालाएँ और बनवा दीं। समयकी अनुकूलता और गोचारणकी सुविधासे सभी गोशालाओंमें गौ माताएँ वास करने लगीं। परंतु मुख्य गोशाला नाथूवासकी ही निश्चित रही।

बीचमें ऐतिहासिक क्लेश आ जानेपर प्रभु श्रीनाथजीको उदयपुर और फिर घस्यार जाना पड़ा तो प्रभुके साथ गौ माताएँ भी वहाँ गयीं। आज भी वहाँ गोशाला बनी हुई है और गौ माताएँ निवास करती हैं।

घस्यारसे पुन: प्रभुके नाथद्वारा पधारनेपर मेदपाटेश्वर महाराणाओंने श्रीनाथजीकी गौ माताओंके चरने-हेतु कई एकड़ गोचर-भूमि भेंट की, वे आज भी बड़ा बीड़ा और छोटा बीड़ाके नामसे प्रसिद्ध हैं। जिसमें पुष्कल घास उत्पन्न होती है और वर्षभर उसी घासको खाकर गौ माताएँ पवित्र दूध दुहाकर आनन्दकन्द प्रभु श्रीनाथजीमें अपनी सेवाएँ पहुँचाती हैं। प्रभु श्रीनाथजीकी अष्टयाम-सेवामें दूधकी प्रचुरता तो है ही, लेकिन सभी भोगोंमें गोरसकी प्रधानता रहती है। प्रभुके आरोगनके सभी कच्चे तथा पक्के पक्वान्न तो शुद्ध गायके घीसे ही निर्मित होते हैं। आज भी प्रभुकी नित्यकी सेवा, मनोरथ, अन्नकूट और छप्पन भोगमें हजारों मन शुद्ध घी अरोगाया जाता है।

आजके युगमें द्वापरकी छटाको देखना हो तो इस गोशालामें हमें देखनेको मिलेगी। विविध-रंगी, जाति-जातिकी, भिन्न-भिन्न प्रकारके स्वभाववाली, नूपुर-घुँघरुओं तथा गलेमें बँधी घंटियोंसे सुसज्जित असंख्य पयस्विनी गौ माताएँ यहाँ विराजती हैं। गौओंको यहाँ बाँधा नहीं जाता है। वे अपने-अपने अहातेमें स्वतन्त्र रूपसे विचरण करती हैं। प्रत्येक अहातेमें पर्याप्त घास तथा बाहर निर्मल जलकी कुँडियाँ भरी रहती हैं। गौ माताएँ जितना चाहें उतना घास खायें और जितना जल पीना चाहें उतना पीयें—उन्हें पूरी छूट है। दुहारीके समय ग्वाला बछड़ोंके निवास-स्थानसे बछड़ा लाकर उसकी माताका नाम लेकर पुकारता है जैसे घूमर, महावन, जमना, काजल, कस्तूरी और नखराली आदि-आदि, तो नाम सुनकर समूहमेंसे वही गाय ग्वालेके पास आती है और अपने वत्सको दूध पिलाकर दुहारी करा करके पुन: अपने समूहमें चली जाती है। इस प्रकार इस गोशालामें चार बार गो-दोहन होता है एवं समस्त दूध सेवकोंद्वारा घड़ोंमें भरकर प्रभु श्रीनाथजीके मन्दिरमें पहुँचा दिया जाता है। कार्तिक मासकी गोपाष्टमीपर इस गोशालामें गो-दर्शन मेला लगता है। भारतमें शायद ही कहीं गौ माताओंके नामपर ऐसा मेला लगता हो। सारे नगरके स्त्री-पुरुष सज-धजकर संध्या-समय इस गोशालामें जाते हैं और ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं, गवाक्षों, बरामदों तथा चबूतरोंपर खड़े होकर गोक्रीडाका आनन्द लेते हैं। इस समय यहाँ खेलनेवाली गौ माताओंको ग्वालबाल चर्मकुप्पी बजा-बजाकर खेलाते हैं और सबके बाद प्रभु श्रीनाथजीकी ओरसे समस्त गौ माताओंको गुड़ तथा घीसे बनी थूली खिलायी जाती है। जिस समय गौ माताएँ 'चर' में थूली खाती हैं, उस समय कई नर-नारी उन गौ माताओंकी परिक्रमा कर अपने-आपको धन्य-धन्य मानते हैं। इस अवसरपर श्रीनन्दरायजीके गोवंशकी गौ माताके दर्शन भी अत्यन्त आह्लादकारी होते हैं। भावुक भक्त आज भी इस वंशकी गौ माताके चरण-स्पर्शकर इसके नीचेसे निकलकर एवं इसकी पूँछको सिरपर फिराकर प्रमुदित होते रहते हैं। ऐसा भी सुना जाता है कि कई श्रद्धावान् गोपभक्तोंको रात्रिके समयमें गोशालामें बछड़ोंके साथ खेलते हुए प्रभु श्रीनाथजीके दर्शन हुए हैं।

यहाँकी दीपावली और अन्नकूट विश्व-विख्यात है। तीन किलोमीटर दूरसे चलकर गौ माताएँ प्रभु श्रीनाथजीमें होनेवाली गोवर्धन-पूजाके लिये नाथद्वारा आती हैं। रंग-महावरसे सजी-धजी पीतल तथा चाँदीसे सुशोभित-शृंग,

पाँवोंमें पायजेब और घुँघरू, गलेमें घंटिका, सिरपर मोरपंखका किरीट पहिने ये गौ माताएँ नगरमें आती हैं, उस समय नर-नारियोंका झुंड दर्शनके लिये मार्गोंमें उमड़ पड़ता है। दीपावलीके दिन संध्या-समय कान्ह-जगाईके अवसरपर ये गौ माताएँ मन्दिरमार्गको अपनी क्रीडाओंसे प्रतिध्वनित करती हुई प्रभु श्रीनाथजीके मन्दिरमें प्रवेश करती हैं। उस समयका नयनाभिराम दृश्य देखते ही बनता है। मन्दिर-प्रवेशके पश्चात् वाद्य-यन्त्रोंद्वारा गौ माताओंका अभिनन्दन किया जाता है तथा प्रभु श्रीनवनीतप्रियजीके समक्ष तिलकायित श्रीमान् श्रीनन्दरायके गोवंशकी गायको आगे बुलाते हैं और कान्ह-जगाई करते हैं। कान्ह-जगाईका अभिप्राय होता है गोवर्धन-पूजा-हेतु सपरिवार पधारनेके लिये गौ माताके कानमें दिया हुआ निमन्त्रण। दूसरे दिन दोपहरमें वे ही सब गौ माताएँ बाजारोंमें खेलती हुई मुख्य मन्दिरमें प्रवेश करती हैं। उस समय दर्शनार्थियोंकी भीड़से बाजार खचाखच भर जाते हैं। मन्दिरके अंदर प्रभुके समक्ष तिलकायित श्रीमान् गोमयसे बने गोवर्धनकी पूजा करते हैं। तदनन्तर उस पवित्र वंशकी गौकी पूजा-तिलककर उसे गोवर्धनपर चढ़ाया जाता है। इसीके साथ समूह-के-समूह गौ माताएँ प्रभु श्रीनाथजीके मन्दिरसे निकलकर मुख्य बाजारसे सभीसे अभिवन्दित होती हुई तीन किलोमीटर स्थित अपनी मुख्य गोशालामें पहुँच जाती हैं। इस प्रकार सुरभि और श्रीनाथका यह मिलन सर्वत्र सराहा जाता है।

प्रभु श्रीनाथजीके सम्मुख किये जानेवाले दानोंमें गोदानका सबसे बड़ा महत्त्व है। प्रत्येक सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणपर ग्वाले लोग गौ माताको प्रभु श्रीनाथजीके सामने ऊपर मन्दिरकी डोल तिबारीमें लाते हैं और वहाँ मन्त्रोच्चारणके साथ विधिपूर्वक वह गौ माता मन्दिरके कुलपुरोहितको दान कर दी जाती है। ग्रहणमें प्रभु श्रीनाथजीके राजभोगका सकड़ी महाप्रसाद पूरा-का-पूरा गौ माताओंको खिला दिया जाता है।

नन्दराजकुमार प्रभु श्रीनाथजीको वस्त्रालंकरणसे शृंगारित कर देनेके बाद उनके दोनों ओर चित्रकारीकी पिछवाई लगायी जाती है। पिछवाइयोंमें प्रभु श्रीनाथजीका गोप्रेम स्पष्ट झलकता प्रतीत होता है। उन पिछवाइयोंमें गोपूजन, गोधूलि-वेला, संध्या-आरती, वत्स-द्वादशीपर बछड़ा ले जाने, गो-चारण, गोवर्धनपर दुग्धस्राव, गोवर्धन-धारण तथा गोशाला आदिकी गो-प्रधान चित्रयुक्त अनेकों पिछवाइयाँ हैं, उनमेंसे छप्पन भोग तथा गोपाष्टमीपर आनेवाली तो पूरी-की-पूरी गौ माताओंकी पिछवाइयाँ हैं। इन पिछवाइयोंके द्वारा गाय और गिरधरके अद्वितीय प्रेमका पता चलता है। वर्षमें एक-दो बार प्रभु श्रीनाथजी अपने श्रीमस्तकपर गोकर्ण भी धारण करते हैं और गोपाष्टमीपर गो-संचालनके भावसे लकुट भी धराते हैं। चाँदीके बड़े-बड़े गोपुर और कपाटयुक्त संगमरमरी फर्शवाले इस मन्दिरमें दीपावलीपर्वपर गौ माताओंके पधारते समय उनके पादपद्मोंमें कोई पीडा नहीं पहुँचे इसलिये मन्दिरके गोवर्धन-पूजा-चौकके प्राङ्गणको बिलकुल कच्चा रखा गया है।

पञ्चामृत और प्रसादमें गोरसकी प्रमुखता रखनेवाले प्रभु श्रीनाथजीके राजभोगके दर्शनोंमें उनके सामने चाँदी और काष्ठकी परम सुसज्जित गौ माताओंको रखा जाता है। मङ्गलभावन प्रभु श्रीनाथजी उनके सम्मुख रखी हुई गौ माताओंको निरखते-परखते संसारको अपने शुभ दर्शन देते रहते हैं। इस प्रकार वैष्णवोंको गौ तथा गोविन्दके एक साथ दर्शन करनेका अनायास लाभ मिलता रहता है। सम्प्रदायके परमाराध्य प्रभु श्रीनाथजीके समान ही पुष्टिमार्गके सात घरों तथा अन्य मन्दिरोंमें विराजमान होनेवाले प्रभु-विग्रहोंकी सेवामें भी गोसेवाका प्राधान्य बना हुआ है।

यह वल्लभसम्प्रदाय गोपाल, गोस्वामी, गौ और ग्वालबाल-प्रधान सम्प्रदाय है। जो वैष्णव प्रभु श्रीनाथजीकी सेवाएँ करते हैं, उन्हें गौ माताओंकी सेवा करनेका स्वतः ही सौभाग्य प्राप्त हो जाता है। प्रभुचरण श्रीविट्ठलनाथजी अपनी गोप्रियताके कारण ही 'श्रीगुसाँईजी' की पदवीसे विभूषित हुए थे और आगे चलकर इसी गोसेवाके कारण उनके वंशज 'गोस्वामी' नामसे पुकारे जाने लगे, जिन्हें आज इस सम्प्रदायमें पूज्यपाद, धर्मगुरु, आचार्य माना जाता है। शताब्दियोंसे गोविन्दके साथ गौ माताकी सेवासे ही गोस्वामीवर्ग सर्वकालपूजनीय तथा अभिनन्दनीय बना हुआ है।

'स्वामिनारायण'-सम्प्रदायमें गोसेवा और गोसम्बन्धी व्रत

[श्रीहरिजीवनजी शास्त्री]

आदिकालसे गौ, गङ्गा और गीता भारतीय संस्कृतिके तीन आधार-स्तम्भ रहे हैं। सारे विश्वमें धार्मिक और सामाजिक क्षेत्रोंमें गौकी महिमा स्पष्ट है। आज सारी दुनियाका डेयरी-उद्योग प्रायः गायपर ही निर्भर है। गायका दूध, दही, घी आदिका उपयोग केवल भोजनके रूपमें ही नहीं, अपितु आयुर्वेदिक दवाइयों एवं यज्ञ-याग, अभिषेक-जैसे शुभ कार्योंमें भी किया जाता है। पञ्चगव्य एवं पञ्चामृतकी महिमा सुविदित ही है। यात्राके अवसरपर घरसे बाहर निकलते समय गौका दर्शन महान् सगुन माना गया है। गोखुरसे उड़ी हुई पवित्र धूलिराशिके स्पर्शसे भूत-प्रेतादिजन्य बाधाओंसे मुक्ति होती है। इस प्रकार गायका सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं आध्यात्मिक सभी क्षेत्रोंमें विशिष्ट योगदान है। वेदादि शास्त्रों तथा सभी धर्म-सम्प्रदायों आदिमें उसकी महिमा गायी गयी है और उसकी सेवा करनेका विशिष्ट निर्देश भी दिया गया है।

स्वामिनारायण-सम्प्रदायमें भी गोसेवा, गोमहिमा, गोव्रत-विधान आदिका महत्त्वपूर्ण स्थान है। सम्प्रदायके धर्मग्रन्थ—'सत्संगी जीवन' के पञ्चम प्रकरणमें भगवान् स्वामिनारायणने स्वयं गायका बहुलक्षी महत्त्व समझाया है। जब यन्त्रयुगका आगमन ही नहीं हुआ था, तबसे लेकर आजतक गायसे पैदा किये गये बैलसे ही सारे विश्वमें खेतीका कर्म होता रहा है। खेतमें उपयोग किये जानेवाले बैलकी चाकरी या सँभाल किस तरह करनी चाहिये, उसका निर्देश भी इसमें अच्छी तरह किया गया है। जैसे कि अपंग, दुर्बल, थके हुए, रोगी, भूखे और अंधे बैलको कभी भी खेतमें नहीं जोतना चाहिये। जो हृष्ट-पुष्ट हो, नीरोग हो, बलवान् और भूख-प्यासरहित हो उसीको खेतमें जोतना चाहिये। कभी भी निर्दय होकर बैलको लकड़ी या चाबुकसे नहीं मारना चाहिये।

वनमें रूखा-सूखा घास खाकर गायें हमें अमृत-जैसा दूध देती हैं। जिसके दूध और घीसे यज्ञमें आहुतियाँ देनेसे देवगण प्रसन्न होते हैं। गायके सभी अङ्गोंमें देवताका वास है, इसलिये गायकी पूजा करनी चाहिये और अनिष्ट तत्त्वोंसे उसकी रक्षा भी करनी चाहिये। गाय और बैलकी रक्षाहेतु स्वामिनारायण भगवान्ने यहाँतक बताया है कि गाय और बैलके बाँधनेके स्थानपर हमेशा एक तेज हँसिया रखना चाहिये, क्योंकि रस्सीसे बँधे हुए पशुओंके सींग कभी-कभी एक-दूसरेकी रासमें फँस जाते हैं, जिससे उन्हें बहुत ही पीड़ा होती है। यदि समयपर उन्हें छुड़ाया न जाय तो वे कभी मर भी जाते हैं। इसलिये उनकी रक्षा-हेतु गौशालामें एक हँसियाँ रखना चाहिये।

लोकमें गृहस्थाश्रमियोंका गृहस्थ आश्रम गाय और बैलोंसे शोभा देता है; क्योंकि उन्हींसे हव्य और गव्यकी निष्पत्ति होती है। इसलिये गृहस्थोंको चाहिये कि वे गौओं और बैलोंका प्रयत्नसे परिपालन करें।

स्वामिनारायण भगवान् कहते हैं कि 'जब बछड़ा हाजिर न हो या किसी कारणवश गायका गर्भस्राव हो गया हो, वह रोगग्रस्त हो, प्रसूता हो या दो बछड़ेवाली हो तब गायको दूहना नहीं चाहिये।'

जो गृहस्थ बहुत ही भक्तिभावसे गौ माताकी पूजा-वन्दन और पोषण करता है, उसे अश्वमेधादि यज्ञफलकी शीघ्र ही प्राप्ति होती है। इसके विरुद्ध जो पापी पुरुष गायको दुहते समय डंडों आदिसे मारता है या गालियाँ देता है वह पापी कोटि वर्षतक नरककी अग्निमें जलता है।

गोपालनमें जो पुण्य है उससे दस गुना पुण्य वृषभके पालन करनेमें है। वृषभोंकी महिमा गाते हुए स्वामिनारायण भगवान् कहते हैं कि 'धान, गेहूँ इत्यादि नाना प्रकारके अन्नोंका उत्पादन बैल करता है और अन्नको अपनी खुरसे रौंदता है तथा अन्नसे भरी हुई बैलगाड़ी खींचकर घरपर या बाजारमें ले जाता है। इस प्रकार किसानोंको एवं सभी प्रजाओंको सुख प्रदान करनेसे बैल भी हमारे लिये पूज्य है।'

वृषभोंके बारेमें हमदर्दी प्रदर्शित करना हमारा परम कर्तव्य है। क्योंकि वे सारा दिन कितना सामान ढोते हैं, थक जाते हैं, दुःखी हो जाते हैं, फिर भी अपने दुःखको, मजबूरीको अपने स्वामीके पास नहीं बता सकते हैं। वे लाचार और बेबस हैं। भगवान्ने उन्हें बोलनेकी शक्ति नहीं

दी है। फिर भी वे रूखा-सूखा घास खाकर प्रसन्न होकर मनुष्योंसे भी अच्छी तरह ईमानदारीसे अपना कर्तव्य समझकर सेवाभावसे अपने कार्यमें प्रेमसे जुटे रहते हैं। इसीलिये हमें भी चाहिये कि हम उन्हें पूरा आराम दें, उनका अच्छी तरहसे पोषण करें, समय-समयपर उनकी चिकित्सा करवायें। जो गृहस्थ घरके आँगनमें बँधे हुए गाय और बैलका तृण और जलसे समय-समयपर पोषण नहीं करता, वह रौरव-नरकमें जा गिरता है।

यदि आपकी स्थिति अच्छी न हो तो पशु-पालनकी शक्तिके अभावमें क्या करना चाहिये? इस सम्बन्धमें भगवान् स्वामिनारायणने शिक्षापत्रीमें बताया है कि पशुपालनमें अशक्त गृहस्थोंको चाहिये कि वे अपने गाय आदि पशुओंको जो पशु-पालनमें शक्तिमान् हो, उसे सुपुर्द कर देना ही इष्ट है अथवा गृहस्थोंको चाहिये कि वह गाय आदि पशुओंका घास, पानी आदिसे अच्छी तरहसे पालन न कर सके तो उससे बेहतर है कि पशुओंको घरमें रखना ही नहीं चाहिये। यहाँतक कहा गया है कि अपनी संतानसे भी अधिक गौको महत्त्व देते हुए तथा पुत्रादिकी अपेक्षा प्रथम गाय और बैलको चारा देना चाहिये। वही किसान सुखी होता है जो गौ आदि पशुओंकी सम्भावना पुत्रकी तरह करता है। किंतु जिसके घरके आँगनमें भूखे-प्यासे पशु बँधे रहते हों, उसे मच्छर काटते हों तो वह गृहस्थ पशुओंकी हायसे दरिद्र बन जाता है और उसके किये पुण्योंका नाश हो जाता है—

तृषिताः पशवो बद्धा कन्या चापि रजस्वला।
देवताश्च सनिर्माल्या घ्नन्ति पुण्यं पुराकृतम्॥

वृषभोंको खेतीके कर्ममें जोतनेसे पहले उसकी पूजा करनेकी 'सत्संगी जीवन' में आज्ञा दी गयी है। वृषभोंके सींगको सिंदूर आदि रंगसे रँगकर तथा कुंकुम और अक्षतसे उसकी पूजा करनेके बाद ही उसको खेतमें जोतना चाहिये। गाय आदि पशुओंके लिये अन्न-संग्रहपर भी जोर देते हुए शिक्षापत्री (१४१) में बताया है—

यथाशक्ति यथाकालं संग्रहोऽन्नधनस्य च।
यावद् व्ययं च कर्तव्यं पशुमद्भिस्तृणस्य च॥

गृहस्थको अपनी सामर्थ्यके अनुसार अन्न और धनका संग्रह अवश्य करना चाहिये। साथ-साथ गाय आदि पालतू पशुओंके लिये अपनी शक्तिके अनुसार घास-पातका भी संग्रह करना आवश्यक है। कम-से-कम दो सालतक जितने घास-पातका उपयोग किया जा सके, उतने घास-पातका संग्रह जरूरी है। क्योंकि वर्षाऋतु, दुष्काल आदिके पहले घास-पातका संग्रह न करनेवालेको दु:ख उठाना पड़ता है।

हिन्दू संस्कृतिमें गोदानका महत्त्व भी कम नहीं है। प्राचीन कालसे हमारे यहाँ शुभ अवसरपर गोदान करनेकी रीति है। इसीका समर्थन करते हुए 'सत्संगी जीवन' में भी शुभ अवसरपर गोदान करनेका उल्लेख मिलता है। स्वयं भगवान् श्रीस्वामिनारायणने भी समझाया है कि विद्यार्थी एवं कथाकारोंके लिये, मेधाशक्ति और स्वास्थ्यके हेतु गायका दूध सर्वोत्तम है।

अहिंसा-प्रेमी भगवान् स्वामिनारायण और उनके अनुयायियोंने आजसे लगभग दो सौ साल पहले गुजरातमें प्रचण्ड अहिंसक गोरक्षा-आन्दोलन भी छेड़ा था। अहिंसाका झंडा लेकर भगवान् स्वामिनारायण और संतोंने सर्वत्र गोहत्या और हिंसायुक्त यज्ञके विरुद्ध प्रचण्ड आवाज उठायी। साथ-साथ राजकोटके अंग्रेज गवर्नर सर मालकमको इस सम्बन्धमें चेतावनी भी दी। तब अंग्रेज अधिकारीने इस बातको स्वीकृत किया और गोहत्या बंद करनेका वचन दिया। सम्प्रदायके धर्मशास्त्र 'सत्संगी जीवन' के पञ्चम प्रकरणके पैंतालीसवें अध्यायमें गोवधका प्रायश्चित्त इस प्रकार बताया गया है—

'जो मनुष्य अज्ञानसे लकड़ी या पत्थरसे दुर्बल गायको मारे और वह गाय मर जाय तो गोवध करनेवाला अन्नका आहार छोड़कर एक मासतक गोसेवामें लगा रहे, जब गाय वनमें घास चरने जाय तो वह भी उसके पीछे-पीछे जाय। गाय जहाँ कहीं भी जाय वह भी उस गौके पीछे-पीछे बिना जूता पहने फिरता रहे। गौ खड़ी रहे तो खड़ा रहे, गौ चले तो चले, बैठे तब बैठे, धूप, ठंड और वायुको भी सहे, इस प्रकार तपस्या करता रहे, ब्रह्मचर्यका पालन करे, गायके सो जानेपर उसीके सम्मुख बिना चादर बिछाये वह सोवे। चोरोंसे, हिंसक पशुओंसे, रोगकी पीड़ासे, गड्ढे आदिमें गिर जानेसे गायकी रक्षा अपने प्राणकी बाजी

लगाकर भी करता रहे। अपने या दूसरेके खेत या खलिहानमें चरती गायको देखकर भी खेतके मालिकको जानकारी न दे। गायके स्तनको पीते हुए बछड़ेको भी कुछ न कहे।

इस प्रकार एक मासतक व्रत पूरा करनेके बाद शास्त्रविधिके अनुसार सुपात्र ब्राह्मणको सुवर्ण-सींगवाली कांस्यपात्र-निर्मित दोहनपात्रके साथ बछड़ेसहित सुन्दर स्वभाववाली बहुत दूध देनेवाली गायको वस्त्र और रत्नसहित दान दे। गोदानके पश्चात् मुक्त-मनसे दक्षिणा देनेके बाद वधकर्ता गोवधके पापसे मुक्त होता है।'

गोव्रत—सम्प्रदायके शास्त्रमें गो-प्रायश्चित्त-सम्बन्धी अनेक व्रत बताये गये हैं—यथा—सोमायनव्रत, सांतपनव्रत, महासांतपनव्रत, यतिसांतपनव्रत आदि। इसी प्रकार गायके गोबरके साथ निकले हुए जवसे एक मास जीवनयापन करे तो यह उत्तम याचकव्रत कहा गया है। गोमूत्रसे स्नान, गायके गोबरका भक्षण, गौके मध्यमें निवास, गायके गोबरमें शयन, गौके खाने-पीनेपर ही खाना-पीना, गौके बैठने और खड़े रहनेपर बैठना या खड़े रहना—इस प्रकारका एक मासका व्रत 'गोव्रत' कहा गया है।

इन सभी गोसम्बन्धी व्रतोंके करनेवालोंको यमपुरीमें जाना नहीं पड़ता। लक्ष्मीकी कामनावाला, पुष्टिकी इच्छावाला और हरि-प्रसन्नताकी अभिलाषावाला कोई भी भक्त अपनी भक्ति और शक्तिके अनुसार इनमेंसे कोई भी व्रत करे तो उसकी मन:-कामनाएँ गौ माता अवश्य पूर्ण करती हैं। अत: विश्वमें गोहत्या बंद करके ऐसी महिमामयी गौका पालन, गोसेवा और गोभक्तिको बढ़ाना चाहिये।

रामस्नेहि-संत-साहित्यमें गायकी महत्ता एवं बहुला गौका आख्यान

[खेड़ापा पीठाधीश्वर श्री १००८ श्रीपुरुषोत्तमदासजी महाराज रामस्नेही]

वैसे तो रामस्नेही-पद्धतिमें प्राणिमात्रकी भगवद्भावसे सेवा करनेकी प्रेरणा दी जाती है, किंतु मोक्षदायिनी गायके प्रति श्रद्धा विलक्षण ही प्रतीत होती है। इस विषयमें श्रीदयालुदासजी महाराजद्वारा अपनी वाणीमें वर्णित गायकी ओरसे किये जानेवाले भगवन्निवेदनमें गायको मोक्षदायिनी मानते हुए प्रकट किये गये उद्गार कितने प्रेरणादायक हैं—

गौ पुकार इम करत, जाय साहिब के आगे।
पशू जूण हम पाय, जीव किरतब फल लागे।
हिन्दू मूसलमान, दुग्ध सबही कूं देऊं।
मेरा जाया वाय, खेत निपजै अन सेऊँ।
कूंप पयाल रसाल जल, रस सुख सब कूं देत है।
जनरामा मृतलोक में, घिरत सुधा मुख लेत है॥
गौ मुत उत्तम लेत, धवल चौके उतमाई।
दोय राह भिन नांय, हमैं सब कूं सुखदाई।
पृथमी गऊ सरूप, धवल शिर धरा सुधारी।
खानपान पहरान, सरब रचना सुखकारी।
जीयां जुगत मूवों मुगत, पद उपान रिच्छया करै।
रामा हिन्दू पूज हैं, मुसलमान दण्ड क्यूं धरै॥

(श्रीदयालु बाणी, भाग ६)

इन्हीं श्रीदयालुदासजी महाराजने अपने ग्रन्थ 'ग्रन्थश्री गुरुप्रकरण' (दयालु बाणी भाग २) में बहुला नामक गायके उपाख्यानके माध्यमसे गायकी सत्यनिष्ठाको बड़े विलक्षण-रूपमें उजागर किया है। गुरुवाणीमें वर्णित यह बहुला गौका प्राचीन आख्यान साररूपमें इस प्रकार है—

पूर्वकालमें एक हरिभक्तके यहाँ एक सत्यवादिनी तथा गुरुभक्तिपरायणा बहुला नामक गाय थी। सामान्य गायोंके समान वह भी गायोंके समूहके साथ घास चरने वनमें जाया-आया करती थी। एक दिन बहुला गाय अन्य गायोंसे बिछुड़कर वनमें बहुत आगे निकल गयी। वहाँ उसे एक सिंह मिल गया। सिंहको देखकर ठिठककर बहुला जहाँ-की-तहाँ खड़ी हो गयी। उसे अपने मरनेका तो कोई भय नहीं था, किंतु उसे अपने असहाय बन जानेवाले बछड़ेकी चिन्ता हो रही थी। इसके निवारणार्थ धैर्य रखते हुए बहुला गायने सिंहने कहा—

'हे वनराज! मेरी एक प्रार्थना सुनिये। आप आज मुझे मत मारें। मैं सत्यतापूर्वक आपको वचन दे रही हूँ कि 'अपने बछड़ेसे एक बार मिलकर तथा उसे दूसरोंको सुपुर्द कर कल प्रात: मैं यहींपर आपके पास लौट आऊँगी। तब

आप मुझे आरामसे खा जाना।' यह सुनकर वनराज बोला—'तुम तो मेरी शिकार हो। तुम्हारी बातका कैसे भरोसा किया जाय?' इसपर बहुलाने कहा—

दरशण भंग साध अपराधक। लेत दीक्षा कर मनै असाधक।
सो पातक भुगतूं वनराई। जो पै बहुरि पास तुम नाऽऽई॥

अर्थात् 'हे वनराज! यदि मैं दिये वचनानुसार आपके पास लौटकर न आऊँ तो मुझे वह अपराध लगे जो कि संत और भगवान्‌के दर्शनमें विक्षेप करनेवाले पुरुषको तथा गुरु-दीक्षा लेकर भगवान्‌के सम्मुख होनेवालेको मना करनेवाले दुष्ट पुरुषको हुआ करता है।'

सत्यताकी परीक्षाके लिये सिंहने इस बातको मान लिया और बहुलाको छोड़कर उसके पुन: लौट आनेकी प्रतीक्षामें वह वहीं बैठ गया। कुछ रात होते-होते बहुला अपने घर पहुँची। उसने बछड़ेसे कहा—'बेटा आज भरपेट आखिरी बार दूध पी ले।' घबड़ाया हुआ बछड़ा बोला—'माँ! तुम मुझे क्यों छोड़ देना चाहती हो?' बहुलाने कहा—'वनमें मुझे खानेको उद्यत सिंहका पुन: खाद्य बनने-हेतु उसके पास लौट आनेका वचन देकर मैं केवल तुमसे मिलने आयी हूँ। अत: आज तृप्त होकर दूध पी लो। अब तुमसे वियोग होना अवश्यम्भावी है।'

बछड़ा बोला—'हे माता! यहाँ तुम्हारे सिवाय मेरा कौन आधार है?' बहुलाने कहा—'***सब प्रतिपालक समरथ नियरो***'—बेटा! 'सबके रक्षक परमात्मा सबके साथ रहा करते हैं। उनके रहते हुए किसीको किसी प्रकारकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। इसपर भी यदि संतोष न हो तो चल मेरी माँके पास चल। मैं उन्हें तुम्हारी सार-सँभाल सम्हलाकर आरामसे वनमें चली जाऊँगी।'

ऐसा कह अपने बछड़ेके साथ बहुला अपनी माँके पास पहुँचकर बोली—'माँजी! अबसे इस बच्चेकी सार-सँभाल आपके सुपुर्द है।' बहुलाकी माताने कहा—'क्यों! तुम कहाँ जा रही हो?' बहुलाने कहा—'वनमें मुझे खानेको उद्यत सिंहके पास लौट आनेका वचन देकर अपने बच्चेसे मिलने आयी हूँ। अत: मुझे जल्दी ही वहाँ लौटना है।'

बहुलाकी माताने कहा—'तूने ऐसी क्या शपथ उठायी है? क्या वचन दिया है?' बहुला बोली '..................'

जन अपराध पाप गत स्वाला॥
दीक्षा लेत मने कर कोई।
फिर नाऽऽऊँ तो अकृत मोई॥

अर्थात् 'गुरु-दीक्षा लेकर भगवत्सम्मुख होनेमें तथा संत-दर्शनमें बाधा देनेमें जो अपराध बनता है—यदि लौटकर न आऊँ तो मुझे वह दोष लगे' मैंने शपथपूर्वक वनराजको यह वचन दिया है।

बहुलाकी माताने कहा—सुनो पुत्री!—

एती ठौड़ कूड़ नहि दोषण। कहूँ धिया सत वचन जु मो सुन॥
साम काम पितुमाता कारण। गुरुसेव परपीर निवारण॥
सज्जन हित कै प्राणहि जावत। पुनि शिशु हेत दोष नहि लावत॥
सप्तवातमें कूड़ न पातक। महत पुरुष वरणे सुण जातक॥

माताके इस प्रकारके लुभावने तथा नीतियुक्त वचन सुनकर भी सत्य प्रतिज्ञावाली बहुला अपने निश्चयसे नहीं डिगी। वह बोली—

बहुला वचन मातु सुन लीजै। एह बन्धन जग फन्द पड़ीजै॥
झूठ पाप सम पाप न माता। जनम जनम लग थंभ न ताता॥
दीनी शपथ इसी मैं केहर। चूकां ठौड़ नरक नहिं हे हर॥
प्रिये एकोत्तर जन्तु हजारा। प्राणी भुगते जन अहंकारा॥
सुगरा होय नुगरता करही। पाप अघोर कहो कद टरही॥
झूठ बोलिये एकहि थानक। गुरुधुम हेत बंचै पर प्राणक॥

यह सुनकर माता और बछड़ेने कहा—'यदि उस सिंहको खुराक ही देनी है तो (तुम-जैसी परम उपयोगी साध्वी गौकी रक्षाके लिये (हम) (माता और बछड़ा) अपना देह उस सिंहको दे देते हैं।' यह सुनकर बहुला बोली—'जो वचन दे उसे ही अपना देह सौंपना चाहिये। ऐसा न होनेपर महान् असत्यताका दोष लग जाता है।' ऐसा कहकर बहुला तत्काल वनकी ओर दौड़ चली। माता और बछड़ा विलाप करते पीछे रह गये। गायका स्वामी भी इससे बहुत उदास हो गया।

बहुत शीघ्र बहुला उसकी प्रतीक्षामें बैठे सिंहके पास पहुँच गयी और बोली!—'हे वनराज! आप कितने महान् हैं? जिन्होंने कि अपनी भक्ष्यभूता मेरा विश्वास कर लिया। आपने मेरे लिये प्रतीक्षा करके महान् कष्ट उठाया। इसके लिये मैं आपसे क्षमा चाहती हूँ। अब आप यथेच्छ मेरा भक्षण कर लें।' ऐसा कहते हुए बहुला वहीं नतमस्तक

होकर बैठ गयी। यह सब असम्भव किंतु प्रत्यक्षमें सत्यरूपेण घटित देखकर सिंह बड़े असमंजसमें पड़ गया। वह सोचने लगा—'पशु यह भी है और पशु मैं भी हूँ? मेरा तो कितना दूषित विचार है और इस गायका विचार कितना महान् है? यदि ऐसा दिव्यात्मा गायको मारा या पीडित किया तो मेरी कहीं गति होनेवाली नहीं है।'

फिर कुछ समयतक सोच-विचार करते हुए अन्तर्यामी परमात्माकी प्रेरणासे प्रेरित हो वह सिंह बोला—'हे बहुला! तुम मेरी परम हितैषिणी और आदरणीया माता तथा गुरु हो। अब मैं तुम्हें मार नहीं सकता। मैं अपने संदेह-निवारणार्थ तुमसे एक बात पूछना चाहता हूँ। मुझे यह बताकर मेरा समाधान करो कि—'तुमने मेरे समक्ष जो शपथ ली और जिसके भयसे तुमने मरनेके लिये अपनी प्यारी देह भी मेरे सामने रख दी—उसके भंग हो जानेमें क्या हानि होती है?' बहुला बोली—

बहुला कहत सुणो वनराई। कलप अनेक नरक दुःखदाई॥
जामण मरण चौरासी जीवा। भरमत नरदेह कदेक सींवा॥
मौसर पाय मिनरव अवतारा। गुरुगम शब्द मिलूँ करतारा॥
एह चूकां कहुँ ठाहर नाँई। हरि वेमुख रिपु ताय सदाई॥
तिणचर जलचर अनचर पाहन। पोषण भरण अदेवस कोंहन॥
सार संभार करै सबकेरी। तास विसार कहा गत ह्वैरी॥

अर्थात् ऐसा हो जानेसे (वचन-भंग करनेसे) प्राणी पहले तो अनेक कल्पोंतक नरकमें दुःख भोगता है। फिर जन्म-मरणके चक्करमें पड़कर चौरासी लाख योनियोंमें भटकता रहता है। भटकते-भकटते उसे चौरासीके अन्तमें आत्मोद्धारका द्वारात्मक मानव-देह प्राप्त होता है। साक्षात् भगवदवतारभूत मानव-तन पाकर जो प्राणी गुरुकृपासे भगवान्‌के सम्मुख हो मोक्षपद पा लेता है, उसका जीवन सार्थक हो जाता है। जो कल्याणका ऐसा अवसर पाकर भी चूक जाता है अर्थात् मानव-तन पाकर भी हरिसे विमुख बना रह जाता है वह सदैव जन्म-मरण और कालके चक्करमें पड़ा रहता है। प्राणी व्यर्थमें ही अपने भरण-पोषणकी चिन्ता किया करता है। उसे सोचना चाहिये के जो परमात्मा जलचर, अन्नचर, तृणचर (पशु), पाहनचर आदि समस्त प्राणियोंका प्रतिपाल करते रहते हैं, क्या वे मेरा प्रतिपाल नहीं करेंगे? जो ऐसे कृपालु परमात्माको भुला देता है, उसकी आगे क्या दशा होगी?

मैंने सत्पुरुषोंके संगसे यही शिक्षा पायी है कि प्राणीको कभी झूठ नहीं बोलना चाहिये। सत्यानुशीलनसे पशु भी चौरासीके चक्करसे निकलकर सीधा मानव-तन प्राप्त कर लेता है। मैं अपने सत्य वचनकी पालना करते हुए मानव-तन पाकर आत्मोद्धार करना चाहती हूँ। इसलिये अपने वचनकी पालना करने-हेतु मैं आपके सम्मुख लौट आयी हूँ।'

गायके मुखसे सत्यानुशीलनकी तथा मानव-तनकी महत्ता सुनकर उस सिंहके मनमें विचार आया—'यदि परमात्मा मुझे भी मनुष्य बना दे तो मैं भी इस गायके समान सदाचारी बनकर भगवद्भक्तिका परम आनन्द प्राप्त कर लूँ। गायरूपी सत्पुरुषके संगसे सिंहके मनमें उत्पन्न हुए इन सद्विचारोंको स्वीकार करते हुए करुणावरुणालय भगवान्‌ने तत्काल ही उस सिंहकी आयु पूर्ण कर दी। सिंह मृत्युको प्राप्त हो गया। बहुला लौटकर अपने घर आ गयी। बहुलाकी माँ, बछड़े तथा उसके स्वामीके हृदयमें इससे अपार आनन्द छा गया।'

सत्संगके प्रभावसे वही सिंह अगले जन्ममें बहुलाके वंशमें (गायके रूपमें) आ गया। अब वह भी पूर्णतया बहुलाके समान सद्‌गुणी बन गया था। यहाँ दोनों बहुत समयतक साथ-साथ रहे। देहावसान होनेपर उस बहुला तथा गोभूत सिंह दोनोंने अगले जन्ममें मनुष्य-तन प्राप्त कर लिया। यहाँ दोनों गुरुमुखी तथा भगवान्‌के सम्मुख होकर रामभक्तिमें लग गये। अन्तमें दोनों साथ-साथ भगवद्धामको प्राप्त हो गये।

संतवाणीमें उपलब्ध यह बहुला गौका आख्यान केवल एक आख्यानमात्र नहीं है, अपितु यह आख्यान गायकी सत्यनिष्ठा, परोपकारिता, स्वकर्मपरायणता, परम उदारता, परमनिर्भीकता, परगुणग्राहकता आदि अनेक मानवीय सद्‌गुणोंको प्रकट करनेवाली खान (खदान) है। वर्तमान युगके दिग्भ्रान्त लोगोंको इस आख्यानसे सन्मार्गालोक प्राप्त हो सकता है।

प्राणी, पशु और गाय—जैन-दृष्टि

[अणुव्रत-अनुशास्ता, राष्ट्रसंत आचार्य श्रीतुलसीजी]

प्राणी दो प्रकारके होते हैं—सिद्ध और संसारी। सिद्ध वे होते हैं, जो जन्म-मरणकी परम्पराको तोड़कर मुक्त हो जाते हैं। उनका इस संसारसे कोई सम्बन्ध नहीं रहता। दूसरे संसारमें रहनेवाले संसारी प्राणी अनेक प्रकारके होते हैं।

शाश्वत धर्मका संदेश

संसारमें जितने प्राणी हैं, सबका अपना-अपना महत्त्व है। प्रत्येक प्राणीको जीनेका अधिकार है। जैन-दर्शनकी दृष्टिसे संसारका कोई भी प्राणी वध्य नहीं है। सनातन धर्मकी परिभाषा करते हुए जैन तीर्थंकरोंने कहा—**सव्वे पाणा ण हंतव्वा—एस धम्मे धुवे णिइए सासए।**' ध्रुव, नित्य और शाश्वत धर्म यही है कि संसारके किसी भी प्राणीका वध न किया जाय। इसी अवधारणाके आधारपर जैन मुनि प्राणिमात्रकी हिंसासे विरत रहते हैं। जैन श्रावक गृहस्थ होते हैं। वे पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रिय दायित्वोंसे बँधे हुए रहते हैं। चाहते हुए भी वे हिंसासे सर्वथा उपरत नहीं हो सकते। पृथ्वी, पानी आदि सूक्ष्म जीवोंकी हिंसासे बचना उनके लिये सम्भव नहीं है, फिर भी वे अनावश्यकसे बचनेके लिये जागरूक रहते हैं। चलने-फिरनेवाले निरपराध त्रसकाय-जीवोंकी संकल्पपूर्वक हत्या उनके लिये सर्वथा वर्जित मानी गयी है। मांसाहार उनके लिये पूर्णरूपसे त्याज्य है। मांस तो क्या वे अंडेके मिश्रणसे बने खाद्य पदार्थोंको भी अभक्ष्य मानते हैं। इस दृष्टिसे कहा जा सकता है कि जैन श्रावक प्राणि-जगत्‌के प्रति बहुत ही करुणाशील और संवेदनशील रहते हैं।

एक चर्चित और अर्चित पशु

तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय जीवोंमें एक बहुत बड़ा जगत् है पशुओंका। पशु-जगत्‌में गाय एक ऐसा प्राणी है जो बहुचर्चित भी है और बहु अर्चित भी। भारतमें गायको माताके रूपमें देखा जाता है। माँ जितनी पूजार्ह होती है, गायको भी उतना ही पूजार्ह माना जाता है। पशुको पूज्य माननेके भाव केवल भारतमें ही है, ऐसी बात नहीं है। गाय और भैंसके मिश्रण-जैसे रूपवाला एक पशु है 'याक'। तिब्बतमें याकको उतना ही पूज्य माना जाता है जितना भारतवर्षमें गायको। गायको पूज्य माननेके पीछे दो दृष्टिकोण हो सकते हैं—उसके प्रति माँ-जैसी भावना और उसकी उपयोगिता। गाय एक उपयोगी प्राणी है, इसमें कोई संदेह नहीं है। मनुष्य हो या पशु, उपयोगिताके आधारपर उसके आकर्षणमें वृद्धि सम्भव है। सांसारिक सम्बन्धोंमें माँका सम्बन्ध सर्वाधिक पवित्र और विशिष्ट है। जब गायमें माँकी बुद्धिका अध्यारोपण हो जाता है तो उसके प्रति सम्मान और सुरक्षाकी बात सहज प्राप्त है।

प्रश्न एक ही है कि गायको माता माननेकी बात शाश्वत सचाई है या मनुष्यकी स्वार्थी मनोवृत्ति? यदि यह शाश्वत सचाई होती तो गायोंके प्रति भेदभावका व्यवहार नहीं होता। एक आदमी अपनी गायको चारा-पानी देता है, नहलाता है, सहलाता है, उसका सब प्रकारसे ध्यान रखता है; किंतु कोई दूसरी गाय जाकर उसके घरका चारा चरने लगे तो लाठीसे निर्मम प्रहार करनेमें भी संकोच नहीं करता। क्या कोई व्यक्ति अपनी माँको इस प्रकार पीट सकता है? दूसरी गायकी तो बात ही छोड़े, अपनी गाय भी जब बूढ़ी हो जाती है, दूध देनेमें अक्षम हो जाती है, तब उसकी सेवा कौन करता है? गो-सेवाके नामपर आन्दोलन चलाना और निःस्वार्थ भावसे गौकी सेवा करना—ये दो अलग-अलग बातें हैं। इनके अन्तरको समझनेके लिये निष्पक्ष दृष्टिकोणकी अपेक्षा है।

जैन-श्रावक और गोकुल

वर्तमान व्यवस्थामें गायोंकी सेवा और सुरक्षाके लिये गोशालाएँ बनायी जाती हैं। ये व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों प्रकारकी होती हैं। प्राचीन कालमें जैन-श्रावक बहुत बड़े गोकुल रखते थे। भगवान् महावीरके प्रमुख श्रावकोंमें आनन्द, कामदेव, चूलनीपिता, चूल्लशतक, कुंडकौलिक, सुरादेव, महाशतक आदिके नाम प्रसिद्ध हैं। 'जैन आगम-उपासक-दशा' में इनके बारेमें विस्तृत वर्णन मिलता है। इनकी समृद्धिकी आँकड़ोंमें प्रस्तुति दी गयी है। वहाँ यह

बताया गया है कि इनके गोकुलोंमें हजारों-हजारों गायें थीं। जैन श्रावक सामान्यतः खेती करते थे। खेतीकी दृष्टिसे बैल उनके लिये बहुत उपयोगी थे। पशुपालन उनकी जीवनशैलीका अभिन्न अङ्ग था। पशुओंको पीटना, उनपर अतिभार लादना, उनके खान-पानमें कमी करना, उनको क्रूरतासे बाँधना, उनका अंग-भंग करना आदि कार्य उनके लिये धार्मिक दृष्टिसे निषिद्ध माने गये हैं। इस कारण वे अपने आश्रित पशुओंके प्रति पूरे जागरूक रहते थे। धार्मिक, सामाजिक और व्यावहारिक सभी दृष्टियोंसे श्रावकोंके गोकुलोंमें गायोंकी पूरी देखभाल होती थी।

साहित्यमें कामधेनु

जैन आगमोंमें कामधेनुका भी उल्लेख मिलता है। प्रसिद्धि है कि कामधेनु व्यक्तिकी हर इच्छा पूरी कर देती है। सम्भवतः इसी कारण इसकी पूजा करनेकी परम्परा रही है। यह भी माना जाता है कि कामधेनु स्वर्गकी गाय है। रघुवंशका राजा दिलीप एक बार कामधेनुके निकटसे निकला। शीघ्रताके कारण वह उसके विनयोपचारमें स्खलित हो गया। फलतः उसे कामधेनुकी नाराजगी झेलनी पड़ी। कालान्तरमें उसे अपने प्रमादका बोध हुआ। कामधेनुको प्रसन्न करनेके लिये राजाने उसकी पुत्री नन्दिनीकी अभूतपूर्व सेवा की। महाकवि कालिदासने उस सेवाका वर्णन करते हुए लिखा है—

स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां
निषेदुषीमासनबन्धधीरः।
जलाभिलाषी जलमाददानां
छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्॥

राजा दिलीप नन्दिनी गायकी सेवा कर रहे थे। वह खड़ी रहती तो राजा खड़ा हो जाता। वह गमन करती तो राजा चलता। वह बैठती तो राजा बैठता और वह पानी पीती तभी वह पानी पीनेकी इच्छा करता। जिस प्रकार छाया व्यक्तिका अनुगमन करती है, उसी प्रकार राजा दिलीपने नन्दिनी गायका अनुगमन किया।

गायके प्रति राजाकी भक्ति औपचारिक है या वास्तविक? यह जाननेके लिये कामधेनुने राजाकी परीक्षा ली। जंगलमें भ्रमण कर रही नन्दिनीपर अचानक सिंहका आक्रमण होता है। राजा अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर नन्दिनीको बचानेका प्रयास करता है। सिंह राजासे कहता है—

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं
नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च।
अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्
विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्॥

'राजन्! जगत्का एकच्छत्र साम्राज्य, यह युवावस्था और यह सुन्दर शरीर। तू एक गायके लिये इतना सब कुछ खोने जा रहा है। लगता है तू दिङ्मूढ हो गया है।'

सिंहद्वारा ऐसा कहनेपर भी राजा नन्दिनीको बचानेके लिये डटा रहा। उसकी दृढ़ता और सेवासे कामधेनु प्रसन्न भी हो गयी। यह एक पौराणिक घटना है। इसके आधारपर गौ-जातिके प्रति मनुष्यके दृष्टिकोणका बोध किया जा सकता है।

जैनदृष्टिकोण

जैन धर्मका जहाँतक प्रश्न है, यह छोटे-बड़े सभी पशुओंको अवध्य मानता है। जैन-आगमोंमें लिखा है—

जे केइ खुड्डगा पाणा अदुवा संति महल्लगा।
सरिसं तेहि वेरं ति असरिसं ति य णो वए॥

जो कोई छोटे प्राणी हैं अथवा बड़े प्राणी हैं उनको मारनेसे कर्मका बन्ध सदृश होता है या असदृश होता है ऐसा नहीं कहना चाहिये। क्योंकि जीवत्वकी दृष्टिसे सब जीव समान हैं। कर्मबन्धनका अन्तर आसक्तिके आधारपर होता है। आसक्ति जितनी सघन होगी, कर्मका बन्धन उतना ही प्रगाढ़ होगा। निष्कर्षकी भाषामें यह माना जा सकता है कि धार्मिक दृष्टिसे प्राणिमात्र अवध्य है। सामाजिक दृष्टिसे उपयोगी पशुओंके संरक्षणमें जैनधर्मकी असहमति नहीं है। मनुष्यका दायित्व है कि वह धार्मिक, सामाजिक और पर्यावरणकी दृष्टिसे अपनी जीवनशैलीमें अहिंसाको स्थान दे और गोहत्या-जैसे प्राणिवधके पापसे बचे।

जैनधर्म और गोरक्षा

जैनधर्ममें जैन साधुओंके पञ्च महाव्रतोंमें अहिंसाव्रत आद्य माना गया है और उसका पूर्णरूपसे आचरण करानेके

लिये अनेक व्रत और नियम बताये गये हैं। जैन तीर्थङ्कर, सूरी, जैन-मतावलम्बी धनिक और अधिकारी लोग अहिंसा-धर्मके पालनमें बहुत ही आगे बढ़े हुए हैं। इनके प्रयत्नोंसे मुसलमान बादशाहोंने इनके तीर्थस्थानोंमें प्राणि-हत्या न होने देनेके आदेश जारी किये। इन प्रयत्न करनेवालोंमें अकबरकालीन हीरविजय सूरिका नाम बहुत ही विख्यात है। बादशाह अकबरपर इनका बड़ा प्रभाव था। शत्रुञ्जय पर्वतपर आदिनाथके मन्दिरके द्वारपर सन् १५९३ में जो संस्कृत शिलालेख बैठाया गया है, वह इस विषयका साक्षी है। विजयसेनने भी गौ, बैल और भैंसकी हत्याके विरुद्ध अकबरसे आदेश जारी कराये हैं। इन लोगोंने इस सम्बन्धमें मुगल बादशाहोंसे जो फरमान प्राप्त किये, उनका विवरण आगे दिया जाता है—

(१) ता० १५ जून १५८४ को हीरविजयजीको दिये हुए अकबरके फरमानमें यह लिखा है कि गुजरातमें रहनेवाले हीरविजयजी और उनके शिष्योंकी अलौकिक पवित्रता और उग्र तपकी ख्याति सुनकर बादशाहने उन्हें दरबारमें बुलाया था। विदा होते समय उन्होंने बादशाहसे जो विनती की थी, उसके अनुसार यह ताकीद की जाती है कि पर्यूषण-उत्सव (भाद्रपद मासमें होनेवाले) के १२ दिनोंमें जैन आबादीके किसी शहरमें किसी भी पशुकी हत्या न की जाय।

(२) सन् १५९२ में हीरविजयजीको दिये गये दूसरे फरमानमें यह लिखा है कि आचार्यजीने यह विनती की है कि मुगल साम्राज्यमें श्वेताम्बर-पन्थियोंके जो तीर्थस्थान हैं, वे सब जैनोंके सुपुर्द किये जायँ ताकि वहाँ किसी प्राणीकी हत्या न हो। आचार्यजीकी यह विनती न्याय्य, उचित और इसलामके अविरुद्ध होनेसे ये सब स्थान हीरविजयजीको दिये जाते हैं।

(३) खास-खास दिनोंमें प्राणिहत्या न होने देनेके लिये एक फरमान सन् १६०८ में बादशाह जहाँगीरसे पण्डित विवेकहर्षने प्राप्त किया।

(४) सन् १६१० में पण्डित विवेकहर्षने बादशाह जहाँगीरसे पर्यूषण-उत्सवके दिनोंमें प्राणिहत्याकी मनाईका फरमान प्राप्त किया।

शान्तिदासने अहमदाबादमें चिन्तामणि पार्श्वनाथका एक बहुत बड़ा मन्दिर बनवाया था। सन् १६४५ में औरंगजेबने उसे तोड़-फोड़कर मसजिद बना लिया। उस समय वहाँ एक गौ मारी गयी, इसलिये कि कोई हिंदू यहाँ पूजा करने न आवे। सन् १६४८ में शान्तिदासने शाहजहाँसे प्रार्थना कर वह मन्दिर लौटा लिया। पर भ्रष्ट होनेके कारण वह मन्दिर न रहा।

आये दिन काठियावाड़ और गुजरातके बहुत बड़े हिस्सेमें प्राणिहत्या जो नहीं होती और लोग प्रायः मांसाहार नहीं करते, इसका बहुत कुछ यश जैनोंकी शिक्षाको है। '**अहिंसा परमो धर्मः**' का व्रत लोग बड़ी निष्ठासे पालन करने लगे। सच्ची गो-पूजा गुजरातमें ही दीख पड़ती है।

जैन-गोधन

पहले जैनलोग अपनी सम्पत्तिकी गणना गौओंकी संख्यासे करते थे। 'व्रज' और 'गोकुल' उसके माप थे। एक व्रज या गोकुल १० हजार गौओंका होता था। विपुल गोधनके धनी दस बड़े व्यापारियोंमें राजगृहीके महाशतक और काशीके चूलनिपिता गिने जाते थे। इनमेंसे हर एकके पास आठ-आठ गोकुल अर्थात् अस्सी-अस्सी हजार गौएँ थीं। चम्पाके कामदेव, वाराणसीके सूरदेव, काम्पिल्यके कुण्डकोलिक और आलम्भीयके चूलशतकके पास छः-छः गोकुल अर्थात् साठ-साठ हजार गौएँ थीं। वाजिया ग्रामके आनन्द, श्रावस्तीके नन्दिनीपिता और शालिनीपिताके पास चार-चार गोकुल (चालीस-चालीस हजार गौएँ) थे। इनमें सबसे गरीब पोलासपुरके शकडालपुत्र थे, जिनके पास एक ही गोकुल यानी दस हजार गौएँ थीं।

महाशतककी पत्नी रेवतीके लिये उसके पतिको ८ गोकुल (८० हजार गौएँ) दहेजमें मिला था। आनन्दने महावीर स्वामीसे जब श्रावक व्रत लिया तब ८ गोकुल पालनेकी शपथ की थी।

[प्रस्तुति—श्रीकमलेशजी चतुर्वेदी]

सिक्ख-पंथ और गोभक्ति

(श्रीदशमेशसिंहजी)

एक बार जब दशमेश गुरु गोविन्दसिंहजी पुष्कर-तीर्थकी यात्रापर गये थे तो वहाँ पण्डित पृथ्वीराजने उनसे पूछा था कि उनके जीवनका ध्येय क्या है और वह खालसा पंथ क्यों चला रहे हैं?

इसपर गुरु महाराजने उत्तर दिया था—'पण्डितजी! यह खालसा पंथ आर्यधर्म, गौ-ब्राह्मण, साधु-गरीब तथा दीन-दुखियोंकी रक्षाके लिये है। यही सेवा मैं कर रहा हूँ और मेरा खालसा सदा करता रहेगा।' (जन्मसाखी)

दशमेशजीके हृदयमें गो-रक्षाके लिये कैसे भाव थे यह उपर्युक्त वार्तासे स्पष्ट है। इसके अलावा नीचे लिखी पंक्तियाँ भी इस विषयमें द्रष्टव्य हैं।

मार्कण्डेयपुराणके देवीमाहात्म्य दुर्गासप्तशतीके आधारपर गुरुजीने 'चण्डी दी वार' की रचना की है। वीररससे भरपूर इस रचनामें अनेकों जगह आपने माता दुर्गा भवानीसे गोरक्षाकी माँग की है—

यही देहु आज्ञा तुर्क गाहै खपाऊं।
गऊ घातका दोष जग सिउ मिटाऊं॥
सकल हिन्द सिउ तुर्क दुष्टां बिदारहु।
धरम की ध्वजा कउ जगत् में झुला रहु॥
सकल जगत महि खालसा पंथ गाजै।
जगै धर्म हिन्दुन सकल धुंध भाजै॥

दशमेशने देश, धर्म और जातिकी रक्षाके लिये कोटनयना देवीके पर्वतपर संवत् १७५६ वि० में काशीके पण्डित केशवदत्त नामक पुरोहितकी देख-रेखमें महाचण्डी-यज्ञ किया था। यह यज्ञ एक वर्षतक चला। महान् सिक्ख इतिहासकार महाकवि भाई संतोखसिंह चूडामणिने अपनी बृहत्काय कृति 'सूरजप्रकाश' के पृष्ठ ४९६० पर लिखा है कि श्रीरामनवमीके दिन रविवारको जबकि डेढ़ पहर दिन बाकी था, आठ भुजाओंवाली माँ दुर्गा भवानीने प्रकट होकर गुरुजीसे कहा—'पुत्र! मैं तुम्हारी श्रद्धा-भक्तिसे प्रसन्न हूँ। तुम अपना मनचाहा वर माँगो।'

तब गुरुजी हाथ जोड़कर खड़े हो गये और बोले—

देओ वर माता पंथ उपावहुं।
तुर्क-राजको तेज खपावहुं॥
हिन्दूधर्म नित हो रहा विनाशा।
जेह बचाए पुनः करूं प्रकाशा॥

सारांश कि गुरुजीने मुसलमानोंसे हिन्दू-धर्मको बचानेके लिये खालसा पंथको आशीर्वाद देनेकी प्रार्थना की। माता दुर्गाजीने अपने हाथसे गुरुजीको एक तलवार भेंट की।

तत्पश्चात् लंकुड़िये (हनुमान्जी) ने दशमेशजीको कच्छा भेंट किया तथा कहा कि इसे वह अपने सिंहोंको दे देवें जिसे वे युद्धके समय धारण करें। वह (हनुमान्जी) पंथके बलमें वृद्धि करते रहेंगे तथा युद्ध-क्षेत्रमें उनकी सहायताके लिये सदा उपस्थित रहेंगे। (सूरजप्रकाश-१९६५ का संस्करण)

महाचण्डी-यज्ञके बाद इसी वर्ष वैशाखीके दिन गुरु गोविन्दसिंहजीने खालसा पंथका सृजन किया था। इन्हीं केशधारी वीरोंने बादमें गो-रक्षाके लिये अनगिनत बलिदान दिये। इसी शृंखलामें सन् १८७१ ई० के नामधारी वीरोंका गौरक्षार्थ बलिदान क्या कभी भुलाया जा सकता है? इन कूका वीरों (नामधारियोंका ही एक अन्य नाम) ने पंजाबमें अनेकों जगह अंग्रेजोंके सहपर स्थापित बूचड़खानोंको तोड़कर गोहत्यारोंको मार डाला था। इस मामलेमें अंग्रेजोंने ६५ नामधारी वीरोंको तोपोंसे उड़वा दिया था। अनेकोंको काले पानीकी सजा दी तथा नामधारी पंथके गुरु सतगुरु रामसिंहजीको रंगून निर्वासित कर दिया, जहाँ बादमें उनका निधन हुआ। जब आर्यसमाजने गोरक्षाका आन्दोलन छेड़ा तो सिक्खोंने बहुत अधिक उत्साह दिखाया था। सरदार इन्द्रसिंह अमृतसरवालेने घोषणा की थी कि गो-रक्षा-आन्दोलनमें हिन्दुओंको जरा भी खतरा महसूस हुआ तो दस लाख सिक्ख अपनी कुर्बानी देनेको तैयार खड़े हैं। (बाबा बन्दाबहादुरजीका जीवन-चरित्र पृ० १९)

गुरु गोविन्दसिंहजीके पूर्वके गुरुगण न केवल गौ अपितु सभी जीवोंकी हत्याके खिलाफ थे—

मांस मांस सब एक हैं, मुर्गी, हिरणी, गाय।
आँखि देखी नर खात हैं, ते नर नरक हीं जाय॥
क्या बकरी क्या गाय है क्या अपनो जाया।
सबको लहू एक है, यह साहब फरमाया॥
पीर-पैगम्बर औलिया सब मरने आया।
नाहक जीव न मारिये, पोषण को काया॥
जो रत लागे कापड़े, जामा होए पलीत।
जे रत पीवे मानुखा, तिन, क्यों निर्मल चित॥

बौद्ध-साहित्यमें गौका स्थान

[श्रीजयमंगलरायजी संन्यासी]

भगवान् बुद्ध करुणाके अवतार थे। उनके मनमें संसारके समस्त प्राणियोंके लिये समान दया थी। वे किसी भी प्राणीके कष्टको देखकर चुप नहीं बैठ सकते थे। उनका स्नेह सीमाबद्ध नहीं था, फिर गाय-जैसे उपयोगी और मानवमात्रको बिना किसी भेद-भावके एक-समान सुख देनेवाले प्राणीकी वे कैसे उपेक्षा कर सकते थे? उनकी बहुत-सी बातोंमेंसे मुख्य बात थी गोमांस-भक्षण न करनेकी। बुद्धने जनताको गौकी और गोवंशकी उपयोगिता बतलाकर गोवध न करनेकी शिक्षा दी। भगवान् बुद्ध गायकी उपयोगिताको सर्वोपरि स्थान देते थे।

इसलिये माता-पिताके समान उन्होंने पूज्य मानकर गौका सत्कार किया। उन्होंने गायको माता-पिताके समान उपकारी बतलाया। वे गायको सुखका मूल स्रोत समझते थे—

यथा माता पिता भाता, अञ्ञे वापि च ञातका।
गावो नो परमा मित्ता, यासु जायन्ति ओसधा॥
अन्नदा बलदा चेता, वण्णदा सुखदा तथा।
एतमत्थवसं ञत्वा नास्सु गावो हनिं सु ते॥

जैसे माता-पिता, भाई, कुटुम्ब-परिवारके लोग हैं, वैसे ही गायें भी हमारी परम मित्र, परम हितकारिणी हैं। जिनके दूधसे दवा बनती है। गाय अन्न, बल, रूप-सौन्दर्य तथा सुखको देनेवाली है। इन बातोंको जानकर ही पहलेके लोग गौकी रक्षा करते थे। गायके प्रति भगवान् बुद्धकी ऐसी उदात्त एवं पवित्र भावना देखकर उनके अनुयायियोंमें भी गायकी बड़ी कदर रही। इसी प्रकार बैल भी सब गृहस्थोंके लिये पोषणदायक हैं। इसलिये गाय-बैलका अपने माता-पिताकी तरह आदर करना चाहिये।

विदेशोंमें आज जो सर्व-भक्षक बौद्धधर्मावलम्बी लोग दीख पड़ते हैं, उन्हें देखकर हमलोग यह समझ लेते हैं कि बौद्धधर्मावलम्बी लोग पहलेसे ही गो-मांस-भक्षक रहे होंगे। परंतु यह कल्पना सही नहीं है। इतिहासप्रसिद्ध बौद्धसम्राट् अशोकके शिलालेखोंमें गाय-बैल आदि प्राणियोंकी हत्या न होने देनेकी आज्ञाएँ मिलती हैं। उत्तर ब्रह्मदेश (बर्मा) के अन्तर्गत विजयपुरमें सन् १३५० के लगभग सीहसूर नामक राजा राज्य करते थे। उनके प्रधान मन्त्री महाचतुरंगबलका बनाया हुआ 'लोकनीति' नामक ग्रन्थ है, इसमें कहा है—

गोणाहि सब्ब गिहीनं, पोसका भोगदायका।
तस्मा हि माता पितू व, मानये सक्करेय्य च॥ १४॥
ये च खादन्ति गोमंसं, मातुमंसं व खादये॥ १५॥
(लोकनीति ७)

सब गृहस्थोंको भोग (योग्य पदार्थ) देनेवाले और पोसनेवाले गौ-बैल ही हैं। इसलिये माता-पिताके समान उन्हें पूज्य माने और उनका सत्कार करे। जो गोमांस खाते हैं वे अपनी माताका मांस खाते हैं।

भगवान् बुद्धके एक शिष्य थे धनंजय सेठ। उन्होंने अपनी कन्याके विवाहोपलक्ष्यमें इतनी गौएँ दहेजमें दीं कि उन गौओंके खड़े होनेके लिये लगभग डेढ़ सौ हाथ चौड़े और तीन कोस लंबे मैदानकी आवश्यकता हुई।

प्रख्यात चीनी यात्री हुएनसांगने ईसाकी ८ वीं शताब्दीमें होनेवाले सम्राट् हर्षवर्धनके सम्बन्धमें लिखा है—

'उनके राज्यमें प्राणिहिंसा करनेवालेके लिये कठोर दण्ड था। उन्होंने अपने राज्यमें मांस-भक्षण ही बंद कर दिया था।' गो-हत्या और गो-मांस-भक्षणकी तो बात ही क्या!

गोवंशके विविध रूप

भारतीय गायोंकी विभिन्न नस्लें*

भारत देशकी भारतीय गायें यहाँके निवासियोंकी नित्य और चिर-सहचर हैं। जिस समयतकका भारतवासियोंका इतिहास पाया जाता है, उसी समयतक भारतीय गोगणका भी इतिहास पाया जाता है। आरम्भसे ही ये गायें मनुष्योंद्वारा पालित हैं। अन्य देशोंकी गायोंकी भाँति बहुत समयतक जंगलोंमें हिंसक पशुके रूपमें घूमते रहनेके बाद ये मनुष्योंके घरमें आकर नहीं पलीं। भारतीय गायोंका विशिष्ट लक्षण है उनका गलकम्बल और पीठका ककुद्। प्राणितत्त्वविदोंके मतसे ककुद्युक्त गाय जेबू (Zebu) श्रेणीके अन्तर्गत है।

आकृति-प्रकृति, गुण, दोष एवं रूप-रंगको ध्यानमें रखते हुए विभिन्न गोजातियोंका वर्गीकरण विद्वानोंने किया है। गायके समान ही बैल भी तरह-तरहकी जातिके होते हैं। किसीमें कोई गुण विशेष होते हैं तो किसीमें अन्य कोई विशेषता होती है। भिन्न-भिन्न जलवायु और लालन-पालनका गो और उसकी संतान दोनोंपर ही प्रभाव पड़ता है। एक ही जातिमें अच्छे और बुरे दोनों तरहके पशुओंका होना सम्भव है, किंतु आमतौरपर जो विशेषताएँ उनमें मुख्य रूपसे देखी जाती हैं उन्हींसे जाति-भेदकी पहचान होती है।

यद्यपि एक ही जातिकी कई गायोंकी शक्ति अलग-अलग किस्मकी होती है, तथापि उनके दूध देनेकी शक्ति और उनके बछड़े-बछियोंके गुणोंपर जातीय प्रभाव पाया जाता है —

१-जो गायें दूध खूब ज्यादा देती हैं, किंतु जिनके बछड़े खेती तथा गाड़ीके काममें विशेष उपयोगी नहीं होते, उन्हें 'दुग्ध-प्रधान एकाङ्गी-नस्ल' कहते हैं।

२-जो गायें दूध कम देती हैं, किंतु जिनके बछड़े खेती या गाड़ी आदिके लिये विशेष उपयोगी होते हैं, वे 'वत्स-प्रधान एकाङ्गी-नस्ल' कही जाती हैं।

३-जिन गायोंका दूध भी अधिक और बछड़े भी बलवान् तथा उपयोगी होते हैं, वे 'सर्वाङ्गी नस्ल' कहलाती हैं।

विभिन्न विद्वानोंका वर्गीकरणमें कुछ मतभेद हो सकता है तथापि स्थूल दृष्टिसे यहाँ विभाजन किया जा रहा है—

दुग्ध-प्रधान एकाङ्गी	वत्स-प्रधान एकाङ्गी	सर्वाङ्गी
साहीवाल या मान्ट-गुमरी; लाल-सिन्धी।	पँवार, खैरीगढ़, नागौरी, अंगोल, अमृतमहाल, मालवी, नीमारी, दज्जल, भगनाड़ी, धन्नी, मेवाती, डाँगी, खिल्लारी, बछौर, आलमबादी, बारगुर, हल्लीकर।	हाँसी-हिसार, हरियाना, थारपर-कर, काँकरेज, देवनी, गावलाव, कृष्णवल्ली, राठ, लोहानी, सीरी कंगायम, गीर।

सर आर्थर आलवरने भारतकी गोजातिको कई वर्गों या भागोंमें बाँटा है। यह विभाजन नस्लोंके जन्म-स्थानके आधारपर किया गया है। मुख्य गो-नस्लें इस प्रकार हैं।

१-मैसूरकी लंबे सींगोंवाली गौ।

२-काठियावाड़की गीर जातिकी गौ।

३-उत्तरकी सफेद रंगकी बड़ी रासकी गौ।

४-पंजाबकी मिले हुए सफेद और लाल रंगकी मंटगुमरी या साहीवाल जातिकी गौ।

५-धन्नी जातिकी गौ।

६-छोटी रासकी और छोटे सिरवाली पहाड़ी गौ।

आजकल भारतमें गौओंकी जितनी नस्लें पायी जाती

---

* इस विषयपर एक लेख हमें राष्ट्रिय डेयरी अनुसंधान, करनालसे श्री आर० पी० सिंहजीद्वारा भी प्राप्त हुआ है। जिसके कुछ अंश इस लेखमें समाहित कर लिये गये हैं।
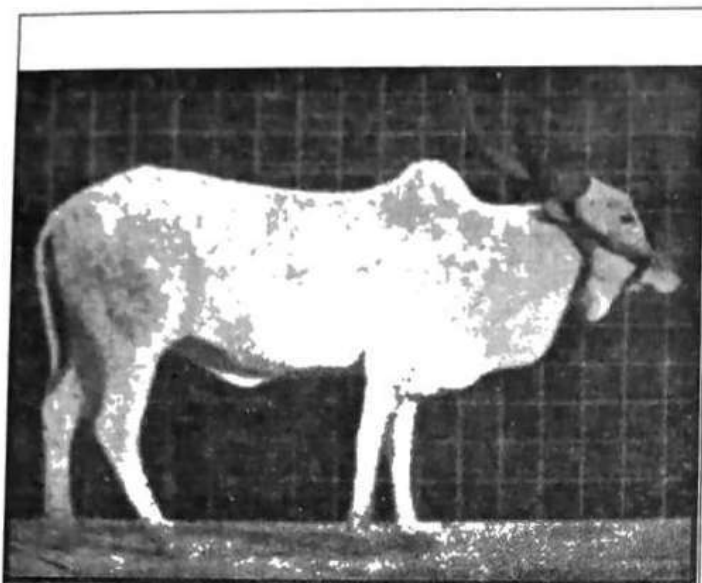
अमृतमहाल गौ
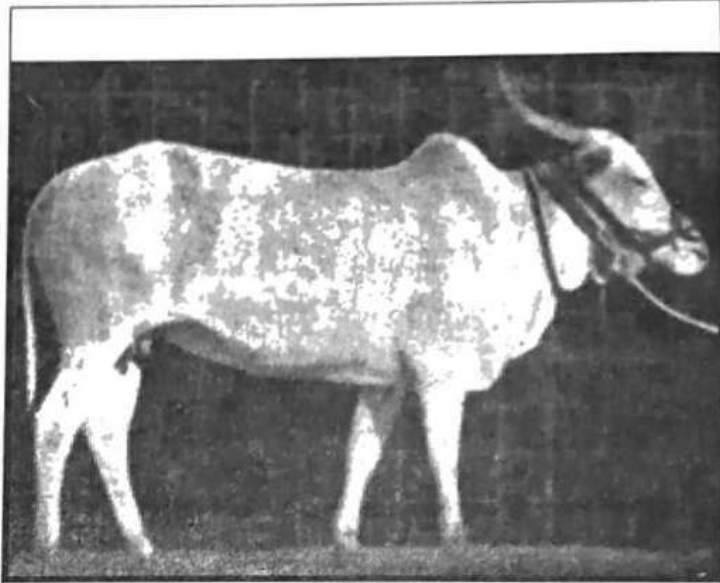
हल्लीकर गौ
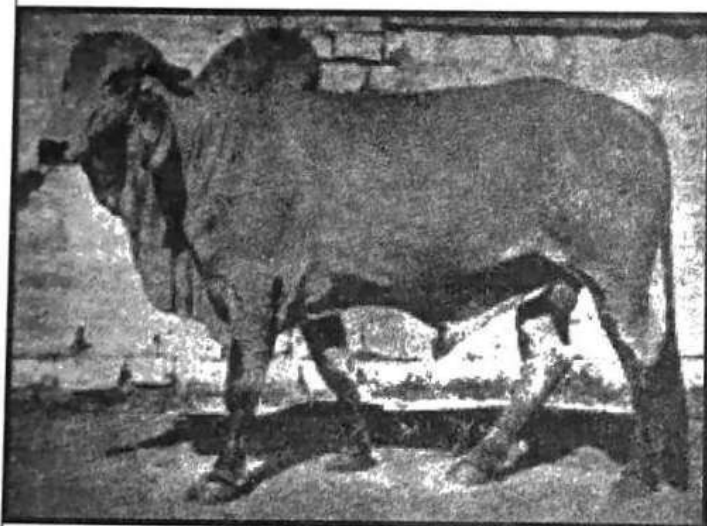
गीर साँड़
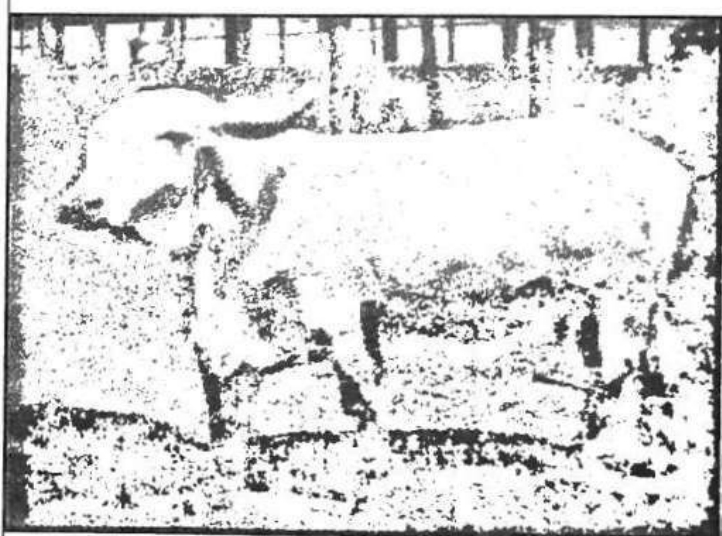
गीर गाय
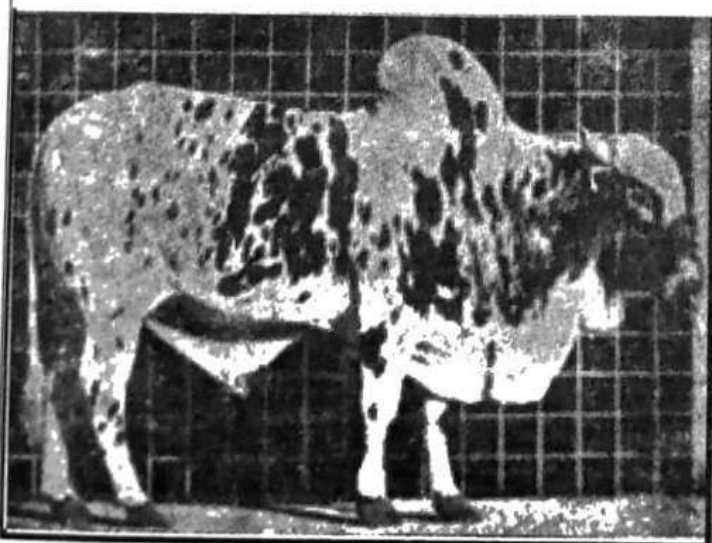
देवनी साँड़
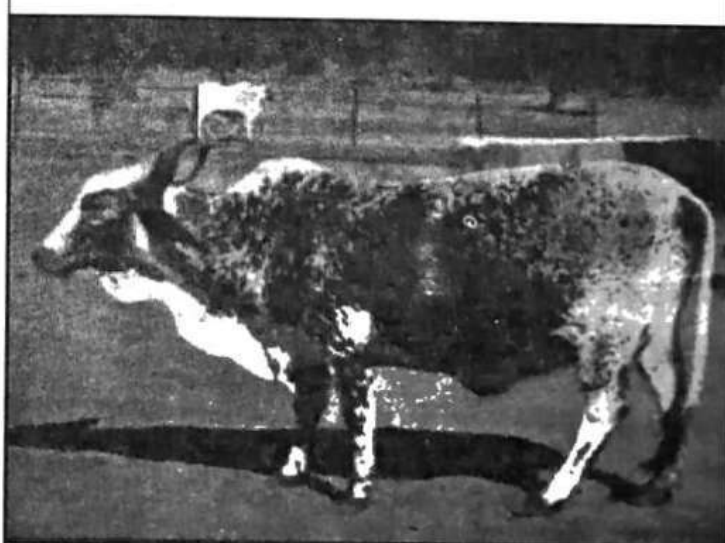
देवनी गाय

हैं, प्रायः वे सब इन्हीं वर्गोंके अंदर आ जाती हैं। यहाँ संक्षेपमें इनका वर्णन किया जा रहा है।

(१) लंबे सींगोंकी मैसूरी गौ

मैसूरी गौएँ अपनी तेजी और श्रम-सहिष्णुताके लिये विशेष प्रसिद्ध हैं। इस जातिकी गायोंमें प्रायः दूध कम होता है। इनका सिर काफी लंबा, मुँह और नथूने कम चौड़े और ललाट काफी उभरा हुआ होता है। इस जातिके पशु प्रायः छोटी रासके होते हैं। कुछ मुख्य नस्लें इस प्रकार हैं—

१-अमृतमहाल नस्ल—यह नस्ल मैसूर राज्यमें पायी जाती है। इस जातिके पशुओंका रंग खाकी तथा मस्तक, गला और थूहा काले रंगके होते हैं। इस नस्लके बैल मध्यम कदके और फुर्तीले होते हैं।

२-हल्लीकर नस्ल—इस नस्लके पशु मैसूर राज्यभरमें पाये जाते हैं। यह एक स्वतन्त्र नस्ल है। इनका ललाट उभरा हुआ और बीचमें चिरा हुआ-सा होता है। इस नस्लकी गौएँ अमृतमहाल जातिकी गौओंकी अपेक्षा अधिक दुधार होती हैं। इनके सींग लंबे और नुकीले तथा कान छोटे होते हैं।

३-कंगायम नस्ल—इस नस्लके पशु कोयम्बटूरके दक्षिणी एवं दक्षिण-पूर्वके तालुकोंमें पाये जाते हैं। इनमें बहुधा दूध कम होता है। कहते हैं, इस जातिकी गौएँ १० से १२ सालतक दूध देती रहती हैं। इनके कान छोटे, मस्तक मध्यम परिमाणका, गर्दन ओछी तथा पूँछ काफी लंबी होती है। यह नस्ल सर्वाङ्गी मानी गयी है।

४-खिल्लारी नस्ल—इस नस्लके पशुओंका रंग खाकी, सिर बड़ा, सींग लंबे और पूँछ छोटी होती है। इनका गलकंबल काफी बड़ा होता है।

५-कृष्णातटकी कृष्णावेली गौएँ—इस जातिके पशु बंबई प्रान्तकी दक्षिणी भाग एवं हैदराबाद राज्यमें कृष्णा नदीके तटपर पाये जाते हैं। इस नस्लकी गौएँ काफी दूध देती हैं। यह नस्ल कई जातियोंके मिश्रणसे बनी है। इनका थूहा काफी बड़ा, सींग और पूँछ छोटे तथा गलकंबल काफी बड़ा होता है।

६-बरगूर नस्ल—इस नस्लकी गौएँ मद्रासके कोयम्बटूरमें बरगूर नामक पहाड़कर बहुतायतसे मिलती हैं। इस नस्लके पशु बड़े दुर्दमनीय होते हैं। सहनशक्ति एवं तेज चालमें कहते हैं ये अद्वितीय होते हैं। इन गौओंमें दूध बहुत कम होता है। इनका सिर लंबा, ललाट कुछ उभरा हुआ और पूँछ छोटी होती है।

७-आलमबादी नस्ल—इस नस्लको मैसूरकी हल्लीकर नस्लकी शाखा मानना चाहिये। इस नस्लके बैल बड़े परिश्रमी और तेज होते हैं तथा थोड़ी खुराकपर ही निर्वाह कर सकते हैं। गौओंके दूध कम होता है। इनका ललाट उभरा हुआ और मुँह लंबा तथा सँकरा होता है एवं सींग लंबे होते हैं।

(२) काठियावाड़के जंगलोंकी लंबे कानोंवाली गीर नस्ल

यह नस्ल काठियावाड़के दक्षिणमें गीर नामक जंगलमें पायी जाती है। इनका ललाट विशेष उभरा हुआ और चौड़ा होता है, कान लंबे और लटके हुए होते हैं तथा सींग छोटे होते हैं। गीर नस्लकी गौओंका रंग विशेष प्रकारका होता है। इनका मूल रंग सफेद होता है और उसपर विविध रंगोंके धब्बे होते हैं, जो सारे शरीरपर फैले रहते हैं। ये धब्बे कई गौओंमें बड़े-बड़े और कई गौओंमें अत्यन्त छोटे होते हैं। इस जातिके पशु मैसूरके पशुओंकी अपेक्षा आकारमें बड़े होते हैं। कुछ नस्लोंका विवरण इस प्रकार है—

१-गीर नस्ल—इस नस्लके पशुओंकी पीठ मजबूत, सीधी और समचौरस होती है। कूल्हेकी हड्डियाँ प्रायः अधिक उभरी हुई होती हैं। पूँछ लंबी होती है। शुद्ध गीर नस्लकी गायें प्रायः एक रंगकी नहीं होतीं। वे काफी दूध देती हैं। इस जातिके बैल मजबूत होते हैं, यद्यपि ये मैसूरके बैलोंकी अपेक्षा कुछ सुस्त और धीमे होते हैं। उनसे बहुधा गाड़ी खींचनेका काम लिया जाता है। गीर नस्लकी गायें बच्चे नियत समयपर देती हैं।

२-देवनी नस्ल—यह नस्ल बंबई प्रान्तकी डाँगी नस्लसे मिलती-जुलती है। इसमें गीर नस्लसे भी काफी समानता है। इस नस्लके पशुओंके सिर और सींग गीर नस्लके-से ही होते हैं। ये अनेक रंगके होते हैं, पर मुख्यतः सफेद और काले तथा सफेद और लाल रंगके अधिक होते हैं। इस नस्लके बैल खेतीमें अच्छा काम देते हैं तथा गौएँ

निजाम राज्यका अन्य नस्लोंकी तुलनामें काफी दूध देती हैं।

३-डाँगी नस्ल—इस नस्लके पशु मूलतः बंबई प्रान्तके अहमदनगर और नासिक जिलों तथा बांसदा, धर्मपुर, जौहर तथा डांग्स क्षेत्रोंमें पाये जाते हैं। वे बड़े परिश्रमी होते हैं और धानके खेतोंमें लगातार काम करनेसे इनके स्वास्थ्यपर कोई अवाञ्छनीय प्रभाव नहीं पड़ता। इस नस्लकी गौएँ दूध कम देती हैं। इन गौओंका रंग लाल और सफेद अथवा काला और सफेद होता है। इनकी चमड़ीमें तेलकी बहुत अधिक मात्रा रहती है, जो इनकी वर्षासे रक्षा करती है। इनके खुर विशेषरूपसे कड़े, काले रंगके और चकमक पत्थरकी आकृतिके होते हैं।

४-मेवाती नस्ल—इस नस्लके पशु बहुत सीधे होते हैं और भारी हलों एवं छकड़ोंमें जोते जाते हैं। गौएँ काफी दुधार होती हैं। उनमें गीर जातिके लक्षण पाये जाते हैं तथा कुछ बातोंमें ये हरियाना नस्लके पशुओंसे भी मिलते हैं, जिससे यह पता चलता है कि यह एक मिश्रित जाति है। इनका रंग सफेद और मस्तक काले रंगका होता है तथा कुछ पशुओंमें गीर जातिका रंग भी पाया जाता है। इनकी टाँगें कुछ ऊँची होती हैं। इनके कान, ललाट और सँकरा मुँह गीर जातिके द्योतक हैं।

५-नीमाड़ी नस्ल—इस नस्लके जानवर बहुत फुर्तीले होते हैं। इनका रंग तथा मुँहकी बनावट गीर जातिकी-सी होती है। इनके कान मध्यम परिमाणके होते हैं। सामान्य तौरपर इनका रंग लाल होता है, जिसपर जगह-जगह सफेद धब्बे भी होते हैं। इस जातिकी गौएँ काफी दूध देती हैं।

(३) क—उत्तरीय भारतकी चौड़े मुँह तथा मुड़े हुए सींगोंवाली बड़े रासकी गौ

गुजरातकी काँकरेज नस्ल इस जातिकी प्रधान नस्ल है। इस नस्लके पशुओंका मुँह छोटा, किंतु चौड़ा होता है। राजपूतानेकी मालवी नस्ल काँकरेज नस्लसे बहुत मिलती जुलती है।

१-काँकरेज नस्ल—इस जातिके पशु भारतभरमें विशेष मूल्यवान् समझे जाते हैं। राधनपुर राज्यमें इसका नाम बढियार नस्ल है। यह नस्ल काठियावाड़, बड़ौदा राज्य एवं सूरततक फैली हुई है। इस नस्लके पशु चलने और गाड़ी आदि खींचनेमें बहुत तेज होते हैं।

काँकरेज जातिकी गौओंकी छाती चौड़ी, शरीर सबल, ललाट चौड़ा और सींग मुड़े हुए होते हैं। इनके कान लंबे और झुके हुए होते हैं। इनकी चमड़ी भारी और गलकंबल साधारण परिमाणका होता है। पूँछ अपेक्षाकृत छोटी होती है।

२-मालवी नस्ल—इस जातिकी गौओंको प्राकृतिक गोचरभूमियोंमें पाला जाता है और साथ-साथ उन्हें अनाजकी भूसी आदि भी दी जाती है। सड़कोंपर हल्की गाड़ियोंको खींचनेमें तथा खेतीमें इनका विशेष उपयोग होता है। इनका रंग खाकी और गर्दन काले रंगकी होती है, परंतु बुढ़ापेमें इनका रंग बिलकुल सफेद हो जाता है।

मालवी नस्लके दो अवान्तर भेद होते हैं—(अ) ग्वालियर राज्यके दक्षिण-पश्चिमी भागके बड़ी रासके पशु; (ब) इसी भागके दक्षिण-पश्चिममें पाये जानेवाले छोटी रासके पशु। इस नस्लकी गौएँ दूध कम देती हैं।

३-नागौरी नस्ल—इस नस्लके पशु जोधपुर (मारवाड़) के उत्तर-पूर्वी भागमें पाये जाते हैं। इस जातिके बैल आकारमें बड़े होते हैं और तेज चालके लिये प्रसिद्ध हैं। इनका मुँह अपेक्षाकृत सँकरा एवं लंबा होता है तथा ललाट चपटा। इनकी चमड़ी पतली, गलकंबल छोटा और पूँछ भी छोटी होती है। इस नस्लकी गौएँ दूध कम देती हैं।

४-थारपारकर नस्ल—कच्छ, जोधपुर एवं जैसलमेर राज्योंमें इस जातिके पशु बड़ी संख्यामें पाले जाते हैं। इस भू-भागमें बालूके ऊँचे-ऊँचे टीले बहुत पाये जाते हैं और वर्षा कम होती है। ये वहाँके अपर्याप्त घास एवं झाड़ियोंपर निर्वाह करते हैं और साथ-साथ इन्हें गवाँर तथा अन्नकी भूसी आदि भी दी जाती है।

इस जातिके पशु बड़े परिश्रमी और खाकी रंगके होते हैं। इस नस्लकी गौएँ भारतवर्षकी सर्वश्रेष्ठ दुधार गायोंमें गिनी जाती हैं। बैल मध्यम परिमाणके होते हैं, अतएव खेती एवं गाड़ियोंमें जुतनेके काम आते हैं। इनमें कई ऐसे गुण हैं, जिनके कारण इनकी बहुत क़दर की जाती है। गायें दूध अधिक देती हैं, बैल परिश्रम अधिक कर सकते हैं और थोड़ी खुराकपर निर्वाह कर सकते हैं। इनका मुँह काफी लंबा, ललाट कुछ उभरा हुआ और थूहा मध्यम परिमाणका होता है।
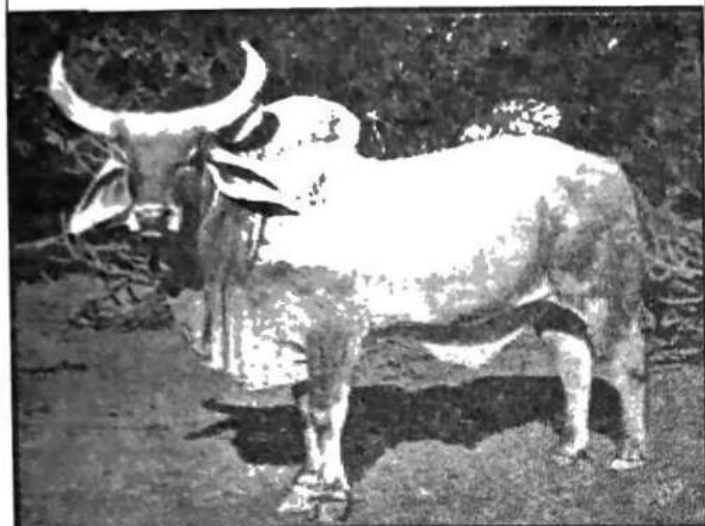
काँकरेज साँड़
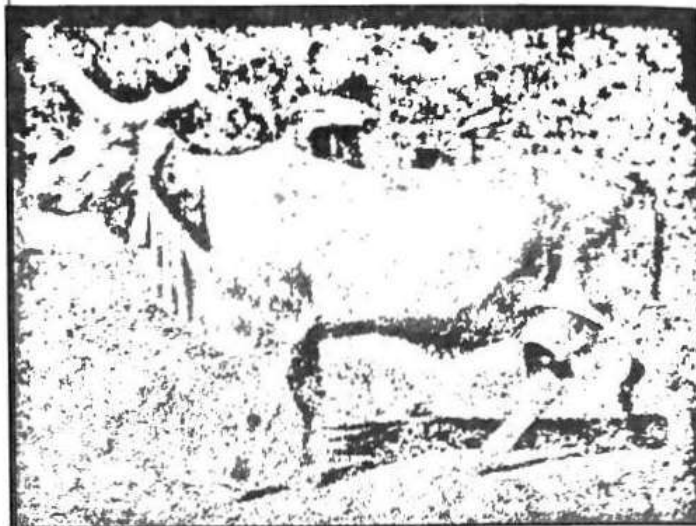
काँकरेज गाय
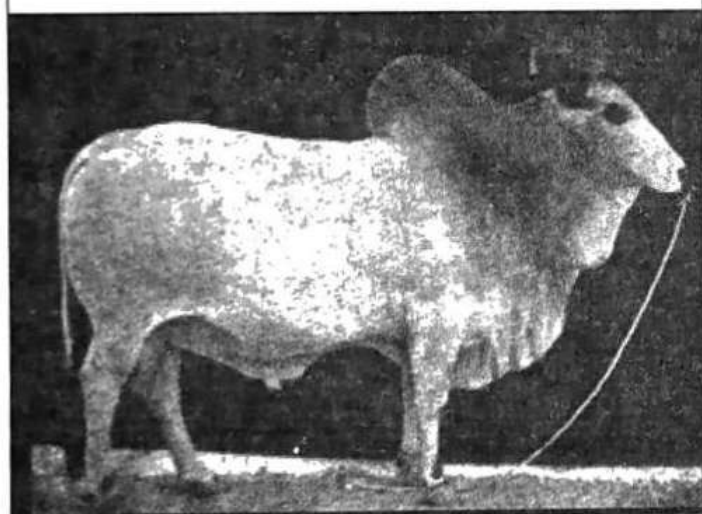
थारपारकर साँड़
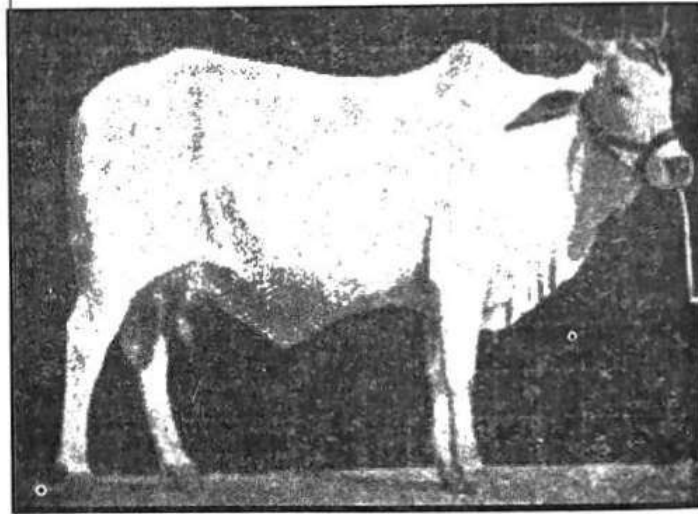
थारपारकर गाय
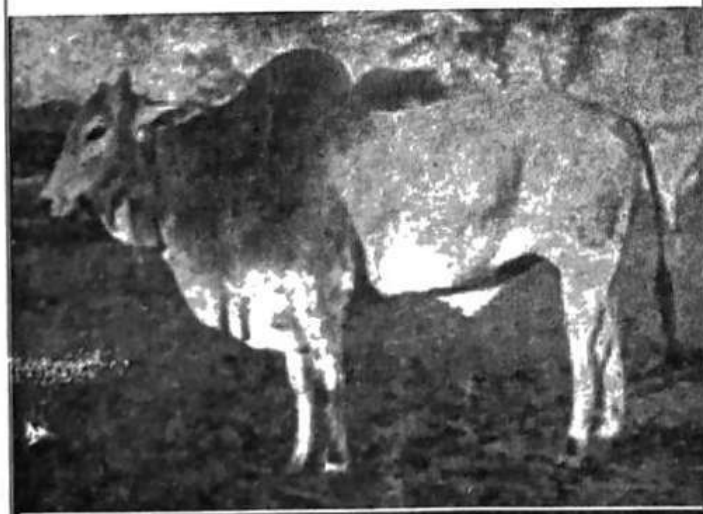
हरियाना साँड़
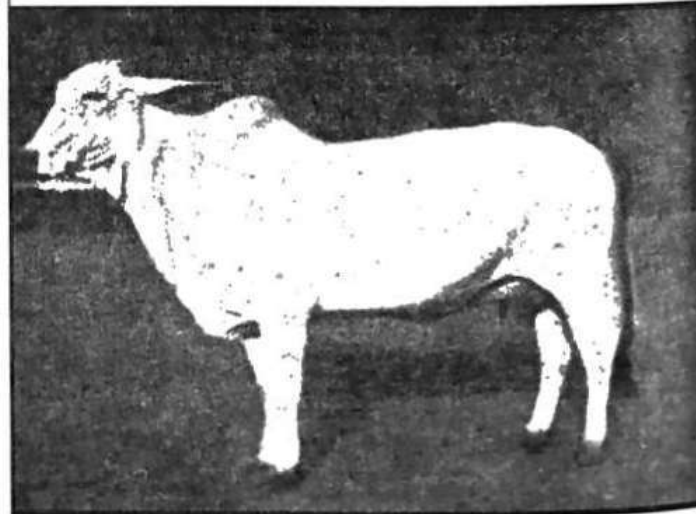
हरियाना गाय

५-बचौर नस्ल—इस नस्लके पशु बिहार प्रान्तके अन्तर्गत सीतामढ़ी जिलेके बचौर एवं कोइलपुर परगनोंमें पाये जाते हैं। इस जातिके बैल काम करनेमें अच्छे होते हैं। इनका रंग खाकी, ललाट चौड़ा, आँखें बड़ी-बड़ी और कान लटकते हुए होते हैं।

६-पँवार नस्ल—यह संयुक्तप्रान्तके पीलीभीत जिलेकी पटनपुर तहसीलमें और खेरीके उत्तर-पश्चिमी भागमें पायी जाती है। शुद्ध पँवार नस्लके गाय-बैलोंका मुँह सँकरा तथा सींग लंबे और सीधे होते हैं। इनके सींगोंकी लम्बाई १२ से १८ इंचतक होती है। इनका रंग प्राय: काला और सफेद होता है। इनकी पूँछ लंबी होती है और ये बड़े फुर्तीले तथा क्रोधी होते हैं। ये मैदानमें स्वच्छन्दरूपसे चरना पसंद करते हैं। गौएँ दूध कम देती हैं।

(३) ख—उत्तर एवं मध्य भारतकी सँकरे मुँह एवं छोटे सींगवाली सफेद गौ

इस जातिके अन्तर्गत मुख्य ६ नस्लें हैं—

१-भगनारी नस्ल—नारी नदीके तटवर्ती 'भाग' नामक इलाकेमें पाये जानेके कारण इस नस्लको 'भगनारी' कहते हैं। इस नस्लके पशु अपना निर्वाह नदी-तटपर उगनेवाले घास तथा अनाजकी भूसी आदिपर करते हैं।

इस नस्लमें भी दो प्रकारके पशु होते हैं—(१) छोटी रासके तथा (२) बड़ी रासके। इन पशुओंकी गठन अच्छी तथा कद लंबा होता है। इस जातिकी गौएँ अधिक दूध देनेके कारण प्रसिद्ध हैं।

दज्जल नस्ल—भगनारी नस्लका ही यह दूसरा नाम है, इस नस्लके पशु पंजाबके 'देरागाजीखाँ' जिलेमें बड़ी संख्यामें पाले जाते हैं। कहते हैं कि लगभग बहुत वर्षों पूर्व इस जिलेमें कुछ भगनारी साँड़ खास तौरपर नस्लके लिये भेजे गये थे। यही कारण है कि 'देरागाजीखाँ' में इस नस्लके काफी पशु हैं, यहींसे वे पंजाबके अन्य भागोंमें भेजे जाते हैं।

२-गावलाव नस्ल—यह नस्ल मध्यप्रान्तकी सर्वश्रेष्ठ नस्ल है। इस जातिके सर्वोत्तम पशु सतपुड़ाकी तराईके वर्धा जिलेमें, संसार तहसीलमें एवं कुरई परगनेमें, सिवनी तहसीलके दक्षिणी भागमें, नागपुर जिलेके कुछ भागोंमें और बइहर तहसीलमें पाये जाते हैं। ये प्राय: मध्यम कदके होते हैं। गौओंका रंग प्राय: निरा सफेद होता है और बैलोंका सिर खाकी रंगका होता है। इनका सिर काफी लंबा और सँकरा, सींग छोटे और गलकंबल बड़ा होता है। खिल्लारी जातिके बैलोंकी भाँति ये भी समान चालसे लंबी यात्रा कर सकते हैं। गावलाव जातिकी गौएँ दुधार मानी जाती हैं; परंतु वर्धाके पास बहुत-से गाँव ऐसे हैं, जिनमें इस जातिकी गौएँ बहुत थोड़ा दूध देती हैं। खिलाने-पिलानेकी समुचित व्यवस्था एवं सँभालसे इनका दूध बढ़ाया जा सकता है।

३-हरियाना नस्ल—इस जातिकी गौएँ बड़ी संख्यामें दूध देनेके लिये प्रतिवर्ष कलकत्ते आदि बड़े नगरोंमें भेजी जाती हैं। इस नस्लके पशु एक विशाल भू-भागमें पाये जाते हैं। जिसमें संयुक्तप्रान्त एवं राजपूतानेके भरतपुर और अलवर राज्य भी सम्मिलित हैं। हरियाना जातिके बैल सफेद अथवा खाकी रंगके होते हैं। ये चलनेमें तेज और हल जोतनेमें अच्छे होते हैं। कलकत्तेमें बरसातके पूर्व इनका खाकी रंग प्राय: सफेद हो जाता है। बैलोंकी गर्दन और थूहे काले होते हैं। गौओं और साँड़ोंके सींग छोटे और मोटे होते हैं; परंतु बैलोंके सींग प्राय: मुड़े हुए होते हैं।

४-हाँसी-हिसार नस्ल—पंजाबके हिसार जिलेमें हाँसी नदीके आस-पास यह नस्ल पायी जाती है, इसीसे इसका नाम 'हाँसी-हिसार' पड़ गया है। इस नस्लके पशु हरियाना नस्ल-जैसे ही होते हैं, परंतु उनकी अपेक्षा अधिक मजबूत होते हैं। इनका रंग सफेद और खाकी होता है। इस जातिके बैल यद्यपि परिश्रमी होते हैं, पर गौएँ हरियाना नस्लकी खूबीको नहीं पा सकी हैं।

५-अंगोल नस्ल—मद्रास प्रान्तका अंगोल नामका इलाका पशुओंके लिये प्रसिद्ध है। गंतूर जिलेके किसान लोग प्राय: इन पशुओंको पालते हैं। इस जातिके पशु प्राय: सीधे और बैल बड़े बलवान् होते हैं, परंतु अधिक भारी होनेके कारण वे तेज चलनेमें उपयोगी नहीं होते। इस जातिके पशु बहुत बड़ी संख्यामें अमेरिकन नस्लको सुधारनेके लिये अमेरिका भेजे जाते थे। ये थोड़ा-सा सूखा चारा खाकर निर्वाह कर सकते हैं। इनके शरीर अपेक्षाकृत लंबे और गर्दन छोटी होती है। ये अपने डील-डौल तथा शरीरकी गठनके लिये प्रसिद्ध हैं।

अंगोल गाय

साहीवाल गाय
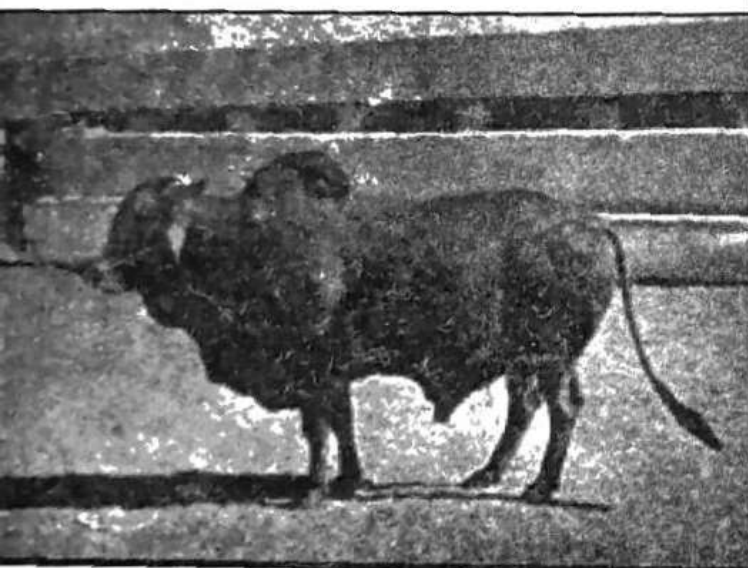
सिंधी साँड़

सिंधी गाय

धन्नी साँड़

धन्नी गाय

६-राठ नस्ल—ये मध्यम परिमाणके पशु होते हैं। ये बहुत फुर्तीले और मध्यम परिमाणके हल चलाने एवं सड़कपर चलनेमें उपयोगी होते हैं। इनकी गायें भी दुधार होती हैं। इन तीन गुणोंके कारण ये निर्धन लोगोंके पशु माने जाते हैं, जब कि नागौरी पशु धनवानोंके पशु समझे जाते हैं।

३ (क) और (ख) के मिश्रणसे उत्पन्न हुई जाति

इस जातिके अन्तर्गत दो प्रसिद्ध नस्लें हैं—

(१) केनवारिया नस्ल—यह बुंदेलखंडकी प्रसिद्ध नस्ल है और संयुक्तप्रान्तके बाँदा जिलेमें केन नदीके तटपर पायी जाती हैं। इस जातिकी गौएँ दूध कम देती हैं। इनका रंग खाकी होता है।

इनका मस्तक ओछा किंतु चौड़ा और सींग मजबूत एवं तीखे होते हैं। इनके सींगों तथा शरीरकी बनावटसे ऐसा प्रतीत होता है कि यह जाति ३ (क) और (ख) जातियोंके मिश्रणसे बनी है। इनके सींग काँकरेज जातिके पशुओंके-से होते हैं और दूसरे अङ्ग ३ (ख) वाली जातिके-से।

२-खेरीगढ़ नस्ल—यह नस्ल संयुक्तप्रान्तके खेरीगढ़ क्षेत्रमें पायी जाती है। ये पशु प्रायः सफेद रंगके तथा छोटे, सँकरे मुँहके होते हैं। इनके सींग बड़े और १२ से १८ इंचतक लंबे होते हैं, वे केनवारिया नस्लके सींगोंसे बहुत मिलते होते हैं। इनके सभी लक्षण प्रायः केनवारिया नस्लसे मिलते हैं। ये क्रोधी और फुर्तीले होते हैं तथा मैदानोंमें स्वच्छन्दरूपसे चरनेसे स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हैं। इनकी गायें दूध कम देती हैं। ये तराई प्रदेशके उपयुक्त होते हैं।

(४) साहीवाल जाति (जो अफगान-जाति तथा उत्तर भारतकी गौओंके मिश्रणसे बनी है)

इस जातिके पशु अफगानिस्तानके पशुओंसे बहुत मिलते हैं। ये बादामी रंगके अथवा चितकबरे होते हैं। और इनकी गणना भारतकी श्रेष्ठ गायोंमें है। यह प्रसिद्ध है कि किसी समय राजपूतानेसे बहुत-से लोग अपने पशुओंको साथ लेकर मंटगुमरी आये थे और ऐसा माना जाता है कि यह नस्ल गीर नस्लके सम्मिश्रणसे बनी है। इनका रंग अफगान-जातिकी गौओंसे तथा गीर-जातिकी गौओंसे भी मिलता है।

लोगोंका अनुमान है कि लाल रंगकी सिंधी गाय भी इन्हीं दो जातियोंके मिश्रणसे बनी है। इस जातिमें बलूचिस्तानके लास बेला प्रान्तकी नस्लके सम्मिश्रणका भी अनुमान किया जाता है।

१-साहीवाल नस्ल—ये मुख्यतया दूध देनेवाले पशु होते हैं, जो प्राचीन कालमें पंजाबके मध्य एवं दक्षिणी भागोंमें बहुत बड़ी संख्यामें पाले जाते थे। इस जातिके पशु भगनारी, हरियाना, नागौरी एवं धन्नी आदि जातियोंसे सर्वथा भिन्न होते हैं। दुधार होनेके कारण इस जातिकी गौएँ बड़ी संख्यामें शहरोंमें ले जायी जाती हैं। उनके दुग्धोत्पादनके परिमाणसे पता लगता है कि उचित सँभाल रखनेपर वे कहीं भी रह सकती हैं।

२-लाल रंगकी सिंधी नस्ल—यह नस्ल मूलतः कराचीके आस-पास और उसके उत्तर-पूर्वके प्रान्तमें पायी जाती है। बलूचिस्तानके लास बेला इलाकेमें शुद्ध सिंधी जातिके पशु पाले जाते हैं। इस जातिमें अफगान-नस्ल एवं गीर-नस्लका सम्मिश्रण पाया जाता है। लाल सिंधी गौओंकी गणना भारतकी सबसे अधिक दूध देनेवाली गौओंमें है। ये आकारमें छोटी होती हैं, किंतु इनमें दूध देनेकी क्षमता अधिक होती है। ये चाहे जहाँ पल सकती हैं। ये लाल रंगकी होती हैं और मुँहपर एवं गलकंबलमें कुछ सफेद धब्बे बहुधा रहते हैं। इनके कान मध्यम परिमाणके होते हैं।

इस नस्लके पालनेवाले इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं। उनका कहना है—'छोटे दुग्ध-व्यवसायीके लिये सिंधी गाय सर्वश्रेष्ठ गायोंमेंसे है। इसका आकार बड़ा नहीं होता और यह अंगोल, साहीवाल आदि बड़े आकारकी गौओंकी अपेक्षा कम खाती है; इसकी खुराकमें खर्चा कम पड़ता है और थोड़ी खुराकमें भी यह अपना स्वास्थ्य अच्छा रख लेती है।'

(५) धन्नी नस्ल

सर आर्थर आलवरके मतानुसार पंजाबकी धन्नी नस्लको स्वतन्त्र जाति मानना चाहिये। इस जातिके पशु मध्यम परिमाणके तथा बहुत फुर्तीले होते हैं। इनका रंग

एक विचित्र प्रकारका होता है और ये पंजाबके अटक, रावलपिंडी एवं झेलम इलाकोंमें तथा उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्तोंमें प्रचुर संख्यामें पाले जाते हैं। इस जातिकी गौएँ दुधार नहीं होतीं, इसका कारण कदाचित् यह हो सकता है कि लोग इनकी अधिक सँभाल नहीं रखते। यही कारण है कि उनकी दुग्धोत्पादन-क्षमताको विकासके लिये अवसर ही नहीं मिलता।

(६) प्राचीन भारतकी पहाड़ी गौ

समूचे भारतमें, विशेषकर हिमालय प्रदेश एवं बलूचिस्तानके पर्वतीय प्रदेशमें एक छोटे रासकी गो-जाति पायी जाती है, जिसका रंग, बनावट और सामान्य लक्षणोंको देखनेमें इस विषयमें संदेह नहीं रह जाता कि यह जाति प्राग्-ऐतिहासिक युगसे भारतवर्षमें पायी जाती है। इस जातिके पशुओंके ललाट और गलकंबलमें बहुधा सफेद धब्बा होता है और पूँछका सिरा तथा अन्य अवयवोंके अन्तिम भाग भी सफेद होते हैं। ये छोटे जानवर ऐसे स्थानोंमें भी सुखी और स्वस्थ रहते हैं, जहाँ बड़े और अधिक मूल्यवान् पशु जीवित नहीं रह सकते और दूध देकर तथा पहाड़ोंमें काम करके मनुष्यकी बहुत उपयोगी सेवा कर सकते हैं। इस जातिके पशु उत्तरमें लुंडीकोटल तथा दक्षिणमें कन्याकुमारीतक, पश्चिममें बलूचिस्तान और पूर्वमें आसामतक तथा भारतके विभिन्न भागोंमें स्थित जंगली एवं पहाड़ी प्रदेशोंमें भी पाये जाते हैं। पूर्व एवं पश्चिमके समुद्रतट, कुग प्रदेशमें, नीलगिरिके पर्वतोंपर तथा राजपूताना एवं मध्यभारतके जंगलों एवं पहाड़ी प्रदेशोंमें भी इनके दर्शन होते हैं। यदि इन्हें अच्छी तरह खिलाया-पिलाया जाय तो ये पशु वास्तवमें मूल्यवान् सिद्ध होते हैं। ये बहुत परिश्रमी, फुर्तीले एवं कामके होते हैं और अपने आकारके अनुसार दूध भी पर्याप्त मात्रामें देते हैं। इनके शरीरमें कोई ऐसी विशेषता नहीं होती, जिनके द्वारा इनकी जल्दी पहचान हो सके; एक बात अवश्य होती है कि इनका सिर शरीरके अनुपातसे बहुत छोटा होता है। हिमालय पहाड़की बहुत ऊँचाईपर जो बहुत छोटी रासके पशु मिलते हैं, उनके सींग बहुधा बिलकुल छोटे होते हैं; परंतु उनसे नीचेके भागोंमें, जहाँ उन्हें अधिक पोषण मिल सकता है, वे काफी लंबे होते हैं। जहाँ उन्हें काफी अच्छा पोषण मिल जाता है, वहाँ इस जातिकी गौएँ अपने आकारके अनुपातसे काफी दूध भी देती हैं।

१-सीरी नस्ल—इस जातिके पशु दार्जिलिंगके पर्वतीय प्रदेशमें तथा सिक्किम एवं भूटानमें पाये जाते हैं। इनका मूलस्थान भूटान ही माना जाता है और भूटानसे ही इस जातिके सर्वोत्तम पशु दार्जिलिंग लाये जाते हैं। ये प्रायः काले और सफेद अथवा लाल और सफेद रंगके होते हैं। इनके शरीर बारहों महीने घने बालोंसे ढके रहते हैं, जो इन पर्वतीय प्रदेशोंमें उनकी कड़ाकेकी सर्दी एवं मूसलाधार वर्षासे रक्षा करते हैं।

सीरी जातिका पशु देखनेमें भारी होता है। उसका मस्तक चौकोर और छोटा, किंतु सुडौल होता है। ललाट चौड़ा और चपटा होता है। थूहा काफी आगे निकला हुआ और कान बहुधा छोटे होते हैं। इस जातिके बैलोंकी बड़ी क़दर होती है।

२-लोहानी नस्ल—इस नस्लका मूलस्थान बलूचिस्तानकी लोरालाई एजेंसी है। जंगली जातियोंके इलाकोंमें भी ये काफी फैली हुई हैं, वहाँ इन्हें 'अच्छाई' जातिके पशु कहते हैं।

लोहानी जातिके पशु आकारमें बहुत छोटे होते हैं; जवान पशु ४० से ४४ इंचतक ऊँचे होते हैं। इनका रंग लाल होता है, जिसपर सफेद धब्बे होते हैं, यद्यपि ऐसे पशु भी कम नहीं होते जिनका रंग निरा लाल होता है। इस जातिके बैल हल चलाने तथा बोझा ढोनेमें, विशेषकर पर्वतीय प्रदेशोंमें बहुत उपयोगी होते हैं। वे कड़ी सर्दी और गर्मी सह सकते हैं।*

गां पङ्काद् ब्राह्मणीं दास्यात् साधून् स्तेनाद्द्विजं वधात्। मोचयन्ति च ये राजन् न ते नरकगामिनः॥

जो गायको कीचड़से, ब्राह्मणीको दासत्वसे, साधुको चोरसे और ब्राह्मणको वधसे छुड़ाते हैं, वे कभी नरकमें नहीं जाते।

---

* गायोंके कुछ चित्र चन्द्रावती राधारमणद्वारा लिखित 'संतुलित गोपालन' पुस्तकसे साभार उद्धृत हैं।

समांसमीना गौः

[चक्रवर्ती डॉ० श्रीरामाधीनजी चतुर्वेदी]

गायके विशेष नामोंका इतिहास बहुत प्राचीन है। जिनका उल्लेख महर्षि पाणिनिके अष्टाध्यायी ग्रन्थमें हुआ है। उनका विवरण इस प्रकार है—

जो गाय प्रतिवर्ष ब्याती है उसे संस्कृत भाषामें '**समांसमीना**' कहते हैं। जिसे लोकभाषामें '**धेनुपुरही**' गाय कहा जाता है। इसका तात्पर्य है कि जिस गायके थनमें दूसरा बच्चा पैदा करने-समयतक दूध रहता है, कभी सूखता नहीं, वही 'पूर्णधेनु' (धेनुपुरही) है। पाणिनिने '**समांसमीना**' पदका विवरण '**समांसमां विजायते**'[1] सूत्रसे किया है। अर्थात् '**समायां समायां—वर्षे वर्षे विजायते प्रसूयते**' इस निर्वचनसे यह पद निष्पन्न होता है। प्रतिवर्ष बच्चा पैदा करनेवाली गायें बहुत कम होती हैं। ये बहुत सीधी होती हैं, जब जो चाहे तब दूह ले। इसीलिये इस प्रकारकी गायको लोग 'कामधेनु' भी कहते हैं।

महर्षि पतञ्जलिने '**समांसमीना गौः**' में भी विशेष गुणकी प्रशंसा करते हुए कहा है—'**गौरियं या समां समां विजायते गोतरेयं या समां समां विजायते स्त्री वत्सा च**'[2] अर्थात् प्रत्येक वर्ष ब्यानेवाली गाय यदि प्रत्येक बार बछिया पैदा करे तो उसे '**समांसमीना गोतरा**' कहते हैं। यहाँ तरप् प्रत्यय उसके विशेष गुणका बोधक है। वस्तुतः बछड़ेकी अपेक्षा बछिया पैदा करनेवाली गाय विशेष लक्षणवती होती है, क्योंकि उससे गोधनकी वृद्धि होती रहती है।

इसी प्रकार गायके लिये—गृष्टि, धेनु, वशा, वेहत्, वष्कयणी—इन पदोंका भी उल्लेख '**पोटायुवतिस्तोककतिपयगृष्टिधेनुवशावेहद्वष्कयणीप्रवक्तृश्रोत्रियाध्यापकधूर्तैर्जातिः**'[3] इस सूत्रमें है। इनमें '**गृष्टि**' वह गाय है जो पहले-पहल ब्यायी हो। जिसे '**प्रष्ठौही**' भी कहते हैं। '**प्रष्ठौही**' का ही विकसित रूप लोकभाषामें '**पहिलौंठी**' है। एक-दो महीनेकी ब्यायी हुई गायकी संज्ञा '**धेनु**' है। '**धेट्**' धातुसे '**धेनु**' पद निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है पिलानेवाली। जिसका बच्चा जबतक दूधपर ही निर्भर रहता है, घास नहीं खाता, तबतक वह गाय धेनु कही जाती है। '**वशा**' पद वन्ध्या गायका बोधक है, जो कभी ब्यायी नहीं वह बाँझ गाय ही 'वशा' है तथा जिसके गर्भ कुछ दिनके बाद गिर जाते हैं, कभी पूरे समयतक ठहरते नहीं, वह '**वेहत्**' कहलाती है, जिसे गर्भघातिनी भी कहते हैं।

'**वष्कयणी**' गाय वह है, जिसका बछड़ा बड़ा हो जाता है। सात-आठ महीनेतक जो गाय दूध देती रहती है, वही 'वष्कयणी' है। जिसे दूसरे शब्दोंमें '**तरुण-वत्सा**' गौ कहते हैं। लोकभाषामें '**बकेन**' गायके नामसे प्रसिद्धि है। जो 'वष्कयणी' का परिवर्तित रूप है। बकेन गायका दूध गाढ़ा होनेसे विशेष लाभप्रद होता है।

गायोंके लिये इन अवान्तर नामोंसे ज्ञात होता है कि आजसे करीब तीन-चार हजार वर्ष-पूर्व समाजका गायोंके साथ कितना सम्बन्ध था जो कि उनकी प्रत्येक अवस्थाओंके लिये अलग-अलग व्यवहार नियत थे। उस समय गोधन ही मुख्य था। मानव-जीवनका प्रधान साधन गायें थीं। गौके पालन-पोषणसे समाज सुखी था, वह स्वास्थ्य और शान्तिका अनुभव करता था। यदि आज भी गोमाताकी सेवा होने लगे तो भारत पुनः शान्ति और समृद्धिका अनुभव करता हुआ वस्तुतः भारत हो जाय।

यथा गौश्च तथा विप्रो यथा विप्रस्तथा हरिः। हरिर्यथा तथा गङ्गा एते न ह्यवृषाः स्मृताः॥

जैसे गाय है वैसे ही ब्राह्मण है, जैसे ब्राह्मण है वैसे ही भगवान् श्रीहरि हैं और जैसे हरि हैं वैसे ही गङ्गाजी भी हैं। अतएव ये सब पापनाशक हैं। (पद्म०, सृष्टि० ४८। १५५)

---

(१) अष्टाध्यायी ५। २। १२; (२) महाभाष्य ५। ३। ५५; (३) अष्टाध्यायी २। १। ६५।

उत्तम गायके अवयवोंकी व्याख्या

गायकी पहचान उसके अवयवोंको देखकर करनी चाहिये।

(१) **रंग**—सर्वाङ्ग-काली श्यामा एवं कपिला गाय सर्वोत्तम मानी जाती है। लाल, बादामी या चितकबरे रंगवाली गाय भी श्रेष्ठ मानी गयी है। सफेद-मोतिया या भूरे आदि रंगकी भी गायें अच्छी होती हैं।

(२) **चर्म**—पतला, चिकना और रेशम-से नर्म बालोंदार हो।

(३) **ऊँचाई**—जातिके अनुसार काफी बड़े कदकी हो।

(४) **लंबाई**—शरीर लंबा और छाती चौड़ी होनी चाहिये।

(५) **सिर**—छोटा, मस्तक चौड़ा और गर्दन लंबी तथा पतली हो, किंतु साहीवाल आदि जातियोंके पशु भारी और छोटी गर्दनवाले होते हैं।

(६) **सास्ना**—भारी तथा झालरदार और ठाटी खूब विकसित हो।

(७) **सींग**—छोटे और चिकने तथा जातिके अनुसार आकारवाले हों। कपिला गायके सींग हिलते या नीचेकी और झुके हुए और चपटे होते हैं।

(८) **कान**—उभरे हुए और बड़े हों, उनके भीतरकी चमड़ी मुलायम तथा पीले रंगकी हो।

(९) **आँखें**—साफ, बड़ी, ममतामयी एवं स्निग्ध हों।

(१०) **नाक**—साफ हो और उससे पानी न बहता हो।

(११) **ओठ**—कोमल, सटे हुए एवं ताँबेके-से लाल रंगके हों।

(१२) **दाँत**—सफेद मजबूत एवं कीड़े-रहित हों।

(१३) **जीभ**—साधारण लंबी, कुछ लाल-सी, मुलायम और काँटेरहित हो।

(१४) **गला**—साफ, सुरीला और ऊँचे स्वरवाला हो।

(१५) **पूँछ**—पतली, काली चौंरीवाली और जातिके अनुसार लंबी एवं जमीनको छूती हुई हो। सफेद चौंरीवाला लक्षण किसी नस्लमें ही अच्छा किंतु अधिकतरमें दोष माना जाता है।

(१६) **पुट्ठे**—चौड़े, खुले हुए, स्थूल और ऊँचे हों।

(१७) **धुन्नी**—(पेटके नीचेकी चमड़ी) बड़ी, फैली हुई और मुलायम हो।

(१८) **जाँघें**—चौड़ी और फासलेपर हों।

(१९) **पैर**—सुडौल, मजबूत एवं लंबे हों, किंतु चलते समय आपसमें न लगते हों।

(२०) **खुर**—सटे हुए, गोल एवं मजबूत हों और इनके भीतरकी चमड़ी पीली एवं मुलायम हो।

(२१) **ऐन**—खुला, चौकोर, चौड़ा तथा बड़ा हो। अगले पैरोंकी तरफसे उभरी हुई रस्सीके आकारकी, दूधकी नसें ऐनकी तरफको आती दिखायी पड़ती हों।

(२२) **थन**—लंबे, मुलायम और दूर-दूर हों। चारों स्तन एक-से और बड़े हों।

(२३) **शरीर**—नीरोग और भरा हुआ, किंतु मोटा न हो। मोटी गायमें केवल मांस ही ज्यादा बढ़ जाता है, जिससे उसकी दूध देनेकी शक्ति कम हो जाती है।

(२४) **पसमाव**—(दूधका बहाव) एक-सा और मोटी धारका हो और बरतनसे टकराकर घर-घरकी-सी गम्भीर ध्वनि करनेवाल हो।

(२५) **दूध**—पीली झलकवाला और गाढ़ा हो।

(२६) **स्वभाव**—गम्भीर, सीधा, प्रेममय एवं उत्तेजना-रहित हो। वह ऐनके छूनेपर क्रोध न करनेवाली और सबसे सरलतापूर्वक दुहा लेनेवाली हो।

(२७) **चाल**—मन्द और सीधी हो।

(२८) **ज्ञातवंशज**—दुधार गायों तथा बलिष्ठ साँड़ोंके कुलकी हो।

(२९) **गुण**—जातीय नस्लके सभी गुण शुद्ध एवं पूरे हों।

(३०) **रुचि**—सभी किस्मके अच्छे चारे-दानेको

रुचिपूर्वक खोनवाली हो।

(३१) **गर्भ**—वह श्रेष्ठ साँड़से गाभिन हुई हो।

उदर, कुक्षि, कूल्हे दोऊ, माथा, छाती, पीठ।
ऊँचे उभरे अंग छै, यह शुभ लच्छन दीठ॥

युगल नेत्र अरु कर्ण हों, विस्तृत और समान।
मस्तक ऊँचो लेखिये, सब बिधि उत्तम जान॥
गल-कम्बल गर्दन तथा, पूँछ रु थन दोउ रान।
लम्बे चौड़े अङ्ग लखि, उत्तम कहत सुजान॥

दुधार गौकी परीक्षा

हमलोगोंमेंसे बहुतोंको इसका अनुभव हुआ होगा कि गौ रखनेकी इच्छा होनेपर भी अच्छी गौ न मिलनेसे जैसी-तैसी गौ रखकर पीछे कष्ट ही होता है और यही कहना पड़ता है कि बाज आये इस झगड़ेसे। पर ऐसा इसीलिये होता है कि हम गौ खरीदते समय यह देख नहीं लेते कि गौ दुधार है या नहीं। इस विषयकी कोई जानकारी ही नहीं होती। ग्वाले जानते हैं, परखते हैं, पर खुलकर सब भेद नहीं बतलाते। इसलिये जरूरी है कि हमलोग इसकी आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लें। जानकार लोगोंने दुधार गौकी पहचानोंका संग्रह किया है। विशेषज्ञोंको अवश्य इसमें कोई नया विशेष ज्ञान नहीं मिलेगा, पर सर्वसाधारणके लिये ये पहचानें उपयोगी होंगी, इसलिये यहाँ दी जाती हैं।

गौके बगलमें खड़े होकर देखना

गौके बगलमें खड़े होकर देखनेसे पहले उसका आकार दीख पड़ेगा। कंधोंसे लेकर पूँछतक उसकी लंबाई काफी होनी चाहिये। पीठ लचकी हुई न हो, मेरुदण्ड ऊपर उठा हुआ हो और उसके मनके अलग-अलग दिखायी दें। पेटका घेरा जितना ही बड़ा होगा, उतना ही वह अधिक खानेवाली होगी और उतना ही दूध भी अधिक देगी। यह ध्यानमें रहे कि कम खाकर अधिक दूध देनेवाली गौकी सृष्टि अभीतक नहीं हुई है। पेटकी पसलियाँ जब उठी हुई और फैली हुई होती हैं, तब पेटमें चारा-पानीके लिये अधिक अवकाश होता है। दूध देनेवाली गौके शरीरपर मांस अधिक नहीं होता, क्योंकि वह जो कुछ खाती है, उससे दूध ही अधिक निर्माण होता है। हाँ, गाभिन होनेपर पौष्टिक पदार्थ खानेको मिलें तो वह अवश्य ही पुष्ट होती है। गौके बदनपर हाथ फेरकर देख लेना चाहिये। यदि खाल मुलायम और पतली हो तो यह अच्छा लक्षण है, यदि खाल मोटी हो तो यह समझना चाहिये कि रक्ताभिसरण ठीक नहीं हो रहा है। और रोएँ घने हों तो समझना चाहिये कि इसकी परवरिश ठीक तरहसे नहीं हो रही है और इसका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है।

पीठके पीछे खड़े होकर देखना

पीठके पीछे खड़े होकर गौकी ओर देखनेसे पेटका भराव दीख पड़ता है। पुट्ठों और नितम्बोंकी चौड़ाई सामने आ जाती है। पुट्ठोंका चौड़ा होना यह सूचित करता है कि गर्भाशयमें अर्भकका पोषण ठीक तरहसे होता है। गौके थनका पिछला भाग और चूँचियाँ भी यहाँसे दीख पड़ते हैं। गौकी जाँघें भरी हुई और दोनों जाँघोंके बीच काफी अन्तर होना चाहिये, जिसमें थनके समानेके लिये पूरा अवकाश हो।

पेटके नीचेसे देखना

गौके पेटपर 'दूधवाली शिरा' होती है। वह थनकी ओर रक्त पहुँचानेवाली रक्तवाहिनी है। यह जितनी लंबी और बड़ी होगी, थन उतना ही अधिक पोसा जायगा और उतना ही उसमें दूध उत्पन्न होगा। इसीलिये इस रक्तवाहिनीको 'दूधवाली शिरा' कहते हैं। यह पेटके नीचे जितनी ही स्पष्ट दीख पड़े और थनके ऊपरकी नसें भी जितनी स्पष्ट लक्षित हों, उतना ही यह समझना चाहिये कि गौ दुधार है। थनका अगला भाग भी यहाँसे देख लेना चाहिये। थन बड़ा और पेटके बराबरमें हो। लटक आया हुआ या मांसल न हो और उसपरकी नसें साफ दीख पड़ें। आगे और पीछे दोनों ओर थन पेटसे सटा हुआ हो। चारों चूँचियाँ बराबर फासलेपर और एक-सी बढ़ी और भरी हुई हों। बहुत पतली चूँचियोंसे,

जो अँगुलियोंमें भी न आयें, दूध भी कितना निकलेगा। अन्य सब लक्षणोंकी अपेक्षा थन और चूँचियोंकी परखमें ही अधिक ध्यान देना चाहिये।

गौके सामने खड़े होकर देखना

सामनेसे गौका मुँह दीख पड़ता है। उसका जबड़ा और नथुने चौड़े हों, आँखें पानीदार हों, गौ सीधी है या नहीं, यह उसका मुँह देखनेसे पता चलता है। दाँतोंसे उसकी उम्रका अनुमान होता है। गायके नीचेवाले जबड़ेमें ८ [दूधिया] दाँत होते हैं। दो वर्ष बाद बीचके दो [दूधिया] दाँत गिर जाते और उनके स्थानमें दो बड़े [स्थायी] दाँत निकलते हैं। इस तरह हर साल दो-दो बड़े दाँत निकलते और पाँच वर्षमें आठों बड़े [स्थायी] दाँत पूरे हो जाते हैं। पाँच-छः वर्षके बाद ज्यों-ज्यों गौ ढलने लगती है, त्यों-त्यों उसके दाँत भी घिसते जाते हैं और खूँटी-सरीखे होने लगते हैं। गायके ऊपरके जबड़ेमें दाँत नहीं होते। इन नीचेके दाँतोंसे घास-चारा काटकर वह पेटमें उतारती है और पीछे दोनों जबड़ोंके किनारेकी मजबूत दाढ़ोंसे चबाकर (जुगाली करके) निगल जाती है।

गौके कानोंमें यदि कुछ पीली-सी चमक दिखायी दे तो समझना चाहिये कि गौ दुधार है और उसके दूधमें मक्खनका अंश अधिक है। गौका गलकंबल पतला होना चाहिये, इससे यथेष्ट वायु अंदर खींचनेमें उसे सुविधा होती है और वह नीरोग रहती है। पेटका घेरा भी सामनेसे दीख पड़ता है। पिछले पैरोंकी तरह अगले पैर भी दूर-दूर हों।

पीठपरसे देखना

पीठपरसे नीचे देखनेसे भी पेटका आकार और पुट्ठे दीख पड़ते हैं। पुट्ठा एकदम उतारदार न हो। यदि दुहती गाय खरीदी जाय तो बिना अन्तर दिये तीन-चार बार स्वयं दूध निकालकर देख लेना चाहिये। दूध निकालते समय पात्रमें धार गिरनेका जो शब्द होता है, उसके द्वारा भी गाय दुधार है या नहीं, इसकी परीक्षा होती है। थनमें यदि दूध अधिक होगा तो पात्रमें धारके गिरते समय जोरसे शब्द होगा। यदि दूध अधिक न हुआ तो धार पतली होगी और शब्द भी धीमा ही होगा। पाश्चात्त्य पद्धतिसे गौकी परीक्षा करनेकी एक और रीति है। जैसे—

१-पीठपरसे देखनेपर गायका शरीर गलेसे पीछेकी ओर दोनों तरफ चौड़ा होता चला गया हो तो यह लक्षण अच्छा है। ऐसी गायके उदर तथा पाकाशयका पूर्ण विकास हुआ समझा जाता है। वह भरपूर खा सकती है और पचा भी सकती है।

२-बगलसे देखनेपर गायके गलेसे पूँछतकका भाग चढ़ता और गलकंबलसे थनतकका भाग उतरता हुआ चला गया हो। ऐसी गायका थन बड़ा होता है और उसमें दूध भी भरपूर होता है। उसी प्रकार गर्भाशयमें गर्भके विकासके लिये पर्याप्त स्थान मिल जाता है और उससे बच्चा बलिष्ठ होता है।

३-सामनेसे देखनेपर दोनों तरफ गौका शरीर ऊपरसे नीचेकी ओर चौड़ा होता हुआ दीख पड़े। इससे गौका फुफ्फुस और हृदय पूर्ण विकसित तथा बलिष्ठ हुआ समझना चाहिये।

सारांश यह कि ऊपरसे, बगलसे अथवा सामनेसे किसी ओरसे भी देखनेपर गौका शरीर सब ओरसे तिहरे पच्चर (Triple Wedge) की तरह (एक ओरसे दूसरी ओर बारीक होता हुआ) दिखायी देना चाहिये। उसका यह आकार जितना पूर्ण होगा, उतनी ही वह अधिक दुधार होगी।

(गो-ज्ञान-कोश)

गोबरसे प्रार्थना

अग्रमग्रं चरन्ती नामोषधीनां रसं वने। तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम्॥
यन्मे रोगाश्च शोकांश्च पापं मे हर गोमय॥

वनमें अनेकों ओषधियोंके रसको चरनेवाली वृषभपत्नी (गायों) के पवित्र और कायाकी शुद्धि करनेवाले हे गोबर! तू मेरे रोग, शोक और पापोंका नाश कर।

साँड़ोंके लक्षण और उनकी परिचर्या

चुनाव—गोशालाके लिये श्रेष्ठ, मूल्यवान् एवं सर्वगुण-सम्पन्न साँड़के चुनावमें अत्यन्त सावधानी और सतर्कता रखनी चाहिये। साँड़ ही शालाका प्राण एवं भविष्य है। साँड़पर ही गायोंके दूध देनेकी शक्ति और आगे आनेवाली नस्ल निर्भर रहती है। एक ही साँड़ अनेक बछड़े और बछियोंका पिता बनता है और इस दृष्टिसे वही शालाका प्रधान पशु है। साधारण गायकी नस्ल भी बढ़िया साँड़के संयोगसे सुधारी जा सकती है।

शालामें एक उत्तम साँड़ अवश्य होना चाहिये। साँड़के न होनेसे गायोंका सोया मारा जाता है। बार-बार गरम होनेपर भी गाय यदि बर्धायी न जाय, तो वह निर्बल या मांसल हो जायगी और उसे फिरसे गरम होनेमें समय भी लगेगा। शालामें साँड़के न होनेसे गाय और पालक दोनोंकी हानि होगी। पालकके पास केवल एक-दो गायें हों, तो भी किसी अच्छी गोशालाके सुपालित साँड़से ही उनको हरी करना चाहिये। इधर-उधर घूमते हुए, अज्ञात जाति एवं कुलवाले, रोगी, बुड्ढे और रक्षकरहित साँड़से अपनी गायको कदापि हरी न करायें। साँड़का लालन-पालन अन्य सब पशुओंसे बढ़कर होना चाहिये। उत्तम साँड़से गाभिन होनेपर गायमें दूध देनेकी शक्ति बढ़ जायगी।

यदि साँड़ बढ़िया न हो, तो बढ़िया नस्लको दुधार गाय भी हर-ब्याँतमें कम दूध देने लगेगी और उसके बछड़े-बछिया उससे निर्बल होंगे।

साधारणतया यदि काफी दूध चाहिये और साथ ही अच्छे बैल भी चाहिये, तो सर्वाङ्गी नस्लोंके साँड़ तथा स्थानीय नस्लकी गायें सबसे ज्यादा उपयोगी होंगी।

अपनी आवश्यकता तथा प्रान्तकी जलवायु और नस्लका ख्याल करके उत्कृष्ट-जातीय गुणवाले देशी साँड़को दूर-देशसे भी मँगाकर नस्ल सुधारी जा सकती है। स्थानीय पशु बढ़िया हों तो उनमेंसे ही श्रेष्ठ लक्षणोंवाले, ज्ञात-वंशज, और यदि सम्भव हो तो ज्ञात-शक्तिवाले साँड़को छाँटकर उससे गो-वंशको सुधारना चाहिये। हर हालतमें साँड़को गायसे बलवान्, ऊँचे आकारका और भारी होना चाहिये। आगेके लिये गो-जन्म-पत्र जरूर बना लेना चाहिये।

श्रेष्ठ साँड़के लक्षण—

(१) ज्ञात-वंशज—साँड़ दुधार गायों तथा उत्तम साँड़ोंके कुलका हो। जिस साँड़की माता, दादी, नानी भी दुधार गायें रही हों और जिसके पिता, दादा एवं नाना सद्‌गुणी साँड़ सिद्ध हो चुके हों, वही साँड़ सर्वश्रेष्ठ होता है। कम-से-कम साँड़के माता-पिताको तो सद्‌गुणी होना ही चाहिये।

ऐसे बढ़िया साँड़से गाभिन हुई गाय अधिक दूध देगी और उसकी बछिया दुधार गाय एवं बछड़ा साँड़ बनेगा।

जहाँतक सम्भव हो, साँड़के माता-पिताके गुण, दोष, जाति और शक्तिका पता लगाकर शालाके जन्मपत्रमें उनके पूरे इतिहासको लिख ले। इससे आगामी नस्लको सुधारने तथा किसी विशेष शक्तिको बढ़ानेमें सहायता मिलेगी।

(२) शुद्ध नस्ल—साँड़ अपनी जातिके शुद्ध गुण एवं कुलवाला होना चाहिये। विभिन्न जातिके मिलानसे पैदा संकर नस्लवाले पशुके शरीरमें नाना प्रकारके गुणोंवाले क्रोमोसोम्स (Chromosomes) का समावेश हो जाता है। गर्भाधानके समय उसमें जो गुण प्रभावशाली होंगे, वे ही उसकी संततिमें आ जायँगे। किंतु असली नस्लवाले साँड़में अधिकतर जाति-विशेषके ही गुण जाग्रत् और प्रभावशाली रहेंगे। अत: अधिकांशमें वह उन्हीं गुणोंका संचार अपनी संततिमें करेगा। इसलिये वह उत्तम और उपयोगी है।

(३) आयु—साँड़की उम्र ३ वर्षसे कम और ९-१० वर्षसे ज्यादा नहीं होनी चाहिये। पूर्ण युवा साँड़के चार पक्के दाँत होते हैं। कच्ची उमरवाले साँड़को सावधानीसे पालना और गायके सम्पर्कसे बचाना चाहिये, अन्यथा बढ़िया होनेवाला साँड़ भी क्षीण हो जायगा।

(४) अवधि—४ वर्षसे अधिक समयतक एक साँड़का उसी गोशालामें रहना अच्छा नहीं है। चार वर्षके भीतर इस साँड़से उत्पन्न बछिया तीन वर्षकी होकर गर्भ धारण करने योग्य हो जायगी। अत: इसी साँड़के संयोगसे उसे बचाना चाहिये। साधारण गो-पालकके लिये हर-पीढ़ीमें नये खूनका संचार ही वाञ्छनीय रहेगा।

(५) संयोग—एक साँड़से सप्ताहमें एक बार एक

गायसे अधिक गायें हरी नहीं करानी चाहिये, नहीं तो वह कमजोर हो जायगा। रोगी गायके सम्पर्कसे भी उसे बचाना चाहिये। शालाकी हर ४०-५० गायोंके पीछे एक साँड़का होना जरूरी है।

(६) **परिचर्या**—गायसे संयोग करानेके बाद साँड़को पौष्टिक चारा, दाना तथा गुड़ जरूर खिलाना चाहिये। ऋतुके अनुसार साँड़को स्नान कराना और उसपर ब्रुश फेरना चाहिये। गर्मीके मौसममें उसे रोज ही नदी, तालाब या शालामें नहलाना चाहिये। जाड़ोंमें कभी-कभी धूपमें नहलाकर पोंछ देना ठीक रहता है। उसका सारा शरीर खूब सुखा देना चाहिये। साँड़को सर्वदा स्वच्छ एवं नीरोग रखना चाहिये; उसके शरीरपर किलनी, बग्घी आदि जन्तु कतई न रहने पायें।

(७) **व्यवहार**—साँड़को छेड़ना तथा चिढ़ाना नहीं चाहिये, वह स्वतन्त्रजीवी है और स्वच्छन्दताको पसंद करता है। अपनी गोशालासे बाहर जानेपर वह स्वत: ही लौट आयेगा।

(८) **परिश्रम**—साँड़को हमेशा बंद रखकर ज्यादा भारी, मोटा और आलसी नहीं बनाना चाहिये। उसके लिये भी घूमना-फिरना और स्वतन्त्र होकर घास चरना बहुत जरूरी है।

शरीरके अवयव

रंग—जातिके अनुसार काला, लाल, चितकबरा या सफेद और सुन्दर हो।

चर्म—पतला, चिकना और रेशम-से नरम बालोंवाला हो।

कद—ऊँचा, लंबा, सुगठित और भारी हो।

सिर—लंबा, माथा चौड़ा और गर्दन भारी हो।

झूल—मोटी एवं भारी झालरदार, सींग छोटे और गुट्ठल तथा कान बड़े हों।

दृष्टि—तेज, आँखें लाल रंगकी और दाँत तीखे तथा मजबूत हों।

ठाटी—ऊँची, भारी एवं चलते समय हिलनेवाली तथा सीना चौड़ा हो।

कंधे—ऊँचे, पुट्ठे चौड़े और पीठ लंबी हो।

पूँछ—सीधी, मोटी, घनी-चौंरीदार और जमीनको छूती हुई लंबी हो।

पैर—गठीले तथा मजबूत, नाभि लंबी और मुतान लटकता हुआ किंतु ढीला न हो।

रँभाना—मेघके समान गम्भीर और स्वभाव शान्त किंतु स्वतन्त्र हो। वह छोटे बछड़े-बछियोंसे चिढ़नेवाला न हो।

शेष अवयव उत्तम गायके समान हों।

साँड़ोंकी जाति-व्याख्या

१-श्रेष्ठ—वह है, जिसके सींगोंके आगेका भाग और नेत्र तो लाल रंगके हों, किंतु शेष शरीर सफेद रंगका, खुर चिकने तथा कोमल, मस्तक चौड़ा तथा गर्दन ऊँची हो। रोकनेपर वह दाहिनी ओर घूम जानेवाला हो।

२-विचित्र-सिद्धिदायक—जो ध्वजा, पताका एवं शक्तिके चिह्नोंवाला हो।

३-भाग्यवर्धक—जिसमें कमलकी आकृतिके चिह्न या धब्बे हों।

४-नील-वृषभ—जिसकी टाँगें, मुँह और पूँछ सफेद रंगके, किंतु शेष शरीर लाखके रंगका हो और आगेका धड़ उभरा हुआ तथा पूँछ मोटी एवं जमीनको छूती हुई हो। ऐसे लक्षणोंवाले साँड़को छोड़नेसे पितरोंको विशेष तृप्ति होती है, ऐसा माना जाता है।

५-नन्दी-मुख—जिसका कानोंतक मुँह सफेद रंगका हो और शेष शरीर लाल रंगका हो।

६-समुद्रक—जिसकी केवल पीठ या पेट ही सफेद रंगका हो और शेष शरीर काले, पीले या लाल रंगका हो।

७-धन्य—जो चितकबरा हो।

८-करट—जिसके दो या सभी पैर सफेद हों और शेष शरीर पीले रंगका हो।

९-निकृष्ट—वह है, जिसके तालु, ओठ एवं मुँह काले रंगके हों, सींग और खुर खुरदरे हों। कद नाटा और ठिगना हो, रंग गीधका-सा भूरा या कौएका-सा काला हो। आँख कानी, भेंड़ी या चंचल हो। जो रोगी, निर्बल या बूढ़ा हो, जिसके पैर बराबर न पड़ते हों, जो अज्ञात जाति और वंशका हो तथा संरक्षक न हो, ऐसे दोषयुक्त साँड़को गोशालाके पास भी नहीं आने देना चाहिये।

पाश्चात्त्य-देशीय गायें

संसार भरके सभी देश-देशान्तरोंमें दूधके लिये ही गाय पाली जाती है, जबकि भारतमें गोसेवा दूधके साथ-साथ भावनात्मक भी है। भारतीय गायें मनुष्यकी नित्य सहचरी हैं। प्रारम्भसे ही इन गायोंको मनुष्यका स्नेह एवं प्रेम प्राप्त हुआ। जबकि अन्य देशोंकी गायोंका इतिहास यह है कि वे बहुत समयतक जंगलोंमें हिंसक पशुके रूपमें घूमते रहनेके बाद मनुष्योंके घरमें आकर पाली गयीं। भारतीय गायोंका विशिष्ट लक्षण है उनका गलकंबल और पीठपर ककुद्। प्राणितत्त्वविदोंके मतसे ककुद्युक्त गाय जेबू (Zebu) श्रेणीके अन्तर्गत है। भारतीय जेबू गाय अफगानिस्तान, फारस तथा अफ्रीकाके किसी-किसी भागमें पायी जाती है। इसके अतिरिक्त और कहीं भी ये गायें नहीं हैं।

यदि भारत तथा फारस, अफगानिस्तान और अफ्रीकाके कुछ स्थानोंको छोड़कर और कहीं गायें नहीं पायी जातीं तो इंग्लैण्ड, अमेरिका आदिकी २५-३० सेरतक दूध देनेवाली गायें क्या हैं? अवश्य ही वे असली गायें नहीं हैं, वरं गायके समान दूध देनेवाले पशु-विशेष हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है उनके गलकंबलका न होना और ककुद्का भी नहींके बराबर-सा ही होना। उनकी आकृति गायकी आकृतिसे मिलती है, इसीसे वहाँकी काउ (Cow) को भ्रमसे भारतीय गायके तुल्य ही समझते हैं। आकृतिकी सादृश्यतासे जातिकी एकता सिद्ध नहीं होती। कुछ जातिके हिरन, भैंस, गाय और बैलोंमें इतनी सादृश्यता रहती है कि एक जातिको देखकर दूसरी जातिका भ्रम होता है। इलांड हिरन (Eland), नू (Gnu), कुंडू (Koondo) गायके साथ एवं चिलिंघम कैटिल् (Chillingham Cattle) गायके साथ बहुत मिलते-जुलते हैं। स्काट्लैंडके हाईलैंड कैटिल् (Highland Cattle) और भैंसकी बाहरी आकृति प्राय: एक समान है। एनो (Anoa) नामक हिरन (Antelope) और भैंसमें बहुत थोड़ा अन्तर है। जावा, बालीद्वीप, मलक्का एवं बोर्नियो टापू आदिमें वेंटेंग नामक एक पशु है, जो गायसे विशेष मिलता है। यह वेंटेंग बर्मामें भी है, पर वहाँ इसे सिन (Tsiue) कहते हैं। अपने भारतकी नील गायको ही देखिये, वह गायसे कितनी मिलती-जुलती है, पर गाय नहीं है, एक प्रकारका हिरन है। अत: यह स्पष्ट है कि अन्य देशोंकी गायें असली गोजातिकी नहीं हैं।

पाश्चात्त्य देशोंके दूध देनेवाले इन पशुओंको गाय न कहकर 'गवय' कह सकते हैं, क्योंकि इनकी आकृति बहुत कुछ गायसे मिलती है, **'गोसदृशः गवयः'**। वहाँकी गायोंका पूर्वज यूरास् (जर्मनमें यूरच्) नामक जंगली और हिंसक पशु है। यह सिंह, बाघ, गैंडा और भालूकी भाँति जंगलोंमें घूमता था। यह सात फुटसे अधिक ऊँचा होता था एवं इसके सींग तीन फुट लंबे होते थे। जूलियस सीजरने इसका उल्लेख किया है और इसे हाथीसे कुछ छोटा बताया है। इसके शरीरके रोएँ काले अथवा भूरे थे। अब भी इंग्लैण्डके किसी-किसी रक्षित बागकी जंगली गायें इसी आकृतिके काले बच्चे उत्पन्न करती हैं। इस यूरास् पशुको लोग जंगलोंसे लाकर पालने लगे और वहाँके विज्ञानविद् एवं चिरअध्यवसायी अधिवासियोंके विशेष यत्न और चेष्टासे यह पशु ही धीरे-धीरे ऐसे दूध देनेवाले पशुके रूपमें परिणत हो गया। इस सिद्धान्तकी कुछ पुष्टि इस बातसे भी होती है कि विलायती गायें भारतीय गायोंकी तरह सीधी नहीं होतीं। भूगर्भखननसे इस बातका प्रमाण मिलता है कि यूरास्-जातीय पशु ही योरोपका गृहपालित पशु हुआ। इंग्लैंडके वारहिल्, न्यूस्टेड आदि रोमन स्टेशनोंमें ऐसी गायोंके कंकाल दिखायी देते हैं। इन सब बातोंसे पता चलता है कि विलायती गाय जंगली, हिंस्र एवं मनुष्योंके भीषण शत्रुरूप पशुसे उत्पन्न होकर केवल मनुष्योंके यत्न और चेष्टासे वर्तमान पालतू और दूध देनेवाला पशु बन गया है। इसके लिये पाश्चात्त्य मनुष्यका अध्यवसाय और यत्न अवश्य ही अभिनन्दनीय है। इसीका फल है कि ये गवय, महिष, वाइसन, चमरी, नीलगाय, गौर वेंटेंग, इलांड, नू, कुंडू और यूरोपीय बोस्टोरस-जातीय पशु दूध देते तथा कृषिकार्यमें गाय-बैलकी भाँति व्यवहृत होते हैं।

विदेशी गाय और भारतीय गायमें अन्तर

विदेशी गोजाति और भारतीय गायकी आकृति तथा स्वभावमें भिन्नता होती है। संक्षेपमें कुछ अन्तर इस प्रकार हैं—

विदेशी गाय	भारतीय गाय
१-पीठ सीधी होती है।	१-भारतीय गायकी पीठ कुछ गोलाकार होती है तथा पीठपर कंधेका हिस्सा गोलाई लिये होता है, जिसे ककुद्, कुहान या ठाटी कहते हैं, बैलों तथा साँड़ोंमें तो यह विशेष रूपसे बड़ा होता है।
२-लंबाई तथा आकार भी बड़ा होता है।	२-दोनों चीजें साधारण होती हैं।
३-सींग छोटे होते हैं।	३-सींग प्रायः बड़े होते हैं।
४-ऐन बड़ा तथा घुटनोंतक होता है।	४-ऐन साधारण होता है।
५-दूध अधिक देती हैं।	५-दूध साधारण देती हैं।
६-बैल परिश्रमी नहीं होते।	६-बैल परिश्रमी और उपयोगी होते हैं।
७-बहुत सीधी नहीं होतीं।	७-प्रायः सीधी होती हैं।
८-रँभानेका स्वर दबा हुआ होता है।	८-रँभानेका स्वर ऊँचा होता है।

आगे विदेशोंकी गोजातिका संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है—

(१) इंग्लैंडकी गोजाति

इंग्लैंड तथा वहाँके द्वीपसमूहोंमें मुख्यरूपसे (१) शाटहार्न (छोटे सींगवाली), (२) लिंकनशायर (छोटे सींगकी लाल गायें), (३) हेरीफोर्ट शायर (सफेद मुँह और शरीर लाल), (४) नार्थ डिवन (उज्ज्वल शरीरवाली), (५) लोंग हार्न (लंबे सींगवाली), (६) रेड पोल्ड (लाल रंगकी शृंगहीना), (७) डरहम (छोटे सींगवाली), (८) वेल्स (काली गाय), (९) एवार्डिन एंगास, (१०) आयरशायर, (११) गैलवे, (१२) केरी,

जर्सी

(१३) जर्सी तथा गर्नसी आदि गोजातियाँ पायी जाती हैं। इनमें जर्सी, गर्नसी, आयरशायर, शाटहार्न तथा केरी आदि नस्लें विशेष दुधार होती हैं।

इंग्लिश चैनल द्वीपोंमें जर्सी नामका एक द्वीप है। वहाँकी गायें जर्सी नामसे विख्यात हैं। इस जातिकी गायें दूधके लिये विश्वमें प्रसिद्ध हैं और इनमें मक्खन भी अधिक निकलता है। ये प्रायः २-३ वर्षकी उम्रमें ही बच्चा दे देती हैं। इनका रंग प्रायः शुभ्र और धूसर होता है।

समय-समयपर भारतवर्षसे नाना जातिकी गायें इंग्लैंड जाती रही हैं। उसको वे लोग ईस्ट इण्डियन गाय कहते हैं।

(२) हालैंडकी गायें

गुजरातकी भाँति हालैंड समुद्रके किनारे-किनारे बसा है। यह कृषि-प्रधान देश है। यहाँ गायें बहुतायतसे पाली जाती हैं। यहाँकी गायोंके बराबर पृथ्वीकी किसी जातिकी गाय दूध नहीं देती। यहाँकी गायें बड़े आकारकी, शान्त, धीर और सुन्दर होती हैं। इस देशमें मुख्यतः २ श्रेणीकी गायें हैं—

होलस्टिन फ्रिजियन गाय

(क) होलस्टिन फ्रिजियन—फ्रिजिया प्रदेशकी ये

गायें जर्मनीके होलस्टिन बंदरगाहसे बाहर जाती हैं, इसीसे अमेरिकावाले इन्हें होलस्टिन फ्रिजियन कहते हैं। फ्रिजियाका अधिकांश भाग नीचा होनेके कारण यहाँ घास खूब होती है। यहाँके गाय-बैल घास खाकर खूब लंबे-चौड़े तथा बलिष्ठ हो जाते हैं। यहाँके गो-स्वामी गो-पालनके सिवा और कोई काम नहीं करते। इसीसे उनका पूरा ध्यान गायोंपर रहता है। बहुतसे इन्हें इंग्लैण्डकी छोटे सींगवाली गायोंका आदि बीज मानते हैं। ये दूध खूब देती हैं।

(ख) लेकेन फील्ड या डचबेल्ट—इस जातिकी गायोंका आदि निवासस्थान हालैंड देश है। ये इंग्लैण्डकी गैलवे गायकी भाँति होती हैं, पर इनके सींग नहीं होते। यूरोपमें इन्हें डचबेल्ट और हालैण्डमें लेकेन फील्ड कहते हैं, जिसका अर्थ है वस्त्रावृत। इनका अगला-पिछला भाग घोर काला और बीचका खूब सफेद होता है, जिससे ऐसा मालूम पड़ता है कि एक सफेद कंबल बीचमें लपेट दिया गया है, इसीसे इसका नाम लेकेन फील्ड पड़ा। ये होलस्टिन गायोंसे छोटी होती हैं। गायें केवल दूधके लिये पाली जाती हैं। इंग्लैण्ड, मेक्सिको, कनाडा तथा अमेरिकामें भी इस जातिकी गायें हैं, किंतु इनकी संख्या कम है।

बेल्जियमकी गायें—इस देशकी गायें अनेक अंशोंमें हालैंडकी गायोंकी भाँति होती हैं।

स्विटजरलैंडकी गायें—स्विटरलैंडमें दूधका खूब विस्तृत व्यवसाय होता है। इस देशको पृथ्वीका 'गो-गृह' कहते हैं। यह राज्य ही एक गोचरभूमि है। सन् १९०१ में यहाँ केवल १,३४० गायें थीं, किंतु १९०६ में १४,९९,८०४ गायें हो गयीं। गर्मीके दिनोंमें ये गायें पहाड़ीपर घास चरती हैं और जाड़ेमें घर रहती हैं। इनमें एक विशेष जातिकी गायें हैं जो अधिक दूध देती हैं। खूब मोटी होनेसे ये नाटी मालूम पड़ती हैं। इनका थन सुगठित होता है और दूधकी शिराएँ स्पष्ट दिखायी देती हैं। ये बड़ी आसानीसे पहाड़पर चढ़-उतर सकती हैं। देखनेमें भी ये गायें सुन्दर दीखती हैं।

डेन्मार्ककी गायें—यहाँ आल्डेनवर्ग तथा रेड डेनिस नामक दो जातियोंका उत्कृष्ट गो-परिवार है। एक समय यह समस्त यूरोपका गोगृह था और यहाँसे खोवा, मक्खन, पनीर और दूध यूरोपमें जाता था। आज भी यह देश दूध-मक्खनके लिये प्रसिद्ध है।

नार्वे और स्वीडनकी गायें—डेन्मार्ककी भाँति इन दोनों देशोंमें भी अधिक दूध देनेवाली गायें होती हैं। ये और डेन्मार्ककी गायें प्रायः एक ही जातिकी हैं। इस देशका अधिक भूभाग शीतकालमें बर्फसे ढका रहनेके कारण यहाँ घास कम होती है, किंतु गो-पालकोंके सुन्दर प्रबन्धके कारण घासका जरा भी अपव्यय नहीं होता, इसीसे विशेष कमी नहीं पड़ने पाती। यहाँवाले गायोंकी सेवा खूब करते हैं। गोशालाओंको खूब साफ-सुथरा रखते हैं और गायोंको अलग-अलग बड़े घरोंमें रखते हैं। एक स्त्री बीस-पचीस गायोंकी सेवा करती है।

इटलीकी गायें—इस देशमें अच्छी गायें नहीं हैं और न गो-जातिकी उन्नतिके लिये कोई चेष्टा ही होती है। यहाँकी गायोंके सींग बड़े होते हैं। ये दूध देनेवाली नहीं होतीं। कहीं-कहीं अच्छी गायें भी पायी जाती हैं।

फ्रांसकी गायें—फ्रांसके उत्तर भागमें राइन नदीके किनारेके सिवा सब जगह नार्मेन गो-जाति दिखायी पड़ती है। इनकी देहका रंग लाल और जहाँ-तहाँ सफेद दाग होते हैं। इनके छोटे सींग सिरसे ऊपरकी ओर उठकर झुक जाते हैं और उनका अगला भाग काला होता है। पैर पतले और सुन्दर होते हैं। नार्मेंडीमें गोचर-भूमि अधिक है। वहाँकी गायें स्थूलकाय एवं अधिक दूध देनेवाली होती हैं। इंग्लिश चैनलकी गायें उन्हींकी एक जातिमेंसे हैं।

अमेरिकाकी गायें—अमेरिकाकी कोई अपनी गो-जाति नहीं है। उत्तर अमेरिकामें यूरोपसे तथा दक्षिण अमेरिकामें भारतसे गायें आयी हैं। वर्तमान समयमें इंग्लैण्ड तथा यूरोपकी प्रायः सभी जातियोंकी गायें अमेरिकामें हैं। इस देशके धनी गोपालक प्रदर्शनीमें पुरस्कृत उत्तम गायों तथा साँड़ोंको बहुत बड़ी रकम देकर खरीद लेते हैं और इस प्रकार अपने देशके गो-समुदाय तथा दुग्ध-व्यवसायकी उन्नति करते हैं। यहाँ गोचारणके लिये बहुत बड़े-बड़े मैदान हैं। यहाँकी गायें अल्पाहारी तथा अधिक दूध देनेवाली होती हैं।

कनाडाकी गायें—यहाँ घास बहुत होती है, इसलिये गायोंके पालनेमें सुविधा है। इस द्वीपमें बहुत-सी गायें हैं।

प्रतिवर्ष यहाँसे स्थूलकाय बैल विभिन्न देशोंको जाते हैं। यहाँकी गायें इंग्लैण्डकी गो-जातिसे उत्पन्न हुई हैं। जर्सीगर्नसी आदि गायोंका यहाँ विशेष आदर है।

एरीजोनाकी गायें—संयुक्तराज्य अमेरिकाके दक्षिण-पश्चिम भागमें स्थित मेक्सिको और कैलीफोर्निया एरीजोना नामक प्रदेशमें उत्तम गोखाद्य तथा गोचारणके लिये बड़े-बड़े अनेक मैदान हैं।

अर्जेन्टाइनाकी गायें—यहाँ गायोंके खाने लायक घास तथा गोचरभूमि बहुत अधिक है। थोड़े ही दिनोंमें यहाँ गो-जातिकी अच्छी उन्नति हुई है। पहले यहाँ स्पेन देशकी बड़े सींगोंवाली मामूली गायें थीं; किंतु क्रमशः डरहम, छोटे सींगोंवाली और हेरीफोर्ड जातिकी गायें आ गयीं। अब तो होलस्टिन फ्रीजियन, जर्सी तथा अन्य जातिकी गायें लाकर इस देशमें मक्खन और पनीरका बड़ा व्यवसाय चल रहा है।

आस्ट्रेलियाकी गायें—गत शताब्दीके आरम्भमें यहाँ एक भी गाय नहीं थी, किंतु सन् १९०६ में ८,१७,८०० गायें हो गयीं। भिन्न-भिन्न जातिकी श्रेष्ठ गायें ऊँचे दामोंपर लाकर इतनी उन्नति की गयी है। डचबेल्ट गोजातिके साथ जर्सी और आयरशायर गोजातिके सम्मिश्रणसे उत्पन्त दुग्धवती संकर जातिकी गायें यहाँ उत्पन्न की गयी हैं। यहाँ गोचर-भूमि यथेष्ट है। आजकल यहाँ जर्सी, आयरशायर, डिवनशायर, ससेक्स, एवार्डिन एंगास आदि गायें पायी जाती हैं।

न्यूजीलैंडकी गायें—यहाँकी नदियों और झरनोंमें सदा पानी भरा रहनेसे घास सदा प्रचुर मात्रामें रहती है। यहाँ बहुत-सी स्थायी गोचर-भूमि है। यहाँ चारेका कभी अभाव नहीं होता। सन् १९०६ में यहाँ १८,५१,७५३ गायें थीं; जिनमें ५,९३,९२७ गायें दूध देनेवाली थीं। यहाँ दूध, सूखा दूध तथा पनीरके व्यवसायकी बड़ी उन्नति हो रही है।

अफ्रीकाकी गो-जाति

(क) मिस्त्रकी गायें—भारतीय गायोंकी भाँति यहाँकी गायोंके ककुद् तथा गलकंबल होता है। वर्षाकालमें ये घास खाती हैं और जब अधिक वर्षासे घासके स्थान जलमें डूब जाते हैं तब सूखी घास खाकर जीती हैं। अमृतमहाल गायोंके बिकनेके समय इजिप्टके खदीव और पाशा मद्राससे बहुत-सी गायें खरीदकर ले गये थे। इस देशमें गो-जातिकी उन्नतिके लिये कोई विशेष चेष्टा नहीं की जाती।

(ख) दक्षिण अफ्रीकाकी गायें—दक्षिण अफ्रीका या केप कालोनी प्रदेशमें हालैंडदेशीय और इंग्लिश चैनलकी जर्सी जातिकी दुधार गायें हैं। ये गायें बोस्टोरस जातिकी हैं, किंतु केप कालोनी तथा मेडागास्कर द्वीपोंमें जेबू श्रेणीकी गायें होती हैं। कुछ लोगोंके मतसे ये गायें अफ्रीका-प्रवासी भारतीयोंद्वारा लायी गयी हैं।

(ग) कविरेंडोकी गायें—यह अफ्रीकाके पूर्व भागमें है। यहाँके लोग गोपालक हैं। यहाँ साँड़ोंकी दौड़ होती है। जिसके पास दौड़नेवाला साँड़ होता है, वह देशका प्रधान व्यक्ति समझा जाता है। एक दौड़नेवाले साँड़का मूल्य एक हजार गायोंके मूल्यके बराबर होता है।

(घ) आइलैंड-गोजाति—अफ्रीकाके जंगलोंमें एक प्रकारकी जंगली गायें या मृग होते हैं। इंग्लैण्डमें इन्हें आइलैंड गाय या विदेशी गाय कहते हैं। यद्यपि ये गाय कहलाती हैं, किंतु वास्तवमें गाय नहीं वरं गो-सदृश मृग हैं। जहाँ गर्मी-सर्दी अधिक नहीं पड़ती, वहीं ये रहती हैं। ये कृष्णसार जातिकी हैं और उन्हींकी भाँति होती भी हैं। ये अधिक दूध नहीं देतीं।

चामरी गो (Yak)

हिमालय पर्वतके उत्तरी भागोंमें चामरी जातिकी गायें होती हैं। ये जंगली और पालतू दोनों होती हैं। इनका शरीर घने और लंबे रोओंसे ढका रहता है। बर्फीले प्रदेशमें रहनेके कारण ही प्रकृतिने शायद इनके शरीरको बालोंसे ढक दिया है। इनकी गर्दन और पीठ बराबर, मुँह नीचे और पैर छोटे-छोटे होते हैं। सींग पीठकी ओर झुके हुए होते हैं।

जंगली गायोंका रंग काला तथा पालतू गायोंका काला एवं सफेद मिला हुआ होता है। सफेद रंगकी चामरी गायकी पूँछका चमर बनता है। पालतू गायोंके सींग नहीं होते।

श्राद्धका फल

जिस व्यक्तिके पास श्राद्धके लिये कुछ भी न हो वह यदि पितरोंका ध्यान करके गोमाताको श्रद्धापूर्वक घास खिला दे तो उसको श्राद्धका फल मिल जाता है—'तृणानि वा गवे दद्यात्।' (निर्णयसिंधु)

गोपालन एवं गो-संवर्धन

गोपालन

चरती गायको रोकनेसे नरक-दर्शन

प्राचीन कालकी बात है। राजा जनकने ज्यों ही योगबलसे शरीरका त्याग किया, त्यों ही एक सुन्दर सजा हुआ विमान आ गया और राजा दिव्य-देहधारी सेवकोंके साथ उसपर चढ़कर चले। विमान यमराजकी संयमनीपुरीके निकटवर्ती मार्गसे जा रहा था। ज्यों ही विमान वहाँसे आगे बढ़ने लगा, त्यों ही बड़े ऊँचे स्वरसे राजाको हजारों मुखोंसे निकली हुई करुण-ध्वनि सुनायी पड़ी—'पुण्यात्मा राजन्! आप यहाँसे जाइये नहीं; आपके शरीरको छूकर आनेवाली वायुका स्पर्श पाकर हम यातनाओंसे पीडित नरकके प्राणियोंको बड़ा ही सुख मिल रहा है।' धार्मिक और दयालु राजाने दु:खी जीवोंकी करुण पुकार सुनकर दयार्द्र होकर निश्चय किया कि 'जब मेरे यहाँ रहनेसे इन्हें सुख मिलता है तो बस, मैं यहीं रहूँगा। मेरे लिये यही सुन्दर स्वर्ग है।' राजा वहीं ठहर गये। तब यमराजने उनसे कहा—'यह स्थान तो दुष्ट, हत्यारे पापियोंके लिये है। हिंसक, दूसरोंपर कलंक लगानेवाले, लुटेरे, पतिपरायणा पत्नीका त्याग करनेवाले, मित्रोंको धोखा देनेवाले, दम्भी, द्वेष और उपहास करके मन-वाणी-शरीरसे कभी भगवान्‌का स्मरण न करनेवाले जीव यहाँ आते हैं और उन्हें नरकोंमें डालकर मैं भयंकर यातना दिया करता हूँ। तुम तो पुण्यात्मा हो, यहाँसे अपने प्राप्य दिव्यलोकमें जाओ।' जनकने कहा—'मेरे शरीरसे स्पर्श की हुई वायु इन्हें सुख पहुँचा रही है, तब मैं कैसे जाऊँ? आप इन्हें इस दु:खसे मुक्त कर दें तो मैं भी सुखपूर्वक स्वर्गमें चला जाऊँगा।'

यमराजने [पापियोंकी ओर इशारा करके] कहा—'ये कैसे मुक्त हो सकते हैं? इन्होंने बड़े-बड़े पाप किये हैं। इस पापीने अपनेपर विश्वास करनेवाली मित्रपत्नीपर बलात्कार किया था, इसलिये इसको मैंने लोहशंकु नामक नरकमें डालकर दस हजार वर्षोंतक पकाया है। अब इसे पहले सूअरकी और फिर मनुष्यकी योनि प्राप्त होगी और वहाँ यह नपुंसक होगा। यह दूसरा बलपूर्वक व्यभिचारमें प्रवृत्त था। सौ वर्षोंतक रौरवनरकमें पीडा भोगेगा। इस तीसरेने पराया धन चुराकर भोगा था, इसलिये दोनों हाथ काटकर इसे पूयशोणित नामक नरकमें डाला जायगा। इस प्रकार ये सभी पापी नरकके अधिकारी हैं। तुम यदि इन्हें छुड़ाना चाहते हो तो अपना पुण्य अर्पण करो। एक दिन प्रात:काल शुद्ध मनसे तुमने मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरघुनाथजीका ध्यान किया था और अकस्मात् रामनामका उच्चारण किया था, बस, वही पुण्य इन्हें दे दो। उससे इनका उद्धार हो जायगा।'

राजाने तुरंत अपने जीवनभरका पुण्य दे दिया और इसके प्रभावसे नरकके सारे प्राणी नरक-यन्त्रणासे तत्काल छूट गये तथा दयाके समुद्र महाराज जनकका गुण गाते हुए दिव्य लोकको चले गये।

तब राजाने धर्मराजसे पूछा कि 'जब धार्मिक पुरुषोंका यहाँ आना ही नहीं होता, तब फिर मुझे यहाँ क्यों लाया गया।' इसपर धर्मराजने कहा—'राजन्! तुम्हारा जीवन तो पुण्योंसे भरा है; पर एक दिन तुमने छोटा-सा पाप किया था—'

एकदा तु चरन्तीं गां वारयामास वै भवान्।
तेन पापविपाकेन निरयद्वारदर्शनम्॥

तुमने चरती हुई गायको रोक दिया था। उसी पापके कारण तुम्हें नरकका दरवाजा देखना पड़ा। अब तुम उस पापसे मुक्त हो गये और इस पुण्यदानसे तुम्हारा पुण्य और भी बढ़ गया। तुम यदि इस मार्गसे न आते तो इन बेचारोंका यन्त्रणामय नरकसे कैसे उद्धार होता? तुम-जैसे दूसरोंके दु:खसे दु:खी होनेवाले दया-धाम महात्मा दु:खी प्राणियोंका दु:ख हरनेमें ही लगे रहते हैं। भगवान् कृपासागर हैं। पापका फल भुगतानेके बहाने इन दु:खी जीवोंका दु:ख दूर करनेके लिये ही इस संयमनीके मार्गसे उन्होंने तुमको यहाँ भेज दिया है।' तदनन्तर राजा धर्मराजको प्रणाम करके परम धामको चले गये।

(पद्म०, पाताल० अध्याय १८-१९)

गो-संवर्धन एवं गोरक्षाके लिये क्या-क्या करना चाहिये?

(१) गोवध भारतका कलङ्क है, अतएव गोवध-बंदीका कानून सब जगह बन जाय, इसके लिये सतत और सबल प्रयत्न करना चाहिये। जबतक सर्वथा गोवध-बंदीका कानून सब राज्योंमें न बन जाय, तबतक शान्तिपूर्ण आन्दोलनको शिथिल न होने दिया जाय।

(२) बूढ़ी, बेकाम गायोंके लिये गोसदनोंकी स्थापना करना-कराना, जिनमें गायके अपनी मौत मरनेके समयतक उसके लिये आवश्यक चारे-पानी और चिकित्साकी सुव्यवस्था हो। नस्ल न बिगड़े, इस दृष्टिसे वहाँ गायोंको बरदाया न जाय।

(३) गायकी नस्ल-सुधारका प्रयत्न करना, जिससे गायें प्रचुर दूध देनेवाली हों, बैल मजबूत हों और मरे हुए गाय-बैलोंकी अपेक्षा जीवित गाय-बैलोंका मूल्य बढ़ जाय। इस प्रकार गायको आर्थिक स्वावलम्बी बनाना।

(४) केरल-कलकत्ते आदि शहरोंमें—जहाँ गायके रखनेके लिये पर्याप्त स्थान नहीं है, जहाँ कृत्रिम और निर्दय उपायोंसे दूध निकाला जाता है, बछड़े मरने दिये जाते हैं, दूध सूखते ही गाय कसाईके हाथ बेच दी जाती है, कानूनी प्रतिबन्ध होनेपर म्युनिसिपलिटीकी सीमासे बाहर ले जाकर गाय मार दी जाती है, वहाँ जबतक ये बातें दूर न हों, तबतक गायोंको बाहर कतई न जाने दिया जाय। स्थानकी सुविधा कराना तथा सरकारके द्वारा ऐसी व्यवस्था कराना, जिसमें गायोंको दिये जानेवाले ये सब कष्ट दूर हों।

(५) गायको भरपेट चारा-दाना मिले—इसके लिये व्यवस्था करना। गोचरभूमि छोड़ना एवं छुड़वाना। नये-नये चारेकी खेती कराना।

(६) वर्तमान पिंजरापोल, गोशालाओंका सुधार करना। और जो पिंजरापोल, गोशाला दयाभावसे केवल बूढ़ी, अपंग गायोंके लिये खोले गये हैं, उन्हें डेरी फार्म न बनाकर उसी कामके लिये रहने देना।

(७) गायोंका गर्भाधान, विशेष दूध देनेवाली गौके पुत्र, बलवान् तथा श्रेष्ठ जातिके देशी साँड़से ही कराना। अच्छी नस्लके देशी साँड़ोंका निर्माण तथा विस्तार करना, बूढ़े साँड़ोंसे तथा जर्सी साँड़ोंसे गर्भाधानका काम कतई न लिया जाना।

(८) कसाईखानोंमें मारी हुई गायोंके चमड़े इत्यादिसे बनी हुई वस्तुएँ—जूते, बटुए, कमरपट्टे, बिस्तरबंद, घड़ीके फीते, चश्मेके घर, पेटियाँ, हैंडबेग आदिका व्यवहार न करनेकी शपथ करना-कराना।

(९) गोवधमें सहायक चमड़े, मांस आदिका व्यापार, जिससे गोवध होता है—बिलकुल न करना।

(१०) गोसदनोंमें, पिंजरापोलोंमें और सर्वसाधारणके द्वारा भी मरे हुए पशुओंके चमड़े, हड्डी, सींग, केश आदिसे अर्थ उत्पन्न करना और उसे बूढ़ी अपंग गायोंकी सेवामें लगाना।

(११) ट्रैक्टरोंका व्यवहार न करके या कम-से-कम करके, हल जोतनेका काम केवल बैलोंसे ही लेना तथा रासायनिक खादका उपयोग न करके गोबर, गोमूत्रकी खादसे ही काम लेना और इनकी उपयोगिताका प्रतिपादन करना।

(१२) जमाये तेलके घीमें मिलावट न हो, इसके लिये उसे अवश्य रंग देनेकी व्यवस्था सरकारसे कराना जिससे शुद्ध घीका महत्त्व अक्षुण्ण रह सके।

(१३) चमड़ा, चर्बी, रक्त, हड्डी आदि जिन-जिन वस्तुओंके लिये गाय मारी जाती है तथा जिन कार्यों, कारखानों, मोटर-गाड़ी आदि वाहनोंमें ये चीजें बरती जाती हैं, उनका पता लगाकर कारखानेवालोंसे तथा उससे सम्बन्ध रखनेवाले अन्य लोगोंसे प्रार्थना करना कि वे इन चीजोंको काममें न लावें।

(१४) यथासाध्य गायके ही दूध, दही, घीका व्यवहार करना और कम-से-कम एक गायका पालन करना।

(१५) इन कार्योंकी सम्पन्नताके लिये 'गोरक्षिणी-समितियों' का सर्वत्र संगठन करना।

(१६) गोरक्षाके लिये सभी लोग प्रतिदिन अपने-अपने इष्टदेव भगवान्से आर्त प्रार्थना करें।

गो-प्रतिपालन-विधि

देख-रेख—गोजातिमें भाँति-भाँतिकी नस्ल, शक्ति, लक्षण एवं गुण होते हैं। इनका साधारण ज्ञान पालकको अवश्य होना चाहिये। गो-पालनमें स्वत:के देख-रेखकी उतनी ही आवश्यकता है, जितनी कि गृहस्थीके अन्य विशेष कार्योंमें। यदि विश्वसनीय तथा चतुर ग्वाले मिल जायँ तो भी संचालककी दिलचस्पी रहनी चाहिये क्योंकि स्वत:की देख-रेखपर गोशालाका भविष्य निर्भर रहता है। यदि पालक स्वत: गोसेवा-प्रेमी होगा तो अन्य सेवक भी सेवा करनेमें विशेष रुचि रखेंगे। अत: प्रत्येक पालकका कर्तव्य है कि वह अपनी गोशालाकी व्यवस्था एवं दिनचर्यासे भलीभाँति परिचित रहे और अपनी शालाके पशुओंको पहचाने। उनके चारे-दाने और पानीकी उचित व्यवस्था एवं शालाकी स्वच्छतापर ध्यान देता रहे। इससे सेवकोंमें सदा तत्परता बनी रहेगी और काम सुचारु रूपसे चलेगा।

सेवकोंपर गोशालाका पूरा भार डालकर स्वयं निश्चिन्त हो बैठ रहना ठीक नहीं है। ऐसा देखा गया है कि गोसेवासे उदासीन होनेसे गौकी नस्ल दिन-पर-दिन हीन होती जाती है और शनै:-शनै: हर ब्याँतमें दूध कम होता जाता है।

सुव्यवस्थित गोशालामें चार वर्षके भीतर ही काफी उन्नति दिखायी देगी; क्योंकि तबतक गायके बछड़े-बछिया पूरे गाय तथा बैल हो जायँगे। साँड़का चुनाव सतर्कतासे होना चाहिये, जिससे शालाकी होनेवाली नस्ल सुधरती जाय। साँड़का सुप्रबन्ध करनेपर गोवंश अवश्य तरक्की करेगा।

गृहिणी अपने बच्चों तथा परिवारकी जिस तत्परतासे सेवा करती है, उसे उसी तत्परतासे जीवनके मूल पोषक तत्त्वोंको देनेवाली गौकी भी सेवा करनी चाहिये। चाहे जितना भी श्रीसम्पन्न घर क्यों न हो दूध, दही, घी और मट्ठेके बिना वह अपूर्ण-सा ही रहेगा।

सेवा-पद्धति—गोशालाका प्रबन्ध भारतीय पद्धतिसे ही होना चाहिये। देशी दवाएँ सस्ती, सुलभ और फायदेमन्द होती हैं। अंग्रेजी और रासायनिक दवाका प्रयोग करनेके पहले उसका भलीभाँति पूरा ज्ञान होना चाहिये, अन्यथा जरा-सी भी कमी-वेशीसे हानि होनेकी सम्भावना रहती है। बिना समझे विदेशी प्रणाली और साहित्यपर ही निर्भर रहकर गोशालाका प्रबन्ध नहीं करना चाहिये, तथापि आधुनिक विज्ञानसे उचित एवं आवश्यक लाभ भी उठाना चाहिये।

'यस्य देशस्य यो जन्तुस्तज्जं तस्यौषधं हितम्'

(चरकसंहिता)

'जो जीव जिस देशमें पैदा होता है, उसी देशमें पैदा हुई ओषधि उसका हित करती है।'

जलवायुकी विभिन्नताका प्रभाव गोपर पड़ता है, अतएव सुदूर प्रान्तकी गायको मँगानेके पहले अपने देशकी जलवायु और उपजका ख्याल कर लेना चाहिये। नस्ल-सुधारनेके लिये यदि दूर-देशोंकी गायोंको रखनेका शौक हो, तो उनके लिये यथासम्भव वे ही चारे-दाने प्रस्तुत करने चाहिये, जिनपर वे वहाँ पाली गयी थीं। उनके बर्धानेके लिये उसी देशका उत्तम साँड़ भी होना चाहिये।

स्थान—स्थान और शालाके बार-बार परिवर्तनसे कुछ दिनोंके लिये गाय बिदक जाती है और दूध भी कुछ कम हो जाता है। भलीभाँति परिचित न होनेसे वह मौका पाकर अपनी पूर्व-परिचित शालाको भाग जाती है। अतएव जब नये स्थानपर गाय लायी जाय तो उसे कम-से-कम ५ या ७ दिनतक बाँधकर ही रखना चाहिये और भलीभाँति खिला-पिलाकर प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिये, ताकि वह अपनी नयी शालासे भलीभाँति हिल-मिल जाय।

सेवक—गोसेवाके लिये गो-प्रेमी मनुष्य रखना चाहिये। ग्वाला शान्त-स्वभाव, स्वच्छ आदतोंका, ईमानदार, परिश्रमी और अनुभवी होना चाहिये। नित्य नये सेवकोंसे गाय सुगमतापूर्वक दूध नहीं दुहाती और न पूरा दूध ही देती है। इसलिये सेवकोंको बार-बार नहीं बदलना चाहिये। गायोंसे दुर्व्यवहार करनेवाले सेवकको रखना ठीक नहीं है।

प्रतिपालन-विधि—भारत-भूमि उर्वरा है। इस कारण यहाँ चारे-दानेकी कमी नहीं होनी चाहिये। खाद्य पदार्थोंमें दूध परमावश्यक है। खेतीमें बैल उपयोगी हैं। अतएव

यहाँ गोपालनमें सफलता अवश्य होगी। गो-पालन-विधिकी सभी प्रधान बातोंका साधारणतया वर्णन नीचे किया जाता है।

(१) नये खूनका आयुप्राप्त साँड़, जो ३ वर्षसे ८ वर्षतकका हो, शालामें अवश्य रखना चाहिये। गोशालामें साँड़के न होनेसे गायका सोया* मारा जाता है। अतः इससे बड़ी हानि होती है।

(२) बछिया अपने जनक (साँड़) के रूप, गुण एवं जातिके अनुरूप होती है। उपयुक्त साँड़की उपस्थितिसे शालाकी होनेवाली नस्ल तरक्की करती जायगी।

(३) साँड़को सानी (चारा-दाना) से पूर्ण संतुष्ट एवं नीरोग रखना चाहिये।

(४) हीन, पंगु, अनिश्चित जातिवाले और रक्षकरहित साँड़को गोशालाके आस-पास नहीं आने देना चाहिये। ऐसे साँड़का न होना ही अच्छा है।

(५) गाय अपनी तथा साँड़की गुण-जाति एवं शक्तिके अनुसार बच्चा देती है। बच्चोंपर गाय और साँड़ दोनोंका ही असर पड़ता है। ज्ञातशक्ति साँड़ और दुधार गायकी बछिया दुधार गाय बनेगी और उसका बछड़ा बलवान् साँड़ बनेगा।

(६) स्थानीय गायको सुधारनेके लिये गायकी जातिसे उन्नत जाति और गुणोंवाला देशी साँड़ मँगाये और गाभिन होनेपर गायको पुष्टिकारक सानी खिलाये, इस भाँति उत्पन्न बछड़े-बछिया अपनी माताकी जातिसे अधिक उन्नत होंगे।

(७) कभी-कभी साधारण गायसे उत्तम बच्चा और उत्तम गायसे साधारण बच्चेका होना भी सम्भव है। साँड़ और पोषणका सुप्रबन्ध या कुप्रबन्ध और वंश-परम्परा उपर्युक्त अपवादके मुख्य कारण हैं।

(८) दाने-चारेको ऋतुपर खरीद करके संचित कर रखना चाहिये। हरे चारेके निरन्तर मिलते रहनेके लिये ३ मास पहलेसे ही उसका प्रबन्ध करता रहे। गायके चारेके लिये खेती करना फायदेमन्द होगा, क्योंकि—

[१] वर्षभर निरन्तर हरा चारा मिलता रहेगा।

[२] खरीदे हुए चारेसे यह सस्ता पड़ेगा।

[३] अपनी आवश्यकताके अनुसार गोपालक भाँति-भाँतिके चारे उपजा सकेगा।

[४] गायोंके गोबरकी खादसे खेत अधिक उर्वर बनाया जा सकेगा और ज्यादा उपज होनेके कारण फसल सस्ती पड़ेगी।

[९] गायके लिये भिन्न-भिन्न ऋतुओंके अनुकूल चारे-दानेका प्रबन्ध करना चाहिये। हमेशा एक-सा चारा-दाना खानेसे वे ऊब जाती हैं।

[१०] गायके स्वभाव, जाति तथा दूध देनेकी शक्तिके हिसाबसे उसके चारे-दानेकी मात्रा नियत करनी चाहिये।

[११] गाय और ओसर-बछिया ठीक समयपर गाभिन हो, इसका ध्यान रखना चाहिये। दो या ढाई वर्षकी बछियाको और ब्यानेके २ से ४ महीनेके बाद गायको गाभिन हो जाना चाहिये। ब्याँतका ठीक तौरसे नियन्त्रण होनेपर गायें निरन्तर दूध देती रहेंगी। गोशालामें कभी बहुत अधिक और कभी बिलकुल कम दूध नहीं होना चाहिये।

[१२] ब्यानेके समय गायका विशेष ध्यान रखना चाहिये। ब्यानेके १० दिन बादतक भी गायको विशेष सेवाकी आवश्यकता होती है, यों तो वह २१ दिनतक प्रसूता ही रहती है।

[१३] गायोंको सद्व्यवहारसे सदा प्रसन्न एवं संतुष्ट रखना चाहिये। उन्हें किसी भाँतिसे चिढ़ाना और क्रोध करनेका अवसर देना ठीक नहीं है। नम्र व्यवहारसे गायें ममतामयी, स्नेहमयी एवं शान्त रहती हैं। ऐसी अवस्थामें वे सुगमतासे और पूर्ण रूपसे दूध दुहाती हैं।

[१४] कभी-कभी गाय पर्याप्त चारा-दाना खानेपर भी दूध नहीं देती, इसके कारणको यत्नपूर्वक ढूँढ़कर उसका विधिवत् उपचार करना चाहिये। यदि कोई लाभ होनेकी सम्भावना न हो तो उसे शालासे अलग करके केवल चराईपर रहनेवाले पिंजरापोलके पशुओंके साथ छोड़ दे।

[१५] रोगी पशुको शालाके अन्य पशुओंसे बचाकर

* गायके ऋतुमें आनेको सोया कहते हैं। ऐसे समयमें ही पशु गर्भाधानके योग्य होता है, अन्यथा नहीं।

रखना चाहिये और उसको चारा-दाना भी अलग ही खिलाना चाहिये।

[१६] बूढ़ी और दूधसे सूखी हुई गायको निकटवर्ती गोचर-भूमिवाले स्थानोंमें भेज देना चाहिये। ऐसे स्थानोंपर गायोंके चरनेके लिये काफी अच्छी व्यवस्था रखनी चाहिये।

गौका इतिहास—सुव्यवस्थित गोशालामें गाय और साँड़का जन्मपत्र रखना जरूरी है। गायकी नस्ल वैज्ञानिक रीतिसे सुधारने और नयी-नयी किस्में चलानेके लिये गायका पूरा परिचय एवं बछड़े-बछियोंका पूरा ब्योरा एक पुस्तकमें लिखा रहना चाहिये। यह पुस्तक 'गो-जन्मपत्र' भी कही जा सकती है। इसमें गायकी जाति, मूल्य, खरीदकी तारीख, रूप-रंग तथा आयु और नंबर लिखा होना चाहिये। इस परिचयके नीचे कोष्ठक बनाकर गौके ब्याँतकी संख्या, गर्भाधान-तिथि, साँड़-परिचय, संतान-परिचय, जन्मतिथि, इस ब्याँतका त्रैमासिक एवं सम्पूर्ण दूध और रोग-व्याधि तथा उपचार आदिका विवरण क्रमशः अङ्कित होना चाहिये।

जन्मपत्रसे पालकको बड़ी सहायता मिलती है। हर बातको याददाश्तके ऊपर छोड़ना उचित नहीं है। प्रत्येक साँड़का पूर्ण परिचय ज्ञात होनेसे चुनावमें सुविधा रहेगी और कुछ वर्ष बाद यह लेखा गौका पूरा इतिहास बतानेमें सहायक रहेगा।

निश्चित रूपसे यह ज्ञात हो सकेगा कि किस साँड़से ब्यायी हुई गायकी दूध देनेकी शक्ति कैसी रही। गायको कब हरी होना चाहिये इसका नियन्त्रण सम्भव होगा तथा गायको समयपर हरी करानेका ध्यान रहेगा। गायकी गर्भाधान-तिथि ज्ञात होनेसे ब्यानेके समयके आस-पास उसकी भलीभाँति परिचर्या हो सकेगी। बछड़े-बछियोंके माता-पिताकी जाति, शक्ति और उमरका परिचय होनेसे उनके लालन-पालनपर यथोचित ध्यान दिया जा सकेगा। और किस दवाने, किस रोगपर, कितना लाभ किया, यह भी निश्चित रूपसे विदित हो सकेगा।

दूध दुहना

आमतौरसे गायोंके थनोंमें १२ घंटोंके बाद फिरसे दूध भर आता है। कोई-कोई अच्छी नस्लकी गायें दिनमें ३ बार तक दुही जाती हैं। विदेशोंमें गायोंके दुहनेमें अक्सर मशीनोंका प्रयोग होता है। भारतमें भी कुछ सम्पन्न गोशालावालोंने इसे मँगाया है, किंतु जनसाधारण इसका व्यवहार नहीं कर सकते। ये मशीनें काफी कीमती होती हैं और साधारण गायोंको दुहनेके लिये इनकी जरूरत भी नहीं पड़ती; क्योंकि उनका दूध इतना अधिक नहीं होता कि एक आदमी उन्हें दुहते-दुहते थक जाय। जानकारी रखनेवालोंको ही ऐसी मशीनोंका संचालन करना चाहिये, क्योंकि कम या ज्यादा दबाव पड़नेपर इस मशीनसे दूध ठीक तौरसे नहीं दुहा जा सकता। इन मशीनोंका उपयोग विशेष परिस्थितिमें ही किया जा सकता है।

दूध दुहते समय निम्नलिखित बातोंपर ध्यान रखना चाहिये—

(१) गायसे सदैव प्रेमपूर्ण व्यवहार करना चाहिये। दुलारसे पाली गयी गाय शान्त प्रकृतिकी और क्रोध-रहित होगी। क्रोधमें रहनेसे उसका दूध कम हो जायगा। साथ ही दूधमें मक्खनकी मात्रा भी कम हो जायगी। गाय स्वभावसे ही वात्सल्यमयी है, अतएव गायसे हर समय और खास तौरपर दुहते समय अच्छा व्यवहार करना चाहिये।

(२) दूध दुहनेसे पहले हाथोंको खूब साफ कर लेना चाहिये। यदि हाथोंमें किसी भी प्रकारकी गंध लगी होगी तो दूधपर उसका असर जरूर पड़ेगा। नाखून जरूर साफ होने चाहिये। पोटैशियम-परमैगनेटको पानीमें घोलकर या नीमके पत्ते उबाले हुए पानीसे हाथ धो लेना चाहिये। दूध छाननेका कपड़ा साफ और धुला हुआ होना चाहिये।

(३) आजकल दूध दुहनेके लिये एक खास तरहकी बाल्टी बनायी जाती है। इस बाल्टीपर एक तरफसे खुला हुआ तिरछा ढक्कन लगा होता है, जिससे धूल और गर्दका बचाव हो जाता है। खुले हुए भागसे दूध बाल्टीमें जाता रहता है।

(४) गायके शरीर भरमें ऐन और थन स्वभावसे ही कोमल स्थान हैं। इसलिये इनपर चोट नहीं पहुँचानी चाहिये। वह दूध दुहाना पसंद करती है, क्योंकि उसका भरा हुआ ऐन खाली हो जाता है और उसे आराम मिलता है। शीघ्रतापूर्वक एक-सी गतिसे और वृथा कष्ट न

पहुँचाकर दूध दुहना चाहिये। दुहते समय थनोंपर आवश्यकतासे अधिक दबाव नहीं डालना चाहिये।

(५) गायके बछड़े या बछियाको पहले दूध पीनेके लिये छोड़ दे। असलमें दूध तो बच्चेके पालनके लिये ही बनता है। बच्चेको देखकर ही गाय स्नेहवश दूध प्रवाहित करती है। ऐनमें दूधके भर आनेपर गाय प्राय: गोबर या मूत्र करती है। कुछ देर दूध पी लेनेके बाद बच्चेको गायके पास ही बाँध देना चाहिये, ताकि वह उसे चाटती और दुलार करती रहे। बच्चेको उसके पाससे हटा देनेपर वह दु:खी हो जाती है। दूध दुह लेनेपर बच्चेको फिर छोड़ दे, ताकि वह रहा-सहा दूध पी सके और कुछ देर अपनी माँके साथ रहकर उसे आनन्द दे सके। यदि बच्चेको अधिक देरतक छोड़ दिया जायगा तो थनोंके कटनेका अंदेशा रहेगा।

(६) गाय व्यवस्थाप्रिय जीव है। वह पहचानी हुई जगहपर एक ही व्यक्तिसे सुगमतापूर्वक दुही जानी चाहिये। नित्य नये ग्वालोंके बदलनेसे गाय संकुचित हो जाती है और पूरा दूध नहीं देती।

(७) प्रतिदिन एक नियमित समयपर, ठीक १२ घंटेके बाद, गाय दुही जानी चाहिये। ज्यादातर लोग सूरज उगनेके पहले और दिन छिपनेके लगभग गायको दुहते हैं। अपनी जरूरत देखकर गाय दुहनेका समय बाँध लेना चाहिये। कभी जल्दी और कभी देरमें न दुहे। सभी गायें एक दिनमें दो बार, सुबह और शामको दुही जाती हैं। परंतु कुछ गायें, जो बहुत अधिक दूध देती हैं, वे २४ घंटेके अंदर तीन बारतक दुही जाती हैं।

गर्मियोंमें सूरज उगनेके समय गायको दुहना चाहिये और शामके समय सूर्यास्तसे पहले ही दूध दुह ले। दुहनेके समयमें १२ घंटोंका फरक होना चाहिये। दूध बेचनेवाली गोशालाओंमें ३ बजे तड़के और ३ बजे शामको गायको दुह लेते हैं, क्योंकि उन्हें ग्राहकोंके यहाँ दूध समयपर पहुँचाना होता है।

(८) दुहनेके पूर्व थनोंको ऋतुके अनुकूल ठंडे अथवा गरम पानीसे जरूर धो लेना चाहिये। दुहनेके बाद जाड़ोंमें कभी-कभी थनोंपर घी और नमक तथा गर्मियोंमें मक्खन मल देना चाहिये। खासकर ओसर गायके थन बड़े नाजुक होते हैं, इसलिये इस प्रकारकी गायके थनोंमें दोनों समय मक्खन और नमक मिलाकर लगा दे। थनोंमें दूधका अंश बाकी नहीं रहने देना चाहिये, क्योंकि वहाँ एकत्रित होनेपर वह जम जाता है और रोगको उत्पन्न करता है।

(९) कम-से-कम एक मासतक बच्चेको भर पेट दूध अवश्य पिलाना चाहिये; क्योंकि इससे पहले बच्चा घास वगैरह नहीं खा सकता। महीने भर बाद बच्चेके आगे हरी घास रखने लगे। इससे वह जल्दी घास खाना सीख जायगा।

(१०) अच्छा दूध गाढ़ा होता है और दुहते समय उसकी धार सीधी, मोटी एवं बराबर बँधी रहती है। खुराकका असर दूधके गुणोंपर पड़ता है। हल्के दूधमें नीली-सी झलक होती है। बढ़िया दूधमें पीली झलक होगी। दुहते समय दूधकी धार बर्तनसे टकराकर एक विशेष प्रकारकी ध्वनि करती है। अच्छे दूधकी ध्वनि गम्भीर और सुरीली होती है, किंतु हल्के दूधकी आवाज बहुत कम और धीमी होती है। यह फरक अनुभव करनेपर ही जाना जा सकता है।

(११) दूध दुहनेके पहले गायको सानी खिला देनी चाहिये और उसके लिये पानी पीनेकी भी सुविधा रखनी चाहिये। गायें काफी पानी पीती हैं, अत: पानीका प्रबन्ध अच्छा होना जरूरी है।

(१२) शान्त प्रकृतिकी उत्तम गायको पिछले दोनों पैरोंमें बन्धन लगाकर नहीं दुहना चाहिये। अच्छी जातिकी गायें दुहनेपर लात नहीं चलातीं, इसलिये बन्धनकी कुटेव उन्हें न डाले, वरना वे लात चलाने लगेंगी। लात मारनेवाली गायको ही दौना लगाना चाहिये, प्रेमपूर्वक पाली गयी सूधी गायके दौना बिना लगाये भी दुहा जा सकता है।

(१३) दूधको सीधे अँगूठेसे दुहना चाहिये, ताकि गायको कष्ट न हो। दूध दुहनेके दो तरीके हैं—

क—थनको मुट्ठीमें पकड़कर और अँगूठेको ऊपरकी ओर रखकर एक समान दबाव और गतिसे जल्दी-जल्दी खींचे और छोड़े। किंतु यदि ओसर गायके थन छोटे हों तो तर्जनी और मध्यमा—इन दो अँगुलियों एवं अँगूठेकी पहली पोरसे उनको पकड़कर चूँचीकी पूरी लंबाईतक खींचे। दुहनेकी यही विधि अच्छी है।

ख—गायके थनको चार अँगुलियोंसे पकड़कर एवं अँगूठेको हथेलीके भीतर मोड़कर थनको खींचते हुए दुहनेमें यदि जरा-सी भी असावधानी होगी तो थनपर दबाव नहीं पड़ेगा, बल्कि उसके ऊपरी हिस्सेपर दबाव पड़ेगा। इससे थनके निकटवाली दूधकी नसोंमें गाँठोंके पड़नेका अंदेशा रहता है। यही तरीका अधिक प्रचलित है, परंतु अच्छा नहीं है।

(१४) दूध दुहनेके समय, पहले हर एक थनकी दो-चार बूँदें दुहकर जमीनपर गिरा दे। इससे चूँचीके छिद्रमें बैठे हुए कीटाणु निकल जायँगे।

दूधको बढ़ानेकी रीति—उचित सेवा और व्यवहार पाकर गाय सदैव शक्ति भर दूध देगी। दूध बढ़ानेके कृत्रिम उपायोंसे गायकी पाचनक्रियापर प्रभाव पड़ता है, जिससे शरीरके भीतरी अवयवोंपर विशेष जोर पड़ता है। उसकी प्रजनन-शक्ति भी क्षीण पड़ जाती है। गाय दूध देना कम कर दे, तो कारणकी खोज करनी चाहिये। यदि कोई खराबी मिले तो उसका उपचार, उचित ओषधिके द्वारा करना चाहिये। दवाओंके जरिये दूधको बढ़ानेकी कोशिश करते रहनेसे गायका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। एक बार दूधके बढ़ जानेपर भी कमजोर पड़ जानेके कारण भविष्यमें गाय कम दूध देगी।

गायोंकी खुराकका समुचित विश्लेषण करके उसमें आवश्यक परिवर्तन करनेसे दूधकी मात्रा अच्छी तरह बढ़ायी जा सकती है। संतुलित चारे-दानेसे यथेष्ट दूध बढ़नेके साथ-ही-साथ गायकी शारीरिक शक्ति भी खुलेगी।

नीचे लिखी बातोंका ख्याल रखना चाहिये—

१-सबसे बढ़िया तो यह है कि गाय उस साँड़से बर्धायी[1] जाय, जिसकी माँ बहुत दूध देनेवाली हो एवं जिसकी कुल-परम्परा (Pedigree) ज्ञात हो।

२-यदि गायने चौंकने, घबराने या स्थान-परिवर्तनके कारण दूध देना कम कर दिया हो तो उसे पुचकारकर तथा रुचिकर सानी खिलाकर शारीरिक एवं मानसिक शान्ति देनी चाहिये। इस तरहसे वह फिर पहले-जैसा दूध देने लगेगी।

३-गायको दुहते समय संगीत या मधुर वचन सुनानेसे वह प्रसन्न होकर अपनी शक्तिभर पूरा दूध देती है। ये प्राचीन तथा अर्वाचीन दोनों ही समयके विद्वानोंने माना है। भगवान् कृष्णकी मोहनी मुरलीमें गायोंके लिये कितना आकर्षण भरा रहता था, यह सभी जानते हैं। अमेरिका आदि देशोंकी वैभवशाली गोशालाओंमें तो संगीतका प्रबन्ध रहता है।

४-गेहूँ या जौका पतला दलिया राँधकर और उसमें गुड़ मिलाकर मौसमके माफिक गुनगुना या ठंडा खिलानेसे दूध बढ़ जाता है, क्योंकि इससे गायकी ताकत बढ़ती है।

५-दूब, सेऊँ, ग्वार, सरसों, मटर और शलजम आदिका हरा चारा समयानुसार गायोंको देना चाहिये। नेपियर और हलीम घास भी बढ़िया नीरन[2] हैं। जाड़ोंमें लूसर्न घास गरम तासीरके कारण लाभदायी होती है। बरसीम घास आश्विनसे चैत्रतक खिलानी चाहिये।

६-गाजरको उबालकर और उसमें गुड़ मिला करके खिलानेसे गायोंका दूध खूब बढ़ जाता है।

७-ज्वारकी हरी चरी यदि पूरी तादादमें दी जाय तो अन्य चारे-दानेकी आवश्यकता नहीं रहती।

८-मसूर या अरहरकी दालको उबालकर उसमें शीरा या गुड़ मिलाकर १० या १५ दिनतक खिलाये तो गाको पर्याप्त प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट मिलेंगे और दूध बढ़ जायगा।

९-गर्मियोंमें दूध दुहनेके पहले गायको ठंडे पानीसे नहला दे। इससे गाय प्रसन्न हो जाती है और शीतलता पाकर पूरा दूध देती है।

१०-यदि अजीर्णसे दूध कम हो गया हो तो पपीतेके एक कच्चे फल तथा २ पत्तोंकी चटनी पीसकर उसमें थोड़ा-सा गुड़ या शीरा और गेहूँका आटा मिलाकर लुगदीके रूपमें प्रतिदिन एक बार छः या सात दिनतक लगातार खिलाये। इससे दूधकी मात्रामें वृद्धि होगी।

१-गाभिन करना। २- चारा या कुट्टी।

गौके साथ व्यवहार और गोपरिचर्या

गौएँ समस्त प्राणियोंकी माता हैं और सारे सुखोंको देनेवाली हैं, इसलिये कल्याण चाहनेवाले मनुष्य सदा गौओंकी प्रदक्षिणा करें। गौओंको लात न मारे। गौओंके बीचसे होकर न निकले। मङ्गलकी आधारभूता गो-देवियोंकी सदा पूजा करे। (महा० अनु० ६९। ७-८)

जब गौएँ चर रही हों या एकान्तमें बैठी हों, तब उन्हें तंग न करे। प्याससे पीडित होकर जब गौ क्रोधसे अपने स्वामीकी ओर देखती है तो उसका बन्धु-बान्धवोंसहित नाश हो जाता है।

राजाओंको चाहिये कि गोपालन और गोरक्षण करें। उतनी ही संख्यामें गाय रखे, जितनीका अच्छी तरह भरण-पोषण हो सके। गाय कभी भी भूखसे पीडित न रहे, इस बातपर विशेष ध्यान रखना चाहिये। जिसके घरमें गाय भूखसे व्याकुल होकर रोती है, वह निश्चय ही नरकमें जाता है। जो पुरुष गायोंके घरमें सर्दी न पहुँचनेका और जलके बर्तनको शुद्ध जलसे भर रखनेका प्रबन्ध कर देता है, वह ब्रह्मलोकमें आनन्द भोग करता है।

जो मनुष्य सिंह, बाघ अथवा और किसी भयसे डरी हुई, कीचड़में धँसी हुई या जलमें डूबती हुई गायको बचाता है वह एक कल्पतक स्वर्ग-सुखका भोग करता है। गायकी रक्षा, पूजा और पालन अपनी सगी माताके समान करना चाहिये। जो मनुष्य गायोंको ताड़ना देता है, उसे रौरव नरककी प्राप्ति होती है। (हेमाद्रि)

गोबर और गोमूत्रसे अलक्ष्मीका नाश होता है, इसलिये उनसे कभी घृणा न करे।

जिसके घरमें प्यासी गाय बँधी रहती है, रजस्वला कन्या अविवाहिता रहती है और देवता बिना पूजनके रहते हैं, उसके पूर्वकृत सारे पुण्य नष्ट हो जाते हैं। गायें जब इच्छानुसार चरती होती हैं, उस समय जो मनुष्य उन्हें रोकता है, उसके पूर्व-पितृगण पतनोन्मुख होकर काँप उठते हैं। जो मनुष्य मूर्खतावश गायोंको लाठीसे मारते हैं उनको बिना हाथके होकर यमपुरीमें जाना पड़ता है। (पद्म०, पाताल० अ० १८)

गायको यथायोग्य नमक खिलानेसे पवित्र लोककी प्राप्ति होती है और जो अपने भोजनसे पहले गायको घास-चारा खिलाकर तृप्त करता है, उसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (आदित्यपुराण)

अपने माता-पिताकी भाँति श्रद्धापूर्वक गायोंका पालन करना चाहिये। हलचल, दुर्दिन और विप्लवके अवसरपर गायोंको घास और शीतल जल मिलता रहे, इस बातका प्रबन्ध करते रहना चाहिये। (ब्रह्मपुराण)

गौको प्रसवकालसे दो मासतक बछड़ेके लिये छोड़ देना चाहिये। तीसरे महीनेमें दो थन दुहने चाहिये और दो बच्चेके लिये छोड़ देने चाहिये। चौथे महीनेमें तीन थन दुहने चाहिये। दुहते समय गायको कष्ट होता हो तो दुहनेका हठ नहीं करना चाहिये। आषाढ़, आश्विन और पौषकी पूर्णिमाको गाय दुहना निषिद्ध माना गया है। (ब्रह्मपुराण)

युगके आदि, युगके अन्त, विषुवत्, संक्रान्ति, उत्तरायण और दक्षिणायन लगनेके दिन, चन्द्र और सूर्यग्रहण, पूर्णिमा, अमावस्या, चतुर्दशी, द्वादशी और अष्टमी—इन दिनोंमें गौकी पूजा करनी चाहिये और उसे क्रमसे एकसे दुगुना नमक, घी, दूध और ठंडा जल पिलाना चाहिये। (ब्रह्मपुराण)

गोपालसे गुहार

आगे चलैं उछरैं बछरा, अरु पीछे सखा करताल बजावैं।
गाइ हुँकारत संग चलैं, मुख नैन दिये थन धार बहावैं॥
आजु जनी बछरी लिये गोदमें, धूरि सनी अलकैं गृहआवैं।
सोई गुपाल गुहार लगैं, अपनो यह गोधन आइ बचावैं-॥

—सुदर्शन

गोचारण और गौकी देख-रेख

व्यायाम—हर एक प्राणीकी तरह गायको भी कुछ शारीरिक परिश्रम अवश्य ही करने देना चाहिये। शरीरके संचालनसे उसके प्रत्येक अवयव भलीभाँति काम करते रहेंगे। गाय स्वस्थ रहेगी तो उसका दूध भी अच्छा होगा और बच्चे भी अच्छे होंगे। एक गायको ४-५ मील प्रतिदिन घूम-फिर लेना चाहिये। साँड़ तथा बछड़े-बछियोंको भी घूमना-फिरना इतना ही आवश्यक है। घूमनेसे वे पुष्ट एवं स्वस्थ बने रहते हैं।

बंद शालामें निरन्तर बँधी रहनेसे गायकी पाचनशक्ति क्षीण हो जाती है, इस कारण वह दूध कम देने लगती है। पाचनशक्तिके ठीक न होनेसे कई तरहके रोगोंके होनेकी भी सम्भावना हो जाती है। बँधी हुई गाय प्रसन्न नहीं रहती।

स्वतन्त्रतापूर्वक धीमी-धीमी गतिसे अपनी रुचिके अनुसार घूम-घूमकर चरनेसे गाय प्रसन्न रहती है। निरन्तर बँधी रहनेसे वह संकुचित हो जाती है। शालाके बाहर घूमनेसे गायको खुली और साफ हवा मिलती है। यदि गोचरभूमि नदीके किनारे हो तो बहुत अच्छा है; क्योंकि वह प्यास लगनेपर बहता हुआ साफ पानी भरपेट पी सकेगी। बहते हुए निर्मल जलमें खनिज-लवण काफी होते हैं।

सूर्यकी किरणें गायको स्वस्थ रखने और उसकी दूध देनेकी शक्तिको विकसित करनेके लिये बहुत जरूरी हैं। इनसे विटामिन 'डी' का संचार होता है।

गाय धीमी-धीमी गतिसे चलनेवाला एक शान्तिप्रिय जीव है, अतएव उसे भगाना और मोटर गाड़ियोंसे चौंकने देना ठीक नहीं है।

एक बार नियमित रूपसे समय और स्थानकी आदत पड़ जानेपर वह शालासे निकलकर स्वत: ही वहाँसे चली जायगी और शामको उसी तरह लौट भी आयेगी। किंतु गायोंके साथ एक चरवाहा जरूर रहना चाहिये ताकि वे इधर-उधर भटक न जायँ।

गायोंको सामूहिक चेतना बहुत होती है, जिस तरफ एक गाय जाने लगेगी, बाकी सब गायें भी उधर ही चल देंगी।

बैलको खेती या गाड़ीका काम करनेमें ही काफी परिश्रम पड़ जाता है। इसलिये उसे शालामें बैठकर आराम करने देना चाहिये। जिन दिनों उससे काम न लिया जाय, उन दिनों उसे भी घुमा-फिरा लेना चाहिये।

सारांश यह है कि शालाके सभी पशुओंको नित्य ही टहलाना चाहिये। प्रचण्ड गर्मी, जोरदार बरसात और कड़ाकेके जाड़ोंसे पशुओंको बचाना बहुत जरूरी है। परंतु साधारणतया सभी मौसमोंमें सुबहसे शामतक उन्हें शालासे बाहर खूब घूमने दें।

स्नान—गाय, बैल तथा साँड़को बहती हुई नदीके पानीमें नहलाना बहुत अच्छा है। गर्मीके दिनोंमें उन्हें रोज नहलाना चाहिये।

उनके शरीरको साफ रखनेसे वे प्रसन्न रहते हैं। कभी-कभी उनपर नारियलकी सींकोंके बने हुए ब्रुश फेर देनेसे उनका चमड़ा साफ रहता है तथा रक्त-संचालन भी अच्छी तरह हो जाता है।

रीठोंको उबालकर उनके झागको मलनेसे गायका सारा शरीर खूब साफ हो जाता है। नीम या भट्टके पत्ते डालकर उबाले हुए पानीसे नहलानेसे गायके शरीरपर लगे कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। यदि रीठों या नीम आदिके पानीसे गायको १०-१५ दिन बाद नहला दिया जाय, तो किलनी आदि कीटाणु नहीं हो पायेंगे। जाड़ोंमें भी गायको धूपमें खड़ा करके ताजे या गुनगुने पानीसे नहलाना चाहिये।

जो उच्छृङ्खलतावश मांस बेचनेके लिये गौकी हिंसा करते या गो-मांस खाते हैं तथा जो स्वार्थवश कसाईको गाय मारनेकी सलाह देते हैं, वे सब महान् पापके भागी होते हैं। गौको मारनेवाले, उसका मांस खानेवाले तथा उसकी हत्याका अनुमोदन करनेवाले पुरुष गौके शरीरमें जितने रोएँ होते हैं, उतने वर्षोंतक नरकमें पड़े रहते हैं। (महा०, अनु० ७४। ३-४)

प्राचीन गोशालाएँ तथा गोपालनकी शास्त्रीय विधि

गोगृह

गोशालाओंकी व्यवस्था कैसी होनी चाहिये, इसका अपने यहाँ प्राचीन ग्रन्थोंमें पूरा विवरण मिलता है। 'स्कन्दपुराण' में बतलाया गया है कि गोगृह सुदृढ़, विस्तीर्ण तथा समान स्थलवाला होना चाहिये। उसमें ठंडी, तेज हवा और धूपकी पूरी रुकावट होनी चाहिये और बालूसे उसकी भूमि कोमल बना देनी चाहिये। शरीरकी खुजलाहट मिटानेके लिये उसमें बहुतसे स्तम्भ होने चाहिये। चारा डालनेके लिये उसमें बड़ी-बड़ी नाँदें होनी चाहिये[१]। खूँटोंका ऊपरी भाग नुकीला न होना चाहिये, जिससे उनके स्पर्शसे क्लेश न हो और उनमें मुलायम रस्सियाँ लगी रहनी चाहिये। मच्छर आदि हटानेके लिये धुएँका प्रबन्ध रहना चाहिये और बैठनेके लिये पर्याप्त स्थान होना चाहिये। पानी पीनेके लिये कुएँ, कुंड, जलाशय आदि रहने चाहिये। कूड़ा साफ करनेके लिये नौकरोंका प्रबन्ध रहना चाहिये और उनके निर्वाहयोग्य वृत्तिकी भी व्यवस्था होनी चाहिये। पर्दे, छाया, चारा, पानी आदिका प्रबन्ध रहना चाहिये। सुन्दर प्राकार तथा द्वारोंसे वह सुशोभित होना चाहिये। इस तरहके गोगृह बनवाकर जो किसी अच्छे पर्वपर दान करता है, वह भाग्यवान्, नीरोग और सम्राट् होता है।

एवंविधे महारम्यं प्राकारद्वारभूषितम्॥
कृत्वा गृहं गवामर्थे यः पर्वणि निवेदयेत्।
स राजराजो भवति भाग्यारोग्यसमन्वितः॥

महामुनि पराशरकृत 'कृषि-संग्रह' में भी बतलाया गया है कि जिसकी गोशाला सुदृढ़, साफ-सुथरी, गोबरसे रहित होती है, उसके पशु अच्छा भोजन न मिलनेपर भी बढ़ते रहते हैं। जिस स्थानसे प्रतिदिन बैल गोबर और मूत्रसे सने हुए निकलते हैं, वहाँ अच्छा चारा देनेसे भी क्या लाभ? 'वृष-आय'[२] वाली शाला गौको बढ़ानेवाली होती है। 'सिंह-आय' वाले स्थानमें गोनाश अवश्य होता है। चावलका पानी, गरम माँड़, बिनौले, भूसी आदि उस स्थानपर पड़े रहनेसे गोनाश होता है। झाड़ू, मूसल, जूठन आदि वहाँ इधर-उधर पड़े-रखने तथ बकरियोंके बाँधनेसे भी हानि होती है। जहाँ गोमूत्र भरा रहता है और कूड़ा फैला रहता है, वहाँ उनका निवास कैसे हो सकता है? जहाँ थूक, खखार, मूत्र, पुरीष, कीचड़, मिट्टी नहीं गिरते, वहाँ लक्ष्मी स्थिर होती है। जिसमें संध्यासमय दीपक नहीं जलाया जाता, उस स्थानको लक्ष्मीरहित देखकर गोगण रोते हैं—

गोशाला सुदृढा यस्य शुचिर्गोमयवर्जिता।
तस्य वाहा विवर्धन्ते पोषणैरपि वर्जिताः॥
शकृन्मूत्रविलिप्ताङ्गा वाहा यत्र दिने दिने।
निःसरन्ति गवां स्थानात् तत्र किं पोषणादिभिः॥

१-'चरही' का परिमाण इस प्रकार बतलाया गया है—

स्वामिहस्तप्रमाणेन दैर्घ्यविस्तारसंयुतौ। वसुभिश्च हरेद्भागं शेषाङ्के फलमादिशेत्॥
पशुहानिः पशोर्नाशः पशुलाभः पशुक्षयः। पशुरोगः पशोर्वृद्धिः पशुभेदो बहुप्रदः॥

पशु-मालिकके हाथ नपाई। लंबाई चवड़ई मिलाई॥
आठ भाग दे जो बचि रहे। भिन्न भिन्न फल ताके कहै॥
एक बचे पशु-हानि करावे। दुइके बचे नाश फल पावे॥
तीन बचे पशु-लाभ कराई। चारि बचे तो क्षय होइ जाई॥
पाँच बचे पशु-रोग बढ़ावै। छःके बचे वृद्धि उपजावै॥
सात बचे पशुभेदै जानौ। आठ बचे बहु वृद्धि बखानौ॥

(वृषकल्पद्रुम)

२-इष्ट स्थानकी लंबाईको चौड़ाईसे गुणा करके गुणनफलमें आठसे भाग देनेपर एक आदि संख्या शेष रहनेपर क्रमशः १ ध्वज, २ धूम, ३ सिंह, ४ श्वान, ५ वृष, ६ स्वर, ७ गज और ८ उष्ट्र—ये आय होते हैं।

x x x

संध्याकाले च गोस्थाने दीपो यत्र न दीयते।
स्थानं तत्कमलाहीनं वीक्ष्य क्रन्दन्ति गोगणाः॥१

गो-परिचर्या

पूर्वोक्त गो-गृहोंमें गायोंको रखकर उनकी बराबर परिचर्या करनी चाहिये। गोष्ठमें रहकर जो गोपाल धुआँ नहीं करता, उसे मक्खियोंसे भरे हुए नरकमें मक्खियाँ खाती हैं—

गोपालको गवां गोष्ठे यस्तु धूमं न कारयेत्।
मक्षिकालीननरके मक्षिकाभिः स भक्ष्यते॥

(देवीपुराण)

दुहनेमें भी बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। दो मासतक तो बछड़ेको पिलाना चाहिये। फिर तीसरेसे केवल दो थन और चौथेसे तीन थन दुहने चाहिये—

द्वौ मासौ पाययेद्वत्सं तृतीये द्विस्तनं दुहेत्।
चतुर्थे त्रिस्तनं चैव यथान्यायं यथाबलम्॥

(हारीत)

जो मृतवत्सा गायको उसके बछड़ेकी खालमें भूसा भरकर या गायका ताड़न करके बराबर दुहता है, वह सदा क्षुधार्त रहता है—

मृतवत्सां तु गां यस्तु दमित्वा पिबते नरः।
वाहिताऽस्याश्चिरं तिष्ठेत् क्षुधार्तो वै नराधमः॥

(देवीपुराण)

अनाथ गायोंके लिये शिशिर ऋतुमें यत्नपूर्वक मठ बनवाने चाहिये और उनमें घास, पानी तथा ईंधन देना चाहिये—

अनाथानां गवां यत्नात् कार्यस्तु शिशिरे मठः।
पुण्यार्थं यत्र दीयन्ते तृणतोयेन्धनानि च॥

(ब्रह्मपुराण)

क्रमानुसार प्रत्येक मासमें उनका उपचार करना चाहिये। ४ पल लवण, ८ पल घी और दूसरी गायका १६ पल दूध उनको देना चाहिये। ३२ पल शीतल जल और बलानुसार दूधका सेवन कराना चाहिये। प्रतिदिन सबेरे उन्हें लवण और जल देना चाहिये, फिर घास तथा मांसवर्जित भोजन कराना चाहिये। रातमें दीपक अवश्य जलाना चाहिये तथा उन्हें वीणा आदि मधुर वाद्य और पुराणोंकी दिव्य कथा सुनानी चाहिये।[२] ऐसा करनेसे पृथ्वीभर रत्न देनेका फल प्राप्त होता है। जो पुण्य गोदानसे होता है, वही गो-संरक्षणसे प्राप्त होता है। तृण और जलसे मनुष्योंको सदा उनका पालन करना चाहिये। वे सदा देने योग्य, पूज्या, पोष्या तथा पालनीया हैं—

निशि दीपः सतन्त्रीको दिव्या पौराणिकी कथा॥
एवं कृते महीं पूर्णां रत्नैर्दत्त्वा भवेत् फलम्।
गोप्रदानाय यत्पुण्यं गवां संरक्षणाद्भवेत्॥
मनुष्यैस्तृणतोयाद्यैर्गावः पाल्याः प्रयत्नतः।
देयाः पूज्याश्च पोष्याश्च प्रतिपाल्याश्च सर्वदा॥

(ब्रह्मपुराण)

भीतरसे संतुष्ट होकर इनकी परिचर्या करनी चाहिये। स्वप्नमें भी उनके ताड़ने या उनके प्रति क्रोध दिखाने या खेद

१-गोगृह कैसा होना चाहिये, इस सम्बन्धमें निम्नलिखित एक हिंदीका पद भी प्रसिद्ध है—

शीत उष्ण अरु वायु बचावै, गृहकी रचना कीजै।
जामें रोग निकट नहिं आवै सो प्रकार लखि लीजै॥
चारों दिशा दिवाल अनूपम, खिरकी बहुत रखावै।
शीतल मन्द समीर वायु जहँ सुख पशुको पहुँचावै॥
ओस नीर आतपहिं बचावै, छाया पुष्टि करीजै।
एक झरोखा ऊपर राखै, तेहि दुर्गन्ध हरीजै॥
मल अरु मूत्र साफ बहु राखै, तहाँ रोग नहिं आवै।
वा विधि पशुकी रक्षा कीजै, सफल सुक्ख उपजावै॥

(वृषकल्पद्रुम)

२-आजकल यह बात खोजकर निकाली गयी है कि दुहते समय गायोंको मधुर संगीत सुनानेसे दूध अधिक निकलता है, इसीलिये विदेशोंकी गोशालाओंमें 'रेडियो' लगाये जाते हैं। परंतु हमारे यहाँकी यह पुरानी बात है।

करनेका भाव न होना चाहिये। उनके मूत्र-पुरीषसे किसी प्रकारका उद्वेग ठीक नहीं है। उनके रहनेके स्थानको शुष्क क्षारसे बराबर साफ करते रहना चाहिये। गर्मियोंमें वृक्षोंकी सघन छाया तथा शीतल जलवाला, वर्षामें कीचड़से रहित और शिशिरमें वातवर्जित एवं सुख देनेवाला गरम स्थान देना चाहिये। वहाँ कूड़ा फेंकना, थूकना, मूत्र-पुरीष डालना कभी ठीक नहीं। रजस्वला, अन्त्यज या पुंश्चलीका भी प्रवेश उनके पास न होने देना चाहिये। बछियाको लाँघना नहीं चाहिये और न गोष्ठके समीप खेल-कूदकर उनको तंग करना चाहिये। जूता या पादुका पहनकर उनके पास जाना उचित नहीं है। रोगी या दुबली-पतली गायोंका माता-पिताकी तरह पालन करना चाहिये—

अन्तस्तुष्टैर्यथाशक्त्या परिचर्या यथाक्रमम्।
ताडनाक्रोशखेदाश्च स्वप्नेऽपि न कदाचन॥
तासां मूत्रपुरीषे तु नोद्वेगः क्रियते क्वचित्।
शोधनीयश्च गोवाटः शुष्कक्षारादिकैः सदा॥
ग्रीष्मे वृक्षाकुले वेश्म शीततोये विकर्दमे।
वर्षासु चाथ शिशिरे सुखोष्णे वातवर्जिते॥
उच्छिष्टं मूत्रविट्श्लेष्ममलं जह्यान्न तत्र च।
रजस्वला न प्रवेश्या नान्त्यजातिर्न पुंश्चली॥
न लंघयेद्वत्सतरीं न क्रीडेद्गोष्ठसंनिधौ।
न गन्तव्यं गवां मध्ये सोपानत्कैः सपादुकैः॥
गावः कृशतराः पाल्यां श्रद्धया पितृमातृवत्।

(ब्रह्मपुराण)

गोबरको खादके काममें लाना चाहिये। इसके लिये माघमें गोबरका ढेर लगाकर श्रद्धापूर्वक उसका पूजन करना चाहिये और फिर किसी शुभ दिनमें उसको कुदालसे गोड़ना चाहिये। फिर उसको सुखाकर गुण्डक (गोला) बनवाकर फाल्गुनमें गड़हेमें गाड़ देना चाहिये और बीज बोनेके समय उसकी खाद निकालनी चाहिये। बिना खादका अन्न बढ़कर भी फलता नहीं—

माघे गोमयकूटं तु सम्पूज्य श्रद्धयान्वितः।
खादं शुभदिनं प्राप्य कुद्दालैस्तोलयेत्ततः॥
रौद्रे संशोष्य तत्सर्वं कृत्वा गुण्डकरूपिणम्।
फाल्गुने प्रतिकेदारे गर्तं कृत्वा विधापयेत्॥
ततो वपनकाले तु कुर्यात् सारविमोचनम्।
विना सारेण यद्धान्यं वर्धते न फलत्यपि॥

(कृषिसंग्रह)

जो पुरुष गायोंको शीतसे बचानेके लिये छाया डालता है और पानीके लिये प्याऊ बनवाता है, वह वरुणलोकमें जाकर अप्सराओंके साथ क्रीडा करता है। उन्हें लवण देनेसे बड़ा सौभाग्य एवं रूप-लावण्य प्राप्त होता है। औषध देनेसे रोग नहीं होता। उन्हें औषध, लवण, जल तथा आहार बराबर देना चाहिये। उनको खुजलानेसे 'गोप्रदान' का फल होता है और भय-रोगादिसे रक्षा करनेमें 'गोशत-दान' के समान फल प्राप्त होता है—

शीतत्राणं गवां कृत्वा गृहे पुरुषसत्तम॥
वारुणं लोकमाप्नोति क्रीडत्यप्सरसां गणैः।
गवां पानप्रवृत्तानां यस्तु विघ्नं समाचरेत्॥
ब्रह्महत्या कृता तेन घोरो भवति भार्गव।
गवां लवणदानेन रूपवानभिजायते।
सौभाग्यं महदाप्नोति लावण्यं च द्विजोत्तम॥
औषधं च तथा दत्त्वा विरोगस्त्वभिजायते।
औषधं लवणं तोयमाहारं च प्रयच्छति॥
गवां कण्डूयनं धन्यं गोप्रदानफलप्रदम्।
तुल्यं गोशतदानस्य भयरोगादिपालनम्॥

(विष्णुधर्मोत्तर०)

आदर्श तो यह है कि तृणोदकसे पूर्ण वनोंमें बछड़ों एवं साँड़ोंसहित मतवाली गायें खेल-कूद रही हों। शीत, धूप, व्याधि, भयसे विमुक्त हों और दूध देती हुई सुखसे सोती रहें—

तृणोदकाद्येषु वनेषु मत्ताः
क्रीडन्तु गावः सवृषाः सवत्साः।
क्षीरं प्रमुञ्चन्तु सुखं स्वपन्तु
शीतातपव्याधिभयैर्विमुक्ताः॥

(ब्रह्मपुराण)

गो-चिकित्सा

अपने यहाँ सभी कार्योंके लिये दो उपाय बतलाये गये हैं—एक दैवी और दूसरा लौकिक। रोगनिवृत्तिमें भी इन दोनोंसे काम लिया जाता है। चिकित्साके साथ ही देव-

पूजन, हवन, अनुष्ठानादि भी चलते रहते हैं। गो-चिकित्सामें भी इन दोनों उपायोंका विधान मिलता है। 'गोभिलीय गृह्यसूत्र' में इसके लिये कई कर्म बतलाये गये हैं। गो-पुष्टिके लिये नान्दीमुख-श्राद्ध तथा तीन दिनका उपवास करके प्रातः गायको घरसे अरण्यमें जाते तथा आते समय उनका 'अनुमन्त्रण' करना चाहिये। इसमें बड़े भावपूर्ण मन्त्रोंका प्रयोग होता है। अरण्यमें प्रातः गायोंके जाते समय प्रार्थना की जाती है—'हे सबसे अधिक पराक्रमशाली भव और इन्द्र! आपलोग मेरी इन गायोंकी रक्षा करना। हे पूषा! आप इन्हें सुखपूर्वक लौटा लाना, बिना किसी क्षतिके ये मेरे घरमें लौट आयें।'

इमा मे विश्वतोवीर्यौ भव इन्द्रश्च रक्षतम्।
पूषंस्त्वं पर्यावर्त्तयानष्टा आयन्तु नो गृहान्॥

संध्याको लौटते समय प्रार्थना की जाती है—'मेरे लिये मधुर पदार्थ देनेवाली ये गायें दूधसहित बिना किसी क्षतिके लौट आयें। मेरे यहाँ ये घृतकी माताएँ बहुत हों—

इमा मे मधुमतीर्मह्यमनष्टाः पयसा सह।
गाव आज्यस्य मातर इहेमाः सन्तु भूयसीः॥

प्रसवकी रात्रिमें गोपुष्ट्यर्थ 'विलयनहोम' का विधान है। इसमें जिस मन्त्रसे हवन किया जाता है, उसका भाव है—'हे संग्रहण नामक देव! मेरे यहाँ जो पशु उत्पन्न हुए हैं, उनकी रक्षाके लिये आप उनको स्वीकार करें। पूषा देवता इन्हें ऐसा कल्याण प्रदान करें, जिससे ये बिना नष्ट हुए जीवित रहें'—

संग्रहण संगृहाण ये जाताः पशवो मम।
पूषैषाꣳशर्म यच्छत यथा जीवन्तो अप्ययात् स्वाहा॥

'गो-यज्ञ' का भी एक प्रयोग बतलाया गया है, जिसमें गो-पुष्ट्यर्थ हवन, वृषभ-पूजन, ब्राह्मण-भोजन आदिका विधान है*। गायको धूप या लू लग जानेसे उसकी शान्तिके लिये लोहचूर्ण, अन्न और घृत मिलाकर 'चीवरहोम' करना चाहिये। 'अग्निपुराण' के गोशान्ति-प्रकरणमें भी ऐसे कई प्रयोग बतलाये गये हैं। लौकिक उपायोंमें सफाई तथा स्वास्थ्यप्रद साधनोंका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। 'अग्निपुराण' (अ० २९२) में विभिन्न रोगोंकी भी चिकित्सा बतलायी गयी है। यथा—

गायोंके सींगोंमें रोग होनेसे सेंधा नमक, सोंठ, बला एवं जटामासीके काढ़ेमें पकाया हुआ तेल शहद मिलाकर लगाना चाहिये। सब प्रकारके कर्णशूलोंमें मजीठ, हींग एवं सेंधा नमकके साथ पकाया हुआ तेल अथवा उनके रसका उपयोग करना चाहिये। दाँतोंकी पीडामें बेलकी जड़, चिचड़ा, धव, पाटला और कोरैयाका दाँतोंपर लेप करना चाहिये। 'दन्तशूलहर' पूर्वोक्त दिव्य ओषधियोंके साथ पकाया हुआ घृत भी मुखरोगका नाशक है। जिह्वा-रोगमें सेंधा नमक देना चाहिये। गलेके रोगमें सोंठ, दोनों हल्दी और त्रिफलाका प्रयोग करना चाहिये। हृच्छूल, वस्तिशूल, वातरोग तथा क्षय-रोग होनेपर त्रिफला घीमें मिलाकर पिलाना चाहिये। अतिसारमें दोनों हल्दी और सोनापाठा देने चाहिये। सभी प्रकारके उदररोग तथा शाखारोगोंमें और कास-श्वासमें सोंठ एवं भारंगी हितकर हैं। टूटे अङ्ग जोड़नेके लिये सेंधा नमक और ककुनी देना चाहिये। मुलेठीके साथ पकाया हुआ तैल पित्तरोगमें तथा अकेला तेल वातरोगमें लाभदायक है। कफरोगमें व्योष (पीपल, मिर्च तथा सोंठ) शहदके साथ देना चाहिये। चोट लगनेपर तेल, घी और हरताल गर्म करके लगाना चाहिये। उर्द, तिल, गेहूँ, दूध और घीके लड्डू खिलानेसे बछड़े पुष्ट होते हैं।

इसी तरह अन्य पुराणों तथा आयुर्वेद-ग्रन्थोंमें गो-चिकित्साके अनेक नुस्खे बतलाये गये हैं।

प्राचीन समयमें पशुओंके चिकित्सालय थे। महाराज अशोकके 'गिरनार-शिलालेख' में कहा गया है कि 'सर्वत्र राज्यमें, सीमाप्रदेशोंमें और पड़ोसके राज्योंमें दो प्रकारकी चिकित्साओंका प्रबन्ध होना चाहिये—एक तो मनुष्योंकी और दूसरी पशुओंकी। जड़ी-बूटियाँ तथा ओषधियाँ जहाँ नहीं होतीं, वहाँ दूसरी जगहोंसे लाकर लगायी जायँ।'

अहीरों तथा वृद्धलोगोंको कितने ही नुस्खे मालूम हैं, जो बड़े उपयोगी हैं। यदि उनका संग्रह करके प्रायोगिक अनुसन्धान किया जाय तो उससे बड़ा लाभ हो सकता है।

सरकारी व्यवस्था

'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के 'गोऽध्यक्ष-प्रकरण' में

* कहा जाता है कि गोवर्धन-पूजनके अवसरपर भगवान् श्रीकृष्णने यह 'गो-यज्ञ' भी कराया था।

गोपालन तथा गोरक्षाकी सरकारी व्यवस्था बतलायी गयी है। उसके अनुसार आठ उपाय निश्चित किये गये हैं। गोपालक, पिण्डारक (भैंसोंको पालनेवाले), दोहक (दुहनेवाले), मन्थक (दही आदि मथनेवाले) और लुब्धक (जंगलोंमें हिंसक प्राणियोंसे रक्षा करनेवाले)— ये पाँच-पाँच आदमी मिलकर सौ-सौ गायोंका पालन करें। इनका वेतन नकद या अन्न-वस्त्रादिके रूपमें दिया जाय। दूध-दही-घृतादिमें इनका कोई हिस्सा न रहे; क्योंकि ऐसा होनेसे लालचमें पड़कर वे लोग बछड़ोंको भूखों मार डालेंगे। इसको 'वेतनोपग्राहिक' कहते हैं, क्योंकि इसमें केवल सूखा वेतन दिया जाता है—

गोपालकपिण्डारकदोहकमन्थकलुब्धकाः शतं शतं धेनूनां हिरण्यभृताः पालयेयुः। क्षीरघृतभृता हि वत्सानुपहन्युरिति वेतनोपग्राहिकम्॥

बूढ़ी, दूध देनेवाली, गाभिन, पठोरी (पहले ब्यानकी), वत्सतरी (जिसने हालमें ही दूध चोंखना छोड़ा हो)—इन पाँच प्रकारकी गायोंको बराबर-बराबर मिलाकर अर्थात् प्रत्येक २०-२० लेकर पूरा सौ कर दिया जाय और उनका किसी एकको ठेका दे दिया जाय। वह उनके मालिकको प्रतिवर्ष आठ वारक (प्राचीन तौल) घी, प्रत्येक पशुके लिये एक पण और सरकारी मुद्रासे मुद्रित मरे हुए पशुका चमड़ा देता रहे। (सरकारी मुहर इसलिये कि पशु मरा हुआ है, मारा हुआ नहीं) यह उपाय 'करप्रतिकर' कहलाता है—

जरद्धुधेनुगर्भिणीपष्ठौहीवत्सतरीणां समविभागं रूपशतमेकः पालयेत्। घृतस्याष्टौ वारकान् पणिकं पुच्छमङ्कचर्म च वार्षिकं दद्यादिति करप्रतिकरः॥

बीमार, अङ्ग-भङ्ग, एक ही आदमीको छोड़कर अन्य किसीसे न दुही जानेवाली, मुश्किलसे दुही जानेवाली और जिनका बछड़ा मर गया हो—ऐसी गायोंका भी पहलेकी तरह प्रबन्ध कर दिया जाय। परंतु इसमें पूर्वोक्त घीका आधा या तिहाई मालिकको और उतना ही राजकीय अंश देना होता है। इसको 'भग्नोत्सृष्टक' कहते हैं—

व्याधितान्यङ्गानन्यदोहीदुर्दोहापुत्रघ्नीनां च समविभागं रूपशतं पालयन्तस्तज्जातिकं भागं दद्युरिति भग्नोत्सृष्टकम्॥

शत्रुओंके छल या जंगली पुरुषोंके भयसे जब गोपालक अपनी गायोंको सरकारी बाड़ेमें भरती कर दें, तो आयका दसवाँ हिस्सा सरकारको दिया जाय। इस उपायको 'भागानुप्रविष्टक' कहते हैं—

परचक्राटवीभयादनुप्रविष्टानां पशूनां पालनधर्मेण दशभागं दद्युरिति भागानुप्रविष्टकम्॥

छोटी तथा बड़ी बछड़ी, पठोरी, गाभिन, दूध देनेवाली, अधेड़ उम्रकी और बाँझ—ये सात प्रकारकी गायें होती हैं। उनके महीने या दो महीनेके बछड़ा-बछड़ी लोहे आदिके छल्लेसे चिह्नित कर दिये जायँ। जो गायें सरकारी चरागाहोंमें महीने-दो-महीने रहें, उन्हें भी अङ्कित कर दिया जाय। इनका अङ्कित चिह्न, रङ्ग, सींग आदि पूरा हुलिया सरकारी रजिस्टरोंमें दर्ज रखा जाय। यह उपाय 'व्रजपर्यग्र' कहलाता है—

वत्सिकावत्सतरीपष्ठौहीगर्भिणीधेनूश्चाप्रजातावन्ध्याश्च गावो महिष्यश्च, मासद्विमासजातास्तासामुपजा वत्सा वत्सिकाश्च, मासद्विमासजातानङ्कयेत्। मासद्विमास-पर्युषितमङ्कयेत्। अङ्कं चिह्नवर्णं शृङ्गान्तरं च लक्षणमेवमुपजा निबन्धयेदिति व्रजपर्यग्रम्॥

चोरोंसे अपहरण किया हुआ, दूसरे गिरोहमें मिल गया हुआ या जंगलमें अपने गिरोहसे भटका हुआ '**नष्ट**' गोधन कहलाता है और कीचड़में फँसने, गढ़ेमें गिरने, बीमारी, बुढ़ापा, जल-प्रवाहमें बह जाने, ऊपर वृक्ष गिर जाने, करारके खिसक जाने, भारी शहतीर—शिला आदिसे दब जाने, बिजली गिरने, हिंसक व्याघ्र, साँप, नाक आदिसे काटे जाने या जंगलकी आगसे गाय नष्ट हो तो उसे '**विनष्ट**' कहते हैं। यदि ऐसी हानि ग्वालोंकी असावधानीसे हो तो वे उसको पूरा करें—

चौरहृतमन्ययूथप्रविष्टमवलीनं वा नष्टम्। पङ्कविषम-व्याधिजरातोयाधारावसन्नं वृक्षतटकाष्ठशिलाभिहतमीशान-व्यालसर्पग्राहदावाग्निविपन्नं विनष्टं प्रमादादभ्यावहेयुः। एवं रूपाग्रं विद्यात्॥

आठवाँ उपाय 'क्षीरघृतसंजात' है, जिसका निरूपण किसी एक सूत्रमें नहीं किया गया है। परंतु यह बतलाया गया है कि एक द्रोण गायके दूधमेंसे एक प्रस्थ घी निकलता है। वस्तुतः दहीको मथकर घी निकालनेपर ही

घीके ठीक परिमाणका निश्चय होता है। इसलिये यह परिमाण प्रायिक ही समझना चाहिये। विशेष भूमियों, विशेष प्रकारकी घास या पानी खिलाने-पिलानेसे दूध और घीकी वृद्धि होती है—

क्षीरद्रोणे गवां घृतप्रस्थः। मन्थो वा सर्वेषां प्रमाणम्। भूमितृणोदकविशेषाद्धि क्षीरघृतवृद्धिर्भवति॥

वर्षा, शरद् और हेमन्त ऋतुओंमें गायोंको प्रातः-सायं दोनों समय दुहा जाय और शिशिर, वसन्त तथा ग्रीष्ममें केवल एक ही समय। इन दिनों जो दो बार दुहे, उसका अँगूठा काट दिया जाय। दुहनेवाला यदि ठीक समयपर न दुहे तो उसे उस दिनका वेतन न दिया जाय—

वर्षाशरद्धेमन्तानुभयतः कालं दुह्युः। शिशिरवसन्तग्रीष्मानेककालम्। द्वितीयकालं दोग्धुरङ्गुष्ठच्छेदो दण्डः। दोहकालमतिक्रामतस्तत्फलहानं दण्डः॥

जो ग्वाला स्वयं गायको मारे या किसीसे मरवाये, स्वयं हरण करे या किसीसे हरण कराये, उसे प्राणदण्ड दिया जाय। चोरोंसे अपहरण की हुई अपने ही देशकी गाय जो लावे, उसे एक पण इनाम दिया जाय और परदेशके पशुओंको चोरोंसे छुड़ाकर लाने या छुड़ानेवाला आधा हिस्सा ले सकता है। गोपालोंको चाहिये कि छोटे बछड़े, बीमार और बूढ़े पशुओंकी विपत्तिका बराबर प्रतीकार करते रहें अर्थात् उन्हें सब कष्टोंसे बचाते रहें—

स्वयं हन्ता घातयिता हर्ता हारयिता च वध्यः। स्वदेशीयानां चोरहृतं प्रत्यानीय पणिकं रूपं हरेत्। परदेशीयानां मोक्षयितार्धं हरेत्। बालवृद्धव्याधितानां गोपालकाः प्रतिकुर्युः॥

शिकारियों तथा कुत्तोंको रखनेवाले बहेलियोंद्वारा चोर, हिंसक प्राणी तथा शत्रुकी ओरसे होनेवाली बाधाओंके भयको सर्वथा दूर करके ऋतुके अनुसार सुरक्षित जंगलोंमें ही सब गोपाल अपनी-अपनी गायोंको चरायें। साँप और हिंस्र प्राणियोंको डरानेके लिये, चरनेकी जगह पहचाननेके लिये, शब्द सुनकर घबरा जानेवाले पशुओंके गलेमें एक लोहेका घंटं बाँध देना चाहिये। यदि पशुओंको कहीं पानी पीने और नहाने आदिके लिये पानीमें उतारना हो तो ऐसे ही स्थानपर उतारें जहाँ बराबर तथा चौड़े घाट बने हों, दलदल न हो, नाक आदिका भय न हो। जबतक पशु पानी पियें या नहायें, तबतक वहाँपर गोपाल उनकी सावधानतापूर्वक रक्षा करता रहे। चोर, व्याघ्र, साँप, नाक आदिसे पकड़े हुए पशु तथा बीमार और बुढ़ापेके कारण मरे हुए पशुकी तत्काल सूचना देनी चाहिये, नहीं तो गोपालको नष्ट हुए प्रत्येक पशुका पूरा दाम देना होगा। वर्णके अनुसार दस-दस गाय आदिकी गणनासे सौ गायोंके झुंडकी रक्षा की जाय। सौ गायोंके गोलके पीछे चार साँड़ रखने चाहिये। गायोंके जंगलोंमें रहने और चरनेके लिये नियमित स्थानोंकी व्यवस्था, उनके चरनेके सुभीते, उनके गोलकी तादाद और उनकी रक्षाके सौकर्यको देखकर ही होनी चाहिये—

लुब्धकश्वगणिभिरपास्तस्तेनव्यालपरबाधभयमृतुविभक्तमरण्यं चारयेयुः। सर्पव्यालत्रासनार्थं गोचरानुपातज्ञानार्थं च त्रस्नूनां घण्टातूर्यं च बध्नीयुः। समव्यूढतीर्थमकर्दमग्राहमुदकमवतारयेयुः पालयेयुश्च। स्तेनव्याघ्रसर्पग्राहगृहीतं व्याधिजरावसन्नं चावेदयेयुरन्यथा रूपमूल्यं भजेरन्। वर्णावरोधेन दशती रक्षा॥ शतं गोयूथं कुर्याच्चतुर्वृषम्। उपनिवेशदिग्विभागे गोप्रचारान् बलान्वयतां वा गवां रक्षासामर्थ्याच्च॥

इन सब नियमोंका यथावत् रीतिसे पालन होता है या नहीं, इसको देखनेके लिये राज्यकी ओरसे एक बड़ा अफसर रहता था, जो 'गोऽध्यक्ष' कहलाता था।

हमारा औदासीन्य

इस तरह प्राचीन गोपालन-व्यवस्थाका सर्वाङ्गीण चित्र हमें अपने यहाँके साहित्यमें मिलता है। खेद है कि हमारे यहाँके नवयुवक 'डेयरी सिस्टम' सीखनेके लिये अमेरिका, डेन्मार्क, इंग्लैंड तथा अन्य देशोंमें भेजे जाते हैं, पर अपने यहाँकी प्राचीन व्यवस्थाकी ओर ध्यान ही नहीं जाता। हमारे यहाँकी व्यवस्थाएँ देश-कालके अनुरूप, कम खर्चकी, सुगम तथा कहीं अधिक लाभप्रद हैं। जितना धन, जितना समय, जितना परिश्रम हम विदेशी बातोंको सीखनेमें खर्च करते हैं, यदि उतना ही हम अपने यहाँके भूले हुए प्रकारोंको ढूँढ़ निकालने, उनके अध्ययन करने और उन्हें प्रयोगमें लानेपर खर्च करें तो हम ऐसा 'गोपालन-विज्ञान' प्रस्तुत कर सकते हैं, जिसको देखकर संसार चकित रह जायगा। भगवान् हमें सुबुद्धि दें।

गोपालन, गोसंवर्धन एवं गोसंरक्षण

[महामण्डलेश्वर स्वामी श्रीयोगेश्वर विदेही हरिजी महाराज]

जबतक सम्पूर्ण गोवंश-हत्या बंद नहीं होती, तथा सरकारी कुनीतियाँ सुनीतियोंमें परिवर्तित नहीं होतीं, तबतक गोपालन एवं संवर्धनका पावन कार्य अत्यन्त कठिन है।

मछलीपालन, मुर्गीपालन तथा वृक्षारोपण आदिके लिये सरकार अनेक प्रोत्साहन दे रही है, किंतु गोपालन, गोसंवर्धन एवं गोसंरक्षणके लिये शासन एवं योजना-आयोगकी कोई ठोस योजना नहीं। हमें मिलकर देशकी सुरक्षा एवं समृद्धिके लिये गोपालनके पुनीत कार्यको आगे बढ़ाना होगा। स्वयं तत्पर होकर सरकारपर भी प्रभाव डालना होगा ताकि निम्नाङ्कित सहयोग मिले—

१-जिन राज्योंने पूर्णतया 'गोवंश-हत्या-निरोध' कानून बनाये हैं वह गोपालन एवं गोसंवर्धनके लिये भी सुनीतियाँ निर्माण कर सहयोग करें। अन्य राज्य भी उनका अनुकरण करें।

२-वनोंमें गोचारणके लिये नि:शुल्क अथवा कम-से-कम शुल्क लेकर गोपालकोंको लाइसेंस दिये जायँ। ऐसे ही नहर, रोड एवं रेलवे-सड़कों आदिके किनारे खाली भूमिमें भी गोचारण, घास काटने एवं बेकार जा रहे वृक्षोंके पत्ते एकत्रित करनेकी सुविधा दी जाय।

३-गरीब गोपालकोंको शासन एक-एक देशी गाय तथा उसकी सेवाके लिये आर्थिक सहायताका अनुदान दे तथा अधिक गोपालनकर्ता, उचित गोसंवर्धनकर्ता तथा गोदुग्ध एवं गोबर-गोमूत्रके अधिक प्रयोगकर्ताको और बैलोंसे कृषि करनेवालोंको पुरस्कार एवं वृत्तियों आदिसे प्रोत्साहित किया जाय।

४-इन सब कार्योंका प्रचार-प्रसार, सरकारद्वारा संचारके माध्यमोंसे तथा अन्य माध्यमोंसे योजनाबद्ध ढंगसे कराया जाय।

५-गौ-सेवी धनी एवं दानी सज्जन इन कार्योंमें हर भाँतिसे सहयोग करें।

६-धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाएँ भी इस ओर उचित ध्यान दें। विदेशी वंश-संकरण (क्रासब्रीडिंग) पूर्णतया बंद कर स्वदेशी विशेष वंशोंसे संकर (अपग्रेडिंग) पद्धतिको अपनायें।

संकर-कार्यक्रम

स्वदेशी वंश पोषण-रहित आहारसे भी उपयोगी सिद्ध हुआ है। आज भारतके प्रसिद्ध २६ वंशोंमेंसे अधिकतर समाप्तिके कगारपर हैं। सर्वश्रेष्ठ थारपारकर-वंशको भी संकरित कर समाप्तिकी ओर धकेला जा रहा है। स्वदेशी वंशपालकोंके विश्वासपर कुठाराघातके अनेक कुप्रयास हो रहे हैं। क्रासब्रीडिंग गायोंका दूध रोग-युक्त, शक्तिहीन एवं कम घृतवाला होता है तथा बैल कृषिकार्यके अयोग्य उत्पन्न होते हैं। यदि स्वदेशी 'राठी' आदि उन्नत वंशोंसे कम दुग्ध देनेवाली गायोंका मेल कराया जाय तो दूध पंद्रह किलो दैनिकतक देने लगती हैं, बैल भी कृषि-योग्य देती हैं। यह स्वदेशी वंश अकालमें कम आहारसे भी जीवित एवं उपयोगी बना रहता है जबकि विदेशी वंश मृत्युको प्राप्त होता है।

ऐतिहासिक निर्णय

गत कुम्भ-मेला उज्जैनमें गोभक्त-समूहों, संस्थाओं, साधु-सम्प्रदायों एवं सामाजिक संस्थाओंके प्रतिनिधियों तथा अधिकारियोंकी गोष्ठीने सुझाव दिया था कि स्वदेशी गोवंशसे कृषि, खाद्य, ऊर्जा, परिवहन, खाद, औषधियाँ आदि अनेक लाभ एक साथ प्राप्त होते हैं, जबकि इतने लाभ अरबों रुपया लगाकर अन्य उद्योगोंसे सम्भव नहीं। गोवंश भारतीय सभ्यता एवं संस्कृतिका मूल स्रोत है। उसकी हत्या देशकी अस्मितापर प्रहार है तथा आर्थिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक पतनके लिये उत्तरदायी है।

गोवंशकी हत्या कर मांस, चर्म, रक्त एवं अस्थियों आदिका निर्यात राष्ट्रिय अपराध है। स्वदेशी गो-वंशका पालन, संवर्धन एवं संरक्षण राष्ट्रिय समरसता, एकता तथा अन्य कार्योंके लिये श्रेयस्कर है। राज्य-सरकारें संविधान, न्यायपालिका तथा भारतीय सम्मानकी सुरक्षाके लिये इस पावन कार्यको अपनायें। जनता ग्राम-ग्राम तथा प्रत्येक

नगरमें गोपालन एवं गोसंरक्षणके कार्यमें जुटे।

महान्यायवादियोंके तर्क

उच्चतम एवं उच्चन्यायालय जबलपुरमें सरकारी अधिवक्ताओंने अपने तर्कोंमें समस्त गोवंशको न केवल बहुत उपयोगी खाद देनेवाला अपितु इसके द्वारा महान् ऊर्जा भी प्राप्त होना सिद्ध किया है। इससे वायोगैस-उत्पादनका बढ़ना भी प्रमाणित किया। सन् १९८९ की अ० भा० सांख्यिकीके अनुसार रासायनिक खादसे भूमिकी उर्वरा-शक्ति घटी तथा पानी एवं खादकी खपत बढ़ रही है। इस कारण अनेकों संकट उत्पन्न हो रहे हैं। रासायनिक खाद एवं औषधियोंके निमित्त बन रहे कारखानों-द्वारा प्रदूषण बढ़ रहा है तथा भोपाल-जैसी त्रासदीका संकट छाया रहता है। जबकि गोबर-गोमूत्रकी खादसे भूमिकी उर्वरा-शक्ति बढ़ती है एवं पानी तथा खादकी खपत कम होती है। भारतको मरुस्थल बननेसे रोकनेके लिये इसी खादका प्रयोग बढ़ाना आवश्यक है। नये-नये वैज्ञानिक-अध्ययन तथा आविष्कारोंने प्रमाणित किया है कि पर्यावरण-संतुलन रखने तथा हजारों-हजार करोड़की विदेशी मुद्रा वार्षिक बाहर जानेके प्रवाहको रोकने आदिके लिये न्यायपालिकाने सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या-निरोध' कानूनको आवश्यक बताते हुए गोपालन एवं गोसंवर्धनका मार्ग प्रशस्त किया है।

आँकड़े

२ एकड़ भूमिसे कम जोतवाले ९० प्रतिशत तथा प्रतिव्यक्ति आधा एकड़से भी कम भूमि भारतमें है। बैल केवल ३ करोड़ शेष हैं जबकि कृषि, खाद, परिवहन, खरास, कोल्हू एवं रहट आदि कार्योंके लिये २१ करोड़की आवश्यकता है। ब्यायी गायें एक करोड़से कम होनेसे जीवन एवं शक्तिदाता घृत, दूध, दही एवं मट्ठा (छाछ) आदिके प्राय: अकालसे घातक रोगोंके निवारणार्थ डॉक्टरों, औषधियों एवं यन्त्रोंपर अरबों रुपया व्यय होनेके उपरान्त भी महँगे उपचारकी क्षमता न होनेसे गरीब मृत्युके मुखमें प्रवेश कर रहे हैं।

गोघृत, मक्खन, दूध, दही एवं छाछ तथा गोबर-मूत्रसे अनेकों असाध्य रोगोंका उपचार सहजमें होता है। गोबर-मूत्रकी खादसे उत्पन्न अन्न, साग-सब्जी एवं चारा नीरोग तथा शक्तिशाली होता है। जबकि रसायन-खादसे शक्तिहीन एवं रोग-उत्पादक होनेसे पशु और मनुष्योंकी मृत्यु हो जाती है। इन वस्तुओंपर अधिक अनुसंधानसे अन्य अनेक और लाभ भारत एवं मानव-समाजको मिल सकते हैं। रासायनिक खाद एवं यन्त्री कृषिसे अनेक भयंकर हानियाँ तथा गोबर-मूत्रकी खाद एवं बैलोंकी कृषिसे अनेक महत्त्वपूर्ण लाभ होते हैं।

महँगे ट्रैक्टर, पुर्जे, डीजल, रासायनिक खाद एवं औषधियाँ आदि क्रय करना गरीब किसानके वशकी बात नहीं, इसलिये बेकारी बढ़ती है। यदि आवश्यक सुधार न हुए तो भारतका महान् कृषि-उद्योग शीघ्र ही नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा। क्योंकि स्वदेशी गोवंशको समाप्त कर पेट्रोल, डीजल एवं आवश्यक यन्त्रों तथा रासायनिक खाद, औषधियों आदिकी सप्लाई बंदकर भारतको पंगु बनानेका यह विदेशी षड्यन्त्र है। इसका समाधान गोपालन, गोसेवा, गोसंवर्धन एवं गोसंरक्षण ही है।

विडम्बना

जिस गोवंशकी सेवा-सुरक्षा महर्षियों, अवतारों एवं वीरोंने अनेक कष्ट सहन कर की, आज उसी गोवंशकी दैनिक ५० हजार हत्याएँ केवल अनुचित मत-प्राप्तिकी लालसामें कराकर भारतको गढ़ेमें धकेला जा रहा है तथा गोपालन, गोसंवर्धनके कार्योंमें बाधा उपस्थित की जा रही है। यह कैसी विडम्बना है।

समयकी पुकार

अनेक अड़चनोंसे सामना करते हुए भगवान् श्रीकृष्णके '**क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप**' घोषको स्मरण कर गोपालन-गोसंवर्धन एवं गोसंरक्षण-कार्यमें तत्पर होकर मानव समाज एवं भारतके कल्याणके लिये उद्यत हों। देश, समाज-सेवा एवं धर्म आदिके नामपर चल रही सभी संस्थाएँ, आश्रमधारी एवं अन्य सभी पूज्य साधु-समाज १९६६ की भाँति जनता-जनार्दनको जाग्रत् करनेके लिये गोपालन-गोसंवर्धन एवं गोसंरक्षणके पावन कर्ममें जुटकर उच्च स्वरसे पुन: घोष करें—

देश-धर्मका नाता है—गौ हमारी माता है।
श्रीगंगा, गीता, गोमाता—मानवताकी निर्माता।
भारत एवं विश्वका संचालन—गोसंरक्षण गोपालन।

गौशालाके प्रति समाजकी दृष्टि

[श्रीसूर्यकान्तजी जालान]

गौशालाके सम्बन्धमें जिनको जिज्ञासा होती है, वे प्राय: निम्नलिखित प्रश्न पूछते हैं—

(१) गौशालामें कुल कितनी गायें हैं?

(२) गौशालामें कितना दूध-उत्पादन होता है?

(३) गौशालाके पास कुल कितनी भूमि है?

(४) गौशालाके आयका साधन क्या है?

यदि समाज इन प्रश्नोंकी अपेक्षा गौशालाके प्रति अपनी जिज्ञासाको थोड़ा विकसित कर ले तो गौशालाकी स्थितिमें स्वत: परिवर्तन आने लग जायगा। जैसे गौशालामें गायें कितनी हैं? इस प्रश्नके साथ ही गायोंमें दुधार गाय, बिना दूधकी गाय, साँड़ोंकी संख्या तथा नस्ल एवं उनका रिकार्ड, बछियोंकी संख्या इत्यादिकी पूरी जानकारी करे तो यह प्रश्न पूर्ण होगा। क्योंकि गौशालामें न केवल दुधार गायें रहती हैं, बल्कि बैल, बाछे-बाछी तथाकथित अनुपयोगी—सेवा-योग्य गायें—इस प्रकार सम्पूर्ण गोधन रहता है।

इसी प्रकार गौशालामें दूध पूछते समय दुधार गायोंके साथ दूध दे सकनेवाली गायोंका पूरा औसत कितना है, यह जानकारी करनेसे तुलनात्मक अध्ययन स्वत: हो जाता है।

तीसरा प्रश्न पूछा जाता है गौशालाके पास अपनी भूमिके सम्बन्धमें। उस विषयमें यह कहना है कि सम्पूर्ण भूमिके सम्बन्धमें जिज्ञासा होनी चाहिये, जैसे कृषियोग्य भूमि, वन, वृक्षारोपण-सम्बन्धी भूमि, सिंचित-असिंचित भूमि। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि कितनी भूमिका उपयोग गायोंके लिये चारा लगानेपर हो रहा है, वह पर्याप्त है या अपर्याप्त? यह जानकारी करनेसे ही गौशालाकी भूमिका पूर्ण विवरण ध्यानमें आयेगा।

गौशालाकी आयका स्रोत जाननेके लिये पुरुषार्थसे हुई आय या स्वाभाविक क्रमसे आया दान, सरकार एवं संस्थाओंसे मिला अनुदान या पूर्वजोंके द्वारा संचित निधिसे बिना परिश्रमके मिलनेवाला ब्याज और भाड़ेकी आय— इन सभीकी जानकारी आवश्यक है।

इस प्रकार समाज गौशालाको देखनेकी दृष्टि सूक्ष्म कर ले और गौशालाके प्रति अपने दृष्टिकोणमें परिवर्तन कर ले तो ऐसा कोई कारण नहीं है कि गौशालाओंका ह्रास हो।

गौशालाओंके विषयमें पिछले कुछ वर्षोंमें कार्य एवं अध्ययन करनेसे बहुत अच्छे अनुभव सामने आये हैं। अपने ऋषि-मुनियों, महापुरुषों एवं संतोंकी कही हुई बात अक्षरशः सत्य है कि गौशालाओंमें सच्चे मनसे काम करनेपर सांसारिक बाधाएँ, साधनोंका अभाव रह ही नहीं सकता। गौशालामें कार्य करनेके पूर्व सर्वप्रथम विचारपूर्वक योजना बनानी चाहिये कि हमें क्या करना है और कैसे करना है?

गौशालाका कार्य अत्यन्त आवश्यक एवं लाभकारी है। यह प्रत्यक्ष देवताओंकी पूजा है। विज्ञानके इतने आविष्कार होनेके पश्चात् भी आजतक ऐसी कोई तकनीक विकसित नहीं हुई और न हो सकनेकी सम्भावना ही है कि वह घास-फूसको अमृत-जैसे दूधमें परिवर्तित कर सके। जो हमलोग नहीं खाते हैं, उसे खाकर गाय माँके समान या उससे भी अच्छा पूर्ण आहार—दूध-जैसा पदार्थ देती है। माँका दूध तो केवल कुछ महीनेतक प्राप्त होता है, परंतु गायका दूध तो हमें जीवनभर मिलता रहता है। अत: गायका दर्जा माँसे भी ऊपर है। इसीलिये गौ पूजनीय तथा वन्दनीय भी है। परंतु देश, काल एवं परिस्थितियोंके अनुसार केवल पूजा करना सार्थक नहीं होगा; बल्कि हमें पूजाके साथ-साथ अपने कर्तव्यों एवं दायित्वोंका भी पूरा निर्वाह करना चाहिये।

देशमें समृद्धि लानेके लिये 'पूर्ण गोहत्या-बंदी' का केन्द्रीय कानून बनना आवश्यक है। देशमें पूर्ण गोहत्या-बंदीके साथ-साथ गोसंवर्धन और गोपालनपर भी विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है।

गोसंवर्धनका दायित्व गौशालाकी ओर आता है। देशमें लगभग ५०० जनपद हैं, लेकिन गौशालाएँ २,८०० से भी अधिक हैं। एक-एक गौशाला एक-एक जिलेके

गोवंशको संवर्धित करनेका संकल्प ले तो कुछ ही वर्षोंमें परिवर्तन दिखायी देने लग जायँगे और दस-पंद्रह वर्षों बाद देशमें पुन: दूध-दहीकी नदी बहनेवाली कहावत चरितार्थ हो सकती है। इसलिये समाजके लोगोंको गौशालाओंके कार्य तथा व्यवस्थापर पुनर्विचार करके उनको विकसित करना चाहिये, ताकि गौशालाएँ अपने दायित्वोंका निर्वाह कर सकें। गोसंवर्धनके साथ गौशालाके कार्यकर्ताओंको इस बातपर पूरा जोर देना चाहिये कि हमारे जिलेसे एक भी गाय कटने-हेतु नहीं जायगी और जो भी व्यक्ति उन्हें पकड़ेगा उन रोकी हुई गायोंको गौशाला स्वयं सँभालेगी।

गोपालन एवं गौशालाकी एक सीमा है। उससे अधिक गाय गौशाला नहीं रख सकती। इस समय देशमें सरकारी आँकड़ोंके अनुसार १९ करोड़ गोवंश हैं। देशभरकी गौशालाएँ पूर्ण क्षमताके साथ गायोंको रखना चाहें तो भी २५ लाखसे ज्यादा गोवंश रखना सम्भव नहीं है। अत: जबतक किसान गायें नहीं पालेगा, तबतक वे पूर्ण सुरक्षित तथा संवर्धित नहीं हो सकतीं। आज भी भारत भाग्यशाली है कि इसकी ७२ % जनसंख्या गाँवोंमें रहती है। गायोंको पालकर गाँवोंको खुशहाल बनाया जा सकता है। इससे बढ़ती हुई नगरीय व्यवस्थामें हम मददगार होंगे तथा दुनियामें बढ़ रहे असंतुलनको संतुलित करनेमें गोवंश भी सहायक होगा।

काशीकी 'जीवदया-विस्तारिणी गोशाला' के अन्तर्गत 'रामेश्वर गोशाला' में हुए कार्योंके आधारपर यह सिद्ध हो चुका है कि प्रयत्न करनेके पश्चात् भी गोशालामें सेवायोग्य गायों (तथाकथित अनुपयोगी गायों) की संख्या ५०० भी नहीं हो सकी। जबकि यह गोशाला गोरक्षासे पकड़ी हुई ५०,००० से भी अधिक गायोंको संरक्षण दे चुकी है। गोशालामें आयी हुई गायोंकी समुचित व्यवस्था करनेके बाद उसमेंसे दूध देनेवाली या दे सकनेवाली गाय, कृषियोग्य बैल, बाछा-बाछी एवं साँड़ोंको किसानोंमें वितरित कर दिया जाता है। जिस गोवंशको किसान अनुपयोगी मानकर लेनेसे इनकार कर देते हैं वैसे गोवंश गोशालामें रह जाते हैं। इतना सब कुछ होनेके बावजूद भी जब इस गोशालाके पास ५०० सेवा-योग्य गायें नहीं हो सकीं तो पूरे देशमें यदि गायोंकी सम्पूर्ण देख-रेख हो तो ५ लाखसे अधिक सेवा-योग्य अथवा तथाकथित अनुपयोगी कही जानेवाली गायें नहीं होंगी। वैसे यहाँपर यह भी प्रयोग सिद्ध हो चुका है कि कोई भी गाय जबतक गोबर-गोमूत्र देती है, तबतक अनुपयोगी नहीं हो सकती। एक वृद्ध गाय लगभग ३-४ किलो भूसा खाती है और १० किलो गोबर एवं औसतन १७ लीटर गोमूत्र देती है। एक गायके गोबरसे लगभग दो रुपये प्रतिदिनकी गोबर-गैससे ऊर्जा, १०-१२ किलो खाद और गोमूत्रसे मिलनेवाली यूरिया खाद या कीटनाशक दवाकी कीमत गायके भोजनके मूल्यसे कई गुना अधिक है। इसलिये गाय आर्थिक दृष्टिसे बहुत लाभदायक है। केवल उसकी सार-सँभाल ठीक ढंगसे की जाय।

पाश्चात्त्य संस्कृतिके प्रभावमें आकर हमारी सरकार एवं तथाकथित वैज्ञानिकों तथा डॉक्टरोंने खूब जोर लगाकर यह भ्रामक प्रचार किया कि देशमें दुग्धकी आपूर्ति विदेशी गायों (जरसी, होलेस्टीन, फ्रीजियन एवं डेविड ब्राउन) को रखनेसे ही हो सकती है, परंतु सरकारने भी कई दशक भटकनेके बाद अब यह जान लिया है कि हमारी परिस्थितिमें भारतीय नस्लकी गायें ही ज्यादा उपयोगी हैं। इस कार्यके लिये गुजरात प्रदेशकी सरकारकी सराहना करनी पड़ेगी कि उसने इतने दबावके बावजूद भी अपने यहाँके गीर-नस्लपर निरन्तर काम किया, जिसके परिणाम-स्वरूप गुजरातमें अनेक स्थानोंपर ४० लीटर दूध देनेवाली भारतीय गायें सुलभ हैं। भारतीय गायोंपर विदेशोंमें भी शोध चल रहा है और इजराइलने गीर-नस्लकी गायसे १२० लीटर दूध प्रतिदिन उत्पादन करके दुनियाको दिखला दिया कि भारतीय गाय आज दूधकी सर्वश्रेष्ठ गाय है। हरियाणा, शाहीवाल, गंगातीरी गायोंपर भी विदेशोंमें काफी कार्य हुआ है और उसके परिणाम बहुत अच्छे आये हैं। पूरे देशकी आवश्यकता, मानसिकता एवं सुलभ साधनोंके आधारपर हमारे देशके लिये औसतन १० लीटर दूध देनेवाली गाय सर्वाधिक उपयोगी प्रतीत होती है; क्योंकि इतना दूध देनेवाली गायोंके बछड़े कृषि-कार्यके लिये बहुत उपयोगी हैं। २० लीटरसे अधिक दूध देनेवाली गायोंके बछड़े सुस्त होते हैं, जो किसानोंके लिये बहुत उपयोगी नहीं होते।

इसलिये गोसेवाकी दृष्टिसे राष्ट्रिय सोच एवं परिवेशमें हमारा अनुरोध है कि अपनेको २० लीटरसे ऊपर दूध देनेवाली गायोंके बारेमें विचार नहीं करना चाहिये।

देशमें बैलोंको बचानेकी एक विकट समस्या है। कृषिके क्षेत्रमें आज यान्त्रिक दखल बढ़नेसे देशमें बैलोंके काम घट रहे हैं। बैलोंके विकल्पके रूपमें आज ट्रैक्टरका उपयोग होता है। जबकि ट्रैक्टर तेल खाता है और धुआँ छोड़ता है। तेल हमको विदेशसे आयात करना पड़ता है और उससे निकला हुआ धुआँ पूरे वायुमण्डलको दूषित करता है। इसके विपरीत बैल घास खाता है और गोबर तथा मूत्र देता है, जिसकी हमारे खेतोंको नितान्त आवश्यकता है। इसलिये ट्रैक्टरकी तुलना बैलोंसे किसी भी प्रकार नहीं की जा सकती।

गोवंशको समाप्त करनेकी दिशामें सरकारने एक नया कुचक्र रचा है। देशमें जगह-जगह यान्त्रिक क़तलखाने खोल रही है, जिसमें विदेशी मुद्रा कमानेकी दुहाई देते हुए वह गोवंश कटवा रही है और दूसरी तरफ विदेशी दबावमें आकर गोबरका आयात कर रही है।

कृषि-मन्त्रालयकी एक विज्ञप्तिके अनुसार देशमें १२ करोड़ ९५ लाख ८० हजार हेक्टेयर भूमि ऊसर हो गयी है। इसको सुधारनेका एकमात्र उपाय गोबर है। कृषि-वैज्ञानिकोंने यह संस्तुति भी दी है कि देशमें गोवंशकी संख्या बढ़ायी जाय और इनका वध नियन्त्रित किया जाय। पूर्वमें भी जो कानून बने हैं वे कहीं भी उपयोगी गोवंशका वध करनेकी इजाजत नहीं देते, परंतु देशमें बिगड़ी हुई व्यवस्थामें अनुपयोगीके नामपर उपयोगी गोवंश ही ज्यादे काटे जा रहे हैं। इसमें एक विडम्बना यह भी है कि प्रायः बीमार, बूढ़े जानवरोंका भक्षण स्वास्थ्य-विभागके अनुसार वर्जित है और उपयोगी गोवंश कट नहीं सकते। फिर भी देशमें सरकारी आँकड़ोंके अनुसार २९,२०० गोवंश प्रतिदिन काटे जा रहे हैं। जबकि गोसेवामें लगे कार्यकर्ताओंके अनुसार यह संख्या दुगुनी है।

'सुरभि-शोध-संस्थान' का यह निश्चित मत है कि इस देशमें गोवंशको बचाकर उसे विकसित किया जाय और उसमें दसगुनी वृद्धि कर दी जाय तो इस देशका स्वरूप, आर्थिक स्थिति एवं वातावरण निश्चित बदल सकता है।

देशमें गायको बचाने और उसको बचाकर उससे देशकी परिस्थिति बदलनेके लिये एक ठोस कार्य-योजना इस संस्थानने बनायी है, जिसका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है—

सम्पूर्ण देशको ५-१० अञ्चलोंमें बाँटकर हर अञ्चलमें एक बड़ा प्रयोग तथा प्रशिक्षणका महत्त्वपूर्ण केन्द्र स्थापित करना। फिर उस केन्द्रके माध्यमसे सभी मण्डलोंमें एक-एक गोशाला तैयार करना। मण्डलके बाद इस स्थितिको जिला तथा खण्ड-स्तरोंतक ले जानेपर ही यह योजना सफल हो पायेगी।

देशमें बढ़ रहे वायु एवं जलके प्रदूषणके कारण गायोंमें बीमारियाँ बढ़ रही हैं। यह देखनेमें आया है कि गायोंको बीमार करनेमें सर्वाधिक योगदान विदेशी गायोंका है। आजकल होनेवाली प्रचलित बीमारियोंमें ८० प्रतिशत बीमारियाँ उन्हींके द्वारा फैल रही हैं। ऐसी स्थितिमें गायोंकी चिकित्साके लिये हमको ऐलोपैथिक, होम्योपैथिक, आयुर्वेदिक एवं घरेलू उपचार—इन चारों पद्धतियोंको विकसति करना चाहिये। सरकार पाश्चात्त्य प्रभावके कारण अपनी पूरी शक्तिसे ऐलोपैथिक उपचारके विस्तारमें लगी है, यह अव्यावहारिक और त्रुटिपूर्ण सोच है। आज ऐलोपैथिक डॉक्टरोंकी जितनी आवश्यकता है, वह आनेवाले दस वर्षोंमें भी पूरी नहीं हो सकती और यदि पूरी हो भी जाय तो उनका शुल्क और उनकी महँगी-व्यवस्था हमारे साधारण किसानों एवं गोपालकोंके लिये सम्भव नहीं है। इसलिये देशके समाजसेवी संगठनों एवं सामाजिक संस्थाओंसे यह अनुरोध है कि वे इनकी और विधियोंपर भी निरन्तर शोध-कार्य करते रहें तथा सफल प्रयोगोंके प्रचार-प्रसारपर ध्यान दें।

देशमें खादकी आपूर्तिके लिये बहुत बड़ी पूँजी लगाकर बड़े-बड़े कारखाने खोले गये। फिर भी आज बहुत बड़ी मात्रामें खाद विदेशोंसे आयात करनी पड़ रही है। यदि इसकी जगह गोमूत्रका प्रयोग यूरिया खादके रूपमें किया जाय तो विदेशी मुद्रा भी बचेगी और लाभ भी होगा। गाय जहाँपर खड़ी होती है, वहाँपर जो गोमूत्र गिरता है, उस

जगहकी मिट्टीको खेतोंमें यूरियाकी तरह छींटनेसे वह यूरिया खादका एक बहुत अच्छा और सफल विकल्प है। कीटनाशक दवाओंसे स्वास्थ्यपर पड़नेवाले विपरीत प्रभावसे पूरा विश्व चिन्तित है। इसलिये अनेक देशोंने इसपर पाबंदी लगा रखी है; परंतु भारतमें गोवंशकी हो रही उपेक्षाके कारण सरकार यह हिम्मत नहीं जुटा पा रही है। गोमूत्रमें बराबरका पानी मिलाकर पेड़-पौधोंपर छिड़काव किया जाय तो वहाँपर कीड़ोंसे होनेवाले नुकसानसे बचाव हो सकता है।

भारतीय गायके गोमूत्रसे कामधेनु-वटी बनाकर १११ रोगोंपर सफलतापूर्वक इलाज किया गया है। यह प्रयोग हमलोग भी अपने स्तरपर कर रहे हैं, जिससे काफी लाभ हो रहा है। नगरमें बढ़ते हुए कूड़ेकी समस्याका भी गायका गोबर सफल निदान है। कूड़ेके ढेरपर गायके गोबरको पानीमें घोलकर छिड़काव कर देनेसे उसकी दुर्गन्ध समाप्त हो जाती है। उसमें पलनेवाले हानिकारक कीड़ोंकी जगह लाभदायक कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं और यह कूड़ा कुछ ही दिनोंमें एक सफल खाद बन जाता है।

देशमें ऊसर भूमिको सुधारनेकी एक विकट समस्या है। इतने बड़े पैमानेपर ऊसर भूमि और बढ़ते हुए ऊसर दोनोंको ठीक एवं नियन्त्रित करनेका एकमात्र उपाय गोवंशकी रक्षा है। ऊसर भूमिमें गायोंको बाँधकर उसके कच्चे गोबर-गोमूत्रकी पर्याप्त मात्रा देनेसे भूमिका ऊसरपन बहुत शीघ्र ही ठीक होने लगता है। इसलिये हमारे ऋषि-मुनियोंने किसी भी परिस्थितिमें गायके वधका निषेध किया है।

गरीब किसानोंकी आर्थिक स्थिति ठीक करनेका एकमात्र उपाय गाय है। किसानोंको गोपालनके बारेमें ठीक प्रकारसे बताया जाय और वह उस गायकी ठीकसे सेवा करे तो एक लीटर दूध देनेवाली गाय भी उसकी आर्थिक स्थितिको परिवर्तित कर सकती है। अपने घरमें बने चावलसे निकले माड़, सब्जीके छिलके एवं घास-फूस आदिसे भी उस गायका पोषण हो जाता है। उस गायसे प्राप्त दूधसे उसका भोजन बन जाता है, गायका बछड़ा बच्चोंका खिलौना होता है। इस प्रकार वह गाय उसके परिवारका अविभाज्य अङ्ग बन जाती है और हर डेढ़ वर्षमें गायसे मिलनेवाला बच्चा उसकी पूँजीगत आय होती है।

गायके दूधमें एक अद्भुत औषधीय गुण है। गायके दूधसे बनी छाछ किसी भी प्रकारके नशे-जैसे—गाँजा, भाँग, चिलम, तंबाकू, शराब, हीरोईन, स्मैग इत्यादिसे होनेवाले प्रभावको ही कम नहीं करती, अपितु इसके नियमित सेवनसे नशेका सेवन करनेकी इच्छा भी धीरे-धीरे कम हो जाती है। गायके दूधमें स्वर्ण-तत्त्व पाये जाते हैं। यह तत्त्व माँके दूधके अतिरिक्त दुनियामें अन्य किसी भी पदार्थमें नहीं मिलता। यह बुद्धिवर्धक, बलवर्धक एवं स्वास्थ्यवर्धक भी है। इस प्रकार गाय तथा गोवंश हमारे लिये हर दृष्टिसे उपयोगी है। आज इसके व्यावहारिक रूपको समझनेकी विशेष आवश्यकता है।

मानव और गाय

अपनेको अनेक प्रकारसे कष्ट देनेवाले एक मानवसे गाय प्रश्न करती है—'अरे मानव! तुम मुझे क्यों इतना कष्ट देते हो? आखिर तुमसे समाजका क्या प्रयोजन सिद्ध होता है? देखो, मेरे गोबरसे उपले बनते हैं। गोबरसे उपज बढ़ती है। गोबर ईंधनके काममें उपयोगी होता है। ईंधनमें उपले भी उपयोगी होते हैं। मेरे चमड़ेसे 'भेरी' इत्यादि वाद्य बनाये जाते हैं, लोग पादत्राण बनाते हैं। मेरी सींगोंसे तरह-तरहकी उपयोगी वस्तुएँ बनती हैं। फिर मेरे मूत्र, गोमय, दूध, घी और दहीसे पञ्चगव्य बनाकर उसे पीकर लोग अपनी देह और मन शुद्ध करते हैं। मेरा दूध सबको प्रिय है। आरोग्यवर्धक है। हवन इत्यादि देवकार्योंके लिये घी अनिवार्य है। एक नहीं, दो नहीं अपना वर्णन करती जाऊँ तो उसका पार नहीं होगा। मैं जीवित रहूँ या मरूँ सब रीतिसे उपयोगी हूँ, तू बोल, तू किस कामका है?'

—डॉ० (श्रीमती) रुक्मिणी गिरिमाजी

गोपालनकी समस्याएँ और समाधान

[श्रीरामप्रसादजी अवस्थी, एम० ए०, शास्त्री, साहित्यरत्न, संगीतरत्न, मानस-तत्त्वान्वेषक, भागवतरत्न]

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥

गोरक्षा हमारे राष्ट्रका सर्वोत्कृष्ट अङ्ग माना गया है। प्रत्येक धर्मपरायण व्यक्ति इसे माताके नामसे पुकारता है और सम्मानकी भावनासे इसकी पूजा करता है। स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद गोमाताकी जितनी उपेक्षा हुई, वह सबके सामने है। हृदयमें रंचमात्र भी इसके प्रति करुणाका स्थान नहीं रहा, इससे बढ़कर और लज्जाकी बात क्या हो सकती है! कितने संघर्षोंके उपरान्त महात्मा गाँधीने विदेशियोंके अत्याचारोंसे अहिंसावृत्तिकी कठिनतम साधनासे और भक्तराज नरसीजीकी प्रार्थना—*'वैष्णव जन तो तेने कहिये, जे पीर पराई जाणे रे'* से प्रेरणा लेकर और श्रीगीताजीमें भगवान् श्रीकृष्णके वचन—'**धेनूनामस्मि कामधुक्**' को जीवनमें क्रियात्मक-स्वरूपमें उतारकर कई भाषणोंमें यह कहा था कि 'स्वतन्त्रता प्राप्त होनेपर प्रथम यह कार्य होगा कि 'गोवध' सदाके लिये भारतभूमिसे विदा हो जायगा और गोवधको मैं अपना ही वध समझूँगा' इत्यादि। किंतु स्वतन्त्रताप्राप्तिके ४७ वर्ष बाद भी अभीतक इस दिशामें रंचमात्र भी किसी प्रकारका आशाजनक कार्य नहीं हुआ। ९ करोड़ रु० लगाकर एक अरब विदेशीद्वारा मेढाक नगर आन्ध्र प्रदेशमें वैज्ञानिक ढंगकी वधशाला खोली गयी है, जिसमें प्रतिदिन ३० हजारकी संख्यामें गोवध होता है।

अभी कुछ दिनोंकी घटना है, राजस्थानमें अकाल पड़ा था। लाखोंकी संख्यामें गायें लेकर वधिक वधशालामें झुंड-के-झुंड लेकर पहुँच जाते थे। मैंने स्वयं जब हजारोंकी संख्यामें इन गोमाताओंको जाते देखा तो मेरा हृदय द्रवित हो गया। कई दूध देनेवाली गोमाताओंकी टाँगें तोड़कर उन्हें अनुपयोगी सिद्ध किया गया था। स्थानीय आर्यसमाजके व्यक्तियोंने इनको मुक्त करानेकी योजना बनायी और संघर्ष लेनेके बाद मुक्त भी कराया। बादमें उसमेंसे ९०% गोमाताएँ प्रसूता हुईं, गोमाताओंके भक्त कहे जानेवालोंसे मेरा निवेदन है कि इसपर गम्भीरतासे विचारकर इन गौ माताओंपर हृदयसे करुणा करें। बड़े-बड़े नगरोंमें ग्रीष्ममें सैकड़ों गोमाताएँ और गोवंशज भूखे-प्यासे धूपमें बैठे रहते हैं। नालियोंका पानीतक सूख जाता है। उन गोभक्तोंको यह सब देखनेपर भी इनके प्रति रंचमात्र दयाका हृदयमें संचार नहीं होता। जल पीनेके लिये पहले भक्तलोग जल पीनेका प्रबन्ध करते थे। कैसी विचित्र विडम्बना है कि गोभक्त कहे जानेवाले दूकानोंपर फ्रीजका ठंडा पानी पी रहे हैं और उनकी गौ माताएँ सड़कोंपर पानीके बिना प्याससे तड़प रही हैं। गगनचुंबी भव्य अट्टालिकाओंमें शीतकालमें हीटरका प्रयोगकर चैनकी नींद ले रहे हैं और गोमाताएँ सड़कोंपर बैठे हुए शीतसे ठिठुर रही हैं। गोपालकोंके पास नगरोंमें स्वयं रहनेका स्थानतक नहीं है, हिन्दूकी आज यह विवशता है। जबकि हिन्दूके लिये कहा जाता है—'**गोषु भक्तिर्भवेद्यस्य प्रणवे च दृढा मतिः**' जिस प्रत्येक हिन्दूके घरमें गोमाता, भगवान्‌की प्रतिमा, तुलसीवृक्ष न हो वह हिन्दूकी संज्ञामें कैसे आ सकता है? चरागाह, पिंजरापोल तो दूर रहे, गायोंको कहीं खड़े होनेतकका स्थान नहीं है।

जिस राष्ट्रकी भौतिक स्वतन्त्रताके साथ मनोमय-विज्ञानमय शरीरकी स्वतन्त्रताका पलायन हो जाता है, जिस राष्ट्रकी अस्मिता, गौरव, सभ्यता एवं संस्कृतिके संरक्षक शास्त्रों एवं पूर्वजोंके इतिहासोंपर अनादर एवं उपेक्षाका भाव हो जाता है, उस राष्ट्रकी आत्मा मृतप्राय हो जाती है। आज हमारा सनातन गौरवशाली भारत देश इसी संक्रामक स्थितिसे गुजर रहा है। यह धर्म-निरपेक्षताकी देन है। अपने देशमें जब धर्म राष्ट्रकी आदर-दृष्टिका केन्द्रबिन्दु था, तब उसके अपमानित होनेपर प्रत्येक श्रेणीके स्त्री-पुरुषका रक्त खौल उठता था और एकजुट होकर सब लोग अनादर करनेवालोंको मुँहतोड़ उत्तर दे देते थे, पर विडम्बना है कि आज ऐसा नहीं हो पा रहा है। हमारे राष्ट्रमें आज भयावह परिस्थिति है। इस विषम परिस्थितिमें गोपालन किस प्रकार हो स्वयं एक जटिल समस्या है। शादी-विवाहमें लाखों रुपयेका सड़कोंपर अपव्यय करके हम अपना बड़प्पन

प्रदर्शन करनेमें नहीं हिचकिचाते, क्या यही द्रव्य एकत्र कर गोमाताओंके लिये गोशालाएँ नहीं खोली जा सकतीं? आज व्याख्यानों, सम्मेलनों, समाचार-पत्रोंमें केवल गोमाताकी महिमागान करनेसे कुछ भी प्राप्त होनेवाला नहीं है। इसके लिये गोभक्त महानुभावोंको ठोस कदम उठाने होंगे। द्रव्यको अपव्ययसे बचाकर गोशालाकी स्थापनाके हेतु लगाया जाय। कर्मठ सच्चरित्र व्यक्ति जो आस्थावान् हैं, जिनका गोमाताके प्रति सेवा-भाव है, उनको सेवामें रखा जाय। गोचारणके लिये धनी-मानी श्रेष्ठ महानुभावोंको चाहिये कि वे भूमिदान कर इनकी रक्षाकी व्यवस्था करें। बड़े कष्टके साथ लिखना पड़ रहा है कि कुछ गोशालाओंका नाम 'आदर्श गोशाला' तो है, किंतु उन्हीं गोशालाओंसे हजारोंकी संख्यामें गायें कलकत्ते आदि स्थानोंको भेजी जाती हैं। अभी भी ऐसे जीवंत मूर्तिमान् गोभक्त हैं, जिन्होंने अपनी जमीन बेचकर गोमाताओंको वधिकोंसे मुक्त कराया। अनेकों संतोंने इन गोमाताओंका दर्शन कर बड़ी प्रसन्नताका अनुभव किया। कई गोशालाओंके पास गोचरभूमि नहीं है। गोभक्तोंसे निवेदन है कि ऐसे भयावह समयमें जहाँ महँगाई अपने ताण्डवपर है, अपनी उदारतासे मुक्तहस्त होकर नगर-नगरमें गोशालाएँ और उनके रख-रखावके लिये चरागाह, पीनेके लिये पानीकी व्यवस्था हो तो इन गोमाताओंके आशीर्वादसे हम सशक्त मेधावी राष्ट्रके सच्चे सपूत कहला सकते हैं। गोमाताकी महिमाका वर्णन करनेमें वर्णमालाके अक्षर समाप्त हो जाते हैं।

अभी कुछ समय पूर्व एक पुस्तक अमेरिकाके कृषि-विभागद्वारा प्रकाशित हुई थी—'The cow is a wonderful laboratary' (गोमाता एक आश्चर्यजनक रसायनशाला है)। समस्त दुग्धधारी चतुष्पाद जीवोंमें गोमाता ही एक ऐसी है, जिसकी आँत १८० फुट लंबी होती है। इसकी विशेषता यह है कि जो चारा चबाती है, उससे जो दुग्धका निर्माण होता है, वह माताके दूधसे भी बढ़कर है।

जननी जनकर दूध पिलाती केवल साल छमाहीभर।
गोमाता पय-सुधा पिलाती रक्षा करती जीवनभर॥

मैनपुरी नगरमें एक डॉ० कपूर थे। उन्होंने ९० वर्षकी आयुमें पार्थिव शरीर छोड़ा। इस अवस्थामें भी उनका एक बाल भी श्वेत नहीं हुआ था। वे नित्य बालोंमें गो-दुग्धके फेनका प्रयोग करते थे। उन्होंने भी एक गोशाला नगरमें स्थापित की थी, जिसकी आज केवल भग्न इमारत शेष बची है। मधुमेहके अनेकों रोगी उन्होंने गोमूत्रके प्रयोगसे शत-प्रतिशत आरोग्य किये थे।

गोवत्स सहस्रों गायोंके बीचमें अपनी माताको ढूँढ़कर दुग्धपान करता है, जबकि भैंसका बच्चा अपनी माँको ढूँढ़ नहीं पाता। गोमाताके दुग्धमें कैरोटीन नामक पदार्थ भैंसके दूधसे दस गुना अधिक है। भैंसका दुग्ध गर्म करनेपर उसके पोषक तत्त्व मर जाते हैं और गायके दुग्धको गरम करनेपर पोषक तत्त्व वैसे ही विद्यमान रहते हैं। अधिक दुग्ध देनेवाली गायोंमें राठी, सांचेर, शाहीवाल, गीर, सिंही इत्यादि अन्तर्जातियाँ हैं। केवल घास खाकर ये प्राय: २० लीटर दूध देती हैं।

अभी कुछ प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त हुए हैं। गोदोहन-वेलाके पूर्व प्रात:काल वंशीकी ध्वनिमें राग ललित, राग विभास, भैरवी, आसावरीके स्वर निकालनेपर अल्प समयमें अतिशीघ्र दुग्ध निकल आता है। कुछ गोमाताएँ दुहाते समय नेत्र बंद कर लेती हैं। इससे यह मालूम होता है कि नन्दनन्दन श्यामसुन्दरकी वंशीसे गोमाताका घनिष्ठ सम्बन्ध है। भैरवी और आसावरीके स्वरोंमें मैंने स्वयं प्रत्यक्ष देखा और दिखाया है। उत्तर काशीके निकट एक ग्राम है, जहाँ वर्षभर गोमाताओंका गोमूत्र संचित कर पाण्डु मृत्तिका मिलाकर घरोंकी पुताई होती है, जिसका प्रभाव तत्क्षण देखनेमें यह आया है कि उस स्थानपर छिपकली, मच्छर, मक्खी इत्यादि विषधारी जन्तु प्रवेश नहीं करते।

अत: मेरी गोमाता-प्रेमियोंसे प्रार्थना है कि अर्थका व्यामोह त्यागकर सभी प्रकारसे कटिबद्ध होकर इनकी रक्षा-सेवा की जाय। इसीमें भारत देशकी अखण्डता निहित है।

गोसंवर्धनके नामपर पूज्या गोमाताकी नसलका संहार

[गोलोकवासी भक्त श्रीरामशरणदासजी]

आजकल जहाँ इस धर्मप्राण भारतमें नित्यप्रति हजारों प्रातःस्मरणीया गोमाताओंको बड़े-बड़े महान् कष्टों-पर-कष्ट दे-देकर, उन्हें बड़ी-बड़ी घोर अमानुषिक यातनाएँ दे-देकर, उन्हें तड़पा-तड़पाकर मारा जा रहा है, उनकी बोटी-बोटी काटकर उनके मांसको डिब्बोंमें भर-भरकर विदेशोंमें भेजा जा रहा है और बदलेमें पैसा कमाया जा रहा है तथा ऐसी निकृष्टतम कमाईके बलबूतेपर देशोन्नतिके स्वप्न देखे जा रहे हैं; वहीं आज कुछ पाखण्डी गोभक्त बननेका पाखण्ड रचकर, भोली-भाली हिन्दू जनताकी आँखोंमें धूल झोंककर, अपनेको गोमाताका परमभक्त सिद्ध कर और मगरमच्छके आँसू बहाकर गोसंवर्धन करनेके नामपर जो पूज्या गोमाताकी असली नसलका संहार करने जा रहे हैं—यह देखकर जो घोर दुःख होता है, वह वर्णनातीत है। आजकल देशमें गोसंवर्धन करनेके नामपर और गोनसल-सुधार करनेके नामपर इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि विदेशोंके साँड़ोंका वीर्य मँगाकर कृत्रिम गर्भाधानके द्वारा वीर्यको मुर्गीके अंडोंका तरल उसमें मिलाकर जो पूज्या गोमाताके गर्भमें प्रविष्ट कराया जाता है, इन अनर्थपूर्ण बातोंसे जहाँ पूज्या गोमाताको असह्य और महान् अपार कष्ट होता है, वहाँ साथ ही भारतकी असली पूज्या गोमाताकी नसलका भी संहार होता है। कारण कि इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि विदेशोंमें जिस प्रकार कुतिया और भेड़ियेको मिलाकर तीसरी नसल तैयार की गयी है और जिस प्रकार गधे या घोड़ेको मिलाकर तीसरी नसल खच्चर तैयार की गयी है, इसी प्रकार वहाँपर गाय और भैंसेको मिलाकर तीसरी नसल तैयार की गयी है जो देखनेमें तो भले ही गाय-जैसी प्रतीत होती है, पर वह वास्तवमें मूलतः गाय नहीं है। इंग्लैण्ड, अमेरिकाके इन नकली वर्णसंकर साँड़ोंके वीर्यको भारतकी असली गौ माताके गर्भमें प्रविष्ट कराकर कृत्रिम गर्भाधानद्वारा गौ माताकी नसलको समाप्त करना यह कोई बुद्धिमानीका कार्य नहीं है। यह महान् घोर भयंकर पाप है और अक्षम्य अपराध है।

जिस प्रातःस्मरणीया गोमाताकी रक्षाके लिये अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक परात्परब्रह्म अर्थात् भगवान् श्रीरामका और भगवान् श्रीकृष्णब्रह्मका अवतार होता है, जिस पूज्या गोमाताके परम पवित्र शरीरमें ३३ करोड़ देवी-देवताओंका वास है, वह बस एकमात्र भारतीय नसलकी गोमाता ही है अन्य और कोई नहीं है। जिस प्रकार विदेशोंमें भी नदियाँ तो बहुत मिलेंगी, पर उनमें भवसागरसे पार लगानेकी तनिक भी सामर्थ्य नहीं है, यह अद्भुत विशेषता तो बस एकमात्र हमारे देशकी पवित्र नदी श्रीगङ्गा और श्रीयमुना आदि परम पवित्र नदियोंमें ही है, जिनके हजारों कोसकी दूरीपर भी नाम लेनेमात्रसे अनन्त जन्मोंके पाप-ताप भस्मीभूत हो जाते हैं। आजकी इन वर्णसंकर नकली गायोंका वह अद्भुत महत्त्व कदापि नहीं हो सकता है और इनमें वह अद्भुत विशेषता भी नहीं हो सकती और न वे उस पदके कदापि योग्य ही हो सकती हैं, जो भारतकी असली गोमातामें हुआ करती है।

मृत्युके समय इस भवसागरसे पार लगानेवाली भी हमारी एकमात्र माता गोमाता यह भारतकी असली गोमाता ही है, यह आजकी नकली वर्णसंकर गायें कदापि नहीं हैं। यदि इसी प्रकारसे विदेशी साँड़ोंके वीर्यद्वारा कृत्रिम गर्भाधान कर भारतकी असली गायोंकी नसलको ही समाप्त कर डाला गया तो फिर गोरक्षा-आन्दोलन करना ही व्यर्थ हो जायगा। जिस प्रकार मनुष्योंमें पूज्य भूदेव ब्राह्मणोंकी अद्भुत विशेषता मानी गयी है, इसी प्रकार पशुओंमें पूज्या गोमाताकी अद्भुत विलक्षण विशेषता मानी गयी है। कहा भी गया है—

तुलसी वृक्ष न मानिये, गाय न मानिये ढोर।
ब्राह्मण मनुज न मानिये, तीनों नन्दकिशोर॥

इसीलिये प्रत्येक भारतीय हिन्दूमात्रका यह एक परम कर्तव्य है कि वे भूलकर भी कभी न तो स्वयं अपनी गायोंको कृत्रिम गर्भाधान करायें और इसे कराना बड़ा घोर पाप समझें तथा न दूसरोंको यह घोर पाप करनेकी सलाह

दें, और जो करते हैं उन्हें भी ऐसा घोर पाप करनेसे रोकें। और जो सरकारकी ओरसे इस प्रकार कृत्रिम गर्भाधानके द्वारा पूज्या गोमाताको कष्ट दिया जा रहा है और गोसंवर्धन करनेके नामपर गोमाताओंकी शुद्ध नसलका संहार किया जा रहा है तथा समाप्त किया जा रहा है, इसका भी घोर विरोध कर अविलम्ब इस महान् घोर भयंकर पापको रुकवानेका भरसक प्रयत्न करें।

यह स्मरण रहे कि यदि हम आज कुम्भकर्णी निद्रामें निमग्न रहे और इस ओर हमने तनिक भी ध्यान नहीं दिया तो इस धर्मप्राण भारत देशसे जिस प्रकार असली गोघृतका दर्शन भी महान् दुर्लभ हो गया है और उसकी जगह नकली टी० बी० पैदा करनेवाला घी दिखायी पड़ रहा है, इसी प्रकार भारतकी असली गोमाताकी नसल भी जड़मूलसे समाप्त हो जायगी और फिर यह खाली दूध देनेवाला एक नकली गाय नामका वर्णसंकर पशु तो अवश्य दिखलायी देगा, पर पूजने योग्य और भवसागरसे पार लगानेवाली पूज्या गोमाताका दर्शन करना भी महान् दुर्लभ हो जायगा। भारतकी अद्भुत विशेषता-पूज्य गौ-ब्राह्मण इस धर्मप्राण भारत देशसे सदा-सर्वदाके लिये विदा हो जायँगे। जब इस भारत देशसे पूज्या गोमाता और पूज्य भूदेव ब्राह्मण— ये दोनों अद्भुत रत्न ही मिट जायँगे, तो इनके लिये परब्रह्म परमात्मा जो निराकारसे साकार होकर—***'बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार'*** भगवान् श्रीराम-कृष्णके रूपमें आते और श्रीकृष्ण ब्रह्म नंगे पाँवों जंगल-जंगल गायें चराने जाते हैं और अपना गोपाल नाम रखते हैं, वह फिर किसलिये आयेंगे। भगवान् श्रीकृष्ण गोपाल हैं। वह भैंसपाल, बकरीपाल, सूकरीपाल नहीं हैं।

जिस पूज्या गोमाताकी रक्षाके लिये निरन्तर हजारों वर्षसे गोरक्षकों और गोभक्तोंद्वारा बराबर युद्ध होता रहा और जिस पूज्या गोमाताकी रक्षाके लिये हजारों-लाखों धर्मवीर क्षत्रियोंने हँसते-हँसते अपने प्राणतक न्योछावर कर डाले एवं गोमाताके प्राण बचाये, आज उसी पूज्या गोमाताको स्वतन्त्र भारतमें लाखोंकी संख्यामें धड़ाधड़ काटा जा रहा है और नित्यप्रति बड़ी बेरहमीसे मारा जा रहा है तथा कृत्रिम गर्भाधानके द्वारा गोसंवर्धन करने और नसल सुधार करनेके नामपर जड़मूलसे समाप्त किया जा रहा है। क्या यह हिन्दुओंके लिये डूब मरनेकी बात नहीं है? क्या यह अपने पैरोंपर अपने-आप ही कुल्हाड़ा चलाकर अपना सर्वनाश कर डालना नहीं है? क्या यह हमारी मूर्खताकी पराकाष्ठा नहीं है? आज गायोंको कृत्रिम गर्भाधान करा-कराकर अपनी पूज्या गोमाताके भी आप ही परम शत्रु बन रहे हैं और गोरक्षकसे गोहत्यारे बन रहे हैं यह कितने घोर दुःखकी बात है? यह कितनी लज्जाकी बात है? गोमाताकी असली नसल समाप्त होनेपर जहाँ हमें असली गोदुग्ध, गोघृत, गोदधि आदि अमृत पदार्थोंसे एकदमसे सदा-सर्वदाके लिये वञ्चित हो जाना पड़ेगा, वहाँ हमें मरनेके समय पापी-से-पापी मनुष्यको भी गोदान करनेपर भवसागरसे पार होनेका अनायास सुअवसर प्राप्त हो जाता था, उस अद्भुत लाभसे भी हाथ धोना पड़ जायगा और हमारे परलोकका अन्तिम सहारा भी टूट जायगा। परलोकमें हमारी गोमाताकी उपेक्षाकर इनकी जगह पाले गये कुत्ते कदापि सहायता नहीं करेंगे। यदि लोक-परलोककी एकमात्र कोई सहायक है तो वह बस एकमात्र पूज्या गोमाता ही है। इसलिये प्रत्येक भारतीय हिन्दूका गोमाताकी सेवा करना, गोमाताकी रक्षा करना परम कर्तव्य है।

गो-गुहार !

मातु समान अपान बिसारि सदा दधि-दूधकी धार धरी है।
हाय गरीब अबोलन पै असि काढ़ि कसाइन काट करी है॥
दीन दहारत आरत है, तऊ 'प्रेम' अवाज न कानपरी है।
कोसत भारतवासिन कौं, तबहीं तौ इतै यह गाज गिरी है॥

—प्रेमनारायण त्रिपाठी 'प्रेम'

गोचरभूमिकी महत्ता

[श्रीगौरीशंकरजी गुप्त]

वह भी एक युग था जब हमारे भारतवर्षमें गोचरभूमिकी प्रचुरता थी और निर्धन-से-निर्धन व्यक्ति भी गायें पाल सकता था। गोचरभूमिमें चरनेवाली गायें हरी घास या वनस्पतिके प्रभावसे नीरोग और हृष्ट-पुष्ट रहतीं और उनका दूध सुपाच्य तथा पुष्टिकारक होता था। उन गायोंको मूत्र सर्व रोगों—विशेषकर उदर, नेत्र तथा कर्ण-रोगोंको समूल नष्ट करनेकी क्षमता रखता था। आज गोदुग्ध-गोमूत्रादिमें वैसा चमत्कार न दीखनेका यही मुख्य कारण है कि हमारे देशमें गोचरभूमिकी समुचित व्यवस्था नहीं है। पर, वैदिक युगमें गोचर-भूमिका बड़ा महत्त्व था। ऋग्वेद (१। २५। १६) में एक मन्त्र है—

परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यूतीरनु। इच्छन्तीरुरुचक्षसम्॥

इसका भाव है कि गायें जिस तरह गोचरभूमिकी ओर जाती हैं, उसी तरह उस महान् तेजस्वी परमात्माकी प्राप्तिकी कामना करती हुई बुद्धि उसीकी ओर दौड़ती रहे। ईश्वरकी ओर बुद्धि लगी रहे, यह भाव व्यक्त करनेके लिये गायोंके गोचरभूमिकी ओर जानेका दृष्टान्त दिया गया है। इसी प्रकार ऋग्वेद (१। ७। ३) में एक दूसरा मन्त्र है—

इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्यं रोहयद् दिवि। वि गोभिरद्रिमैरयत्॥

भाव यह है कि सुरपति इन्द्रने दूरसे प्रकाश दीख पड़े, इस हेतु सूर्यको द्युलोकमें रखा और स्वयं गायोंके संग पर्वतकी ओर प्रस्थान किया। दूसरे शब्दोंमें—गायोंको चरनेके लिये पर्वतोंपर भेजना चाहिये। पर्वत भी गोचरभूमिकी श्रेणीमें आते हैं। पर्वतका पर्याय गोत्र है, जिसका एक अर्थ गायोंको त्राण देनेवाला भी होता है। पर्वतोंपर गौओंको पर्याप्त चारा और जल तो सुलभ रहता ही है, उन्हें शुद्ध वायु और व्यायामलाभ भी हो जाता है।

पद्मपुराण, मनु, याज्ञवल्क्य तथा नारदादि स्मृतियोंमें भी गोचरभूमिका वर्णन मिलता है। उन सबका सारांश संक्षेपमें यही है कि यथाशक्ति गोचरभूमि छोड़नेवालेको नित्य-प्रति सौसे अधिक ब्राह्मणभोजन करानेका पुण्य मिलता है और वह स्वर्गका अधिकारी होता है, नरकमें नहीं जाता। गोचरभूमिको रोकने या बाधा पहुँचानेवाले तथा वृक्षोंको नष्ट करनेवाले इक्कीस पीढ़ीतक रौरव नरकमें पड़े रहते हैं। चरती हुई गौओंको बाधा पहुँचानेवालोंको समर्थ ग्रामरक्षक दण्ड दे, ऐसा पद्मपुराणमें कहा गया है।

पद्मपुराणमें वर्णित एक प्रसंगके अनुसार चरती हुई गायको रोकनेसे नरकमें जाना पड़ता है। स्वयं महाराज जनकको चरती हुई गायको रोकनेके फलस्वरूप नरकका द्वार देखना पड़ा था। सावधान रहकर आत्मरक्षा करना कर्तव्य है; पर चरती गायको ही क्या, आहार करते समय जीवमात्रको रोकना या मारना मनुष्यता नहीं है। धार्मिक दृष्टिसे भी ऐसा करना अनुचित है।

पहले कहा गया है कि हमारे देशमें गोचरभूमिकी प्रचुरता थी। इतना ही नहीं; अपितु राजवर्ग तथा प्रजावर्ग दोनोंकी ओरसे गोचरभूमि छोड़ी जाती थी। पुण्यलाभकी दृष्टिसे धर्मशाला, पाठशाला, कूप और तालाब आदि बनवानेकी प्रथाकी भाँति गोचरभूमि खरीदकर कृष्णार्पण करनेकी उस युगमें प्रथा थी। आज भी वे गोचरभूमियाँ विद्यमान हैं और उनके दानपत्रोंमें स्पष्ट अङ्कित है—'इस गोचरभूमिको नष्ट करनेवाले यावच्चन्द्रदिवाकर नरकवास करेंगे।'

गाँवके निकट चारों ओर चार सौ हाथ यानी तीन बार फेंकनेसे लकड़ी जहाँ जाकर गिरे, वहाँतककी भूमि और नगरके निकट चारों ओर इससे तिगुनी भूमि यानी बारह सौ हाथ भूमि गोचारणके लिये छोड़नेका आदेश देते हुए मनुजी कहते हैं कि यदि उतनी भूमिके अंदरकी किसी ऐसी कृषिको, जिसके चारों ओर बाड़ न लगे हों, ग्रामके पशु नष्ट कर दें तो यह उनका अपराध नहीं और इसके लिये उनको राजदण्ड नहीं मिलना चाहिये। (मनुस्मृति ८। २३७-२३८)

महर्षि याज्ञवल्क्यका भी यही मत है। उन्होंने पर्वतकी तराईके गाँवोंके निकट आठ सौ हाथ तथा नगरके निकट सोलह सौ हाथ गोचरभूमि छोड़नेकी व्यवस्था दी है। लिखा है—

धनुःशतं परीणाहो ग्रामे क्षेत्रान्तरं भवेत्।
द्वे शते खर्वटस्य स्यान्नगरस्य चतुःशतम्॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति २। १५७)

यह भी आदेश है कि खेत गाँव तथा शहरसे दूर हों और खेतोंमें बाड़ घनी हो। बाड़की ऊँचाई इतनी हो कि कृषितक ऊँटकी दृष्टि भी न पहुँच सके और न कुत्ते, सूअर आदि ही उसके छिद्रोंसे किसी प्रकार अंदरकी ओर प्रवेश कर सकें। 'नारदस्मृति' के अनुसार बाड़ न लगानेके कारण खेतीको यदि पशु चर जायँ या खेतमें घुसें तो राजा पशुओंको दण्ड नहीं दे सकता, वह उन्हें हँकवा सकता है। बाड़ तोड़कर यदि पशु कृषिको नष्ट करें तो वे दण्डके अधिकारी होंगे।

मनुका भी यह कथन है कि राहके निकट या गाँवके पड़ोसके बाड़ लगे खेतोंमें यदि पशु किसी प्रकार पहुँचकर अनाज खा जायँ तो राजा पशुपालकपर सौ पण दण्ड लगाये, किंतु यदि पशु बिना रखवालेका हो तो उसे सिर्फ हँकवा दे—

पथि क्षेत्रे परिवृते ग्रामान्तीयेऽथवा पुनः।
सपालः शतदण्डार्हो विपालान् वारयेत् पशून्॥

(मनुस्मृति ८। २४०)

महर्षि याज्ञवल्क्यके वचनानुसार राह, ग्राम और गोचरभूमिके निकटके खेतको यदि रखवालेकी अज्ञातावस्थामें पशु नष्ट कर दें तो वह दोषी नहीं होगा। हाँ, यदि खेतको रखवाला जान-बूझकर चरा दे तो वह अपराधी है और चोरकी भाँति उसे दण्ड मिलना चाहिये—

पथि ग्रामविवीतान्ते क्षेत्रे दोषो न विद्यते।
अकामतः कामचारे चौरवद् दण्डमर्हति॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति २। १६२)

अन्तमें एक अत्यन्त रोचक और तथ्यपूर्ण प्रसंग उल्लेख्य है, जिससे गोचरभूमि हड़पनेवाले नराधमोंके पापकी भयंकरतापर प्रकाश पड़ता है। एक बार एक चाण्डालकी पत्नी चिताग्निमें नर-कपाल रखकर उसमें कौवेका मांस पका रही थी और उसको उसने कुत्तेके चमड़ेसे ढँक रखा था। एक व्यक्तिको यह देखकर स्वभावतः कौतूहल हुआ और उसने चाण्डालिनीसे पूछा—'तूने ऐसी घृणित चीजको भी क्यों ढँक रखा है?' उसने कितना मार्मिक उत्तर दिया था—'मैंने इसे इस भयसे ढँक रखा है कि मेरा यह स्थान खेतोंके समीप है। यदि किसी ऐसे महापापी व्यक्तिकी, जिसने गोचरभूमिको अपने खेतमें मिला लिया है, दृष्टि पड़ जायगी तो मेरा यह आहार ग्रहण करने लायक नहीं रह जायगा।'

नृकपाले तु चाण्डाली काकमांसं श्वचर्मणा।
चच्छाद गोचरक्षोणीकृषिकृद्दृष्टिभीतितः॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोचरभूमि छोड़ना महान् पुण्य और उसे नष्ट करना या हड़पना महापाप है। हमारे देशमें गोवधकी भाँति गोचरभूमि भी एक समस्याके रूपमें उपस्थित है। गोचरभूमिका हमारे यहाँ बड़ा अभाव-सा है और उसकी बड़ी दुर्व्यवस्था है।

गोपालनका आधार संतुलित आहार एवं समुचित चिकित्सा

[डॉ० श्रीवीरेन्द्रदत्तजी मुद्गल]

ऋग्वेदके अनुसार कृषि एवं पशुपालनके क्षेत्रमें भारत प्राचीन कालसे ही विशेष सचेष्ट था। ऋग्वेदमें अनेकानेक ऐसे संदर्भ मिलते हैं, जिनमें कृषिके साथ-साथ पशुपालन एवं गौओंका विशेष उल्लेख मिलता है। गौओंके रख-रखाव एवं उनके स्वास्थ्यका वर्णन भी प्राप्त होता है। ऋग्वेदके प्रसिद्ध गोसूक्त (६। २८) के अनुसार उस कालमें गायें ही कृषि एवं अर्थव्यवस्थाका मूल आधार थीं।

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीने श्रीरामचरितमानसमें स्पष्ट-रूपसे लिखा है कि त्रेतायुगमें गौएँ मनचाहा दूध देती थीं—

लता बिटप मागें मधु चवहीं। मनभावतो धेनु पय स्रवहीं॥
ससि संपन्न सदा रह धरनी। त्रेताँ भइ कृतजुग कै करनी॥

(रा० च० मा० ७। २३। ५-६)

किंतु आज स्थिति सर्वथा भिन्न-सी दीखती है। गौओंकी संख्यामें कमी हो जाने तथा ठीकसे गोसेवा न होनेके कारण और भलीभाँति गायोंकी देखभाल एवं चारे-दानेकी कमीके कारण आज गायके दूधका उत्पादन बहुत कम हो गया है।

गौओंद्वारा मनचाहा दूध लेना तभी सम्भव है, जब

उन्हें भरपेट संतुलित आहार मिले। आज देशमें पशुओंके लिये आहार-सामग्रीकी भारी कमी है। गोचर-भूमिका क्षेत्रफल सीमित हो गया है। ऐसी स्थितिमें पशुओंके लिये चारे-दानेकी कमी होना स्वाभाविक है। यह एक मुख्य कारण है कि हमारा गोधन दुग्ध-उत्पादनमें पिछड़ा हुआ है। यदि इसके खानपानपर ध्यान दिया जाय तो निश्चित रूपसे गौएँ अधिक दूध देंगी और हम स्वस्थ रहेंगे।

पशु-आहार

पशु-आहारमें सबसे पहला स्थान स्वच्छ जलका आता है। जल पशुओंके आहारको चबाने, पाचन-क्रिया एवं अवशोषणमें सहायक होनेके अतिरिक्त पचे हुए आहारको शरीरके भिन्न-भिन्न भागोंमें ले जानेमें सहायक होता है। इसलिये पशुओंको स्वच्छ जल प्रचुर मात्रामें मिलना आवश्यक है। दूषित जल पिलानेसे पशुओंमें बीमारी फैलती है। इसलिये यह बात ध्यान देनेकी है कि गायको स्वच्छ जल ही पीनेको दिया जाय।

यह सर्वविदित है कि दुधार गायका दुग्ध-उत्पादन बहुत कुछ उसके खान-पानपर भी निर्भर करता है। विशेष कर गर्मीके मौसममें पशुपालक या तो सूखा चारा खिलाते हैं या फिर बंजर भूमिपर चरने भेज देते हैं। इससे उन्हें पूरे पोषक तत्त्व प्राप्त नहीं हो पाते, जिसका प्रभाव उनके स्वास्थ्यपर तथा दुग्ध-उत्पादनपर निश्चित रूपसे पड़ता है।

वास्तवमें हरा चारा ही गायके लिये समुचित भोजन है। पहले समयमें ग्रामोंके आसपास गोचरभूमि छोड़ी जाती थी, गोचर-भूमि छोड़नेके धार्मिक महत्त्वका विश्वास भी लोगोंके मस्तिष्कमें था। गायें तथा अन्य पशु उस भूमिपर अपने मुँहसे हरी-हरी घास चरते थे और स्वच्छन्द विचरण करनेसे उनका व्यायाम भी हो जाता था। स्वच्छन्द विचरण कर अपने मुँहसे अपनी इच्छासे चरनेवाली गौसे आजकी बँधी हुई गायकी कोई तुलना ही नहीं है। दूधकी मात्रा तथा उसकी गुणात्मकतामें भी दोनोंमें बहुत अन्तर है।

हरे चारेके पोषक तत्त्व सुपाच्य होते हैं जो गायोंको आसानीसे प्राप्त हो जाते हैं। इनमें विटामिन तथा खनिजोंकी प्रचुर मात्रा होती है और स्वादिष्ट होनेके कारण पशु भी चावसे खाते हैं।

सूखा चारा तथा हरा चारा मिला-जुलाकर खिलानेसे भी भोजनके तत्त्व भली प्रकार पच जाते हैं, बरसातके मौसममें हरा मक्का और लोबियाके चारे उत्तम होते हैं। इनका मिला-जुला हरा चारा ४० किलोग्राम और उसमें ४-५ किलो सूखा चारा देनेसे ५ लीटरतक दूध देनेवाली एक गायको संतुलित आहार प्राप्त हो जाता है। सर्दीके मौसममें बरसीम, जई तथा लूसर्न सर्वोत्तम चारे हैं। ३०-३५ किलो बरसीम-लूसर्नका चारा तथा ४-५ किलो सूखा चारा देनेसे ६ लीटरतक दूध देनेवाली गौको सभी तत्त्व प्राप्त हो जाते हैं। बरसीम तथा लूसर्नमें प्रोटीन एवं कैलशियमकी प्रचुर मात्रा विद्यमान होती है। चारेकी बरबादी रोकने तथा सदुपयोग करनेके लिये कुट्टी बनाकर खिलाना चाहिये।

अनुभवके आधारपर यह माना गया है कि दूध निकालते समय २५० ग्राम दाना चारेपर डालनेसे गाय दूधको आसानीसे अयनमें उतार देती है। इस प्रकार प्रतिदिन ५०० ग्राम दाना देना लाभदायक रहता है। बरसातमें ५ लीटर तथा सर्दीमें ६ लीटरसे अधिक दूध देनेपर १ किलोग्राम दाना प्रति ३ लीटर दुग्ध-उत्पादनपर गायोंको देना ठीक होगा। अर्थात् ८ लीटर दूध देनेवाली गायको १$\frac{१}{२}$ किलो दाना प्रतिदिन देना चाहिये।

दानेका मिश्रण तैयार करनेके लिये उसमें काम आनेवाली स्थानीय वस्तुओंका ध्यान रखना आवश्यक है। आर्थिक दृष्टिसे भी यह उचित है कि दानेका मिश्रण तैयार करनेके लिये उन्हीं वस्तुओंको काममें लाया जाय जो कि आसपासके इलाकेमें मिलती हों। उदाहरणके लिये गेहूँकी भूसी ३० प्रतिशत, चूनी १२ प्रतिशत, नमक २ प्रतिशत तथा खनिज मिश्रण १ प्रतिशत मिलानेसे अच्छा दाना तैयार हो जायगा। दूध देनेवाली गायोंके लिये नमक तथा खनिज मिश्रणका विशेष महत्त्व है। एक बारमें कम-से-कम १५-२० दिनके लिये दानेका मिश्रण बनाकर रख लेना चाहिये। दानेके मिश्रणमें जल्दी-जल्दी बदलाव करनेसे दुग्ध-उत्पादनपर विपरीत प्रभाव पड़नेकी आशंका रहती है।

पशु-चिकित्सा

दुधार गायोंको कुछ ऐसी बीमारियाँ लग जाती हैं, जो संक्रामक होती हैं और एक पशुसे दूसरे पशुको शीघ्रतासे लग जाती हैं। इन बीमारियोंको छूतकी बीमारी भी कहते हैं। इनके टीके समय-समयपर डॉक्टरकी सलाहसे लगवाते रहना चाहिये। खुरपका, मुँहपका एक ऐसी ही छूतकी बीमारी है, जिससे प्रायः पशुकी मृत्यु हो जाती है। यदि वह

जीवित भी रहे तो उसकी दूध देनेकी क्षमता बुरी तरह प्रभावित हो जाती है। प्रतिवर्ष इस बीमारीसे देशको करोड़ों रुपयोंकी हानि होती है। यदि सावधानी बरती जाय और समयसे इसका रोधक टीका लगवा दिया जाय तो बहुमूल्य गायोंका बचाव हो सकता है।

खुरपका, मुँहपकाकी बीमारीसे ग्रसित होनेपर गाय सुस्त हो जाती है, बुखार तेज हो जाता है और जीभ, होठ, मसूड़ों तथा खुरोंके बीच छाले निकल आते हैं। मुँहसे झागदार लार लगातार अधिक मात्रामें निकलती है तथा वह होठोंको बराबर चलाती रहती है। गाय चारा तथा दाना खाना छोड़ देती है और धीरे-धीरे लँगड़ाना आरम्भ कर देती है। यह बीमारी काफी दिनोंतक रहती है, इसलिये दुधार गाय काफी कमजोर हो जाती है और उसका दूध देना एकदम कम हो जाता है।

अब यह प्रश्न उठता है कि यदि रोग फैल ही जाय तो क्या करें? बीमारीकी आशंका होते ही गायको अन्य पशुओंसे अलग कर दें और उसकी देख-भाल किसी दूसरे सदस्यसे करायें। साथ ही निकटके पशु-चिकित्सा-केन्द्रसे सम्पर्क करके सहायता प्राप्त करें। सभी स्वस्थ पशुओंको बीमारीका टीका लगवा दें। इलाजकी अपेक्षा बचाव कहीं अधिक लाभदायक रहता है। मुँहपका, खुरपका बीमारीका टीका मार्च-अप्रैलमें प्रतिवर्ष लगवा दें। सबसे पहला टीका लगभग तीन माहकी आयुमें और उसके बाद प्रतिवर्ष लगवायें। इसी प्रकार गलघोंटूका टीका मई-जूनमें वर्षा आरम्भ होनेसे पहले लगवायें। सबसे पहला टीका ६ माहकी आयुमें और उसके बाद प्रतिवर्ष लगवायें। जहरबाद बीमारीका टीका भी मई तथा जूनमें ही लगवायें। इसके लिये भी पहला टीका ६ माहकी उम्रमें उसके पश्चात् प्रतिवर्ष लगवाना चाहिये।

गोशालाकी सफाईपर भी विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है। चूनेसे छतों तथा दीवारोंकी समय-समयपर पुताई और कीटनाशक दवाओंका छिड़काव लगातार कराना चाहिये। पशुशालाके दरवाजोंपर फिनाइल तथा मैलाथियॉनका घोल छिड़कना चाहिये। ध्यान रहे कि झाड़ू तथा यह छिड़काव और सफाई दूध दुहनेसे कम-से-कम १$\frac{1}{2}$ घंटा पहले या बादमें करें। अन्यथा धूल आदिके कण दूधमें गिरकर उसे दूषित करेंगे और कीटाणु-नाशक घोलकी दुर्गन्ध दूधमें समा सकती है। यदि दूध निकालनेवाली स्त्री या पुरुष एक ही है तो पहले स्वस्थ पशुकी खिलायी-पिलायी करनेके बाद ही अस्वस्थ पशुकी देखभाल करें और स्वस्थ पशुके समीप आनेसे पूर्व अपने हाथ-पैर साफ करके पोटेशियम परमेंगनेटके घोलमें डुबोकर स्वच्छ कर लें।

गायमें सूखा काल इसलिये आता है कि वह जितनी शक्ति पिछले ब्याँतमें नष्ट कर चुकी है उसे पूरा कर ले और आगे आनेवाले ब्याँतके लिये पूरी तैयारी कर ले। यदि गाय ब्यानेसे पूर्व अच्छी हालतमें नहीं होगी तो उसका बुरा प्रभाव आनेवाले नवजात तथा दुग्ध-उत्पादनपर निश्चित रूपसे पड़ेगा। गाभिन गायको ब्यानेसे दो माह पूर्वसे एक किलो अतिरिक्त दानेका मिश्रण, हरा चारा या साइलेज, नमक तथा खनिज मिश्रणकी विशेष मात्रा देनी चाहिये। ऐसा देखा गया है कि वर्षके काफी भागमें गाभिन गायोंको हरा चारा प्राप्त नहीं होता। विशेष रूपसे गरमीके मौसममें यह समस्या और भी विकट हो जाती है और बरसातके मौसममें यानी अगस्त या सितम्बरमें जब वह ब्याती है तो उसके दूधमें विटामिन 'ए' की भारी कमीके कारण नवजातोंको आवश्यकतानुसार विटामिन 'ए' नहीं मिल पाता, जिसके कारण वे बीमारियोंसे रक्षा करनेमें असमर्थ रहते हैं। इसलिये गरमीके मौसममें गायको विटामिन 'ए' की पूर्तिके लिये थोड़ा-बहुत हरा चारा अवश्य मिलना चाहिये। एक किलो लहलहाते हरे चारेमें लगभग १५०० अन्ताराष्ट्रिय यूनिट विटामिन 'ए' पाया जाता है। यदि गाभिन-अवस्थामें गायको प्रतिदिन ३ किलोग्राम हरी घास या हरा चारा मिलता रहे तो उनके विटामिन 'ए' की मात्राकी पूर्ति हो सकेगी। यदि हरा चारा नहीं है तो हरी पत्तियाँ भी वही काम करेंगी। अन्यथा विटामिन 'ए' बाजारमें भी उपलब्ध होता है। उससे प्रतिदिनकी पूर्ति की जा सकती है।

इस प्रकार एक संतुलित आहार और उचित देख-रेख तथा चिकित्सा पानेवाली गाय भरपूर दूध देगी और हमें अमूल्य भोजनके साथ स्वास्थ्य तथा खुशहाली भी प्रदान करेगी। तभी हमारी गौमाताका दिव्य प्रभाव अक्षुण्ण रहेगा। अत: गौओंकी देख-रेखमें विशेष सावधानी बरतनी चाहिये।

गायोंके खुराककी विवेचना

खुराक—

१-चारे-दाने भाँति-भाँतिके होने चाहिये। एक ही प्रकारका चारा-दाना खाते-खाते गाय ऊब जायगी और उसकी रुचि कम हो जायगी। गायके लिये सानी मौसमके अनुकूल बदल-बदलकर करना चाहिये इससे वह खुश और तंदुरुस्त रहेगी।

२-चारे-दानेके मेल करनेमें पशुकी आदतका भी ध्यान रखना चाहिये। हर एक पशु एक ही प्रकारकी सानी नहीं खा पाते। कोई-कोई पशु-जाति किसी विशेष चीजको पसंद करती है।

३-यदि उन्हें नयी तरहकी खुराक खिलानी हो, तो धीरे-धीरे और थोड़ी-थोड़ी मात्रामें खिलाकर आदत डालनी चाहिये। साइलेज-कूपके चारे पहले-पहल जानवर नहीं खाते, परंतु एक बार आदत पड़नेपर वे उसे रुचिसे खाने लगते हैं।

४-चारे-दानेकी प्रत्येक खुराकमें नमक और पानीका मिलाना जरूरी है, क्योंकि इस प्रकारकी मिलायी हुई सानी सरलतासे पच जाती है। किंतु कई स्थानोंमें सूखे दाने और खलीके देनेकी भी प्रथा है।

५-जाड़ोंमें दाना देरमें फूलता है, इसलिये छः-सात घंटेतक उसे भिगोना चाहिये। रातमें नमक और खली मिलाकर दाना भिगो दे और इससे सुबहकी सानी करे। सुबहको भिगोया हुआ दाना-खली शामकी सानीके काममें लाये। ठंडके दिनोंमें गायको बिनौला उबालकर और उसमें गुड़ मिलाकर खिलाये। इससे दूधमें मक्खन तथा मिठासका अंश बढ़ जायगा।

६-गर्मीके दिनोंमें अधिक देरतक भिगोनेसे दाने और खलीमें खटास आ जाती है, इसलिये सानी करनेके केवल तीन-चार घंटे पहले ही इन्हें भिगोये।

इस मौसममें गायको बिनौला खिलाना ठीक नहीं है। किंतु यदि थोड़ा-सा बिनौला ठंडे पानीमें चार-पाँच घंटोंतक भिगोकर, जौके दलियेके साथ दिया जाय तो हानि नहीं करेगा।

७-चारेमें भीगा हुआ दाना-खली-नमक मिलाकर सानीको खूब पलट देना चाहिये, ताकि सभी चीजें भलीभाँति मिल जायँ।

८-चारा अच्छी तरह बारीक कटा होना चाहिये। महीन कटा हुआ चारा जल्दी पचता है और सानी करनेपर वह अच्छी तरह मिल जाता है। मोटा कटा हुआ चारा इधर-उधर बिखरकर बेकार और खराब हो जाता है।

९-सूखे चारेके बजाय हरा चारा रसीला होनेके कारण जल्दी पचता है और जायकेदार भी होता है। हरे चारेमें विटामिन 'ए' खूब होता है, किंतु सूखे चारेमें यह नहीं होता। इस विटामिनकी कमीका पशुपर बहुत बुरा असर पड़ता है। इससे उसकी रोग-निवारक-शक्ति, आगामी नस्ल और आँखें कमजोर हो जाती हैं। लूसर्न, बरसीम और दूब आदिकी हरी घासोंमें यह विटामिन खूब होता है।

१०-चारेको ठीक समयपर जब कि पौधोंमें दूध-भरे बीज भर आयें, किंतु पककर सूखनेके पहले ही काट ले और अच्छी तरहसे सुखाकर साफ-सुथरे और ऊँचे स्थानपर रखे। जरा-सा भी गीला रहने या सीलन-भरे स्थानोंमें रखनेसे चारा सड़ जायगा। ध्यान रहे कि चारा कहीं बहुत ज्यादा न सूख जाय, क्योंकि ऐसे चारेमें अधिकांश विटामिन बहुत कम रह जाते हैं और वह साररहित हो जाता है।

११-हरे चारेको संचित कर रखनेकी उपयोगी विधि साइलेज-कूपकी है। इस विधिसे संचित चारा हरा बना रहनेके कारण पोषक तत्त्वोंवाला होता है। इसको खिलानेके बाद दाना देनेकी खास जरूरत नहीं पड़ती।

१२-बीजरहित सूखे चारेमें पोषक तत्त्व तथा विटामिन 'ए' नहीं होते, इसलिये केवल भूसेपर ही रखी गयी गायका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता। किंतु आम तौरपर खुराकमें चारेका थोड़ा-सा सूखा अंश भी रहना चाहिये।

१३-खुराककी चीजें अच्छी और बढ़िया किस्मकी हों। पशुओंको सड़ा-गला दाना-चारा और खराब रोटी कभी न खिलाये। बढ़िया किस्मका दाना-चारा लाभदायी होनेके कारण ज्यादा महँगा न पड़ेगा।

१४-पशुको बहुत ज्यादा दाना खिलाना भी ठीक

नहीं, क्योंकि इससे उसकी पाचनशक्तिपर जरूरतसे ज्यादा भार पड़ जाता है, इस कारण पशुका गोबर और मूत्र दूषित हो जाता है।

१५-आवश्यकतासे अधिक दाना तथा खली खिलानेसे गायकी केवल चर्बी ही विशेष बढ़ जायगी, इस कारण वह दूध देना कम कर देगी। मोटी और मांसल गाय जल्दी गाभिन भी नहीं हो पाती, क्योंकि उसके शरीरमें हारमोन्स अच्छी तरह विकसित नहीं होते, इसी कारण ऋतुके लक्षण प्रकट होनेमें देर लगती है। ऐसी मोटी गायको मीठी—जैसे गुड़, शीरा और कार्बोहाइड्रेटवाली चीजें—नहीं देनी चाहिये। अधिक मात्रामें मीठी चीजोंके खानेसे प्रजनन-शक्तिपर बुरा असर पड़ता है।

१६-कम खुराक पानेके कारण दुबले तथा कमजोर हुए जानवरकी भी दूध देने, प्रजनन तथा काम करनेकी शक्ति कम हो जायगी। कमजोर गाय देरमें गाभिन होगी और उसका बच्चा भी पूर्ण बलवान् न होगा। ऐसे पशुको पौष्टिक चारा-दाना खिलाकर उसकी हालत सुधारनी चाहिये।

१७-गायको ऐसा चारा-दाना देना चाहिये, जिसे वह सहजहीमें लौटा कर जुगाली कर सके। अच्छी तरह जुगाली न की जा सकनेवाली खुराक पचने नहीं पाती।

१८-गायकी खुराक 'चारा-दाना, खली-नमक' की कीमत देश-काल तथा स्थितिके अनुसार कम-ज्यादा होती रहती है, किंतु साधारणतया खुराककी कीमत गायके दूधकी कीमतके $\frac{3}{4}$ या $\frac{2}{3}$ के अनुपातमें होनी चाहिये।

१९-पशुको चरनेके लिये अवश्य भेजना चाहिये। जाड़ा, गर्मी तथा बरसात आदि सभी ऋतुओंमें अपनी रुचिके अनुसार हरियाली चरते हुए पशुका शरीर-संचालन भलीभाँति हो जाता है और इस प्रकार वह स्वस्थ एवं प्रसन्न रहता है।

२०-दुहनेके पहले गायको भर-पेट खुराक जरूर ही खिला देनी चाहिये। खाली पेट दूध दुहनेसे गायके अवयवोंपर बहुत जोर पड़ता है।

२१-गाय एक स्वच्छताप्रिय जीव है। इसकी नाँद तथा खुराककी चीजें दोनों ही साफ होनी चाहिये। मिट्टी, गोबर या अन्य अशुद्धियाँ मिल जायँ तो वह ऐसी सानी नहीं खायेगी।

२२-कुत्ते, सूअर, बकरी और मुर्गी आदि जानवरोंको चारा-दानावाले स्थानके निकट नहीं जाने देना चाहिये, क्योंकि वे मुँह डालकर उसे गंदा कर देंगे और बीमारी फैलायेंगे।

दूध देनेवाले पशुओंको खिलाने-योग्य चारे—

१-ज्वारकी चरी—यह चारोंमें मुख्य है, क्योंकि इसे हरी, सूखी या साइलेज-कूपमें भर कर सभी तरहसे खिलाते हैं। किंतु हरी चरी ही उत्तम चारा है।

२-सरसोंकी चरी—हरी नरम और सिंगरीदार सरसों दूसरे चारोंके साथ मिलाकर खिलानी चाहिये। यह दूध बढ़ानेवाली और गर्म-तासीरकी होती है।

३-जौ तथा जई (सेऊँ)-की चरी—ये पौधे दूधर-दानोंके भर आनेपर हरे-हरे खिलाये जाते हैं। ये दुग्ध-वर्धक हैं। जौका तो सूखा भूसा भी खिलाया जा सकता है, किंतु जई (सेऊँ)-का भूसा बेकार होता है।

४-मटरका पौधा—नर्म फलियोंके भर आनेपर इसे खिलाये। इसमें सड़नेवाले कार्बोहाइड्रेट बहुत होते हैं, अतएव इसे जौ आदिके चारे या भूसेके साथमें मिलाकर ही खिलाना चाहिये।

५-हरे मक्केकी करबी—पानीका प्रबन्ध करे मक्काको चैत्रमें बो दे और ज्येष्ठसे भाद्रपदतक ग्वार और लोबियाके पौधोंके साथ मिलाकर इसकी हरी करबी खिलाये। गर्मीके दिनोंमें—साइलेजके अतिरिक्त यही एक (करबीकी) हरियाली मिल सकती है।

६-हरी ग्वार और लोबियाकी करबी—चैतसे भादोंतक बोये और मक्केकी चरीके साथ खिलाये।

७-उर्द तथा मूँगका हरा पौधा—इसे भादोंसे कार्तिकतक बोये और नरम फली-सहित अन्य चारोंके साथ खिलाये। उपर्युक्त दालके पौधोंके चारोंमें प्रोटीनके तत्त्व खूब होते हैं।

८-गेहूँका हरा पौधा—यह दूधर-दानों-सहित खिलाया जाय, तो बहुत लाभकारी होगा। गेहूँ निकालकर इन पौधोंका सूखा भूसा ही प्राय: खिलाया जाता है, किंतु यह भूसा पोषक नहीं होता।

९-चना और मसूरका पौधा—चनेके पौधेमें भी क्षार बहुत अधिक होता है, इसलिये इसे भी दूसरे चारोंके साथ मिलाकर ही खिलाये।

१०-लूसर्न और बरसीम—ये दोनों तरहकी घासें बहुत पोषक हैं। यदि काफी तादादमें दी जायँ तो पशुको

दाना देनेकी जरूरत नहीं पड़ती।

११-दूब, हलीम और झरुआ आदि तरह-तरहकी घासें अच्छी होती हैं। इनमें दूब सर्वश्रेष्ठ है। झरुआ भी एक अच्छी और दानेदार घास है। इसे भरपेट देनेपर दानेकी जरूरत नहीं पड़ती।

१२-गाजर और मैंगोल्डकी कंद पोषक और दूध बढ़ानेवाली होती है।

१३-मोठका पौधा बहुत गर्म होता है, अतः इसे ऽ२ या ऽ२॥ से ज्यादा न दे और सदा दूसरे चारोंके साथ मिलाकर ही खिलाये। ये सभी चारे बैल और साँड़को भी खिलाये जाते हैं। आवश्यकता पड़नेपर बैलोंको तो बाजरेकी हरी चरी या गन्नेके अगौले भी खिलाये जा सकते हैं, परंतु गायोंको नहीं।

दूध देनेवाले पशुओंको खिलाने योग्य दाने—

१-गेहूँका दलिया और चोकर बहुत बढ़िया होता है।

२-चनेका दाना और चूनी मिली हुई भूसी
३-अरहरकी चूनी-भूसी
४-मूँगकी चूनी-भूसी।
५-मसूरकी चूनी-भूसी।
— इन दानोंमें प्रोटीन-प्रधान तत्त्व बहुत होते हैं और भूसीमें फासफोरसका काफी अंश होता है, अतः इनका खिलाना अच्छा है।

६-जौका दलिया। यह भी बहुत अच्छी चीज है।

७-बिनौले उचित मात्रामें तथा ऋतुका ख्याल करके उबालकर या भिगोकर दे।

८-खली सरसों और लाही, तिल, मूँगफली, अलसी तथा बिनौले आदिकी खिलाये।

९-ग्वारका चना दलकर और उबालकर या भिगोकर दे। यह ज्यादा देनेपर कब्ज करता है।

१०-गुड़ और शीरा थोड़ा-सा खिलाये।

११-राँधी हुई चीजें जैसे—दालका पानी, चावलका माँड़, रोटी और थोड़ा-सा दलिया दिया जा सकता है।

ऊपर लिखी हुई चीजें साँड़ों तथा बैलोंको भी हितकारी हैं। उन्हें उर्दकी चूनी-भूसी भी खिलायी जा सकती है। ज्वारका दाना भी उनके लिये बलवर्धक खुराक है। साँड़को अंकुर आये हुए चनोंमें नमक मिलाकर खिलाना गुणकारी है।

दूध देनेवाले पशुओंको न खिलाने योग्य चारे—

१-मक्केकी सूखी चरी।

२-बाजरेकी हरी तथा सूखी चरी।

३-गन्नेकी पत्तियाँ (अगौले)।

४-चनेके पौधोंका भूसा।

५-ग्वारकी सूखी लकड़ीका भूसा।

६-चना और कँगनीकी सूखी पुराली।

७-धानका सूखा हुआ पुआल।

८-हरी या सूखी सनकी पत्ती, जो बहुत गर्म होती है। यह केवल दवाके काममें आती है।

९-ऐसी फसलें जो केवल मात्र शहरके गंदे नालोंके पानीसे सींचकर तैयार की गयी हों। ये नाइट्रोजनकी अधिकताके कारण ऊपरसे सुन्दर और पुष्ट दिखायी देती हैं, किंतु पौष्टिक तत्त्वरहित होती हैं और कभी-कभी रोगका कारण भी बन जाती हैं।

उपर्युक्त चीजें बैलोंको भी नहीं खिलानी चाहिये, किंतु उन्हें गन्नेके अगौले और बाजरेकी हरी चरी दी जा सकती है।

दूध देनेवाले पशुओंको न खिलाने योग्य दाने—

१-उरदकी दाल तथा चूनी और भूसी खिलानेसे यद्यपि एक बार गायका दूध बढ़ जाता है, तथापि दुग्धवाहिनी नाड़ियोंपर विशेष दबाव पड़ जानेके कारण भविष्यमें उसका दूध कम हो जाता है।

२-चनेकी निरी भूसी, जिसमें चूनी या दालका काफी अंश न हो, नहीं खिलानी चाहिये। अधिक फासफोरसके कारण यह दूध और खूनको सुखा देती है।

३-मटरका दाना बहुत बादी तथा वायु बढ़ानेवाला होता है। अन्य दानोंके साथमें मिलाकर देनेसे यह हानि नहीं करता।

४-बाजरेका दाना गर्म और दूधको सुखा देनेवाला होता है।

५-ज्वारका दाना विशेष गर्म और दूधको सुखानेवाला होता है, किंतु यह बैलोंके लिये बलवर्धक है।

६-सूखी रोटी, सड़ी दाल, गंदी जूठन आदि वस्तुएँ भी कभी न खिलाये।

गो-चिकित्सा

गो-चिकित्सा पुण्य है

आज भारत-जैसे निर्धन एवं पिछड़े हुए देशमें, जहाँ लाखों-करोड़ों मनुष्योंके स्वास्थ्यकी किसीको चिन्ता नहीं, मूक पशुओंकी चिकित्साके विषयमें सोचना कुछ व्यक्तियोंकी दृष्टिमें एक हास्यजनक बात होगी। किंतु विचार करके देखें तो बात ऐसी नहीं है। पशुओंके स्वास्थ्यपर ही मनुष्योंका स्वास्थ्य निर्भर करता है। कुछ लोग तो ऐसे हैं, जो पशुओंके स्वास्थ्यको उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते हैं; परंतु अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं, जो आकांक्षा रहनेपर भी पशुओंके बीमार होनेपर या किसी दूसरे समय उन्हें कौन-सी दवा अथवा पथ्य देना चाहिये, किन-किन कारणोंसे उनमें भाँति-भाँतिके रोग आते हैं और किस प्रकार वे पूर्ण स्वस्थ रह सकते हैं—यह नहीं जानते।

प्राचीन भारतमें तो पालकाप्य-जैसे महर्षि तथा ऋतुपर्ण, नल एवं नकुल-जैसे महाराज गो-चिकित्सक एवं पशु-चिकित्सक थे। अग्निपुराण और गरुडपुराण, बृहत्संहिता एवं सुश्रुतके चिकित्सा-ग्रन्थोंमें गो-चिकित्सापर बहुत कुछ लिखा गया है। परंतु आजकी स्थिति बड़ी विकट है। कुछ भोले धर्मभीरु भाइयोंकी तो यह धारणा हो गयी है कि देवी-तुल्य गोमाताके शरीरमें अस्त्र-प्रयोग करना सबसे बड़ा पाप है। वैसे चाहे वह सड़-गलकर तड़फती रहे और अपने इस भौतिक शरीरको छोड़ भी दे। दूसरे, यह भी एक भय है कि ओषधि करते हुए यदि दुर्भाग्यवश यथायोग्य ओषधि न दी जा सके और कुचिकित्साके कारण गायके प्राण चले जायँ तो चिकित्सकको गो-हत्याका महान् पाप लगेगा। तीसरे, गो-चिकित्साद्वारा अर्थ उपार्जन करना पाप है; पर बिना कुछ लिये चिकित्सा करनेको न तो समय है और न मन ही। इन्हीं भ्रान्त, शास्त्र-असम्मत एवं घातक धारणाओंके पीछे पड़कर कोई भी भला गो-चिकित्साके क्षेत्रमें प्रवेश नहीं करना चाहता, अतएव गो-चिकित्साका यत्किंचित् भार मूर्खोंके हाथमें भी पड़ा हुआ है।

उपर्युक्त विषयोंपर पूर्णरूपसे विचार करनेपर ज्ञात होता है कि गो-चिकित्साके विषयमें लोगोंमें फैली हुई यह धारणा न तो शास्त्रसम्मत है न नीतिसम्मत और न यह बुद्धिवादकी दृष्टिसे ही ठीक है। भला जरा सोचें तो सही—जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त ही नहीं, मृत्युके पश्चात् भी हमारी सब प्रकारके सेवा करनेवाली माता गौके बीमार होनेपर या आहत होनेपर उसकी चिकित्सा करना पापकी श्रेणीमें गिना जायगा कि महान् पुण्यमें? हमारे विचारसे तो ऐसी गायोंकी चिकित्सा, सेवा एवं शुश्रूषा करनेसे पाप होना तो दूर रहा, कर्ताके जन्म-जन्मान्तरके अनेकों पाप नष्ट हो जाते हैं।

आपस्तम्ब और संवर्त आदि स्मृतियोंके वचनोंसे यह बात और भी पुष्ट हो जाती है कि उपकारकी दृष्टिसे गो-चिकित्सा करते समय यदि कुछ हानि भी हो जाय तो उसमें भली नीयतसे काम करनेवालेको कोई अपराध नहीं लगता—

यन्त्रणे गोचिकित्सार्थे मृतगर्भविमोचने।
यत्ने कृते विपत्तिश्चेत् प्रायश्चित्तं न विद्यते॥

(आपस्तम्ब० १। ३१-३२)

औषधं स्नेहमाहारं ददद् गोब्राह्मणेषु च।
दीयमाने विपत्तिः स्यात् पुण्यमेव न पातकम्॥

(संवर्त०, श्लोक १३८)

अर्थात् यत्नपूर्वक गो-चिकित्सा करने अथवा गर्भसे मरा हुआ बच्चा निकालनेमें यदि गायपर कोई विपत्ति भी आ जाय तो प्रायश्चित्त करनेकी आवश्यकता नहीं है। यदि गौ और ब्राह्मणको उनके लाभके लिये कोई औषध, तैल, आहार आदि दिया जाय और उससे उनपर कोई विपत्ति आ जाय तो भी पाप नहीं होता, वरं पुण्य ही होता है।

शास्त्रोंके वचनोंसे ज्ञात होता है कि पाप और पुण्य मनुष्यकी भावनापर निर्भर है। हम गुस्सेमें आकर किसीके शरीरपर साधारण-सी चोट लगा देते हैं तो पाप हो जाता है; किंतु डॉक्टर लोग बड़े-बड़े ऑपरेशन कर डालते हैं और कइयोंके अङ्ग भी काट डालते हैं, फिर भी वे पुण्यात्मा समझे जाते हैं, इसका कारण यही है कि हमारा कृत्य हिंसा, द्वेष एवं परपीडनकी भावनासे भरा होता है और डॉक्टरका काम देखनेमें अत्यन्त दोषपूर्ण होते हुए भी प्रेम, उपकार एवं हितकी पवित्र भावनासे प्रेरित है। वस्तुतः क्रियाका महत्त्व भावनाके सामने बिलकुल गौण है। बस, गो-चिकित्साके विषयमें हमें इस सिद्धान्तको सामने रखकर बिना किसी प्रकारके संकोचके कार्य करना चाहिये। जिस प्रकार मनुष्यकी डॉक्टरी चिकित्सामें काटना, चीरना आदि आवश्यक होनेके कारण किसीको उसमें घृणा नहीं है और सभी तरहके लोग निःसंकोच भावसे यह कार्य करते हैं, उसी प्रकार गो-चिकित्साके विषयमें सभी तरहके सुयोग्य पुरुषोंको पूरे उत्साहके साथ भाग लेना चाहिये। ऐसा करनेसे ही हम अपने कर्तव्यका पालन कर सकेंगे।

गायोंके रोग, उनके लक्षण और चिकित्सा

पशुओंको भी रोग उतना ही कष्ट देते हैं, जितना कि मनुष्योंको। अन्तर इतना ही है कि हम मनुष्य विवेक-साधन तथा उपायोंद्वारा किसी सीमातक रोग दूर करके कष्टका निवारण कर लेते हैं; किंतु बेचारे मूक, असहाय, विवश तथा केवल पूँछ हिलानेतकका उपाय कर सकनेवाले पशु रोगग्रसित होकर कष्टोंको सहते रहते हैं। पर मनुष्य-जातिकी शोभा इसमें नहीं है। जिसने अपनी बुद्धि तथा सामर्थ्यका उपयोग अपने ही लिये किया, उसने क्या किया? मनुष्यका यह कर्तव्य है कि परिवारके प्राणीके समान एक ही घरमें रहनेवाले अपने पशुओंके भी दुःखको दूर करनेके लिये कुछ उठा न रखे। सोचा जाय तो ऐसा करनेमें वह पशुओंके ऊपर कोई एहसान नहीं करेगा, यह उसका धर्म है; क्योंकि मनुष्यने ही तो उन्हें प्रकृतिकी गोदीसे छीनकर अपने कामके लिये अपने घरमें बाँध रखा है। जंगली पशुओंकी दवा करने कौन जाता है? प्रकृति माता स्वयं उनकी देख-भाल करती है। अतः यदि मनुष्य प्रकृति माताके इन पशुओंके दुःख-सुखकी परवा नहीं करता तो यह उसकी कृतघ्नता है। और वह प्रकृतिदेवीका कोप-भाजन बनकर दण्डका भागी होगा।

हमारे शास्त्रोंमें कहा हुआ है कि जबतक रोगिणी, भयभीत, (चकित), बाघ अथवा चोर आदिसे सतायी हुई, ऊँचे स्थानसे गिरी हुई, दलदलमें फँसी हुई, सर्दी-गर्मीसे पीडित तथा अन्य किसी प्रकारसे दुःखित गौका उद्धार न कर ले तबतक आर्यसंतान कोई दूसरा कार्य न करे यथा—

आतुरां मार्गत्रस्तां वा चौरव्याघ्रादिभिर्भयैः।
पतितां पङ्कलग्नां वा सर्वोपायैर्विमोचयेत्॥
ऊष्मे वर्षते शीते वा मारुते वाति वा भृशम्।
न कुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वा तु शक्तितः॥

तात्पर्य यह कि जिस प्रकार अपने किसी घरवालेको खाँसी-बुखार हो जानेपर हम वैद्यके पास दौड़ने लगते है, उसी प्रकार अपने पालित पशुओंके रोगोंको दूर करनेके लिये भी हमें सचेष्ट होना चाहिये।

पशुओंकी रोगावस्थामें पशुशालाका प्रबन्ध

किसी पशुके रोग-ग्रस्त हो जानेपर उसे पशुशालासे हटाकर किसी अलग स्थानमें रखना चाहिये। इस प्रकार दूसरे नीरोग पशुकी रक्षा होगी। यदि छूतकी बीमारी न हो, तो भी रोगी पशुको अलग हटा देना ही ठीक है; क्योंकि प्रेम, द्वेष तथा सहानुभूतिका भाव पशुओंमें भी होता है। जब अन्य पशु अपने किसी साथीको दुःखी या उदास देखेंगे तो वे भी उदास होकर खाना-पीना छोड़ सकते हैं। रोगी पशुका दाना-पानी दूसरे पशुओंके दाना-पानीमें न मिलने पाये।

रोगी पशुकी देख-भाल

रोगी पशुकी देख-भाल बड़ी सावधानीसे करनी चाहिये। उसको ऐसे स्थानपर रखना चाहिये, जहाँ हवा और प्रकाश अच्छी तरह आये-जाये; किन्तु पशुके ऊपर न हवाका झोंका सीधा लगे, न तो धूप लगे। मक्खी-मच्छरोंसे बचानेके लिये गूगल, गन्धककी धूप या साधारण धुआँ कर देना चाहिये। पशुको दवा आदि पिलाते समय उसके साथ बहुत जबर्दस्ती करके उसे अधिक कष्ट न दिया जाय। यदि पशु एक दिनसे अधिक एक करवट पड़ा रहे तो उसे करवट बदलानेकी चेष्टा करनी चाहिये। रोगकी पहचान या निदान जल्दबाजीमें नहीं, वरं ठीकसे किसी चतुर व्यक्ति या चिकित्सकसे कराना चाहिये। अच्छे हो जानेपर उसे अन्य पशुओंके साथ मिलानेमें बहुत जल्दी करना ठीक नहीं। कोई तेज या जहरीली दवा लगानी हो तो ध्यान रखना चाहिये कि इधर-उधर न लग जाय। मालिकको ऐसे पशु केवल नौकरोंके भरोसेपर ही न छोड़कर स्वयं भी देखने चाहिये।

रोग होनेके सामान्य कारण

१-चारा-दाना आवश्यकतासे कम मिलना, २-खुराकमें आवश्यक पौष्टिक तत्त्वोंका मेल न होना, ३-सड़ा-गला दाना-चारा खाना तथा गंदा पानी पीना, ४-गंदे स्थान, अधिक सर्दी-गर्मी और वर्षासे बचनेका प्रबन्ध न होना तथा ५-छूतकी बीमारियोंसे स्वस्थ पशुओंको बचानेके विषयमें गोपालककी अनभिज्ञता।

रोगी पशुके लक्षण

१-दूध कम देना या न देना, २-उदास रहना, ३-झुंडसे अलग रहनेकी इच्छा, ४-चारे-दानेका त्याग, ५-जुगाली न करना, ६-गोबर न करना या पतला करना ७-बार-बार उठना-बैठना, ८-आँखोंका लाल हो जाना, ९-जल्दी-जल्दी साँस लेना, १०-मुख सूखना और ११-मुख तथा नाकसे पानी गिरना।

स्वस्थ गाय, बैल और भैंस का तापमान प्रायः १०१° से १०४° तक होता है, नाड़ीकी गति प्रतिमिनट ४५ से ५० बारतक है और साँस प्रतिमिनटमें १०-१२ बार आती है। इससे विपरीत हो तो पशुको रोगी समझना चाहिये।

दवाकी मात्रा

रोगी पशुओंके लिये आगे जो दवाओंकी मात्रा लिखी गयी है, वह पूरे प्रौढ पशुके लिये है, जिसका वजन १० मनके लगभग हो। अवस्था तथा वजनके अनुसार इस मात्रामें अन्तर पड़ेगा।

जन्मसे १ मासतक	१/१६	मात्रा
२ माससे ४ मासतक	१/८	''
४ '' ६ ''	१/४	''
६ '' १२ ''	१/३ या १/२	''
१ सालसे २ सालतक	१/२ या ३/४	''
२ सालसे ऊपर	पूरी मात्रा	

एक रोगकी कई-कई दवाइयाँ आगे दी गयी हैं, उनमेंसे कोई एक करनी चाहिये। एक लाभ न करे तो दूसरीका प्रयोग करना चाहिये।

छोटे बच्चोंके रोग और उनकी चिकित्सा

मनुष्यके बच्चोंकी भाँति गाय-भैंसके बच्चे भी मिट्टी चाटनेमें बड़े हातिम होते हैं। कभी-कभी वे इतनी मिट्टी चाट जाते हैं कि वह उनके पेटमें सड़ जाती है और कीड़े पड़ जाते हैं। कीड़े पड़ते ही बच्चा निर्बल होकर प्रायः मर जाता है। पहली रोक तो यह है कि बच्चोंके मुँहमें मुसका (जालो) चढ़ा दें, जिससे वे मिट्टी न चाट सकें और यदि कीड़े पड़ गये हों तो आधी छटाँक कबीला पीसकर आध पाव दहीमें मिलाकर देनेसे लाभ होता है।

कभी-कभी बच्चोंके पेटमें दूध जम जाता है, जिससे पाचनशक्ति मारी जाती है। इस रोगमें मट्ठा एक पाव, सरसोंका तेल आध पाव तथा नमक आधी छटाँक मिलाकर बच्चेको पिलाना चाहिये। इसमें एक छटाँक अमकलीको पानीमें भिगोकर और आध पाव सरसोंके तेलमें मिलाकर देना भी लाभकारी है।

यदि सड़ा-गला दाना-चारा खा लेनेसे अथवा गर्म और गंदा पानी पी लेनेसे बच्चेको पेचिश हो गयी हो और गोबरके साथ खून आता हो, तो आध पाव लिसोढ़ाके पत्तोंको पानीमें पीस-छानकर पिलाना चाहिये अथवा आधी छटाँक ईसबगोल एक छटाँक आँवलेके पानीमें देनेसे बहुत लाभ होता है।

जब बच्चेको खाँसी हो जाय तो केलेके सूखे पत्तोंकी राख बना ले और एक पैसेसे दो पैसे भरतक इस राखको आधी छटाँक घीमें मिलाकर एक पाव कच्चे दूधके साथ बच्चेको पिलाना चाहिये।

मूत्रके साथ खून आनेपर कलमी शोरा चौथाई छटाँकसे आधी छटाँकतकका एक पाव कच्चे दूध और इतने ही पानीके साथ पिला देना चाहिये।

पेटमें दर्द हो तो चौथाईसे आधी छटाँकतक पीनेका तमाकू-पानीमें घोल-छानकर पिलाना ठीक है।

खुजलीकी भयंकर बीमारी भी बच्चोंको प्रायः हो जाती है। इसके लिये निम्नलिखित पाँच प्रकारकी दवाइयाँ हैं—

१-छटाँकभर लहसुनको आध पाव चने या जौके आटेमें मिलाकर पाँच दिनतक खिलाये।

२-सूखे नीमके पत्तोंका चूरा नमकमें डालकर चने या जौके आटेके साथ मिलाकर देना चाहिये।

३-मसूरकी दाल तथा सुपारी दोनोंको जलाकर इनकी राखको नीमके तेलमें डालकर शरीरमें लेप करे।

४-पीली सरसोंको कपड़े धोनेवाले साबुनमें मिलाकर शरीरमें लेप कर दे और ४-६ घंटे-पीछे फिनाइलके पानीसे नहला देना चाहिये।

५-एक पाव कड़ुवे तेलमें एक छटाँक गन्धक मिलाकर रख ले और शरीरपर लेप करता रहे।

यदि बच्चेके मसूढ़े फूल गये हों और उनमें घाव हो गये हों तो उन्हें माँसे अलग करके नीचे लिखी दवा करनी चाहिये—

एक पाव घी और एक छटाँक एप्सम साल्ट मिलाकर पिलाना चाहिये। घी न मिल सके तो कोई दूसरी जुलाबकी दवा दे देनी चाहिये। बच्चेके मुँहको फिटकिरीके पानीसे भलीभाँति दिनमें चार बार धोना चाहिये।

रोग साधारणतः तीन प्रकारके होते हैं—(१) छूतवाले, (२) बिना छूतवाले साधारण और (३) शरीरके ऊपरके साधारण रोग।

छूतके रोग

छूतवाले रोग बड़े भयंकर और बड़ी जल्दी फैलनेवाले होते हैं। इनसे अपने पशुओंकी सदा रक्षा करते रहना चाहिये। इन रोगोंसे पशुओंको बचानेके लिये नीचे लिखे उपाय करने चाहिये।

१-जिस इलाकेमें छूतकी बीमारी हो गयी हो वहाँ अपने पशु न जाने दे, न वहाँके पशु अपने गाँवमें आने दे।

२-अपने पशुओंकी देख-भाल ठीकसे करे तथा उन्हें सड़ा-गला चारा-दाना न खिलाये।

३-जहाँ सब पशु पानी पीते हों उस तालाब या नदीमें पानी न पिलाकर अपने पशुओंको कुएँसे पानी खींचकर पिलाये।

४-छूतकी बीमारीसे मरे हुए पशुको गाड़ देना चाहिये।

५-पशु-डॉक्टरसे अपने पशुओंको टीका लगवा ले।

१-माता (Rinderpest)

इसके कई नाम हैं, पर इसके मुख्य लक्षण हैं—आँखोंसे पानी और मुँहसे लार गिरना, शरीर काँपना, कमरका टेढ़ी हो जाना, मुँहमें छाले पड़ना और अत्यन्त बदबूदार पतला गोबर होना तथा उसमें कुछ खून आना।

इसकी सर्वश्रेष्ठ दवा टीका लगवाना है। अच्छे जानवरोंको 'गोट वीरस या सीरम साइमल्टेनियस मेथड' (Goat virus or serum simultaneous method) से रिंडरपेस्टका टीका लगवा देनेपर फिर यह बीमारी नहीं आती। रोग हो गया हो तो उसकी दवाइयाँ ये हैं—

१-रातको मिट्टीके बर्तनमें एक पाव आँवला भिगोकर सबेरे छान ले, फिर उस पानीमें एक पाव दही, एक छटाँक ईसबगोल और आध पाव शक्कर डालकर दिनमें दो बार खिलाये। आँवला न मिले तो धनियाका पानी काममें लाये।

२-बाँसी घासके बीज १ सेर बारीक पिसवाकर रख ले और आधा पाव सबेरे तथा आधा पाव शामको दही या मट्ठाके साथ देनेसे बड़ा लाभ होता है।

२-जहरी बुखार अथवा गड़ी वा सूत
(Anthrax)

यह रोग रक्तके विकारसे होता है। पशुको बेचैनी होती है, आँखें बाहर निकल-सी पड़ती हैं, ज्वर बहुत हो जाता है और गोबर काले रक्तसे सना हुआ होता है। रोग होनेपर पशुचिकित्सकको शीघ्र बुलाना चाहिये औ तबतक नीचे लिखी दवाइयोंमेंसे कोई पिलानी चाहिये—

१-तारपीनका तेल आधी छटाँक।

२-फिनाइल आधी छटाँक।

३-अलसीका तेल आधी छटाँक।

४-गरम पानी आध सेर।

३-गलघोंटू (Haemorrhagic Septicaemia)

यह रोग क्या है मानो मृत्युकी सूचना है। इससे गलेमें सूजन हो जाती है और पशुका गला घुटने लगता है। प्रायः यह आश्विनके महीनेमें होता है। यह रोग रक्त-दोषसे होता है। नाक-मुँहसे लार टपकती है। मुँहमें दुर्गन्ध और जीभपर घाव हो जाता है। गोबर-मूत्र बंद हो जाता है। इसकी दो-तीन दवाइयाँ हैं, सम्भव है लाभ कर जायँ।

१-दो सेर घी, १ सेर एप्सम साल्ट, १ पाव काली मिर्च और १ पाव काला जीरा मिलाकर पिला दे।

२-जमालगोटेका तेल ३० बूँद, मीठा तेल ५ छटाँक और अलसीका तेल ५ छटाँक पिलाये तथा फिटकिरीके पानीसे मुँह धोये।

३-गन्धकका चूर्ण २ तोले तथा सोंठका चूर्ण १ तोला आध सेर भातके या तीसीके माँड़* के साथ मिलाकर खिलाना चाहिये। इससे दस्त होकर रोग मिट जाता है।

४-फेफड़ेका बुखार या छूतका निमोनिया
(Contagious pleuro-pneumonia)

यह रोग रोगी पशुसे छू जाने, उसके फोड़ा-फुंसीकी मवाद लगने या उसके मुँहके सामने साँस लेनेसे होता है। इससे फेफड़ेपर असर होता है। पशुकी भूख कम हो जाती है, दूध घट जाता है, हल्का ज्वर सदा बना रहता है। धीरे-धीरे पशु अशक्त होकर पैर पीटने लगता है।

बुखारकी दवा ही इसमें देनी चाहिये। नीम, सफेदा, मरुआके पत्ते या तारपीनका तेल पानीमें डालकर उबालिये और उसकी भापमें पशुको साँस लेने दीजिये। १ हिस्सा तारपीनका तेल १० हिस्सा तिलके तेलमें मिलाकर छातीपर मालिश करनी चाहिये।

ऐसे रोगी पशुका दूध नहीं पीना चाहिये। बहुत लाचारी हो तो खूब उबाल लेना चाहिये।

५-खुर तथा मुँहका पकना
(Foot and mouth disease)

इस रोगमें पशुके मुँह तथा खुरमें घाव हो जाते हैं, जिससे पशु चारा-पानी छोड़ देता है और निर्बल हो जाता है। यह रोग हवाके द्वारा भी फैलता है। एक पशुको होते ही बहुतोंको हो जाता है। ऐसी स्थितिमें निम्नलिखित उपायोंसे लाभ होता है।

१-अमकली आधा पाव, कटेली पीलीका फूल १ छटाँक—इन दोनोंको औटाकर काढ़ा बनाकर पिलाये।

२-पुराना गुड़ १ सेर तथा सौंफ १ पाव १ सेर पानीमें औटाकर पिलाये।

* पाँच सेर जलमें डेढ़ पाव तीसी डालकर नरम आँचसे घंटा भर उबाले। उबालते समय बराबर हिलाते रहना चाहिये, नहीं तो जल जायगी। फिर पतले कपड़से छान ले। बस, यही तीसीका माँड़ है।

३-आधा सेर एप्सम साल्ट गर्म पानीमें डालकर पिलाना चाहिये।

उपर्युक्त दस्तावर दवाइयाँ पेट साफ करनेके लिये हैं। इसके बाद और दवा भी करनी चाहिये—

[१] आँवलेके पानी, बबूलकी छाल-उबाले हुए पानी, फिटकिरी या सुहागेके पानी अथवा तूतियाके पानीसे मुँह और पैर धोये। आँवलेका पानी पिलाये। नीमका तेल या कोलतार पैरोंके घावपर लगाये।

[२] खड़िया मिट्टी २ छटाँक, कोयला आधी छटाँक, फिटकिरी आधी छटाँक, तूतिया (नीलाथोथा) चौथाई छटाँक—इसके चूरनको घावपर भुरभुराना चाहिये।

[३] कपूर, तारपीनका तेल, नीलाथोथा और पत्थरका कोयला मिलाकर घावपर लगाना चाहिये।

[४] बेरके पत्तोंको उबालकर उस जलसे खुरोंको धोना चाहिये। खानेके लिये सूखी घास, चोकर या सहज पचनेवाली चीज देनी चाहिये।

६-छूतसे गर्भ गिरना (Contagious Abortion)

समयसे पहले ही गाय-भैंसोंका बच्चा फेंक देना साधारण बात है, किंतु यह भयानक रोग है। आगे चलकर यह अन्य पशुओंमें भी फैल जाता है। तेज भागनेसे, छलाँग मारनेसे, मर्मस्थलपर चोट लग जानेसे, तोपके शब्दसे तथा किसी विषैली चीजके खानेसे गर्भपात हो जाता है।

सबसे पहले, गिरे हुए बच्चेको अलग कर देना चाहिये। मरा बच्चा हो तो दूर गड्ढेमें दबवा देना चाहिये। गरम पानीमें पोटाश, फिनाइल अथवा नीमके पत्ते डालकर पशुके गर्भस्थानको पिचकारीद्वारा धो देना चाहिये। ८ बूँद कार्बोलिक एसिड गरम पानीमें डालकर पशुको पिलाना चाहिये। पीनेको गरम पानी दीजिये। पशुको १ महीनेतक साँड़के पास न जाने दीजिये। गर्भपातके साथ पशुने जेर न फेंका हो तो निम्नलिखित दवाओंसे उसे अवश्य निकालनेका प्रयत्न करना चाहिये—

१-पुराना गुड़ या साफ शीरा २ सेर, अजवाइन २ छटाँक, सोंठ २ छटाँक, पीपल १ छटाँक और पीपलामूल आधी छटाँक—सबका काढ़ा बनाकर गर्मीमें केवल रातको और सर्दीमें दो बार देना चाहिये।

२-जंगली तरोई १ पाव, नमक आधा पाव, अजवाइन आधा पाव तथा गरम पानी आधा सेर दिनमें दो बार देना उपयोगी माना गया है।

३-एक सेर मिश्रीके टुकड़े-टुकड़े करके गायको खिला दे, इसके पीछे बहुत-सा पानी पिलानेसे जेर अवश्य निकल जाता है।

४-दो सेर छिलके सहित धान खिलानेसे भी जेर गिर जाता है।

५-दो सेर तिल खिलाना भी लाभदायक है।

७-खूनी पेशाब (Red Water)

यह रोग भी कीटाणुओंद्वारा खूनमें विकार पैदा होनेसे होता है। बीमार पशुको काटकर मच्छर जब अच्छे पशुको काटता है, तब उसे भी हो जाता है। पशुको तेज बुखार हो जाता है, आँखें पीली पड़ जाती हैं और पेशाबमें खून आता है।

इस रोगमें एक नीली दवाका—जिसे 'ट्रिपनब्लू' (Trypen blue) कहते हैं—इंजेक्शन दिया जाता है।

८-दूधका ज्वर (Milk-Fever)

इस रोगमें पशुकी आँखें चढ़ जाती हैं, वह खड़ा नहीं रह सकता, पैर पेटके नीचे सिकोड़ लेता है और सिर एक ओर मोड़ लेता है। गर्दन सीधी करनेपर फिर वैसा ही कर लेता है। थन सूज जाते हैं और पशु घबराता है।

रसकपूरकी उड़दके बराबर डली हरे केलेको चीरकर उसके बीचमें रख दे और पशुको खिला दे। थोड़े कपूरयुक्त या सादे तेलकी मालिश करनी चाहिये।

९-माता या चेचक (Cow-Pox)

यह रोग मनुष्योंकी भाँति पशुओंके लिये उतना कष्टप्रद नहीं है, फिर भी सावधान रहना चाहिये; क्योंकि रोग रोग ही है। इस रोगमें शरीरमें दर्द होता है, गाय सोना चाहती है कुछ खाती नहीं, उसे निगलनेमें कष्ट होता है। कभी-कभी पेशाब और गोबर रुक जाता है। थन या शरीरपर छोटी-छोटी फुंसियाँ निकलती हैं और १०—१५ दिन बाद सूख जाती हैं। ऐसे पशुको अलग रखकर उसको खाना-पानी देना या दुहना सफाईके साथ करना चाहिये। पशुको कोई जुलाबकी दवा या १ सेर एप्सम साल्ट गरम पानीमें मिलाकर पिला देना चाहिये। ऐसी गायका दूध निकालकर फेंक देना चाहिये या खूब उबालकर दही, घी बनाकर काममें लाना चाहिये।

माता पकनेसे ही पहले सेमल-रूईके बीज खिला देनेसे बड़ा लाभ होता है। पहले दिन तीन बारमें ५० (२५, १८, ७), दूसरे दिन दो बारमें २५ (१५, १०) और तीसरे दिन एक बार

केवल १०। बहुत कमजोर पशु हो या छोटी उम्र हो तो कम खिलाना चाहिये।

१०-गजचर्म (Mange)

यह एक प्रकारकी भयंकर खुजली है जो पहले थुई और पूँछपर होती है, फिर धीरे-धीरे सारे शरीरमें फैल जाती है। पशु खुजलाते-खुजलाते घाव कर लेता है, चमड़ी मोटी पड़ जाती है।

जहाँपर खाज हो, वहाँके बाल काटकर गरम पानी और साबुनसे साफ कर देना चाहिये, फिर गोबर और सरसोंका तेल मिलाकर तथा पशुको धूपमें खड़ा करके १०-१५ मिनटतक मालिश करनी चाहिये। मालिशका तेल इस प्रकार बना ले तो और भी अच्छा है। गन्धक १ भाग, घी या तिलका तेल ८ भाग और नीमका तेल चौथाई भाग। गन्धकको महीन पीसकर सब चीजें मिला लीजिये और आगमें भलीभाँति गरम करके मालिश कीजिये। खानेकी दवा भी देनेसे जल्दी लाभ होगा।

खानेका नमक १ छटाँक, महीन पिसी हुई गन्धक आधा तोला आध सेर पानीमें घोलकर पिला देना चाहिये या रोटीमें रखकर खिला देना चाहिये।

खुजली और दाद भी ऐसे ही रोग हैं, पर गजचर्मसे कम भयंकर हैं। इनकी भी दवा प्रायः वही है।

११-कीड़ोंमें दुंबल या मनिया फूटना (Warble Flies)

जिन पशुओंको खरहरा नहीं होता या मल-मलकर जो नहलाये नहीं जाते, उनको यह रोग हो जाता है। वर्षाके अन्तमें इस रोगके कीड़े शरीरपर आ जाते हैं और गर्मीके आरम्भमें अच्छी तरह बढ़ जाते हैं। इस रोगसे पशुको कोई विशेष कष्ट तो नहीं होता, किंतु उसकी खाल रद्दी हो जाती है। अतः इस रोगसे पशुकी रक्षा करनी चाहिये।

चूने और तमाकूके गर्म पानीसे पहले पीडित स्थानको धो देना चाहिये, फिर ढाई सेर पानीमें एक छटाँक ताजा चूना मिलाकर उसमें एक पाव महीन पीसी हुई तमाकू खूब मिलाकर घोल लेना चाहिये। २४ घंटे रखनेके बाद पतले कपड़ेसे छान लेना चाहिये और तब चूना पोतनेवाली मूँजकी कूँची बनाकर उससे यह दवा अच्छी तरह उस स्थानपर लगानी चाहिये। ध्यान रखना चाहिये कि दवा छेदोंसे भीतर पहुँच जाय। यह दवा तैयार न हो तो नीमका तेल लगा देना चाहिये। २ तोला खारी नमक और आधा तोला गन्धक एक पाव गुनगुने पानीमें घोलकर पशुको एक सप्ताहतक पिलाना चाहिये। कब्ज करनेवाली खुराक कम देनी चाहिये।

१२-जूँ (Lice)

यह रोग भी स्पर्शमात्रसे एक पशुसे दूसरे पशुको लग जाता है, किंतु यह उतना हानिकारक नहीं होता। यह प्रायः बच्चोंको होता है। १ भाग तमाकू और २ भाग हाथ-मुँह धोनेका साबुन ४० भाग पानीमें डालकर उबाल लें, फिर ठंडा हो जानेपर १ भाग मिट्टीका तेल मिलाकर मालिश करें।

१३-किलनी (Ticks) लग जाना

थन, पूँछ, कान तथा अन्य स्थानोंमें किलनी चिपट जानेसे पशुको बड़ा कष्ट होता है और उसका दूध कम हो जाता है। पशुओंको किलनियोंके कष्टसे बचाना आवश्यक है।

१-एक भाग नील, २ भाग गन्धक या वैसलीन या कड़ुआ तेल ८ भाग मिलाकर लगानेसे किलनी मर जाती है।

२-नमक ४ भाग, मिट्टीका तेल १ भाग और कड़ुआ तेल ४ भाग मिलाकर लगानेसे भी किलनियोंका नाश होता है।

बिना छूतके साधारण रोग

यद्यपि बिना छूतके रोग उतने भयंकर नहीं होते जितने कि छूतवाले, फिर भी इनमेंसे कोई-कोई ऐसा हो जाता है, जो आगे चलकर बढ़ जाता है और पशुको उससे बचाना कठिन हो जाता है। रोगके समय दवाकी अपेक्षा पशुके रहन-सहन तथा खाने-पीनेकी सुन्दर व्यवस्था होनी चाहिये। दवा तो केवल रोगको थामने अथवा पशुको असली हालतमें जल्दी लानेमें सहायक मात्र है, वास्तवमें उचित देखभालसे ही अधिकांश रोग नष्ट हो जाते हैं। पशुके रहनेका स्थान साफ रखना, उसे हल्का, सहजमें पच जानेवाला और स्वादिष्ट भोजन तथा कुएँका स्वच्छ जल पीनेको देना एवं उसे अलग रखकर अधिक सर्दी-गर्मीसे बचाना ही उसकी देखभाल करना है। यह जानवर है, इसका रोग यों ही अच्छा हो जायगा—ऐसा न सोचकर उसके रोगकी उचित चिकित्सा करनी चाहिये।

१-अपच

कभी सर्दी-गर्मी लगनेसे या कम-ज्यादा खा लेनेसे पशुको अपच हो जाता है। ऐसी दशामें पशु पूरा खाना नहीं खाता, ठीकसे जुगाली नहीं करता और सुस्त रहता है। ऐसी स्थितिमें—

खारा नमक आध सेर और २ तोला सोंठको कूट-पीसकर आध सेर गुनगुने पानीमें घोलकर पिला देना चाहिये। इससे दस्त होने लगेंगे। दस्त न हो तो आधी खुराक फिर देनी चाहिये।

दस्त होनेके अगले दिनसे सोंठ १ तोला, राई १ तोला, अजवाइन २ तोला, सेंधा या साँभर नमक सवा तोला कूट-पीसकर पावभर गरम पानीके साथ कुछ दिनतक सुबह पिलाना चाहिये। यह दवा पिलानेके २ घंटे बादतक पशुको पानी नहीं पिलाना चाहिये।

२-अफरा या पेट फूलना

यह रोग अधिक चरनेसे या बहुत चारा-दाना खा जानेसे होता है। पशुका पेट फूलकर ढोलकी तरह हो जाता है। बायीं ओर सूजन हो जाती है। इसमें नीचे लिखी कोई दवा पिलानी चाहिये।

१-आध सेर एप्सम साल्ट या १ सेर नमक सरसों या रेंड़ीके तेलमें मिलाकर।

२-आमका अचार आध पाव और उसका तेल आध पाव।

३-गाजरकी काँजी १ सेर।

४-आध पाव राई पीसकर गरम पानीके साथ।

५-सोंठ १ छटाँक, हींग ४ माशे, काला नमक १ छटाँक, लाहौरी नमक १ छटाँक, सोंचल नमक १ छटाँक—सबको पीसकर गरम पानीके साथ।

३-पेटमें कीड़े पड़ जाना (Tape Worms)

कभी-कभी पशुओंके पेटमें केंचुए (कीड़े) पड़ जाते हैं, जिससे वह दुर्बल हो जाता है। ये कीड़े गोबरके साथ निकलते हैं। गोबरमें कीड़े दीख पड़ें तो इस प्रकार दवा करनी चाहिये।

१-सुपारीका चूर्ण ४ तोला १ सेर दूधमें मिलाकर दिनमें दो बार ३ दिनतक दीजिये।

२-आधी छटाँक तारपीनका तेल और आध सेर अलसीका तेल हर आठवें दिन महीने भरतक पिलाइये।

४-पेचिश या आँव पड़ना (Dysentery)

जब पशु बार-बार रक्त तथा आँव-मिला हुआ गोबर करे, तब समझना चाहिये कि उसे पेचिशका रोग हो गया है। इसमें—

पहले आधा सेर एप्सम साल्ट गरम पानीके साथ दे या सरसों, रेंड़ी, अलसी और तिलमेंसे—किसीका आध सेर तेल १ छटाँक सौंफके साथ पिला दे; फिर एक छटाँक बेलगिरी और एक छटाँक ईसबगोलके छिलकेको एक सेर चावलके माँड़में मिलाकर पिलाना चाहिये या सूखा आँवला २ तोला, सोंठ १ तोला और शक्कर या बताशा २ तोला आध सेर पानीमें पीस-छानकर दे अथवा जस्ता दो आना भर खड़िया मिट्टीका चूर्ण ढाई तोले और अफीम चार आना भर भातके गाढ़े माँड़के साथ दिनमें दो बार दे। बछड़े-बछड़ीके लिये खड़िया मिट्टी सवा तोला, अफीम दो आना भर और रेवाचीनी १२ आना भर चूर्ण करके तीसीके माँड़के साथ देना चाहिये।

५-पेट चलना या दस्त लगना (Diarrhoea)

इस रोगवाला पशु पतला गोबर करता है। यह अजीर्णका चिह्न है। जल्दी दवा न करनेसे रोग बढ़ जानेसे पशु मर जाता है। इसके बचावके लिये—

१-आधी छटाँक पीसा हुआ काला नमक और एक तोला हीरा कसीस मिलाकर जौके आटेमें चार दिनतक देना गुणकारी है।

२-सौंफ एक तोला,अजवाइन एक तोला, इलायची बड़ी एक तोला तथा चिरायता तीन तोला कूटकर आध सेर जौके आटेमें चार दिनतक खिलाये।

३-चार आने भर पीसा हुआ नीलाथोथा आध सेर गरम पानीमें घोलकर पिलाना चाहिये।

४-एक छटाँक सूखा या हरा बेलका गूदा तथा खड़िया मिट्टी सवा तोला आध सेर गौके मट्ठेमें मिलाकर सबेरे-शाम पिलाये।

५-कत्था आधी छटाँक, ईसबगोल एक छटाँक, खड़िया मिट्टी एक छटाँक, अफीम २ माशा, बेलगिरी एक छटाँक, और रसौत दो माशे—इन सबको कूट-पीसकर दिनमें दो बार देना चाहिये।

६-पलासका गोंद सवा तोला, चिरायता पौन तोला, खड़िया मिट्टी ६ आना भर, अफीम १ आना भर भातके माँड़के साथ खिलाना चाहिये।

६-गलेमें कुछ अटकना (Throat-Choking)

कभी-कभी कोई कड़ी या गोल चीज पशुके गलेमें अटक जाती है, जिससे पशु खाना-पीना छोड़ देता है। उसका गला घुटने लगता है। यदि शीघ्र ही अटकी हुई चीज निकालनेका प्रयत्न न किया गया तो पशुकी मृत्यु हो जाती है। इसके लिये—

पहले मुँहमें हाथ डालकर चीज बाहर निकालनेकी चेष्टा करनी चाहिये। बाहर न निकले तो लंबी-पतली और चिकनी लकड़ीसे धक्का देकर उसे भीतर ठेल देना चाहिये। गलेमें वैसलीन या तेलकी मालिश करे और आधा सेर कड़ुआ तेल पशुको पिला दे या थोड़े तिलके तेलमें थोड़ा सुहागा

मिलाकर पिला देना चाहिये।

७-पित्ती उछलना

मनुष्योंकी भाँति पशुओंको भी कभी-कभी पित्ती उछल आती है। शरीरमें बड़े-बड़े चकत्ते पड़ जाते हैं और खाज होने लगती है। ऐसे पशुको जुलाबकी दवाई देकर कम्बल या झूल उढ़ा देना चाहिये फिर नीचे लिखनेमेंसे कोई एक दवा पिलानी चाहिये।

१-आध पाव गेरू और आध पाव शहद पाव भर गरम पानीके साथ पिलाये।

२-नीमके पत्ते ३ तोला, अडूसा (बासा) के पत्ते ३ तोला, शीशमके पत्ते ३ तोला—इन सबको आध सेर पानीमें उबाल ले, जब डेढ़ पाव रह जाय तब ठंडा करके पिला दे।

८-खाँसी (Bronchitis)

पशुओंके समस्त रोगोंमें यह बहुत बुरा रोग है। इस रोगके अधिक बढ़ जानेसे गाभिन पशु कभी-कभी बच्चा फेंक देता है। इस रोगकी चिकित्सा तुरंत करनी चाहिये।

१-नौसादर, सोंठ तथा अजवाइन एक-एक तोला लेकर पावभर गरम पानीके साथ पिलाने चाहिये।

२-एक छटाँक नमककी डली लेकर कुछ आकके पत्तोंमें लपेटकर रातमें भून लीजिये। सबेरे नमकको पावभर गरम पानीके साथ लगातार ३ दिनतक पिलाइये।

३-एक छटाँक सूखे अनारके छिलकेको पीसकर एक छटाँक मक्खनके साथ खिलाइये।

४-केलेके सूखे पत्तोंकी राख २ तोला, मक्खन ४ तोला तथा कच्चा दूध १० तोला ३ दिनतक दीजिये।

५-आध सेर अलसीके तेलके साथ १ तोला तारपीनका तेल पिलाना भी लाभदायक है।

६-कपूर छः माशा, कलमी शोरा एक तोला, अजवाइन २ तोला, सोंठ २ तोला, नौसादर १ तोला, अलसी पीसी हुई १ छटाँक—इन सबको कूट-पीसकर गुड़के साथ दिनमें तीन बार खिलाना चाहिये।

९-निमोनिया (Pneumonia)

बहुधा यह रोग शीतलकालमें होता है। सर्दी लग जानेसे पशुको ज्वर आ जाता है। नाकसे पानी बहता है और खाँसी भी कुछ-कुछ आने लगती है। इस स्थितिमें पशुको गरम स्थानमें रखना चाहिये और पीठपर कम्बल या झूल डाल देना चाहिये। ओषधियाँ नीचे लिखी हैं—

१-सोंठ २ छटाँक, अजवाइन २ छटाँक तथा चायकी पत्ती आधी छटाँक, मेथी २ छटाँक तथा गुड़ या शीरा आध सेर औटाकर दिनमें २ बार पिलाना चाहिये।

२-आध सेर पीसा हुआ नमक और एक छटाँक अजवाइन लेकर दो बलवान् पुरुषोंसे मालिश करा दे।

३-कपूर ४ माशा तथा लहसुन एक पाव—दोनोंको मिलाकर खिला दीजिये।

४-खानेको प्याज दे और उसका पानी निकालकर तथा नमक डालकर पिलाये।

५-आध सेर अलसी और एक सेर चावल दोनोंको उबालकर गरम पानीमें मिलाकर खिलाये।

१०-पेशाबमें खून आना

बीमारी, चोट लगने या अधिक गर्मीसे यह रोग हो जाता है। इस रोगमें बबूलके पत्ते ४ छटाँक और हल्दी २ तोला पीसकर सुबह-शाम पिलाये अथवा आध सेर दूधमें बारीक पीसी हुई फिटकिरी १ तोला मिलाकर कई दिनतक पिलाये।

११-पेशाब न होना

यह रोग पुट्ठेकी कमजोरी या पथरी हो जानेसे होता है। सूखा चारा खिलाने और कम पानी पिलानेके कारण भी हो जाता है। इसमें शोरा १ तोला, धनिया २ तोला और कपूर ३ माशा घोट-पीसकर ठंडे पानीमें घोलकर पिलाना चाहिये। नीमके पत्ते उबालकर और नमक मिलाकर मूत्र-स्थानपर लगाइये।

१२-पेशाब टपकते रहना

यह रोग भी प्रायः पथरी हो जानेसे होता है। अतः पशुओंके डॉक्टरसे ऑपरेशनद्वारा पथरी निकलवा डालनी चाहिये। दवा नीचे लिखी है—

१-मक्काकी बाल २ छटाँक तथा काली मिर्च एक तोला पीसकर सबेरे-शाम पिलाइये।

२-मक्काकी बाल न मिले तो खरबूजेके छिलके एक पाव एक तोला काली मिर्चके साथ पीसकर पिलाइये।

१३-फोतोंका सूजना

कभी चोटसे, कभी बादीसे या कभी इस रोगके कीटाणुओंसे फोते सूज जाते हैं। पशुको बड़ा कष्ट होता है, वह पिछले पैर फैलाकर चलता है। निम्न उपचार करने चाहिये—

१-गीले कपड़ेसे बार-बार ठंडा पानी फोतोंपर डालकर ठंडक पहुँचाइये।

२-हल्दी, चूना, फिटकिरी—सबको बारीक पीसकर कड़ुआ तेलमें मिलाकर गरम कर ले और फोतोंपर सुहाता हुआ लेप करे।

३-इमलीके पत्ते और नमक पीसकर गरम कर ले और फोतोंपर लगा दे।

यदि बादीसे सूज गये हों रेंडीका तेल ३ छटाँक और त्रिफलाका पानी पावभर मिलाकर पिलाइये तथा तमाकूके पत्ते गरम करके बाँधिये।

१४-मिरगी (Apoplexy)

यह रोग प्राय: बच्चोंको होता है या किसी कारणसे सिरकी ओर रक्तका बहाव हो जानेसे बड़े पशुओंको भी हो जाता है। पशु सहसा काँपने लगता है, गिर जाता है, नेत्र लाल हो जाते हैं। इसके लिये—

रोगीको दिनमें चार बार ठंडे जलसे स्नान कराना चाहिये। दवाएँ नीचे लिखी हैं—

१-बबूल और बेरके आध-आध पाव कोमल पत्ते पीसकर आध सेर ठंडे पानीमें पिलाइये।

२-ढालके बीज एक तोला, अनारकी छाल एक तोला, सौंफ एक तोला, अमलतास १ तोला—इन सबको आध सेर पानीमें पकाये, जब पानी पावभर रह जाय तब गुनगुना पानी पिला देना चाहिये। इसके बाद मीठा सरसों या अलसीका आध सेर तेल तथा आधी छटाँक तारपीनका तेल पिलाये। बेहोशीकी दशामें रीठेका छिलका पीसकर सुँघावे या कंडेकी राखमें आकका दूध मिलाकर सुँघाये।

१५-ज्वर (Fever)

खाने-पीनेकी गड़बड़ीसे, मौसम बदलनेसे या मच्छर काटनेसे पशुको ज्वर हो जाता है। इसमें निम्न उपचार करे—

१-आठ औंस एप्सम साल्टमें ४ माशा कुनैन मिलाकर गरम पानीमें घोल ले, फिर ४ माशा कपूर और ८ माशा शोरा मिलाकर दिनमें ३ बार पिलाये।

२-गोमा घासके फूल एक छटाँक और काली मिर्च एक तोला आध सेर पानीमें गरम करके पिलाये।

३-शोरा सवा तोला, नमक ढाई तोला तथा चिरायता ढाई तोला आध पाव राब या गुड़में मिलाकर खिला दीजिये।

१६-बिल्ल या सफेद झागवाला कीड़ा

घासमें एक प्रकारका कीड़ा होता है, जिसको खा जानेसे पशुका शरीर अकड़ जाता है, हाथ-पैर न हिलाकर वह चुपचाप पड़ा रहता है। ऐसी दशामें उसे आरामसे पड़े रहने देना चाहिये। उसके ऊपर कम्बल डालकर ऊपर छाया भी कर देनी चाहिये। इसके लिये निम्न उपचारका प्रयोग कर सकते हैं।

१-एक सेर प्याज खिलाकर थोड़ी देरके लिये उसका मुँह बाँध दीजिये।

२-आध पाव सज्जी पानीमें घोलकर पिलाइये।

३-एक तोला पिसी हुई काली मिर्च पावभर घीमें मिलाकर और गरम करके पिला दीजिये।

१७-ताव या घामड़ा (Sunstroke)

कड़ी गरमीमें लू लगनेसे या धूपमें अधिक समयतक काम करनेसे यह रोग हो जाता है। पशु छाया या पानीमें बार-बार बैठता है, कम खाता है और दुबला होता जाता है। इसके लिये नीचे लिखे उपचारका प्रयोग करे।

१-कच्चे आमका पना सबेरे-शाम पिलाइये।

२-पावभर सफेद तिल रातको भिगो दीजिये और सबेरे पीसकर सात दिनतक पिलाइये।

३-शीतकालमें यह रोग हुआ हो तो पुरानी मूँज १ पाव काटकर उसे एक सेर गुड़में डालकर अच्छी तरह औटाना चाहिये और दिनमें दो बार ४ दिनतक देना चाहिये या पशुकी पूँछमें थोड़ा नश्तर लगाकर २ रत्ती अफीम भर दे और पट्टी बाँध दे।

४-यदि ग्रीष्म-ऋतु हो तो आध सेर मसूरकी दाल उबालकर और ४ तोला नमक डालकर ४ दिनतक खिलाये।

५-शीशम, लिसोड़ा और बबूल—तीनोंकी आध-आध पाव पत्तियाँ लेकर २४ घंटे पानीमें पड़ी रहने दे, फिर निकालकर आध पाव सूखे आँवले और एक पाव कच्ची खाँड़ डालकर पिला दे।

६-पशुकी साँस तेज चलती हो तो थोड़ी-सी कपास कड़ुवे तेलमें भिगोकर खिलाना लाभदायक है।

१८-विष खा जाना (Poisoning)

कभी-कभी कोई पशु चारेके साथ कोई घोर विषैला कीड़ा खा जाता है या कोई दुष्ट मनुष्य विष खिला देता है, ऐसी दशामें नीचे लिखी दवाइयाँ करनी चाहिये—

१-डेढ़ सेर घीमें एक सेर एप्सम साल्ट मिलाकर पिलाना चाहिये।

२-कोई जुलाबकी दवा दे देनी चाहिये।

३-एक सेर गरम दूधमें आधी छटाँक तारपीनका तेल अच्छी तरह मिलाकर पिलाइये और फिर केलेकी जड़का रस एक पाव तथा एक तोला कपूर मिलाकर पिलाना चाहिये।

१९-चरीद्वारा विष खा जाना (Corn-Stalk)

वर्षाके दिनोंमें जब पानी पड़ना बंद हो जाता है और चरी छोटी हो जाती है, तब उसमें एक प्रकारका विष उत्पन्न हो

जाता है वही चरी खा लेनेसे पशुको विष चढ़ जाता है और वह तत्काल गिर पड़ता है। दाँत-जीभ काले पड़ जाते हैं। इस स्थितिमें—

पशुको शीघ्र किसी तालाब या नदीमें डाल दे। यह सम्भव न हो तो उसके ऊपर खूब पानी छोड़े। गीली जगहसे कीचड़ लेकर सारे शरीरपर पोत दे। जुलाबकी कोई ओषधि दे।

१-आध सेर सज्जी २ सेर पानीमें घोलकर पिलाये।

२-एक सेर कड़ुआ तेल पिलाये या एक सेर चूल्हेकी (लकड़ीकी) राख पानीमें घोलकर पिलाये।

३-आध सेर घी और दो सेर दूध पिलाये या आध पाव कत्था एक सेर ठंडे पानीमें घोलकर पिलाये।

४-काली मिर्च १ तोला, हींग १ तोला, सोंठ १ तोला, अजवाइन १ तोला, काला नमक २ तोला—सबको महीन पीसकर आध सेर गुनगुने पानीमें मिलाकर पिलाना चाहिये।

२०-लकवा (Paralysis)

इस रोगमें पशुका आधा या सारा अङ्ग निर्जीव हो जाता है। उस स्थानपर सुई चुभानेसे दर्द नहीं होता। इसके निम्न उपचारोंको काममें लाना चाहिये—

१-शरीरको गरम रखना और लकवा मारे हुए अङ्गपर कपूर तथा मीठे तेलकी मालिश करना।

२-कुचला ४ माशा, सोंठ ६ माशा, हीरा कसीस ६ माशा, नमक आधी छटाँक—सबको कूट-पीसकर आध सेर गरम पानीमें घोलकर पिलाइये।

३-आधी छटाँक सरसों पीसकर पानीमें लेप बना लीजिये और लकवेके स्थानपर लगाइये।

२१-गठिया या जोड़का दर्द (Rheumatism)

सर्दीसे, वर्षामें भीगनेसे या रक्त-विकारसे यह रोग हो जाता है। पैरोंके जोड़ोंपर सूजन आ जाती है। इसमें निम्न उपचारोंका प्रयोग कर सकते हैं—

१-दो सेर सूखी या ३ सेर हरी गोमाबूटी (मलडोडा) को कतरकर ५ सेर पानीमें औटाये, १ सेर रह जानेपर बूटी निकालकर फेंक दे। दो छटाँक पिसी हुई काली मिर्च और एक पाव काला नमक डालकर ७-८ दिनतक पिलाये।

२-एक सेर कडुई तरोई ५ सेर पानीमें उबाले, जब पानी एक सेर रह जाय, तब उसे छानकर आध पाव काली मिर्च तथा पावभर काला नमक डालकर दो भाग कर ले और सबेरे-शाम पिलाये।

३-एक सेर पिसी हुई मेथीमें आध सेर गुड़ और एक छटाँक अजवाइन मिलाकर १५ दिनतक खिलाये।

४-दो घुँघची (सोना तौलनेवाली रत्ती) पीसकर आध सेर गुड़में ४ दिनतक खिलाना चाहिये।

५-एक तोला कपूर, एक छटाँक तारपीनका तेल तथा एक पाव तिलके तेलको खूब मिलाकर मालिश करना चाहिये।

६-एक पाव लहसुन कुचलकर आध सेर तिलके तेलमें पकाये और फिर तेल छानकर मालिश करे।

२२-प्रसूतका ज्वर

यह रोग प्रसूतके दुःख-दर्दसे बच्चेकी उतरी हुई झिल्ली भीतर रहकर सड़ जानेसे अथवा ब्याते समय ग्वालेके मैले-कुचैले हाथ लगकर नाखूनोंका विष चढ़नेसे हो जाता है। इस स्थितिमें पहले घी-मिली हुई दस्तावर दवा देनी चाहिये, फिर थोड़ी गिल्सरीन और जरा-सा कार्बोलिक एसिड पानीमें डालकर पिलाना चाहिये।

सोंठ, अलसी तथा काली मिर्च एक-एक तोला एवं नौसादर आधा तोला कूट-पीसकर एक पाव गुड़में खिलाइये।

पीनेके लिये एक तोला कलमी शोरा मिलाकर गुनगुना पानी दीजिये।

२३-थन सूजना (Udder Inflammation)

कभी-कभी बच्चेके जोरसे मुँह मार देनेसे, दूसरे पशुके सींग मार देनेसे या दूधका अत्यधिक जोर होनेपर थन सूजकर कड़े हो जाते हैं। इसमें—

१-एक छटाँक कलमी शोरा आध सेर गरम पानीमें मिलाकर तीन दिनतक पिलाना चाहिये।

२-नीमके पत्तोंके उबले हुए पानीसे सेंक करनेके बाद गेरू और अजवाइन पानीमें मिलाकर पकाये और फिर लेप कर दे।

२४-योनिमें कीड़े पड़ना

नीमके पत्ते पानीमें उबालकर उससे पिचकारीद्वारा धोइये, फिर तारपीनका तेल और मीठा तेल मिलाकर रुईके फाहे डुबोकर चिमटीसे अंदर कर दीजिये। इस प्रकार सबेरे-शाम कई दिनोंतक दवा लगानी चाहिये।

२५-बच्चेदानीका बाहर निकलना

बुढ़ापे या कमजोरीके कारण या जेर गिराते समय जोर लगानेके कारण बच्चादानी बाहर निकल आती है। जब ऐसा अवसर आये, तब उसे फिटकिरीके पानीसे अच्छी तरह धोकर भीतर दबा दे और उस स्थानपर एक मुसका चढ़ा दे। साथ ही निम्न उपाय करे—

१-आध पाव फिटकिरी पानीमें घोलकर पशुको पिलाये।

२-एक पाव सूखा कतीरा गोंद सबेरे-शाम खिलाकर आधी छटाँक रसौत २ सेर पानीमें घोलकर पिलाये।

३-आधा तोला सोंठ और एक तोला कालीमिर्च पावभर गरम घीमें मिलाकर ३-४ दिनतक पिलाये। बच्चेदानीको भीतर करके पशुको ऐसा खड़ा करे कि पिछला भाग ऊँचा रहे।

२६-साडू रोग (Garget or Mammitis)

दूधवाले पशुओंके लिये यह बहुत बुरा रोग है। इसमें थन सूज जाते हैं। पशु थनोंमें हाथ नहीं लगाने देता। यह रोग कुसमयपर या बार-बार दूध निकालनेसे, थनोंमें चोट लगनेसे, गोबर करते समय पिछले पुट्ठोंपर लाठी मारनेसे, दुहते समय थन जोरसे खींचनेसे या धानका छिलका खा जानेसे होता है। इसमें—

१-रेंड़ीका तेल गरम करके थनोंपर मले।

२-पोस्ताके एक डोंड़ेको तथा नीमके पत्तोंको सेरभर पानीमें डालकर भापसे सेंक करे।

३-आध सेर दही और पावभर मीठा तेल ३ दिनतक शामको देना चाहिये।

४-आध सेर सहजनकी पत्ती घोंट-छानकर आधी छटाँक काली मिर्च और एक छटाँक नमक मिलाकर ३ दिनतक देना चाहिये।

५-आध सेर घी, एक छटाँक काली मिर्च और आध पाव नीबूका रस ३ दिनतक पिलाये।

६-जाड़ेकी ऋतु हो तो नमक, तेल और अजवाइन डालकर काँसीके बर्तनसे पुट्ठेपर मालिश करे।

७-बीमारी अधिक बढ़ गयी हो तो १ सेर घी, ४ सेर गुड़ या शीरा, आध सेर काला जीरा तथा आध सेर कालीमिर्च डालकर पिलाना चाहिये।

८-दूध निकालकर फेंक देना चाहिये। पीब पड़ गयी हो तो चिरवाना ठीक है।

२७-मुँहसड़ी या अँगियारी

यह भी थनोंका रोग है और इसके भी वे ही कारण हैं, जो साडू रोगके हैं। थनके सोतके ऊपर एक छोटी पीली-सी पपड़ी जम जाती है और फिर फुंसीकी तरह हो जाती है। इसके लिये—

१-रेंडीके तेलमें थोड़ा नमक डालकर गर्म करे और दिनमें ४-५ बार मालिश करे।

२-नीमके पत्ते गरम करके भापसे सेंके।

३- एक सेर पानीमें एक पाव कत्था घोल-छानकर पिलाना चाहिये।

२८-चन्द्री

यह बहुत बुरा और हानिकारक रोग है। पहले थनके ऊपर छोटी-सी एक गिल्टी होती है, फिर थन सूजकर उसमें पीब पड़ जाती है। गिल्टी फूटकर थनमें छेद हो जाय तो नीचे लिखी दवाइयाँ भर देनी चाहिये—

१-आकका दूध, साँपकी केंचुल और लहसुन—इनको बराबर पीसकर घावके ऊपर लगा दे और सावधानीसे पट्टी बाँध दे।

२-नीमकी कोंपलोंको पीसकर एक टिकिया बनाये, उसे गायके घीमें लाल करे। फिर टिकिया फेंककर उस घीको घावमें दिनमें ४-५ बार लगाये।

२९-थनका मारा जाना (Blind Teats)

थनकी किसी बीमारीसे थन मारा जाता है और दूध नहीं निकलता। यह रोग है तो असाध्य, किंतु सम्भव है नीचे लिखी दवाइयाँ लाभ कर जायँ।

जब थन मारी हुई गाय गाभिन हो जाय, तब एक पाव सरसोंका तेल प्रत्येक शुक्ल पक्षकी दूजको बच्चा देनेतक बराबर देते रहना चाहिये। बच्चा देनेके कुछ घंटे पहले आधी छटाँक हींग चने या जौकी रोटीमें खिला दे।

यदि किसी पशुका थन जल्दी ही दो-चार दिनसे बंद हुआ हो तो आध पाव काली जीरी और आध पाव काली मिर्च पीसकर आध सेर गरम पानीमें मिलाकर दिनमें दो बार ३ दिनतक देना चाहिये। अथवा ४-५ कागजी-नीबुओंका रस एक पाव घीमें मिलाकर दोनों समय दीजिये।

३०-थनोंका कट जाना (Sore Teats)

दूध पीते समय बच्चेका दाँत लगनेसे या ऊपरी चोट लगनेसे थनपर घाव हो जाता है, इसकी दवा शीघ्र कर लेनी चाहिये—

१-तवा गर्म करके थनके नीचे रखे और दूधकी धार छोड़े। उसके भापसे लाभ होगा।

२-थोड़ा मक्खन या घी लेकर पिसी हुई हल्दी और थोड़ा नमक डालकर दूध दुहनेके पीछे घावके ऊपर लगा दे।

३१-बच्चा देनेके पीछे दूध न उतरना या थोड़ा उतरना

गाभिन होनेपर कोई-कोई लोग पशुको दुहना एकदम बंद कर देते हैं, जिससे थनोंमें दूध सूख जाता है और रोग हो जाता है। अतः धीरे-धीरे दूध सुखाना चाहिये। साथ ही—

१-गरम घी और नमकसे थनों और हवानेपर मालिश करना चाहिये तथा दूध थोड़ा-बहुत अवश्य निकालना चाहिये।

२-एक सेर सनके बीजका आटा १ सेर शीरेमें मिलाकर ३ भाग करे और दिनमें ३ बार आठ रोजतक दे तो पूरा दूध उतर आता है।

३-गायका दूध २ सेर, गुड़ या शीरा १ सेर, गेहूँका दलिया १ सेर, मोटा चावल १ सेर—इन सबको २ सेर पानीमें औटाकर आधा सबेरे और आधा शामको देनेसे अच्छी जातिके पशुका दूध अवश्य बढ़ जाता है।

३२-बाँझपन (Barrenness)

पैदा होते ही पूरा दूध न पानेपर, अच्छी खुराक न मिलनेपर, समयपर साँड़ न मिलनेपर या जुड़वाँ बच्चोंमेंसे एक नर तथा एक मादा होनेपर उस मादाको प्रायः बाँझपनका रोग होता है। इसमें—

१-आधी छटाँक फास्फेट सोडा गरम पानीमें डालकर योनिको बराबर धोते रहना।

२-किसी निपुण चिकित्सकसे गर्भाशयका मुँह खुलवा देना।

३-गायको बराबर साँड़के साथ रखना।

४-दो सेर सनके हरे पत्ते रोज खिलाना।

५-एक सेर सनके बीजका आटा आध सेर गुड़में मिलाकर १५ दिनतक खिलाना।

६-सात छुहारोंकी गुठली बासी जौकी रोटीमें रखकर सात दिनतक खिलाना।

७-दो सेर अङ्कुर निकले हुए गेहूँ या जौ १५ दिनतक खिलाना।

८-ढाई पाव मेथी महीन पीसकर पानीमें लुगदी बनाकर ३-४ दिनतक सबेरे देना।

३३-गायका बार-बार गर्भस्त्राव होना

यह रोग गरम खुराक या गायकी गर्भ-धारणकी शक्ति कम हो जानेसे होता है। गर्म दूर करनेके लिये गायको ठंडी खुराक देनी चाहिये। एक बार गाभिन होते ही पावभर घीमें आधा तोला पिसी हुई काली मिर्च मिलाकर दीजिये। इसके बाद नीचेकी दवा दें।

१-गाभिन होनेके बाद दो सेर लिसोड़ेके हरे पत्ते खिला दीजिये। जिस दिन गाभिन हो, उस दिन खाना न दीजिये और दें तो कम तथा ठंडा।

२-गाभिन होनेके २-१ दिन पहले अंकुर निकले हुए ४ सेर गेहूँ या जौ खिला दीजिये। इसे ४-५ दिनतक खिलाइये।

३-पावभर सफेद तिल रातमें भिगो दें, सबेरे घोट-पीसकर गाभिन होनेके दिन और २ दिन बादतक पिला दें। सर्दीके दिनोंमें इसे नहीं देना चाहिये।

३४-सर्पका काटना

सर्पके काटनेका विश्वास हो जानेपर ५ भाग पारामाग्नेट् पोटाश ९५ भाग पानीमें मिलाकर काटी जगहके भीतर पिचकारीसे भर दे और काटी जगहके ऊपर रस्सीसे कसकर बाँध दे।

३५-कुत्तेका काटना

पशुको कुत्तेके काटनेसे जो घाव हो जाय, उसको कास्टिक पोटाशसे जला देना चाहिये। यह दवा न मिले तो लाल मिर्चके बीज घावमें भर देना चाहिये।

शरीरके ऊपरके साधारण रोग

पशु परस्पर लड़ते-भिड़ते रहते हैं, जिससे उनके किसी अङ्गपर चोट आ जाती है। चोट आदि न लगनेपर भी कभी-कभी आँख, कान आदिमें कोई विकार हो जाता है। रक्तके विकारसे भी कहींपर सूजन हो जाती है। इन सब रोगोंको साधारण समझकर उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। इनको अच्छा कर डालना ही ठीक है, नहीं तो आगे चलकर पशुको भारी कष्ट हो सकता है।

१-सूजन और दर्द

चोट, सर्दी, गर्मी या रक्तके विकारसे शरीरके किसी भागपर सूजन आ जाती है। चोटकी सूजन हो तो नीमके पत्ते उबालकर उस पानीसे सेंकना चाहिये, फिर सुहागा तवेपर फुलाकर तिल, घी, वैसलीन या मक्खनके साथ सूजनकी जगहपर चुपड़ देना चाहिये।

यदि रक्त-विकारसे सूजन हो गयी हो तो नीमके पत्ते उबालकर सेंके। फिर १ तोला गेरू, २ तोला मकोयके रसमें मिलाकर लेप कर दे या हल्दी-चूना मिलाकर लेप करे।

भीतरके किसी भागमें दर्द हो तो पंद्रह मिनटसे आधे घंटेतक फलानेल या कम्बलको गरम जलमें डुबाकर निचोड़कर उसका सेंक करना चाहिये। फिर सूखे कपड़ेसे भलीभाँति पोंछकर सरसोंका तेल ४ भाग और तारपीनका तेल २ भाग खूब मिलाकर मालिश करनी चाहिये।

२-रसौली और मस्सा

कई बार खालके नीचेसे गेंद-सी बनकर सूजती या बढ़ती चली जाती है या काले-काले मस्से निकल आते हैं। इनसे

पशुको किसी प्रकारका कष्ट तो नहीं होता, पर उसकी खाल बिगड़ जाती है। इससे इनको हटाना चाहिये।

रसौलीमें सूजनकी भाँति सेंक करना चाहिये। इससे न दबे तो ३ हिस्सा पानी और १ हिस्सा कच्चे पपीतेका दूध मिलाकर रख लीजिये और रुईके फाहेसे दिनमें कई बार लगाइये।

मस्सेपर नाइट्रिक एसिड, पपीतेके दूधमें मिला हुआ पानी या चूना-सज्जीमें थोड़ा पानी डालकर दिनमें कई बार लगाइये। चूना-सज्जी किसी काँचके बर्तनमें या सीपियामें रखे।

३-फोड़ा-फुंसी और घाव (Abscess)

किसी पशुको फोड़ा हो जाय तो उसे अच्छी तरह पक जाने दीजिये। फिर चीरकर उसकी पीब निकाल देना चाहिये। इसके बाद नीमके पत्तोंको पानीमें उबालकर उस पानीसे घावको धोइये और नीमका तेल लगा दीजिये अथवा सरसोंका तेल, तारपीनका तेल और कपूर एक-एक छटाँक लेकर और उसमें चौथाई छटाँक फिनाइल डालकर घावपर लगाते रहिये। अथवा पत्थरका कोयला, खड़िया मिट्टी, फिटकिरी और नीलाथोथा—चारोंको बराबर लेकर उनका चूर्ण करके लगाइये। घाव बड़ा हो तो नीमका तेल और मोम मिलाकर लगाना चाहिये।

घावको कभी खुला नहीं छोड़ना चाहिये, नहीं तो स्याई नामकी मक्खी उसपर बैठती है और घावमें कीड़े पड़ जाते हैं। यदि कीड़े पड़ गये हों तो आड़ू या मरुएके पत्तोंको पीसकर उसकी टिकिया घावपर रख दीजिये और मुल्तानी मिट्टीसे घावके ऊपर लीप दीजिये, जिससे घावको हवा न लगे ऐसा करनेसे कीड़े मर जायँगे, तब पीछे घावको अच्छा कर लीजिये। गहरे घावमें कपूर एक भाग, इसका चतुर्थांश तारपीनका तेल और इतना ही तीसीका तेल खूब मिलाकर लगाना चाहिये।

४-हड्डी-पसलीकी चोट

बहुधा लड़ने-भिड़नेसे हड्डीमें चोट पहुँच जाती है या हड्डी टूट जाती है। हड्डी टूट गयी हो या उतर गयी हो तो किसी जानकारसे या पशुओंके डॉक्टरसे उसे ठीक कराना चाहिये। किसी जानकार आदमीके मिलनेके पहले नीचे लिखी दवाइयाँ करें—

१-पीपलकी हरी छाल ५ सेर पानीमें उबाले, जब पानी २ सेर रह जाय तो चोटपर सेंक करे।

२-भेड़के दूधमें पीली कटेरियाँ औटावे और चोटकी जगहपर सेंक करे तथा लेप कर दे।

३-एक छटाँक फिटकिरी, आधी छटाँक हल्दी तथा १ सेर दूध पशुको तुरंत पिला देना चाहिये।

५-खुरमें कील-काँटोंका चुभना

यदि खुरमें कील-काँटा या कोई नुकीली चीज चुभ गयी हो तो उसे निकालकर कपूर और तारपीन-मिले हुए तिलके तेलमें रुईका फाहा भिगोकर सावधानीसे भीतर कर देना चाहिये और आस-पास भी तेल चुपड़ देना चाहिये। दो-चार रोज करनेसे आराम हो जायगा।

६-सींग टूटना या सड़ना

लड़ने-भिड़नेसे या लाठीकी चोटसे सींग टूट जाते हैं। सींग दो प्रकारसे टूटते हैं—एक तो जड़से निकल जाते हैं, दूसरे सींगके ऊपरका केवल खोल निकल जाता है।

जड़से टूटनेपर छोटी बेरीके पत्ते पीसकर घावमें भर दीजिये और ऊपरसे कपड़ा बाँधकर नीमका तेल डालते रहिये। यदि खोल उतर गया हो तो उड़दकी पीठीमें आदमीके सिरके बाल सानकर सींगके ऊपर थोप दीजिये और कपड़ा बाँधकर नीमका तेल डालते रहिये। अथवा मुल्तानी मिट्टीको सींगपर लपेटकर ऊपरसे बाल लपेट दे या सीमेंट अथवा चूना घावमें भरकर कपड़ा बाँध दे और नीमका तेल डालता रहे।

सींग टूटनेसे घाव सड़ गया हो या कीड़े पड़ गये हों तो नीमके पानीसे धोकर तारपीनके तेलमें रुईका फाहा दिनमें दो-तीन बार रखना चाहिये।

७-कानमें मवाद पड़ना या घाव होना

कानमें घाव हो गया हो तो उसे नीचे नीमके पानीसे धोकर १ हिस्सा कपूर, १ हिस्सा सुहागा (भुना हुआ) और २० हिस्सा सरसोंका तेल मिलाकर घावपर लगाना चाहिये। अथवा आकका तेल घावपर लगाकर २-४ बूँदें कानमें भी छोड़ दे।

८-आँखका रोग (Sore Eyes)

आँखका रोग बहुधा किसी जंगली जड़ी-बूटीके लगनेसे या लड़ने-भिड़नेसे होता है। आँखके रोगमें आँखोंसे पानी और कीचड़ बहता है। इसके लिये निम्न उपचार करे—

१-फिटकिरी पीसकर पानीमें घोल-छान ले और इससे आँख धोये।

२-नमक और सहजनके पत्ते रातमें भिगो दे। सबेरे घोट-छानकर उस पानीसे धोये।

३-सहजनके बीजको रगड़कर पानीमें डाले और आँख धोये। कुछ दिन रोशनीसे बचाये।

९-बैलका कंधा आना या फार लगना

कंधा आ जानेपर नमक-मिले गरम पानीसे सेंक करना चाहिये।

हल जोतते समय बैलके उछलनेसे यदि फार लग जाय तो घावपर तुरंत मूत्र लगा देना चाहिये। ३-४ दिन करनेसे अच्छा हो जायगा।

१०-आगसे जल जाना

पशुके जल जानेपर तुरंत चूना या चूनेके पानीको वैसलीनमें मिलाकर लगाना चाहिये। १०० बार फेंटा हुआ गायका घी भी बहुत लाभ करता है। चूनेके पानीमें तिल, रेंडी या नारियलका तेल मिलाकर फेंटनेसे एक मलहम बन जायगा, उसके लगानेसे भी अच्छा होता है।

११-बाबनी अर्थात् पूँछका घाव

पहले पूँछकी चौंरीके बाल खुजलीसे उड़ते हैं और धीरे-धीरे घाव होकर पूँछ गलने लगती है। इसके लिये सल्फ्यूरिक एसिडको चौड़े मुँहकी बोतलमें भरकर घाववाले सिरेको ५ मिनटतक उसमें डाले रहे और फिर कपड़ा बाँध दे।

इस प्रकार अपने पशुओंकी यथासम्भव चिकित्सा करनी चाहिये। किसी योग्य अनुभवी चिकित्सकका परामर्श अवश्य लेना चाहिये। कभी-कभी ठीक अनुपात एवं प्रयोगका ज्ञान न होनेसे लाभके बदले हानि होनेकी भी आशंका रहती है। गोशालामें यथासम्भव साधारण उपयोगमें आनेवाली ओषधियाँ बराबर रखनी चाहिये, ताकि तात्कालिक चिकित्सा की जा सके। पशुओंके प्रति प्रेम-भाव रखते हुए उनके दुःख-दर्दकी कभी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये।

आयु

गाय और बैलकी अधिक-से-अधिक आयु प्रायः २५ वर्षकी होती है। जलवायु, लालन-पालन तथा परिश्रम आदिके कारण इसमें कमी-वेशी भी हो सकती है। आमतौरपर इनकी औसतन आयु १२ वर्षके लगभग होती है। एक बछिया ३ वर्षकी उम्रके आस-पास बिया जायगी। कोई-कोई गायें १२-१४ महीने बाद दुबारा बिया जाती हैं कम-से-कम गायको १८-२० महीने बाद दुबारा जरूर बिया जाना चाहिये।

१०-१२ वर्षकी उम्रतक गाय ५—७ अच्छे बछड़े-बछिया दे देती है। कोई-कोई गाय १०-१२ बच्चे भी जनती है, परंतु प्रायः १५-१६ वर्षकी उम्रके बाद वह बच्चे देना बंद कर देती है।

दाँत और सींगोंके द्वारा इनकी उम्र पहचानी जाती है।

नये बच्चेके दूधके २ दाँत होते हैं।

१५ से २१ दिनतकके बच्चेके दूधके ४ दाँत होते हैं।

एक महीनेके बच्चेके दूधके ८ दाँत होते हैं।

तीन-चार महीनेके बाद ये दाँत पुष्ट होने लगते हैं और १५ से १८ महीनेकी उम्रतक सब पुष्ट हो जाते हैं। फिर उम्र पाकर ये उखड़ जाते हैं और इनके स्थानपर असली पक्के दाँत निकल आते हैं।

दो-ढाई वर्षकी उम्रमें २ पक्के दाँत आ जाते हैं।

तीन-साढ़े तीन वर्षकी उम्रमें ४ पक्के दाँत आ जाते हैं। (इस समय पशु पूर्ण युवा हो जाता है।)

चार-पाँच वर्षकी उम्रमें ६ पक्के दाँत आ जाते हैं।

पाँच-छः वर्षकी उम्रमें ८ पक्के दाँत आ जाते हैं।

इस प्रकार मुँहमें काफी समयतक रहनेवाले आठों दाँत पूरे हो जाते हैं। यदि इनमेंसे कोई दाँत टूट जायगा तो वह दुबारा नहीं निकलेगा, इसीसे ये स्थायी या पक्के कहलाते हैं।

गाय-बैलोंके निचले जबड़ेमें दाँत होते हैं और ऊपरके जबड़ेमें खाली कड़ी हड्डी होती है। वे नीचेके दाँतोंसे चारा कुतर-कुतर कर पहले जल्दी-जल्दी अपना पेट भर लेते हैं। फिर आरामसे बैठनेपर उस खाये हुए चारेको मुँहमें वापिस लाकर दोनों जबड़ोंकी किनारेवाली मजबूत दाढ़ोंसे महीन जुगाली करके आमाशयमें पहुँचाते हैं।

दस-बारह वर्षकी उम्रके बाद जैसे-जैसे गाय ढलने लगती है, वैसे-वैसे उसके दाँतके भी घिसकर ठुण्टी-सरीखे हो जाते हैं।

गौके प्रमुख रोग और उनकी चिकित्सा[1]

(डॉ० श्रीराजकुमारजी शर्मा 'दीक्षित' रिटायर्ड पशु-चिकित्सक)

[क]

गौके रोगोंकी होम्योपैथिक चिकित्सा

गाय एक मूक प्राणी है। वह अपने दु:खकी व्यथा कह नहीं सकती। किंतु उसका दु:ख-दर्द आपको समझना होगा। वह निरीह प्राणी है, अपनी व्यथा कैसे बतायेगी। उसे तो दर्द सहन करनेकी असीम शक्ति प्राप्त है। पर आपको तो कुछ अवश्य ही करना चाहिये। इसी दृष्टिसे यहाँ जनकल्याणके लिये गोधनके कुछ रोगोंकी औषधियोंको दिया जा रहा है। किसी योग्य चिकित्सकका परामर्श लेकर इनका प्रयोग करनेसे अवश्य लाभ होगा ऐसा हमारा व्यक्तिगत अनुभव है। जहाँ दवाईके सम्मुख उसकी शक्ति लिख दी गयी है उसे ही प्रयोग करें, जहाँ शक्ति नहीं लिखी है ३० या २०० शक्तिका जर्मनीका १० एम० एल० सील बंद डायलूशन लेकर एक या दो छोटे बताशे या खाँड़-बुरा आदि प्लेटमें रखकर १० से १५ बूँद उसपर डालकर गायको दिनमें एक बार चटा दें। यह ध्यान रखें गायके मुँहमें खाद्य पदार्थ पहलेसे न हो और बताशा भूमिपर न गिर जाय।

(१) **भूख न लगना**—(Anorexia)(नक्स १x+) कार्बोवेज़ १x+ पेप्सिन १x मिलाकर दिनमें ३ बार दें।

(२) **मुँहके छाले**—(Thrush)—घाव जीभपर गालोंके अंदर हो तो बोरेक्स दें, लारके साथ घावकी स्थितिमें मर्क्युरियस दें।

(३) **कब्ज़**—(Canstipation)—हाइड्रास्ट २x दें।

(४) **अतिसार**—(Diarrhqea)—नये रोगमें चाइना और जीर्ण रोगमें फॉस दें।

(५) **रक्तमय अतिसार**—(Dysentery)—नक्स २०० की एक मात्रा देकर मर्क्युरियस कारोसाइवस दें।

(६) **कमजोरी**—(Weakness)—एल्फाएल्फा क्यू एवं फोस-एसिड एक दिनके अन्तरसे अलग-अलग दें।

(७) **अफारा** (Tympenities)—वायुसंचयपर एसाफिटेड़ा कब्ज़ भी हो तो कार्बोवेज और दर्दमें कोलोफाई दें।

(८) **खाँसी** (Cough)—ड्रोसेरा २०० की केवल एक ही मात्रा, यदि दोहरानी पड़े तो ४-५ दिन पश्चात् दें।

(९) **ज्वर**—(Fever)—अचानक हुआ हो तो एकोनाइट और धीरे-धीरे हुआ हो तो जेल्सियम देना चाहिये।

(१०) **सूखा रोग**—(Marasmas)—छोटी बछिया खाती तो यथेष्ट है, पर सूखती जाती है, ऐसी स्थितिमें एब्रोटेनम देना चाहिये।

(११) **बाल झड़ना**—(शरीरमें मिनरलकी कमीसे) फ्लोरिक एसिड दें।

(१२) **गायका दूध कम हो जाना**—(Agalactia)—अचानक कम होना या पवास न आना (दूध न उतरना)—एग्नस, सद्य: प्रसूताके थनोंमें दूध न आनेपर अर्टिका क्यू दिनमें तीन बार दें।

(१३) **बछड़े-बछियाओंके गर्मीके दस्त**—(Calvis cholera) आर्स दें।

(१४) **गायका दुर्बल होना या रक्ताल्पता होना**—(Anemia)—फेरम-मेट दें।

(१५) **गायके मूत्रमें रक्तका आ जाना**—प्यासमें—आर्स, मूत्रके साथ जलन हो, जो लगाकर कूँथ रही हो तो कैन्थरिस देना चाहिये।

(१६) **गायके मूत्राशयमें जलन**—(Irritation in bladder)— सार्सापरिला एवं इक्युयर्क एक दिन छोड़कर अलग-अलग दिनमें एक बार दें।

(१७) **मूल कष्टसे आना**—(Dysuria)—एपिस अथवा कैन्थरिस दें।

(१८) **जल जाना, छाला-फफोला पड़ जानेसे पूर्व और पश्चात्**—(Burns)—कैन्थरिस दें।

१-यदि कोई सज्जन इस सम्बन्धमें परामर्शके इच्छुक हों तो डॉ० श्रीराजकुमारजी शर्मा, रिटायर्ड पशु-चिकित्सक एवं होम्योपैथ, ॐ श्रीहरि: धाम, ४३/१, पुरानी मोहनपुरी, मेरठ-२५०००१ (उ० प्र०)-के पतेपर सम्पर्क कर सकते हैं।

(१९) **गायके शरीरमें पानी भर जानेसे सूजन** (Dropsy)—एपिस अथवा आर्स दें।

(२०) **स्तन (थन) की सूजन**—(Mastitis)—लाल सूजन 'एपिसबेलाडोना' दें। पत्थर-जैसी कड़ी सूजनमें कोनियम, जब पस पड़नेवाली हो तो बेलाडोनाके पश्चात् ब्रायोनिया दें।

(२१) **स्तनोंका तरेड़ जाना** (Nipples cracked)—ऐसी स्थितिमें रेटेन्हिया दें।

(२२) **गर्भपात होनेकी आशंका**—(Abortion)—कोलो फाइलम दें।

(२३) **प्रसव/ प्रसवोत्तरपीड़ा** (After Pains)—कोलो फाइलम दें।

(२४) **गोबरके साथ मलाशय बाहर निकल जाना** (Paralapsis)—एलोय एवं फोड़ो फाइलम पर्याय-क्रमसे दिनमें एक बार देना चाहिये।

(२५) **गर्भाशय-भ्रंश** (Paralapsus uteri)—सीपिया दें।

(२६) **बाँझपन** (Sterility)—दुर्बल गाय या बछियाको ब्राइटाकार्व तथा स्वस्थको एग्रस दें।

(२७) **पेटके कीड़े** (Worms)—गोल और सूत्र-कृमियाँ आदि समस्त कृमिके लिये चेलोन मूल अर्कको १० से १५ बूँद ५ दिनतक क्रमशः दें।

(२८) **चोट** (Injuries)—गुम चोटमें अर्निका तथा घाववाली चोटमें हाइपेरिकम दें।

(२९) **खून बहनेवाला घाव**— कैलेण्डूला मूल अर्क, यह रक्त बहनेको रोक देगा, खानेको भी दें, घावपर भी लगायें।

(३०) **टेटनस**—होम्योपैथीमें टेटनसका टीका देनेकी जगह लीडमकी एक खुराक पिला दी जाती है।

(३१) **घाव भरनेमें** (Wounds)—हैक्ला लावा ६ एक्समें तथा घाव सुखाने-हेतु साइलीशिया एक हजारकी एक मात्रा दें।

(३२) **बारम्बार गर्भपात होना** (Miscarriage] Repeated)—सिफिलिनम १ एम+ बैसीलिनम १ एम की एक खुराक दें।

(३३) **बछिया या गायका गर्भ न होना** (Menstruation)—'जैनोसिया अशोका मूल अर्क' एक सप्ताहतक दिनमें तीन बार दें।

(३४) **खुजली** (Mamze)—एन्टीपाइरीन २ एक्स दें।

(३५) **कानमें मिट्टी-धूल पड़नेसे पीव आना** (Ear Discharge)—हीपर अथवा पल्स दें।

[ख]

पशु-चिकित्सकका सिद दर्द—दुधार गायमें कैन्सर

आजकल गायके थनका कार्सिनोमा पशु-चिकित्सकके लिये एक कठिन प्रश्न बन गया है। शोथयुक्त कार्सिनोमा (Inflammatory Carcinoma) गर्भवती या दुधार गायके थनमें तीव्र गतिसे बढ़नेवाल कैन्सर है, जिसका प्रारम्भ एक पिण्डके रूपमें होता है। स्तनके उपरिस्थ उत्तक शोथयुक्त हो जाते हैं और वह सूज जाता है तथा तीव्र स्तनशोथके समान दिखायी देता है। कितनी ही बार अन्य थन यहाँतक कि पूरा अयन (बाँक-Udder) भी रोग-ग्रस्त हो जाता है। शोथयुक्त कार्सिनोमाकी अभीतक कोई विशेष उपयोगी चिकित्सा ज्ञात नहीं हुई है। निर्मूलक स्तनोच्छेदनसे कोई लाभ नहीं होता और न उसका परामर्श ही दिया जाता है। महिलाओंमें शमनकारी (Palliative) एक्सरे चिकित्सा की जा सकती है और हार्मोन रोध्य उपायोंसे उसमें सहायता मिल सकती है, किंतु मूक गौ माताके समक्ष एलोपैथी चिकित्सा भी मूकदर्शक मात्र रह गयी। बेचारी गौ माताका दुःख समझते हुए भी पशु-चिकित्सक अपना समस्त जान एवं सेवा देकर भी कुछ नहीं कर पाता। मुझे इन क्षणोंका प्रत्यक्ष अनुभव है। क्योंकि गत चालीस वर्षोंसे भी अधिक समयसे मुझे गौ माताकी चिकित्सा करनेका अवसर मिला है। होम्योपैथी चिकित्सासे मुझे इस दिशामें पर्याप्त सफलता मिली है।

स्तन जब दूध-भरे हों, गायके बैठते समय या बच्चेके दूध पीते समय थन या बाँक (Udder) में उसका सिर या थूथनके प्रहारसे हल्की-सी चोट आ जानेसे या मौसमके प्रभावसे भी हल्की-सी सूजन आ जानेपर यदि उसकी चिकित्सा कर दी गयी तो केवल एकोनाइट या अर्निकाकी

एक मात्रासे ही सब ठीक हो जाता है। हाँ देर हो जानेपर अन्य ओषधियोंका सहारा लेना पड़ता है। इसके लिये किसी सुयोग्य चिकित्सकका परामर्श लेना आवश्यक है।

होम्योपैथीकी दवाई बूँदोंमें दी जाती है। १०-१५ बूँद किसी माध्यमसे गायकी जिह्वापर छू जाय बस दवाई कार्य कर जायगी। गाय सीधी है तो एक चम्मच पानीमें दी जा सकती है, प्लेटमें बताशा, बूरा (खाँड) आटेकी हल्की-सी परतपर दवाई टपकाकर चटाई जा सकती है। मठरी-जितनी मोटी रोटी बनाकर ऊपरका पतला पापड़ हटाकर मोटे भागपर दवाई टपकाकर, दवाईवाला भाग भूमिकी ओर कर गायको देनेसे उसकी जीभपर दवाई छू जायगी। महकवाली वस्तु हाथोंके छू जानेसे दवाईका प्रभाव नहीं होता, अत: दवाई देनेसे पूर्व हाथ भी साफ कर लें।

गायको अचानक शीतका अनुभव हुआ हो, ज्वर हो, तीव्र स्तनपर प्रदाह (सूजन)-सी दिखायी दे तो 'एकोनाइट' २०० की एक मात्रा दे दी जाय।

यदि थन या बाँक (Udder)-में किसी चोटके लग जानेका ज्ञान हो, चर्मपर हल्का बैंगनी चोटका चिह्न भी हो, सूजन हो या न हो तो अर्निकाकी एक या दो मात्रा भी यथेष्ट होगी। यदि छिल गया है तो 'कैलेण्डुला' मूल अर्कको वहाँ चुपड़ देनेमात्रसे घाव ठीक हो जायगा। दवाई पिलाई भी जाय तो और लाभ मिलेगा।

यदि सूजन बढ़ती दिखायी दे तो ब्रायोनियाँ दे। लाल धारियाँ-सी सूजनपर दिखायी दे तो 'बेलाडोना' उसके लिये पर्याप्त होगा। किसी प्रकार भी बेलाडोनासे लाभ न हो रहा हो तो 'मर्क्युरिस' दे, यह उस समय दी जाती है जब लाल-लाल सूजन बड़ी तेजीसे बढ़ती जा रही हो। दवाईसे तुरंत ही घटनी प्रारम्भ हो जाती है।

यदि लाली नहीं है और सूजन तेजीसे बढ़ रही हो तो केवल 'कैल्केरिया फ्लु ओरिका' देनेसे कड़ापन समाप्त हो जायगा, बढ़ना बंद हो जायगा। यदि ट्यूमर बन गया हो दर्द होता हो तो उसे 'म्यूरेक्स' ही शान्त कर देता है।

गायकी आँखोंमें चमक न हो, कीचड़ या पानी आता हो और दूधकी अनुपस्थिति हो या दूधका प्रवाह कम हो गया हो तो उसे 'पल्साटिला' से लाभ हो जायगा। यदि सूजनके साथ मवाद (पस) आने लगे तो, 'हीपर' उस कड़ेपनको घोलकर, मवाद-रूपमें बाहर निकाल देगा। यदि मवाद नहीं और चिपचिपा शहद-सा घावसे आता हो, थन फटकर घाव-सा हो गया हो तो 'ग्रेफाइटिस' देना लाभकारी है।

स्तनोंमें जलन-सी प्रतीति हो, पस पड़नेवाली हो तो 'कार्बोवेज' का भी प्रयोग किया जा सकता है। घावको सुखानेके लिये अन्तमें 'साइलीशिया' एक हजारकी एक-एक सप्ताह पश्चात् मात्रा दी जाय।

पत्थरकी भाँति कठोर, चुभनेवाले दर्दयुक्त ट्यूमरमें जब जरा-सी सर्दीसे ग्रन्थियाँ प्रवाहित हो जाती हों और तीव्र खुजली भी हो तो 'कोनियम' ३० बी शक्तिमें दिनमें एक बार ठीक होनेतक दी जाय।

यदि इनमें अभीतक किसी भी उपचारसे लाभ न दिखायी दिया हो तो 'कोनियम' एक हजारमें पहले दिन दे पहली मात्रा, दूसरी १५ दिन पश्चात् दस हजारकी शक्तिका मात्रा दे फिर १५ दिन पश्चात् 'कार्सिनोसिन' की दस हजार शक्तिकी एक खुराक दे।

यदि कैन्सरका ट्यूमर घूमता हुआ प्रतीत हो तो उसके लिये 'कैल्केरिया फ्लोर' एक हजारकी पहले दिन एक मात्रा दे, दस दिन बाद दूसरी मात्रा दे, १० दिन बाद फिर १० हजार शक्तिकी एक मात्रा दे। मुझे आशा ही नहीं पूरा विश्वास है कि इन दवाओंके प्रयोगसे रोग-ग्रस्त गौओंको लाभ होगा।

[ग]

आक्सीटोसिन (पवासके इंजेक्शन) से गायको बाँझ न बनायें

गायके बाँक (Udder) में दूध भरा रहता है, जब उसके बच्चेको दूध पिलानेके लिये छोड़ते हैं तब बच्चा स्तनोंमें जा लगता है। आपने देखा होगा कि गाय उसे चाटती है और चूमती है। उस समय उसका ममत्व जाग उठता है। बच्चेके स्तन-चूषणद्वारा प्राकृतिक दुग्ध-निष्कासन-प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

कुछ गायें अधिक चतुर एवं संवेदनशील होती हैं, उनका दूध पीता हुआ बच्चा हटाकर दुग्ध-दोहन करनेपर वे उत्तेजित हो जाती हैं, जिससे दूधका निकलना रुक जाता

है। गायके स्तनमें अवरोधिनी मांसपेशी होती है जिससे गाय अपनी इच्छानुसार दूधका बाहर आना रोक लेती है। जिसे 'गायने दूध चढ़ा लिया' ऐसा कहा जाता है। बच्चेको दूसरी बार छोड़नेपर व पुनः पवास (पेन्हा) जाती है। (थनमें दूध उतर आता है)।

आक्सीटोसिन एक दूध-उत्क्षेपक हार्मोन है और बच्चा न रहनेपर गायका ममत्व नहीं जागता, जिससे वह दूध नहीं उतार पाती। इसके लिये कुछ लोग आक्सीटोसिन हार्मोनका इंजेक्शन क्रयकर गायके शरीरमें प्रविष्टकर दूध निकाल लेते हैं।

पाठकोंसे मेरा सानुरोध निवेदन है कि गायको दूध पवासने (दूध उतारने) के लिये इस हार्मोनका इंजेक्शन कदापि न लगायें और अन्यको भी न लगानेके लिये प्रोत्साहित करें। यह स्तनोंसे ही दूध नहीं उतारता, अपितु गर्भाशयपर भी, बच्चे होने, जेर डालने आदिमें उत्प्रेरकका कार्य करता है। शरीरमें इसकी अनावश्यक मात्रा पहुँचानेसे यह स्तन और गर्भाशयकी प्राकृतिक प्रक्रियाको नष्ट-भ्रष्ट कर देता है। सगर्भाका गर्भ गिर जाता है। डिम्ब अपरिपक्व-अवस्थामें टूटकर नष्ट होते-होते गाय बाँझ हो जाती है। ऐसा दूध पीनेसे अतिरिक्त हार्मोनमय दूध पीनेवाले व्यक्तिके शरीरपर भी कुप्रभाव पड़ता है। उसका मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है, क्रोध-आवेशका सहज ही आना इसका प्रमाण है। अन्य हार्मोन ग्रन्थियोंपर भी इसका प्रभाव पड़ता है, क्योंकि एक हार्मोनकी अन्य हार्मोनोंपर सहज ही क्रिया होती रहती है।

बहुत सस्ते दामोंमें आनेवाला यह इंजेक्शन प्रायः सब जगह मिल जाता है। दूध बेचनेवाले पशुपालक धड़ल्लेसे इसका खुलेआम नित्य प्रयोग कर रहे हैं। नवजात गाय-भैंसके बच्चोंको भूखा मारकर मरने दिया जाता है और उसके हिस्सेका भी दूध ले लिया जाता है। उन्हें तो बच्चा नहीं इस हार्मोनकी आवश्यकता है। ताकि दूध अधिक मिले। कृपया उन्हें समझाइये, गौ माताको बाँझ होनेसे बचाइये।

यदि उनके समक्ष किसी कारणवश ऐसी समस्या आ खड़ी हुई कि गाय दूध नहीं उतार रही है तो होम्योपैथिक दवाई 'एग्रस कैक्टस' ६ शक्तिकी सुबह-शाम १०-१५ बूँद एक चम्मच पानी या बताशेपर डालकर देते रहनेसे उन्हें फिर कभी आक्सीटोसिन इंजेक्शन नहीं लगाना पड़ेगा, वह स्वयं ही दुहते समय दूध उतारती रहेगी।

गोवध बंद हो

(डॉ० श्रीगणेशदत्तजी सारस्वत)

(१)

लोक समस्तकी है हितकारिणी, सिद्धि-समृद्धिकी सुन्दर नींव है।
पावन है शुचि पावन नाम-सी, है सुरभी सुर शान्त अतीव है॥
सेवा अशेषकी साध विशेष ले, संसृतिमें प्रकटी नतग्रीव है।
है वसुधा पै सुधाकी विधायिनी, मूर्तिमती ममता ही सजीव है॥

(२)

है पशु, किंतु न है पशुता, शुचिताका मनोरम भाव लिये है।
अन्तसका रस बाँट रही जग, जाग्रत् जीवन-चाव लिये है॥
मुक्त सभीके लिये उर है, न किसीके लिये भी दुराव लिये है।
गौरी-गिरीकी उपासना-सी शुभ, पुण्यदा पुण्य प्रभाव लिये है॥

(३)

दूध पिलाती जिलाती है जीव जो, साथ नहीं उसके छल-छंद हो।
है जिसकी हर श्वास परार्थ, न दे दुख कोई उसे मतिमंद हो॥
पूज्य है जो जननीके समान, नहीं उसके हित घातक फंद हो।
देशकी है ये पुकार अमन्द कि गोवध बंद हो, गोवध बंद हो॥

गोशाला-गोसदन एवं पिंजरापोल

[प्राचीन कालसे भारतमें गोपालनकी दृष्टिसे गोशाला-गोसदन एवं पिंजरापोल आदि संस्थाएँ स्थापित की जाती रही हैं, जिनमें अपंग-बूढ़ी तथा दूध न देनेवाली गायोंका भरण-पोषण तो होता ही है, साथ ही साधनरूपमें दूध देनेवाली स्वस्थ और सुन्दर गायोंका भी संवर्धन किया जाता है। वर्तमान समयमें देशमें कितनी गोशालाएँ हैं यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता, परंतु सरकारी अनुमानके अनुसार तीन हजार गोशाला-पिंजरापोल भारतमें बताये जाते हैं, देशकी कुछ प्रमुख गोशालाके विवरण जो हमें उपलब्ध हो सके, उन्हें हम यहाँ पाठकोंकी जानकारीके लिये प्रस्तुत कर रहे हैं। इसके साथ ही भारतवर्षके गोशाला एवं पिंजरापोलोंकी एक प्राचीन तालिका जो अभी उपलब्ध है, उसे भी यहाँ दिया जा रहा है—]

गोशाला और पिंजरापोलकी आवश्यक बातें

परे वा बन्धुवर्गे वा मित्रे द्वेष्टरि वा सदा।
आपन्ने रक्षितव्यं तु दयैषा परिकीर्तिता॥

(अत्रिसंहिता ४१)

'अपना, पराया, मित्र, द्वेषी और वैरी कोई भी हो, विपत्तिमें पड़े हुएकी सदा रक्षा करनेको ही दया कहा जाता है।'

दया उपयोगिताकी अपेक्षा नहीं करती। वह तो मानव-स्वभावका एक सात्त्विक गुण है, जो बिना किसी भेदभावके पीडित प्राणिमात्रकी पीड़ा दूर करनेके लिये मानव-हृदयमें सहानुभूति, परदुःखकातरता, सात्त्विक उत्साह और उत्तेजन तथा उत्कृष्ट उत्सर्गकी भावना उत्पन्न करता है, और मनुष्यको दुःखियोंके दुःख दूर करनेके पवित्र कार्यमें बरबस लगा देता है। फिर, असहाय और अशक्त गायका पालन-पोषण करने और उसे सुख पहुँचानेकी चेष्टा करनेमें तो दयाका प्रश्न ही नहीं है। इसमें तो कृतज्ञताजनित विशुद्ध कर्तव्यपालन है। जिस गोमाताने अपनी अच्छी हालतमें हमारी अपार सेवा की, जिसका जन्म ही हमारी भलाईके लिये हुआ और जिसकी उदारतापर ही हमारा जीवन निर्भर रहता है, जिसने हमें अमृत-सा दूध दिया, खेतीके लिये बैल दिये, खेतके लिये खाद दी और अब भी दे रही है, उसका दूध सूख जानेपर या उसके लूली-लँगड़ी, बीमार और असहाय हो जानेपर उसका पालन-पोषण करनेसे मुँह मोड़ लेना तो एक प्रकारकी घोर कृतघ्नता और कर्तव्यसे विच्युति है।

आजकल उपयोगितावादकी लहर बह रही है, इस कारण महत्त्वपूर्ण दयावृत्ति और कर्तव्य-पालनके प्रति लोगोंकी उपेक्षा होने लगी है। वे कहते हैं—'जो प्राणी हमारे किसी उपयोगमें नहीं आते, जो न दूध दे सकते हैं और न खेती-बारीके ही काम आते हैं, ऐसे निकम्मे पशुओंके पेटका गड्ढा भरते रहना मूर्खता नहीं तो और क्या है? प्रकृति स्वयं निरुपयोगी बनाकर जिनका अन्त कर देना चाहती है, उनको बचानेमें अपनी शक्ति, समय और धनका उपयोग करना उनका दुरुपयोग ही तो है।' मतलब यह कि आजके इस जडयुगमें मनुष्यकी दृष्टि सब ओरसे हटकर केवल अर्थपर ही आकर टिक गयी है। इसीसे प्रत्येक काममें उसके सामने केवल उपयोगिताका प्रश्न रहता है; और इसीसे वह आज अपने वृद्ध और बीमार सगे माता-पिता एवं आत्मीय स्वजनोंकी भी उपेक्षा—उनसे घृणा करने लगा है और उनके भरण-पोषणमें समय, शक्ति और अर्थका अपव्यय मानकर उससे अपनेको बचाने लगा है। अर्थपरायणताने उपयोगिताके नामपर आज मनुष्यको केवल देवतत्वकी ओर जानेसे ही नहीं रोक दिया है, वरं मानवतासे भी उतारकर उसे दयाशून्य असुर बना दिया है। इसीसे आज वह सहानुभूति, सेवा और दूसरोंके सुख-शान्तिकी कुछ भी परवा न करके अपनी पवित्र सात्त्विकी वृत्तियोंको मारकर केवल अर्थके पीछे उन्मत्त हो रहा है और उन्नतिके नामपर दिनोंदिन पतनके गहरे गड्ढेमें गिरता जा रहा है। मनुष्यके जीवनका ध्येय जब एकमात्र धन ही बन जाता है, तब उसमें एक ऐसा मोह पैदा होता है जो उसे अपने सुख-शान्तिके साधनोंसे भी विमुख कर देता है;

यहाँ तक कि उससे वह ऐसे कर्म करवाता है जिनसे उसके अपने ही ऐहलौकिक और पारलौकिके लिये सुख-शान्तिका स्रोत भी चिरकालके लिये सूख जाता है। और जब मनुष्य अपने सुख-शान्तिको ही नहीं देखता, तब दूसरेकी सुख-शान्तिकी चिन्ता तो उसे क्यों होने लगी?

यही कारण है कि आजके धनकामी लोग 'व्यर्थ अर्थनाश' बताकर असहाय पशुओंका भरण-पोषण करनेवाली उपयोगी संस्थाओंकी ओरसे उदासीन होते चले जा रहे हैं। और उनका विरोध करनेमें ही अपने कर्तव्यका पालन समझते है। दुःख तो इस बातका है कि केवल आर्थिक दृष्टिकोणसे गो-पालन करनेवाले पाश्चात्त्य देशोंकी पद्धतिपर मुग्ध होकर हमारे सम्मान्य अर्थशास्त्री विद्वान् भी आज वृद्ध और अपंग पशुओंको पृथ्वीका भार बताकर उन्हें न पालनेकी सलाह देने और प्रकारान्तरसे उनको क़त्ल कर डालनेके लिये प्रोत्साहित करने लगे हैं। ऐसी हालतमें इस प्रकारके विचारवाले लोगोंके द्वारा पिंजरापोल और गोशालाओंकी अनुपयोगिता दिखलाया जाना कुछ भी आश्चर्यकी बात नहीं है। अवश्य ही ऐसी संस्थाओंका विरोध मनुष्यकी एक पवित्र, कोमल और मधुर वृत्तिको मारना ही है।

पिंजरापोलोंकी स्थापना वस्तुतः उन सहृदय पुरुषोंकी विशुद्ध धार्मिक भावनासे हुई थी जिनके हृदयमें बड़ी सुकोमल-सुमधुर दयाकी वृत्ति थी और जो वृद्ध माँ-बापकी सेवा करनेकी भाँति ही बूढ़ी गोमाताकी सेवाको भी अपना परम कर्तव्य मानते थे। पिंजरापोल नयी संस्था नहीं है। जैन और बौद्धोंके समयमें भी ऐसी संस्थाएँ थीं। मुसल्मानी कालमें भी थीं और उनमें केवल गायोंका ही नहीं, बीमार और असहाय अन्यान्य पशु-पक्षियोंका भी इलाज और भरण-पोषण किया जाता था। यह एक ऐसा पवित्र धर्म समझा जाता रहा है कि सारा समाज इसमें हाथ बँटाता है और व्यापारी लोग अपने व्यापारपर 'लाग' लगाकर इस कार्यमें सहायता करते हैं। अपंग प्राणीकी सेवामें एक परम पुण्यकी और पवित्र कर्तव्य-पालनकी श्रद्धा थी वह और वह सच्ची थी। इसीसे लोग अपने-अपने घरोंमें भी अशक्त प्राणियोंकी सेवा अपने हाथों करते थे। जब कोई गृहस्थ ऐसी परिस्थितिमें पड़ जाता कि खुद तन और धनसे सेवा नहीं कर सकता था तब उसके पशुको सँभालना पिंजरापोलका काम था। इस प्रकार पिंजरापोल न केवल पशु-पीड़ाका निवारण करता था, वरं धार्मिक भावसम्पन्न असमर्थ गृहस्थका बोझ भी हलका करके उसे इस योग्य बना देता था कि वह नया उपयोगी पशु लाकर उससे लाभ उठा सके।

इसमें कोई संदेह नहीं कि विभिन्न कारणोंसे आज सभी पिंजरापोलोंकी दशा संतोषजनक नहीं है और यह भी सत्य है कि युगपरिवर्तनके साथ-साथ पिंजरोपोलोंकी कार्य-पद्धतिमें भी उचित परिवर्तनकी आवश्यकता हो गयी है। पर यह कहना सर्वथा असंगत है कि पिंजरापोल और गोशालाएँ सर्वथा व्यर्थ और हानिकारक संस्थाएँ हैं। हाँ, मूल उद्देश्यकी रक्षा करते हुए उनकी आर्थिक दृष्टिसे भी जितना उपयोगी और जितना स्वावलम्बी बनाया जा सके, उतना बनाना चाहिये। सुधारके लिये सदा ही तैयार रहना चाहिये, परंतु सुधारके नामपर संहार न हो जाय, इसकी सावधानी रखनी चाहिये। अवश्य ही, नवीनताके मोह-मदमें अंधे होकर प्राचीनता मात्रकी जड़ उखाड़ने जाना जैसे बड़ी भूल है, वैसे ही प्राचीनताके नामपर अड़कर धर्मसे अविरुद्ध नवीन उपयोगी पद्धतिको स्वीकार न करना भी कम भूल नहीं है।

भारतवर्षमें विद्यमान पिंजरापोलों और गोशालाओंको मुख्यतः तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया जा सकता है—१-जिनके पास पर्याप्त संगृहीत धन और काफी आमदनी है, जिनका संचालन नियमितरूपसे सम्भ्रान्त सज्जनोंकी कमेटीद्वारा होता है और जिनमें कुछका रजिस्ट्रेशन भी हो चुका है, २-जो आरम्भमें कुछ लोगोंके उत्साहसे स्थापित हो चुकी हैं, पर जिनके पास न तो धन है, न काफी आय है और न उत्तरदायी कार्यकर्ता ही हैं और ३-जिनकी पेशेवर लोगोंके द्वारा, पैसा कमानेके साधनके रूपमें स्थापना हुई है और इसी उद्देश्यसे जिनका येनकेनप्रकारेण संचालन भी हो रहा है।

इनमें तीसरी श्रेणीकी संस्थाएँ (?) तो सभी दृष्टियोंसे सर्वथा अनुपयोगी और हानिकारक हैं। दूसरी श्रेणीकी संस्थाओंके लिये कहा जा सकता है कि सुयोग्य कार्यकर्ता मिलें और आमदनी हो तो उनका सुधार हो सकता है। वर्तमान स्थितिमें तो वे बहुत उपयोगी नहीं हैं। ऐसी संस्थाओंमें इस प्रकारकी हालत देखी जाती है कि जिस समय किसी अच्छे कार्यकर्ताके हाथमें काम हो और व्यापारी वर्गकी स्थिति अच्छी हो, उस समय तो काम ठीक-ठीक चलता है, पर जिन दिनों अच्छे कार्यकर्ता नहीं होते या व्यापार मंदा होता है और आवश्यक चंदा नहीं हो पाता, उन दिनों इनके पशु या तो भूखों मरते हैं या आधे पेट रहते हैं। पिछले अकालके समय कितनी ही गोशालाओंकी ऐसी दशा देखनेमें आयी थी।

परंतु पहली श्रेणीकी संस्थाओंके लिये भी यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें सभीका काम सुचारुरूपसे संचालित होता है। लोग पैसा तो दे देते हैं, पर समय नहीं दे पाते। जो सभापति, मन्त्री और कार्य-कारिणीके सदस्य होते हैं, वे प्राय: केवल नामके ही होते हैं। समयके अभाव, दिलचस्पी न होने तथा गोपालनकी पद्धतिके अज्ञानसे वे कुछ भी नहीं कर पाते। बहुत-से तो जाते ही नहीं। जिनके जिम्मे प्रबन्धका भार रहता है, वे भी न तो अनुभवी होते हैं न क्रियाशील। इससे प्रबन्धमें त्रुटियाँ बनी ही रहती हैं। नयी उन्नतिकी बात तो सोचे ही कौन। पर्याप्त वेतन देकर सुयोग्य अनुभवी पुरुषोंको प्राय: नियुक्त किया नहीं जाता और कोई करना भी चाहते हैं तो सुयोग्य सेवाभावी व्यक्ति मिलते नहीं। कहीं कोई अनुभवी पुरुष रखे भी जाते हैं तो उनके समक्ष कार्य करनेमें कई प्रकारकी संस्थागत कठिनाइयाँ आती हैं। नियम तथा प्रणालीमें भी समय तथा पशुपालन-विज्ञानकी जानकारीके अभावसे कोई खास सुधार नहीं किया जाता। ऐसी और भी कई बातें होती हैं, जिनके कारण व्यवस्था ठीक नहीं हो पाती और जितना लाभ होना चाहिये, उतरा नहीं होता।

कसाइयोंके हाथोंसे गोवंश बचाना, अपंग और असहाय गायोंके जीवन-निर्वाहकी सुन्दर सुव्यवस्था करना और गायोंकी हत्या रोकनेके लिये सब प्रकारके उचित प्रयास करना आदि सभी आवश्यक कार्य हैं और धर्म हैं। परंतु सार्वजनिक रूपमें गोशालाकी उन्नतिके लिये यह भी आवश्यक है कि गौका दूध पर्याप्त मात्रामें बढ़ जाय और गौमें बहुत मजबूत और बलवान् बछड़ा पैदा करनेकी शक्ति आ जाय। पिंजरापोल और गोशालाएँ—इस दिशामें भी बहुत कुछ कार्य कर सकती हैं। पिंजरापोलों और गोशालाओंको अपनी-अपनी परिस्थितिके अनुसार नीचे लिखे कार्य करनेका प्रयत्न करना चाहिये—

(१) वृद्ध, अपंग, बीमार, दुर्बल और ठाँठ गाय, असहाय बैल और ऐसे ही बछड़े-बछड़ी आदिके पालन-पोषणकी पूरी व्यवस्था हो, जिसमें वे जीवनके अन्तिम श्वासतक सुखपूर्वक खा-पीकर रह सकें। गोजातिका ऋण तो उतर ही नहीं सकता, परंतु सच्ची कृतज्ञता प्रकट करने और मानव-हृदयकी बड़ी कोमल दयावृत्तिकी रक्षा करनेके लिये इसकी बड़ी आवश्यकता है।

(२) अच्छी जातिकी ऐसी गायोंको, जो चारे-दानेकी कमी और देख-रेखके अभावसे कमजोर होकर बिसुक गयी हों, चुनकर और अलग रखकर उन्हें अच्छी तरह खिलाया-पिलाया जाय और उनकी पूरी-पूरी देख-भाल की जाय, जिससे वे बहुत उपयोगी और बड़े परिमाणमें दूध देनेवाली बन सकें। आज भी कई गायें जो कसाईखानोंमें ले जानेके लिये कम खिलाकर कमजोर कर दी जाती हैं और वे बिसुक जाती हैं उन्हें पकड़ लेनेपर तथा अच्छी तरह खिलाने-पिलाने और सार-सँभाल करनेपर प्रतिदिन १२ से १५ लीटर दूध देनेवाली बन जाती हैं। ऐसी कई घटनाएँ निरन्तर सामने आ रही हैं।

(३) एक अलग दुग्धालय-विभाग हो, जिसमें अच्छी जातिकी दुधार गायोंका—अपनी गायोंमें चुनकर, खरीदकर, बछड़ियोंको उत्तम गाय बनाकर संग्रह किया जाय। घास-चारे और हवा-पानीके उचित उपयोग तथा अच्छे बलवान् देशी साँड़ोंके संयोगसे उनमें और उनकी संततिमें दूध बढ़ानेका प्रयत्न किया जाय। वैज्ञानिक रीतिसे दूधके दुहनेसे लेकर उसके रूपान्तर करनेतक सावधानी रखी जाय। इन गायोंका दूध जनताको—खास करके बीमारों और बच्चोंके लिये उचित मूल्यपर बेचा जाय।

(४) विश्वासी सद्‌गृहस्थोंको बैल बनानेके लिये बछड़े देकर बदलेमें बछड़ियाँ ले ली जायँ और उन्हें अच्छी दुधार गायें बनाया जाय।

(५) पिंजरापोलों और गोशालाओंमें अच्छी-बुरी सभी जातियोंके मजबूत और कमजोर गाय, बछड़े और साँड़ आदि प्राय: साथ-साथ रहा करते हैं। इससे बिलकुल कमजोर और असमर्थ गायें भी बरधायी जाती हैं और बहुत कमजोर निकम्मे साँड़ बरधानेका काम करते हैं। इसका फल यह होता है कि उनके बछड़े और बछड़ी बहुत ही कमजोर पैदा होते हैं। जो अच्छा चारा-दाना मिलनेपर भी रज-वीर्यके दोषके कारण अपनी हालत नहीं सुधार सकते। ऐसी बछड़ियाँ बहुत देरसे गाभिन होती हैं और ब्यानेपर थोड़े-से दिनोंतक बहुत थोड़ा दूध देती हैं तथा बछड़े इतने दुर्बल होते हैं कि वे साँड़ बनने योग्य तो रहते ही नहीं, अच्छे बैल भी नहीं बन सकते। इस प्रकार दोनों गृहस्थके लिये भाररूप होकर जीते हैं और दु:ख भोगते हैं। ऐसे कमजोर गाय-बैलोंसे दूधके उत्पादनकी शक्ति घटती है और तमाम संतति खराब हो जाती है। इसलिये ऐसी गायोंका और साँड़ोंका संयोग कभी हो ही नहीं—इस बातका पूरा ख्याल रखना चाहिये।

(६) देशमें अच्छे साँड़ोंकी बहुत कमी हो गयी है।

आजकल दूधके लोभमें विदेशी (जर्सी) गायोंका प्रचलन बढ़ता जा रहा है। जर्सी साँड़के द्वारा देशी गायोंको बरधानेसे संकरीकरणके द्वारा जर्सी बाछे-बाछी होते हैं, जो वास्तवमें भारतीय दृष्टिसे गोवंश ही नहीं हैं तथा वे यहाँकी जलवायुके पूर्णतः अनुकूल नहीं होते। इनके बाछे तो खेतीके लिये अनुपयोगी होते ही हैं, दूध भी देशी गायोंके मुकाबले पौष्टिक नहीं होता तथा शास्त्रीय दृष्टिसे गौका जो लक्षण होना चाहिये उसका इनमें अभाव होनेके कारण इनकी गणना शुद्ध गोरूपमें नहीं होती। ये वर्णसंकर पशु होते हैं। इसलिये अच्छे-से-अच्छे देशी साँड़ बनाये जायँ और पाले जायँ। उनमेंसे कुछको अपने इलाकेकी अच्छी गायोंके बरधानेके लिये सुरक्षित रखा जाय, जिससे उनकी नस्लमें सुधार हो। यदि प्रत्येक पिंजरापोल दस-बीस अच्छे-से-अच्छे साँड़ बनाकर जनताके उपयोगके लिये तैयार कर दे तो गोजातिकी बहुत बड़ी सेवा हो सकती है। अन्यथा भारतीय नस्लकी गायें ही समाप्त हो जायँगी, जो देशका दुर्भाग्य होगा।

(७) ऐसे असमर्थ सद्गृहस्थोंकी अच्छी जातिकी गाभिन गायें, जिन्होंने दूध देना बंद कर दिया है, पालन करनेके लिये कम खर्चपर पिंजरापोलोंमें ले ली जायँ और ब्यानेके बाद उन्हें वापस दे दिया जाय। इसी प्रकार असमर्थ गृहस्थोंमें छोटे बछड़े-बछड़ियोंका भी पालन किया जाय। ऐसे गाय-बछड़ोंको कोई मालिक बेचना चाहे तो उन्हें पिंजरापोल अच्छी दुधार गाय और मजबूत बैल बनानेके लिये खरीद ले।

(८) पिंजरापोलोंके पास प्रायः जमीन होती ही है। नहीं तो जमीनका प्रबन्ध किया जाय और उसमें उपयोगी घास-चारेकी खेती की जाय और प्रचुर मात्रामें घास-चारा उपजाया जाय।

(९) गोचरभूमिमें सामान्य-कृषिके आधारपर अन्नादि उपजानेका प्रयास नहीं करना चाहिये, कारण गौशालाकी भूमिमें गायका खाद्य या चारा उपजाना ही उचित है। पर्याप्त चारा हो जानेपर अतिरिक्त भूमिमें कृषि भी की जा सकती है।

(१०) प्रतिवर्ष हरे घास-चारेको ठीक पद्धतिके अनुसार गड्ढोंमें दबाकर या कुप्पोंमें भरकर रखा जाय-Silage बनाये जायँ, जिनसे सूखे मौसममें पशुओंको पुष्टिकर चीज खानेको मिल सके।

(११) सूखे और हरे चारेका स्टाक किया जाय तथा काफी स्टाक होनेपर कम-से-कम दो वर्षके लिये अपनी आवश्यकताका सामान रखकर शेष उचित मूल्यपर गृहस्थोंको बेचा जाय।

(१२) पर्याप्त गोचरभूमि हो, जिसमें संस्थाकी गायें तो चरें ही, उचित कीमतपर दूसरे लोगोंकी भी बिसुकी हुई गायें और बछड़ी-बछड़े वहाँ चर सकें।

(१३) गोबरको जलानेके काममें न लेकर वैज्ञानिक रीतिसे उसकी खाद बनायी जाय। इसी प्रकार गोमूत्रका भी खादके काममें उपयोग किया जाय। पिंजरापोलकी परती जमीनमें इस खादसे बहुमूल्य घास-चारा पैदा हो सकता है।

(१४) कृषि-सुधारके आवश्यक और सुविधासे काममें लेने लायक तरीकोंसे फल-फूल और साग भी उपजाया जाय और उसे बेचा जाय। गोबर-गोमूत्रकी खादसे इस खेतीमें भी बहुत लाभ हो सकता है।

(१५) पशुओंकी सफाई तथा स्वास्थ्यका, उनके शरीरपर किलनी-जूँ आदि कीड़े घर न कर सकें, इसका पूरा ध्यान रखा जाय। अङ्गहीन, बीमार, निर्बल, बलवान् पशुओंके लिये रहने और चरनेके अलग-अलग स्थान हों। ताकि न तो परस्पर रोग संक्रमण कर सके, न बलवान् पशुकी मारके डरसे निर्बल पशु भूखा रहकर मृत्युकी ओर अग्रसर हो। उन्हें धोने, नहलाने, पोंछने, उनमें जानवर न पैदा होने देने इत्यादिकी पूरी व्यवस्था रहनी चाहिये। इमारतें, मकान इस ढंगके बनाने चाहिये जिनमें हवा और प्रकाश आता हो तथा जिनकी अच्छी तरह सफाई की जा सकती हो। कुएँ तथा सिंचाई आदिकी व्यवस्था वैज्ञानिक ढंगसे हो।

(१६) अच्छे गोचिकित्सक (Veterinary Doctor) को रखा जाय और साथ ही एक अस्पताल या दवाखाना रहे। बीमार पशुओंका सावधानीसे इलाज हो, जिस समय पशुओंमें कोई संक्रामक रोग फैलने लगे। उस समय यदि उन्हें दवाके जलसे नहलाने, प्रतिषेधक दवा या इंजेक्शन देनेकी पूरी व्यवस्था हो तो रोगका विस्तार सहज ही रुक जाय और बहुत-से पशुओंके प्राण अनायास ही बच जायँ।

कोई खास संक्रामक रोगसे पीड़ित गाय पिंजरापोलमें आवे तो उसे अलग रखकर इलाज करना चाहिये, जिससे दूसरी गायोंपर उसका असर न हो। गायोंको भर्ती करते समय यदि गोशालाके डॉक्टर गायकी परीक्षा कर लिया करें तो सर्वोत्तम है।

(१७) प्रत्येक संस्थामें पशु-पालन-विज्ञानमें पारंगत जिम्मेवार वैतनिक पुरुष रहने चाहिये। पशुओंकी पहचान,

उनके रखने और खिलाने-पिलानेकी व्यवस्था, सफल खेतीका प्रबन्ध, घास-चारेका संग्रह, हरे चारेके साइलेज (Silage) बनानेकी व्यवस्था, स्वच्छता और सफाईका प्रबन्ध, सब चीजोंका अलग-अलग हिसाब और रजिस्टर रखने आदि सारे काम उन्हींके नियन्त्रण और देख-रेखमें होने चाहिये। वे पशु-चिकित्सामें भी दक्ष हों तो सबसे अच्छी बात है। वैसी हालतमें पशुचिकित्साके लिये अलग डॉक्टर न रखकर एक सुयोग्य सहकारी रखनेसे भी काम चल सकता है।

(१८) पशु, घास-चारा, दुग्धालय, पशुओंकी जाति और उसके माता-पिता, पशुओंके जन्मपत्र और संस्थाके आय-व्यय आदिका ब्योरेवार विवरण रखना चाहिये।

(१९) नये पिंजरापोल, गोशालाएँ बनाये जायँ तो उनको शहरोंमें न बनाकर ऐसे स्थानोंमें बनाना चाहिये जहाँ खुली जगह हो। चारों ओर विस्तृत खेत हों। नदी-तट हो तो बहुत अच्छा है, नहीं तो, जलका पूरा प्रबन्ध तो अवश्य हो।

—राधेश्याम खेमका

गोशाला कैसी हो ?

जो लोग गौओंको सर्दी और वर्षासे बचानेके लिये घर बनवाते हैं उनके सात कुल तर जाते हैं। (महा०, अनु०, अ० ६६)

गोष्ठं च कारयेत्तस्य किञ्चिद् विघ्नविवर्जितम्।
सदा गोमयमूत्राभ्यां विघसैश्च विवर्जितम्॥
न मलं निक्षिपेद्गोष्ठे सर्वदेवनिकेतने।
आत्मनः शयनीयस्य सदृशं कारयेद्बुधः॥
समं निर्वापयेद् यत्नाच्छीतवातरजस्तथा।
प्राणस्य सदृशं पश्येद् गां च सामान्यविग्रहम्॥

(पद्म०, सृष्टि० ४८। १११—११३)

'गौओंके लिये एक ऐसा गोष्ठ बनाना चाहिये जिसमें कुत्ते, मक्खी, मच्छर, डाँस, चोर आदिका कोई भी विघ्न न हो। गोबर, गोमूत्र तथा बचे-खुचे घास-चारेका कूड़ा पड़ा न रह जाय। गौओंका गोष्ठ सारे देवताओंका निवास-स्थान है। उसमें मल नहीं डालना चाहिये। समझदार आदमीको चाहिये कि गोष्ठको अपने शयन करनेके कमरेकी तरह साफ-सुथरा रखे। इसे सर्दी, वायु और धूलसे समान भावसे प्रयत्नपूर्वक बचाये रखना चाहिये। गौ सामान्य प्राणी होनेपर भी उसे अपने प्राणोंके समान देखना चाहिये।'

गोशालामें मक्खी, मच्छर और डाँस इत्यादि न होने पायें, इसलिये रोज सुगन्धित धूनी देनी चाहिये। जो गोपालक गोशालामें इस प्रकार धूनी नहीं देता, वह मक्षिकालीन नरकमें जाता है और नरककी भयानक मक्खियाँ उसके चमड़ेको फाड़कर उसका रक्त-पान करती हैं। (देवीपुराण)

गोबर और गोमूत्रसे कभी घृणा न करे। सूखे चूनेसे गोशालाको सदा साफ रखे। गर्मियोंमें ठंडे पेड़ोंकी छायामें, वर्षा और शिशिर-कालमें थोड़े गरम और जोरकी हवा न आनेवाले घरोंमें तथा जाड़ेमें गर्म और बिना कीचड़के घरमें गायोंको रखे। जूठन, कफ, थूक, मूत्र, विष्ठा आदि किसी प्रकारके भी मलको गोशालामें न छोड़े। बछड़ेको कभी लाँघके न जाय। कुलटा स्त्री और नीच मनुष्योंको गोशालामें न जाने दे। जूता पहनकर अथवा हाथी, घोड़ा, गाड़ी या पालकीपर सवार होकर गायोंके बीचमें न जाय। (ब्रह्मपुराण)

प्रातःकाल नमक, इसके बाद जल और घास खानेको देना चाहिये। रातके समय गोशालामें दीपक जलाना चाहिये और बाजे तथा पौराणिक कथाकी व्यवस्था करनी चाहिये। उठते-बैठते, खाते-पीते सब समय मनमें नीचे लिखे मन्त्रका ध्यान करना चाहिये। ऐसा विचार करना चाहिये कि गायें ताजे घास-चारे और जलको खा-पीकर अपने बछड़ोंके साथ आनन्द करें। सुखपूर्वक दूध दें। गर्मी-सर्दी-रोगके भयसे विमुक्त होकर आरामसे सोयें—

तृणोदकाद्येषु वनेषु मत्ताः क्रीडन्तु गावः सवृषाः सवत्साः।
क्षीरं प्रमुञ्चन्तु सुखं स्वपन्तु शीतातपव्याधिभयैर्विमुक्ताः॥

(ब्रह्मपुराण)

श्रीगोरक्षण-संस्था, अमरावती (महाराष्ट्र)

[अॅड० श्री आर० एम०, मुँधड़ा, सचिव]

श्रीगोरक्षण-संस्था, अमरावती भारतकी प्राचीनतम गोशालाओंमेंसे एक है। इसकी स्थापना हुए आज सौ वर्षसे भी अधिक हो गये हैं। सन् १८९१ ई० में राष्ट्रनेता श्रीदादासाहेब खापर्डेके सत्प्रयत्नोंसे अमरावतीमें इस गोरक्षण-संस्थाकी स्थापना हुई। तबसे निरन्तर यह संस्था गोरक्षण, गोपालन तथा गोसंवर्धनके कार्योंमें लगी हुई है और यहाँका कार्य एवं प्रगति भी संतोषजनक है। इस संस्थाकी स्थापनाका मुख्य उद्देश्य भाकड़ी गोधनका संरक्षण है। दुधार गौ अथवा जोतके लिये समर्थ बैलको तो प्रायः सभी रखना चाहते हैं, किंतु गोधन जब बूढ़ा हो जाता है, अशक्त हो जाता है, उसकी कोई प्रत्यक्ष उपयोगिता नहीं दीखती, ऐसी स्थितिमें वह गोधन असहाय, अनाथ एवं असुरक्षित हो जाता है। ऐसे गोधनको प्रायः गोपालक अपने पास नहीं रखते, अतः ऐसे गोधनके पालन-पोषणके लिये ही मुख्यतः इस संस्थाकी स्थापना हुई। ऐसे गोधनकी सुरक्षा तथा उचित मूल्यपर आवश्यक व्यक्तिके लिये शुद्ध दुग्ध उपलब्ध कराना—यह इस संस्थाका मुख्य उद्देश्य है। यहाँ वर्तमानमें गाय, बैल आदिकी कुल संख्या ३०५ है, जिसका विवरण इस प्रकार है—

गाय, बैल, साँड़ तथा बछड़े-बछड़ियोंकी संख्याका विवरण—

	गायें	बछड़े	बछड़ियाँ	साँड़	बैल	कुल
दुग्धालय-विभाग	५८	३९	५०	६	०	१५३
गोसदन-विभाग	३१	१२	१२	१	९	६५
काँजी-हाउस	५७	३०	०	०	०	८७
	१४६	८१	६२	७	९	३०५

विभिन्न नस्लकी गायोंका विवरण

जर्सी	होल्स्टेन	थारपारकर	हरियानगीर	गीर	हरियाना	देशी
२७	१०	१०	५	२	२	९०
						कुल—१४६

संस्थामें जानवरोंकी देखभाल करनेके लिये कर्मचारी हैं तथा पशुचिकित्सा डॉक्टरद्वारा करायी जाती है। दुग्धालय-विभाग और गोसदन-विभागमें २५-३० कर्मचारी काम करते हैं। सभी जानवरोंके लिये कडवा, कुट्टीकी पर्याप्त मात्रामें व्यवस्था की गयी है। संस्थामें पत्नीकी व्यवस्थाके लिये बावड़ियोंपर इलेक्ट्रिक मोटरपंप लगाये गये हैं। जानवरोंके पीनेके लिये पानीके टाँके बनाये गये हैं।

संस्थाके पास ३२० एकड़ २ गुंठा जमीन है, इसमें २१९ एकड़ १९ गुंठा चराई योग्य पहाड़ है। घास चारा पैदा करने-हेतु संस्थाके पास दस्तूरनगरपर जो जमीन है उसमें विभिन्न प्रकारका मक्का, ज्वार, प्यारा घास, एन० बी० २१का हरा घास पैदा किया जाता है।

संस्थाका हमेशा यह प्रयास रहा है कि शुद्ध निर्मल गायका दूध जनताको प्राप्त हो। संस्थाद्वारा अपंग, छोटे बच्चोंको तथा धार्मिक कार्योंमें एवं मन्दिरोंमें निःशुल्क दूध दिया जाता है। गोबरको इकट्ठा करनेके लिये पक्के टाँके बनाये हैं, जहाँ गोबर एकत्र किया जाता है। यहाँपर ४५ घनमीटर गोबर-गैस प्लांट बनाया गया है। इसका तैयार किया हुआ खाद कास्तकारोंको रियायती दरोंपर दिया जाता है। नॅडेप-पद्धतिसे भी खाद तैयार होती है।

हमारी दृष्टिमें आदर्श गोशालाका स्वरूप

गाय तथा बछड़ोंको रखनेके लिये पर्याप्त मात्रामें जगह हो तथा उनको रखनेके लिये पर्याप्त मात्रामें कोठे हों। उन्हें अच्छा खाद्य मिले, गायों तथा बछड़ोंकी ठीक तरहसे देखभाल हो। गाय-बछड़ोंको चरानेके लिये पर्याप्त मात्रामें जमीन हो तभी अच्छी गौशाला बन सकती है। व्यवस्थापकोंका यह कर्तव्य है कि गायोंका दूध उचित मूल्यपर जनताको उपलब्ध करायें, उसी प्रकार किसानोंको उचित मूल्यपर खाद दें और जितना बन सके उतना अनाथ, अपंग व्यक्तियोंको बिना मूल्य दूध वितरण करें। किसानोंको गाय-बछड़े उचित मूल्यपर दें तथा समय-समयपर शिविर लगाकर पशुपालन-हेतु लोगोंमें जागृति-निर्माण करें और सबसे बड़े परिमाणमें आज जो हजारों गाय-बछड़े कसाईखानेमें जाते हैं उन्हें रोकें तथा पशुवध, गोहत्या न हो इसलिये भरसक प्रयत्न हो।

अमरावती गोरक्षण-संस्थाद्वारा इन सभी कार्योंको यथासम्भव विशेष प्रयत्नपूर्वक किया जा रहा है।

गोपालन तथा गोसंवर्धन-हेतु आज किन्हीं कारणोंवश जो गोशालाएँ बंद हैं, उन्हें पुनर्जीवित करना बहुत जरूरी है। यह देशव्यापी कार्य है। इसी हेतु 'अमरावती गोरक्षण-संस्था' ने 'विदर्भ गोशाला-पिंजरापोल' नामक एक संघ स्थापित किया है। विदर्भमें ५३ गोशालाएँ हैं। ये सभी गोशालाएँ इस संघसे संलग्न हैं।

इस संस्थाने गोमूत्र नालीद्वारा इकट्ठा करनेके लिये टाँके बनवाये हैं। यहाँ गोमूत्र-चिकित्साद्वारा बीमारोंका इलाज भी किया जाता है। गोमूत्रसे अर्क, वटी और आसव तैयार किया जाता है तथा वे दवाइयाँ बिना मूल्य बीमारोंको दी जाती हैं। इस हेतु आनेवाला सारा खर्च संस्थाद्वारा किया जाता है। संस्थाके आयके स्रोतोंमें दुकानोंसे प्राप्त होनेवाला किराया, दूध-बिक्री, खाद-बिक्री तथा सहयोग-राशि मुख्य है। इसीके साथ ही संस्थाने 'कार्पस फंड' की एक योजना भी चलायी है, इस योजनामें जो व्यक्ति २,५०० रु० देता है वह राशि भारतीय स्टेट बैंकमें फिक्स डिपॉजिटमें रखी जाती है और उसके ब्याजसे चारा आदि खरीदा जाता है। संस्थाने गायोंके तथा बछड़े-बछड़ियोंके लिये विभिन्न कक्ष तथा अपंग गायोंका अलग कक्ष बनाया है। जो लोग भाकड़ जानवरोंका पालन-पोषण नहीं करते, ऐसे जानवरोंको संस्था स्वीकार करके उनका पालन-पोषण करती है।

'श्रीविदर्भ-गोशाला-पिंजरापोल-संघ, अमरावती' की जो गोशालाएँ सदस्यरूपमें हैं उनकी एक सूची भी नीचे दी जा रही है—

'श्रीविदर्भ-गोशाला-पिंजरापोल-संघ, अमरावती' के सदस्य-गोशालाओंकी सूची

अनुक्रमाङ्क	गोशालाका नाम	स्थान	जिला
१	श्रीगोरक्षण-संस्था	अमरावती	अमरावती
२	,, ,,	धामणगाँव रेलवे	,,
३	,, ,,	बनोसा	,,
४	,, ,,	मोर्शी	,,
५	श्रीगुरुदेव-सेवाश्रम-गोशाला	गुरुकुंज मोझरी	,,
६	श्रीगोपाल-गोरक्षण-संस्था	अंजनगाँव सुर्जी	,,
७	श्रीविरबाई-गोशाला	अमरावती	,,
८	श्रीश्रीराम-गोशाला	अचलपुर	,,
९	श्रीगोरक्षण-संस्था	रीद्धपुर	,,
१०	,, ,,	अकोला	अकोला
११	,, ,,	रीसोड	,,
१२	,, ,,	मुर्तीजापुर	,,
१३	श्रीपिंजरापोल गोशाला	कारंजालाड	,,
१४	श्रीगोरक्षण-संस्था	वाशीम	,,
१५	श्रीसखाराममहाराज-संस्थान	लोणी	,,
१६	श्रीगोरक्षण-संस्था	शेगाँव	,,
१७	,, ,,	बालापूर	,,
१८	,, ,,	देगाँव	,,
१९	श्रीगोरक्षण-ट्रस्ट	भरतपुर	,,

'श्रीविदर्भ-गोशाला-पिंजरापोल-संघ, अमरावती' के सदस्य-गोशालाओंकी सूची

अनुक्रमाङ्क	गोशालाका नाम	स्थान	जिला
२०	श्रीगोरक्षण-संस्था	मेहा	अकोला
२१	,, ,,	,,	,,
२२	,, ,,	किनखेडपुर्णा	,,
२३	,, ,,	उकलीबाजार	,,
२४	,, ,,	कुरुम	,,
२५	,, ,,	यवतमाल	यवतमाल
२६	श्रीगोरक्षण-संस्था	वणी	,,
२७	,, ,,	उमरखेड़	,,
२८	श्रीग्रामसेवामंडल-गोशाला	गोपूरी	वर्धा
२९	श्रीगोरक्षण-संस्था	आर्वी	,,
३०	श्रीनयीतालीम-समिति-सेवा-ग्राम-गोशाला	सेवाग्राम	,,
३१	श्रीसर्वसेवासंघ-गोशाला	पीपरी	,,
३२	श्रीगोपूरी-संस्थान	नालवाडी	,,
३३	श्रीगोरक्षण-संस्था	हिंगणघाट	,,
३४	श्रीगोरक्षण-संस्था आनन्दवन	वरोरा	चंद्रपूर
३५	श्रीगोरक्षण-संस्था	नागपूर	नागपूर
३६	श्रीनागपुरव्यापारी-गोरक्षण-संघ	,,	,,
३७	श्रीगोरक्षण-संस्था	काटोल	,,
३८	श्रीबुलढाणा-गोरक्षण-ट्रस्ट	बुलढाणा	बुलढाणा
३९	श्रीगोपालकृष्ण-गोरक्षण-संस्था	जळगाँव जामोद	,,
४०	श्रीगोरक्षण-संस्था	खामगाँव	,,
४१	श्रीवर्धमान-गोरक्षण-संस्था	लोणार	,,
४२	श्रीगोरक्षण-संस्था	मल्कापूर	,,
४३	श्रीश्रीकृष्ण-गोरक्षण-सभा	गोंदिया	भंडारा
४४	श्रीगोरक्षण-संस्था	भंडारा	,,
४५	श्रीश्रीकृष्ण-गोशाला	तुमसर	,,
४६	श्रीगोरक्षण-संस्था	तिरोडा	,,
४७	श्रीदिलीपबाबा व्यसनमुक्त संस्थान व गोशाला	लाढी	अकोला
४८	श्रीगोरक्षण-संस्था	माधवनगर	,,

श्रीकाशी जीवदया-विस्तारिणी गोशाला एवं पशुशाला, वाराणसी

'श्रीकाशी जीवदया-विस्तारिणी गोशाला एवं पशुशाला, वाराणसी' की स्थापना सन् १८८८ में पं० मदनमोहन मालवीयजीकी प्रेरणासे हुई थी। जीवमात्रके प्रति दया और उसकी रक्षा इस गोशालाका मुख्य उद्देश्य है। अपने सुदीर्घ-कालीन इतिहासमें इस गोशालाका धीरे-धीरे बहुत विस्तार हुआ और गोरक्षा तथा गोसंवर्धन-सम्बन्धी अनेक संरचनात्मक तथा प्रायोगिक कार्य इस गोशाला तथा इसकी शाखाओंके माध्यमसे होते आ रहे हैं। गोशालाके पास विभिन्न क्षेत्रोंमें विशाल भूखण्ड तथा अपनी गोशालाएँ भी हैं, जिनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है—

(१) **बावन बीघा**—आजमगढ़के मुख्य मार्गपर नगरसे लगभग ८ कि० मी० की दूरीपर १०० बीघेका भूखण्ड है, जो 'बावन बीघा' के नामसे जाना जाता है।

(२) **रामेश्वर गोशाला**—काशीकी पंचक्रोशी यात्रा-मार्गमें स्थित 'रामेश्वर गोशाला' अपनी सक्रियताके कारण आज एक चर्चित गोशाला है। यद्यपि बीचमें इसकी कार्य-शैली कुछ शिथिल-सी हो गयी थी, किंतु १९८६के बाद इसे पुनः प्रतिष्ठित कर बहुत विस्तृत किया गया है। गोशालाके कार्यकर्ताओंने यह संकल्प लिया है कि 'कसाइयोंसे छुड़ायी गयी या सड़कोंपर उपेक्षित घूमती अथवा किसानोंद्वारा बोझ समझी जानेवाली कोई भी गाय या गोवंश (गाय, बैल, बाछा, बाछी, साँड़) इत्यादि गोशालामें आयेंगे तो उन्हें संरक्षण दिया जायगा।' इस संकल्पके बाद १९८६ से अबतक लगभग ५०,००० से भी अधिक गोवंश बचाये गये, उनमेंसे उत्पादक गोवंशको गाँववालोंको पालनेके लिये वितरित कर दिया गया। जिन गायोंको ग्रामीणों तथा किसानोंने अनुपयोगी मानकर नहीं लिया, वैसे १४००से अधिक गोवंश इस समय गोशालामें हैं। उन गायोंकी समुचित देखभाल हुई, जिससे ८५० लीटर दूध प्रतिदिन उत्पादित हो रहा है। यह गोशाला भिन्न-भिन्न खण्डोंमें विभाजित है। कुल लगभग २५० एकड़ भूमि इस शाखाके पास है। क्षेत्र तथा कार्य-सुविधाकी दृष्टिसे इसकी विभिन्न उपशाखाएँ हैं—

(क) **मुख्य भवन**—रामेश्वर बाजारमें गोशालाका मुख्य भवन है। यहाँ अधिकतर दुधार एवं प्रजननयोग्य गोवंश रखे जाते हैं।

(ख) **पंचशिवाला**—मुख्य भवनसे एक किलोमीटरकी दूरीपर पंचशिवालामें चारे आदिका उत्पादन होता है तथा अतिरिक्त गोवंशके लिये खटाल है।

(ग) **मधुवन**—मुख्य भवनसे लगभग ३ कि० मी० दूर मधुवनमें कसाइयोंसे पकड़े गये दुधार गोवंश रखे जाते हैं, जिनमें कुछ गायें समुचित देखभालके बाद दूध देने लगती हैं।

(घ) **वृन्दावन**—यह मधुवनके निकट है। यहाँ अधिकतर तथाकथित अनुपयोगी गोवंश रखे जाते हैं।

(३) **सदर**—नगरमें दुलहिनजी रोड, गोलघरमें गोशालाका प्रधान कार्यालय है, यहाँ लगभग ८० दुधार गायें हैं, यहाँ बाछीको प्रजनन योग्य बनानेका भी केन्द्र है।

(४) **सारंग**—पहड़िया सारंगपर गोशालाकी ३.११ एकड़ भूमि मुख्य मार्गपर है। यहाँ पर आदर्श डेयरी स्थापित करनेकी योजना है।

इस प्रकार 'काशी जीवदया-विस्तारिणी गोशाला' अपने अनेक रूपोंमें अनेक स्थानोंपर गोवंशके रक्षण एवं संवर्धनके अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है। गोबर तथा गोमूत्रके अनेक उपयोगोंके साथ ही इनके द्वारा ऊसर भूमिको उपजाऊ बनानेका कार्य चल रहा है। गोबर-गैसका प्रयोग ऊर्जाके रूपमें तथा नॅडेप-पद्धतिसे सेन्द्रिय खादका प्रयोग भी व्यापक स्तरपर हो रहा है। विशुद्ध दूधकी उपलब्धतामें भी इस गोशाला तथा इसकी शाखाओंका विशेष योगदान है। गोरक्षण, गोसंवर्धन तथा गोपालनके साथ ही हमारा मुख्य उद्देश्य है अपने सर्वाङ्गीण विकासमें गाय-बैलके योगदानकी उपयोगिताको समझते हुए आध्यात्मिक उन्नतिकी ओर अग्रसर होना और जीवमात्रके प्रति दया एवं करुणाका भाव रखना।—(श्रीअशोककुमारजी सराफ (प्रधान मन्त्री)

[स्थानाभावके कारण अन्य गोशालाओंका विवरण संलग्न परिशिष्टाङ्कमें दिया गया है।]

गोरक्षा-अभियान

[भारतवर्ष एक अध्यात्मप्रधान देश है। पाश्चात्त्य देशोंके कार्य-कलाप और वहाँकी नीतियाँ स्वार्थसे प्रेरित होती हैं, जबकि भारतमें परमार्थकी प्रधानता है। अपने तुच्छ स्वार्थकी सिद्धिके लिये किसी भी प्राणीको कष्ट देना अथवा उसकी हत्या करना अधर्म माना गया है। भारतीय संस्कृतिने इसे कभी स्वीकार नहीं किया। जहाँतक गायका प्रश्न है, प्रारम्भसे ही हमारे ऋषि-महर्षि और मनीषियोंने गायको संसारका सर्वश्रेष्ठ प्राणी माना और इसे विश्वकी माता कहकर सम्बोधित किया।

अनादिकालसे वेदोंमें गायको 'अघ्न्या' कहकर यह दर्शाया गया है कि गाय अवध्य है अर्थात् किसी भी स्थितिमें गायका वध नहीं किया जा सकता। 'अघ्न्या' का अर्थ है जो न तो स्वयं किसीको कष्ट पहुँचाये और न अन्य किसीके द्वारा मारी-पीटी और क्लेश पहुँचायी जाय। इसीलिये प्रारम्भसे ही भारतीय शासकोंने गोवंशको राज्यका संरक्षण प्रदान किया और इसे अवध्य माना अर्थात् उन दिनों गोवध करनेवालेको प्राणदण्ड दिया जाता था। हिन्दू सम्राटोंके समय तो गोवधपर पूर्ण प्रतिबन्ध रहा ही, मुगल बादशाहोंके शासनकालमें भी समझदार शासकोंने अपनी दूरदर्शिताके आधारपर प्रजामें परस्पर सौमनस्यता रखनेकी दृष्टिसे गोवधपर पूर्ण प्रतिबन्ध रखा। पर बादके दिनोंमें विदेशियोंके शासनकालमें इस प्रतिबन्धपर शिथिलता आने लगी और गोहत्याका पाप प्रारम्भ हो गया जो आजतक हो रहा है। देशमें गोहत्याके कलंकको मिटानेके लिये ही स्वतन्त्रता-संग्रामकी शुरुआत हुई। स्वतन्त्रता-संग्रामके प्रमुख कर्णधारोंने यह घोषणा की कि 'स्वराज्य प्राप्त होते ही गोहत्याका काला कलंक सबसे पहले मिटेगा', जबकि आज स्वराज्य प्राप्त किये ४७ वर्ष बीत गये और राम-कृष्ण, बुद्ध तथा गाँधीकी इस पवित्र भूमिपर अभीतक गोरक्त गिरना बंद नहीं हुआ—गोहत्या पूरी बंद नहीं हो सकी।

स्वराज्य-प्राप्तिके बाद गोहत्या-बंदी कानून बननेकी आशा क्षीण होनेपर यहाँकी जनता, बुद्धिजीवियों और संत-महात्माओंने गोवध-बंदीके लिये अहिंसात्मक आन्दोलन, सत्याग्रह किये, जेलकी यातनाएँ सहीं, बलिदान और कुर्बानियाँ दीं, जो इस देशका एक इतिहास बन गया। गोरक्षाके प्रयत्नकी इस ऐतिहासिक परम्पराका दिग्दर्शन यहाँ संक्षेपमें प्रस्तुत किया जा रहा है, जो गोभक्तोंके लिये विशेष प्रेरणादायक है। आशा है, इस देशके कर्णधार शीघ्र ही गोवंशकी हत्या-बंदीका केन्द्रीय कानून बनाकर देशको पतनके गर्तमें जानेसे बचायेंगे और भारतीय संस्कृतिकी रक्षा करेंगे।]—**सम्पादक**

भारतमें गोरक्षाकी ऐतिहासिक परम्परा

[पं० श्रीजानकीनाथजी शर्मा]

सुदर्शना एवं सुमङ्गला गायका वेदोंमें मुख्य नाम 'अघ्न्या' आता है—

'अघ्न्यानां नः पोषे कृणोतु' (अथर्व० शौ० ९।४।२; पैप्पलाद० १६।२४।२।६; यजु० १२।७३; मैत्रायणी २।५।१०; तैत्ति० सं० ३।३।९।२) इत्यादि। **'अद्धि तृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती।'** (ऋग्वेद १।१६४।४०) **'नहि मे अस्त्यघ्न्या'** (ऋग्वेद ८।१०२।१९) इत्यादि। श्रीअमरसिंहने भी (अमर० २।९।६६-६७ में) कहा है—

माहेयी सौरभेयी गौरुस्रा माता च शृङ्गिणी॥
अर्जुन्यघ्न्या रोहिणी स्यादुत्तमा गोषु नैचिकी।

—इस श्लोकमें उन्होंने माता, अघ्न्या, रोहिणी,

सौरभेयी आदि गायके नाम बतलाये हैं तथा रत्नमाला, वैजयन्ती, त्रिकाण्डशेष आदि कोषोंके कर्ताओंने भी गायके धेनु, सुदर्शना, माहेयी इज्या, कल्याणी, भद्रा अनड्वाही, पावनी आदि और भी अनेकों नाम दिये हैं।

अघ्याकी व्याख्या—जो न तो स्वयं किसीको कष्ट पहुँचाती है और न जो अन्य किसीके द्वारा कभी मारी-पीटी या क्लेश पहुँचायी जाने योग्य है अर्थात् पूज्या, वन्द्या और श्रद्धेया है—इस अर्थमें उज्ज्वलदत्त आदिने **'न हन्यते कैर्वापि'**, **'न वा हन्ति दातारम्'**, **'ग्रहीतारं वा'**, इस व्युत्पत्तिद्वारा **'अघ्न्यादयश्च'** (उणादि ४। ११२) सूत्रकी व्याख्यामें यक् प्रत्ययसे इस 'अघ्न्या' पदकी साधुता स्वीकार की है। —**'यकः कित्वात्', 'गमहन०' इत्युपधालोपे 'हो हन्तेः' इति कुत्वेन हस्य घः।**

'निरुक्त' में भी श्रीयास्कने (११। ४३ में) स्वयं ही **'अहन्तव्या भवतीत्यघघ्नीति वा अघ्न्या'** कहकर इसकी व्याख्या लिखी है। निरुक्त निघण्टु २। ११। १ की व्याख्यामें देवराज यज्वाने आगे लिखा है—

'अघस्य दुर्भिक्षादेर्हन्त्री वा अहन्तव्या वेति अघ्न्या'

महाभारत, शान्तिपर्व (२६२। ४७) में भी तुलाधार तथा भीष्मने सुस्पष्ट रूपसे इसकी व्युत्पत्ति करते हुए कहा था—श्रुतिमें गौओंको अघ्न्या (अवध्य) कहा गया है, फिर कौन उन्हें मारनेका विचार करेगा? जो पुरुष गाय और बैलोंको मारता है, वह महान् पाप करता है—

अघ्न्या इति गवां नाम क एता हन्तुमर्हति।
महच्चकाराकुशलं वृषं गां वाऽऽलभेत् तु यः॥

ये अघ्न्या, माता, अर्जुनी, सुरभी, माहेयी, अदिति, इज्या, कल्याणी तथा भद्रा आदि शब्द—गायके नाम ही गोरक्षाकी ऐतिहासिकताका साक्ष्य दे रहे हैं। आजकल अनीश्वरवादकी तरह भारतमें 'गोमांस' की बात कहनेका फैशन चल पड़ा है, इसका कारण मध्यकालीन कवियोंका धार्मिक विनोद है। जैसे हठयोगके ग्रन्थोंमें कहा गया है—

गोशब्देनोदिता जिह्वा तत्प्रवेशो हि तालुनि।
गोमांसभक्षणं तत्तु महापातकनाशनम्॥

(हठयोग-प्रदी० ३। ४८)

यहाँ खेचरी-मुद्राको ही गोमांस-भक्षण कहा गया है। 'गो' शब्दका अर्थ है जिह्वा और तालु-विवरमें उसका प्रवेश ही मांस-भक्षण है। यही खेचरी-मुद्रा है।

बी० ए० स्मिथने अपनी प्रसिद्ध प्राचीन इतिहासकी पुस्तकके 'फण्डामेण्टल यूनिटी ऑफ हिन्दूइज्म' नामके प्रकरणमें लिखा है—Nearly all Hindu reverance Brahmnas and all may be said to venerate cow.P.7

कौटिल्यने अपने अर्थशास्त्रके २। २६ में गोरक्षापर राजाको पूर्ण ध्यान देनेके लिये आदेश दिया है। अशोकके शिलालेखोंमें गोहत्यापर पूर्ण प्रतिबन्ध दृष्ट है। इसी प्रकार नूनिजने विजयनगरके राजाओंके विषयमें स्पष्ट लिखा है कि वे गोमाताकी पूजा करते थे और उनके यहाँ मांस-भक्षणपर सर्वथा निषेध था। (Vijaya Nagar P. 315)

बदाउनीने लिखा है कि हिन्दुओं तथा जैनियोंके प्रभावसे अकबरके राज्यमें कोई भी गोवध नहीं कर सकता था—Stringent ristrictions on the eat of flesh, meat, imposed by a series of enactments seem to have been mainly due to own influence, though the idea of Hindu ascetis, may also have played a part, as Badauny suggests. (ibid, P. 350)

बी० ए० स्मिथने अपने इतिहास १०१ पर जहाँगीरके विषयमें यहाँतक लिखा है कि वह जान या अनजानमें भी गोहत्यारोंको फाँसीपर लटकानेमें नहीं हिचकता था—Jahangir in the 17th century did not hesitate to kill or mutilate some unlucky men, who had accidently spoiled short at a blue bull.

सुप्रीम कोर्टके एक फैसलेसे इन सभीका संग्रह करते हुए 'ट्रुथ' २०-१-७३ की सम्पादकीय टिप्पणीमें ठीक ही लिखा है—'In the 15th century the question was so acute that a ruler, like Baber had to enjoy on his successors the duty to stop cowkilling so as not to hurt the feelings of his Hindu subjects. As late as the 18th century Hyder Ali the most powerful ruler of Mysore issued a firman that anybody discovered killing a cow would have his hands cut off.'

(Quoted in the Supreme Court Judgement of 1958)

काँग्रेसके प्रेसिडेन्सियल भाषणोंमें भी इसी प्रकारके

ही मुख्यांश-युक्त भाषण संगृहीत हैं।

स्वामी दयानन्द, महात्मा गाँधी, जमनालाल बजाज, स्वामी करपात्रीजी, ला० हरदेवसहायजी, श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी एवं श्रीभाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारने भी इसी परम्पराका पूर्णतया पालन करते हुए गोरक्षार्थ अनेक तप एवं उत्सर्ग किये। वस्तुतः शुद्ध गोरक्षा-गोसेवा आदिके बिना देशमें आचार, श्री, ऐश्वर्य और शान्ति-स्थापन सम्भव नहीं है। अपितु जैसा कि देखा जा रहा है—निरन्तर अन्न-वस्त्रका अभाव, चोरी, डाँका, हत्या-लूट आदि उपद्रव और सभी प्रकारकी अशान्ति, दुःख तथा क्लेशोंकी परम्परा ही पनपती जा रही है एवं व्याप्त होती चली जा रही है। कहा तो यहाँ तक जाता है कि जहाँ गायोंको तनिक भी क्लेश होता है वहाँ जप-पूजा-पाठ, यज्ञ, तप आदिमें भी सिद्धि नहीं मिलती, पूर्ण फलकी प्राप्तिकी कल्पना ही दुर्घट है।

ऐसी दशामें सुख-शान्ति, राजनीतिक सफलता, व्यावहारिक सौहार्द और सब प्रकारके कल्याणके लिये एकमात्र उपाय है सच्ची भावनासे गोसेवा-गोपालन और गोपूजा। जबतक भारतमें इसकी परम्परा थी, दूध-दहीकी नदियाँ बहती थीं तबतक शान्ति थी और देवता भी यहाँ जन्म लेनेके लिये तरसते थे। उर्वशी अप्सरा तो केवल घृतपान करनेके लिये पुरूरवाके साथ भारतमें बहुत दिनोंतक रही। ऐसे और अनेक उदाहरण हैं। राजा मरुत्के यज्ञमें तो मरुद्गण नामक देवगण भी भोजन परोसनेका काम करते थे और विश्वेदेवगण सदा उनके सभासदके रूपमें विराजते थे—

मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन् गृहे।
आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासदः॥

यह परिस्थिति आज भी अभी ही लौट सकती है, यदि हम पूर्ण श्रद्धासे भगवती गौकी अर्चना करनेके लिये तत्पर हो जायँ—प्रवृत्त हो जायँ।

गोरक्षाकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

[ब्रह्मलीन अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीपरमानन्द सरस्वतीजी महाराज]

प्राचीनतम कालसे लेकर ईसवी-पूर्व पाँचवीं शताब्दीतक भारतमें वैदिक संस्कृतिका ही प्राधान्य रहा। फिर धार्मिक स्पर्धाका एक नया अध्याय आरम्भ हुआ। यह था बौद्धधर्मके उद्भवका इतिहास। वैदिक संस्कृतिसे अनुप्राणित सभी हिन्दू सम्राटोंके शासनमें गोवंशको राज्यका संरक्षण प्राप्त रहा। गोवध करनेवालेको प्राण-दण्ड दिया जाता था। गोमेधयज्ञका नाम लेकर जो प्राचीन भारतमें गोवध और गोमांसभक्षण सिद्ध करनेका कुप्रयास करते हैं वे गोमेधके स्वरूपको नहीं जानते, ऐसे ही शास्त्रोंमें नरमेधकी भी बात आयी है। हो सकता है कि इसे लेकर कोई ज्ञान-लव-दुर्विदग्ध यह सिद्ध करने चले कि प्राचीन भारतमें नरवध होता था और हिन्दू लोग नर-मांस-भक्षी थे, किंतु ऐसी बात है नहीं। गाय वस्तुतः भारतमें सदा ही 'अवध्य' मानी गयी है और भारतीयोंने उसका वध कभी सहन नहीं किया।

प्राचीन भारतके शक्तिशाली सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य (३२३ से ३२८ ई० पूर्व) के शासनकालमें गोवंशका वध दण्डनीय अपराध था। चन्द्रगुप्तके महामात्य आचार्य चाणक्यकृत कौटिलीय अर्थशास्त्र (२। २६। ४३) में समस्त गोवंशको 'अवध्य' कहा गया है। '**वत्सो वृषो धेनुश्चैषामवध्याः। घ्नतः पञ्चाशत्को दण्डः।**' राज्यके विविध कर्तव्योंमें गोवंशकी रक्षा और पालन एक प्रमुख कर्तव्य था। राज्य गो-संवर्धनके लिये भी सचेष्ट रहता था और इसके लिये राज्यकी ओरसे 'गो-अध्यक्ष' की नियुक्ति होती थी। गो-अध्यक्षके कर्तव्य विस्तारसे कौटिलीय अर्थशास्त्रमें वर्णित है।

बौद्धधर्म तो पूर्णरूपसे अहिंसा-धर्मपर ही निर्भर रहा है। भगवान् बुद्ध करुणाके ही अवतार कहे जाते हैं। बौद्धधर्मके 'कुलवग्गसुत्त' नामक ग्रन्थमें जीवोंको क्षति पहुँचाना, हिंसा करना, काटना, चोरी करना, झूठ बोलना, छल-छद्म करना, असद्-ग्रन्थोंका पढ़ना और परस्त्रीगमन करना—ये निषिद्ध कर्म बताये गये हैं। सभी जीवोंकी

हिंसाका निषेध करनेवाले बौद्धधर्ममें गोवंशके वधका प्रश्न ही नहीं उठता। इसीलिये बौद्धधर्म स्वीकार करनेवाले सम्राट् अशोक (३०४ से २३२ ई० पूर्व) ने उसी धर्म-भगवान् प्रेरित होकर अपने राज्यमें पशुवधको कानूनन बंद कर दिया। इसी प्रकार मौर्य शासन और उससे पूर्व भी गोवंशके वधपर पूर्ण प्रतिबन्ध था।

भारतीय सनातन संस्कृतिके नियामक शास्त्र मानवधर्म-शास्त्र अथवा मनुस्मृतिमें महर्षि मनुने मांसके व्यवहारको प्रशस्त नहीं माना, विहित-अविहित सभी प्रकारके मांसोंके परित्यागको ही उत्तम बताया है और भगवत्प्राप्तिके साधनोंमें पूर्ण अहिंसा-व्रतको मुख्य माना है। '**अहिंसया च भूतानाममृतत्वाय कल्पते॥**' (मनु० ६। ६०) तीसरी शताब्दीमें विष्णु-भक्तिके प्रचारसे विशेष रूपसे अहिंसा-धर्मको अधिक बल दिया।

दसवीं शताब्दीतक भारत गोवंशके लिये स्वर्गभूमिकी भाँति था। महमूद गजनवीके आक्रमण (९९८ से १०३० ई०) से पूर्व मुसलमान सूफी संत भारतमें आकर साधना करने लगे थे। पर वे सब गायको आदरकी दृष्टिसे देखते थे। मुसलमान आक्रान्ताओंने विजयके गर्वमें गोवध आरम्भ किया। यह सत्य है कि इस्लाम गोभक्तिका पाठ नहीं पढ़ाता, पर यह भी सत्य है कि इस्लाम धर्मके लिये गोहत्या करना अनिवार्य नहीं। मुसलमानोंके आगमनसे पूर्व भारतमें पारसी लोग आ चुके थे। वे गायका आदर करते हैं। गायके गोबर और मूत्रसे पवित्रता प्राप्त होनेमें विश्वास करते हैं। जैन और बौद्ध भी गायका आदर करते हैं। अतः राजा लोग चाहे हिन्दू-धर्मके प्रभावमें रहे हों चाहे जैन बौद्धधर्मके प्रभावमें—भारतमें गोवंशके वधपर प्रतिबन्ध ही रहा। मुसलमान शासकोंने स्पर्धावश गोवध आरम्भ किया। युगोंसे चली आयी गोभक्तिका समाजपर प्रभाव यह हुआ था कि गोघातक और गोमांस-भक्षी हिन्दू ही नहीं माना जाता था। गोभक्षकसे हिन्दूको स्वाभाविक घृणा होती थी। बाबर (१५२६ से १५३० ई०) की दूरदर्शिताने बहुसंख्यक समाजकी इस बद्धमूल भावनाको परखा और इस्लामका भी इसमें कोई विरोध न देखकर फरमानद्वारा गोहत्या बंद कर दी। इससे हिन्दू और मुसलमानोंमें सौमनस्य स्थापित होने लगा। अकबर (१५४२—१६०५ ई०) ने भी इस नीतिकी दूरदर्शिताको परखा और गोवधको कानूनन बंद कर हिन्दूका स्नेह प्राप्त किया। हिन्दू और मुसलमान सौहार्दपूर्वक समान नागरिकोंकी भाँति जीवन व्यतीत करने लगे। यह सौहार्द अधिक कालतक स्थायी न रह सका। राजपूत और मराठा योद्धाओंने मुस्लिम शासनका अन्त करनेके लिये शस्त्र ग्रहण किया। प्रतिक्रियामें मुस्लिम शासकोंका हिन्दू-विरोधी रवैया और उग्र हो गया। पर इस संघर्षमें मुस्लिम शक्ति उत्तरोत्तर क्षीण होती गयी। यहाँ तक कि अन्तिम मुगल बादशाह नाममात्रका शासक रह गया था। विजयके परिणाम-स्वरूप हिन्दू-राज्य पुनः जहाँ-जहाँ स्थापित हुए, वहाँ गोवध पूर्णरूपसे कानूनन बंद कर दिया गया। गोवंशका पुनः उद्धार-सा हुआ। कुछ राज्योंने तो अपने सिक्कोंपर गायका चित्र देना आरम्भ कर दिया।

भारतमें यूरोपियनके आनेसे इतिहासका एक और नया पृष्ठ आरम्भ हुआ। वैसे तो यूरोपियनोंका भारतमें आगमन १७वीं शताब्दीमें ही आरम्भ हो गया था, पर १८ वीं शताब्दीके उत्तरार्धमें राजनैतिक सत्ता भी उनके हाथमें आने लगी थी। १८५७ के अनन्तर तो भारतका समग्र मानचित्र गुलाबी रंगका हो गया। हिन्दू और मुसलमान दोनोंके ऊपर अंग्रेजोंका आधिपत्य स्थापित हो गया। ये ईसाई धर्मको माननेवाले थे। यद्यपि ईसाई धर्ममें अहिंसा, प्रेम और भ्रातृत्वकी ही प्रधानता है, पर व्यवहारमें यूरोप जैसा ईसाई होनेसे पूर्व मांस-भक्षी था वैसा ही ईसाई होनेके अनन्तर भी बना रहा। १९वीं शताब्दीमें विज्ञानके उद्भवने तो मांस-भक्षणको एक प्रकारका बौद्धिक आधार समर्पण कर स्थायित्व प्रदान कर दिया। विज्ञानसे प्रभावित यूरोप मांस-भक्षणको मनुष्य-जीवनके लिये अनिवार्य और भूत-हिंसाको स्वाभाविक मानने लगे। अंग्रेज गोमांस-भक्षी थे। अतः गोरे सैनिक और शासकोंके लिये गोमांसकी व्यवस्था की जाने लगी। यह सब इस ढंगसे चला कि सर्वसाधारण जनताकी दृष्टिमें नहीं आने पाया। सन् १८५७ की क्रान्तिमें अंग्रेज यह अनुभव कर चुके थे कि भारतीय जनता गायके नामपर विद्रोहके लिये शीघ्र ही संगठित और खड़ी की जा सकती है।

भारतको अपने हितोंके अनुकूल ढालनेकी चिन्ता अंग्रेज शासकोंको होने लगी। उसके लिये विविध उपाय किये गये। स्थितिकी स्पष्टताके लिये भारतपर अंग्रेजी राज्यके उन महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक परिणामोंपर दृष्टिपात कर लेना उपयोगी होगा, जिनका दुष्परिणाम हम आज भी भोग रहे हैं। अंग्रेजोंने जितने अधिक कालतक भारतके जिस भागपर राज्य किया वह उतना ही अधिक गरीब और पिछड़ा भाग है।

गोवंशकी दृष्टिसे इसके घातक परिणाम हुए। गोचरभूमियाँ तोड़कर खेत बनाये जाने लगे। गोपालनकी व्यवस्था जो महाभारतकाल और मौर्य-शासनकालमें वैज्ञानिक रूप धारण कर चुकी थी, स्वाभाविक ही गड़बड़ाने लगी। खेतीके लिये बैलोंकी माँग बढ़ी। उपलब्ध बैलोंपर ही बढ़े हुए कामका बोझ डाला गया। गोचरभूमियोंकी उत्तरोत्तर कमीसे गाय और बैलोंकी चराईका स्तर गिर गया। परिणाम यह हुआ कि एक ओर आवश्यकताके दबावमें पशुओंकी संख्या बढ़ायी गयी और दूसरी ओर चराईका स्तर गिर जानेसे पशुओंकी नस्लका ह्रास होने लगा। अंग्रेजोंद्वारा भारतके शोषणका यह अनिवार्य परिणाम हुआ।

इधर शिक्षामें भी उन बातोंका समावेश किया गया, जिससे गोभक्तिकी भावना समाप्त हो। कृषि-आयोगकी नियुक्ति की गयी, जिसने अपनी यह रिपोर्ट प्रस्तुत की कि पशुओंकी संख्या अधिक और पालनके साधन कम हैं। यदि बेकार पशुओं (दूध न देनेवाली गाय और बोझा न ढोनेवाले बैल) की संख्या कम न की गयी तो कामके गाय-बैलोंकी भी हालत बुरी हो जायगी। गोवंशके विनाशके लिये यह बुद्धिवादका आधार प्रस्तुत किया गया। चारेकी वृद्धि अशक्य तो नहीं थी, पर शायद उसके उपायोंको विचारना और प्रस्तुत करना आयोगकी विचारसीमासे बाहर था या उनकी दृष्टिमें अनावश्यक था।

सर्वसाधारण भारतीय जनताकी भावनाएँ गायके प्रति फिर भी वही रहीं। अंग्रेजोंने अमृतसरमें बूचड़खाना खोलनेका जब प्रयास किया तो उसका भयंकर विरोध किया गया। यही हालत लाहौरमें हुआ। सन् १९०५ में जबसे राष्ट्रिय आन्दोलन अपने पैरोंपर खड़ा हुआ—गोरक्षाका प्रश्न राष्ट्रिय प्रश्न बना लिया गया और अंग्रेजोंके विरुद्ध जनताको यही कहकर खड़ा किया गया कि 'अंग्रेज गोमांस-भक्षी हैं, इन्हें निकाल देनेपर गोरक्षा अपने-आप हो जायगी।' गाँधीजीने यहाँतक कहा कि 'हम स्वतन्त्रताके लिये कुछ समयतक रुक भी सकते हैं, पर गोहत्या होना हमें एक दिन भी सहन नहीं।' गाँधीजीने इन शब्दोंमें बहुसंख्यक भारतीयोंके हृदयकी आवाज उठायी थी। ईसाई धर्म गोहत्याको पुण्य नहीं बताता। गोरक्षा होना इस्लामके भी विरुद्ध नहीं। शेष सभी धर्मावलम्बी हिन्दू, बौद्ध, जैन, पारसी, सिक्ख—सभी गोरक्षाकी माँग करते हैं। इस सांस्कृतिक पृष्ठभूमिमें सहज ही समझा जा सकता है कि गोरक्षाका प्रश्न विविध धर्मों और सम्प्रदायोंके इस देशमें राष्ट्रिय एकता और साम्प्रदायिक सौमनस्य सम्पादित करनेका ठोस आधार है।

स्वतन्त्रता-प्राप्तितक सारे प्रयत्न देशसे अंग्रेजोंको निकालनेके लिये ही किये गये और यह आशा की गयी कि स्वतन्त्रता मिलते ही भारतमें गोवधपर प्रतिबन्ध लगा दिया जायगा, किंतु स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद भी जब यह आशा मूर्तरूप धारण करती नहीं दिखायी दी तो भारतीयोंने विविध संस्थाओंके नेतृत्वमें इसके लिये आवाज उठायी और आन्दोलन आरम्भ किये। अब भी यह समझनेके लिये समय है कि गोरक्षाके बिना भारतकी आत्माको संतोष नहीं होगा। राष्ट्रिय एकता दृढ़ होनेके स्थानपर साम्प्रदायिक विद्वेष बढ़ेगा, जिसके अवान्तर परिणाम भारतकी प्रगतिमें महान् बाधक होंगे।

एक दृष्टिसे देखा जाय तो गाय उपकारकताकी प्रतीक है। उपकारकके प्रति किसी अवस्थामें नृशंस होना कृतघ्नता और असुरता है। लाभका लोभ देकर मनुष्यको कृतघ्न और नृशंस बनानेका पाठ पढ़ाना मोहक हो सकता है, पर मङ्गलदायक नहीं।

स्वाधीनता-संग्राम और गोरक्षा

[श्रीशिवकुमारजी गोयल]

भारत धर्मप्राण ऋषि-मुनियोंका देश होनेके कारण गौमाताके प्रति अनादिकालसे असीम श्रद्धा-भक्ति रखता रहा है। भारतमें गाय तथा गोवंशको अवध्य माना जाता रहा है। भारतमें-विदेशी-विधर्मी मुसलमानोंके आधिपत्य जमानेके बाद यहाँ गोहत्याका कलंक जारी हुआ। मुस्लिम शासनकालमें छत्रपति शिवाजी, महाराणाप्रताप, गुरु गोविन्दसिंह आदि राष्ट्रवीरोंने गोहत्याके कलंकके विरुद्ध निरन्तर संघर्ष किया। शिवाजीने तो बाल्यावस्थामें ही एक गोहत्यारे कसाईका वध कर, गायको मुक्त कर अपनी गोभक्तिका परिचय दिया था।

गुरु गोविन्दसिंहजी महाराजने तो सिख-पंथकी स्थापना ही गोघात (हत्या) का कलंक मिटानेके उद्देश्यसे की थी। उन्होंने अपनी इष्टदेवी नैनादेवीसे वर माँगा था—*'गोघातका दुःख जगतसे मिटाऊँ'।* गुरु तेगबहादुर, गुरु अर्जुनदेव आदि सिख गुरुओंके बलिदान हिन्दूधर्म तथा गौमाताकी रक्षाके लिये ही हुए थे।

महाराजा रणजीतसिंहने शासनकी बागडोर सँभालते ही राज्यमें गोहत्यापर प्रतिबन्ध लगानेका पहला कार्य किया था। महाराजा रणजीतसिहंने जब अपनी फौजमें कुछ यूरोपियन जनरलोंकी नियुक्ति की थी तो सबसे पहली शर्त यही थी कि वे धर्मप्राण भारतके उनके राज्यमें गोमांसका सेवन कदापि नहीं कर पायेंगे।

१८५७ का प्रथम स्वातन्त्र्य-समर गौमाताकी हत्यासे उत्पन्न आक्रोशका ही परिणाम था। जब अंग्रेज सरकारने कारतूसोंमें गायकी चर्बीका प्रयोग शुरु किया तो गोभक्त भारतीय सैनिक यह सहन नहीं कर पाये कि विदेशी विधर्मी अंग्रेज सरकार गायकी चर्बीके माध्यमसे उनका धर्म भ्रष्ट करे। वीर मंगल पाण्डेने बैरकपुर छावनीमें गायकी चर्बीसे अपवित्र कारतूसोंको छूनेसे इनकार करके खुला विद्रोह किया था। इस विद्रोहकी सजा उस गोभक्त, धर्मप्रेमी ब्राह्मण सैनिकको फाँसीके रूपमें दी गयी थी। स्वातन्त्र्यवीर सावरकरने अपने '१८५७ का प्रथम स्वातन्त्र्य-समर' नामक ग्रन्थमें अनेक तथ्य प्रस्तुत कर यह स्पष्ट किया है कि हिन्दू सैनिक सब कुछ सहनेको तैयार थे, किंतु गायकी चर्बीसे युक्त कारतूसोंको उन्होंने छूनेसे स्पष्ट इनकार कर विद्रोह कर डाला था।

१८५७ के प्रथम स्वातन्त्र्य-समरके पीछे जहाँ विदेशी शासनको हटानेकी भावना थी, वहीं विदेशी सरकारद्वारा धर्मपर प्रहार किये जानेके कारण भी अंदर-ही-अंदर क्षोभ बढ़ता गया था। अंग्रेज पादरी हिन्दुस्तानी सिपाहियोंपर हिन्दूधर्म त्यागकर ईसाई-धर्म स्वीकार करनेपर जोर डालने लगे थे। कई जगह गाँवोंमें यह भावना फैली कि अपने बेटोंको सेनामें भर्ती करानेका परिणाम उनका ईसाई बनना होगा।

इसी दौरान अंग्रेज शासकोंने बंदूकोंके नये कारतूस निकाले, जिन्हें चिकना करनेके लिये गायकी चर्बीका उपयोग किया जाता था। उन कारतूसोंको दाँतसे काटकर खोलना पड़ता था।

सर्वप्रथम बैरकपुर (बंगाल) छावनीकी १९ वीं पल्टनको २९ मार्च, १८५७ को गायकी चर्बीसे युक्त कारतूस प्रयोगके लिये दिये गये। उससे पहले ही छावनियोंमें यह समाचार फैल चुका था कि विदेशी विधर्मी अंग्रेज हिन्दुस्तानियोंको ईसाई बनाने, उन्हें अपने धर्मसे भ्रष्ट करनेके लिये गौमाताकी चर्बी-लगे कारतूस मुँहसे खोलनेको बाध्य करनेवाले हैं। बैरकपुर छावनीमें जैसे ही सैनिकोंको चर्बीयुक्त कारतूस दिये गये कि गोभक्त सैनिक मंगल पाण्डे खुली परेडमें बंदूक लेकर गरज पड़े—'हम गौमाताके भक्त सनातनधर्मी हैं। चर्बी-लगे अपवित्र कारतूसोंको छूकर अपना धर्म भ्रष्ट कदापि नहीं करेंगे।'

अंग्रेज सार्जेन्ट मेजर हूसनने मंगल पाण्डेको गिरफ्तार करनेका आदेश दिया। कोई भी हिन्दुस्तानी सैनिक इसके लिये तैयार नहीं हुआ। इसी बीच मंगल पाण्डेने अंग्रेज अफसरपर गोली दागकर उसे मार डाला। गोलीकी आवाज सुनकर लेफ्टिनेन्ट बाम सामने आया तो गोभक्त मंगल पाण्डेने उसे भी गोलियोंसे भून डाला।

परिणामतः अन्तमें मंगल पाण्डेको ८ अप्रैल, १८५७ को फाँसीपर लटका दिया गया। देश और धर्मके लिये, गो-प्रेमके लिये वीर मंगल पाण्डेकी यह १८५७ के स्वातन्त्र्य-समरकी पहली आहुति थी।

मंगल पाण्डेके बलिदानके बाद पूरे देशकी सैनिक छावनियोंमें यह बात फैल चुकी थी कि नये कारतूसोंमें गाय तथा सूअरकी चर्बी लगवाकर अंग्रेज हिन्दुस्तानियोंका धर्म भ्रष्ट करनेपर उतर आये हैं। मेरठमें १० मई १८५७ को 'सैनिक क्रान्ति' का विस्फोट हुआ था। मेरठ छावनीमें स्थित 'काली पलटनका शिव-मन्दिर (जिसे अब बाबा औघड़नाथका मन्दिर कहते हैं) उन दिनों एक राष्ट्रभक्त गोप्रेमी साधुका गुप्त अड्डा बना हुआ था। यह साधुवेशधारी गोभक्त पुजारी भीषण गर्मीमें ठंडा पानी पीनेके लिये आनेवाले हिन्दू सैनिकोंको तरह-तरहसे गोद्रोही अंग्रेज सरकारके विरुद्ध जाग्रत् करता था।'

एक दिन मईकी भीषण गर्मीमें जब कुछ सैनिक पानी पीनेके लिये काली पलटनके मन्दिरपर पहुँचे तो उस तेजस्वी पुजारीने सैनिकोंको लोटेसे पानी पिलानेसे इनकार कर दिया और बोला—'मैं गौमाताकी चर्बी-लगे अपवित्र कारतूसको अपने मुँहसे खोलनेवाले धर्मभ्रष्ट हुए तुमलोगोंको मन्दिरके पवित्र लोटेसे पानी कैसे पिला सकता हूँ।' सैनिकोंमें जिज्ञासा बढ़ी तथा उनकी गोभक्तिकी भावनाको आघात भी लगा। उन्होंने छावनीमें पहुँचकर अपने अन्य साथियोंको यह बताया कि 'विधर्मी अंग्रेज हमें गौमाताकी चर्बी-लगे कारतूस देकर हमारा धर्म भ्रष्ट कर रहे हैं।' अंदर-ही-अंदर गोभक्त हिन्दू सैनिकोंमें विद्रोही भावना फैलती गयी। मुस्लिम सैनिकोंको संदेह हुआ कि जब अंग्रेज हिन्दुओंको गायकी चर्बीके कारतूस दे सकते हैं तो वे मुसलमानोंका धर्म भ्रष्ट करनेके लिये सूअरकी चर्बीका भी प्रयोग कर सकते हैं।

अंग्रेजोंने मंगल पाण्डेके विद्रोहको मामूली समझा तथा ६ मईको मेरठ छावनीमें ९० हिन्दुस्तानी घुड़सवार सिपाहियोंको चर्बीयुक्त नये कारतूस दिये गये। ८५ सिपाहियोंने इन्हें छूनेसे भी इनकार कर खुला विद्रोह कर दिया। ९ मईको इन ८५ सिपाहियोंका कोर्ट मार्शल कर दस-दस वर्षकी सजा देकर जेल भेज दिया गया।

अगले दिन १० मईको छावनीके सभी हिन्दुस्तानी सैनिकोंने खुला विद्रोह कर डाला। देखते-ही-देखते सैनिक अंग्रेजोंपर टूट पड़े। पूरा मेरठ आगकी लपटोंमें झुलस गया। उन्होंने एक दिन पहले गिरफ्तार किये गये ८५ सैनिकोंको जेलसे छुड़ा लिया। एक दर्जनसे ज्यादा अंग्रेज अफसरोंको मौतके घाट उतार दिया गया।

इस विद्रोहके बाद जब मेरठ जनपदके राजपूत-बहुल क्षेत्र धौलाना, पिलखुवा, डूहरी, मुकीमपुर आदि गाँवोंमें बैठकें हुई तो उनमें भी यही कहा गया—'विदेशी विधर्मी अंग्रेज हमारे देशपर राज्यकर, उसे लूटनेके बाद, हमें गुलाम बनानेके बाद अब गोहत्या कराकर, गायकी चर्बी कारतूसोंमें लगाकर हमारे धर्म तथा गोभक्तिको चुनौती दे रहे हैं। हमें इन गोभक्षक अंग्रेजोंसे अब जूझना ही होगा।'

धौलानामें पुलिस-थाना जलाने तथा विद्रोह करनेके आरोपमें जब तेरह राजपूतों तथा एक वैश्य (अग्रवाल) लाला झनकूमल सिंहलको पकड़कर पीपलके पेड़पर फाँसीपर लटकाया गया था, तब बलिदान देनेसे पूर्व उन्होंने यही कहा था—'गौमाताकी हत्याके कारण गोभक्त ग्रामीण जनतामें ब्रिटिश शासनके विरुद्ध अंदर-ही-अंदर क्षोभ फैल रहा था। उसीका परिणाम इस खुली बगावतके रूपमें सामने आया है।'

१८५७ की इस क्रान्तिके दौरान पिलखुवा (गाजियाबाद) के गढीवाले प्राचीन मन्दिरपर रहनेवाले एक गोभक्त नागा बाबाने एक गोरे सैनिकद्वारा गायपर गोली चलाते ही अपनी छाती बंदूकके सामने तान दी थी तथा गायके साथ ही गोभक्त नागा बाबा शहीद हो गये थे।

बिहारमें 'बिहार-केसरी' वीर कुँवरसिंह १८५७ के महान् स्वातन्त्र्य-सेनानी थे। वे जगदीशपुर (शाहाबाद) के राजा थे। वीर कुँवरसिहंने विदेशी-विधर्मी अंग्रेजोंसे डटकर टक्कर ली थी। अतरौलियाके जंगलमें वीर कुँवरसिंहका सेनापति डगलुसनकी सेनासे मुकाबला हुआ था। बलियाके निकट शिवपुरमें कुँवरसिंह अपने सैनिकोंके साथ नौकाओंसे गङ्गापार कर रहे थे कि अंग्रेज सैनिकोंने उनपर गोलियाँ बरसायीं। एक गोली कुँवरसिंहकी दाहिनी कलाईमें घुस

गयी। कुँवरसिंहने अपनी तलवार निकाली और घायल हुई दाहिनी भुजाको काटकर गङ्गा माँको समर्पित करते हुए कहा था—'माँ गङ्गे! गौमाताकी चर्बीसे युक्त अंग्रेजोंकी अपवित्र गोलीने मेरी भुजाको अपवित्र कर दिया है, इसे मैं तुझे समर्पित करता हूँ, जिससे यह पावन हो सके।'

१८५७ की सशस्त्र क्रान्तिके पीछे निश्चय ही अन्य मुद्दोंके साथ-साथ गौमाताकी हत्या, गौमाताकी चर्बीका कारतूसोंमें प्रयोग किया जाना भी था। भले ही अंग्रेजोंने बादमें इस तथ्यपर लीपापोती करने तथा इतिहासमें इसे नकारनेका प्रयास किया।

वीर सावरकरने '१८५७ का प्रथम स्वातन्त्र्य-समर' ग्रन्थमें लिखा है—'अंग्रेजोंने कितना ही स्पष्टीकरण दिया कि कारतूसोंमें गाय और सूअरकी चर्बी नहीं लगायी जाती थी, किंतु 'इंडियन म्यूटनी' के प्रथम खण्डके पृष्ठ ३८१ में लिखा हुआ है—'कारतूसोंमें लगायी जानेवाली चर्बीको उपलब्ध करानेवाले ठेकेदारके साथ हुए इकरारनामेसे यह स्पष्ट प्रमाणित होता है कि कारतूसोंमें लगायी जानेवाली चर्बीमें गायकी चर्बी होती थी, इसमें तनिक भी संदेहकी गुंजाइश नहीं है।'

स्वातन्त्र्य-संग्रामके पुरोधा तथा इतिहासकार वीर सावरकर लिखते हैं—'अंग्रेजोंद्वारा जिस प्रकार अनेक बार भारतीयोंके साथ कपटपूर्ण व्यवहार किये गये, उन्हें सुनकर आज भी रक्तका प्रत्येक बिन्दु खौल उठता है। कारतूसोंमें गाय और सूअरकी चर्बी लगायी जा रही है—इसका हिन्दुस्तानी सैनिकोंने तुरंत विश्वास कर लिया। कारतूसोंको लेकर उमड़ते असंतोषको दबानेके लिये अंग्रेज सरकारने झूठका सहारा भी लिया तथा लिखा कि कारतूसोंमें अब भेड़की चर्बी प्रयोग की जाने लगी है। किंतु वे सचाईपर पर्दा नहीं डाल सके।'

मेरठके बाबा औघड़नाथ मन्दिरपर पानी पिलानेवाले पुजारीने जिस प्रकार हिन्दुस्तानी सैनिकोंको लोटेसे पानी पिलानेसे इनकार कर उन्हें चर्बीयुक्त कारतूसोंको मुँह लगाकर धर्मभ्रष्ट करनेके लिये धिक्कारा था, उसी प्रकार देशके अन्य भागोंमें स्थित छावनियोंमें भी हुआ था। वीर सावरकर '१८५७ का स्वातन्त्र्य-समर' नामक ग्रन्थमें लिखते हैं—'दमदम (कलकत्ता) छावनीका ब्राह्मण सैनिक जब एक व्यक्तिको लोटेसे पानी पिलानेसे इनकार कर देता है तो वह जवाब देता है—'किस मुँहसे धर्मभ्रष्ट होनेकी बात करते हो महाराज! आपका धर्म उस समय भ्रष्ट नहीं होता जब आपके सैनिक साथी चर्बी-लगे कारतूसोंको मुँहसे खोलते हैं।'

इन तथ्योंसे यह बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि १८५७ के प्रथम स्वातन्त्र-समरके पीछे निश्चय ही गोभक्तिकी भावना थी।

प्रख्यात स्वाधीनता-सेनानी और पत्रकार पण्डित सुन्दरलालने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ—'भारतमें अंग्रेजी राज्य' में लिखा है—'धर्मान्ध या अदूरदर्शी औरंगजेबके राज्यमें भी गोहत्या नहीं हुई। जनता गोहत्यासे घृणा करती थी। अंग्रेजोंने गोरी फौजका पेट भरनेके लिये दोआबके इलाकेमें विशेषतया हिन्दुओंके पवित्र तीर्थस्थान मथुरामें गौओंका काटना प्रारम्भ कर दिया। इससे अंग्रेजोंके विरुद्ध घृणा और असंतोष उत्पन्न होना स्वाभाविक था। जब हिन्दू और मुसलमान सैनिकोंको मालूम हुआ कि नये कारतूसोंमें गाय और सूअरकी चर्बी लगी है और ये कारतूस मुँहसे खोलने पड़ेंगे, तब असंतोषने क्रान्तिका रूप धारण कर लिया। देशकी साधारण जनता, भारतीय सैनिक, राजा, नवाब—सबने अंग्रेजी राज्यको बदलनेके लिये क्रान्तिमें भाग लिया। जगह-जगह 'स्वधर्मकी रक्षाके लिये अंग्रेजोंसे जूझ पड़ो' के लगाये गये उद्घोष इसी धर्म-भावना एवं गोभक्तिके परिचालक थे। भारतीय किसानों, सिपाहियों तथा प्रत्येक वर्गके लोगोंमें यह भावना पैदा हो चुकी थी कि विदेशी विधर्मी अंग्रेज सरकार हमारे धर्म, हमारी संस्कृतिकी प्रतीक गौमातापर आघात कर हमें धर्मभ्रष्ट करनेपर उतारू है। तभी विद्रोहाग्नि चरम सीमापर पहुँच पायी थी।

गोहत्याके विरोधमें कूका-विद्रोह

कूका नामधारी सिख-सम्प्रदायने भी स्वाधीनता-आन्दोलनमें सक्रिय भाग लिया था। नामधारी सिख-सम्प्रदायके सद्गुरु रामसिंहजी महान् स्वाधीनता-सेनानी थे। उन्होंने अपने शिष्योंको स्वदेशीका संकल्प दिलाया था। भैणी साहब सद्गुरु रामसिंहजी महाराजने अपने शिष्योंके

बीच प्रवचन करते हुए स्पष्ट कहा था—'विदेशी विधर्मी अंग्रजी सत्ता पूरे देशमें विदेशी परम्पराएँ लागू कर रही है। हमें अपने धर्म तथा संस्कृति और राष्ट्रियताकी रक्षाका व्रत लेना है।' उन्होंने गोरक्षाको नामधारी सम्प्रदायका प्रमुख सूत्र बताया। इस बीच अंग्रेजोंने 'फूट डालो और राज्य करो' नीतिके अन्तर्गत अमृतसर-जैसे पावन नगरमें, जो सिख-तीर्थ है, गोहत्याकी छूट दे दी। गोभक्त हिन्दुओं (केशधारी सिखोंसमेत) में गोहत्यासे रोष व्याप्त हो गया। गोभक्त नामधारी सिख इस कलंकको सहन नहीं कर सके। १४ जून १८७१ के दिन नामधारी वीरोंकी एक टोलीने बूचड़खानेपर आक्रमण कर अनेक कसाइयोंको मौतके घाट उतार डाला। अंग्रेजोंके शासनने लहनासिंह, हाकिमसिंह, बोहलसिंह तथा फतहसिंह 'माटरन' नामक चार गोभक्त नामधारियोंको फाँसी तथा लालसिंह और लहनासिंहको आजीवन कारावासकी सजा दे दी। इसके बाद गोहत्यारोंके हौसले बढ़ गये। अमृतसरमें जगह-जगह गोहत्या की जाने लगी।

१५ जुलाई १८७१ को नामधारी गोभक्तोंने कस्बा रामकोटके गुरु गोविन्दसिंह गुरुद्वारेके पास स्थित बूचड़खानेपर हमला कर दो गोहत्यारे कसाइयोंको मौतके घाट उतार डाला तथा गायोंको मुक्त कराया। अंग्रेज कमिश्नरके आदेशपर मंगलसिंह, गुरमुखसिंह तथा मस्तानसिंह नामक तीन गोभक्तोंको ५ अगस्त १८७१ को रामकोटके बूचड़खानेके पास सरेआम फाँसीपर लटका दिया गया।

पंजाबके मलेरकोटला स्थानपर भी अंग्रेज गोहत्या कराते थे। १५ जनवरी १८७२ को नामधारी गोभक्तोंकी टोलीने मलेरकोटलाके बूचड़खानेपर धावा बोलकर उसे तहस-नहस कर डाला तथा कई गोहत्यारोंकी हत्या कर दी।

अंग्रेज कमिश्नरने ४९ नामधारियोंको पकड़वाकर १७ जनवरी १८७२ को मलेरकोटलाके मैदानमें सरेआम तोपोंसे उड़वा दिया। अगले दिन १८ जनवरीको १६ गोभक्त नामधारियोंको तोपोंसे उड़ाया गया। कुछको कालापानी भेजा गया।

सद्‌गुरु रामसिंहजी महाराजको उनके सहयोगियोंके साथ पकड़कर जलावतन कर दिया गया। इस प्रकार स्वाधीनता-संग्राम-सेनानी सद्‌गुरु रामसिंहजी तथा उनके नामधारी सम्प्रदायने गोरक्षार्थ अविस्मरणीय बलिदान दिये।

१८५७ की क्रान्तिके बाद महात्मा गाँधी, महामना पं० मदनमोहन मालवीयजी महाराज, लोकमान्य तिलक, स्वामी श्रद्धानन्द आदिने स्वाधीनता-आन्दोलनको सक्रिय किया था। इन सभी नेताओंने स्वाधीन भारतमें गोहत्याका कलंक पूरी तरह मिटानेका संकल्प लिया था।

सन् १९२१ में असहयोग आन्दोलनके दौरान गोपाष्टमीके पावन पर्वपर दिल्लीके 'पटौदी हाउस' में महात्मा गाँधीकी उपस्थितिमें हुए एक सम्मेलनमें सर्वसम्मतिसे पारित प्रस्तावमें कहा गया था—'अंग्रेजी राज्यमें गोहत्या होती है, अतः इस राज्यसे सहयोग नहीं किया जाय।' इस ऐतिहासिक सम्मेलनके स्वागताध्यक्ष हकीम अजमलखाँ थे तथा अध्यक्षता लाला लाजपतरायने की थी।

महामना पंडित मदनमोहन मालवीयजी महाराजने देशके कई स्थानोंपर आयोजित सभाओंमें घोषणा की थी कि 'देशके स्वाधीन होते ही गोहत्याका कलंक मिटाया जायगा।' महात्मा गाँधीने अपने 'नवजीवन' पत्रके २५ फरवरी १९२५ के अङ्कमें लिखा था—'गोरक्षाका प्रश्न स्वराज्यके प्रश्नसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।'

महान् स्वाधीनता-सेनानी लाला हरदेवसहायने तो देशके स्वाधीन होनेके बाद भी गोहत्याका कलंक जारी रहते देखकर कांग्रेससे त्यागपत्र देकर अपना जीवन गोहत्या-बंदीके पावन उद्देश्यके लिये समर्पित कर दिया था। इसी तरह प्रख्यात स्वाधीनता-सेनानी तथा साहित्यसेवी सेठ गोविन्ददासने संसद्‌में हमेशा गोहत्या-बंदीका मामला उठाया तथा कांग्रेसके अनुशासनकी भी उन्होंने कभी चिन्ता नहीं की।

इस प्रकार भारतीय स्वाधीनता-संग्रामके पीछे गोभक्ति तथा गौरक्षाकी भावनाका बहुत बड़ा योगदान रहा।

गोरक्षा एवं गो-संवर्धनके विविध प्रयास

(श्रीराधाकृष्णजी बजाज)

गोसेवा-संघके प्रयासोंका इतिहास १८ दिसम्बर, १९२४ से आरम्भ होता है। उस दिन महाराष्ट्रके संत गोभक्त चौडे महाराजके प्रयाससे बेलगाँवमें गोरक्षा-परिषदका अध्यक्ष-पद महात्मा गाँधीजीने सँभाला था। महात्माजीको गोसेवाका काम अत्यन्त प्रिय था। उन्हें लगता था कि जबतक गोहत्या होती है, तबतक मानो उन्हींकी हत्या होती है। गाँधीजी मानते थे कि गोरक्षा हिंदू-धर्मकी मानव-समाजके लिये सबसे बड़ी देन है। गाँधीजीने अध्यक्षीय भाषणमें कहा था कि 'गोरक्षाका कार्य स्वराज्यसे भी कठिन लग रहा है।' उन्होंने कहा—'आजतक स्वराज्यके किसी कार्यका आरम्भ करते समय उनके चित्तमें कोई हिचक नहीं हुई। गोरक्षाका काम आरम्भ करते हुए आज दिल हिचक रहा है, पता नहीं इसमें कहाँतक सफलता हो पायेगी।'

२८ अप्रैल, १९२५ को अ०भा० गोरक्षा-मण्डलकी स्थापना 'माधव-बाग बंबई' में हुई। इस मण्डलका विसर्जन होकर दिनाङ्क २५ जुलाई, १९२८ को साबरमतीमें अ० भा० गोसेवा-संघकी स्थापना की गयी, जिसके अध्यक्ष स्वयं गाँधीजी थे। गोरक्षाकी प्रथम शुरुआत गाँधीजीने गोव्रतसे की। गाँधीजीने सदस्योंके लिये 'गोव्रत' रखना आवश्यक रखा था। गोव्रत यानी दूध, दही और घी आदि तथा सभी पदार्थ गौके दूधके ही इस्तेमाल किये जायँ। गोदुग्धके पदार्थ इस्तेमाल होंगे तो हमारे घरका चारा-दाना गायको मिलेगा, गायकी सेवा होगी। सदस्योंके लिये 'गोव्रत' रखना आवश्यक था। उन दिनों आचार्य काका साहेब कालेलकर, संत विनोबाजी, श्रीबालजीभाई देसाई, माता जानकीदेवी बजाज आदि अनेक सदस्य बनाये गये थे। इस संघकी ओरसे साबरमतीमें गोशाला और चर्मालय भी आरम्भ किये गये थे। परंतु गाँधीजीको उतनेसे कार्यसे पूरा संतोष नहीं था।

गोरक्षामें पूरी शक्ति लगे इसके लिये गाँधीजीने सेठ जमनालालजी बजाजको कहा कि 'मेरे दो काम अत्यन्त प्रिय हैं, हरिजन-सेवा और गोसेवा।' हरिजन-सेवाके लिये ठक्कर बाप्पा-जैसे समर्थ सेवक मिल गये हैं। गोसेवाका कार्य आप उठा सकें तो मुझे संतोष होगा। जमनालालजीने तुरंत ही बापूजीकी आज्ञा शिरोधार्य की। ३० सितम्बर, १९४१ विजयादशमीको गोसेवा-संघकी स्थापना 'ग्रामसेवा-मण्डल नालवाडी-वर्धा' की नयी वसाहतके प्राङ्गणमें हुई। अनेक राष्ट्र-नेता उपस्थित थे। चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य-जीके सुझावपर नाल़वाडीकी नयी वसाहतका नाम गोपुरी रखा गया।

गोसेवा-संघकी अध्यक्षयताकी जिम्मेवारी श्रीजमनलालजी बजाजपर आयी। सेठजी किसी कामको लेते थे तो रात-दिन उनका चिन्तन चलता था। उस चिन्तनके फलस्वरूप पहली फरवरी, १९४२ को गोसेवा-संघका अ० भा० सम्मेलन बजाजवाडी वर्धामें हुआ। इस सम्मेलनकी अध्यक्षता महामना मालवीयजी करनेवाले थे। समयपर वे नहीं आ सके, इसलिये सम्मेलनकी अध्यक्षता संत विनोबाजीने की। उद्घाटन स्वयं गाँधीजीने किया। गोरक्षाके लिये इस सम्मेलनमें अष्टविध कार्यक्रम तय किया गया—(१) एक हजार गोव्रतधारी सदस्य बनाना, (२) पूरे वर्धा शहरको गोदुग्ध देना, (३) दूर देहातोंमें गोदुग्ध संग्रह करके गोघृत तैयार करना, (४) गोशालाओंका सुधार करना, (५) गोप- विद्यालय चलाना, (६) स्थानीय गौ-नसलोंका सुधार करना, (७) हरे चारेका प्रसार करना और (८) चर्मालय स्थापित करना।

विधिका विधान अलग ही था। सम्मेलनके आठ दिन बाद ही ११ फरवरी १९४२ को ब्लडप्रेशरकी अधिकतासे जमनालालजी बजाजका स्वर्गवास हो गया। उनके सारे अरमान अधूरे ही रह गये।

सेठजीके जानेका बापूजीको गहरा धक्का लगा। उन्होंने महीने भर बाद ही सेठजीके हितैषियोंको इकट्ठा करके मार्च १९४२ में गोसेवा-संघका पुनर्गठन किया गया। माता जानकीदेवी बजाजको अध्यक्ष बनाया गया। संत विनोबाजी और सेठ घनश्यामदासजी बिड़ला उपाध्यक्ष बनाये गये। गोपुरीमें गोशाला चलती ही थी, उसके दूधकी बिक्रीके लिये वर्धामें गोरस-भंडारकी स्थापना की गयी।

गोसेवाकी दृष्टिसे गोसेवा-संघका प्रथम प्रयास गोदुग्धको बढ़ावा देनेका रहा। भावना यह थी कि भैंसके

आक्रमणसे गायको बचाया जाय। सभी जगह भैंसका दूध बढ़ने लगा था और गौका दूध घटता जा रहा था, गोदुग्धकी बिक्री भी कम थी और भाव भी कम था। गोसेवा-संघकी नीति थी कि खेती-जोतके लिये बैल-शक्ति और दुग्ध-शक्ति एक ही पशुमें मिले ताकि दो पशुका भार न रहे। दोनों शक्तियाँ सर्वाङ्गी गौ-नसलमें थीं। सर्वाङ्गी यानी जिसकी बछड़ी अच्छी दुधार हो और जिसका नर खेती-जोतके लिये सक्षम हो। भारतमें सर्वाङ्गी नसलें थारपारकर हरियाना, काँक्रिज, गीर, मेवाती, गंगातीरी, देवनी, कांगायम आदि थीं, जिनका दूध भी काफी बढ़ सकता था और नर भी उत्तम बैल बन सकते थे। इसलिये प्रथम प्रयास इन नसलोंके अच्छे साँड़ तैयार करके नसल-सुधारका काम किया जाय ऐसा तय रहा, बिड़ला-परिवारकी ओरसे जमनालालजीकी स्मृतिमें १०८ उत्तम साँड़ तैयार करके गोशालाओंको देनेका संकल्प था, उसके अनुसार साँड़ तैयार करके बाँटे गये थे।

नसल-सुधारकी दृष्टिसे गोपुरीमें स्थानीय गवलाऊ-नसलके सुधारका प्रयोग किया गया। १० सालके प्रयासमें गवलाऊ-नसलकी गायें जो दिनभरमें २-३ लीटरसे अधिक दूध नहीं देती थीं, वे गायें और उनकी बछड़ियाँ ८—१० लीटर दूध देनेवाली हो गयीं। बछड़े भी बढ़ियाँ बैल निकले। यह सारा सुधार सिलेक्टिव्ह ब्रीडिंग-शुद्ध नसल-सुधारके द्वारा किया गया था। महाराष्ट्र सरकारकी ओरसे चलाये जानेवाले गवलाऊके फार्मसे भी गोपुरीके परिणाम अच्छे थे। भारत सरकारकी टीम भी आयी थी, उसने भी यहाँके सिलेक्टिव्ह ब्रीडके कार्यक्रमको बहुत ही सराहा था। बादमें परिस्थिति बदली, व्यवस्था भी बदली, यह प्रयोग समाप्त हो गया। बीचमें क्रॉस ब्रीडिंगने जोर मारा, संस्थाने क्रॉस ब्रीडिंगको पूरी तरहसे हटाकर शुद्ध गीर-नसलका संवर्धन चलाया।

गोसंवर्धन—गोरस-भंडार

गोसंवर्धनके लिये गोशालाओंका आजतक उपयोग हुआ। परंतु आजकी स्थितिमें गोशालाएँ चलाना बहुत ही कठिन हो गया है। पिछले ५० सालके अनुभवसे देखा गया है कि गोसंवर्धन—गोरस-भंडारकी योजना बहुत ही सफल रही है। सर्वप्रथम वर्धामें 'गोरस-भंडार' शुरू किया गया। एक लाखसे भी कम आबादीका वर्धा एक छोटा-सा शहर है। यहाँ सर्वत्र भैंसके दूधका बोलबाला रहा है। यहाँ शुरूमें दस लीटर गायका शुद्ध दूध गाँधी-विनोबाके आश्रमोंके लिये मिलना मुश्किल था। उस वर्धामें आज करीब ४,०००-४,५०० लीटर दूध रोजाना आ रहा है, यह 'गोरस-भंडार-योजना'का एक परिणाम ही है।

गोरस-भंडारके ग्राहकोंके बीच एक बार सर्वे किया गया तो अधिकांश बहनोंने बताया कि जबसे 'गोरस-भंडार' का दूध लेने लगे हैं, तबसे बाल-बच्चोंका स्वास्थ्य अच्छा रहने लगा है। एक बहनने तो भरी सभामें कहा—'मेरे बच्चेको जो इनाम दिया जा रहा है, वह 'गोरस-भंडार' को दिया जाना चाहिये। वर्धामें 'गोरस-भंडार' का दूध पीता है तो बच्चा स्वस्थ रहता है और छुट्टियोंमें बाहर जानेपर वह कमजोर हो जाता है।'

'गोरस-भंडार' का दूसरा प्रयोग राजस्थान 'गोसेवा-संघ' ने जयपुरमें किया। इस क्षेत्रमें ७५ प्रतिशत भैंस और २५ प्रतिशत गायें थीं। आज इस क्षेत्रमें ७५ प्रतिशत हरियाना गायें हो गयी हैं और भैंसें कम बची हैं। इस क्षेत्रमें अच्छे-से-अच्छे साँड़ रखकर गो-नसलोंका सुधार भी हुआ है, हरे चारेकी खेती भी बढ़ी है। यहाँके किसान इस योजनासे प्रसन्न हैं। रोजाना लगभग ५ हजार लीटर दूध 'जयपुर-भंडार' में आता है।

—ये दोनों 'गोरस-भंडार' काफी पुराने ३०—४० सालसे भी पुराने हैं। हालहीमें ३ साल पहले 'रामेश्वर-गोशाला-वाराणसी' के सहयोगीसे और 'कृषि-गोसेवा-संघ'की प्रेरणासे 'सुरभि-शोध-संस्थान-वाराणसी'ने 'गोरस-भंडार' की योजना शुरू की। इस समय प्रतिदिन तीन हजार लीटर दूध 'गोरस-भंडार' में आ रहा है। १६५ गोपालक हैं एवं लगभग १,३०० गायोंका पालन-पोषण होता है। दूध देनेवाले गोपालक खुश हैं। यदि काशी नगरीमें गौके दूधकी माँग बढ़े तो प्रतिदिन १० हजार लीटर गोदुग्ध आसानीसे उपलब्ध कराया जा सकता है। काशी-क्षेत्रमें संतोंको और गोप्रेमियोंको सोचना है कि अपने घरोंमें, मठ-मन्दिरोंमें गोदुग्ध ही लें। काशी-क्षेत्रमें गोदुग्धकी खपत बढ़ी तो काशीके चारों ओर गोकुल-ही-गोकुल खड़े हो सकते हैं।

'गोरस-भंडार'की विशेषता इतनी ही है कि ग्राहकसे जिस भावके पैसे मिलें, उनमेंसे भंडारका खर्च कम-से-कम लेकर अधिक-से-अधिक भाव गोपालकोंको दिया

जाय। गोपालकोंसे दूध व्यापारी भी खरीदते हैं और शहरोंमें बेचते हैं। सरकारी डेयरी भी खरीदती है और बेचती है, परंतु ये दोनों एजेन्सियाँ व्यवस्था-खर्च बहुत अधिक रख लेती हैं, ग्वालोंको कम-से-कम दाम मिलते हैं। गोपालकोंको अधिक-से-अधिक देना एवं व्यवस्था-खर्च कम-से-कम रखना यही सच्ची सेवा है। गोशालाओंके मुकाबले ग्वालोंके पास गायें अच्छी हालतमें रहती हैं। गायोंकी देखभाल घरवाले प्रेमसे करते हैं। गाँवोंमें गायें कम खर्चमें पलती हैं। धूपमें घूमनेवाली गाँवकी गायोंका दूध भी स्वास्थ्यकर होता है। उनके गोबर-गोमूत्रका उपयोग खेतीमें खादके रूपमें उत्तम होता है। कुल मिलाकर भारतमें गोसंवर्धन गोपालनके लिये 'गोरस-भंडार'की योजना ही आजके समयमें सर्वोत्तम है, बशर्ते कि 'गोरस-भंडार' चलानेवाले सेवाभावी हों और व्यवस्था-खर्च कम-से-कम लें।

इंदौर कस्तूरबा ग्रामकी गोशाला नमूनेकी गोशाला है। वहाँ गीर-नसलकी गायोंपर नसल-सुधारका काम हुआ है। यहाँका अनुभव है कि गीर-नसल भारतके लिये सर्वोत्तम नसल है। इसमें क्रॉस-ब्रीडके मुकाबले दूध देनेकी शक्ति कम नहीं बल्कि अधिक ही है। इसके बैल भी उत्तम होते हैं। दूध भी अच्छा होता है। इसमें क्रॉस-ब्रीडकी तरह बीमारियाँ भी नहीं होतीं। क्रॉस-ब्रीडके बैल कड़ी धूपमें काम नहीं कर सकते, गीरके बैल कड़ी धूपमें भी काम कर सकते हैं। सब दृष्टिसे गीर-नसल उत्तम है। वहाँ गोबर-गैस-प्लांटका सफल प्रयोग चला है।

गोसदन-पिंजरापोल

अनुभवसे यह देखा गया है कि आजके समयमें दूधके लिये गोशाला चलाना व्यावहारिक नहीं है। व्यवस्था-खर्च, सेवकोंका खर्च भारी पड़ जाता है। दूधके लिये गायें उसीको रखनी चाहिये जो स्वयं भी सेवा करे और उसके घरवाले भी सेवा कर सकें। सेवकोंके भरोसे गोसेवा सम्भव नहीं। गोशालाओंका जन्म दूधकी पूर्तिके लिये नहीं हुआ है। दूधके लिये तो घर-घरमें गायें रखनेका रिवाज था। दूध न देनेवाली या लूली-लँगड़ी जिनको कोई न सँभाले, ऐसी असहाय गायोंके लिये गोशालाओं-पिंजरापोलोंकी स्थापना हुई थी। आज भी गोशालाओंकी आवश्यकता गोसदनकी गायोंके लिये ही है। गोरक्षाके निमित्त शहरोंमें 'लागबाग-बित्ती' आदिके रूपमें व्यापारपर जो धर्मादा निकाला जाता था, उसीपर गोशाला-पिंजरापोल चलते थे। इन पिंजरापोलोंके कारण शहरमें आवारा गायोंका घूमना बंद हो जाता था। आज पिंजरापोलोंकी शक्ति बहुत कम रह गयी है। असहाय गायोंको सँभालना उनके बूतेके बाहर है।

बिना दूधवाली लूली, लँगड़ी, बूढ़ी और असहाय गायोंको बचानेकी बहुत बड़ी समस्या थी, उसको हल करनेका उपाय भगवान्ने सुझाया। रासायनिक खाद एवं कीटनाशकोंसे भूमिकी उपजाऊ शक्ति खराब होने लगी; अनाज, साग-सब्जी आदि खाद्य-पदार्थोंमें जहर आने लगा; इस बातको गवेषकोंने उजागर किया, तब गोबर-गोमूत्रके कम्पोस्ट खादकी ओर देशका ध्यान जाने लगा। यवतमाल पुसदके श्रीपाँढरी पांडेने नेडपके नामसे गोबरके कम्पोस्ट खादका बहुत बड़ा सफल प्रयोग किया है। अन्यत्र भी गोबर-गोमूत्रके खादके प्रयोग चालू हो गये हैं। दिन-दिन स्पष्ट होता जा रहा है कि गोबर-गोमूत्रका मूल्य गायकी खुराकसे बहुत अधिक है। इससे असहाय गायोंकी रक्षाका बहुत बड़ा रास्ता मिल रहा है। शास्त्रोंमें गोबरमें लक्ष्मीका वास बतलाया गया है, यह बात अब प्रयोगोंसे स्पष्ट होने लगी है। आज गवेषक कहने लगे हैं कि दूधसे भी अधिक मूल्य गोबर-गोमूत्रका है। इस तथ्यको जब किसान अच्छी तरह समझेगा और अपनी भूमिकी उपजाऊ शक्तिको बचानेके लिये कम्पोस्ट खादका उपयोग करेगा तो उस समय उसकी बूढ़ी गायें भी उपयोगी हो जायँगी। तब फिर कोई गाय असहाय नहीं रहेगी।

पर्यावरण-विशेषज्ञोंने भी रासायनिक खाद एवं कीटनाशकोंका पूरा विरोध किया है। इससे भूमिमें विष जाता है और वह फसलमें आता है। पानीमें विष मिल जाता है, वह भूमिमें भी जाता है और नदियोंमें भी जाता है। इस विषके कारण चारों ओर जहर-ही-जहर फैल रहा है, मनुष्य-जीवन खतरेमें आ गया है। पर्यावरण-शुद्धिके लिये भी गोबर-गोमूत्र अत्यन्त लाभदायी माने गये हैं।

एक्सल इंडस्ट्रीने बंबईके कचरेके ढेरको कम्पोस्ट खादके रूपमें बदलनेका भारी पराक्रम किया है। कचरेका ढेर जो सड़ रहा था, उसपर पाइपसे गोबरका पानी छिड़ककर सड़नेवाले ढेरोंका कम्पोस्ट खाद बना दिया, उनकी सारी सड़ान चली गयी। बंबईमें रोजाना १०० टन कम्पोस्ट खाद

बनता है। ऐसा ही एक कारखाना भोपालमें और एक अहमदाबादमें लगाया है। शहरोंके कचरेको गोबरकी सहायतासे कम्पोस्ट खाद बनानेकी यह उपयोगी विधि है।

गोमूत्र महान् ओषधि है। आयुर्वेदकी अनेक दवाइयाँ गोमूत्रकी सहायतासे बनती हैं। गोमूत्रद्वारा फसलोंमें कीटनाशकोंका काम होता है। कुल मिलाकर ऐसी स्थिति बन रही है कि गोबर-गोमूत्रका खाद बूढ़ी, लूली, लँगड़ी गायोंको बचायेगा। अब किसानके लिये बूढ़ी गायें भाररूप न रहकर उपादेय हो जायँगी।

अभूतपूर्व गोसदन-व्यवस्था

राजस्थानमें आये दिन अकाल पड़ते ही रहते हैं। इस अकालोंमें दूधवाली गायोंको तो किसी प्रकार लोग बचा लेते हैं और कम दूधवाली बूढ़ी गायोंको छोड़ देते हैं। पिछले अनेक वर्षोंसे 'राजस्थान-गोसेवा-संघ' ने अकाल-राहतका कार्य आदर्श-रूपमें किया है। 'राजस्थान-गोसेवा-संघ' केन्द्रीय कृषि-गोसेवा-संघका ही स्वतन्त्र प्रदेश-संगठन है। अकालके समयमें सरकारी मददसे अनेक कैम्प चलाये जाते हैं। सरकारी मदद बंद होते ही अच्छी गायोंको तो लोग ले जाते हैं, बेकार गायें कैटल कैम्पोंमें रह जाती हैं। सरकार उनको नीलाम करती थी। बेकार गायोंको नीलाम करना यानी कसाइयोंको देना है। अकालमें गायोंको खिलाया और अकालकी समाप्तिके बाद फिरसे गायें कसाइयोंके हाथ चली जायँ इसपर 'राजस्थान-गोसेवा-संघ' ने आपत्ति की। राजस्थान सरकारने कहा— 'अकाल-समाप्तिके बाद गायोंको सँभालनेके लिये उनके पास कोई बजट नहीं है। 'राजस्थान-गोसेवा-संघ' इन असहाय गायोंको सँभालना स्वीकार करे तो राजस्थान सरकार उनको बिना मूल्य दे सकती है।'

'राजस्थान-गोसेवा-संघ' ने किसानोंके सहयोगसे इस भारको उठाना स्वीकार किया। बीकानेर और श्रीगंगानगर— इन दो जिलोंमें छत्रगढ़, अनूपगढ़, बाजूवाल, रावळा, मुंडा, खाजुवाळा आदि कई स्थानोंपर गोसनद चल रहे हैं। इन गोसदनोंको चारा और दाना आस-पासके किसानोंने मुफ्तमें देना स्वीकार किया है। इस क्षेत्रके किसान-नेताओंके प्रयासोंसे किसानोंने कहा है कि गोसदनकी गाड़ी हमारे घर आयेगी तो चारे-दानेसे भर देंगे। खाली नहीं जाने देंगे। पिछले ५-६ सालसे ३-४ हजार गायोंके गोसदन किसानोंके दानपर चल रहे हैं। 'राजस्थान-गोसेवा-संघ' को केवल व्यवस्था-खर्च उठाना पड़ता है। कई बार तो किसानोंका दान इतना आ जाता है कि व्यवस्था-खर्च भी निकल जाता है।

गोवंशकी हत्या-बंदीके प्रयास

'गोसेवा-संघ'की दृष्टि विधायक कार्योंकी ओर रही। इस दृष्टिसे उसने नसल-सुधार, गोरस-भंडार, गोशाला, गोसदन, हरे चारेके निर्माण आदिमें अपनी शक्ति लगायी, परंतु गोहत्या-बंदीकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। १९६६ में 'सर्वदलीय गोरक्षा-महाभियान-समिति' ने गोहत्या-बंदीके लिये बहुत बड़ा आन्दोलन किया था। ब्रह्मलीन श्रीकरपात्रीजी महाराज उसके संचालक थे। उस समय पुरीके जगद्गुरू शंकराचार्य स्वामी निरंजनदेव तीर्थने ७३ दिनका उपवास किया था। उस आन्दोलनमें सरकारके और संतोंके बीच सुलह करानेकी दृष्टिसे 'गोसेवा-संघ' के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष आदिने भी महत्त्वपूर्ण प्रयास किये।

१९७५के अन्तमें पवनारमें 'गोसेवा-सम्मेलन' हुआ। उस समय गोरक्षापर विस्तारसे चर्चा हुई। सम्मेलनकी समाप्तिपर पू० विनोबाजीसे निवेदन किया गया कि बाबा। हमलोग २५ सालमें जितना नसल-सुधार करते हैं, सरकार साल भरमें क़त्ल कर देती है। कलकत्ता, बंबई-जैसे बड़े शहरोंमें दूधके लिये बढ़िया-से-बढ़िया नसलकी गायें ले जायी जाती हैं और दूध सूखनेपर सभी क़त्ल हो जाती हैं। संत विनोबाजीपर इस बातका गहरा प्रभाव हुआ और उन्होंने निश्चय किया कि उनके जन्म-दिन ११ सितम्बर (१९७६) तक सारे देशमें गोहत्या बंद न हुई तो वे आमरण अनशन करेंगे। सरकारने विनोबाजीके आमरण अनशनका निवेदन अखबारोंमें नहीं छपने दिया। आश्रमके मैत्री मासिकमें यह निवेदन छपा था। मैत्रीके सारे अङ्क पोस्ट होनेके पूर्व ही सरकार उठा ले गयी। फिर भी विनोबाजीके अनशनकी बात सारे देशमें फैल गयी। 'सर्व-सेवा-संघ' और 'गोसेवा-संघ' की ओरसे संयुक्त 'गोसेवा-समिति' इस कामके लिये बनी थी। हजारों पत्र लिखे गये और छोटे-छोटे अखबारोंने निवेदन छापा, इससे जानकारी लोगोंतक पहुँची। सबसे अधिक जानकारी पहुँचानेमें निमित्त सरकार ही बनी। सरकारकी तरफसे सी० आई० डी० को देशभरमें सर्क्यूलर गये थे कि

विनोबाजीका अनशन होगा, सर्वोदयवाले पदयात्राएँ निकालेंगे, उसको रोकना चाहिये। यह आदेश सर्वत्र पहुँचा था। सी० आई० डी० वालोंसे ही कार्यकर्ताओंको अनशनकी जानकारी मिली।

काफी प्रयासके बाद भी जब प्रधान मन्त्रीजीने देखा कि आन्दोलन रुकनेवाला नहीं है, तब आपसी समझौतेकी बातचीत शुरू हुई। उस समझौतेके तहत असम, मद्रास, आन्ध्र और महाराष्ट्रमें गोहत्या-बंदी कानून बने, परंतु बंगालमें अधूरा कानून है और केरलमें खास कानून है ही नहीं।

१९७७ में सरकार बदली। तत्कालीन प्रधान मन्त्रीजीसे मिलनेके लिये पुरीके शंकराचार्यजीके नेतृत्वमें ६०-७० महानुभावोंका एक प्रतिनिधि-मण्डल गया था। किंतु तब भी गोरक्षा और सम्पूर्ण गोवध-बंदी कानूनका प्रश्न वैसा ही लटका रह गया।

नवम्बर १९७८ तब जब गोहत्या-बंदीका केन्द्रीय कानून नहीं बना एवं केरल और बंगालमें गोहत्या-कानून नहीं बना तब विनोबाजीने पुनः दिनाङ्क २२।४।७८ से गोरक्षार्थ आमरण अनशन करनेका ऐलान किया। चारों ओरसे जनतामें गोरक्षाकी माँग बढ़ी।

गोहत्या-बंदीका आन्दोलन जोर पकड़े, इसलिये क़तलखाने जानेवाली गायोंको रोकनेका 'रोको भाई रोको' सत्याग्रह १९७९ में पुनः शुरू किया गया। सर्वप्रथम कोसीकलामें 'रोको भाई रोको' आन्दोलन 'गोसेवा-संयुक्त-समिति' ने आरम्भ किया। कोसीकलासे बहुत बड़ी मात्रामें क़तलके लिये गायें कलकत्ता जाती थीं। इस आन्दोलनके परिणामस्वरूप दो महीनेके भीतर ही कोसीकलाके बाजारसे कलकत्ता गायोंका जाना कम हो गया। कोसीकलाके चारों ओर देहातोंमें यह विचार फैला तो गाँवोंमें ही लोग गायोंको रोकने लगे। स्कूलके विद्यार्थियोंमें भी जोश आया। एक दिन विद्यार्थियोंने बाजारको ही घेर लिया। गोली भी चली।

'रोको भाई रोको' आन्दोलन आज १५ सालसे बराबर चल रहा है। देवनारका सत्याग्रह भी 'रोको भाई रोको' आन्दोलन ही है। 'रोको भाई रोको' आन्दोलन सारे भारतमें अनेक स्थानोंपर चल रहा है। आज सैकड़ों स्थानोंपर क़तलके लिये जानेवाली गायें रोकी जा रही हैं। जिनकी गायें रोकी जाती हैं, वे लोग कोर्टमें केस करते हैं। ऐसे लगभग १५० केसेज़ छोटे कोर्टोंमें हुए हैं, कुछ केसेज हाईकोर्टमें और ३ केस सुप्रीम कोर्टमें चल रहे हैं। कोर्ट-कचहरीके पीछे जनताका लाखोंका खर्च हो रहा है। न्यायालय ज्यों-ज्यों तारीखें बढ़ाता है, त्यों-त्यों खर्च बढ़ता जाता है। ११ जनवरी, १९८२ से विनोबाजीने बंबईके 'देवनार क़तल खाने' पर सत्याग्रह करनेका आदेश दिया, उसके अनुसार १२ सालसे अखण्ड सत्याग्रह चल रहा है। इस सत्याग्रहमें लाखों बहन-भाइयोंने हिस्सा लिया है। कई संतोंने भी सत्याग्रहमें योग दिया। यह सत्याग्रह प्रतिदिन महाराष्ट्र सरकारको स्मरण दिलाता है कि छत्रपति शिवाजीके वंशजो! गोवंशकी हत्या बंद करो। कम-से-कम अपने कानूनका पालन तो पूरा करो। हालहीमें कानून-सुधारके नामपर महाराष्ट्र सरकारने १२ बरसकी उम्रतकके बैलोंको क़तलपर पाबंदी लानेका प्रस्ताव कोर्टमें दिया है।

दिल्लीमें गोरक्षा-सत्याग्रह

'देवनार क़तल-खाने' पर गोहत्या-बंदी सत्याग्रह शुरू होनेके बाद एक गोभक्तने विनोबाजीको ध्यान दिलाया कि महाराष्ट्र सरकार तो सुप्रीम कोर्टकी मर्यादामें ही कानून बना सकती है। 'गोवंश-हत्या-बंदी' का परिपूर्ण कानून बनाना सरकारके हाथमें है। विनोबाजीने कहा-'दिल्लीमें भी सत्याग्रह करो।'

दिल्लीमें दो-दो दिनके उपवासका सत्याग्रह प्रारम्भ हुआ। वह सत्याग्रह धीरे-धीरे जोर पकड़ रहा था। 'कृषि-गोसेवा-संघ' ने तय किया कि क्रमिक सत्याग्रह व्यापक पैमानेपर हो। दिनाङ्क ३० जनवरीसे २२ फरवरीतक दो-दो दिनका यह उपवास सत्याग्रह ५ लाख लोग करें ऐसा संकल्प किया गया। इस सत्याग्रहका प्रारम्भ विनोबाजीने एक समयका खाना छोड़कर किया। इस सत्याग्रहका इतना प्रचार हुआ कि १०-१२ लाख लोगोंसे भी अधिक लोगोंने उपवास-सत्याग्रह किया।

'कृषि-गोसेवा-संघ' की ओरसे दिल्लीमें सत्याग्रह शुरू हो इसके लिये भी प्रयास शुरू हुए।

सत्याग्रहका सिंहावलोकन करनेकी दृष्टिसे दिनाङ्क २५-२६ मार्च १९८७ को राजघाटपर बहुत बड़ा सर्वपक्षीय गोसेवा-सम्मेलन हुआ, जिसमें सारे भारतसे लगभग १,००० प्रतिनिधि आये थे। इसके साथ ही सारे भारतमें 'गोरक्षा-

यात्रा' भी की गयी।

'गोवंश-हत्या-बंदी' का केन्द्रीय कानून बने इसके प्रयास बराबर चालू रहे हैं। इस सम्बन्धमें तत्कालीन सरकारका भी पूरा सहयोग रहा। फलस्वरूप मध्यप्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और उत्तरप्रदेश—इन चारों प्रदेशोंमें 'गोवंश-हत्या-बंदी' के कानून बना दिये गये थे, किंतु उत्तरप्रदेशके 'गोवंश-हत्या-बंदी कानून' पर राष्ट्रपतिके हस्ताक्षर नहीं हुए, इस कारण वह निरस्त हो गया। लगभग यही स्थिति आज भी है।

गुजरात सरकारने हिम्मतसे 'गोवंश-हत्या' बंद कर दी, उसपर अमल भी कर रही है, किंतु महाराष्ट्र सरकार बंद करेगी ऐसी कम उम्मीद है। आज १२ सालसे बंबईके 'देवनार क़तल खाने' पर अखण्ड सत्याग्रह चल रहा है। महाराष्ट्र सरकारका कानून है, उपयोगी बैलोंका क़तल न हो, इसके बावजूद ७५-८० प्रतिशत उपयोगी बैल कट रहे हैं। सरकारके नीचेसे ऊपरतकके सभी अधिकारी और मन्त्री इस बातसे परिचित हैं कि उपयोगी बैल कट रहे हैं। परंतु नीयत साफ नहीं है। सारे महाराष्ट्रमें गायोंकी बेकानूनी क़तल चालू है। नीयत साफ होती तो बेकानूनी क़तल बंद हो ही सकती थी।

अभीतकके सारे प्रयास 'गोवंश-हत्या-बंदी' का केन्द्रीय कानून बने इसके लिये किये गये 'रोको भाई रोको' आन्दोलन भी गाय-बैलोंको क़तलसे बचानेके लिये ही किया गया। परंतु अनुभवने बताया कि क़तलसे बचायी गयी गायोंको कहाँ रखें, यह सवाल रहा। मालेगाँवके आसपासके किसानोंमें 'गोसेवा-संघ' के प्रयाससे काफी गायें बाँटी गयीं। जैन-समाजमें जैन-मुनियोंने इस काममें दिल खोलकर मदद दी, इस कारण अनेक स्थानोंपर क़तलसे बचायी गयी गायोंको रखा गया।

क़तलके लिये कलकत्ता जानेवाली गायोंको रोकनेका बहुत बड़ा प्रयास मुगलसराय स्टेशनपर 'कृषि-गोसेवा-संघ' की ओरसे किया गया। कई गोभक्तोंने बहुत मेहनत करके गायोंसे लदी अनेक गाड़ियाँ रोकीं। गायोंको कहाँ रखा जाय यह सवाल था। वाराणसीकी 'रामेश्वर-गोशाला' ने क़तलसे बचायी गयी गायोंको 'रामेश्वर-गोशाला' में रखना शुरू किया। उस क्षेत्रमें २०-२५ हजार गायोंको किसानोंमें बाँटा होगा। आज भी लगभग १,००० गायें गोशालाके पास होंगी। इन्हीं गायोंके संवर्धनसे इस गोशालामें प्रतिदिन ७०० लीटर दूध हो रहा है। नसल-सुधारका काम हुआ है, खेती-सुधारका काम हुआ है, स्थानीय लोगोंके प्रयाससे यह एक आदर्श नमूनेकी गोशाला हो गयी है।

रोजी-रोटी-अभियान

अनुभवने सिखाया कि कतलसे बचायी हुई गायोंको गाँवोंमें ही किसानोंके पास रखनेका प्रयास होगा, तभी गायें बचेंगी। किसानको लगना चाहिये कि गाय-बैल बोझ नहीं हैं बल्कि आमदनीके—रोजी-रोटीके साधन हैं। गाँवोंकी अर्थव्यवस्था गाय-बैलपर आधारित है। टैक्टरके इस युगमें भी ७५ प्रतिशत खेती बैलोंसे होती है, किंतु विडम्बना है कि विदेशी ट्रैक्टर-क्रान्तिके कारण जो बैल किसानके लिये जीवनदाता थे वे ही अब भाररूप बन रहे हैं। गाँवोंमें बैलोंके पास ४-६ महीनेसे अधिक काम नहीं होता। ६ महीने बेकार बैलको खिलाना सम्भव नहीं, इसलिये किसान बेच देता है। गायोंकी भी यही हालत है। परंतु गोबर-गोमूत्रके कम्पोस्ट खादका महत्त्व ज्यों-ज्यों बढ़ेगा, त्यों-त्यों बूढ़ी असहाय गायोंका प्रश्न हल हो जायगा। दूधवाली गायोंका प्रश्न 'गोरस-भंडार' की योजनासे एवं ग्राम-स्वावलम्बनसे हल हो सकता है।

पुनः यह विचार स्थिर हुआ कि 'गोवंश-हत्या-बंदी' का केन्द्रीय कानून अवश्य बने। रासायनिक खादोंपर सब्सिडी बंद हो, देशी खादोंका प्रचार हो, गाँववाले गाय-बैलोंको रखनेके लिये तैयार हों, परंतु गाँवके लोग बैल आदिको तभी रखेंगे जब वर्षभर उनसे लाभ मिलता रहे, जब बैलोंको सालभर काम नहीं मिलेगा तो किसान बैल नहीं रख सकेगा। आज ३० कोटि जनता गरीबीकी रेखासे नीचे है, उसे भी तबतक रोजी-रोटी नहीं मिलेगी, जबतक गाँवोंमें ग्रामोद्योग-रोजगारके अवसर खड़े न होंगे।

गोरक्षा और मानव-रक्षा—इन दोनोंकी दृष्टिसे हमें तो आजकी परिस्थितिमें यही एक मार्ग दीख रहा है—खादी ग्रामोद्योग और कृषि-गोपालन। इनपर राष्ट्र पूरी शक्ति लगायेगा तो हर हाथको काम, हर पेटको रोटी अवश्य मिलेगी। पर्यावरण-शुद्धिका भी बड़ा प्रश्न है, वह भी ग्रामोंमें ग्रामोद्योग बढ़नेसे ही ठीक होगा।

गोरक्षा-आन्दोलनका संक्षिप्त इतिहास

[प्रो० श्रीबिहारीलालजी टाँटिया एम० ए०]

गोवंश सदैवसे भारतीय धर्म, कर्म एवं संस्कृति-सभ्यताका मूलाधार रहा है। कृषि-प्रधान देश होनेसे गोवंश भारतीय अर्थ-व्यवस्थाका भी स्रोत रहा है। भारतीय स्वतन्त्रता-संग्रामके अमर सेनानियों—लोकमान्य बालगंगाधरजी तिलक, महामना मालवीय, गोखले प्रभृतिने यह स्पष्ट घोषणा की थी कि 'स्वराज्य मिलते ही गोवध तुरंत बंद कर दिया जायगा।'

उपर्युक्त नेताओंको घोषणाओंको ध्यानमें रखते हुए भारतीय जनताको आशा थी कि अंग्रेजी शासन चले जानेके साथ-ही-साथ गोहत्याका घोर कलंक भी इस देशसे मिट जायगा, किंतु वह आशा फलीभूत नहीं हुई। इसे राष्ट्रका दुर्भाग्य ही कहा जायगा।

गोरक्षार्थ धर्मयुद्धका सूत्रपात

धर्मप्राण भारतके हृदय-सम्राट् ब्रह्मलीन अनन्तश्री स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजद्वारा संवत् २००१ में संस्थापित 'अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ' ने अपने जन्मकालसे ही माँ भारतीके प्रतीक गोवंशकी रक्षा, पालन, पूजा एवं संवर्धनको अपने प्रमुख उद्देश्योंमें स्थान दिया था।

सन् १९४६में देशमें कांग्रेसकी अन्तरिम सरकार बनी। भारतीय जनताने अपनी सरकारसे गोहत्याके कलंकको देशके मस्तकसे मिटानेकी माँग की। किंतु सत्ताधारी नेताओंने पूर्व घोषणओंकी उपेक्षा कर धर्मप्राण भारतकी इस माँगको ठुकरा दिया।

सरकारकी इस उपेक्षा-वृत्तिसे देशके गोभक्त नेता एवं जागरूक जनता चिन्तित हो उठी। उन्हें इससे गहरा आघात लगा। सन् १९४६ के दिसम्बर मासमें देशके प्रमुख नगर बंबईमें 'श्रीलक्षचण्डी-महायज्ञ'के साथ ही 'अखिल भारतीय धर्मसंघ' के तत्त्वावधानमें आयोजित 'विराट् गोरक्षा-सम्मेलन' में स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजने राष्ट्रके धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक नेताओं एवं धर्मप्राण जनताका आह्वान किया। देशके सर्वोच्च धर्मपीठोंके जगद्गुरु शंकराचार्य, संत-महात्मा, विद्वान्, राजा-महाराजा एवं सद्गृहस्थोंने राष्ट्रके समक्ष उपस्थित इस समस्यापर गम्भीर विचार-मन्थन किया। और सम्मेलनके सर्वसम्मत निश्चयकी घोषणा की गयी—'सरकारसे यह सम्मेलन अनुरोध करता है कि राष्ट्रके सर्वविध कल्याणको ध्यानमें रखते हुए भारतीय धर्म और संस्कृतिके प्रतीक गोवंशकी हत्यापर कानूनद्वारा प्रतिबन्ध लगा दे। कदाचित् सरकारने अक्षय तृतीया, २००३ तदनुसार २८ अप्रैल १९४७ तक सम्मेलनके अनुरोधपर ध्यान नहीं दिया तो 'अखिल भारतीय धर्मसंघ' देशकी राजधानी दिल्लीमें सम्पूर्ण गोहत्या-बंदीके लिये अहिंसात्मक सत्याग्रह प्रारम्भ कर देगा।'

उक्त घोषणाके पश्चात् शिष्टमण्डलों, गोरक्षा-सम्मेलनों, जन-सभाओं, हस्ताक्षर-आन्दोलनों एवं स्मरण-पत्रोंद्वारा सरकारके कर्णधारोंको गोहत्या-बंदीकी माँगका औचित्य एवं अनिवार्यता समझानेकी भरसक चेष्टा की गयी; किंतु सरकारके कानपर जूँ तक नहीं रेंगी।

धर्मसंघद्वारा गोरक्षार्थ धर्मयुद्धका शंखनाद

२८ अप्रैल १९४७ का दिन समीप आ पहुँचा। देशके गोभक्त नेता भारतकी राजधानी दिल्लीमें पुनः एकत्रित हुए। गम्भीर विचार-विमर्शके पश्चात् सर्वसम्मतिसे देशसे गोहत्याके कलंकको मिटानेके लिये अहिंसात्मक सत्याग्रहके श्रीगणेशका निश्चय हुआ। परम पूज्य श्रीस्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराज (ब्रह्मलीन ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्यजी महाराज) को धर्मयुद्धका संचालन-सूत्र सौंपा गया। 'कल्याण' के सम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारने अर्थ-व्यवस्थाका भार सँभाला। धर्मसंघ-विद्यालय-निगम बोध घाट दिल्लीमें आन्दोलनको सफल बनानेके लिये देशके विभिन्न अञ्चलोंसे आये हुए विद्वानोंद्वारा लक्षचण्डी-यज्ञ सम्पन्न हुआ।

अक्षय तृतीयाके पावन पर्वपर प्रात:काल ही अनन्तश्री स्वामी करपात्रीजी महाराजके नेतृत्वमें गोभक्त धर्मवीरोंने संविधान-निर्मातृ-परिषद्के भवनके समक्ष 'गोहत्या बंद हो' के गगन-भेदी नारोंके साथ सत्याग्रह किया। सरकारने सभी गोभक्त सत्याग्रहियोंसहित श्रीस्वामीजी महाराजको बंदी बनाकर पहले दिल्ली-जेल और पश्चात् केन्द्रीय जेल लाहौरमें स्थानान्तरित कर दिया। धार्मिक जगत्में एक हलचल-सी मच गयी। देशके कोने-कोनेसे धर्मवीरोंके जत्थे आने लगे और सत्याग्रह तीव्र गतिसे चल पड़ा।

देश-प्रसिद्ध विद्वान् महामहोपाध्याय पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, शास्त्रार्थ-महारथी पं० श्रीमाध्वाचार्यजी शास्त्री,

पं० श्रीचन्द्रशेखरजी शास्त्री (पुरीपीठाधीश्वर जगद्गुरु निवृत्त-शंकराचार्य, स्वामी श्रीनिरंजनदेवतीर्थजी महाराज), श्री पं० नन्दलालजी शास्त्री, पं० श्रीसूर्यनाथजी पाण्डेय, श्रीसत्यव्रतजी ब्रह्मचारी, श्रीस्वामी आत्मदेवाश्रमजी महाराज, भक्त रामशरणदास पिलखुवा प्रभृति विद्वानों एवं महात्माओंके अतिरिक्त विभिन्न सम्प्रदायोंके आचार्यों, साधु-संतों एवं सद्गृहस्थ महानुभावोंने लगभग ५-६ सहस्रकी संख्यामें जेल-यात्रा की। पं० श्रीश्यामलालजी आचार्य, पं० श्रीहीरालालजी शास्त्री, प्रसिद्ध आर्यसमाजी नेता ला० रामगोपाल शालवाले एवं हिन्दुसभाई नेता प्रो० रामसिंहने आन्दोलनमें सक्रिय योग दिया।

महात्माओंका बलिदान

पूज्य श्रीस्वामी मुकुन्दाश्रमजी महाराज, श्रीस्वामी कृष्णानन्द तीर्थजी महाराज एवं गोस्वामी लक्ष्मणाचार्यजी तो गोरक्षार्थ अपने भौतिक शरीरोंका बलिदान कर गोलोकवासी हुए।

मथुरामें सत्याग्रहका श्रीगणेश

दिल्लीमें आन्दोलन तीव्र गतिसे चल रहा था; देशके विभिन्न भागोंसे गोभक्त धर्मवीरोंके जत्थे राजधानीमें गिरफ्तार हो रहे थे। इसी बीच भारत-विभाजनके फलस्वरूप देशमें साम्प्रदायिक विद्वेषाग्नि भड़क उठी। नित्य नये राष्ट्रघातक षड्यन्त्रोंका विस्फोट होने लगा। राजधानी दिल्ली भी इन षड्यन्त्रोंका केन्द्र बन गयी। राष्ट्रीय संकटको दृष्टिमें रखते हुए धर्मयुद्धके संचालकोंने दिल्लीमें आन्दोलनको अस्थायी रूपसे स्थगित कर गोपाल कृष्णकी पवित्र भूमि व्रजमें आन्दोलनको चालू रखनेका निश्चय किया।

मथुरामें धर्मयुद्धका शंख बज उठा। निश्चित तिथिसे पूर्व ही श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराज—जो अबतक लाहौर-जेलसे मुक्त हो चुके थे—को बंदी बनाकर पहले मथुरा जेल और तदनन्तर आगरा जेलमें बंद कर दिया गया। सत्याग्रह तीव्र गतिसे चलता रहा। मथुरा नगर-परिषद्ने अपनी सीमामें 'गोहत्या-बंदी' का प्रस्ताव पारित किया। फिर तो एकके बाद एक अनेक नगर-पालिकाओं, नगर-परिषदों, नगर-निगमों एवं जिला-परिषदोंने 'गोहत्या-बंदी' के प्रस्ताव पारित किये। फलस्वरूप व्रजभूमिके चौदह बूचड़खाने बंद हो गये।

मथुरा आंदोलनमें चित्रकूटके पूज्य स्वामी अखण्डानन्दजी महाराजके शिष्यों एवं हाँसी-निवासी पं० चैतन्यदेवजी शास्त्रीका सतत योगदान विशेष रूपसे उल्लेखनीय है।

इस आन्दोलनोंसे राष्ट्र-व्यापी जन-जागरण हुआ। देशके कोने-कोनेसे 'गोहत्या-बंदी' की माँग उठने लगी। सरकारसे बराबर पत्रों, तारों, प्रस्तावों, जन-सभाओं एवं शिष्ट मण्डलोंद्वारा अनुरोध किया जाता रहा कि वह जनताकी भावनाओंका सम्मान करते हुए भारत राष्ट्रकी प्रतीक गौ माताकी हत्यापर कानूनद्वारा प्रतिबन्ध लगाये। फलस्वरूप संविधान-निर्मातृ-परिषद्ने भारतीय संविधानके अध्याय ४ अनुच्छेद ४८ में 'आधुनिक एवं वैज्ञानिक पद्धतिपर कृषि एवं पशु-धनकी व्यवस्थाके लिये प्रयत्न करने, विशेषतः पशु-धनकी नस्लोंकी रक्षा और सुधारके लिये पग उठाने तथा गौओं, बछड़े-बछड़ियों एवं अन्य दुधार पशुओंकी हत्यापर कानूनी प्रतिबन्ध लगानेका भारत सरकारके प्रति नीति-निर्देश (Directive Principle) सर्वसम्मतिसे स्वीकार किया।'

१९ नवम्बर १९४७ को भारत सरकारने गोरक्षण और गोपालनके सम्बन्धमें विचार कर अपनी सम्मति देनेके लिये सरदार दातारसिंहकी अध्यक्षतामें एक 'पशुरक्षण और संवर्धन कमेटी' बनायी। समितिने ६ नवम्बर १९४९ को अपनी रिपोर्ट सरकारके समक्ष प्रस्तुत की। रिपोर्टमें गोहत्या-बंदी एवं गौ-संरक्षणके सम्बन्धमें कतिपय महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये गये थे, किंतु सरकारने कमेटीके सुझावोंको आंशिक रूपमें ही स्वीकार किया और उन्हें भी पूर्ण रूपसे कार्यान्वित नहीं किया।

इसी बीच हमारे पड़ोसी देशों—लंका और बर्माकी सरकारोंने अपने यहाँ गोहत्यापर प्रतिबन्ध लगाये। पाकिस्तानमें भी कराचीमें दूध देनेवाले पशुओंकी हत्यापर रोक लगायी गयी।

'अखिल भारतीय रामराज्य-परिषद्' द्वारा आन्दोलन

सन् १९४९-५० में 'अखिल भारतीय रामराज्य-परिषद्' ने दिल्लीमें गोहत्याके कलंकको मिटानेके लिये सक्रिय सत्याग्रह-आन्दोलन किया। श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजके नेतृत्वमें राजस्थानके वीर राजपूतोंने लगभग बीस सहस्रकी संख्यामें जेल-यात्रा की। राजा दुर्जनसिंह जावली, ठाकुर मदनसिंह दाता, श्रीमोहनसिंह भाटी, श्रीरघुवीरसिंह जावलीने आन्दोलनके संचालनमें प्रमुख रूपसे भाग लिया। आन्दोलनको सफल बनानेमें सर्वश्री पं० नन्दलालजी शास्त्री, पं० चन्द्रशेखरजी शास्त्री एवं प्रसिद्ध हिन्दू-नेता सेठ सीतारामजी खेमकाने भी महत्त्वपूर्ण योगदान किया।

'राष्ट्रिय स्वयं सेवक-संघ' द्वारा हस्ताक्षर-आन्दोलन

सन् १९५२ में 'राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ' ने देशके लगभग दो करोड़ लोगोंके हस्ताक्षर कराकर देशमें सम्पूर्ण गौ-वंशकी हत्यापर कानूनद्वारा प्रतिबन्ध लगानेकी माँग की। संघके

सरसंघचालक श्रीमाधवराव सदाशिव गोलवलकरजी (गुरुजी) ने स्वयं इन हस्ताक्षरोंके साथ आवेदन-पत्र राष्ट्रपति डॉ० श्रीराजेन्द्रप्रसादजीको भेंट किया। परंतु प्रधान मन्त्रीजीने इसकी कोई परवाह नहीं की।

प्रयागमें गोरक्षा-सम्मेलन

सन् १९५४ में प्रयाग-कुम्भके पावन पर्वपर एक विराट् 'गोरक्षा-सम्मेलन' का आयोजन किया गया। इस सम्मेलनमें पूज्य श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारीसहित लाला हरदेवसहायजी भी उपस्थित थे। इससे पूर्व लालाजी एवं बाबा राघवदास प्रभृति महानुभाव गोरक्षार्थ सक्रिय आन्दोलनको अनावश्यक मानते थे। उनकी धारणा थी कि कांग्रेस सरकार स्वयमेव अथवा समझाने-बुझानेसे राष्ट्रके इस कलंकको दूर कर देगी, किंतु इस सम्मेलनके मंचसे प्रथम बार उन्होंने स्पष्ट घोषणा की कि 'सरकारसे बातचीतद्वारा गोरक्षाकी माँग मनवानेमें मैं पूर्णतया निराश हो चुका हूँ। अब मुझे निश्चित विश्वास हो गया है कि मैं अबतक भ्रममें था। कांग्रेस सरकार बिना राष्ट्रव्यापी उग्र आन्दोलनके गोहत्यापर कानूनद्वारा प्रतिबन्ध नहीं लगायेगी।' अपने विशाल जन-समूहके समक्ष अपने सिरसे पगड़ी उतारकर फेंक दी थी और शपथ ली कि 'जबतक देशसे गोहत्याका पाप नहीं मिटेगा मैं पुन: पगड़ी धारण नहीं करूँगा।' आपने आजीवन इस शपथका निर्वाह किया।

'गोहत्या-निरोध-समिति' का संगठन एवं आन्दोलन

पूज्य ब्रह्मचारी श्रीप्रभुदत्तजीके सहयोगसे लाला हरदेवसहायजीने प्रयागमें ही 'गोरक्षा-सम्मेलन' का आयोजन किया, जिसमें देशमें 'गोहत्या-निषेध' के लिये आन्दोलन चलाने-हेतु 'गोहत्या-निरोध-समिति' का गठन किया गया। लाला हरदेवसहायजी इस समितिके प्रधान मन्त्री तथा श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी अध्यक्ष चुने गये।

समितिके निश्चयानुसार दोनों नेताओंने पटना और लखनऊमें गोरक्षार्थ सत्याग्रह किये। बिहार सरकारने 'गोहत्या-बंदी कानून' बनाना स्वीकार कर लिया। इसके पश्चात् लखनऊमें भी सत्याग्रह आरम्भ किया गया। पूज्य स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज भी इस अवसरपर आन्दोलनमें सक्रिय भाग लेने पहुँचे। सरकारने आपको बंदी नहीं बनाया। स्व० श्रीगोविन्दवल्लभ पन्तने राज्य-मन्त्रिमण्डलकी ओरसे आपको सादर आमन्त्रित किया और आश्वासन दिया कि डॉ० सीतारामकी अध्यक्षतामें नियुक्त कमेटीकी रिपोर्ट मिलते ही उत्तरप्रदेशमें 'गोहत्या-बंदी कानून' बना दिया जायगा। इस प्रकार उत्तरप्रदेश और बिहारमें 'गोहत्याबंदी-कानून' बने।

भारत-गोसेवक-समाजद्वारा प्रयास

सन् १९४८ में 'बंबई जीवदया-मण्डल' के प्रयत्नसे स्थापित 'भारत-गोसेवक-समाज' ने गोहत्या-निषेधके लिये विशेष प्रयास किया। सेठ गोविन्ददासजी इसके अध्यक्ष एवं लाला हरदेवसहायजी तथा श्रीजयन्तीलाल मान्कर दोनों मन्त्री थे।

गोहत्या-बंदीके लिये राष्ट्रव्यापी आन्दोलन

सन् १९५४-५५ में देशकी गोभक्त-संस्थाओं एवं नेताओंके सहयोगसे गोरक्षार्थ राष्ट्रव्यापी आन्दोलन चलानेके लिये भगवती भागीरथीके अंचल कानपुरमें 'धर्म-संघ' और 'ब्रह्ममण्डल' की ओरसे लक्षचण्डी-यज्ञका आयोजन हुआ। दक्षिणा-निरपेक्ष होकर विद्वान् ब्राह्मण उस यज्ञमें सम्मिलित हुए और 'अखिल भारतीय गोरक्षार्थ अहिंसात्मक धर्म-युद्ध-समिति' का गठन किया गया। प्रसिद्ध गोभक्त सेठ चिरंजीलालजी लोयलका इसके अध्यक्ष एवं देशविख्यात हिन्दू-नेता सेठ सीतारामजी खेमका प्रधान मन्त्री चुने गये।

देशके चार प्रमुख नगरों—कलकत्ता, बंबई, अहमदाबाद एवं राजधानी दिल्लीमें उक्त समितिके आह्वानपर 'गोहत्या-बंदी' की माँगको लेकर जोरदार आन्दोलन चलाये गये। चारों स्थानोंपर लगभग ६० हजारसे अधिक गोभक्त धर्मवीरों एवं वीराङ्गनाओंने जेल-यात्रा की।

कलकत्तेके मोर्चेपर परमपूज्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्दजी सरस्वती, गोभक्त सर्वश्री सेठ सोहनलालजी दुग्गड़ समितिके प्रधान एवं पं० सूर्यनाथजी पाण्डेय मन्त्री और सेठ सीतारामजी खेमका आदि प्रमुख संचालकोंमें थे। आन्दोलन इतना तीव्र हुआ कि जब सेठ सोहनलालजी दुग्गड़के नेतृत्वमें सत्याग्रही वीरोंका जत्था विधान-सभा-भवनकी ओर जा रहा था तो जनताकी अपार भीड़ने उनका अनुगमन किया। सरकारने शान्तिमय धर्मवीरोंकी भीड़को रोकनेके लिये जनतापर घुड़सवार पुलिसको आगे बढ़नेका आदेश दिया। फलस्वरूप घोड़ोंके टापोंके नीचे आकर अनेक धर्मवीर आहत हो गये और धर्मवीर श्रीजसकरण भूराका बलिदान हुआ।

आन्दोलनका उग्र रूप देखकर पश्चिम बंगालकी सरकारने सत्याग्रहमें भाग लेनेवाले प्राय: सभी गोभक्तोंको चुन-चुनकर गिरफ्तार कर लिया तथा आन्दोलनके कार्यालय और अन्य स्थानोंपर छापे डाले गये एवं सम्पूर्ण कागजातोंको जब्त कर लिया गया। स्वामी श्रीकरपात्रीजी तथा अन्य सभी नेता जेलमें

बंद कर दिये गये। समितिके प्रधान मन्त्री श्रीसीतारामजी खेमकाको सत्याग्रह-समितिने यह संदेश भेजा कि 'वे भूमिगत होकर आन्दोलनका संचालन करें अन्यथा गिरफ्तार हो जानेपर आन्दोलनको क्षति पहुँचनेकी आशंका है।' वे तत्काल साधुवेशमें भूमिगत हो गये और छः माहतक भूमिगत रहकर आन्दोलनका संचालन किया। इस बीच बंगालकी सरकारने उन्हें गिरफ्तार करनेका भरपूर प्रयत्न किया, पर वह सफल नहीं हो सकी।

आन्दोलनमें 'अखिल भारतीय हिन्दू महासभा' ने सक्रिय सहयोग दिया एवं प्रसिद्ध गोभक्त हिन्दू नेता श्रीरामचन्द्र वीरने ६० दिनका अनशन-व्रत कर आन्दोलनको शक्ति प्रदान की।

बंबईका मोर्चा

यहाँका मोर्चा समितिके अध्यक्ष सर्वश्री सेठ चिरंजीलालजी लोयलका, बालाचार्य बरखेड़कर, मुकुन्दलालजी पित्ती एवं महन्त श्रीदीनबन्धुदासजीके नेतृत्वमें सफलतापूर्वक चला। स्थानीय 'महिला-संघ' की सदस्याओंने बड़ी संख्यामें सत्याग्रहमें भाग लेकर आन्दोलनको विशेष बल प्रदान किया। सभी वर्गोंके सहस्त्रों धर्मवीरोंने गोरक्षार्थ जेल-यात्राकर पुण्य-लाभ किया।

अहमदाबादमें जोरदार आन्दोलन

गुजरातके प्रसिद्ध कथाकार श्रीशम्भुजी महाराजने धर्मयुद्धका सफलतापूर्वक संचालन किया। गोभक्तके प्रबल उत्साहके कारण आन्दोलनने इतना प्रचण्ड रूप धारण किया कि गुजरात सरकारको बाध्य होकर 'गोहत्या-बंदी-कानून' बनाना पड़ा।

राजधानी दिल्लीका मोर्चा

राजधानी दिल्लीमें धर्मयुद्धका संचालन-सूत्र तरुण तपस्वी पूज्य स्वामी श्रीपरमानन्द सरस्वतीजी एम०ए० महाराजको सौंपा गया। अनेक संचालनमें धर्मयुद्ध तीव्रगतिसे चला। इस मोर्चेपर भी सहस्त्रोंकी संख्यामें गोभक्त स्त्री-पुरुषोंने गोमाताकी रक्षाके लिये हँसते-हँसते जेलकी यातनाएँ सहन कीं।

चारों ही मोर्चोंपर समय-समयपर पहुँचकर परमपूज्य स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज एवं समितिके प्रधान मन्त्री सेठ सीतारामजी खेमकाने स्वयंको भी गिरफ्तारीके लिये समर्पित किया। यह राष्ट्रव्यापी आन्दोलन लगातार पौने दो वर्षतक चलता रहा। इतनी लंबी अवधिमें एक भी दिन ऐसा नहीं गया जबकि चारोंमेंसे किसी भी मोर्चेपर सत्याग्रहके लिये धर्मवीरोंके जत्थोंने गिरफ्तारीके लिये समर्पण न किया हो।

इस राष्ट्रव्यापी आन्दोलनसे बाध्य होकर यद्यपि विभिन्न प्रदेशोंकी सरकारोंने अपने यहाँ 'गोहत्या-बंदी'-कानून बनाये, किंतु ये सभी अधूरे थे। अतः इनसे अभीष्ट लक्ष्यकी प्राप्ति नहीं हो सकी।

भारत सरकारके कतिपय कर्णधारोंकी भावना शुद्ध न होनेके कारण गोहत्याका घोर कलंक भारत देशमें बना ही नहीं रहा, प्रत्युत विदेशी शासन-कालकी अपेक्षा कई गुना अधिक बढ़ गया। मजहबी पर्वों, औषध-निर्माण और चिकित्साके नामपर गोहत्या चालू रखनेका दुराग्रह किया गया। तदनन्तर अनाजकी कमीकी पूर्तिके नामपर जनतामें मांस-भक्षणकी प्रवृत्ति बढ़ाने तथा विदेशी मुद्रा प्राप्त करनेके लिये गोमांस, चर्म, अस्थि, आन्त्र, चर्बीके निर्यातकी वृद्धि करनेके लिये भारतके चार प्रमुख नगरों—बंबई, कलकत्ता, मद्रास और दिल्लीमें विशाल यान्त्रिक बूचड़खाने खोलनेका निश्चय कांग्रेस सरकारने किया। एतदर्थ बंबई एवं कलकत्तामें तो विशाल भूभाग भी सरकारद्वारा अधिकृत किये गये। कलकत्तामें गोभक्तोंके प्रयाससे, कृषकों एवं जनसामान्यके विरोधपर कलकत्ता उच्च न्यायालयने सरकारद्वारा भूमि-अधिकरणको इस तर्कके आधारपर अवैध घोषित कर दिया कि गोमांस, अस्थि आदि विक्रय जनसामान्य-हितका कार्य नहीं है।अतः सरकारद्वारा व्यक्तिगत भूमि हस्तगत नहीं की जा सकती। परंतु बंबईमें देवनार नामकस्थानपर बृहद् भूभाग अधिकृत करके एक बृहद् यान्त्रिक बूचड़खानेके निर्माणकी योजना बनी।

'अखिल भारतीय गोरक्षा-अभियान'का सूत्रपात

भारत सरकारकी उपर्युक्त गोहत्याको निरन्तर प्रोत्साहन देनेकी प्रवृत्तिको दृष्टिगत रखते हुए पूज्य स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजने एक बार पुनः संवत् २०१९, अप्रैल सन् १९६२ में हरिद्वार कुम्भके पावन पर्वपर देशके गोभक्त नेताओं एवं जनसाधारणका आह्वान किया। 'अखिल भारतीय धर्मसंघ' के तत्त्वावधानमें एक विशाल 'गोरक्षा-सम्मेलन' हुआ। समस्त भारतके प्रतिष्ठित आचार्य, महात्मा, विद्वान् तथा सद्गृहस्थोंकी उपस्थितिमें सम्पूर्ण देशसे गोहत्याके घोर कलंकको मिटानेके संकल्पसे श्रीस्वामीजी महाराजने 'अखिल भारतीय गोरक्षा-अभियान'का सूत्रपात किया। प्रसिद्ध गोभक्त स्व० लाला हरदेवसहायजीने सर्वप्रथम अभियानमें सम्मिलित होनेकी घोषणा की। 'हिन्दू महासभा'के प्रसिद्ध नेता श्रीयुत पं० रामनाथजी कालियाको उक्त अभियानका संविधान बनानेका भार सौंपा गया। ११ मई १९६२ के अभियानके व्यवस्थित संचालनके लिये एक 'केन्द्रीय संयोजन-समिति' का गठन किया गया, जिसमें प्रसिद्ध गोभक्त श्रीसीतारामजी खेमकाको अभियान-

समितिका प्रधान मन्त्री नियुक्त किया गया। समितिने विजयादशमीसे समस्त भारतमें जनजागरणके लिये अभियान प्रारम्भ करनेका निश्चय किया।

विजयादशमी १८ अक्टूबर१९६२ को उक्त निश्चयानुसार विदर्भके प्रमुख नगर आकोलासे विधिवत् गोपूजनके पश्चात् अपार जनसमूहके गगनभेदी जयघोषों एवं हरिसंकीर्तनके बीच 'गोरक्षा-अभियान' ने बंबईमें बनने जा रहे देवनारके विशाल बूचड़खानेको रोकनेके लिये प्रस्थान किया।

मार्गके नगरों एवं गाँवोंमें जन-जागरण करता हुआ अभियान २३ अक्टूबर १९६२ को बंबई पहुँचा। नगरके विभिन्न भागोंमें जोरदार जनसभाएँ करके उक्त बूचड़खानेकी योजनाको रद्द करवानेके लिये जनमत जाग्रत् किया जाने लगा। दुर्भाग्यवश इसी समय चीनी सेनाओंने देशकी उत्तरी सीमापर आक्रमण कर दिया। भारतके स्वाभिमानपर यह दु:खद आघात था। गोरक्षा-अभियानको अब राष्ट्र-रक्षा-अभियानके रूपमें परिवर्तित करना अनिवार्य हो गया। यह विचार कर कि भारतीय नेताओंसे तो देर-सबेर गोरक्षाकी आशा की जा सकती है, किंतु यदि दुर्भाग्यसे देश पुन: ऐसे विदेशियोंके हाथों पड़ गया तो गोरक्षा एक स्वप्न बनकर रह जायगा। अत: पं० नेहरूकी अपीलपर गोरक्षा-अभियानको स्थगित कर राष्ट्र-रक्षार्थ जन-जागरणका कार्य प्रारम्भ किया गया।

वृन्दावनमें गोरक्षा-सम्मेलन

श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारीके सबल सहयोगसे 'भारत गोसेवक-समाज' ने अगस्त १९६४ में 'अखिल भारतीय गोरक्षा-सम्मेलन' का वृन्दावनमें आयोजन किया। सेठ गजाधरजी सोमानी सम्मेलनके सभापति थे। सम्मेलनका उद्घाटन 'राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ' के (गुरुजी) श्रीगोलवलकरजीने किया। इस सम्मेलनने सरकारको चेतावनी दी कि यदि गोपाष्टमी संवत् २०२२ तक देशमें सम्पूर्ण गोवंशकी हत्या बंद न की गयी तो इसके लिये शान्तिमय आन्दोलन किया जायगा।

एक उच्चस्तरीय शिष्टमण्डलने २२ फरवरी १९६५ को उक्त माँग सरकारके समक्ष रखी। शिष्टमण्डलने प्रधान मन्त्री स्व० लालबहादुरजी शास्त्रीसे भेंट की। राष्ट्रपति तथा खाद्यमन्त्रीसे भी भेंट की गयी; किंतु कोई ठोस परिणाम नहीं निकला

स्व० लालबहादुरजी शास्त्रीसे जगद्गुरु शंकराचार्योंकी भेंट

'अखिल भारतीय धर्मसंघ' के मेरठ महाधिवेशनके अवसरपर आयोजित 'गोरक्षा-सम्मेलन' के निश्चयानुसार २४ मार्च १९६५ को जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर अनन्तश्री स्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराज एवं गोवर्धनपीठा-धीश्वर अनन्तश्री स्वामी निरंजनदेव तीर्थके नेतृत्वमें एक सम्भ्रान्त शिष्टमण्डल प्रधान मन्त्री स्व० लालबहादुर शास्त्रीसे मिला। शिष्टमण्डलने सम्पूर्ण भारतमें अविलम्ब 'गोवंश-वध-निषेध' के कानूनकी माँग करते हुए, विशेषत: बंबईके देवनार और कलकत्ताके दानकुनी बूचड़खानोंके निर्माणको अविलम्ब रोकनेके लिये आग्रह किया।

शिष्टमण्डलने आवश्यकता पड़नेपर 'गोहत्या-बंदी' से होनेवाली सरकारकी आर्थिक क्षतिकी पूर्ति करनेके लिये गोरक्षा-कर अथवा अन्य प्रकारसे सहायता देनेके लिये जनताको प्रेरित करनेके लिये अपना सहयोग प्रस्तुत किया।

प्रधान मन्त्रीने शिष्टमण्डलसे सहानुभूतिपूर्वक बातचीत की और उक्त दोनों बूचड़खानों (कलकत्ता एवं बंबई) के निर्माणको तुरंत रोक देनेका स्पष्ट आश्वासन दिया। इसके अतिरिक्त गोवंशके उत्तरोत्तर तीव्र गतिसे हो रहे ह्रासको पूर्णतया कानूनके द्वारा बंद करनेका प्रयास करनेका वचन भी दिया। इस अवसरपर गृहमन्त्री श्रीनन्दाजी उपस्थित थे।

इसी बीच भारत-पाक-संघर्षका संकट राष्ट्रपर आया और समस्त देश एवं सरकार सब कुछ भूलकर राष्ट्र-रक्षाके कार्यमें संलग्न हो गये। भगवत्कृपासे संघर्षमें हमारा राष्ट्र विजयी रहा; किंतु ताशकन्दमें श्रीशास्त्रीजीके आकस्मिक निधनके पश्चात् उनके द्वारा प्रदत्त आश्वासनोंको सरकारने क्रियान्वित नहीं किया।

गोरक्षार्थ बलिदानी वीरोंका आह्वान

सन् १९६६ में प्रयागमें माघमेलेके अवसरपर 'अखिल भारतीय धर्मसंघ-शिविर' के विशाल प्राङ्गणमें 'गोरक्षा-सम्मेलन' का आयोजन किया गया। सम्मेलनमें जगद्गुरु शंकाराचार्य अनन्तश्री स्वामी निरजंनदेव तीर्थजी महाराजने गोरक्षार्थ संत-महात्माओं एवं धर्मप्राण जनताका आह्वान करते हुए कहा—'यदि हम वास्तवमें राम-कृष्णके सच्चे भक्त हैं और सच्चे साधु-महात्मा हैं तो हमें बड़े-से-बड़ा बलिदान करके भी गोमाताकी रक्षा करनी चाहिये। आपने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि 'सरकारके कर्णधारोंसे अनेक बार पत्र-व्यवहार करके तथा साक्षात् भेंट करके हम इस परिणामपर पहुँचे हैं कि वर्तमान सरकार प्रस्तावोंसे,भाषण देनेसे अथवा शिष्टमण्डलोंद्वारा समझाने-बुझानेसे कदापि गोहत्या बंद नहीं करेगी। गोमाताकी रक्षा तभी होगी जब हम लोग

सच्चे हृदयसे अपने प्राणोंकी बाजी लगानेको तैयार होंगे। अन्तमें आपने घोषणा की कि यदि बलिदानका अवसर आया तो गोरक्षार्थ सर्वप्रथम हम अपना बलिदान देंगे।'

ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्री स्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराजने भी गोरक्षाकी माँगके प्रति सरकारकी निरन्तर उपेक्षापर गहरा खेद प्रकट करते हुए जनताको एतदर्थ बलिदानके लिये तैयार हो जानेको प्रेरित किया। इस प्रकार 'गोरक्षा-आन्दोलन' को उग्र रूप देनेके सर्वसम्मत प्रस्तावके साथ गोभक्त नेताओंने देशव्यापी प्रचार-यात्राके लिये प्रस्थान किया।

दिल्लीमें महात्माओंद्वारा आन्दोलन

२८ मार्च १९६६ को महात्मा सियाराम, श्रीराममुनि तथा अन्य महात्माओंने दिल्लीमें संसद्-भवन तथा गृहमन्त्रीकी कोठीपर गोरक्षार्थ अनशन आरम्भ किया और २२ महात्मा गिरफ्तार कर लिये गये। जेलमें भी इन महात्माओंने अनशन जारी रखा। इसके बाद एकके बाद एक साधुओंके जत्थे अनशन और धरना देते हुए गिरफ्तार होने लगे।

स्वामी ब्रह्मानन्दजी (राठवालों) ने १४ मईसे ५ सितम्बरतक गृहमन्त्री श्रीनन्दाजीकी कोठीपर धरना दिया। आपके साथ और भी अनेक महात्मा धरना देते थे। धूप, हवा, लू और वर्षाकी चिन्ता किये बिना आपने धरना जारी रखा। ५ सितम्बरको १०० साधुओंके साथ प्रधान मन्त्रीकी कोठीपर धरना देते हुए आपको बंदी बना लिया गया और १५ दिनका कारावास-दण्ड दिया गया।

२५ जुलाईसे स्वामी गवानन्द हरिने ३१ अन्य साधुओंसहित लोकसभा-भवनपर धरना आरम्भ किया। २७ जुलाईको स्वामी ब्रह्मानन्दजीके शिष्य स्वामी निजानन्दजी त्यागी तथा स्वामी गुप्तानन्दजीके नेतृत्वमें करीब ५२ साधुओंने प्रधान मन्त्रीकी कोठीपर धरना आरम्भ किया। स्वामी गवानन्द हरि अपने साथियोंसहित ३ अगस्तको गिरफ्तार कर लिये गये।

'सर्वदलीय गोरक्षा-महाभियान' का सूत्रपात

साधु-महात्माओंने गोरक्षार्थ आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया था। नित्य अनेक साधु-महात्मा बंदी बनाये जा रहे थे। देशमें जन-जागरण हो रहा था। विशेषकर दिल्लीके गोभक्त कार्यकर्ता एवं संस्थाएँ आन्दोलनको व्यवस्थित, संगठित एवं प्रभावशाली रूप देनेके प्रयासमें संलग्न थीं।

जैन मुनि श्रीसुशीलकुमारजीके प्रोत्साहनसे एक बैठक हुई, जिसमें श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी, भारत-साधु-समाजके मन्त्री स्वामी आनन्द, सेठ गोविन्ददास, हिन्दू महासभाके नेता प्रो० रामसिंह, आर्यसमाजी नेता ला० रामगोपाल शालवाले, श्रीविश्वम्भर प्रसाद शर्मा, पं० मौलीचन्द्र शर्मा, स्वामी गवानन्द हरि आदि महानुभाव उपस्थित थे। सभामें निश्चय किया गया कि आन्दोलनको प्रभावशाली रूप देनेके लिये सभी गोसेवी संस्थाओंका एक संयुक्त मंच स्थापित किया जाय। एतदर्थ श्रीप्रेमचन्द्रजी गुप्त संयोजक मनोनीत किये गये। बैठकमें जगद्गुरुजी महाराजने स्पष्ट शब्दोंमें अपना निश्चय व्यक्त करते हुए कहा कि—

'यदि हम वास्तवमें सच्चे हृदयसे गोहत्याका संकट मिटाना चाहते हैं तो सबसे पहले आप स्वयं ही 'गोहत्या' बंद करानेके लिये मैदानमें आओ। गोहत्या बंद करानेके लिये हमें समस्त देशमेंसे कुल ५-६ व्यक्ति चाहिये और यदि वे मैदानमें आ जायँ और गोहत्या बंद करानेके लिये उद्यत हो जायँ तो इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि गोहत्या निश्चय ही बंद हो जायगी। इन ५-६ व्यक्तियोंमें हैं—एक जगद्गुरु शंकराचार्य, स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज, राष्ट्रिय स्वयं सेवक-संघके गुरु श्रीगोलवलकरजी, सनातन धर्म-प्रतिनिधि सभाके श्रीस्वामी गणेशानन्दजी महाराज, ब्रह्मचारी प्रभुदत्तजी, जैन-मुनि सुशीलकुमारजी एवं संत कृपालसिंहजी। सबसे पहले मैं शंकराचार्य स्वयं अपना नाम देता हूँ। मैं सबसे पहले गोहत्या बंद करानेके लिये अपना बलिदान दूँगा अपने प्राणोत्सर्ग करूँगा ......।' आपने आगे कहा कि 'यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि दो-तीन ऐसे महापुरुष हमारे साथी हमें मिल गये हैं जो हमारे साथ गोहत्या बंद करानेके लिये अपने प्राणोंकी बाजी लगानेको तैयार हैं। हम उन सबका नाम नहीं बताना चाहते, उनमेंसे केवल एक महापुरुषका नाम बताते हैं वे हैं पूज्यपाद जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर अनन्त श्रीस्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराज।'

कुछ समय पश्चात् अनन्तश्री स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज हरिद्वार जाते हुए दिल्लीमें रुके। 'गोरक्षा-आन्दोलन'-के संचालनमें संलग्न कार्यकर्तागणों एवं गोसेवी सज्जनोंने श्रीस्वामीजी महाराजसे 'गोरक्षा-आन्दोलन' को प्रबल बनानेके लिये मार्गदर्शनकी प्रार्थना की। महाराजश्रीने कहा कि 'यदि सभी गोसेवी संस्थाएँ मिलकर प्रयत्नशील हों तो सफलताकी आशा हो सकती है। एतदर्थ प्रयत्न होना चाहिये।' इसके पश्चात्

श्रीस्वामीजी महाराज पूर्वकार्य-क्रमानुसार ऋषिकेश चले गये।

श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार एवं पूज्य ब्रह्मचारीजीको साथ लेकर कुछ प्रमुख गोसेवक श्रीकरपात्रीजी महाराजकी सेवामें ऋषिकेश पहुँचे। कोयल घाटी-स्थित श्रीमहाराजजीके शिविरमें बैठक हुई। विचार-विमर्शके पश्चात् श्रीस्वामीजी महाराजने निम्नलिखित आशयका एक शपथ-पत्र तैयार किया—

'मैं शपथपूर्वक 'सर्वदलीय गोरक्षा-महाभियान' को आश्वासन देता हूँ कि मनसा, वाचा, कर्मणा अपनी पूर्ण शक्तिसे 'गोहत्या-बंदी' के लिये जो भी आवश्यक होगा सब कुछ करूँगा।

उक्त शपथ-पत्रपर सर्वप्रथम स्वयं श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजने हस्ताक्षर किये, तदनन्तर श्रीब्रह्मचारी प्रभुदत्तजी महाराज, ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्री स्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराज, गोवर्धनपीठाधीश्वर अनन्तश्री स्वामी निरंजनदेवतीर्थजी महाराज, राष्ट्रिय स्वयं सेवक-संघके गुरु गोलवलकरजी, श्रीस्वामी गणेशानन्दजी, सद्गुरु जगजीतसिंहजी, भारत साधु-समाजके स्वामी गुरुचरणदासजी, श्रीस्वामी आनन्दजी, जैन मुनि सुशीलकुमारजी, हिन्दू महासभाई नेता महन्त दिग्विजयनाथजी, संत फतहसिंहजी, श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार प्रभृति लगभग ४० गोसेवी नेताओंने हस्ताक्षर किये।

अपने-अपने विश्वासानुसार यहींपर गोरक्षार्थ धार्मिक अनुष्ठानादि करनेके लिये सभी सम्प्रदायोंके गोभक्तोंको प्रेरित करनेके लिये एक वक्तव्य तैयार किया जो अविकल-रूपमें 'कल्याण' तथा देशके अनेक पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित हुआ।

श्रीस्वामीजी ऋषिकेशसे पुनः दिल्ली पधारे और आपने अन्य गोभक्त नेताओं एवं कार्यकर्ताओंके सहयोगसे 'सर्वदलीय गोरक्षा-महाभियान' की रूपरेखा तैयार की। तदनन्तर चातुर्मास्यव्रतके लिये श्रीमहाराजजी वाराणसी चले गये तथा 'गोहत्या-बंदी' के लिये वहाँ गभस्तीश्वरमें विद्वान् वैदिक ब्राह्मणोंने ११ दिनका अखण्ड रुद्राभिषेक सम्पादित किया।

वाराणसीमें पुनः सभी सम्बन्धित लोगोंकी उपस्थितिमें बैठक हुई और परस्पर विचार-विमर्शके पश्चात् संविधानमें अपेक्षित संशोधन किये गये। सर्वोच्च समिति, कार्य-समिति, संरक्षक-मण्डल एवं महाभियान-समितिके सदस्योंको मनोनीत किया गया।

१४ सितम्बर १९६६ को 'भारत गोसेवक-समाज' के कार्यालय, ३ सदर थाना रोड दिल्लीमें शपथ-पत्रपर हस्ताक्षर करनेवाले 'सर्वदलीय गोरक्षा-महाभियानसमिति' के सदस्योंकी एक बैठक हुई। इस सभामें 'महाभियान-समिति' के पदाधिकारियोंका निर्वाचन किया गया तथा समितिके पदाधिकारियोंका चुनाव हुआ। महाभियानके संचालन और नीति-निर्धारणका सम्पूर्ण उत्तरदायित्व सर्वोच्च समितिको सौंपा गया। निम्नलिखित महानुभाव सर्वोच्च समितिके सदस्य बनाये गये—

(१) जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्री स्वामी श्रीनिरजंनदेव-तीर्थजी महाराज गोवर्धनपीठाधीश्वर (पुरी)।
(२) अनन्तश्री स्वामी करपात्रीजी महाराज।
(३) श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी।
(४) स्वामी गुरुचरणदासजी।
(५) मुनि श्रीसुशीलकुमारजी।
(६) श्रीमाधवराव सदाशिव गोलवलकरजी।
(७) श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार।

स्वामी रामचन्द्र वीरका आमरण अनशन-व्रत

१० अगस्त १९६६ को मध्य प्रदेशके सागर नगरमें महान् तपस्वी प्रसिद्ध गोभक्त हिन्दू-सभाई नेता महात्मा रामचन्द्र वीर, जिन्होंने गोहत्याके कलंकके निवारणार्थ अनेक बार अनशन-व्रत किये, ने घोषणा की कि यदि भारत सरकारने २० अगस्तसे पूर्व गोहत्या-बंदीका केन्द्रीय कानून नहीं बनाया तो वे २० अगस्त १९६६ से भारतकी राजधानी दिल्लीमें अपना अन्तिम आमरण अनशन प्रारम्भ कर देंगे।

२० अगस्त १९६६ को प्रातः ७ बजे 'हिन्दू महासभा-भवन, मन्दिर-मार्ग, नई दिल्ली' में वेदमन्त्रोंके उच्चारण एवं प्रो० रामसिंह आदि गण्यमान्य हिन्दू नेताओंकी उपस्थितिमें स्वामी रामचन्द्रजी वीरने अपना कठिन संकल्प प्रारम्भ किया। ३२ दिन तक 'हिन्दू महासभा-भवन' संकीर्तन, भगवत्-स्तुतिसे गुंजायमान होता रहा। छोटे-बड़े सभी गोभक्त नेताओं, कार्यकर्ताओंने हिन्दू-भवनमें पहुँचकर वीरजीके अनशनके प्रति शुभ कामनाएँ प्रकट कीं। स्वामीजीका शरीर उत्तरोत्तर क्षीण होता गया। २० सितम्बरकी संध्याको पुलिस आयी और उन्हें आत्महत्याके तथाकथित अपराधमें गिरफ्तार करके ले गयी। महात्मा रामचन्द्र वीरने जेलमें भी अपना अनशन-व्रत जारी रखा। ७ नवम्बर १९६६ को एक बंदीके रूपमें 'गोविन्दवल्लभपंत अस्पताल नयी दिल्ली' में उनके अनशन-व्रतका ८० वाँ दिन था।

५ सितम्बरका अभूतपूर्व प्रदर्शन

५ सितम्बर १९६६ को दिल्लीमें सम्पूर्ण 'गोहत्या-बंदी' के लिये संसद् भवनपर एक विराट् प्रदर्शन हुआ। इस प्रदर्शनका आयोजन सर्वदलीय गोरक्षा-महाभियानपर हस्ताक्षर करनेवाले सभी नेताओंके सहयोगसे सनातन धर्म-प्रतिनिधि-सभाके प्रधान मन्त्री स्वामी गणेशानन्दजी महाराजके संयोजकत्वमें हुआ था। लगभग डेढ़से दो लाख गोभक्त इसमें सम्मिलित हुए। गोरक्षाके लिये किये गये आजतकके प्रदर्शनोंमें यह अभूतपूर्व था।

राजधानीके विभिन्न मार्गोंसे होता हुआ यह जुलूस करीब सवा दो बजे संसद्-भवन पहुँचा। इसके बाद सेठ गोविन्ददासके साथ स्वामी गणेशानन्दजी, स्वामी गुरुचरणदासजी और जैन मुनि सुशीलकुमारजीने 'गोहत्या' बंद करनेके सम्बन्धमें एक आवेदन-पत्र गृहमन्त्री श्रीगुलजारीलाल नन्दाको संसद्-भवनके द्वारपर दिया।

सत्याग्रहका शङ्खनाद

[७ नवम्बरका गोकुम्भ]

श्रीरामनवमीसे साधु-संतोंद्वारा गोरक्षार्थ आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और 'सर्वदलीय गोरक्षा-महाभियान-समिति' के तत्त्वावधानमें ७ नवम्बर १९६६ को दिल्लीमें संसद् भवनपर गोभक्तोंका विराट् प्रदर्शन हुआ। इस विराट् प्रदर्शनमें सम्मिलित होनेके लिये देशके कोने-कोनेसे आबाल-वृद्ध, नर-नारी, संन्यासी, ब्रह्मचारी, सद्गृहस्थ, नेता तथा कार्यकर्ता लाखोंकी संख्यामें कई दिन पहलेसे ही दिल्ली पहुँचने लगे। विभिन्न स्थानोंपर 'गोरक्षा-आन्दोलन' की सफलताहेतु धार्मिक अनुष्ठान, पूजा-पाठ तथा लक्षचण्डी महायज्ञ भी प्रारम्भ कर दिये गये। ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज, पुरीपीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीनिरंजनदेवतीर्थजी महाराज, धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज तथा अन्य संत-महात्माओंने रात-दिन नगर-नगर, डगर-डगर और ग्राम-ग्राममें घूमकर देशभरमें गोरक्षाके लिये इतना व्यापक प्रचार किया कि ७ नवम्बर १९६६ के इस गोकुम्भ-महापर्वपर सम्पूर्ण भारतकी आत्मा एक-रूप होकर गोहत्याके काले कलंकको देशके मस्तकसे मिटानेके लिये संसद् भवनपर दृष्टिगोचर हुई। हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी सभी जातियों, समुदायों और वर्गोंके स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध, युवक-युवती अपने-अपने नेताओं तथा धर्मगुरुओंके आह्वानपर दिल्ली पधारे थे और गोमाताके प्राणोंकी रक्षाके लिये बड़े उत्साहसे 'गोहत्या बंद हो' के नारे लगाते हुए पूर्ण अहिंसक-भावसे संसद्भवनकी ओर प्रेमपूर्वक इस विश्वासके साथ बढ़ते जा रहे थे कि आज गोरक्षा-कानून बनानेकी सरकारसे घोषणा करवारकर ही वापिस लौटेंगे। इस दिन दिल्लीमें चारों ओर मनुष्य-ही-मनुष्य दिखलायी पड़ रहे थे। समाचारपत्रोंके अनुसार इस प्रदर्शनमें लगभग पंद्रह-बीस लाख लोगोंने सम्मिलित होकर 'गोकुम्भ-महापर्व' का ऐसा दृश्य उपस्थित किया था जिसके विषयमें '**न भूतो न भविष्यति**' कहना ही पर्याप्त होगा। देशकी एकात्मकताका यह दिन कितना महान् था? इसका मूल्याङ्कन तो भावी इतिहास ही करेगा।

इस ऐतिहासिक प्रदर्शनके अवसरपर संसद्भवनके सामने बड़े विशाल मंचपर विराजमान महान् विभूतियोंमें उल्लेखनीय नाम हैं—सर्वश्रीज्योतिष्पीठके जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज, पुरीपीठके जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीनिरंजनदेवतीर्थजी महाराज, धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज, संत प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी, जैन मुनि सुशीलकुमारजी, स्वामी श्रीरामेश्वरानन्दजी, भाई श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, अटलबिहारीजी वाजपेयी, प्रकाशवीर शास्त्री तथा सेठ गोविन्ददास आदि। इन महानुभावोंके मंचसे स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजने घोषणा की कि 'हमारा किसी दल-विशेषसे द्वेष नहीं है। हम किसी राजनीतिक माँगको लेकर नहीं आये हैं। इस समय जो शासनारूढ हैं वे हमारे ही घरके लोग हैं, हम इन सबका कल्याण चाहते हैं। हम तो यहाँ केवल गोरक्षाकी माँग रखने आये हैं।' इसी प्रकार अन्य नेताओंके उद्बोधन चल रहे थे कि उस समयकी कांग्रेसी सरकारने इस महान् ऐतिहासिक प्रदर्शनको असफल करनेके लिये अपने गुंडोंद्वारा उपद्रव कराकर प्रदर्शनकारियोंपर लाठी प्रहार प्रारम्भ करवा दिया, जिससे भगदड़ मच गयी और चारों ओर अव्यवस्था मच गयी, सरकारके पूर्वनियोजित षड्यन्त्रका शिकार होनेसे यह विराट् प्रदर्शन असफल हो गया। सरकारको बहाना मिल गया। अहिंसक और निहत्थे लोगोंपर आँसू गैसके गोले और राइफलोंकी गोलियोंकी बौछार करके असंख्य गोभक्तोंको पुलिसने जिस क्रूरतासे मारा उसकी मिसाल मिलना सम्भव नहीं। 'जलियाँवाला बाग' का हत्याकाण्ड भी इसके सामने फीका पड़ गया। संसद्-भवनकी सड़कें क्षत-विक्षत शवों तथा रक्तपातसे पट गयीं। सरकारने अपना पाप छिपानेके लिये कर्फ्यू लगाकर सारे शवोंको विद्युत्-भट्ठीमें जला दिया। अनेक नेताओंको बंदी बना लिया। पूरे नगरमें भीषण आतंक व्याप्त हो गया।

स्वामी श्रीकरपात्रीजीद्वारा सत्याग्रह

सरकारी दमनचक्रसे सम्पूर्ण दिल्लीमें भय और आतंकका वातावरण बन गया था। 'गोरक्षा-आन्दोलन' रुकता हुआ-सा प्रतीत हो रहा था। देशभरसे आये हुए लाखों गोभक्त किंकर्तव्यविमूढ हो रहे थे। हजारों गोभक्तोंके बलिदानसे सर्वत्र शोक और भय व्याप्त हो जानेके कारण किसीको भी सत्याग्रहके लिये सामने आनेका साहस नहीं हो रहा था। ऐसी विकट स्थितिमें ८ नवम्बर १९६६ को प्रात:काल ही अपने प्रात:कृत्योंसे निवृत्त होकर धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज राजधानी दिल्लीकी सड़कोंपर सत्याग्रहके लिये निकल पड़े, फिर क्या था, अनेक गोभक्त धर्मवीर उनके पीछे हो लिये। सरकारके दमनचक्रसे उत्पन्न आतंकको छिन्न-भिन्न करते हुए श्रीस्वामीजीने एक बार पुन: 'गोरक्षा-आन्दोलन' को नवजीवन प्रदान किया। अपनी गिरफ्तारीके समय भी श्रीस्वामीजीने कहा कि 'अहिंसात्मक और शान्तिपूर्ण ढंगसे 'गोरक्षा-आन्दोलन' चलाते रहना चाहिये। उनके निर्देशानुसार आन्दोलन चलता रहा। प्रतिदिन हजारों गोभक्त बंदी बनाये जाते रहे। अनेक धर्मवीरोंने अनशनव्रतमें प्राणोत्सर्ग किये। तिहाड़ जेलमें बंद स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजपर घातक प्रहार हुआ, जबकि वे गोभक्तोंको भजनोपदेश कर रहे थे। इस प्राणघातक आक्रमणमें श्रीस्वामीजीका सिर फूट गया, पूरे शरीरपर नीले निशान पड़ गये तथा वे बेहोश हो गये। एक आँखकी ज्योति भी प्राय: जाती रही। यदि एक वीतराग महात्मा (स्वामी शिवानन्दजी महाराज) ने स्वामीजीके ऊपर लेटकर स्वयं उन नम्बरी कैदियोंद्वारा लोहेके डंडोंसे किये गये प्रहारोंको अपने शरीरपर सहन न कर लिया होता तो श्रीस्वामीजीका उसी समय वहींपर प्राणान्त हो जाता। इतना सब होनेपर भी संत-महात्माओं एवं सद्गृहस्थ गोभक्तोंके जेल जानेका क्रम बराबर चलता रहा, किंतु सरकारकी कुम्भकर्णी निद्रा नहीं टूटी।

पुरीके शंकराचार्यका अनशनव्रत

सरकारकी दमनकारी नीति और 'गोहत्या-बंदी कानून' न बनानेकी हठधर्मीके विरोधमें गोवर्धनपीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीनिरंजनदेवतीर्थजी महाराजने २० नवम्बर १९६६ को गोपाष्टमीके पावन पर्वपर अपना ७३ दिवसीय अनशनव्रत प्रारम्भ किया। उनके साथ ही संत प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी, गोभक्त शम्भूजी महाराज, स्वामी श्रीवीर रामचन्द्रजी महाराज आदि अनेक महापुरुषोंने गोरक्षार्थ अनशनव्रत किये। इन महात्माओंकी सहानुभूतिमें देशके लाखों गोभक्त महापुरुषों तथा भक्तिमती माताओंने भी गोरक्षाकी पुनीत भावनासे प्रेरित होकर उपवास रखे। गोरक्षा-सत्याग्रह बराबर चलता रहा। आन्दोलनमें एक लाखसे अधिक गोभक्तोंने जेल-यात्रा की।

अन्ततोगत्वा सरकारने जनताकी इस प्रबल माँगके समक्ष झुकनेका नाटक रचा। गोहत्या-बंदीकी माँगको सिद्धान्तत: स्वीकार करनेकी घोषणा की गयी। आश्वासन दिया गया कि तीन महीनेके भीतर 'गोहत्या-बंदी कानून' बना दिया जायगा। पुरीपीठके शंकराचार्यने अपने अनशनव्रतके ७३ वें दिन अपनी इस कठोर तपस्याको विराम दिया। 'गोरक्षा-आन्दोलन' भी स्थगित कर दिया गया। सरकारने 'गोरक्षा-समिति' बना दी, जिससे छ: महीनेमें अपनी रिपोर्ट देनेको कहा गया, किंतु यह सब सरकारका नाटक ही था जो उसने आन्दोलन तथा अनशन समाप्त करानेके लिये रचा था।

आज धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज एवं परम वीतराग स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज ब्रह्मलीन हैं। धर्मसंघको स्थापित हुए ५३ वर्ष हो चुके हैं। इस सुदीर्घकालमें उक्त महान् विभूतियोंके नेतृत्वमें धर्मसंघने गोरक्षाके लिये केन्द्रीय कानून बनवानेके हेतु जितना प्रबल प्रयास किया है वह भारतीय इतिहासके पृष्ठोंमें स्वर्णाक्षरोंमें अङ्कित रहेगा। इसे समयकी विपरीतता ही कहा जायगा कि इतना प्रबल प्रयास होनेपर भी देशके मस्तकसे गोहत्याका काला कलंक नहीं मिट सका। पर निराश होनेकी आवश्यकता नहीं है। श्रीमन्नारायणकी कृपासे एक दिन अवश्य ही गोहत्या-बंदीका स्वप्न साकार होगा और भारतमाताके मस्तकसे गोहत्याका काला कलंक सदाके लिये मिट जायगा।

'...... गोरक्षा इस देशके नर-नारी, सबके लिये बड़ा भारी कर्तव्य है। दूध-घीपर ही भारतवासियोंका जीवन निर्भर है। जबसे गाय-बैल बड़ी निष्ठुरतासे मारे जाने लगे हैं, तबसे हमें चिन्ता हुई है कि हमारे बच्चे कैसे जीयेंगे ?'

—लाला लाजपतराय

गोहत्या-बंदी-सत्याग्रह

[श्रीनरेन्द्रजी दुबे]

जिस प्रकार वैज्ञानिक मनीषियोंने सृष्टिके रहस्योंकी खोजकर आधुनिक विज्ञानका विकास किया है, उसी प्रकार भारतीय आध्यात्मिक मनीषियोंने जीवनके और सृष्टिके रहस्योंकी खोजकर 'गो-विज्ञान' का विकास किया। वस्तुतः गो-विज्ञान सारी दुनियाको भारतकी अनुपम देन है। सारी दुनियामें गो-विज्ञानका प्रचार-प्रसार भारतसे हुआ। संस्कृतमें गायको 'गौ' कहते हैं तो अंग्रेजीमें 'काऊ' जो गऊका ही अपभ्रंश है और जापानीमें गायको 'ग्यू' कहते हैं जो 'गौ' का ही अपभ्रंश है।

भारतीय मनीषियोंने सम्पूर्ण गोवंशको मानवके अस्तित्व रक्षण, पोषण, विकास और संवर्धनके लिये अनिवार्य बना दिया था। इसीलिये भारतमें गो-दुग्धने जन-समाजको विशिष्ट शक्ति, बल एवं विशुद्ध बुद्धि प्रदान की। गोबर-गोमूत्रने खेतीको पोषण दिया, बैल-ऊर्जाने कृषि, भारवहन, परिवहन तथा ग्रामोद्योगोंके लिये सम्पूर्ण टेक्नॉलोजी विकसित करनेमें मदद की और मृत चर्मने चर्मोद्योग-सहित अनेक हस्तोद्योगोंका विकास किया। इस प्रकार गोधन भारतकी समृद्धिका आधार बन गया।

जब भारतमें इस्लामका प्रभाव बढ़ना शुरू हुआ तब गोरक्षाका प्रश्न भी सामने आया। यद्यपि हजरत पैगम्बर मोहम्मद साहबने फरमाया है कि 'गायका दूध अमृत है और गोश्त बीमारी, इसलिये गोश्तसे बचो' तथापि ईदपर गाय-बैलकी कुर्बानी देनेकी प्रथा चल पड़ी, जिसके कारण हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य भी बढ़ा। इसे मुस्लिम शासकोंने विशेषतः सभी मुगल शासकोंने समझा, तब उन्होंने फरमान जारी करके गाय-बैलोंका क़तल बंद किया था। जम्मू-कश्मीरमें लगभग पाँच सौ वर्षोंसे बडशाहके समयसे ही गाय-बैलका क़तल बंद है। इस्लाम-धर्मके उलेमाओंने भी इसका समर्थन किया और कहा कि गाय-बैलोंकी कुर्बानी फर्ज नहीं है।

दुर्भाग्यसे अंग्रेजी राज्यमें गाय-बैलका कतल शुरू हुआ, जिसने एक धंधेका रूप ले लिया। अंग्रेजी फौजोंको गोमांसकी पूर्तिके लिये गौ-बैलोंका कतल प्रारम्भ हुआ और मुस्लिम कसाइयोंकी क़तलके धंधेपर लगाया गया। इससे एक ओर हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य बढ़ा तो दूसरी ओर पश्चिमी संस्कृतिके यन्त्रीकृत जीवन-पद्धतिका प्रभाव बढ़ा। जैसे-जैसे विश्वभरमें औद्योगिक संस्कृतिका प्रचार-प्रसार बढ़ता गया, दुनियाभरमें साम्राज्यवादका भी विस्तार होता गया और अनेक देश गुलाम होते गये। भारत भी गुलाम बना और सतत बढ़ते हुए यन्त्रीकरणने हमारे गाँवोंको भी गरीब और गुलाम बना दिया। वस्तुतः हमारी गुलामीका बड़ा कारण-गो हत्या और ग्रामोद्योगोंका विनाश था।

इसीलिये जब स्वराज्यका आन्दोलन शुरू हुआ तब हमारा मुख्य उद्देश्य 'गोहत्या-बंदी' था। सन् १८५७ का सैनिक विद्रोह भी गोरक्षाके महान् उद्देश्यसे प्रेरित था। भारतके सभी धर्म-पुरुषों और राजनेताओंने स्वतन्त्रता-संग्राममें गोरक्षाको मुख्य प्रश्न माना था और जनताको वचन दिया था कि 'स्वराज्य मिलते ही कानूनसे गोहत्या बंद कर दी जायगी।' महर्षि दयानन्दने 'गोकरुणानिधि' नामसे पुस्तक लिखी और 'गोहत्या-बंदी' के लिये लाखों हस्ताक्षर कराकर महारानी विक्टोरियाको भेजे थे। लोकमान्य तिलकने कहा था कि 'स्वराज्य मिलते ही कलमकी नोकसे भारतभरमें गोहत्या बंद कर दी जायगी।' महात्मा गाँधीने कहा था—'भारतमें गाय बचेगी तो ही मनुष्य बचेगा। गाय आज तो मृत्युके किनारे खड़ी है। यह नष्ट हो गयी तो उसके साथ हम भी यानी हमारी सभ्यता भी नष्ट हो जायगी। मेरा मतलब हमारी अहिंसा-प्रधान ग्रामीण संस्कृतिसे है।'

भारतमें वैज्ञानिक दृष्टिसे गोसेवा हो इसके लिये गाँधीजीने 'गोसेवा-संघ' स्थापित किया था और अपने निकटस्थ साथी श्रीजमनालालजी बजाजको इसका उत्तरदायित्व सौंपा था। 'गोसेवा-संघ' ने गोपालन, गोसंवर्धन, गोरक्षा आदि विभिन्न क्षेत्रोंमें उल्लेखनीय कार्य किया। गाँधीजीने सन् १९४२के 'भारत छोड़ो' प्रस्तावमें भी गोसेवाका उल्लेख किया। तत्कालीन मैसूर राज्यके प्रधान मन्त्री मिर्जा इस्माइलने राज्यमें 'गोहत्या-बंदी' कानून बनानेके लिये गाँधीजीसे सलाह माँगी थी और गाँधीजीने उसको पूरा समर्थन दिया था। भारतके लगभग सभी देशी राज्योंमें सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या' बंद थी। केवल अंग्रेजी राज्यके क्षेत्रमें ही गोहत्या होती थी। इस प्रकार स्वराज्यके आन्दोलनके समयसे ही 'गोहत्या-बंदी' के लिये राष्ट्र वचनबद्ध रहा है। खिलाफ्तके आन्दोलनमें भी मुस्लिम नेताओंने 'गोहत्या-बंदी' को अपना समर्थन दिया था। कांग्रेसने भी डॉक्टर राजेन्द्रप्रसादकी अध्यक्षतामें एक समिति गठित की थी, जिसने

विस्तृत अध्ययन कर 'गोहत्या-बंदी' के लिये अपनी रिपोर्ट दी थी।

स्वराज्य मिलनेके पश्चात् जब देशका संविधान बना तब संविधान-सभामें 'गोहत्या-बंदी' के प्रश्नपर विचार किया गया। संविधान-सभामें सभी धर्मों, जातियों, पक्षों और विचारोंके लोग थे। सभीने सर्वसम्मतिसे संविधानकी धारा ४८में इसे राज्योंके नीति-निर्देशक सिद्धान्तोंमें स्थान दिया।

सन् १९४७ में ही भारत सरकारने सर दातारसिंहकी अध्यक्षतामें पशु-संरक्षण एवं संवर्धनके विशेषज्ञोंकी एक समिति नियुक्त की थी। इस समितिने पूरे देशमें दो वर्षोंमें सम्पूर्ण 'गोहत्या-बंदी' की सिफारिश की थी।

संविधानके निर्देशानुसार और समितिकी सिफारिशोंको ध्यानमें रखकर उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान और बिहारमें 'गोवंश-हत्या-बंदी' कानून बनाये गये, लेकिन अन्य राज्य सरकारोंने इस दिशामें कोई पहल नहीं की। इसका एक कारण यह भी था कि यह विषय राज्यके नीति-निर्देशक सिद्धान्तोंमें है, जिन्हें लागू करनेकी कोई समय-सीमा संविधानने निर्धारित नहीं की है और किसी राज्य सरकारको इन्हें लागू करनेके लिये काननून बाध्य नहीं किया जा सकता। अत: गोरक्षामें श्रद्धा रखनेवालोंके सामने आन्दोलन करनेके अलावा कोई विकल्प नहीं रहा। सन् १९५१ में भारत सरकारने प्रथम पञ्चवर्षीय योजना बनायी और उसपर चर्चाके लिये विनोबाजीको निमन्त्रित किया। विनोबाजीने अत्यन्त आग्रहपूर्वक 'गोहत्या-बंदी' कानून बनानेकी बात रखी।

सन् १९५२में गोप्रेमी श्रीवीर रामचन्द्र शर्माने आमरण अनशन किया जो विनोबाजीके प्रयाससे छूटा। उस समय विनोबाजी बिहारमें भूदान-यज्ञके निमित्तसे पदयात्रा कर रहे थे। बिहारके तत्कालीन मुख्य मन्त्री श्रीकृष्णसिंहजीने बिहारमें 'गोवंशहत्या-बंदी' का कानून बनाया।

पटना उच्च न्यायालयमें कसाइयोंके प्रतिनिधियोंने इस कानूनको चुनौती दी। लेकिन उनकी अपील खारिज कर दी गयी और बिहार सरकारद्वारा पारित कानूनको वैध मान्य किया गया। लेकिन कसाइयोंने इस निर्णयके खिलाफ सर्वोच्च न्यायालयमें अपील की। सन् १९५८में सर्वोच्च न्यायालयने संविधानके ४८वें अनुच्छेदकी व्याख्या करते हुए निम्नाङ्कित निर्णय दिया—

(अ) 'गायोंका क़तल नहीं किया जा सकता। अगर बूढ़ी, बेकाम गायोंके क़तलकी छूट दी जाय तो अच्छी गायोंको भी नहीं बचाया जा सकता।' गायकी अवध्यताके लिये सर्वोच्च न्यायालयने आर्थिक कारणोंका विश्लेषण प्रस्तुत किया।

(आ) बछड़े-बछड़ियोंका भी क़तल नहीं किया जा सकता।

(इ) जवान और काम करने लायक बैलों, साँड़ों और दूध देनेवाली भैंसोंका की क़तल नहीं किया जा सकता।

(ई) बूढ़े, बेकाम बैलों, साँड़ों और बूढ़ी भैंसोंका क़तल किया जा सकता है।

अन्तिम आंशिक छूटका यह नतीजा आया कि अनेक प्रदेशोंमें सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या-बंदी' कानून अर्थहीन और निकम्मे हो गये तथा बूढ़े, बेकामके नामसे स्वस्थ, जवान और सर्वोत्तम बैलोंका क़तल शुरू हो गया। इस निर्णयका यह भी परिणाम हुआ कि उत्तरप्रदेश, बिहार और मध्यप्रदेशमें जहाँ सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या-बंदी' कानून बने थे, वहाँ उनमें संशोधन करके आंशिक कानून बनाने पड़े। यहाँतक कि मैसूरमें जहाँ गाँधीजीकी अनुमतिसे मिर्जा इस्माइलने सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या-बंदी कानून' बनाया था, वहाँ भी फरक करना पड़ा। केवल जम्मू-कश्मीर राज्यमें धारा ३७०के कारण सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या-बंदी' कानून लागू रहा। वहाँ गाय-बैलके क़तलके लिये दस सालकी सजाका प्रावधान है।

सर्वोच्च न्यायालयका यह फैसला विनोबाजीसहित देशके सभी गोप्रेमियोंको ठीक नहीं लगा।

सन् १९५९ में राजस्थानमें विनोबाजीके सांनिध्यमें विशेषज्ञोंकी बैठक हुई। इसमें भारत सरकारके कृषि-पशुपालन-मन्त्री, सरकारी विशेषज्ञ और देशके प्रमुख गो-सेवक शरीक हुए थे। इसमें विनोबाजीने पुन: सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या-बंदी' कानून बनानेकी माँग की थी।

सन् १९६२ के चीनके हमलेके पश्चात् देशमें आर्थिक संकट शुरू हुआ। उस समय विदेशी मुद्रा कमानेके हेतु सुझाव देनेके लिये एक सरकारी समिति बनायी गयी। इस समितिने यह रिपोर्ट दी कि मांस-निर्यातसे विदेशी मुद्रा कमायी जा सकती है। परंतु तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्रीलालबहादुर शास्त्रीने इसे अस्वीकार कर दिया।

सन् १९६९ से [जो गाँधी-जन्म शताब्दी वर्ष भी था] भारतसे मांसका निर्यात शुरू हुआ। धीरे-धीरे विदेशी मुद्राका लोभ बढ़ता गया और देशमें क़तलके लिये नये-नये आधुनिक क़तलखाने बनने लगे। गाय-बैलका क़तल जोरोंसे चलने लगा। दिन-प्रति-दिन यह पैमाना बढ़ता ही गया।

सन् १९६६में 'राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ' ने देशभरमें

'गोहत्या-बंदी' के लिये जनसमर्थन व्यक्त करनेके वास्ते हस्ताक्षर-अभियान चलाया और लगभग एक करोड़ हस्ताक्षर सरकारके सिपुर्द किये।

सन् १९६७में पुरीके शंकराचार्य श्रीनिरंजनदेवतीर्थजीने आमरण उपवासकी घोषणा की और दिल्लीमें साधु-संतोंने प्रदर्शन किया। उस समय विनोबाजीने पूज्य श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारको निम्नाङ्कित पत्र लिखा—

'भारतमें गोवंशकी पूरी रक्षा हो इस उद्देश्यसे श्रीशंकराचार्यजी और प्रभुदत्तजी महाव्रत कर रहे हैं, उससे मैं बहुत चिन्तित हूँ। उनके इस पवित्र उद्देश्यसे मेरी पूर्ण सहानुभूति है। मृत्यु जब होती है, तभी होती है। खाता-पीता आदमी भी मर जाता है। ये लोग पवित्र उद्देश्यसे मरने जा रहे हैं। अतएव उनके मरनेकी चिन्ता नहीं है। मुझे दु:ख सरकारके रवैयेपर है। मेरा प्रार्थनापर विश्वास है। मैं प्रार्थना कर रहा हूँ, देखें भगवान् कैसी सुबुद्धि देते हैं।'

श्रीजयप्रकाशजीने भी रास्ता निकालनेका प्रयास किया। श्रीशंकराचार्यके उपवासके ७२वें दिन भारत सरकारने 'गोहत्या-बंदी' लागू करनेकी पद्धतिपर विचार करनेके लिये विशेषज्ञोंकी एक समिति बनायी और इस कमेटीकी सिफारिशें माननेका वचन दिया। तब श्रीशंकराचार्यजीने अपना अनशन समाप्त किया।

माँग थी सम्पूर्ण गोवंशकी हत्या बंद करनेकी, परंतु उक्त समितिने अपने अन्तरिम प्रतिवेदनमें लिखा कि सारे देशमें सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयकी मर्यादामें तुरंत गोरक्षा-कानून बनाना चाहिये। परंतु सरकारने अपने वचनका पालन नहीं किया और कमेटीकी इस अन्तरिम सिफारिशको भी लागू नहीं किया। यद्यपि भारत सरकारने ५-१-६७ को तथा बादमें १२-३-७०को संसद्में समितिकी सिफारिशें लागू करनेका अभिवाचन भी दोहराया था।

सन् १९७४ में जब प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी विनोबाजीसे पवनार आश्रममें मिलीं, तब विनोबाजीने उनके समक्ष 'गोहत्या-बंदी' की बात रखी।

विनोबाने उपवासकी घोषणा की—प्रतिज्ञा और दिये गये वचनसे सरकार न केवल पीछे हटती गयी, वरन् गोहत्याकी दिशामें आगे बढ़ती गयी। तब मई १९७६में विनोबाजीने जाहिर किया कि 'देशके सभी राज्योंमें सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयकी मर्यादामें गोरक्षा-कानून नहीं बन जाते हैं तो वे स्वयं ११ सितम्बर १९७६से आमरण उपवास करेंगे।' तब प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधीने वचन दिया कि ३१ दिसम्बर १९७६ तक केरल तथा पश्चिम बंगालको छोड़कर सारे देशमें 'गोरक्षा-कानून' बना दिये जायँगे। केरल तथा बंगालके लिये उन्होंने एक वर्षकी अवधि माँगी। इन शब्दोंपर विश्वास रखकर विनोबाजीने उपवासके निर्णयको रोका।

दिये गये वचनके अनुसार दो राज्योंको छोड़कर सभी राज्योंमें सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयकी मर्यादामें गोरक्षा-कानून बना दिये गये।

परंतु बंगाल तथा केरलमें कानून न बननेसे सारे देशका गोधन इन प्रदेशोंमें जाकर कटने लगा। दोनों प्रदेशोंने अपना वचन नहीं निभाया और आंशिक कानून भी नहीं बनाये। जब बहुत प्रयास करनेपर भी दोनों प्रदेशोंने कानून नहीं बनाये तब विनोबाजीने सन् १९७९में जाहिर किया कि वे २२ अप्रैलसे आमरण उपवास करेंगे।

भारत सरकारने वचन दिया—

२२ अप्रैल १९७९ से विनोबाजीका अनशन शुरू हुआ। यह अनशन पाँच दिन चला। पाँचवें दिन प्रधान मन्त्रीजीने संसद्में घोषणा की कि 'संविधान संशोधन कर इस विषयको समवर्ती सूचीमें ले लिया जायगा और गोरक्षाका केन्द्रीय कानून बना दिया जायगा।'

इसपर विनोबाजीने अनशन छोड़ा। तदनुसार संसद्में संविधान-संशोधन-विधेयक प्रस्तुत किया गया। परंतु उसी सत्रमें अविश्वास प्रस्तावके कारण सरकारमें परिवर्तन हो गया और लोकसभा भंग हो जानेसे संशोधन-विधेयक भी पास नहीं हो सका।

सन् १९८० में श्रीमती इन्दिरा गांधीके नेतृत्वमें कांग्रेस सरकार बनी। उनसे अनेकों बार सम्पर्क किया गया और सरकारके वचनकी याद दिलायी, परंतु उन्होंने पहल नहीं की।

अन्ततः सन् १९८० में श्रीज्ञानचन्द्रजी महाराजने दिल्लीमें उपवास-शृंखला चलायी और आमरण उपवास शुरू किया, तब सरकारने उन्हें जबरन् आहार देनेका उपक्रम किया। विनोबाजीकी सूचनाके अनुसार उन्होंने अपना उपवास छोड़ा।

देवनार-गोरक्षा-सत्याग्रह

दिसम्बर १९८१में पवनारमें 'अखिल भारतीय गोरक्षा-सम्मेलन' आयोजित किया गया था। उसमें देशभरसे गोप्रेमी और गोसेवक आये थे। सम्मेलनके पश्चात् गोरक्षा-कार्यमें लगे हुए कुछ सेवकोंने विनोबाजीसे चर्चा की। चर्चाके उपरान्त १ जनवरी १९८२को विनोबाजीने लिखा—'किसी भी उम्रकी

गाय और बैल इस देशमें न कटें इस हेतु बंबईमें सत्याग्रह करो। इसका प्रारम्भ शान्ति सैनिक करें।'

विनोबाजीने अपने आश्रमके अन्तेवासी तथा भारतीय शान्ति-सेनाके संयोजक श्रीअच्युत भाई देशपाण्डेको देशके १७ सेवकोंके साथ बंबईमें सत्याग्रह करनेका आदेश दिया।

इस प्रकार ११ जनवरी १९८२से बंबईमें देवनार-स्थित एशियाके सबसे विशाल क़तलखानेपर गोरक्षा-सत्याग्रह शुरू हुआ।

विनोबाजीके निर्देशानुसार यह सत्याग्रह सत्य, प्रेम, करुणाकी मर्यादामें अहिंसक, असाम्प्रदायिक और अराजनैतिक दृष्टिसे आज भी चलाया जा रहा है।

देवनार गोरक्षा-सत्याग्रहकी दो माँग है—

(१) कृषि-प्रधान भारतमें किसी भी उम्रके गाय-बैलके क़तलपर कानूनी रोक लगायी जाय। इसके लिये केन्द्रीय कानून बने। तथा—

(२) भारतसे विदेशोंमें भेजे जानेवाले सभी प्रकारके मांसका निर्यात बंद हो।

देवनार क़तलखाना

देवनार क़तलखाना एशियाका सबसे बड़ा क़तलखाना है। यह विशाल क्षेत्रमें फैला आधुनिक यन्त्रोंसे सज्जित सार्वजनिक क्षेत्रका क़तलखाना है। इसमें प्रतिदिन ग्यारह हजार प्राणी काटनेकी क्षमता है। इसमें आठ हजार भेड़, बकरे, एक हजार सूअर, दो हजार बैल और भैंस-भैंसे काटनेकी क्षमता है। इसका निर्माण चौथी पञ्चवर्षीय योजनाके समय हुआ। इसका संचालन बंबई महानगरपालिका करती है। इसमें लगभग तीन हजार कर्मचारी काम करते हैं। क़तलखानेके अहातेमें ही पशु-बाजार लगता है, जहाँ देशभरसे पशु लाये जाते हैं। मांस-चमड़ेके व्यापारी उन्हें खरीदकर क़तलखानेमें कटवा कर उनका मांस-चमड़ा विदेशोंमें और देशमें बेचते हैं। कारखानेमें ही शीतीकरण वाहनोंकी भी व्यवस्था है। हर रोज काटा हुआ ताजा मांस विशेष मालवाहक हवाई जहाजोंसे विदेशोंमें भी यहाँसे भेजा जाता है।

महाराष्ट्रमें 'पशु-परिरक्षण' कानून है। यहाँ पशु-चिकित्सक नियुक्त हैं। वे यह जाँचकर प्रमाणपत्र देते हैं कि अमुक पशु क़तल-योग्य है। कानूनमें भारवहन, प्रजनन, खेती और दूधके अनुपयुक्त पशुओंका ही क़तल किया जा सकता है। परंतु इस कानूनका परिपालन बिलकुल नहीं होता है। इसके कारण भ्रष्टाचार भी बहुत होता है।

जब देवनार क़तलखाना बन रहा था, तब बंबईके नागरिकोंने इसका कड़ा विरोध किया था। जब उन्हें यह वचन दिया गया था कि 'यहाँ केवल स्थानीय आपूर्तिके लिये ही क़तल किया जायगा।' परंतु इस वचनका भी कभी पालन नहीं किया गया। यहाँतक कि बंबई महानगरपालिकाने भी इसके लिये प्रस्ताव किया, परंतु कानूनमें महापालिका कमिश्नरको, चुने हुए प्रतिनिधियोंसे भी ज्यादा अधिकार प्राप्त है और सरकारके सीधे निर्देशोंके कारण उन्होंने महापालिकाका प्रस्ताव भी लागू नहीं किया। आयुक्त महोदयने यह जवाब दिया कि 'देवनार क़तलखानेमें यदि निर्यातके लिये कतल नहीं होगा तो क़तलखानेका घाटा बहुत बढ़ जायगा, इसलिये निर्यातके लिये क़तल बंद नहीं किया जा सकता।'

देवनार सत्याग्रहका स्वरूप—देवनार गोरक्षा-सत्याग्रह ११ जनवरी १९८२से लगातार अखण्ड अनवरत चौबीसों घंटे चल रहा है। इसके साथ ही बान्द्रा रेलवे स्टेशनपर और सहार हवाई अड्डेपर भी लंबे अर्सेतक सत्याग्रह चला। सत्याग्रहका स्वरूप ऐसा है कि संख्याके अनुसार टोली क़तलखानेके उस दरवाजेपर धरना देने जाती है जहाँसे बैल क़तलखानेमें भेजे जाते हैं। यह टोली बैलोंको क़तलखानेमें ले जानेसे रोकती है। इससे कसाइयोंके काममें बाधा पहुँचती है। उनकी सहायतामें पुलिस आकर सत्याग्रहियोंको गिरफ्तार करती है और उन्हें पुलिस थानेमें ले जाया जाता है। तब बैल क़तलखानेके भीतर भेज दिये जाते हैं।

जब महिला सत्याग्रहियोंने सत्याग्रह किया तब महिला पुलिसने उन्हें गिरफ्तार किया।

कभी-कभी बंबईके हजारों लोगोंने एक साथ प्रदर्शन किया। देशभरसे आये सैकड़ों लोगोंने एक साथ सत्याग्रह किया। बड़ी संख्यामें आये पुलिस बलने उन्हें गिरफ्तार किया।

इस प्रकार गत १२ वर्षोंसे सारे देशसे लगभग तीन लाख लोगोंने सत्याग्रहमें भाग लिया। सभी धर्मों, पंथों, जातियों, भाषाओं और प्रान्तोंके लोगोंने सत्याग्रहमें भाग लिया।

सत्याग्रहकी उपलब्धियाँ—यद्यपि १२ वर्षके अखण्ड प्रयासके बावजूद 'गोहत्या-बंदी' के लिये केन्द्रीय कानून बनानेका मुख्य लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सका है, तथापि सत्याग्रहकी अनेक उपलब्धियाँ हैं।

गत वर्षोंमें अनेक राज्य सरकारोंने अपने प्रदेशोंके गोरक्षा-सम्बन्धी कानूनोंमें सुधार-संशोधन किये हैं। मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, गुजरात और दिल्लीमें सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या-बंदी'

कानून बने हैं। उत्तरप्रदेशमें विधानसभामें कानून पारित हो गया है, परंतु अभीतक उसे राष्ट्रपतिकी सम्मति नहीं मिली है, इसलिये कानून लागू नहीं हुआ है। इस समय देशके नौ राज्य—जम्मू-कश्मीर, हिमाचल, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, मध्यप्रदेश, दिल्ली, गुजरात तथा उत्तरप्रदेशमें सम्पूर्ण गोवंशके क़तल रोकनेके कानून बने हैं। मध्यप्रदेशके कानूनके विरोधमें कसाइयोंने जबलपुर उच्च न्यायालयमें अपील की थी, परंतु मध्यप्रदेश, उच्च न्यायालयने उनकी अपील खारिज कर सम्पूर्ण 'गोवंश-हत्या-बंदी' कानूनको संविधान-सम्मत मान्य किया है। उच्च न्यायालयने अपने निर्णयमें कहा है कि बैलकी उपयोगिताके सम्बन्धमें पुरानी धारणामें बुनियादी अन्तर हो गया है। अब सेन्द्रिय खादका महत्त्व अत्यधिक बढ़ गया है, क्योंकि यह सिद्ध हो गया है कि रासायनिक खादसे भूमिकी उर्वरा-शक्तिको क्षति पहुँचती है। रासायनिक कीटनाशकोंसे भूमि, जल और खाद्य पदार्थ प्रदूषित होते हैं। गोबर-गोमूत्रसे प्राप्त खाद और कीटनाशकोंका महत्त्व दिन-प्रति-दिन ध्यानमें आ रहा है और बैल अपने जीवनके आखिरी समयतक गोबर-गोमूत्र देते रहते हैं जो खेतीके लिये अनिवार्य है और भूमिकी उर्वरा-शक्ति कायम रखनेके लिये भी जरूरी है।

अब यह सिद्ध हो गया है कि देशसे गाय-बैलके मांसका और क़तली चमड़ेका निर्यात कर जितनी विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है उससे कहीं ज्यादा विदेशी मुद्रा उन वस्तुओंके आयातपर खर्च करनी पड़ रही है जो गाय-बैलोंको जीवित रखकर कमायी जा सकती है।

गोरक्षा-सत्याग्रहने देशकी जनताको अहिंसक सत्याग्रहकी पद्धतिमें शिक्षित करनेका भी कार्य किया है।

वस्तुतः जितनी सज्जनता, शालीनता, सौम्यता और सातत्य समर्पणसे देवनारका गोरक्षा-सत्याग्रह चल रहा है वह बेमिसाल है। इसीका यह परिणाम है कि आज भी सभी सत्याग्रही इस बातपर दृढ़ हैं कि जबतक सारे देशमें 'गोवंश-हत्या-बंदी' का कानून नहीं बनता यह सत्याग्रह चलता ही रहेगा। [प्रे०-गोरक्षा-सत्याग्रह-संचालन-समिति]

आधुनिक यान्त्रिक गोवध-केन्द्र—'अल-कबीर'

भगवान् श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्रसे लेकर अनेकानेक ऋषि-मुनियोंकी परम्परामें होते हुए दीर्घकालके इतिहासमें महावीर स्वामी, महात्मा बुद्ध, जगद्गुरु शंकराचार्य और अनेक उच्चकोटिके धर्माचार्योंसे लेकर महामना पंडित मदनमोहनजी मालवीय, महात्मा गाँधी इत्यादि विभूतियोंने हमारे भारतवर्षमें अवतार और जन्म लेकर गऊ-सेवा, गऊ-पालन, गऊ-संरक्षणका आदर्श स्थापित किया है। हमारे भारतमें दूधकी नदियाँ बहती थीं। अलाउद्दीन खिलजीके शासनकालमें एक रुपयेका डेढ़ मन मक्खन उपलब्ध होनेके आँकड़े विदेशी पर्यटकोंने गवेषणा करके लिखे हैं और घोषित किया है कि उस समयतक दूध, दही और मक्खन कहींपर भी देशमें बिका नहीं करता था। आज अपने स्वराज्य प्राप्त किये हुए स्वतन्त्र भारतमें इसकी क्या दुर्दशा है यह बात भी किसीसे छिपी नहीं है।

अतः इस विभीषिकासे समाजको बचानेके लिये हम सभी संगठित होकर प्रयास करें। हमारे देशकी आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक विभीषिकाको एक खुली चुनौती, उसका एक दृश्य है 'अल-कबीर क़त्लखाना' जिला मेडक, हैदराबाद।

दुबईके गुलाम मुहम्मद शेखने भारत सरकारकी ४०० करोड़ रुपयेकी सहायतासे इस 'अल-कबीर गऊ-वधशाला' की स्थापना की। इस 'अल-कबीर वधशाला' में नित्य लगभग ६ हजार गायें बहुत ही निर्ममतापूर्वक काटी जाती हैं। काटनेसे पूर्व उन्हें ४ दिनतक भूखा रखकर उनपर गर्म पानी डाला जाता है जिससे कि उनका हीमोग्लोबिन पिघल जाय। इस प्रक्रियासे गऊका मांस लाल हो जाता है जिसकी कीमत २५० रुपये प्रतिकिलो हो जाती है, जबकि सफेद मांस १२० रुपये प्रति किलोके हिसाबसे बिकता है। अधिक मुनाफा कमानेके लिये गायोंको इतनी निर्ममतासे मारा जाता है और 'अल-कबीर' के मालिक एक गायसे हजारों रुपये कमाई कर लेते हैं। अभी यह विभीषिका और अधिक बढ़ सकनेकी बात है। २१ जून, १९९४ के एक दैनिक समाचार-पत्रमें यह भी छपा है कि ऐसी ७ और 'गऊ-वधशालाओं' की स्थापनाका प्रस्ताव है।

अल-कबीर क़त्लखानेका एक दृश्य

(१) इस आधुनिक यान्त्रिक-क़त्लखानेमें ६ हजार गायें प्रतिदिन बलि होती हैं।

(२) २० हजार टन मांस-निर्यातका अनुबन्ध ईरान और कुवैतसे हुआ है।

(३) १०,००० लीटर खून प्रतिदिन एकत्रित होता है, जिससे प्लाज्मा, प्रोटीन्स, हीमोग्लोबिन टॉनिक बनता है।

(४) ३०० एकड़ भूमिमें फैला हुआ है, यह क़त्लखाना।

(५) एक गायपर ५०,००० रु० का लाभ होता है, इस क़त्लखानेके मालिकोंको (चमड़ा, हड्डी, मांस, खून और चर्बीके विक्रयसे)।

(६) मांसका निर्यात विदेशी मुद्रा प्राप्त करनेके लिये किया जाता है।

पशु-वध करनेकी विधि

स्वस्थ गोवंशको लाये गये ट्रकोंसे बाहर लाया जाता है। क़त्लगाहमें एक हजार पशु रह सकें, ऐसे मौतके कुएँ बने हैं। वहाँ ४ (चार) दिनोंतक पशुओंको बिना चारे-पानीके रखा जाता है। इसके बाद पशु अशक्त होकर गिर जाता है। गिरनेपर पशुको घसीटकर मशीनोंके पास ले जाया जाता है। उसे पीट-पीटकर खड़ा किया जाता है। मशीनकी एक पुली पशुके पिछले पैरको जकड़ लेती है। पश्चात् २०० डिग्री सेंटीग्रेटका गरम पानी ५ मिनट तक गिराया जाता है। मशीनकी पुली पिछले पैरको ऊपर उठाती है। पशु एक पैरपर उल्टा लटका दिया जाता है। फिर पशुकी आधी गर्दन काट दी जाती है ताकि खून बाहर आ जाय और पशु मरे नहीं। खूनकी धाराएँ बह निकलती हैं। तत्काल पशुके पेटमें एक छेद कर हवा भरी जाती है, जिससे पशु फूल जाता है। तत्काल चमड़ा उतारनेका कार्य होता है। पशु अभी मरा नहीं, मरनेसे पशुका चमड़ा मोटा हो जाता है। अत: उसकी कीमत घट जाती है। जीवित पशुका चमड़ा पतला और कोमल होनेसे अधिक मूल्यका होता है। चमड़ा उतरते ही पशुके चार टुकड़े किये जाते हैं—गर्दन, पैर, धड़ और हड्डियाँ।

तत्काल मांसके डिब्बे बनकर कारखानेसे बाहर आने प्रारम्भ हो जाते हैं। बछड़ोंका मांस तथा चमड़ा ज्यादा कीमती होता है।

गर्भवती पशु अधिक लाभदायक होते हैं, कसाइयोंके लिये।

दुबईमें अमेरिकन मांस १५ रियाल यानी लगभग १२० (एक सौ बीस) रुपये प्रतिकिलो और भारतीय मांस ३० से ३२ रियाल यानी लगभग २४० रु० प्रतिकिलो बिकता है।

अमेरिकन मांस सफेद होता है और भारतीय मांस लाल, क्योंकि इसमें हीमोग्लोबीन घुला होनेसे अधिक मूल्यवान है।

विचारणीय बिन्दु

१-आज देशमें ३,६०० क़त्लखाने हैं, जिसमें १० बड़े यान्त्रिक (मशीनीयुक्त) क़त्लखाने हैं, जो प्रतिदिन २,५०,००० (दो लाख पचास हजार) पशु-धन काटते हैं।

२-५०,००० (पचास हजार) गोवंश हैं, जो इसमें कटता है, प्रतिदिन।

३-सन् १९८१ में लगभग ४०० टन मांस अवैधानिक रूपसे विदेशोंमें जाता था। १९९१-९२ से ६० हजार टन मांस प्रतिवर्ष वैधानिक तौरपर निर्यात होता है।

४-सन् १९५१ में १००० व्यक्तियोंपर ४२६ पशु थे (चालीस वर्ष बाद) सन् १९९१ में १००० व्यक्तियोंपर २१६ पशु रह गये (दो वर्ष पश्चात्) सन् १९९३ में १००० व्यक्तियोंपर १७६ पशु रह गये। यही क्रम रहा तो सन् २००० में भारत पशुविहीन विशेषकर गोधन-विहीन हो जायगा।

पशु-धनके नष्ट होनेसे देशकी आर्थिक स्थितिपर प्रभाव

१-दूधके पाउडरका आयात १९८४ में ३,८७९ टन था।

२-रासायनिक खादका आयात १९९१-९२ में २३,५२० टन रहा।

३-भारत सरकारको रासायनिक खादपर आयात तथा निर्यातमें १९९१-९२में ६२,१९० मिलियन रुपये सब्सिडी देनी पड़ी है। अर्थात् (२ अरब ३९ करोड़ ३९ लाख) रासायनिक खादसे भूमिकी ऊर्जा निरन्तर कम होती जा रही है।

४-ऊनका आयात सन् १९९१-९२में २३,९३७ लाख रुपये था।

एक निवेदन

बंबईके पास कुख्यात देवनारके महान् गोवध-केन्द्रमें आचार्य बिनोबाका चलाया गया सत्याग्रह अब भी चल रहा है।

महात्मा गाँधीजी और आचार्य विनोबाभावेद्वारा संस्थापित 'अखिल भारत कृषि-गो-सेवासंघ गोपुरी वर्धा' की बरेली शाखा-द्वारा सुनियोजित 'गऊ-ग्रास-योजना'- अनुसार अपनी रुचि और श्रद्धाके अनुसार कम-से-कम १० पैसे या अधिक प्रतिव्यक्ति प्रतिदिनके हिसाबसे कसाइयोंसे बचायी गयी गायों—गोधनके चारेकी सेवाके लिये इस गोरक्षाके महायज्ञमें आप भी तन-मन-धनसे सहयोग करें और पुण्यके भागी बनें।

[प्रेषक—श्रीरामकुमारजी खंडेलवाल]

गोवंशपर अत्याचार—जिम्मेदार कौन?

[श्रीकेशरीचंदजी मेहता]

भारतीय संविधानकी धारा ४८ में गोवंशको संरक्षण दिया गया है। परंतु सरकार स्वयं संविधानका उल्लंघन कर रही है। जब भारत गुलामीकी जंजीरोंमें जकड़ा हुआ था, तब लोकमान्य तिलकने कहा कि 'भारत स्वतन्त्र होते ही कलमकी एक नोकसे गो-हत्या बंद करवा दी जायगी।' महात्मा गाँधी कहते थे—'गोहत्याको देखकर मुझे ऐसा लगता है कि मेरी आत्माकी हत्या की जा रही है।' उन महान् पुरुषोंके सपने आजतक पूर्ण नहीं हो पाये और आज सपनोंके पूरा होनेकी बात तो दूर रही उलटे प्रतिवर्ष नये-नये क़त्लखाने खुलवाकर गोवंशको कटवाकर उसके चमड़े तथा मांसका निर्यात हो रहा है। आज देशमें हिंसाका ताण्डव नृत्य चल रहा है। जनताकी ओरसे गोवंश-रक्षा-हेतु अनशन, मोर्चे, सम्मेलन आये दिन होते रहते हैं, परंतु कोई सुननेवाला नहीं। सरकारी नीतिके कारण क़त्लखानोंमें और घरोंमें गोवंशका अवैध क़त्ल बहुत बड़ी मात्रामें हो रही है।

संसारकी कोई भी डिक्शनरी देखी जा सकती है जहाँ गायकी परिभाषा 'गाय' तथा उसके वंशको एक ही माना गया है, किंतु दुर्भाग्यसे भारतमें गायकी परिभाषामें गाय तथा गोवंशको अलग-अलग कर दिया गया है। किसी भी प्राणीके वधपर प्रतिबन्ध लगाया जाता है तो नर तथा मादा प्रतिबन्धित हो जाते हैं, जैसे शेरपर प्रतिबन्ध लगाया तो शेरनीपर प्रतिबन्ध हो ही जाता है। मोरपर प्रतिबन्ध लगाया तो मोरनी प्रतिबन्धित हो ही जाती है, किंतु भारतके अलग-अलग राज्योंने गायकी परिभाषा अलग-अलग प्रकारसे की है, जैसे राजस्थान, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल-प्रदेश, पंजाब, हरियाणा—इन प्रदेशोंमें बहुत पूर्व ही गायको गोवंश-सहित माना है और उनके कानूनोंमें गायके साथ गोवंशपर कानूनी बंदी लगायी हुई है। अभी-अभी मध्यप्रदेश तथा गुजरात राज्यने भी अपने कानूनमें संशोधन करके गोवध-प्रतिबन्ध किया है। इन राज्योंने गौकी परिभाषामें गोवंशको भी माना है, किंतु महाराष्ट्रमें बिलकुल इसके विपरीत है। महाराष्ट्रमें गायके कतलपर पूर्णतया बंदी है, परंतु गायके बछड़ेको काटनेपर छूट रखी है और बैल तो सरेआम पूरे प्रदेशमें क़तलखानोंमें तथा घरोंमें काटे जा रहे हैं। महाराष्ट्र सरकारने बछड़ेकी व्याख्या इस प्रकारकी है—'बछड़ा' एक वर्ष-उम्रतक बछड़ा माना जाता है, उसके पश्चात् उसे बैलोंकी श्रेणीमें माना गया है।' ताकि बैलोंके साथ बछड़ेको भी आसानीसे काटा जा सके और उसके मुलायम चमड़े तथा मांससे भरपूर नफा कमाया जा सके। इस प्रकार देशमें क़तलखानोंका जाल बिछा दिया गया है।

इस अवैध धंधेद्वारा लोग लाखों जीवोंको कटवाकर करोड़ों रुपया कमा रहे है, जिससे देशका पशुधन बहुत तेजीसे घटता जा रहा है और गोवंशकी संख्या दिनोंदिन घटती जा रही है, किंतु सम्बन्धित अधिकारी यह सब देखकर भी अनदेखी कर रहे हैं।

जम्मू-कश्मीर, हिमाचलप्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, मध्यप्रदेश तथा गुजरात—इन सात राज्योंने गायकी व्याख्यामें गाय, बैल, बछड़े, बछड़ी, साँड़ यानी गायके वंशको मानकर उनकी क़तलपर रोक लगायी है, किंतु अन्य राज्योंमें राज्य सरकारोंद्वारा गोहत्या-सम्बन्धी अलग-अलग नियम बनाये गये हैं—

किन्हीं राज्योंमें गायकी उम्र १० से १४ वर्षसे ऊपर हो जानेपर काटनेका प्रावधान रखा है। कहीं अनुपयोगी गायको काटनेका प्रावधान रखा है और कहीं असाधारण बीमारी हो जानेपर उसे मार डालनेका प्रावधान भी रखा है, तमिलनाडु, उड़ीसा, केरल, वेस्ट बंगाल, इसके अलावा अरुणाचल प्रदेश, आसाम, गोवा, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, सिक्किम, त्रिपुरा—इन राज्योंमें गायोंका वध खुले-आम होता है।

जैसा कानून बना हो उसकी परिपालना करवानेकी जिम्मेवारी सरकारपर है, उस कानूनके अन्तर्गत जो भी मान्य किया गया हो, तदनुसार उन प्राणियोंके प्राण बचानेका कार्य सरकारका है, परंतु किसी भी प्रदेशकी सरकार इस कायदेका पालन करवा रही हो ऐसा दिखायी नहीं देता, कारण अवैध व्यापार इतना अधिक बढ़ चुका है कि या तो उसे रोकनेकी शक्ति सरकारके पास है ही नहीं अथवा सरकार अपने स्वार्थकी पूर्तिके लिये अनदेखी करके मौन स्वीकृति दे रही है। उदाहरणके लिये कुछ राज्योंकी स्थितिको वर्णित किया जा रहा है—

राजस्थान प्रदेशमें १९५० से 'दि राजस्थान प्रिजर्वेशन ऑफ सरटन एनिमल एक्ट १९५०' बना हुआ है, इस एक्टके

अनुसार राजस्थान प्रदेशमें सम्पूर्ण गोवंश-हत्या-बंदी कानून लागू है, परंतु इस एक्टका भंग हो ही रहा है। कुछ माह-पूर्व राजस्थानके सरहदी गाँवोंमें जिंदा गायोंकी खाल उतार ली गयी, वह भी १०—१२ गायकी नहीं एक साथ १६९ गायोंकी। शक्तिशाली असामाजिक तत्त्वोंपर सरकारका नियन्त्रण नहीं है। राजस्थानमें पशु-मेले लगते हैं। उन मेलोंमें एक-एक मेलेमें ५०—६० लाखसे ज्यादा कीमतके पशुओंकी खरीद-विक्री होती है। जो पशु विक्री होते हैं, उन्हें अधिकांश दूसरे राज्योंके पशु-व्यापारी खरीदते हैं और उन मवेशियोंको खेतीके नामपर पशु-चिकित्सा-अधिकारी प्रमाण-पत्र दे देता है। ये पशु-व्यापारी उन मवेशियोंको ट्रकोंसे तथा ट्रेनोंसे दूसरे प्रदेशोंमें बुक करवाकर क़तलवाले व्यापारियोंको दे देते हैं। उदाहरणके तौरपर अजमेर, जयपुर, स्वरूपगंज—इन रेलवे स्टेशनोंसे निकलकर खेतीके नामपर खरीदे गये ये बैल देवनार-क़त्लखानेमें लाखोंकी संख्यामें जाकर कटते रहे। इसी प्रकार पशु-मेलोंसे ट्रकोंमें ठूँसकर बैल-बछड़े-गाय बाहरके प्रदेशोंमें आज भी जा रहे हैं। राजस्थान प्रदेशसे आज भी गोवंशको दूसरे प्रदेशोंमें ले जाकर कसाइयोंको बेचा जाता है, जिसका जीता-जागता प्रमाण है, राजस्थानका गोवंश प्रतिदिन नीचम मध्यप्रदेशमें जाकर पशुहाटमें बिकता है, जबकि प्रदेशसे बाहर ले जानेपर प्रतिबन्ध है, उसके लिये कलेक्टरकी स्वीकृति चाहिये। ये मवेशी राजस्थानी बनजारे ग्रामीण भागसे तथा अकालग्रस्त भागसे रास्तेमें भटकनेवाले गोवंशको झुंडके रूपमें एकत्रित कर अन्य प्रान्तोंमें ले जाते हैं। 'जुने रेकार्ड'के अनुसार १९८०-८१-८२ के वर्षोंमें ये राजस्थानी बनजारे राजस्थानसे प्रतिदिन १,५००—२,००० गायोंको धुलिया महाराष्ट्रकी कृषि-उत्पन्न बाजार-समितिमें कटू गाईके बाजारमें लाकर बेचा करते थे, उसी तरह ये बनजारे गुजरातके बड़ोदा, भरूच, दाहोद, गोधरा जहाँ प्रतिदिन गायें काटी जाती थीं, वहाँ झुंड-के-झुंड लाकर बेच जाते थे, इन बनजारोंने लाखों गायोंको कसाइयोंके हाथ पहुँचाया।

महाराष्ट्रमें मालेगाँव, धुलिया, औरंगाबाद, जालना, परभणी, उस्मानाबाद, नाँदेड़, अकोला, हिवरखेड, परतवाड़ा, अमरावती, नागपुर आदि स्थानोंपर गोवंशकी खरीद केवल क़तल-हेतु होती आयी है। जिसपर किसीका नियन्त्रण नहीं।

प्राणियोंकी रक्षा-हेतु कानून बने हुए हैं। परंतु कानूनकी परिपालना करनेवाले गोभक्त जबतक घरको छोड़कर बाहर नहीं आयेंगे, समय नहीं देंगे तो गायकी रक्षा कैसे होगी? आपको यदि गायें वध-हेतु ले जाते हुए मिलें और आप उन्हें कसाईके हाथसे बचाना चाहते हों तो उसके लिये आपको जिस राज्यमें गोवंशको बचाना हो उस स्टेटके कानूनको समझना होगा।

सेंट्रल गवर्नमेंटद्वारा पारित एक कानून है, जिसे 'प्राणी-क्रूरता-निवारण अधिनियम १९६०' कहते हैं। कसाइयोंसे जप्त करनेके पश्चात् गोधनको उनके रख-रखाव-हेतु आपको किसी नजदीकी गोसदन-गोशाला या पिंजरापोलके अधीन कर देना चाहिये। आवश्यकतानुसार चारे-पानीकी व्यवस्था वह संस्था करे। यदि संस्था छोटी हो तो आर्थिक मददकी जरूरत पड़े तो दूसरे कई ट्रस्ट, संस्था, व्यक्ति हैं जो जरूरतमंदोंको मदद करते हैं।

एक बार १९९० में मैं मुंबई गया हुआ था। उसी दिन मुंबईके स्व० बदरीनारायणजी गाडोदियाका रातको फोन आया। वे वयोवृद्ध सर्वोदयी कार्यकर्ता थे तथा उन्होंने दिल्लीमें 'गोवंश-हत्या-बंदी-हेतु' ६८ दिन उपवास किया था, मैंने उनसे पूछा—क्या बात है? उन्होंने कहा कि वसई रोड रेलवे स्टेशनपर बैलोंकी भरी हुई बैगनोंकी पूरी ट्रेन आयी है। वे बैल देवनार क़त्लखानेपर कटने चले जायँगे। उनको रोकने-हेतु कोई कानूनी प्रयास करना चाहिये। मुझे मालेगाँव जाना था, परंतु इस महत्त्वपूर्ण कार्यको देखकर मैं रात्रिको मुंबईमें रुक गया और दूसरे दिन प्रात:काल वसई रोड स्टेशनपर पहुँचा तो वे भी वहाँ आ गये थे। स्टेशन-मास्टरसे पूछताछ करनेपर पता चला कि ये सब बैल राजस्थानसे आये हैं। मुझे मालूम था कि राजस्थानसे बैल क़त्ल-हेतु बाहर नहीं जा सकते। तलाश करनेपर पता चला कि बिल्टीपर 'एग्रीकल्चर परपज्' अर्थात् खेतीके लिये बैल मुंबई बुक किये गये हैं, ऐसा लिखा है। जब-कि मुंबईमें खेती होती नहीं तथा वसई रोडपर 'कृषि-उत्पन्न-बाजार-समिति' भी नहीं, जहाँ उनकी विक्री होती। जहाँ मुंबईमें मनुष्यको खड़े रहनेके लिये जगह नहीं मिलती, वहाँ हजारों बैलोंको कहाँ खड़ा करेंगे। इस प्रकार उनका उद्देश्य और उनकी नीति स्पष्ट थी कि बैलोंको ट्रेनसे उतारना और ट्रकमें भरकर देवनार-क़त्लखाना ले जाना। यह कोई प्रथम बारका मामला नहीं था। वहाँ इसी प्रकार प्रतिवर्ष हजारों बैल आते थे और क़त्लखाने जाते थे। क्योंकि देवनारमें प्रतिदिन ४०० से ज्यादा बैल काटे जाते हैं जो प्राय: राजस्थान और गुजरातसे ही आते हैं। गुजरात राज्यसे भी कटने-हेतु बैल नहीं लाये जा सकते, परंतु आज भी गुजरात राज्यसे चोरी-छिपे ट्रकोंसे प्रतिदिन

३००-४०० बैल कटने-हेतु देवनार-क़त्लखाने आ ही जाते हैं। अतः रेलवेके पुलिस-अधीक्षक, निरीक्षकसे मिलकर वसई रोड पुलिस-स्टेशनपर लिखित शिकायत की गयी तथा उन बैलोंको जप्त करनेका निर्णय लिया गया। एक ट्रेन आयी उसमेंसे कुछ बैल रातको ही देवनार चले गये, उसमें १५५ बैल जप्त किये गये। दूसरी ट्रेन आयी, उसमें ६१६ बैल जप्त किये गये, इस प्रकार ७७१ बैल कोर्टद्वारा 'अ० भा० कृ० गोसेवा-संघ' के सुपुर्द किये गये। तीसरी ट्रेनके बैल अहमदाबाद फोन करके उनको वहीं रोकनेको कहा गया, क्योंकि इतने बैल रखनेके लिये स्थान आदिकी व्यवस्था चाहिये थी। अतः अहमदाबादके गोप्रेमियोंने तीसरी ट्रेनके बैल वहीं उतार लिये। इस प्रकार १,००० से ज्यादा बैलोंको अभयदान मिला। उन बैलोंको ट्रेनसे उतारनेके लिये वसई रोडपर बड़ी समस्या उठ खड़ी हुई। बैल बड़ी साइजके वजन ५०० के० जी० के थे। उनके सींग बहुत बड़े-बड़े थे और उनका शरीर भी विशाल था—खूब लंबे-चौड़े। देखते ही भय लगता था। ऐसे बैलोंको ट्रेनसे कैसे उतारा जाय? कहीं मार दें तो जान भी जा सकती है, किंतु ऐसी स्थितिमें 'वर्धमान-संस्कृति-धाम' के ५० वीर सैनिकोंने इन सारे बैलोंको वैगनोंसे बाहर निकाला, उन सबको पानी पिलाया। चारा-भूसी खिलाया। 'वर्धमान-जीवदया-केंद्र लुणी' तथा 'वीरमंडल' के लोगोंने बादमें उनको बाजरीकी रोटी, गुड़ तथा चारा आदि देकर उनकी व्यवस्था की। कई लोगोंने सहकार्य किया। इस तरह यह प्राणि-रक्षाका सुन्दर कार्य सम्पन्न हुआ।

भारतके कई प्रदेशोंमें 'गोवंश-हत्याबंदी' का कानून तो बनाया गया है, परंतु उस कानूनकी परिपालना कभी नहीं होनेसे कानूनमें क्या कमियाँ हैं, किसीको पता ही नहीं। सबसे बड़ी कमी यह है कि किसी भी राज्यने इस कानूनके अन्तर्गत 'जबतक केस चलेगा तबतक कसाईसे जप्त गोवंशको कहाँ रखा जाय, उसके चारे-पानीकी व्यवस्था कौन करेगा, खर्चा कौन देगा आदि'—इन बातोंकी कानूनमें कोई व्यवस्था नहीं है। इस कारणसे जप्त पशु ४५१ सीआरपीसीके अनुसार उस व्यक्तिको देना चाहिये जिससे जप्त किया गया हो, क्योंकि मालिक वही है, खरीदीकी पावती उसके नामकी है। वह सँभालनेके लिये अर्जी देता है और कोर्टमें लिखकर भी देता है कि जब भी कोर्ट कहेगा, मैं हाजिर करूँगा। ऐसी स्थितिमें यदि जप्त पशु उसके ताबेमें चले जायँ तो कसाई उसको जिंदा रखकर क्यों चारा खिलवायेगा। जानवरकी कीमत २००-४००-५०० रुपये और एक जानवरका खर्च सालभरका ३,००० से भी अधिक है तो कौन पागल है जो खर्च करेगा। उसके ताबेमें जाते ही वह उसे रातको काट डालेगा। एक-एक केसके हल होनेमें कई साल लग जाते हैं, फिर ५—७ साल बाद कौन-सा जानवर था क्या पता चलेगा?

इस कानूनके विरोधमें बड़े प्रयत्नोंके बाद कई बार सेशन कोर्ट, कई बार उच्च न्यायालय, कई बार सर्वोच्च न्यायालय जाकर इस ४५१ सीआरपी-सेक्सनपर प्राणीको उसके मालिकको न दिया जाय और गोरक्षण-संस्था सेवाभावी संस्थाके पास रखा जाय—ऐसा डायरेक्शन प्राप्त किया गया। परिणामतः एक लाखसे ज्यादा गोवंशको हत्यारोंसे छुड़ाया गया—बचाया गया। इन कानूनोंमें जो त्रुटियाँ हैं उनको निकालने-हेतु तथा नये संशोधन करवाने-हेतु विशेष प्रयत्न करनेकी आवश्यकता है।

राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात राज्यमें 'गोवंश-हत्या-बंदी' कानून तो बन चुके हैं, परंतु उपर्युक्त कस्टडी बाबत अभीतक संशोधन नहीं होनेसे परेशानियाँ उठानी पड़ रही हैं। इसी प्रकार महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान प्रदेशके एक्टमें अभीतक यह व्यवस्था भी नहीं हुई कि अपराध करते समय या करनेकी हालतमें किसीको पशुके साथमें पकड़ ले तो उसके साबित करनेकी जिम्मेवारी सरकारपर है, अपराधीपर नहीं। यह साबित सरकारको करना है कि ये पशु क़त्लको ले जाये जा रहे थे। ऐसा साबित करना बहुत ही कठिन है; क्योंकि पशु रास्तेमें जप्त किये जाते हैं। मध्यप्रदेश तथा पंजाब सरकारने यह साबित करनेकी जिम्मेवारी अपराधीगणपर रखी है, उसको साबित करना है कि 'वह उस पशुको क़त्ल-हेतु नहीं ले जा रहा था।'

कानूनमें यह कहीं व्यवस्था नहीं है कि केसके निर्णयतक जिसमें चार-चार, पाँच-पाँच वर्ष कोर्टोंमें लग जाते हैं, उस समय चारेका खर्च करनेकी जिम्मेवारी किसपर है? गोशाला, पिंजरापोलवाले कोर्टसे जिन जानवरोंको ताबेमें लेते हैं, उस दिनसे गोशालावाले चारे-पानीकी व्यवस्था करते हैं। पशु-मालिक एक दिन भी चारा नहीं डलवाता, जबकि पशु-मालिक स्वयंको पशुका मालिक बतलाकर कोर्टमें लड़ता है। इसलिये चारेके खर्चेकी जिम्मेवारी उस समयतक पशु-मालिकपर होनी

चाहिये। इस प्रकारका जजमेंट उच्च न्यायालय मुंबई, हैदराबादसे मिला हुआ है। एक केसमें सर्वोच्च न्यायालयतक जाना पड़ा। वह केस अभी भी सुप्रिम कोर्टमें लंबित है। गोशाला, पिंजरापोलवाले पशुओंका रक्षण करते हैं, वे उसके विश्वस्त हैं, मालिक नहीं। कानूनमें पैसे किससे लेना है? इसकी कोई व्यवस्था नहीं है, इसलिये संशोधन करना चाहिये। अभीतक गोवंशकी रक्षा इस आधारपर की गयी कि जबतक गोवंश गोशाला तथा पिंजरापोलमें हैं उनके चारे-पानीका खर्चा संस्था करती रहे, परंतु कभी संयोगसे किसी कोर्टने पशु वापस देनेका आर्डर कर दिया तो चारेका खर्च वसूल करनेका उस संस्थाको पूर्ण अधिकार है। इसलिये अभीतक एक लाखसे ज्यादा गोवंशको इसी आधारपर क़तलसे बचा लिया गया और पशु वापस अपराधीके हाथमें नहीं गये।

गाय, बैल बचाने हैं तो उसके दो ही रास्ते हैं—एक तो किसानोंको गाय-बैलसे प्राप्त होनेवाले गोबर, गोमूत्र एवं गोबर-खादकी उपयोगिता बतानी होगी और रासायनिक खादके दुष्परिणाम बतलाने होंगे। दूसरा रास्ता यह है कि जहाँ-कहीं गोवंशकी खरीदी-विक्री होकर गोवंश क़तल-हेतु ले जाये जाते हों चाहे पैदल हों या ट्रकमें हों या रेलमें हों उनको कानूनके अन्तर्गत रोकनेका काम करनेवाले व्यक्तियोंकी गाँव-गाँवमें समितियाँ बनानी होंगी। इस ओर ध्यान दिये बिना गोवंश क़तलसे नहीं बच सकेगा। इन दोनों माध्यमोंका प्रचार-प्रसार अति आवश्यक है। कर्मठ व्यक्तियोंकी जरूरत है, जिसे कानूनी जानकारी देकर प्रशिक्षित किया जा सके, तभी गोवंशकी रक्षा हो सकेगी। अन्यथा दिन दुगुनी रात चौगुनी गोवंशकी क़तल बढ़ती ही रहेगी।

भारतके इतिहासमें १९५८ का वर्ष गोवंशके लिये काला दिन माना जायगा, जब सुप्रिम कोर्टने बूढ़े-अनुपयोगी बैलोंकी क़त्लको मान्यता दे दी। परिणामत: तबसे बूढ़े बैलोंकी जगह अच्छे सुदृढ़ बैल भी कटने लगे तथा गायें भी कटने लगीं और देशका गोवंश बड़ी मात्रामें क़त्लखाने पहुँचने लगा।

वर्तमान भारतमें अधिकृत ३,६०० क़त्लखाने सरकारकी स्वीकृतिसे खुल चुके हैं और प्रतिदिन उन क़त्लखानोंमें ४०,००० से ५०,००० के लगभग गोवंश कट रहा है। भारतके आजादीके समय प्रति एक हजार व्यक्तिके पीछे ४५३ गोवंश और भैंस-वंश भारतमें था जो घटते-घटते अभी २३० के भी लगभग नहीं रहा। जबकि दुनियाके अलग-अलग देशोंमें एक हजार व्यक्तिके पीछे अर्जेटीनामें २०८१, आस्ट्रेलियामें १,३६५, कोलम्बियामें ९१९, ब्राजीलमें ७२६ है। इससे स्पष्ट है कि भारत-जैसा कृषि-प्रधान देश आज पशुधनमें सबसे पीछे है।

आज गोवंशकी रक्षा करना अति कठिनतम कार्य बन गया है। सरकार क़त्लखानोंके निर्माणमें प्रोत्साहन दे रही है, मांस तथा चमड़ेके निर्यातमें वृद्धि कर रही है तो गोवंश कैसे बचेगा? इस देशमें घी-दूध-दहीकी नदियाँ बहती थीं, जहाँ दूध बेचना पूत बेचनेके समान माना जाता था, वहीं आज पशुओंके खून तथा मांसकी नदियोंमें बाढ़ आ रही है।

दुग्ध-वृद्धिके नामपर देशकी उन्नत जातिकी गायोंको संकरित कर उस जातिको नष्ट करनेका अभियान जोरोंपर है। पश्चिमी देशोंसे साँड़ोंका वीर्य मँगवाकर गायोंको गर्भ धारण करवाया जा रहा है। देशमें साँड़ कहाँसे तैयार होंगे जबकि छोटे-छोटे बछड़ोंको ही काट डाला जाता है। गाय तथा साँड़के नैसर्गिक-मिलनकी योजना ही नष्ट की जा रही है। गायोंके साथ जो अन्याय हो रहा है, वह देशकी बरबादीका कारण बनेगा। इसे इतिहास कभी माफ नहीं करेगा। वर्तमान नीतियोंको देखते हुए लगता है कि सरकारने 'पशुरक्षण-एक्ट' मानो पशुवधको प्रोत्साहन-हेतु ही बनाया है। बंगालमें बकरीदके अवसरपर तीन दिनके लिये हर उम्रकी गाय, बछड़े, बैल खुलेआम धर्मके नामपर काटे जाते हैं, उसपर प्रतिबन्ध लगे इसलिये सुप्रीम कोर्टमें केस १२ वर्षसे लम्बित पड़े हैं और गायें बे-रोक-टोक काटी जा रही हैं।

गोवंशको रेलवेद्वारा कलकत्ता खेतीके नामपर ले जाया जाता था। उन बैलोंको रेलवेसे ले जानेपर प्रतिबन्ध लगाया गया, किंतु कसाई, पशु-व्यापारी इसको पूर्ववत् रेलवेसे ले जाना चाहते हैं। दिल्ली हाईकोर्टमें केस चल रहा है।

'अखिल भारत कृषि-गोसेवा-संघ' भारतके अलग-अलग राज्योंके उच्च न्यायालयोंमें तथा दिल्लीके सर्वोच्च न्यायालयमें 'गोवंश-रक्षण-हेतु' रात-दिन प्रयत्नशील है और भगवान्‌ने चाहा तो इस कार्यमें सफलता भी मिलेगी। अत: सभी लोगोंको इस पुण्य कार्यमें अपने-अपने स्तरसे अवश्य कार्य करना चाहिये।

जब मालवीयजीने त्रिवेणीका जल लेकर गोरक्षाकी प्रतिज्ञा की

महामना पण्डित मदनमोहनजी मालवीय महाराज गोसेवाकी साकार प्रतिमा थे। जनवरी सन् १९२८ में प्रयागमें त्रिवेणीके पावन तटपर 'अखिल भारतवर्षीय सनातन धर्मसभा'का अधिवेशन था। व्याख्यान-वाचस्पति पं० दीनदयालजी शर्मा शास्त्री भी अधिवेशनमें महामनाके साथ उपस्थित थे।

महान् गोभक्त हासानन्दजी वर्मा गोहत्याके विरोधमें काला कपड़ा पहने तथा मुँहपर कालिख पोते हुए अधिवेशनमें उपस्थित हुए।

मालवीयजी महाराजको सम्बोधित कर गोभक्त हासानन्दजीने कहा—'गऊ माता भारत तथा हिन्दुत्वका मूल है। आप 'गोहत्या-बंदीके' लिये कोई ठोस योजना बनाइये।

इसपर महामना बोल उठे—'हासानन्द! तुम मुखमें कालिख लगाकर फिर मेरे सामने आ गये। अरे गोहत्याके कारण केवल तुम्हारा मुँह ही काला नहीं हो रहा है, हम सब भारतवासियोंके मुखपर कालिख है। आओ, गोरक्षाके भीम! गङ्गाजलसे तुम्हारे मुखकी कालिमाको धो दूँ।' महामनाने त्रिवेणीके पावन जलसे गोभक्त हासानन्दजीके मुँहकी कालिख धो डाली तथा उसी समय त्रिवेणीका पावन गङ्गाजल हाथमें लेकर प्रतिज्ञा की 'हम जीवनभर गोरक्षा तथा गोसेवाके लिये प्रयासरत रहेंगे।'

इसी समय पण्डित दीनदयालजीने 'गो-सप्ताह' मनानेका प्रस्ताव रखा तथा 'अखिल भारतीय गोरक्षा-कोष' की स्थापनाकी घोषणा की गयी।

महामना मालवीयजी महाराजने सन् १९२८ में कलकत्तामें हुए कांग्रेसके अधिवेशनमें स्पष्ट कहा था—'गौ माता भारतवर्षका प्राण है। उसकी हत्या धर्मप्राण भारतमें सहन नहीं की जानी चाहिये।'

गोरक्षाका सर्वोत्तम साधन—भगवत्प्रार्थना

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल॥

गोसाधुदेवताविप्रवेदानां रक्षणाय वै।
तनुं धत्ते हरिः साक्षाद् भगवानात्मलीलया॥

'गोसेवा-अङ्क' में गौकी दुर्दशा और इस दुर्दशासे गौको उबारनेके साधनोंपर विशिष्ट विद्वानों और सूक्ष्मदर्शी विशेषज्ञोंद्वारा भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणसे बहुत विचार किया गया है और अपने-अपने स्थानमें वे सभी विचार महत्त्वपूर्ण हैं और उनसे यथायोग्य लाभ उठानेकी बड़ी आवश्यकता है। आशा है कि गो-प्रेमी तथा देशप्रेमी पुरुष भलीभाँति मनन करके उनको यथायोग्य काममें लायेंगे। एक साधन और भी है, और वह है—भगवान्से कातर प्रार्थना। जब-जब पृथ्वीपर संकट आया (पृथ्वीपर संकट आनेका अर्थ ही है—गो-ब्राह्मणपर संकट आना), तभी तब ऋषि-देवताओंने गौरूपधारिणी या गोरूपा पृथ्वीके पीछे-पीछे जाकर भगवान्से करुण प्रार्थना की, भगवान्को पुकारा और फलतः उनका संकट टला। भगवान् अवतीर्ण हुए। *'बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।'*

भगवान्की कृपा और भगवान्के बलसे असम्भव भी सम्भव हो जाता है। अतः गौकी रक्षाके लिये सबसे बढ़कर साधन है—हृदयकी सच्ची, अनन्य, करुण प्रार्थना। अतएव सबसे आवश्यक है—भगवान्के मङ्गलमय विधानकी मङ्गलमय व्यवस्थाके नीचे आना, अपनेको भगवान्के कल्याणमय चरणोंमें पूर्णतया समर्पित कर देना। जिनका भगवत्प्रार्थनामें विश्वास है, उनको चाहिये कि वे श्रद्धापूर्वक नित्य भगवान्से कातर प्रार्थना किया करें। यदि प्रार्थना सत्य होगी और हृदयसे होगी तो ऐसे संयोग अपने-आप बनेंगे जिनसे गोरक्षाका मार्ग सुगम हो जायगा।

'गोवध-बंदी' के लिये महापुरुषों एवं गोभक्तोंकी वाणी

[श्रीश्रीकिसन काबरा]

गोवंशकी रक्षामें देशकी रक्षा समायी हुई है। —महामना मालवीयजी

गोवंशकी रक्षा ईश्वरकी सारी मूक सृष्टिकी रक्षा करना है। भारतकी सुख-समृद्धि गौके साथ जुड़ी हुई है।— महात्मा गाँधीजी

समस्त गोवंशकी हत्या कानूनन बंद होनी चाहिये।—गोप्राण स्वामी करपात्रीजी महाराज

गोका समस्त जीवन देश-हितार्थ समर्पित है। अतः भारतमें गोवध नहीं होना चाहिये।—गोधामवासिनी माता आनन्दमयी माँ

मैं हिन्दू और मुसलमानसे इस्तदुआ करता हूँ कि यह सबका फर्ज है कि इस हमारी माँ गायकी हिफाजत करें। खुदा बरकत करेगा।

—शेख खुद्दीन शाह

यही आस पूरन करो तुम हमारी,
मिटे कष्ट गौअन, छुटै खेद भारी।—गोभक्त गुरुगोविन्दसिंहजी

जैसे कोई अपनी मातापर किये गये अत्याचारको सहन नहीं करेगा, उसी प्रकार गोमाताकी हत्याको सहन नहीं करेगा

—गोलोकवासी श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्थाका दारोमदार गोवंशपर निर्भर है। जो लोग यन्त्रीकृत 'फार्मों' के और तथाकथित वैज्ञानिक पद्धतियोंके सपने देखते हैं, वे एक अवास्तविक संसारमें रहते हैं। हमारे लिये गोहत्या-बंदी अनिवार्य है।

—स्व० जयप्रकाशनारायणजी

भारतमें गोवंशके प्रति करोड़ों लोगोंमें आस्था है, उसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये।

—भू० पू० प्रधान मन्त्री स्व० लालबहादुरजी शास्त्री

सम्पूर्ण गोवंश परम उपकारी है। सबका कर्तव्य है कि तन-मन धन लगाकर गोहत्या पूर्णरूपसे बंद करावें।

—गोप्रेमी स्व० सेठ जुगलकिशोरजी बिड़ला

गोवंशके तीन बड़े दुश्मनोंको दूर भगाओ-१-ट्रैक्टर, २-बछड़े-बछियोंको मारकर निकाला गया कॉफ लेदर और ३-गोमांसके व्यापारीको।—काशीनिवासी श्रीअब्दुल रज्जाक

जबतक भारतकी भूमिपर गोरक्त गिरेगा, तबतक देश सुख-शान्ति और धन-धान्यसे वञ्चित रहेगा।

—गोप्राण हनुमानप्रसादजी पोद्दार

कृषि-प्रधान भारतमें किसी भी उम्रके गाय-बैलोंकी हत्या कानूनन नहीं होनी चाहिये। गोहत्या मातृहत्या है। संविधानमें आवश्यक संशोधन किया जाकर सम्पूर्ण गोवंश-हत्या-बंदीका केन्द्रीय कानून बने। उसमें कोई अपवाद न हो। एक भी अपवाद रहा तो पूरा गोवंश कटेगा। गोवंशके मांसका निर्यात पूर्णतः बंद हो। इसके लिये सत्याग्रह करना पड़े तो सत्याग्रह करो।

—संत बिनोबाजी

सम्पूर्ण गोवंश-हत्या बंद करके राष्ट्रकी उन्नतिके लिये 'गौ' को 'राष्ट्र-पशु' घोषित कर भारत-सरकार यशोभागी बने।

—जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीनिरञ्जनदेवतीर्थजी महाराज

आज गोवंशका हनन हो रहा है। गोरक्षण आजका सर्वोत्तम राष्ट्रहित है।—स्वामी श्रीअखण्डानन्दजी सरस्वती

गोरक्षासे बढ़कर कोई धर्म नहीं है और गोहत्यासे बढ़कर कोई पाप नहीं है।—स्वामी श्रीसीतारामशरणजी, अयोध्या

गोवध-बंदी-हेतु प्रत्येक व्यक्ति नित्य एक हजार मधुसूदन-नामका जाप करे।—स्वामी श्रीसीतारामदास ओंकारनाथजी

'गौ' के बिना भारत-भूमिकी सत्ता अक्षण्ण नहीं रह सकती।—श्रीशरद्वल्लभा 'बेटी जी'

गोभक्तोंके आख्यान

महर्षि आपस्तम्बकी गो-भक्ति और उनका गो-प्रेम

[श्रीखेमचंद्रजी सैनी]

पूर्वकालमें आपस्तम्ब नामसे प्रसिद्ध एक महर्षि हो गये हैं, जो ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ एवं उपवास-व्रतमें तत्पर रहनेवाले थे। उन्होंने काम, क्रोध, लोभ और मोहको सदाके लिये त्यागकर नर्मदा और मत्स्याके संगमके जलमें प्रवेश किया था। जलके भँवरमें बैठे हुए महातपस्वी आपस्तम्बको मल्लाहोंने मछलियोंसहित जाल उठाते समय जलके बाहर खींच लिया। उन्हें इस दशामें देखकर वे निषाद भयसे व्याकुल हो उठे और मुनिके चरणोंमें प्रणाम करके इस प्रकार बोले—'ब्रह्मन्! हमने अनजानमें बड़ा भारी अपराध कर डाला है, आप क्षमा करें। इसके सिवा इस समय आपका प्रिय कार्य क्या है, उसके लिये आज्ञा दें।'

मुनिने देखा कि इन मल्लाहोंद्वारा यहाँकी मछलियोंका बड़ा संहार हो रहा है। यह देखकर उनका हृदय करुणासे भर आया। वे दु:खी होकर बोले—'भेददृष्टि रखनेवाले जीवोंके द्वारा दु:खमें डाले हुए प्राणियोंकी ओर जो अपने सुखकी इच्छासे ध्यान नहीं देता उससे बढ़कर क्रूर इस संसारमें दूसरा कौन है। अहो! स्वस्थ प्राणियोंके प्रति यह निर्दयतापूर्ण अत्याचार तथा स्वार्थके लिये उनका व्यर्थ बलिदान कैसे आश्चर्यकी बात है? ज्ञानियोंमें भी जो केवल अपने ही हितमें तत्पर है, वह श्रेष्ठ नहीं है, क्योंकि यदि ज्ञानी पुरुष भी अपने स्वार्थका आश्रय लेकर ज्ञानमें स्थित होते हैं तो इस जगत्के दु:खातुर प्राणी किसकी शरणमें जायँगे। जो मनुष्य स्वयं अकेला सुख भोगना चाहता है उसे मुमुक्षु पुरुष पापीसे भी महापापी बताते हैं। मेरे लिये वह कौ-सा उपाय है, जिससे मैं दु:खी चित्तवाले सम्पूर्ण जीवोंके भीतर प्रवेश करके अकेला ही सबके दु:खोंको भोगता रहूँ। मेरे पास जो कुछ भी पुण्य है, वह सभी दीन-दु:खियोंके पास चला जाय और उन्होंने जो कुछ पाप किया हो, वह सब मेरे पास आ जाय। इन दरिद्र, विकलाङ्ग तथा रोगी प्राणियोंको देखकर जिसके हृदयमें दया उत्पन्न नहीं होती, वह मेरे विचारसे मनुष्य नहीं राक्षस है। जो समर्थ होकर भी प्राण-संकटमें पड़े हुए भयविह्वल प्राणियोंकी रक्षा नहीं करता, वह उसके पापको भोगता है। अत: मैं इन दीन-दु:खी मछलियोंके दु:खसे मुक्त करनेका कार्य छोड़कर मुक्तिको भी वरण करना नहीं चाहता, फिर स्वर्गलोककी तो बात ही क्या है?'

मुनिका यह वचन सुनकर मल्लाह लोग बहुत घबराये। उन्होंने महाराज नाभागके पास जाकर सारी बातें यथार्थरूपसे बतलायीं। नाभाग भी वह वृत्तान्त सुनकर अपने मन्त्रियों तथा पुरोहितोंके साथ मुनिका दर्शन करनेके लिये वहाँ आये और बोले—'भगवन्! आज्ञा दीजिये, मैं आपकी कौन-सी सेवा करूँ?'

आपस्तम्ब बोले—राजन्! ये मल्लाह बड़े दु:खसे जीविका-निर्वाह करते हैं। इन्होंने मुझे जलसे बाहर निकालकर बड़ा भारी परिश्रम किया है। अत: तुम मेरा जो उचित मूल्य समझो वह इन्हें दे दो।

नाभाग बोले—भगवन्! मैं इन निषादोंको आपके बदलेमें एक लाख स्वर्ण-मुद्रा देता हूँ।

आपस्तम्बने कहा—राजन्! मेरा मूल्य एक लाख ही नियत करना उचित नहीं है। मेरे योग्य जो मूल्य हो वह इन्हें अर्पण करो। इस सम्बन्धमें अपने मन्त्रियोंके साथ विचार कर लो।

नाभाग बोले—द्विजश्रेष्ठ! यदि पूर्वोक्त मूल्य उचित नहीं है तो इन निषादोंको एक करोड़ दे दिया जाय और यदि यह भी आपके योग्य न हो तो आज्ञा होनेपर और

अधिक भी दिया जा सकता है।

आपस्तम्ब बोले—राजन्! मैं एक करोड़ या इससे अधिक मूल्यके योग्य नहीं हूँ। मेरे योग्य मूल्य चुकाओ। ब्राह्मणोंसे सलाह ले लो।

नाभागने कहा—यदि ऐसी बात है तो मेरा आधा या पूरा राज्य इन निषादोंको दे दिया जाय। मेरे मतमें यह मूल्य आपके योग्य होगा, किंतु आप किस मूल्यको पर्याप्त मानते हैं, यह स्वयं बतानेकी कृपा करें।

आपस्तम्ब बोले—राजन्! तुम्हारा आधा या पूरा राज्य भी मेरे लिये उचित मूल्य नहीं है। मूल्य वह दो जो मेरे योग्य हो। समझमें न आता हो तो ऋषियोंके साथ विचार कर लो।

महर्षिका यह वचन सुनकर मन्त्रियों और पुरोहितोंके साथ विचार-विमर्श करते हुए धर्मात्मा राजा नाभाग बड़ी चिन्तामें पड़ गये। इसी समय महातपस्वी लोमश ऋषि वहाँ आ गये, उन्होंने नाभागसे कहा—'राजन्! भय न करो। मैं मुनिको संतुष्ट कर लूँगा।'

राजा बोले—'महाभाग! आप ही इनका मूल्य बता दें अन्यथा ये महर्षि क्रोधमें आकर मेरे कुटुम्ब, कुल, बन्धु-बान्धव तथा समस्त चराचर त्रिलोकीको भस्म कर सकते हैं, फिर मुझ-जैसे अत्यन्त तुच्छ, दीन और विषयी मनुष्यकी तो बात ही क्या है?'

लोमशने कहा—'महाराज्! तुम उनका मूल्य देनेमें समर्थ हो। श्रेष्ठ द्विज जगत्के लिये पूजनीय है और गौएँ भी दिव्य एवं पूजनीय मानी गयी हैं। अतः तुम उनके लिये मूल्यके रूपमें 'गौ' ही दो।'

लोमशजीका यह वचन सुनकर राजा नाभाग मन्त्री और पुरोहितोंके साथ बहुत प्रसन्न हुए और हर्षमें भरकर बोले—भगवन्! उठिये-उठिये! मुनिश्रेष्ठ! यह आपके लिये योग्यतम मूल्य प्रस्तुत कर दिया गया है।

आपस्तम्बने कहा—अब मैं प्रसन्नतापूर्वक उठता हूँ। राजन्! तुमने उचित मूल्य देकर मुझे खरीदा है। मैं गौओंसे बढ़कर दूसरा मूल्य कोई ऐसा नहीं देखता जो परम पवित्र एवं पापोंका नाश करनेवाला हो। गौओंकी परिक्रमा करनी चाहिये। वे सदा सबके लिये वन्दनीय हैं। गौएँ मङ्गलका स्थान हैं, दिव्य हैं। स्वयं ब्रह्माजीने इन्हें दिव्यगुणोंसे विभूषित बनाया है। जिनके गोबरसे ब्राह्मणोंके घर और देवताओंके मन्दिर भी शुद्ध होते हैं, उन गौओंसे बढ़कर अन्य किसको बतायें। गौओंके मूत्र, गोबर, दूध, दही और घी—ये पाँचों वस्तुएँ पवित्र हैं और सम्पूर्ण जगत्को पवित्र करती हैं। गायें मेरे आगे रहें, गायें मेरे पीछे रहें, गायें मेरे हृदयमें रहे और मैं गौओंके मध्यमें निवास करूँ—

गावः प्रदक्षिणीकार्या वन्दनीया हि नित्यशः।
मङ्गलायतनं दिव्याः सृष्टास्त्वेताः स्वयम्भुवा॥
अप्यागाराणि विप्राणां देवतायतनानि च।
यद्गोमयेन शुद्ध्यन्ति किं ब्रूमो ह्यधिकं ततः॥
गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिस्तथैव च।
गवां पञ्च पवित्राणि पुनन्ति सकलं जगत्॥
गावो मे चाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठ एव च।
गावो मे हृदये चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

(स्कन्द, आ०, रेवा० १३। ६२—६५)

जो प्रतिदिन तीनों संध्याओंके समय नियम-परायण एवं पवित्र होकर **'गावो मे चाग्रतो नित्यं०'** इत्यादि श्लोकका पाठ करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर स्वर्गलोकमें जाता है। प्रतिदिन भक्तिभावसे गौओंको गोग्रास देनेमें श्रद्धा रखनी चाहिये। जो प्रतिदिन गोग्रास अर्पण करता है उसने अग्निहोत्र कर लिया, पितरोंको तृप्त कर दिया और देवताओंकी पूजा भी सम्पन्न कर ली—

तेनाग्नयो हुताः सम्यक् पितरश्चापि तर्पिताः।
देवाश्च पूजितास्तेन यो ददाति गवाह्निकम्॥

(स्कन्द०, आ०, रेवा० १३। ६९)

गोग्रास देते समय प्रतिदिन इस मन्त्रार्थका चिन्तन करे। सुरभिकी पुत्री गोजाति सम्पूर्ण जगत्के लिये पूज्य है, वह सदा विष्णुपदमें स्थित है और सर्वदेवमयी है। मेरे दिये हुए इस ग्रासको गौ माता देखें और ग्रहण करें—

सौरभेयी जगत्पूज्या नित्यं विष्णुपदे स्थिता।
सर्वदेवमयी ग्रासं मया दत्तं प्रतीक्षताम्॥

(स्कन्द०, आ०, रेवा० १३। ६९)

ब्राह्मणोंकी रक्षा करने, गौओंको खुजलाने और

सहलाने तथा दीन-दुर्बल-दुःखी प्राणियोंका पालन करनेसे मनुष्य स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता है। यज्ञका आदि-अन्त और मध्य गौओंको ही बताया गया है। वे दूध, घी और अमृत सब कुछ देती हैं। इसलिये गौओंका दान करना चाहिये और उनकी प्रतिदिन पूजा करनी चाहिये। ये गौएँ स्वर्गलोकमें जानेके लिये सीढ़ी बनायी गयी हैं।

गौओंके इस उत्तम माहात्म्यको सुनकर निषादोंने महाभाग आपस्तम्बजीको प्रणाम करके कहा—'प्रभो! हमने सुना है कि साधु पुरुषोंके सम्भाषण, दर्शन, स्पर्श, श्रवण और कीर्तन सभी पवित्र करनेवाले हैं। हमने यहाँ आप-जैसे महात्माके साथ वार्तालाप किया और आपका दर्शन भी कर लिया। अब हम आपकी शरणमें आये हैं, आप हमारे ऊपर अनुग्रह कीजिये।' आपस्तम्बजी बोले—'इस गौको तुमलोग ग्रहण करो। इससे तुम सब लोग पापमुक्त हो जाओगे। निषाद निन्दित कर्मसे युक्त होनेपर भी प्राणियोंके मनमें प्रीति उत्पन्न करके इन जलचारी मत्स्योंके साथ स्वर्गलोकमें जायँ। मैं नरकको देखूँ या स्वर्गमें निवास करूँ, किंतु मेरे द्वारा मन, वाणी, शरीर और क्रियासे जो कुछ भी पुण्यकर्म बना हो, उससे ये सभी दुःखार्त प्राणी शुभ गतिको प्राप्त हों।'

तदनन्तर शुद्ध चित्तवाले गोप्रेमी महर्षि आपस्तम्बकी सत्यवाणीके प्रभावसे सभी मल्लाह मछलियोंके साथ स्वर्गलोकमें चले गये।

गुजरातके गौरवशाली गो-सेवक—दाना भगत

[डॉ० श्रीकमलजी पुंजाणी]

सौराष्ट्र—गुजरातके सुविश्रुत गो-सेवकोंमें दाना भगतका नाम विशेष स्मरणीय है। वे जीवनभर गायोंका झुंड लेकर सौराष्ट्रके गाँव-गाँव घूमते रहे और गोमाताकी जय-जयकार करते रहे। लोग उन्हें 'घुमक्कड़ गोभगत' कहते थे।

दाना भगतका जन्म विक्रम-संवत् १७८४ में सौराष्ट्रके अमरेली जिलेके चलाला नामक गाँवमें हुआ था। वे जन्मसे अंधे थे। प्रकृतिने उन्हें सुमधुर कण्ठ दिया था। उनके पिता गोपालनका व्यवसाय करते थे। बचपनमें वे अपने पिताके साथ गायोंको चराने जाते और पेड़के नीचे बैठकर भजन-कीर्तन किया करते। कभी-कभी दोपहरके समय गायें भी उनके आस-पास आकर बैठ जातीं और भजन-कीर्तन सुनतीं।

कहते हैं कि एक बार किसी संत पुरुषने बालक दानाको गायोंके बीच कीर्तन करते देखा। वे कुछ समय वहाँ रुक गये और भजन सुनने लगे। जब उन्हें पता चला कि बालक देख नहीं पाता, तब वे दयार्द्र हो गये। उन्होंने बालकके पिताको अपने पास बुलाया और एक गायकी ओर संकेत करते हुए उसे दुह लानेका आदेश दिया। फिर महात्माजी उस दूधसे बालक दानाकी आँखें धोने लगे। कुछ ही क्षणोंमें बालक चिल्ला उठा—'मैं देख सकता हूँ। मुझे सब कुछ दिखायी देता है।'

बस, उस दिनसे दानाने अपना जीवन गो-सेवाके लिये समर्पित कर दिया। गो-चारण-व्रत उनके जीवनका मुख्य ध्येय बन गया। गौ माताकी सतत सेवा और गो-दुग्धके सतत सेवनसे उन्हें अलौकिक सिद्धि प्राप्त होने लगी। गायोंको लेकर वे सौराष्ट्र—गुजरातमें घूमने लगे।

एक बार दाना भगत गायोंके साथ गिरनार पर्वतके आस-पास घूम रहे थे। गायें चरती-चरती ऐसे स्थलपर पहुँच गयीं, जहाँ पानीका नितान्त अभाव था। दाना भगत पानीकी खोजमें भटकने लगे। कुछ लोगोंने बताया—'भगतजी! यहाँ पानी मिलना कठिन है, आप गायोंको लेकर शीघ्र ही पर्वतीय प्रदेशके बाहर निकल जाइये, नहीं तो ये प्याससे मर जायँगी।'

भगतजीने लोगोंकी बातोंपर ध्यान न दिया। वे पानीकी खोज करते रहे। लोग भी कुतूहलवश उनके साथ चलने लगे।

कुछ देर बाद भगतजी एक बड़े पत्थरके पास आकर रुक गये और लोगोंसे कहने लगे—'आप लोग 'गोमाताकी जय' बोलकर यह पत्थर हटा दें। इसके नीचे पानीका सोता छिपा हुआ है।'

लोगोंने पत्थर हटाया तो उस गड्ढेमें धीरे-धीरे पानी ऊपर आने लगा। कुछ ही देरमें पूरा गड्ढा पानीसे भर गया। लोग हर्ष-विभोर होकर गोमाताकी जय-जयकार करने लगे। भगतजी ने गायोंको पानी पिलाया और दूसरे गाँवकी ओर चल पड़े। गिरनार पर्वतके जंगलोंमें आज भी वह सोता पानीसे भरा पड़ा है और दाना भगतकी गोसेवाकी साक्षी दे रहा है।

गोसेवासे इन्हें कई प्रकारकी सिद्धियाँ प्राप्त थीं और अनेकों चमत्कारकी घटनाएँ इनके जीवनसे जुड़ी थीं। सौराष्ट्रमें आज भी गोसेवक दाना भगतका नाम बड़ी ही श्रद्धासे लिया जाता है।

कुछ बलिदानी गोभक्त

[श्रीशिवकुमारजी गोयल]

(१)

कटारपुरके गोभक्त शहीद

गाय अनादिकालसे हिन्दुत्वका मानबिन्दु रही है। मुसलमानोंके आक्रमण तथा देशके पराधीन होनेसे पूर्व गोरक्तकी एक बूँद भी पृथ्वीपर नहीं गिरती थी, किंतु मुसलमानोंद्वारा देशको पराधीन किये जानेके बाद गोहत्याका कलंक चालू हो गया।

आह 'गोहत्या-बंदी-आन्दोलन' करनेवालोंको यह दलील दी जाती है कि मुसलमानों तथा अंग्रेजोंके समय गोभक्त कहाँ थे? किंतु अपने ही गौरवमय इतिहाससे सर्वथा अनभिज्ञ तथाकथित राजनेतागण यह भी नहीं जानते कि भारतका इतिहास इस बातका साक्षी है कि हिन्दूने कभी भी गोहत्याके कलंकको सहन नहीं किया। छत्रपति शिवाजीने अल्प आयुमें ही गोहत्यारेको मौतके घाट उतारा और आजन्म गोभक्षकोंको मिटाकर 'हिन्दू राष्ट्र' की स्थानाके लिये औरंगजेबसे टक्कर लेते रहे। महाराणा प्रताप, गुरु गोविन्दसिंह, बन्दा वीर वैरागी, गुरु तेगबहादुर आदिने गोहत्याका कलंक मिटानेके लिये जीवनभर संघर्ष किया तथा अपने प्राणोंकी आहुति दी। मुगलकालमें एक नहीं हजारों व्यक्तियोंने गोरक्षार्थ अपना जीवन होम दिया।

अंग्रेजोंके शासनकालमें भी हिन्दू जनता गोहत्याके विरुद्ध समय-समयपर संघर्ष करती रही। १८५७ में वीर मंगल पांडे आदिने गोहत्याके कलंकके विरुद्ध ही बंदूक उठायी थी।
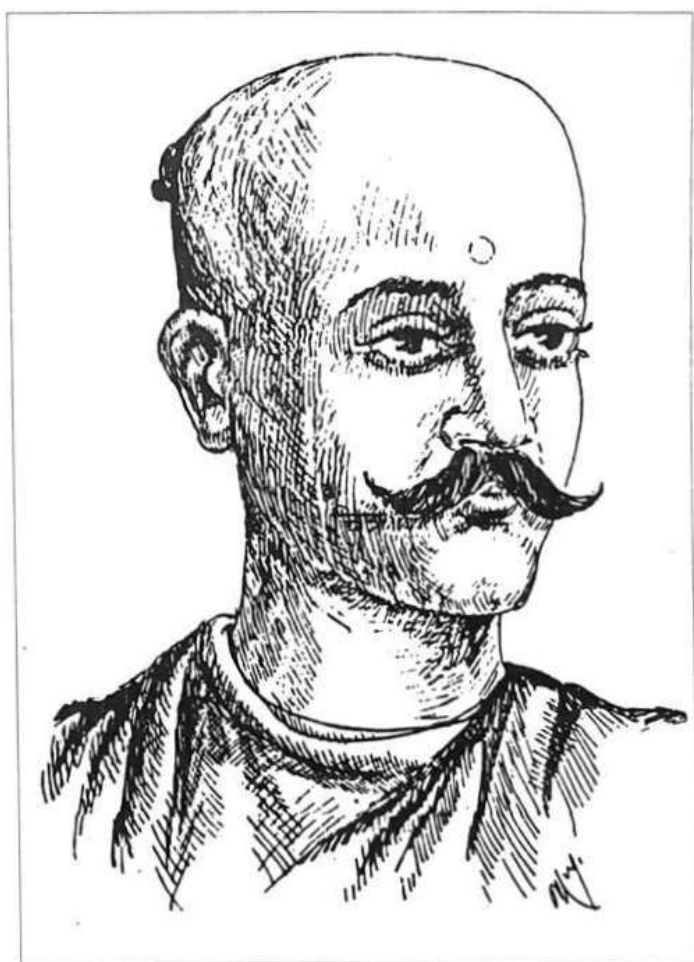
मंगल पांडे

सन् १९१८ की बात है। हरिद्वारके निकट कटारपुर नामक ग्राममें बकरीदके दिन मुसलमानोंने गोहत्या करनेकी घोषणा की।

इस क्षेत्रके हिन्दुओंने एक स्वरसे निश्चय किया कि

'हमारे जीवित रहते इस पावन तीर्थकी भूमिपर गोमाताके रक्तकी एक बूँद भी नहीं गिरने दी जायगी।' उन दिनों ज्वालापुरमें थानेदार मुसलमान था। उसके संकेतपर मुसलमानोंने १८ सितम्बरको गायोंका क़त्ल करनेके लिये सजाकर जुलूस निकाला। हनुमान्-मन्दिरके महन्त रामपुरीजीके नेतृत्वमें हिन्दुओंने डटकर गोहत्यारोंका प्रतिरोध किया। कसाई जिस गायको हत्याके लिये सजा कर ले जा रहे थे, महात्मा रामपुरीजीने झपटकर रस्सा काटकर उस गायको मुक्त करा लिया। गौमाता भाग गयी तथा मुक्त हो गयी। गोहत्यारे महात्मा रामपुरीजीपर टूट पड़े। उनके शरीरपर जगह-जगह छुरोंके ४८ घाव लगे। इससे हिन्दू जनता गोहत्यारोंपर टूट पड़ी। परिणामस्वरूप अनेक गोहत्यारोंको प्राणोंसे हाथ धोना पड़ा। हिन्दू जनताने प्राणोंपर खेलकर कालके गालमें जानेवाली गायोंको बचा लिया।

अंग्रेज मुसलमानोंके साथ षड्यन्त्र करके हिन्दुओंका दमन करना चाहते थे, अत: अंग्रेज अधिकारियोंने कटारपुरके हिन्दुओंपर अमानुषिक अत्याचार एवं अंधाधुंध गिरफ्तारियाँ प्रारम्भ कर दीं। १७२ हिन्दुओंको गिरफ्तार कर लिया गया।

अदालतमें मुकद्दमेका नाटक रचा गया और ८ अगस्त १९१९ को अंग्रेज जजोंके ट्रिब्यूनलने महन्त ब्रह्मदास उदासीन, चौ० जानकीदास, डॉ० पूर्णप्रसाद तथा श्रीमुखा चौहानको फाँसी और १३५ गोभक्तोंको काला पानीका दण्ड दिया। हरिद्वारके थानेदार श्रीशिवदयालसिंहको भी आजन्म कारावासका दण्ड दिया गया।

महामना पं० मदनमोहन मालवीयजीने गोभक्तोंकी मुक्तिके लिये भारी प्रयास किया, किंतु अंग्रेज सरकारके कानपर जूँ नहीं रेंगी।

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुरके छात्रोंको भी इस काण्डमें फँसानेका प्रयास किया गया। गुरुकुल महाविद्यालयके आचार्य तथा प्रख्यात विद्वान् आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थने उन दिनों अमृतसरमें हो रहे कांग्रेस अधिवेशनमें पहुँचकर महात्मा गाँधीको कटारपुर-काण्डकी घटनासे अवगत कराया था तथा गोभक्तोंको बचानेके लिये आवाज उठानेकी प्रार्थना की।

अंग्रेज सरकार गोभक्तोंको फाँसीपर लटकानेपर तुली हुई थी। अन्तमें गोभक्त महन्त ब्रह्मदास (आयु ४५ वर्ष) एवं चौधरी जानकीदास (आयु ६० वर्ष) को फाल्गुन सुदी २, सन् १९२० को इलाहाबाद जेलमें फाँसीपर लटका दिया गया। दोनों गोभक्त हुतात्मा हँसते-हँसते तथा 'गोमाताकी जय' का उद्घोष करते हुए फाँसीपर झूल गये। उस दिन इलाहाबाद नगरमें पूर्ण हड़ताल रही। डॉ० पूर्णप्रसाद (आयु ४८ वर्ष) को लखनऊमें तथा कटारपुरके श्रीमुखा चौहान (आयु ३२ वर्ष) को बनारस जेलमें फाँसीपर लटकाया गया।

गोभक्त शहीद महन्त ब्रह्मदासजी पंचायती उदासीन

गोभक्त महन्त ब्रह्मदासजी

अखाड़ेके महन्त थे। वे अत्यन्त निर्भीक गोभक्त थे। उदासीन सम्प्रदायके हजारों लोग उनके शिष्य थे।

दर्जनों गोभक्तोंने इस काण्डमें कालापानीमें अमानवीय यातनाएँ सहन कीं। सरदार जगदत्त, श्रीनन्दा, लाला खूबचन्द पंसारी, पं० आसाराम, श्रीलक्ष्मीनारायण भक्त, लाला दौलतराम, लाला देवीचन्द, पं० नारायणदत्त, चौ० रघुवीरसिंह चौ० फतहसिंह, पं० माखनलाल, लाला प्यारेलाल, श्रीसादी आदि अन्यान्य गोभक्तोंने कालापानी (अंडमान) में गोरक्षार्थ यातनाएँ सहन कीं।

कटारपुरमें अब भी प्रतिवर्ष बलिदानियोंकी पावन स्मृति मनायी जाती है। गोरक्षा-आंदोलनके प्रणेता लाला हरदेवसहायजीकी प्रबल इच्छा थी कि कटारपुरमें उन गोभक्त बलिदानियोंकी स्मृतिमें एक विशाल संस्मरण बनाया

जाय। कटारपुरकी पावन भूमि आज भी हमें गोरक्षाकी प्रेरणा देती है।

(२)

अनशन करते हुए दो गोभक्त बलिदानी

[क] श्रीऋषिस्वरूप ब्रह्मचारी

सन् १९६६में गोहत्याके कलंकको मिटानेके लिये पूज्य संत श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी महाराज तथा पुरीके जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीनिरंजनदेवतीर्थजी महाराजने क्रमशः वृन्दावन तथा पुरीमें अनशन किया था।

श्रीऋषिस्वरूप ब्रह्मचारी धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज तथा शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजके अनन्य भक्त थे। वे धर्मसंघके एक सक्रिय कार्यकर्ता तथा गोसेवक प्रचारक थे। जगह-जगह हाथमें झंडा लेकर पहुँच जाते तथा नगर या कस्बेको 'गोमाताकी जय हो' 'गोहत्या बंद हो' के नारोंसे गुँजा डालते थे। उन्होंने दिल्लीके यमुना-तटपर स्थित 'धर्मसंघ-भवन' में २० नवम्बर, १९६६ को गोहत्या-बंदीकी माँगको लेकर अनशन किया तथा १० दिन बाद ३० नवम्बरको गौ माताकी रक्षाके लिये बलिदान दे दिया।

[ख] श्रीमेहरचन्द पाहूजा

उधर वृन्दावनमें पूज्य प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारीके साथ गोभक्त मेहरचन्द पाहूजा भी २० नवम्बर १९६६ को अनशनपर बैठे। जब उनकी शारीरिक स्थिति बहुत कमजोर हो गयी तो अनेक गोभक्त संतोंने उनसे अनशन त्यागनेकी अपील की, किंतु उन्होंने उत्तर दिया—'गौ माताके लिये प्राणोत्सर्गसे बढ़कर मैं दूसरा धर्म नहीं मानता।' अन्तमें ३१ दिसम्बरको उन्होंने अपने प्राणोंका उत्सर्ग कर दिया।

गौ माताकी रक्षाके लिये अनशन करते हुए बलिदान देनेवाले ये दोनों महान् गोभक्त 'गोरक्षा-आन्दोलन' के इतिहासमें अविस्मरणीय रहेंगे।

(३)

गोभक्त लाला हरदेवसहायजी

परम गोभक्त लाला हरदेवसहायजी 'गोरक्षा-आन्दोलन' के अग्रणी सूत्रधारोंमेंसे थे। गोवंशकी रक्षा तथा गोसंवर्धनके लिये उन्होंने अपना जीवन ही समर्पित कर दिया था। उन्होंने राष्ट्रकी स्वाधीनतासे लेकर राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रचार तथा राष्ट्रमाता गायकी रक्षाके लिये जो कार्य किया वह अविस्मरणीय रहेगा।

लालाजीका जन्म संवत् १९४९, मार्गशीर्ष मासके पञ्चमी तिथिको हरियाणाके हिसार जिलेके सातरोड गाँवमें लाला मुसद्दीलालजीके घर हुआ था। लालाजी बचपनसे ही राष्ट्रभक्तिके रंगमें रँग गये थे। उन्हें देववाणी-संस्कृत भाषासे विशेष प्रेम था तथा इसीलिये वेदों, उपनिषदों और पुराणोंके प्रति उनके मनमें बचपनसे ही अनन्य श्रद्धा थी। स्वदेशी वस्तुओंके प्रति निष्ठा होनेके कारण उन्होंने विदेशी कपड़ेकी जगह हाथसे बुने सूतके कपड़े पहननेका संकल्प ले लिया था।

उन्हें लाला लाजपतराय, महामना मालवीयजी तथा लोकमान्य तिलकने विशेष प्रभावित किया था। लालाजी अंग्रेजी शिक्षाकी जगह हिंदी तथा संस्कृतमें शिक्षा दिये जानेके प्रबल समर्थक थे। उन्होंने हरियाणाके ६५ गाँवोंमें विद्यालय खुलवाकर हिंदी तथा संस्कृतका प्रचार किया

लालाजीने 'स्वाधीनता-संग्राम' में सक्रिय भाग लिया। सन् १९२१ तथा १८४२ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलनमें वे सत्याग्रह करते हुए जेल गये थे। सन् १९२१में निमावली (पंजाब) की जेलमें वे स्वामी श्रद्धानन्दजीके साथ रहे। स्वामी श्रद्धानन्दजी गीताके प्रति अनन्य निष्ठा रखते थे। लालाजी गीताके प्रति लगाव स्वामीजीके प्रवचनको सुनकर ही हुआ था।

सन् १९३९ में हिसार जिलेमें भीषण अकाल पड़ा तथा गोवंश भूखा मरने लगा तो लालाजीने प्रख्यात गोभक्त ज० ना० मानकरजीके साथ मिलकर गोवंशकी सेवाके लिये अपनेको समर्पित कर दिया। उन्होंने गाँव-गाँव जाकर गायोंके लिये चारा इकट्ठा किया तथा दुर्भिक्ष-पीडित महिलाओंके लिये 'सूत-कताई-केन्द्र' भी स्थापित किया।

लालाजीका सपना था कि देश स्वाधीन होते ही गोवंशकी हत्याका कलंक तुरंत दूर कर दिया जायगा, किंतु जब उन्होंने देखा कि स्वाधीनताके बाद गोहत्याको और ज्यादा प्रोत्साहित किया जा रहा है तथा नये-नये बूचड़खाने खोलकर गोमांसका निर्यात तक शुरू कर दिया गया है तो उनकी आत्मा कराह उठी। उन्होंने प्रधान मन्त्री नेहरूजी, राष्ट्रपति डॉ० श्रीराजेन्द्रप्रसाद आदिसे मिलकर तथा पत्र-व्यवहार कर गोहत्यापर प्रतिबन्ध लगानेकी माँग की। किंतु

प्रधान मन्त्रीके हठके कारण गोहत्यापर प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सका।

लालाजी 'भारत-सेवक-समाज' तथा सरकारी संस्थानोंके माध्यमसे गोरक्षाका कार्य करते थे। सन् १९५४ में वे महान् संत स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज तथा संत श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारीके सम्पर्कमें आये। ब्रह्मचारीजीके साथ मिलकर उन्होंने कलकत्ता हत्याके लिये जानेवाली गायोंको बचाया। इसके बाद उन्होंने ४ फरवरी १९५४ को प्रयाग-कुम्भपर 'गोहत्या-निरोध-समिति' की स्थापना की। संत प्रभुदत्त ब्रह्मचारीजीके साथ मिलकर उन्होंने मथुराके कसाईखानेपर सत्याग्रह किया। धर्मसंघके तत्त्वावधानमें स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजने पावन व्रजभूमिको गोहत्याके कलंकसे मुक्त करानेके लिये आन्दोलन चलाया तो लालाजीका उन्हें सक्रिय सहयोग मिला। पूज्य ब्रह्मचारीजीके साथ लालाजीने लखनऊमें विधान-सभाके सामने सत्याग्रह कर उत्तरप्रदेशमें 'गोहत्या-बंदी' की माँग की। यह आन्दोलन तबतक जारी रहा, जबतक 'गोहत्या-बंदी' का कानून [भले ही वह आगे चलकर लचर सिद्ध हुआ] बन नहीं गया। इसी तरह सन् १९५५ में बिहारमें 'गोहत्या-बंदी' की माँगको लेकर चलाये आन्दोलनमें लालाजी ब्रह्मचारीजीके साथ बाँकीपुर जेलमें रखे गये। बिहारके जेलसे ये दोनों तभी मुक्त हुए जब 'गोहत्या-बंदी कानून' बना दिया गया।

लालाजीने प्रतिज्ञा की थी कि 'जबतक पूरे देशमें गोहत्यापर पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं लगेगा मैं न पगड़ी पहनूँगा न चारपाईपर सोऊँगा' इस प्रतिज्ञाका उन्होंने जीवनपर्यन्त पालन किया।

लालाजीने 'गाय ही क्यों' तथा गोसम्बन्धी दर्जनों पुस्तकें लिखी थीं। 'गाय ही क्यों' पुस्तककी भूमिका तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ० श्रीराजेन्द्रप्रसादजीने लिखी थी। उन्होंने स्वीकार किया था कि 'गोवंशके बारेमें लालाजीका ज्ञान अगाध है।'

लालाजी धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज तथा शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजके प्रति अनन्य श्रद्धा रखते थे। उधर 'राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ' के सरसंघचालक श्रीमाधवराव सदाशिवराव गोलवलकर (श्रीगुरुजी) के प्रति भी उनकी श्रद्धा-भावना थी। श्रीगुरुजी भी लालाजीकी गोसेवासे बहुत प्रभावित थे।

लालाजी 'कल्याण'-सम्पादक पूज्य भाईजी (श्री-हनुमानप्रसादजी पोद्दार) के प्रति अनन्य श्रद्धा-भावना रखते थे। उन्होंने कई बार कहा था कि 'श्रीभाईजी तथा 'कल्याण' ने गोरक्षाकी भावना पैदा करनेमें अविस्मरणीय योगदान किया है।'

लालाजी जीवनभर गोरक्षा तथा गोसेवाका प्रचार करते रहे। उनके अथक प्रयासोंसे कई राज्योंमें 'गोहत्या-बंदी कानून' भी बने।

लाला लाजपतरायजीकी गोसेवा

[श्रीफतहचंदजी शर्मा 'आराधक']

पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय आज हमारे बीचमें नहीं हैं, किंतु जिस दिन २८ जनवरीकी पुण्य तिथि आती है, तब हमारे सामने एक ऐसी विराट् आत्माका चित्र सामने आ जाता है, जिसने सोते हुए पंजाब तथा देशको अपने त्यागसे जगा दिया था। वे केवल यहीं नहीं बल्कि सुदूर अमेरिकामें भी बैठकर भारतीय चिन्तन करते रहे। अमेरिकाके प्रवासमें उन्होंने दुःखी भारतकी जो करुणा-पूर्ण कहानी लिखी थी वह भारतकी एक मूल्यवान् सम्पत्ति है।

लालाजी केवल साधारण व्यक्ति नहीं थे वरन् वे देशकी उन महान शक्तियोंमेंसे एक हैं जिन्होंने देशको आगे बढ़ाने, दासतासे मुक्ति दिलाने और देशकी आवाज सारे देशमें गुँजानेके लिये शंखनाद किया था और उनका अन्त भी 'साइमन कमीशन लौट जाओ' के नारे लगाते हुए हुआ। इस प्रकार लालाजीका सारा जीवन देशपर मर-मिटनेकी चाह रखनेवाला इतिहास है। जब उनके सिरपर 'साइमन कमीशन' का विरोध करते समय पुलिसकी लाठी लगी, तब

उनके मुँहसे निकला था कि 'मेरे सिरपर पड़ी-पड़ी एक-एक लाठी ब्रिटिश साम्राज्यके कफनमें कीलका काम देगी।' लालाजीकी भविष्य-वाणी सत्य हुई। देश स्वतन्त्र हुआ, उनके बलिदानका फल देशके पुत्रोंने भोगा, किंतु लालाजी केवल देशको सूखी हड्डियोंका ढेर ही नहीं देखना चाहते थे, उनका यह दृष्टिकोण था कि बिना हृष्ट-पुष्ट हुए देशकी रक्षा नहीं हो सकती। इसीलिये उन्होंने भारतवासियोंको अपना जीवन शुद्ध दूध-घीपर बितानेके लिये जोर दिया था। वे बड़े चिन्तित थे कि हमारे देशमें अंग्रेजशाही जो भीषण गोवध करा रही है, उससे भय है कि देशकी भावी पीढ़ी किस प्रकार जीवन प्राप्त कर सकेगी। एक प्रकारसे लालाजीकी देशभक्ति आजके नेताओंको यह चेतावनी दे रही है कि डिब्बोंके अंदर बंद हुआ दूध पीनेसे देशके लोग जिंदा नहीं रह सकते, इसलिये इस देशमें सरकारको गाय-बैलोंके क़तल रोकने, उनके संरक्षण और संवर्धन करनेका काम करना चाहिये।

लालाजी केवल कहनेवाले ही नहीं थे, करके दिखलानेवाले भी थे। दिल्लीके शहीदी हालमें सन् १९२१ में एकता स्थापित करनेके लिये जो हिन्दू-मुसलमानोंका संयुक्त गोरक्षा-सम्मेलन हुआ था, उसमें लालाजीका सबसे बड़ा हाथ था। वे स्वयं उस सम्मेलनके अध्यक्ष थे और उन्होंने जोरदार शब्दोंमें इस बातको कहा था कि 'अंग्रेजी-राज्यमें गोवध होता है और गाय सबको घी-दूध देकर बलवान बनाती है, इसलिये हम सब लोगोंको जो अपने देशको स्वतन्त्र करानेके लिये तैयार हैं और अंग्रेजोंको यहाँसे खदेड़ना चाहते हैं उन्हें अंग्रेजोंसे असहयोग करना चाहिये।' इस दृष्टिसे यह विचारणीय प्रश्न है कि लालाजी यदि आज जीवित होते तब वर्तमान सरकारके प्रति उनका क्या रुख होता? इसका निर्णय पाठकोंको स्वयं विचारना चाहिये।

गोभक्त देवसिंह हाड़ा

[श्रीकान्तिचन्द्रजी भारद्वाज]

राजस्थानमें हाड़ा राज्यके संस्थापक देवसिंह हाड़ाकी २२वीं पीढ़ीमें राजा रघुवीरसिंह हाड़ा गद्दीपर बैठे। इनका शासनकाल ईसवी सन् १८८१ से १९२७ रहा। राजा रघुवीरसिंह हाड़ा न्यायप्रिय कुशल प्रशासक थे। धर्म तथा सत्यमें निष्ठा रखनेवाले थे। राजा रघुवीरसिंह महान् गोभक्त थे। वे जंगलमें जाकर गायोंको चराते थे। स्वयं अपने हाथों गोसेवा करते थे। उनके राज्यमें प्रतिवर्ष एक दिन बड़े ही हर्ष-उल्लासके साथ गो-महोत्सव मनाया जाता था। यह उत्सव वनमें होता था तथा सभी गायोंको वनमें ले जाकर चराया जाता था और गायोंकी पूजा होती थी। राजाज्ञा थी कि 'उस दिन कोई भी नगरमें धुआँ नहीं करेगा तथा घरमें भोजन भी नहीं करेगा। सभीको गोचारण-महोत्सवमें उपस्थित होना अनिवार्य है।'

राजाज्ञाके अनुसार सभी नागरिक जंगलमें जाकर अपने-अपने समूहमें भोजन बनाते थे। गरीबोंके लिये और राजपरिवारके सदस्योंके लिये भोजन-व्यवस्था राजाकी ओरसे होती थी। राजाजी जंगलमें लाठी लेकर गायोंको चराते थे, दोपहरमें महारानी अपने सिरपर जुवारकी रोटी, छाछ, सब्जी, गुड़ आदि लेकर राजाके पास पहुँचती, राजा-रानी इन्द्र देवताकी पूजा करते तथा साथ बैठकर छाछ-रोटी खाते। ऐसा विश्वास था कि इस गोचारण तथा वन-महोत्सव एवं इन्द्रपूजनसे अनावृष्टि दूर होकर निश्चित रूपसे भारी वर्षा होती है। इस उत्सवमें रुद्राभिषेक करवाया जाता तथा ब्राह्मण-भोजन और गायोंको घास खिलाया जाता था और उनकी पूजा होती थी।

हाड़ा राज्यका यह वन-महोत्सव व्रजमें नन्दराय आदि गोपोंद्वारा वृष्टिके लिये की गयी इन्द्रपूजा तथा पुनः भगवान् श्रीकृष्णद्वारा किये गये गोवर्धन-पूजन, गोपूजन तथा गोमहोत्सवका ही प्रतिरूप जान पड़ता है।

विभिन्न संस्कृतियोंमें गो-आराधन और गोसेवा

'व्रज'में गो-सेवा

[श्रीअनुरागजी कपिध्वज]

ब्रह्ममयी व्रजभूमिमें भगवान् श्रीकृष्णकी लीलाएँ सदा होती रहती हैं। कृष्णकी प्रिय वस्तु, जिनके साथ वे क्रीडा करते हैं मुख्यत: तीन हैं—गौएँ, गोपियाँ और ग्वाल-बाल। 'व्रज' में भगवान् कृष्ण अपने साथी ग्वाल-बालोंके साथ गो-सेवा कर गोपियोंको आनन्दित करते रहते हैं। गायें श्रीकृष्णकी प्रिय निधि हैं। गो-सेवाकी प्रमुखताके कारण ही उनका लोक 'गोलोक' कहलाता है। गोलोककी लीला प्रभुकी वास्तविक लीला है, जिसमें गौएँ, गोपियाँ एवं ग्वाल-बाल सब सच्चिदानन्दरूप होकर विहार करते हैं।

मानवकी तो बात ही क्या? देवराजकी समझमें भी भगवान् कृष्णकी व्यावहारिक एवं वास्तविक लीला नहीं आ पाती। वे भी जब गो-सेवासे वञ्चित करनेके लिये ग्वाल-बालोंको भ्रमित करनेका प्रयस करते हैं तो उन्हें अपनी पराजय स्वीकार करनी पड़ती है। इसी प्रकार गोचारणकी वास्तविक और व्यावहारिक लीलाको समझनेका प्रयास जब ब्रह्माजीके द्वारा होता है, तब भगवान् कृष्ण अपनी वास्तविक लीलाका रहस्य उनके सामने प्रकट कर उन्हें आश्चर्यचकित कर देते हैं। ब्रह्माजी गौएँ और ग्वाल-बालोंको कृष्णरूपमें देखकर व्रजभूमिमें जन्म लेनेकी कामना करते हैं, जिससे कि गौएँ और उनकी सेवा करनेवाले ग्वाल-बालोंकी चरण-रज उन्हें मिल सके। भगवान् कृष्णकी गो-सेवा मनको मोहित कर उनकी व्यावहारिक लीलाको समझनेमें सहायक होती है।

भगवान् कृष्ण स्वयं अपनेको गो-रूपमें परिणत कर अपनी ही सेवा अपने गोरूपमें करते हैं। जिस तरह बालक अपनी ही परछाईंसे क्रीडा करता है, उसी तरह स्वरूप-स्थित भगवान् कृष्ण स्वयंमें ही निर्लिप्त-भावसे रमण करते हैं। गो-महिमाकी वास्तविकताका प्रत्यक्ष दर्शन हमें उस समय होता है, जब पूतना-मोक्षके बाद गोप-कन्याएँ गायकी पूँछसे कृष्णजीका मार्जन करती हैं। भगवान् गौ एवं विप्रकी-रक्षाके हेतु अवतार धारण करते हैं। भगवान्के अवतरणकी क्रिया तीन प्रकारके भक्तोंके द्वारा पूर्ण होती है—एक वे भक्त हैं, जिनका कृष्णसे कभी वियोग नहीं होता, वे अन्तरङ्ग पार्षद कहे जाते हैं तथा जिनका गोचारण-लीलाको समझने और पूर्ण करनेमें विशेष सहयोग रहता है। दूसरे वे भक्त हैं जो प्रभुके साथ सदैव रहने एवं उनकी गोचारण-लीलाके दर्शनके इच्छुक हैं। भगवान् कृष्ण जब गौओंको लेकर गोवर्धन पर्वतपर जाते हैं, विशेष नामोंके द्वारा उन्हें पुकारते हैं तथा वे चरना छोड़कर उनके पास आती हैं—इस लीलाको देख ये भक्त प्रभुकी अन्तरङ्ग-लीलामें प्रवेश पानेके लिये लालायित होते हैं। तीसरे वे भक्त हैं जिनकी प्रार्थनासे भगवान् पृथिवीपर अवतार लेते हैं। वे गौके प्रत्येक अङ्ग और उसके रोम-रोममें देवताओंका निवास होनेके कारण गो-सेवाके रूपमें भगवान्की भक्ति करते हैं।

'गो' शब्दका एक अर्थ इन्द्रिय भी होता है। कृष्णका सच्चा सेवक जब भगवान्के नामका अधिक-से-अधिक जप करता है, तब इस जपका प्रभाव भक्तके मानस-पटलपर स्थायी और सुदृढ़ हो जाता है। ऐसी स्थितिमें भक्त जाने-अनजाने 'कृष्ण-कृष्ण' पुकारने लगता है। उसके मनका स्वरूप सत्त्व हो जाता है। समस्त इन्द्रियाँ मनके अधीन हैं, अत: मनके सत्त्व-रूपमें परिणत होते ही इन्द्रियाँ भगवद्रूप हो जाती हैं। वे विषयोंको भगवत्प्रसाद मानकर ग्रहण करती है। वह समझता है कि तीनों लोकोंमें यथार्थ आत्म-दर्शन इतना ही है कि 'यह सब जगत् परमात्मा ही है।' यह निश्चय कर भक्त पूर्णताको प्राप्त हो जाता है। भक्त अपने-आप निर्विकल्प हो जाता है; क्योंकि मनको प्रभुके

रूपमें मानना ही निर्विकल्पता है। भक्त सदा-सर्वदा सब नाम-रूपोंमें कृष्णको देखनेका अभ्यासी हो जाता है। उसके अन्त:करणमें छाये ब्रह्मप्रकाशके अन्तर्गत कृष्ण प्रकट हो उसे आनन्दित करने लगते हैं। सर्वत्र सब समय उसकी वृत्तियाँ 'गोपी' बनकर और उनके भाव 'ग्वाल-बाल' बनकर शुद्ध हृदय-पटलपर कृष्ण-सेवामें तत्पर हो जाते हैं। सर्वात्मभावकी भावनासे प्रकृतिके प्रत्येक क्रिया-कलापमें उसे कृष्णके दर्शन होते रहते हैं।

प्रभुकी वास्तविक लीलाके बिना व्यावहारिक लीला नहीं हो सकती और व्यावहारिक लीलाका वास्तविक लीलामें कोई स्थान नहीं है। अनेक जन्मोंकी साधनाके पश्चात् साधकके हृदयाकाशमें कृष्ण-तत्त्वपर पड़ा मायाका पर्दा जब दूर होता है, तब वह समझता है कि गौओंको चराकर वनसे जब श्रीकृष्ण लौटते हैं, उस समय व्रजकी गोपियाँ गो-रजसे रँगे हुए कृष्णके मुखको देखकर किस सुखका अनुभव करती हैं। भागवतधर्मके पालनके बाद 'कृष्ण-कृष्ण' की रट लगाकर अपने हृदयमें प्रसरित ब्रह्मप्रकाशमें जब साधक कृष्णके अतीव सुकोमल, सौन्दर्यमण्डित श्यामल चरणोंको देख उन्हें हृदयसे लगानेके लिये दौड़ता है और लाल-लाल तलवोंको जब नेत्रोंसे लगा कृष्णको अपनी ओर मुस्कुराते हुए देखता है, तब व्रजमें गो-सेवाकी वास्तविकता समझमें आती है।

बुंदेलखंडका 'गोचारण-महोत्सव'

[आचार्य श्रीबलरामजी शास्त्री]

बुंदेलखंड वीरोंकी भूमि है। वीरता-प्रदर्शनके अतिरिक्त बुंदेलोंकी अनेकों विशेषताएँ हैं। कार्तिकके महीनेमें बुंदेलखंडमें अनेकों प्रकारके सांस्कृतिक, धार्मिक और पारम्परिक उत्सव मनाये जाते हैं। बुंदेलखंडीय उत्सव बहुत प्राचीन कालसे अपने परम्परागत रूपमें उसी प्रकार मनाये जाते आ रहे हैं जैसे भगवान् श्रीकृष्णके समयमें मनाये जाते थे। स्थानीय लोगोंका विश्वास है कि ये उत्सव भगवान् श्रीकृष्णके समयसे ही मनाये जा रहे हैं और आज भी उसी हर्ष, उल्लासके साथ मनाये जाते हैं। बुंदेलखंडका 'गोचारण-महोत्सव' भगवान् श्रीकृष्णद्वारा गोचारण-परम्पराका प्रतिरूप ही है। इसी प्रकार यहाँका 'दीपावली-महोत्सव' भी कंसादि दुष्टोंके विरुद्ध संघर्ष करनेके नामपर गोकुलके ग्वाल-बालोंको संघटित करनेके लिये बालक कृष्णके द्वारा संचालित परम्पराका रूप है। भगवान् श्रीकृष्णकी गोवत्स-चारणलीला तो प्रसिद्ध ही है। भगवान् जब ग्वाल-बालोंके साथ वत्सोंको चराकर लाते थे तो गौएँ अपने वत्सोंसे मिलने दौड़ पड़ती थीं। ऐसी ही कुछ लीलाएँ बुंदेलखंडमें भी प्रचलित हैं। यहाँ संक्षेपमें कुछ उत्सवोंका परिचय दिया जा रहा है।

बुंदेलखंडीय गोचारण-महोत्सव

बुंदेलखंडका 'गोचारण-महोत्सव' कार्तिक मासके शुक्ल पक्षकी देवोत्थान एकादशीको मनाया जाता है। 'गोचारण-उत्सव' मनानेकी तैयारी पहले दिनसे ही होने लगती है। शुक्ल पक्ष प्रारम्भ होते ही गोचारक प्रात: अपने-अपने हरे-भरे खेतोंमें या चरागाहोंमें गायोंको ले जाकर चराते हैं। कार्तिकके शुक्ल पक्षके गोचारणमें कोई चरवाहा लाठी या पैनेसे किसी गायको नहीं हाँकता। गायें अगर समूहसे बिछुड़कर किसी भी कृषकके हरे-भरे खेतोंमें चली जाती हैं या चरने लगती हैं तो वह किसान या कोई भी दर्शक जाकर बिना किसी लाठी-डंडेके सहारे ही गायको खेतसे दूर कर देता है या कर सकता है। चोट नहीं पहुँचा सकता।

देवोत्थान-एकादशीके दिन गोचारक निर्जल-व्रत रहता है। प्रात: स्नान करके नया वस्त्र धारण करता है और एक हाथमें मोरपंख तथा एक हाथमें बासुरी लेकर गोशालामें जाता है। गायोंकी पूजा करता है और सभी गाँवके गोचारक एक साथ गायोंको छोड़कर उनके पीछे-पीछे चलते हैं। सजी-धजी गायोंका बड़ा भारी जुलूस निकल पड़ता है। गोचारक उस दिन निर्जल-व्रत रहकर मौनव्रत भी करता है। सभी गोचारक मौन रहकर आपसमें संकेतसे ही बातचीत करते हैं। मोरपंखसे ही गायोंको हाँकते हैं। समस्त कृषक एकादशीके दिनको गायोंके चरनेके लिये अपने-

अपने हरे-भरे खेतोंका कुछ भाग उसी दिनके लिये छोड़े रहते हैं और मौनव्रती गोचारक मोरपंखोंसे गायोंको हाँकते हुए उसी सुरक्षित खेतमें ले जाते हैं। गायें वहाँ पहुँचकर सुखपूर्वक चरने लगती हैं। सुरक्षित खेततक पहुँचनेके पूर्व यदि गायें किसी भी किसानके हरे-भरे खेतमें चरने लगेंगी तो उस खेतका स्वामी कुछ भी नहीं बोल सकता। मौनव्रती गोचारक मोरपंखेके सहारे गोमाताको हाँकते हुए अपने पूर्व निर्धारित खेतपर ले जाता है। ऐसी परम्परा गाँवोंके अतिरिक्त उपनगरोंमें भी प्रचलित है। इस गोचारण-महोत्सवको देखकर भगवान् श्रीकृष्णकी गोचारण-लीलाका स्मरण हो उठता है। श्रीकृष्णचन्द्र गायोंको आगे करके स्वयं मध्यमें हो जाते थे। उनके पीछे गायोंका दल हो जाता था। वे लोग खेलते-कूदते और वंशी बजाते चलते थे। श्रीमद्भागवतमें यही प्रसंग निम्न प्रकारसे आया है—

तन्माधवो वेणुमुदीरयन् वृतो
गोपैर्गृणद्भिः स्वयशो बलान्वितः।
पशून् पुरस्कृत्य पशव्यमाविशद्
विहर्तुकामः कुसुमाकरं वनम्॥

(श्रीमद्भा० १०। १५। २)

'यह वन गौओंके लिये हरी-हरी घाससे युक्त एवं रंग-बिरंगे पुष्पोंकी खान हो रहा था। आगे-आगे गौएँ, उनके पीछे-पीछे बाँसुरी बजाते हुए श्यामसुन्दर, तदनन्तर बलराम और फिर श्रीकृष्णके यशका गान करते हुए ग्वाल-बाल—इस प्रकार विहार करनेके लिये उन्होंने उस वनमें प्रवेश किया।'

बुंदेलखंडीय गोचारक हाथमें वंशी अवश्य रखते हैं, किंतु सभी गोचारक बाँसुरी नहीं बजा पाते। श्रीकृष्णके मस्तकपर मोरपंख रहता था। बुंदेलखंडके गोचारक अपने हाथोंमें ही मोरपंख रखते हैं। उससे गायोंको झाड़ते रहते है। मौनव्रती होनेके कारण गोचारक बोलकर किसी गायको अन्य किसानोंके खेतोंमें चरनेसे रोक नहीं पाता।

इस प्रकार हर्षोल्लासपूर्वक दिनभर गोचारक गाय चराते हैं। यदि किसी गोचारकको प्यास लग जाती है और प्यास सहन नहीं हो पाती तो वह गोचारक हाथसे या किसी पात्रसे जलपान नहीं कर सकता। प्यासा गोचारक जमीनपर लेट जाता है और जैसे गायें पानी पीती हैं, वैसे ही तालाबमें मुँहसे ही पानी पीता है। व्रती गोचारक यदि संयोगसे बोल देता है, अर्थात् उसका मौन-भंग हो जाता है तो उसे प्रायश्चित्तमें दूसरे (आगामी) वर्षमें पूर्वविधिसे गोचारण करना पड़ता है। कितनी अटूट श्रद्धा रहती है। कितना अटूट विश्वास सँजोये रहते हैं ये गोचारक।

जब गायें चरने लगती हैं तब गोचारक एक स्थानपर बैठ जाते हैं। गायें निर्बाधरूपसे हरी-भरी फसलें चरने लगती हैं। गोचारक जब यह समझ लेता है कि गायोंको प्यास लग गयी होगी तब प्यासी गायोंको मोरपंखके सहारे किसी सरोवरके पास ले जाते हैं, वहाँ प्यासी गायें पानी पीती हैं। पानी पीनेके बाद गायें कुछ विश्राम भी करती हैं। गोचारक उस समय गायोंके आस-पास ही बैठ जाते हैं। विश्रामके बाद गायें पुनः चरने लगती हैं और सांयकाल सूर्यास्तसे पूर्व ही अपने आवासकी ओर चल देती हैं। गोचारक गायोंके पीछे-पीछे एक हाथमें वंशी और दूसरे हाथमें मोरपंख लिये चलते हैं।

गायों और गोचारकोंका स्वागत

गायोंके गोशालामें पहुँचनेके पूर्व गाँवके सभी लोग—स्त्री-पुरुष, बच्चे एक नियत स्थल या मुख्य मार्गपर एकत्रित रहते हैं। स्त्रियाँ हाथोंमें थालीमें सजायी पूजन-सामग्रीके साथ आगे बढ़ती हैं। गायोंकी आरती उतारी जाती है। मालाएँ पहनायी जाती हैं और इसके बाद सूखे मेवेका प्रसाद वितरित किया जाता है। प्रसाद ग्रहण करके गोचारक अपना मौन-भंग कर सकता है। मौनव्रत-भंग करके गोचारक अपने बड़े-बूढ़ोंका पाँव छूकर अभिवादन करते हैं। गोचारकोंका यह गोचारण-व्रत बारह वर्षोंतक चलता है। रात्रिमें गोचारक व्यक्तिगत या सामूहिक रूपमें गोदुग्धसे बनी खीर बड़े-बूढ़ों या ब्राह्मणोंको खिलाते हैं। सायंकाल वापस होनेपर गायोंके स्वामी अपनी-अपनी गायोंका नाम ले-लेकर पुकारते हैं। गायें तुरंत ही उनके पास आ जाती हैं और तब वे अपनी-अपनी गोशालाओंमें ले जाकर उन्हें सुरक्षित कर देते हैं। जिनके घर गायें नहीं रहतीं, ऐसे लोग दूसरोंकी गायें ही चराते हैं। अपनी-अपनी मनौती पूरा करते हैं। यहाँके लोगोंका विश्वास है कि इस प्रकारकी गोसेवा

तथा गोचारण-व्रतसे सभी अभिलषित पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं और जीवनमें सुख-शान्ति रहती है। गोचारण-समाप्तिके समय सायंकाल वापसीके बाद गोचारक और नर्तक मिलकर गाते हैं, नाचते हैं। बाजा भी बजता रहता है। कुछ गीतोंकी पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

कातिक मास धरम के मास,
दिया जरै सारी रात।
कैऽजरै तुलसी के घड़ा,
कैऽपण्डन की चौपाल॥
चलो सखी! वहाँ चलैं,
जहाँ बसैं 'बृजराज'।
दधि बेचैं दरशन करैं,
एक पन्थ दो काज॥

बृन्दाबन वसिबो बुरो,
होन लगी अनरीत।
तनिक दही के कारनै,
बहियाँ गहें अहीर॥

इस लोकगीतमें भगवान् श्रीकृष्णकी रास-लीलाका कुछ भाव स्पष्ट प्रतीत होता है। *'एक पन्थ दो काज'* में दही बेचना और भगवान् कृष्णके दर्शनकी बात भी स्पष्ट होती है। एक दूसरा पद्य भी गाया जाता है, इसमें गायोंके गोशालामें जानेका संकेत है—

गइयाँ (गायें) गईं गंगवारे (गोशाला)
भैंसें गईं बड़ी दूर।
अहीर के बालक ने लाठी मारी,
झरै कमल के फूल॥

प्राचीन महाराष्ट्रकी गो-सेवा

[डॉ० श्रीभीमाशंकरजी देशपांडे, एम० ए०, पी-एच०डी०, एल-एल० बी०]

महाराष्ट्रके प्राचीन कालका इतिहास गो-सेवाके विषयमें महत्त्वपूर्ण है। संत नामदेव, ज्ञानेश्वर, संत एकनाथजी, रामदासजी तथा अन्य संतोंने गोसेवाका कार्य महत्त्वपूर्ण माना है। भागवतधर्ममें इस सेवाका विशेष स्थान है। संत एकनाथजी अपने भावार्थ रामायणमें कहते हैं—

गाई ब्राह्मण करावया धातु।
स्वप्नी नुपजे मनोरथु॥
त्यावरी उचली शरउ हातु।
ऐसा सूर्य वंशात शूर नाही॥८२॥
गाई ब्राह्मणापुढे।
आमुचे शौर्य बापुडे॥

गौ-ब्राह्मणका घात करनेका साहस हमारे सूर्यवंशमें किसीने नहीं किया। गौ और ब्राह्मणके सम्मुख हमारा शौर्य नष्ट प्रतीत होता है।

भगवान् परशुरामसे भेंट होते ही प्रभु रामचन्द्रका यह वचन नाथजी सुनाते हैं। वे और भी कहते हैं—

जो राजा गो-ब्राह्मणकी सहायता करता है, उसका गुणगान स्वर्गमें भी होता है।

समर्थ रामदासजीके मार्गदर्शनसे ही छत्रपति शिवाजी महाराजने हिंदूराज्यकी स्थापना की। यावनी आक्रमण-कालमें देशमें धर्मभावना जाग्रत् की। गुरुकी कृपासे ही उन्हें 'गोब्राह्मण-प्रतिपालक' की उपाधि प्राप्त हुई। शिवाजी महाराजको लिखे हुए पत्रमें रामदासजी कहते हैं—

सकल तीर्थे मोडिली।
ब्राह्मण स्थाने भ्रष्ट झाली।
सकल पृथ्वि आदोळली।
धर्म गेला॥७॥
देवधर्म गो ब्राह्मण।
करावयासि संरक्षण॥
हृदयस्थ झाला नारायण।
प्रेरणा केली॥८॥

सभी तीर्थोंका नाश हुआ। ब्राह्मण-स्थानोंको नष्ट किया गया। सम्पूर्ण पृथ्वी अस्थिर बन गयी और धर्मका विनाश हुआ। देव, धर्म, और गौ-ब्राह्मणकी रक्षा करने-हेतु हृदयमें स्वयं नारायण ही प्रकट हुए हैं। उनकी ही प्रेरणा हुई। इस धर्मस्थापना-कार्यको तुम्हें सँभालना है।

रामदास आदि संतोंके गौ माताके लिये जीवनदान देने तथा भक्तोंपर कृपा करनेके अनेक प्रसंग प्राप्त होते हैं। समर्थजीके मठ दक्षिण प्रदेशोंमें यवन-व्याप्त क्षेत्रोंमें ही अकसर पाये जाते हैं। धर्म-प्रसारमें उनकी वह योजना थी। इस विभागके अपचंद मठमें दो सौ धेनु-सम्पदा थी। वहाँ आनेवाले भक्तोंको छाँछ और जवारी भूनकर बनाये आटेका प्रसाद मिलता था। वे एक कुशल संघटक संत थे। उनके आदेशसे बने हुए श्रीशिवा छत्रपतिके हिन्दूराज्य आनन्दभवनमें गोमाताका आदर था। शिव छत्रपतिजीके राज्यकी यह अवस्था कवि भूषणकी रचना श्रीशिवराजभूषणसे भी ज्ञात होती है। दक्षिण भारका यह भूप्रदेश सनातन कालसे ही गो-सेवामें योगदान देता आया है।

'कुमाऊँ' की गोपालन-परम्परा

[डॉ० श्रीबसन्तवल्लभजी भट्ट, एम० ए०, पी-एच० डी०]

हिमालय प्रदेशका एक पर्वतीय भाग-विशेष कूर्माचल अथवा कुमाऊँके नामसे जाना जाता है। इसीका पौराणिक नाम मानस-खण्ड किंवा उत्तर कुरुदेश भी है। वर्तमानमें कुमाऊँसे अल्मोड़ा, पिथौरागढ़ तथा नैनीताल—इन तीन जनपदोंका बोध होता है। अपनी प्राकृतिक सौन्दर्य-रचनाके लिये यह विख्यात है। हरे-भरे वन-प्रदेशों तथा सुरम्य हरी-भरी घाटियोंके लिये यह क्षेत्र अत्यन्त प्रसिद्ध है। यहाँका प्राकृतिक जीवन अत्यन्त सौम्य, शान्त एवं सादगीपूर्ण है। प्रकृतिका अत्यन्त सांनिध्य होनेसे यहाँके प्राणिजगत्-जीवजगत्में भी अत्यन्त सहजता एवं स्वाभाविकता है। प्रस्तुतमें तो केवल गायकी बात करनी है। अस्तु, हरे-भरे जंगल तथा विस्तृत घास-भरे चरागाह यहाँके गोवंशके लिये प्रकृति-प्रदत्त वरदान है। पहाड़ोंकी तलहटीमें बसे यहाँके ग्राम्य-जीवनका मुख्य आधार गौ ही है। जंगलके बाहुल्यसे हरा चारा वर्षभर विद्यमान रहता है। प्रातः ही दूध दुहनेके बाद गोष्ठसे निकालकर गौओंको कुछ दूर जंगलकी ओर चरने छोड़ दिया जाता है। और शामको स्वतः गायें चरकर लौट आती हैं। प्रत्येक घरसे निकली हुई पृथक्-पृथक् गौएँ आगे चलकर एक विस्तृत समूहके रूपमें हो जाती हैं और समूहके रूपमें ही चरनेके लिये जाती हैं।

प्रत्येक गाँवके आस-पास विस्तृत गोचर-भूमि रहती है, जहाँ गौएँ स्वच्छन्द-रूपसे हरी-हरी घास चरती हैं और प्राकृतिक झरनों तथा नदी-नालोंका जल पीती हैं। शामको लौटनेपर फिर उन्हें चारेकी विशेष अपेक्षा नहीं रहती। केवल थोड़ा-सा चारा दे दिया जाता है। वर्षमें प्रायः ९-१० महीने हरा चारा उपलब्ध रहता है, केवल गर्मीके कुछ दिनोंके लिये सूखे चारेका प्रबन्ध रहता है। खेतीसे प्राप्त धानके पुआल (फसल लेनेके बाद बचा पौधा)-को सुखाकर सुरक्षित रख लिया जाता है, यह चारेका मुख्य साधन है। मैदानी भागोंकी तरह यहाँ चारा काटकर नहीं खिलाया जाता, अपितु समूचा ही गायके सामने रख दिया जाता है। इसके अतिरिक्त यहाँके पहाड़ोंमें एक 'गाज्यो' नामकी घास स्वतः उगती है, जो लगभग ३-४ फुट लंबी होती है। जब यह घास लगभग डेढ़ फुटकी होती है तो 'दाब्' कहलाती है। यह हरे चारेके रूपमें इस क्षेत्रमें प्रचुरतासे प्राप्त होती है जो गायोंको अत्यन्त ही प्रिय है। गायको जंगलमें इधर-उधर विचरण करते हुए 'दाब्'का चरना अत्यन्त ही भाता है। लंबी होनेपर इसी घासको काटकर सुखाकर सुरक्षित कर लिया जाता है और गर्मीके दिनोंमें गौओंको खानेके लिये दिया जाता है। इस घासको अपने-अपने घरोंके आस-पास सूखी जमीनपर अथवा आस-पासके पेड़ोंपर गुम्बदके रूपमें एकत्रकर एक विशेष तरीकेसे सुरक्षित किया जाता है। इस ढेरको यहाँकी भाषामें 'लुट्' कहा जाता है। आज भी इन्हें वहाँ देखा जा सकता है। इसी प्रकार विस्तृत वन-प्रदेशोंमें बाँझ नामक एक ईंधनकी लकड़ी यहाँ विपुलतासे प्राप्त होती है। यह एक सघन पत्तोंवाला वृक्ष है, जो शीत प्रदेशका प्रमुख वृक्ष है। इसकी कोमल-कोमल पत्तियाँ गायोंको बहुत ही प्रिय हैं। तथा दुग्धवर्धक भी हैं, ग्रामीण स्त्रियाँ इन्हें जंगलसे काटकर लाती हैं और गायोंको खिलाती हैं। ये कोमल पत्ते 'पालौ'

(पल्लव) कहलाते हैं। इसी प्रकार 'भेकुल' नामक एक पेड़ भी यहाँ बहुतायतसे होता है। उसकी पत्तियाँ भी गायोंका मुख्य आहार है, यह भी दुग्धवर्धक है।

यहाँ सिसुण या 'सिन्' नामक एक काँटेदार पत्तियोंवाला छोटा पौधा होता है, जो कदाचित् छू जाय तो पूरे शरीरमें झनझनाहट पैदा कर देता है, इसीलिये यहाँकी माताएँ उनके बच्चे जब शैतानी करते हैं तो सिसुण घास छुआनेका भय दिखलाती हैं, बच्चे डरकर शैतानी छोड़ देते हैं। यह सिसुण बड़ा ही दुग्धवर्धक है। जब यह मुलायम रहता है तो इसे किसी कपड़े या लकड़ीके सहारे तोड़कर एकत्र कर लिया जाता है और ओखलीमें कूटकर किसी बड़े बर्तनमें पानी छोड़कर पका लिया जाता है। उसमें कुछ आटा तथा हलका नमक छोड़ दिया जाता है। वह गाढ़ा-गाढ़ा पेय पदार्थ स्थानीय भाषामें 'दौ' कहलाता है जो गौओंके लिये बड़ा ही प्रिय और पुष्टिकारक भी होता है। इससे दूध भी बढ़ता है।

इस प्रकार यहाँ प्राकृतिक चारा पर्याप्त मात्रामें होता है, अतः दाना, खली-भूसा आदि देनेकी कोई परम्परा नहीं है और न उपलब्ध चारेको काटकर ही खिलाया जाता है, जैसा उत्पन्न होता है वैसा ही गाय-बैलोंके सामने सायंकाल दूध दुहनेके पश्चात् डाल दिया जाता है। गाय यथेच्छ उसे ग्रहण करती है और फिर फैलकर वही गायका गुदगुदा बिछौना भी हो जाता है। बरसातके दिनोंमें जमीनकी नमीसे बचानेके लिये 'रणेल' नामक एक हरे पौधे-विशेषकी पत्तियोंको गोठ (गोष्ठ) में बिछा दिया जाता है और प्रातः-काल गायोंके चरने जानेके पश्चात् एकत्र कर लिया जाता है। गोमूत्र-गोबरके संयोगसे वह बहुत अच्छी खादका रूप धारण कर लेता है। प्रातः नित्य गोष्ठकी सफाई की जाती है और उसे एक स्थानपर एकत्र कर लिया जाता है, वही खाद बन जाती है। बादमें उसे खेतोंमें छोड़ा जाता है।

गाभिन गाय तथा गायके छोटे बछड़े घरमें रहते हैं। शेष गाय-बैल प्रायः नित्य ही चरने जंगलमें जाते हैं। प्रत्येक ग्रामके पास अपनी गोचरभूमि है, जहाँ वर्षभर प्रायः हरी-हरी घास उपलब्ध रहती है। ब्यायी हुई गायका विशेष ख्याल रखा जाता है। प्रायः १० दिनतक उसका दूध आशौचजन्य मानकर प्रयोगमें नहीं लिया जाता। कोई-कोई लोग २२ दिनतक प्रयोगमें नहीं लेते। बछड़ेसे बचे उस दूधसे घी बनाकर नैवेद्य बनाया जाता है फिर उसी नैवेद्यसे भगवान्‌का भोग लगाया जाता है। तब फिर ग्रहण करते हैं। ग्यारहवें दिन बछड़े-बछियोंका नामकरण-संस्कार करनेकी परम्परा है। प्रायः रंगके आधारपर नाम रखा जाता है, जैसे काले रंगकी गाय 'काली' लाल रंगकी गाय 'रतुली', धूमर रंगकी गाय 'धुमरि'। इसी प्रकार अत्यन्त सीधी एवं दुधार गायको लछिमी (लक्ष्मी) नाम दिया जाता है। बैलोंको भी 'कल्वा', 'लहार' आदि नाम दिये जाते हैं। नाम सुनते-सुनते गाय-बैल भी अभ्यस्त हो जाते हैं और पुकारनेपर पास चले आते हैं।

गायोंके प्रति यहाँ अत्यन्त ही आदर एवं पूज्य-भाव है। गोग्रासकी सुदीर्घ परम्परा है। प्रायः प्रत्येक दिन घरकी स्त्रियाँ प्रातः नहा-धोकर गेहूँ अथवा जौके आटेके चार ग्रास बनाकर रोली-चन्दन तथा जलका लोटा लेकर गोष्ठमें पहुँच जाती हैं। गायके चरण पखारती हैं, मुँह धोती हैं, टीका लगाती हैं और गोग्रास खिलाकर परिक्रमा करके घरमें आती हैं और अपना गृहकार्य प्रारम्भ करती हैं। सद्गृहिणियोंके दैनिक जीवनका प्रारम्भ गोग्राससे ही होता है। विशेष तिथि-उत्सवों एवं पर्वोपर तो और भी उत्साह एवं श्रद्धासे गाय-बैलोंकी पूजा तथा शृंगार किया जाता है। श्राद्धके दिन पितरोंको परोसा गया अन्न गोमाताको ही दिया जाता है।

जंगलोंमें पानीकी नमीवाली जगहोंमें जोंक नामक एक काला कीड़ा यहाँ बहुत मिलता है, जिसे यहाँके लोग 'जुग्' कहते हैं। गायें जब चरनेके लिये मुँह नीचे करती हैं तो यह उनके नाकमें चला जाता है और धीरे-धीरे खून चूसता रहता है। गायें दुर्बल हो जाती हैं। इससे गायोंको बड़ा कष्ट होता है। बादमें गायें जब घरमें पानी पीनेके लिये बर्तनमें मुँह डालती हैं तो यह भी नाकसे थोड़ा बाहर निकलता है। इसकी पकड़ बड़ी मजबूत होती है। उस समय कोई व्यक्ति कपड़ेके सहारे इसे खींच लेता है या किसी तरह नाकमें नमक इत्यादि छोड़कर इसे छुड़ाया जाता है। इसी प्रकार खुरोंमें भी कभी-कभी बीमारी हो जाती है। खुर पक जाते हैं, इसे 'खुर्याँत' कहते हैं, यह संक्रामक रोग है। कुछ घरेलू औषधियोंद्वारा इसका उपचार किया जाता है।

प्राकृतिक चारेका सेवन करनेसे यहाँकी गायोंका दूध बड़ा ही स्वादिष्ट और पौष्टिक होता है। उसमें एक विलक्षण

स्वाभाविक मिठास होती है। ऐसे ही गायके घीको यहाँ सभी रोगोंकी दवा माना जाता है। कुछ भी शारीरिक या मानसिक रोग हो 'गायका घी दो' यही कहा जाता है। छोटे बच्चों तथा रोगियों एवं दुर्बल व्यक्तियोंको धारोष्ण दूध पिलाया जाता है। दही कच्चे दूधका जमाया जाता है। उसे एक विशेष प्रकारकी लकड़ीके बर्तनमें ही जमाया जाता है। जिसमें दही जमाया जाता है वह बर्तन छोटे-बड़े नापका होता है, जो यहाँकी भाषामें 'ठेकी' कहलाता है। दहीको कुमाँऊमें सगुनका सर्वोत्तम एवं सर्वश्रेष्ठ पदार्थ माना जाता है। शादीमें बरातके आगे-आगे एक व्यक्ति 'दहीकी ठेकी' या 'सगुनकी ठेकी' लेकर चलता है। मट्ठेके लिये जिस लकड़ीके बड़े बर्तनमें दही जमाया जाता है, वह बर्तन 'विंडा' कहलाता है और नौनी (नवनीत-मक्खन) जिस लकड़ीके बर्तनमें रखा जाता है उसे 'फरुवा' कहते हैं तथा जिसमें बिलोकर घी रखा जाता है उस लकड़ीके बर्तनको 'हड़पी' कहा जाता है। दूध-दहीका गिर जाना अशुभ माना जाता है।

सामान्यतः यहाँकी गायोंका जीवन १०-१२ वर्षका होता है। बैलोंकी भी प्रायः यही आयु रहती है। २-३ सालकी बछिया ब्याने योग्य हो जाती है। गायें दूध तो कम देती हैं, पर दूध बड़ा ही मधुर एवं स्वादिष्ट होता है। दूध देनेवाली गाय 'धिनुवा' (धेनु) कहलाती है तथा जब गायका दूध छूटने लगता है या वह एक ब्याँतमें ८-९ महीने दूध दे चुकी होती है तो बाखड़ी (वाष्कयिणी) कहलाती है। ऐसी गायका दूध बड़ा ही गाढ़ा और मीठा होता है। सामान्यतः गायको 'गोरु' और बैलको 'बल्द' कहा जाता है।

प्रायः प्रत्येक घरमें एक-दो गाय तथा एक बैल या बैलकी जोड़ी रहती है। बैलोंसे खेती की जाती है। गाय-बैलसे घरकी समृद्धिका अनुमान लगाया जाता है और गायोंका पालना शुभ माना जाता है। लोग आपसमें जब कुशल-क्षेमका समाचार पूछते हैं तो उसी क्रममें 'धिनालि कतुक् छ' अर्थात् दूध देनेवाली गायें कितनी हैं?—यह प्रश्न अवश्य पूछा जाता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक घरमें गाय अवश्य रखी जाती है। शामको जंगलसे गायें जब समूहमें घर लौटती हैं, उस समयका दृश्य बड़ा ही मनोरम दीखता है। गायें अपना-अपना घर पहचानती हैं। गोष्ठमें भी अपने ही स्थानपर जाकर खड़ी हो जाती हैं। ब्यायी हुई गायें रँभाती हुई, दौड़ती हुई आती हैं और अपने बछड़ेको चाटती हुई अपना वात्सल्य-स्नेह प्रकट करती हैं।

यहाँके लोगोंका विश्वास है कि भैंसके दूधसे बुद्धि भैंस-जैसी ही मोटी हो जाती है। गायोंमें एक दिव्य ज्ञानशक्ति होती है। जब वे घनघोर जंगलोंमें चरने जाती हैं तो कभी-कभी बाघकी शिकार भी बन जाती है। कहीं आस-पास बाघ हो तो गायोंको पता नहीं किस शक्तिसे उसका भान हो जाता है। सब गायें रँभाती हुई एक समूहमें एकत्र हो जाती हैं, उनके कान खड़े हो जाते हैं। समूहमें बाघ आक्रमण नहीं कर पाता, किंतु एक-दोको अकेले पाकर मार देता है।

यद्यपि यहाँ कोई बड़ी गोशाला नहीं तथापि यहाँका प्रत्येक घर गोशाला है। प्रत्येक गोष्ठ पूजास्थल है, तीर्थ है। फिर भी कहीं-कहीं गायोंकी बड़ी दुर्दशा भी दीखती है। मुख्य समस्या उनके निवासस्थान गोष्ठकी है। कुमाऊँके ग्रामीण अंचलोंमें प्रायः पत्थरके तीन मंजिले ढालूदार छतवाले मकान बनते हैं। जिसके मध्यभागमें लोग रहते हैं, ऊपरकी मंजिलमें रसोई इत्यादिका कार्य होता है तथा निचली मंजिलमें गायोंका स्थान रहता है। जो यहाँकी भाषामें गोठ (गोष्ठ) कहलाता है। इसमें प्रकाशका अभाव रहता है तथा इसकी ऊँचाई भी बहुत अधिक नहीं रहती। प्रायः बरसातमें सीलन भी रहती है। कोई-कोई लोग अलगसे एक दुमंजिला मकान बना लेते हैं, जो यहाँकी भाषामें 'छान्' कहलाता है। ऊपरके मंजिलमें गायोंका सूखा चारा रहता है और नीचे गायें रहती हैं।

देशके मैदानी भागोंकी तरह अभी यहाँ कसाइयोंका आतंक नहीं है। किसी गायका वध हुआ या गाय वधके लिये बेच दी गयी, कहीं भी ऐसा नहीं सुना जाता। इसका मुख्य कारण यहाँकी भौगोलिक एवं प्राकृतिक स्थिति है, जो गायोंको सुरक्षित रखती है। यहाँका जो भी गोवंश है वह अपनी स्वाभाविक आयु स्वाभाविक ढंगसे पूर्ण करता है। यहाँका गोवंश पूर्ण सुरक्षित है। यहाँके सीधे-साधे ग्रामीण गोचारक 'गायका वध किया जाता है' इस बातको कोई कितना ही जोर देकर कहे, किसी भी तरह विश्वास

नहीं कर सकते , न ऐसी कल्पना ही कर सकते हैं। गौके प्रति इतनी अटूट धार्मिक आस्था, इतना आस्तिक भाव उनके रोम-रोममें प्रविष्ट है कि वे इस बातको सुनकर ही काँप उठते हैं।

पञ्चगव्य तथा पञ्चामृतका यहाँके धार्मिक जीवनमें तो जो स्थान है, सो तो है ही, अभी कुछ दिनों पूर्वतककी बात है, प्रत्येक घरके आँगनमें एक सुरक्षित स्थानमें एक बर्तनमें गोमूत्र रखा रहता था। कहीं बाहरसे घरमें प्रवेश करनेसे पूर्व गोमूत्र छिड़कना तथा उसका पान करना बहुत ही आवश्यक समझा जाता था। सारा घर गोबर-मिट्टीसे ही लीपा जाता था। प्रत्येक शुभ पर्व एवं उत्सवोंपर घरकी देहलीको अनिवार्य-रूपसे गोबरसे लीपा जाता था। ऐसा न करनेपर बड़ा ही अमंगल तथा अशुभ समझा जाता था। जननाशौच, मरणाशौच आदिमें भी गोमूत्र-गोबरके छिड़काव एवं पञ्चगव्यके पानके बिना शुद्धि नहीं समझी जाती। धार्मिक अवसरों तथा विवाहित उत्सवोंमें गोदान तथा बछियाके दानकी परम्परा है। यहाँकी धार्मिक आस्थामें बछियाके दानको विशेष प्रशस्त माना गया है। दोषकारक नक्षत्रोंमें उत्पन्न शिशुके तथा माता-पिताके अरिष्ट-निवारणके लिये गोमुख-प्रसव-शान्ति की जाती है। जिसमें उत्पन्न शिशुको एक नवीन शूर्पमें रक्त वस्त्र बिछाकर उसमें तिलोंके ऊपर लिटाकर पुनः रक्त सूत्रसे लपेटकर उसे आचार्यद्वारा गौके मुखके समीप ले जाया जाता है और गौके शरीरमें स्पर्श कराकर गौके पृष्ठभागमें बैठी माताको दे दिया जाता है। इससे उस बालकको गोमुखसे उत्पन्न समझा जाता है और उसके सारे दोष-पापोंकी शान्ति भी समझी जाती है। इस प्रकार कुमाऊँके पर्वतीय प्रदेशमें गौ जन-जनके जीवनमें अनुस्यूत-सी है।

विदेशोंमें गाय

विदेशोंमें गायका महत्त्व—कुछ संस्मरण

[श्रीलल्लनप्रसादजी व्यास]

गोदुग्ध-पान और गोमांस-भक्षणके बारेमें भारत और विदेशोंके चिन्तन तथा व्यवहारमें विचित्र विडम्बना या विरोधाभास दिखायी पड़ता है। भारत आदिकालसे गोपूजक देश रहा है। जहाँ *'बिप्र धेनु सुर संत हित'* भगवान्का अवतार हुआ तथा जहाँ दूधके उत्पादनमें अधिकता होनेसे ऐसा माना जाता रहा कि कभी यहाँ दूधकी नदियाँ बहती थीं, वहीं इस देशमें आज स्थिति यह हो गयी है कि धड़ल्लेसे गायें कटती हैं और गोवध बंद करानेके लिये गोभक्तोंद्वारा आन्दोलन तथा आमरण अनशन होते हैं। जहाँतक गोदुग्धका प्रश्न है, कुछ क्षेत्रोंको छोड़कर अधिकांशमें गोदुग्ध एक दुर्लभ वस्तु हो गयी है। गौके दूधका स्थान भैंसके दूधने ले लिया है। फलस्वरूप गोपालक भारत देशमें गोवंशका दिन-प्रति-दिन ह्रास हो रहा है। दूसरी ओर विदेशोंमें चाहे वे पश्चिमके देश हों या पूर्वके, दूधकी बहुतायत है और कुछ देशोंमें गौके दूधका उत्पादन वहाँके प्रमुख उत्पादनमें-से है और वे देश गौके दूधकी बनी वस्तुएँ संसारभरको निर्यात करते हैं, जबकि इन सभी देशोंमें गोमांस-भक्षण भोजनकी एक आम आदत है। इन देशोंमें दूधका मतलब गौका दूध ही माना जाता है, भैंसका दूध नहीं। कुछ देशोंमें तो भैंस अजायबघरमें रहनेवाले पशुके समान है।

कई वर्ष पूर्वकी बात है, फारमोसा (तैवान) की यात्राके दौरान रास्तेमें पड़नेवाले गाँवमें कहीं-कहीं भैंस दिखायी पड़ी तो एक अधिकारीसे पूछा गया कि इसके दूधका आपके देशमें क्या उपयोग है? तो उन्होंने सहज भावसे उत्तर दिया कि 'इसका बच्चा पीता है।' इसके आगे कोई प्रश्न करनेकी आवश्यकता प्रतीत नहीं हुई, किंतु मनमें यह प्रश्न कौंधता रहा कि क्या यहाँ भैंसके दूधका उसके बच्चेके पीनेके अलावा और कोई उपयोग नहीं है? कुछ समय बाद जब पुनः उस देशकी यात्राका संयोग उपस्थित हुआ और उसी प्रकार फिर ग्रामीण क्षेत्रोंसे गुजरते हुए भैंसें दीख पड़ीं तो पूछनेपर पता चला कि भैंसके दूधका उपयोग 'केवल इसके बच्चेके पीनेके लिये होता है।' दोनों बार ऐसा उत्तर सुनकर इसी निष्कर्षपर पहुँचना पड़ा कि यहाँ कोई मनुष्य भैंसका दूध पीता ही नहीं है। कोई भैंसके दूधको पिये, इसकी कल्पना ही नहीं उठती।

कुछ वर्ष पूर्वतक थाईलैंडमें भी यही स्थिति थी, किंतु वहाँ पूर्वी भारतीय लोगोंने पहुँचकर गायके बजाय भैंस पालना शुरू किया और भैंसके दूधका प्रचार किया।

इस प्रकार गायके दूधका मानव-जीवनमें अनिवार्य उपयोग होनेके बावजूद भी गाय अधिकांश देशोंमें पूजनीय नहीं है और गोमांस-भक्षणका व्यापक प्रचार है। विदेशोंमें कोई गोवध-निषेधका प्रश्न भी नहीं उठाता। उन्हें अभी यह ज्ञान प्राप्त होना है कि गाय और अन्य पशुओंमें बड़ा अन्तर है तथा गायका दूध ही मनुष्यका स्वास्थ्य बढ़ाता है, उसका मांस मानव-स्वास्थ्यका सबसे बड़ा शत्रु है तथा अनेक रोगोंको जन्म देता है। पश्चिमी देशोंकी अनेक बीमारियोंके मूलमें यदि खोज की जाय तो अत्यधिक मात्रामें गोमांस-भक्षण ही कारण दिखायी पड़ेगा। इधर कुछ वर्षोंमें विभिन्न कारणोंसे विदेशियोंमें शाकाहार बढ़नेकी प्रवृत्तिको देखते हुए नये अनुसंधान किये जा रहे हैं और यह निष्कर्ष निकाले जा रहे हैं कि शाकाहार मनुष्यके स्वास्थ्य और दीर्घ जीवनके लिये बहुत जरूरी है।

बालीमें गोमांस-भक्षण-सम्बन्धी विडम्बना सबसे अधिक विचित्र है। यह इंडोनेशियाका हिन्दू-बहुल द्वीप है। यहाँकी ९० प्रतिशतसे अधिक जनसंख्या हिन्दू है। वे अपनेको हिन्दू कहनेमें गौरवका अनुभव करते हैं। साथ ही वहाँ वर्ण-व्यवस्था भी विद्यमान है और इसके लिये भी उन्हें गौरवका बोध होता है। किंतु यह जानकर बड़ा कष्ट हुआ कि वहाँके हिन्दू केवल मांसभक्षी ही नहीं, अपितु गोमांसभक्षी भी हैं। वहाँ अधिकतर श्यामा गायें होती हैं, जिनका कद छोटा होता है और मुख तथा आँखें हिरनी-जैसी होती हैं, वे बड़ी सुन्दर दिखायी पड़ती हैं। वहाँके जीवनमें गौका इतना महत्त्व है कि मृत्युके बाद शवको एक कागजकी गाय बनाकर उसमें रखकर अग्निको समर्पित किया जाता है, ताकि गायकी सहायतासे स्वर्गमें जाना सम्भव हो सकेगा।

इधर कुछ वर्षोंमें बालीके कुछ विद्वान् हिन्दी, संस्कृत एवं हिन्दू शास्त्रोंका अध्ययन करनेके लिये भारत आये और उन्हें प्रेरणा हुई कि बालीमें हिन्दुओंको सही अर्थोंमें हिन्दू बनानेके लिये गोमांस-भक्षण छोड़ देना चाहिये और उन्होंने वहाँकी भाषामें इसके बारेमें पुस्तकें लिखकर यह प्रचार करनेका प्रयास किया है कि गोमांस-भक्षण हिन्दू-धर्मके विरुद्ध आचरण है। इसका असर धीरे-धीरे हो रहा है।

ऐसे ही विद्वानोंसे कुछ अन्य तथ्योंकी जानकारी मिली है, जिसके मुख्य विवरण इस प्रकार हैं—

१-बालीमें एकमात्र क्षेत्र 'तरो' है, जहाँ सफेद गाय मिलती है। इस गायको 'लम्बू' कहते हैं और लोग इसकी पूजा करते हैं।

२-भारतकी तरह बालीके श्रद्धालु भी गोबर और गायका मूत्र पूजनमें शुद्धिके रूपमें इस्तेमाल करते हैं।

३-बालीकी राजधानी देनपसारमें एक छोटा-सा द्वीप है, जिसका नाम 'नूसापनिदा' है। प्राचीन कालमें यह वैष्णव-क्षेत्र था, यहाँके लोग गोमांस नहीं खाते थे। यदि कोई खाता था तो उसे गाँवसे निकाल दिया जाता था या जो परिवार गोमांस-भक्षी थे वे गाँवमें नहीं, अपितु वनमें जाकर खाते थे।

४-बालीमें जो लोग अज्ञानवश गोमांस खाते थे या गाय मारनेवाले कसाईखानेसे होकर गुजरते थे तो उन्हें नदीमें स्नान करके गाँवमें प्रवेश मिलता था। इसके बाद माता या वृद्ध लोग गङ्गा-जलका आवाहन करके उसके मुँहपर छींटे मारते थे।

५-बालीके वृद्ध लोग कहते हैं कि प्राचीन कालमें जो लोग गोमांस खाते थे, उन्हें कुत्तेसे ज्यादा नीच समझा जाता था।

६-बालीके प्राचीन ग्रन्थोंमें कुछ श्लोक और दूसरे ऐसे उल्लेख मिलते हैं, जिनमें पञ्चगव्यके महत्त्वके बारेमें बताया गया है। इसका उपयोग वे पूजामें और प्रायश्चित्तके समय भी करते थे।

७-इंडोनेशियाकी प्रसिद्ध रामायण 'काकविन' के महाकवि योगेश्वरने गायका महत्त्व दिग्दर्शित करनेवाले कई श्लोकोंका उल्लेख किया है। इन श्लोकोंके माध्यमसे महाकविने बताया है कि संसारमें पशुकी स्थिति बहुत दयनीय है और उसमें भी गायकी और भी अधिक। महाकविने अच्छे और बुरे व्यक्तियोंकी यह पहचान भी बतायी है कि बुरे व्यक्ति गायपर अधिक सामान लाद देते हैं और ऊपरसे मारते भी हैं तथा उसके शरीरको केवल भक्षण करनेवाले मांसके रूपमें देखते हैं, किंतु अच्छे लोग गायके प्रति करुणाका भाव रखते हैं और गायको कोई कष्ट नहीं देते।

८-बालीमें मनुष्योंकी तरह गायका भी दाह-संस्कार होता है। वह श्मशानपर नहीं बल्कि बाग-बगीचे-जैसे पवित्र स्थानपर।

थाईलैंडमें तो गायके महत्त्वको देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। यहाँके अनेक बौद्ध-मन्दिरोंमें गायकी मूर्तियाँ मिलती हैं। बैंकाकके संसार-प्रसिद्ध बुद्ध-मन्दिरमें, जिसमें नीलमकी बुद्धमूर्ति रखी है, गायकी प्रतिमा भी स्थापित है और यह अत्यन्त प्रमुख स्थानपर है, जहाँ सभीकी दृष्टि जाती है। इसी मन्दिरके बगलमें एक और बुद्ध-मन्दिर है जिसके अंदर शिवलिंग और नंदी दोनों बने हैं।

कम्बोडियाके अंगकोर नामकी अनेक भग्न प्रतिमाओंमें भी गऊकी प्रतिमा विद्यमान है। दो मन्दिर क्रमश: भगवान् विष्णु और शिवजीको समर्पित हैं तथा इनकी दीवालोंपर रामायण और महाभारतके अनेक प्रसंग उत्कीर्ण हैं। न केवल वियतनाम, थाईलैंड और कम्बोडिया अपितु अन्य अनेक देशोंने भी गौको पर्याप्त महत्त्व दिया है। ईसा पशुवधके विरोधी थे। बाइबिलमें बृषभको देवता माना गया है। फिलस्तीनमें खुदाईके उपरान्त गौकी मिट्टीकी कुछ मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई थीं। यहूदी लोगोंमें गौका बड़ा आदर था। उनकी कुछ कथाओंके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि वे बहुत ही निपुण गोपालक थे। यहूदियोंके धर्मशास्त्रकी आज्ञा थी कि दवाई करते समय बैलके मुँहमें जाली मत लगाओ। यहूदी भक्तोंकी धारणा थी कि याकूबने एक बछड़ेको मारकर उसकी माता गौको दु:ख पहुँचाया था, इसलिये उसका बेटा युसूफ मर गया।

मेसोपोटामियाँमें सुमेरियन नामके लोग रहते थे। गौके लिये सुमेरियन भाषाका शब्द 'गु' है। उनके प्राचीन सिक्कोंपर भी गौके चिह्न अङ्कित रहते थे। कुछ वर्ष पूर्व सुमेरियामें खोजका कार्य हुआ था। तेलेलओबीद मन्दिरकी दीवालपर गाय-बैल और ग्वालोंके कई चित्र मिलते हैं, जिनमें कहीं गोदोहन हो रहा है तो कहीं दूध बह रहा है आदि। एक चित्रमें बैलोंका जुलूस है। इन चित्रोंसे यह अनुमान किया जा सकता है कि सुमेरियन लोग गौका कितना आदर करते थे। सुमेरी और बेबीलोन प्रदेशोंमें कुछ वर्ष गोवध-विरोधी कानून बना दिया गया था।

मिस्रमें गाय-बैलोंकी पूजा होती थी। उनकी हथोर नामक देवी गौ ही है। हथोरके समान आपिस वृषभकी भी उपासना की जाती है। पिरामिड और खुदाईसे प्राप्त मन्दिरों और शिलालेखोंसे यह ज्ञात होता है कि प्राचीन मिस्रकी संस्कृतिमें गाय और बैलकी उपासना होती थी, मिस्रमें गोहत्या नहीं होती थी। गोहत्या करनेवालेको प्राणदण्ड मिलता था। जिस प्रकार हिन्दू वैतरणी पार करनेके लिये गायकी पूँछ पकड़ते हैं, उसी प्रकार मिस्रवासी गायकी पूँछ पकड़कर नील नदी पार करते हैं।

यूनानियोंके गौ-प्रेमके बारेमें कहा जाता है कि जब सिकन्दर भारतसे लौटकर यूनान जाने लगा था तो वह अपने साथ एक लाख उत्तम जातिकी गौएँ यहाँसे ले गया था।

पूर्वी देशों, विशेष रूपसे जापानमें मानव-स्वास्थ्यको लेकर जो नयी-नयी जागरूकता पैदा हो रही है, उसमें गौके दूधका सेवन व्यापक रूपसे बढ़ रहा है। जिस तरहसे अनेक देशोंमें जगह-जगह मशीनोंके माध्यमसे सिक्के डालकर शीतल पेय प्राप्त किये जा सकते हैं, वैसे वहाँ मशीनोंके माध्यमसे जगह-जगह दूधकी व्यवस्था उपलब्ध है।

हालैंड, जर्मनी, बेल्जियम, डेन्मार्क, आस्ट्रेलिया आदि देश गौके दूधके उत्पादनमें इतने आगे बढ़ गये हैं कि इनमेंसे कुछ देशोंमें यदि यह कहा जाय कि यहाँ दूधकी नहरें बहती हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। वर्तमान युगमें यह कैसी विडम्बना उभर कर सामने आयी है कि गो-भक्षक देश गायके दूधके उत्पादन और उपयोगको महत्त्व दे रहे हैं और गोपूजक देश गौके दूध और उसकी बनी हुई वस्तुओंकी अनिवार्यता समाप्त करके गोवंशके ह्रासको जान-बूझकर प्रश्रय दे रहे हैं, भारतके लिये तो यह बहुत लज्जाजनक बात है। यदि गौके दूधकी माँग और खपत नहीं होगी और कृषिके लिये बैलोंकी जरूरत महसूस नहीं होगी तो गोवंशकी वृद्धि किस सम्भावनाके आधारपर होगी?

अत: आज सभीको गोरक्षण और गोसंवर्धनकी ओर विशेष सचेष्ट रहते हुए गोहत्या बंद करानेके महदुद्देश्यमें प्राणपणसे जुट जाना चाहिये।

गाय और इस्लाम

देशमें विद्वेषपूर्ण और भ्रामक प्रचार किया जाता रहा है कि इस्लाम गोवधकी इजाजत देता है। निम्नलिखित उद्धरणों और तथ्योंसे यह स्पष्ट है कि इस्लाम और उसके पैगम्बर तथा प्रतिष्ठित नेता गायको सदा आदरकी दृष्टिसे देखते आये हैं।

[१]'गायका दूध और घी तुम्हारी तंदुरुस्तीके लिये बहुत जरूरी है। उसका गोश्त नुकसानदेह और बीमारी पैदा करता है, जबकि उसका दूध भी दवा है।'—**हज़रत मुहम्मद (नासिहाते हादी)**

[२] 'गायका दूध बदनकी खूबसूरती और तंदुरुस्ती बढ़ानेका बड़ा जरिया है।'—**हज़रत मुहम्मद (बेगम हज़रत आयशासे)**

[३] 'बिला शक़ तुम्हारे लिये चौपायोंमें भी सीख है। उनके (गायके) पेटकी चीजोंमेंसे गोबर और खूनके बीचमेंसे साफ दूध, जो पीनेवालोंके लिये स्वादवाला है, हम तुम्हें पिलाते हैं।'—**कुरानशरीफ १६-६६**

[४] 'अच्छी तरह पली हुई ९० गायें १६ वर्षोंमें न सिर्फ ४५० गायें और पैदा करती हैं, बल्कि उनसे हजारों रुपयेका दूध और खाद भी मिलते हैं। गाय दौलतकी रानी है।—**हज़रत मुहम्मद (मौला फारुखीद्वारा संकलित, 'बरकत' और सरक़तमें)**

इन राजाओं और बुजुर्गोंने गोहत्या बंद करवायी थी—

[५] मुगल बादशाह बहादुरशाहके खास पीर मौलवी कुतुबुद्दीन साहबने फतवा दिया था कि 'हदीस'में कहा है कि जाबेहउलबकर (गायकी हत्या करनेवाला) कभी नहीं बख्शा जाना चाहिये।

—इस फतवेपर इन बुजुर्गवारोंके दस्तखत हैं—
मुहम्मद शाह गाजी शाह आलम बादशाह।
सैयद उताउल्लाखान फिदवी।
पीर मौलवी कुतुबुद्दीन।
काजी मियाँ असगर हुसैन दस्तखत खास वल्द मुन्शी इलाही खान।
दरोगा आतिशखान हुजूरपुरनूर।

[६] बाबर, हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, मुहम्मदशाह आलम-जैसे शासकोंके अलावा अब्दुलमुल्क इब्ने मरदान सूबेदार ईराक, वाली हुकुमत अफगानिस्तानने सौसे ज्यादा उलेमा अहले सुन्नतके फतवाके मुताबिक गायकी कुर्बानी बंद करायी।

[७] ब्रिटिश-कालमें जिन मुसलमान शासकोंने अपनी इन रियासतोंमें गोहत्याको बंद कराया था, वे थे—नवाब रावनपुर, नवाब मंगरौल, नवाब दुजाना (करनाल), नवाब गुड़गाँव और नवाब मुर्शिदाबाद।

[८] मौलाना फरुखी लिखित 'खैर व बरकत' से पता चलता है कि शरीफ मक्काने भी गोहत्यापर पाबंदी लगवायी थी।

[९] लखनऊके छह उलमाएँ सुन्नतने गोहत्या-बंदीका फतवा दिया था।

[१०] इमाम जाफर साहबने इरशाद फरमाया था, 'गायका दूध दवा है, इसके मक्खनमें शिफा (तंदुरुस्ती) है और मांसमें बीमारी।'

[११] 'मुसलमानको गाय नहीं मारना चाहिये। ऐसा करना हदीसके खिलाफ है।' **(मौलाना हयात साहब खानखाना हाली समद साहब)**

[१२] 'गायकी बुजुर्गी इहतराम किया करो, क्योंकि वह तमाम चौपायोंकी सरदार है।' **(तफसीर दर मन्सूर)**

आधुनिक इस्लामी नेताओंकी दृष्टिमें गाय

[१३] भारतीय स्वातन्त्र्य संग्रामके प्रसिद्ध सेनानी हकीम अजमलखानका कहना है, 'न तो कुरान और न अरबकी प्रथा ही गायकी कुर्बानीकी इजाजत देती है।'

[१४] जब १९२२ में मौलाना अब्दुलबारी साहब मरहूम फिरंगी महलीने जब गायकी कुर्बानीको बंद करनेके लिये फतवा शाया किया था तो महात्मा गाँधीने उनका शुक्रिया अदा किया था। [प्रेषक—श्रीपीला रामकृष्णजी]

भारतीय सिक्कोंपर गाय और वृषभ

[डॉ० मेजर श्रीमहेशकुमारजी गुप्त]

प्राचीन कालसे ही भारतीय समाजमें गायको गोमाताके नामसे ही सम्बोधित किया जाता है। भारत मूलत: कृषि-प्रधान देश है और गाय एवं बैल (वृषभ) का कृषिमें प्रमुख स्थान है। छठी सदी ईस्वी-पूर्वसे भारतके स्वतन्त्र होनेतक गौ तथा वृषभको प्राय: अधिकांश शासकोंद्वारा सिक्कोंपर स्थान मिला है, जो इनकी महत्ता एवं उपयोगिताको दर्शाता है। गायका सबसे अच्छा अङ्कन प्राचीन भारतके लिच्छवी गणराज्यके शासक अंशुवर्माके सिक्कोंपर मिलता है। वृषभका अङ्कन पञ्चमार्क, एरण, औदुम्बर, अयोध्या, कौशाम्बी, सातवाहन, उज्जयिनी, क्षत्रय, यौधेय, कृष्णराज (कलचुरी), सामन्तदेव, जहाँगीर, इन्दौर रियासत तथा स्वतन्त्र भारतके प्रथम सिक्कोंपर मिलता है। यहाँ तत्तत् कालोंमें मान्य उन सिक्कोंका संक्षेपमें विवरण दिया जा रहा है।

(१) लिच्छवी गणराज्य—प्राचीन भारतका प्रमुख गणराज्य लिच्छवी गणराज्य था, जो अब नेपाल कहलाता है। जिस प्रकार भारतवर्षमें चन्द्रगुप्त मौर्यके कालको प्रामाणिक मानते हैं, उसी प्रकार नेपालके इतिहासकार अंशुवर्माके कालको आधार मानकर चलाते हैं। वह सिंहके समान बलवान् था। राजा अंशुवर्माने जो सिक्का प्रचलित किया वह उन्हींके नामसे प्रसिद्ध हुआ, इसका विवरण इस प्रकार है—

धातु—ताँबा, वजन ११.५ ग्राम, आकार २ से० मी०, काल ५०० ई०।

अग्रभाग—गाय खड़ी है, उसके गलेमें घंटी बँधी है। बछड़ा गायका दूध पी रहा है तथा ऊपर ब्राह्मी लिपिमें लेख है 'का मे देहि' (कामधेनु)। चारों तरफ बिन्दु बने हैं।

पृष्ठभाग—गर्वीला सिंह अगला पंजा उठाये खड़ा है। उसके पंख लगे हैं, ऊपर ब्राह्मीमें 'अंशुवर्मा' लिखा है।

(२) गुहिला शासक बप्पा (मेवाड़)—मेवाड़के गुहिला शासकोंमें बप्पा प्रमुख थे। उनके अभीतक कुल तीन सिक्के ही मिले हैं।

धातु—सोना, वजन ७.५ ग्राम, आकार २.४ से० मी०, समय २०० ई०।

अग्रभाग—सिक्केके अग्रभागमें बिन्दु, छतरी तथा गायका दूध पीते हुए बछड़ा बना है और नीचे मछली बनी हुई है।

पृष्ठभाग—सिक्केके पृष्ठभागमें शिवलिंगके सामने बैठा हुआ नन्दी, नीचे लेटा हुआ मनुष्य और ऊपर 'श्रीबप्पा' लिखा हुआ है।

(३) पञ्चमार्क—ईसा-पूर्व छठी सदीसे दूसरी सदीतक सारे भारतवर्षमें पञ्चमार्क सिक्के चलते थे। इनपर किसी राजाका नाम नहीं पाया जाता, केवल पाँच अलग-अलग चिह्न पाये जाते हैं। इन सिक्कोंपर अभीतक ५०० से अधिक प्रकारके चिह्न पहचाने जा चुके हैं। विवरण इस प्रकार है—

धातु—चाँदी, वजन ३.२ ग्राम, आकार २.० से० मी०, समय ६ ई० पूर्व।

अग्रभाग—खड़ा हुआ वृषभ, सूर्य, हाथी, डमरू दोनों तरफ 'मकार' बना है।

पृष्ठभाग—मेरु पर्वत दिखाया गया है।

(४) एरण—मध्यप्रदेशमें सागर-बीना रेलवे लाइनपर एरण नामका एक नगर स्थित है। प्राचीन कालमें यह एक प्रमुख नगर था। यहाँके सिक्के बहुत ही अच्छे माने जाते हैं। विदिशा, अवन्ती तथा एरणके सिक्कोंमें काफी समानता है, जिससे मालूम पड़ता है कि इनमें राजनैतिक सम्बन्ध था। इनका समय ३०० ई० पू० से १५० ई०पूर्व है।

धातु—ताँबा, वजन ७.५ ग्राम, आकार चौकोर १.६ से०मी०, समय ३०० ई०पूर्व।

अग्रभाग—पाँच चिह्न ऊपर, दायें वृषभ, बायें शेर, नीचे दायें हाथी, बायें चिह्न। मध्यमें नदी। पृष्ठभागमें ऊपर बायीं ओर कोनेमें चिह्न बना है।

(५) औदुम्बर—पाणिनिके गणपाठ-प्रकरणके अन्तर्गत उल्लिखित राजन्यसमूहमें उदुम्बर नामका उल्लेख है। इनके वंशजोंको औदुम्बर कहा जाता है। महाभारतमें जितने गणोंका वर्णन मिलता है, उनमें औदुम्बरका भी नाम आया है। विष्णुपुराणमें कुणिन्द जातिके साथ इसका नाम आता है। यह जाति काँगड़ा और अम्बाला प्रान्तमें निवास करती थी, उन्हींके वंशज गुजरातमें औदुम्बर ब्राह्मण (गुजराती) के नामसे विख्यात हैं। औदुम्बरके सिक्कोंपर खरोष्ठीमें भी मुद्रा-लेख हैं। यह मुद्रा रुद्रवर्माकी है।

धातु—ताँबा, वजन ६.० ग्राम, आकार २ से० मी०, समय २००-१०० ई० पूर्व।

अग्रभाग—दाहिनी ओर मुँह किये वृषभ खड़ा है, कमलका फूल बना है तथा खरोष्ठीमें लेख है—'रानो वामासिका रुद्रवर्मासा विजियता।'

पृष्ठभाग—हाथी, त्रिशूल तथा ब्राह्मीमें खरोष्ठीवाला लेख ही अङ्कित है।

(६) **अयोध्या**—प्राचीन कोसल राज्य वर्तमानकालमें अवधके नामसे विख्यात है। सरयू नदीके किनारे इसकी राजधानी अयोध्या साकेतके नामसे प्रसिद्ध थी। अयोध्याके सिक्के सर्वथा भारतीय शैलीके हैं। मित्रवंशके दस राजाओंके सिक्के मिले हैं। चित्रमें प्रदर्शित सिक्का आर्य मितासाका है।

धातु—ताँबा, वजन ७.०० ग्राम, आकार १.८ से० मी०, समय २०० ई० पू०।

अग्रभाग—खड़ा हुआ नन्दी, नीचे ब्राह्मीमें लिखा हुआ—'आर्य मितासा'।

पृष्ठभाग—ताड़का वृक्ष तथा वृक्षको देखता हुआ मोर अङ्कित है।

(७) **कौशाम्बी**—आधुनिक इलाहाबादसे ३७ कि० मी० दक्षिण-पश्चिम यमुनाके समीप वत्स नामक जनपद था, जिसका उल्लेख बौद्ध-ग्रन्थोंमें भी मिलता है। वर्तमान कोसाम (कौशाम्बी) उस राज्यकी राजधानी थी। यह प्रधान सैनिक केन्द्र था तथा यहाँ व्यापारिक मार्ग पश्चिमकी ओर जाता था। शुंग-कालके बाद यहाँके राजा अपने नामका स्वतन्त्र रूपसे सिक्का चलाने लगे। बृहस्पति मित्रके सिक्के अधिक मिले हैं।

धातु—ताँबा, वजन ६.५ ग्राम, आकार गोल २.५ से० मी०, समय ३०० ई० पूर्व।

अग्रभाग—बायीं ओर मुँह किये वृषभ खड़ा है। ध्वज-दंड तथा अन्य चिह्न अङ्कित है।

पृष्ठभाग—घेरेमें वृक्ष, स्वस्तिक, चक्र, मेरु पर्वत आदि चिह्न बने हैं।

(८) **सातवाहन**—मौर्य साम्राज्यके पतनके बाद भारतमें अनेक राज्योंका उदय हुआ। दक्षिण भारतमें मौर्योंके उत्तराधिकारी सातवाहन नरेश माने जाते हैं। इनका नाम पुराणोंमें आन्ध्रजातीयके रूपमें उल्लिखित है। इस वंशको अभिलेखोंमें सातवाहन-कुलके नामसे वर्णित किया गया है। सातवाहन सिक्केका विवरण इस प्रकार है—

धातु—लेड (सीसा), वजन १०.५ ग्राम, आकार गोल २ से० मी०, समय १६० ई०पू०।

अग्रभाग—दायें मुँह किये खड़ा हुआ वृषभ, पीठके ऊपर मेरु पर्वत, ब्राह्मीमें 'रानो सरासात वाहन सा' अग्रभागमें लिखा हुआ है।

पृष्ठभाग—पाँच शाखाओंवाला पेड़, श्रीवत्स तथा मकार बना हुआ है।

(९) **आन्ध्र**—सातवाहन शासकोंका आन्ध्रप्रदेशमें राज्य विस्तृत होनेपर भी पुराणोंमें इस वंशको आन्ध्रजातीय कहा गया। प्राचीन हैदराबाद (वर्तमान आन्ध्र प्रदेश) रियासतके कोडंपुर नामक स्थानसे ताँबे तथा सीसेके अनेक सिक्के उपलब्ध हुए हैं।

धातु—सीसा, वजन १.३ ग्राम, आकार गोल १.२ से०मी०, समय १५० ई० पू०।

अग्रभाग—अग्रभागमें दायीं ओर मुँह किये वृषभ खड़ा है।

पृष्ठभाग—शाखाओंवाला वृक्ष पृष्ठभागमें बना है।

(१०) **विदिशा**—बेसननगर (विदिशा, भिलसा) मुख्य राजकीय मार्ग मथुरासे उज्जैनपर स्थित है। अशोक महान्‌की ससुराल विदिशा थी। मौर्य शासन-कालसे ही यह महत्त्वपूर्ण स्थान है। यहाँके सिक्कोंपर उज्जैन एरणके सिक्कोंका प्रभाव दीखता है।

घातु—ताँबा, वजन ६.५ ग्राम, आकार चौकोर २ से० मी०, समय २०० ई० पू०।

अग्रभाग—दायें मुँह किये विषभ खड़ा है, सामने चैत्यमें वृक्ष बना है।

पृष्ठभाग—विदिशाका चिह्न अङ्कित है।

(११) **उज्जयिनी**—आधुनिक मालवाका नाम अवन्ति (उज्जयिनी) था। इसकी राजधानी उज्जयिनी थी। यह स्थान मौर्यकालसे ही महत्त्वपूर्ण रहा है। यहाँके सिक्कोंपर एक विशेष चिह्न मिलता है, जिसे उज्जयिनी-चिह्न कहते हैं। कुछ सिक्कोंपर उज्जयिनी भी लिखा मिला है।

धातु—ताँबा, वजन ७.० ग्राम, आकार गोल २ से० मी०, समय २०० ई० पू०।

अग्रभाग—दाहिने मुँह किये हुए वृक्षके सामने वृषभ खड़ा है तथा खड़े हुए पुरुषकी आकृति बनी है।

अग्रभाग
पृष्ठभाग
अग्रभाग
पृष्ठभाग
अग्रभाग
पृष्ठभाग
१
२
३
४
५
६
७
८
९
१०
११
१२
१३
१४
१५
१६
१७
१८
१९
२०
२१
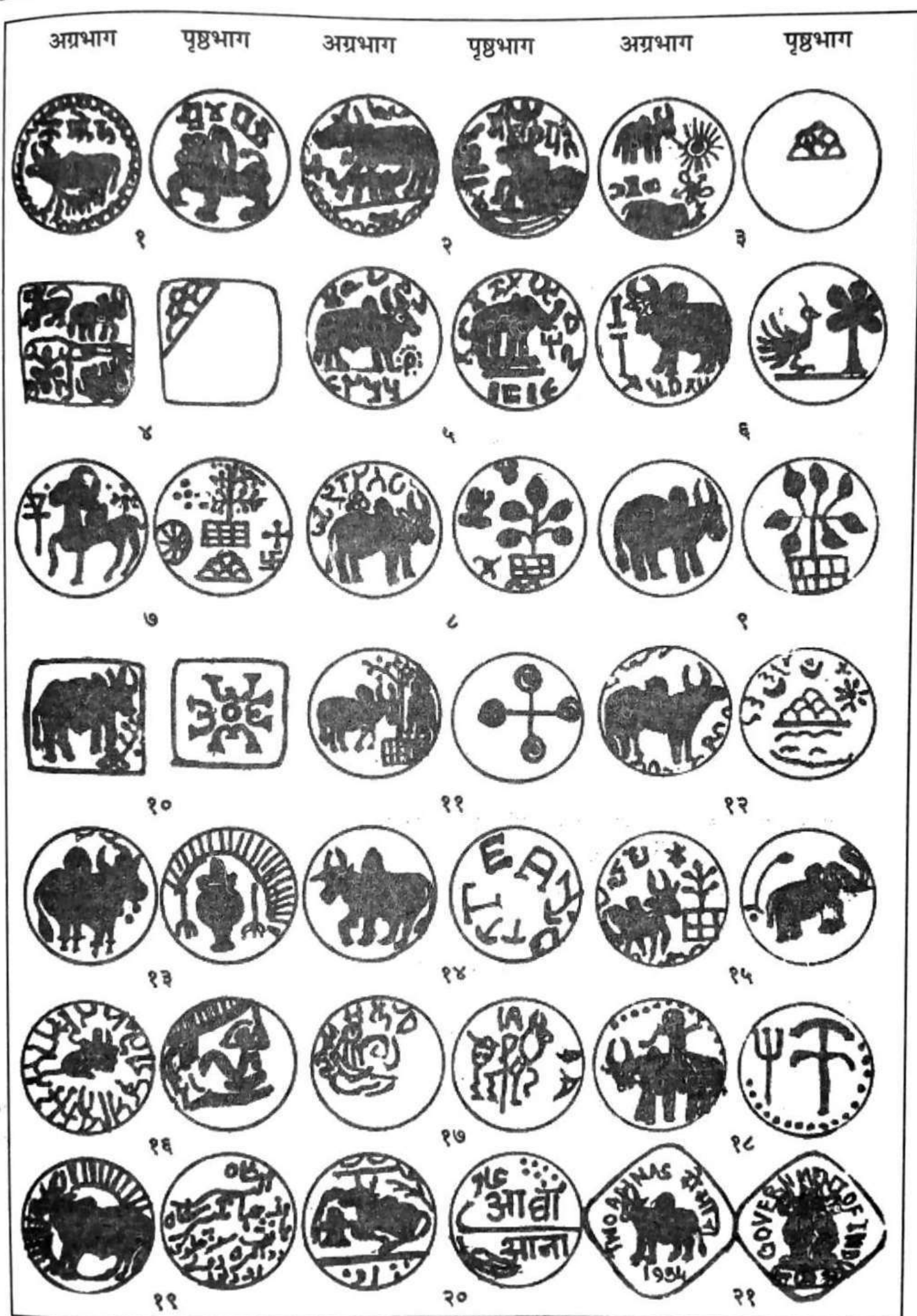
पृष्ठभाग—उज्जयिनीका चिह्न अङ्कित है।

(१२) **क्षत्रप**—पहले कुषाण साम्राज्य कई प्रान्तोंमें बँटा था और प्रान्तीय शासकोंको 'क्षत्रप' कहा जाता था। क्षत्रप युगका अधिकांश इतिहास सिक्कोंपर खेलद्वारा ही जाना गया है। क्षत्रपोंकी पाँच शाखाएँ थीं—(१) तक्षिला पाटिक नामका शासक, (२) मथुरा रंजुबाल नामका शासक, (३) वाराणासी खरपासलाना, (४) मालवा क्षहरातवंशी नहापना, (५) सौराष्ट्र चेष्टन। मालवा-उज्जैनमें पश्चिम क्षत्रपोंने चाँदी, ताँबा, पोटिनके सिक्के निकलवाये। इन सिक्कोंपर एक तरफ राजाकी मुखाकृति रहती है। यह सिक्का वृषभवाला है, जो महाक्षत्रप रुद्र दमनका है। इस सिक्केका विवरण इस प्रकार है—

धातु—पोटिन, वजन २.२ ग्राम, आकार गोल १.५ से० मी०, समय १३० ई०।

अग्रभाग—इस सिक्केके अग्रभागमें दाहिने मुँह किये खड़ा वृषभ तथा खरोष्ठी लिपिमें चारों तरफ 'महाक्षत्रप रुद्र दमन' लिखा हुआ है।

पृष्ठभाग—बायीं ओर चाँद, दायीं ओर सूर्य, ब्राह्मीमें वही अग्रभागका लेख तथा बीचमें मेरु पर्वत बना है।

(१३) **विष्णु कुण्डी (पल्लव)**—इस शासकोंकी अभीतक पूर्ण जानकारी नहीं मिली है, क्योंकि इनपर कोई लेख नहीं है। ये सिक्के आन्ध्रप्रदेश तथा दक्षिणमें काफी मिले हैं। इनमें शेर और वृषभ दो प्रकारके सिक्के पाये जाते हैं। इनका समय ३२० से ७०० ईस्वीतक माना जाता है।

धातु—हल्की चाँदी, वजन ९.५ ग्राम, आकार गोल १.८ से०मी०, समय ३२०-७०० ई०।

अग्रभाग—दायें मुँह किये खड़ा हुआ वृषभ बना है।

पृष्ठभाग—स्टेंडपर रखा हुआ घड़ा बना है तथा दोनों तरफ त्रिशूल अङ्कित है।

(१४) **नरवरके नाग**—विष्णुपुराणमें नौ नाग-राजाओंका वर्णन है, जिनका पद्मावती-मथुरातक राज्य था। ग्वालियरके पास नरवर नामक स्थानपर इनकी राजधानी थी।

धातु—ताँबा, वजन २.५ ग्राम, आकार ०.५ से० मी०, समय २००-४०० ई०।

अग्रभाग—मध्यमें बायीं ओर मुँह किये वृषभ खड़ा है।

पृष्ठभाग—पीछे ब्राह्मीमें 'महाराज श्री वृषभ' अङ्कित है।

(१५) **यौधेय**—बहुत प्राचीन समयसे यौधेय जाति व्यास नदीके पार भारतके उत्तर-पश्चिमी प्रान्तमें रहती थी। इस जातिका प्रधान कार्य युद्ध करना था। इनका अस्तित्व मौर्य-शासन, क्षत्र तथा कुषाण-कालमें ज्यों-का-त्यों बना रहा। दूसरी सदीमें यौधेय जाति उन्नतिके शिखरपर थी। मौर्य-शासनकी समाप्तिपर उन्होंने अपना सिक्का निकाला। वर्तमान समयमें यह प्रान्त रोहतक नामसे प्रसिद्ध है, आठ सौ वर्षोंतक यौधेय शासकोंका शासन स्थिर रहा। प्राप्त सिक्केका विवरण इस प्रकार है—

धातु—ताँबा, वजन ६.० ग्राम, आकार गोल २ से० मी०, समय ३०० ईस्वी।

अग्रभाग—चैत्यमें वृक्ष बना है तथा वृक्षकी ओर मुँह किये वृषभ खड़ा है, ब्राह्मीमें 'बहुधान्यक/भूमि धनुष' लिखा है।

पृष्ठभाग—हाथी तथा नन्दीका पाद-चिह्न बना है।

(१६) **कृष्णराज (कलचुरी)**—कलचुरी-वंशके शुरूमें चाँदीके सिक्के निकले हैं, जो गुप्त सम्राट् स्कन्दगुप्तके चाँदीके सिक्कोंके अनुकरण हैं। इन सिक्कोंपर कृष्णराजका नाम पढ़ा है। सिक्केपर क्षत्रपोंके समान ही मूँछ-सहित राजाकी आकृति है तथा गुप्तलिपिमें मुद्रालेख लिखा है।

धातु—चाँदी, वजन ३.५ ग्राम, आकार गोल १.५ से० मी०, समय ५५० ईस्वी।

अग्रभाग—मध्यमें वृषभ तथा चारों ओर मुद्रालेखमें 'परम माहेश्वर मातृ-पितृ-पादानुध्याती कृष्ण राज' लिखा हुआ है।

पृष्ठभाग—राजाका सिर और मूँछे दिखायी पड़ती हैं।

(१७) **सामन्तदेव**—प्राचीन समयमें काबुलका भूभाग ईरानी राजाओंके अधिकारमें था। सातवीं सदीके बाद उस क्षेत्रके शासकको शाहकी पदवी प्राप्त थी। वे क्षत्रिय थे, परंतु बौद्ध मतानुयायी थे। चीनी यात्री ह्वेनसांग (६३० ई०) ने लिखा है कि काबुलका राजा शाह कहा जाता था। ७ वींसे ११वीं सदीतक काबुल शाहने शासन किया और सिक्के प्रचलित किये। अरब-आक्रमणके बाद काबुल इस्लामके अधिकारमें चला गया और अरबके खलीफाको कर देने लगा। काबुलके क्षत्रिय शाही नरेशोंके स्थानको

ब्राह्मण ललिलयने ग्रहण किया, जो पिछले शाही वंशका संस्थापक था। इन राजाओंके सिक्कोंमें एक तरफ नन्दी तथा दूसरी तरफ घुड़सवार अङ्कित है।

धातु—चाँदी, ताँबा, वजन ३.५ ग्राम, आकार गोल १.५ से० मी०, समय ७-११ वीं सदी।

अग्रभाग—बायें मुँह किये बैठा हुआ वृषभ तथा ऊपर 'श्री सामन्त देव' लिखा है।

पृष्ठभाग—घोड़ेपर बैठा हुआ राजा हाथमें भाला लिये है।

(१८) **कौथकुल**—कौथकुल शासकोंका कुषाण नरेशोंसे कुछ सम्बन्ध जरूर रहा है; क्योंकि इन्होंने सिक्केके अग्रभागपर कुषाण शासकोंकी तरह शिव तथा नन्दीको मुद्रित किया। ये सिक्के हरियाणा सुनेतमें या तो वासुदेव सिक्कोंके साथ मिले हैं या यौधेयके साथ। इनका समय २-३ सदी है। सिक्कोंसे शैव धर्मका असर उस भू-भागमें मालूम पड़ता है।

धातु—ताँबा, वजन ५.०० ग्राम, आकार गोल १.७ से० मी०, समय २००-३०० ईस्वी।

अग्रभाग—दो भुजाधारी खड़े हुए शिव हैं, हाथमें त्रिशूल है, पीछे खड़ा हुआ नन्दी बना है।

पृष्ठभाग—त्रिशूल तथा चारों तरफ बिन्दु बने हैं। बीचमें चिह्न है (कुछ विद्वानोंने इसे 'कोट' पढ़ा है)।

(१९) **जहाँगीर**—मुगल बादशाह जहाँगीर, जो मुगल पिता अकबर तथा हिन्दू माता जोधाबाईका पुत्र था, ने अपने शासनकालमें बारह राशियोंके सिक्के चलाये, जो सोने तथा चाँदीमें बनाये गये। चित्रमें प्रदर्शित सिक्का वृषभ राशिका है। शाहजहाँके शासनकालमें यह फरमान जारी किया गया कि जिस किसीके पास इस राशिके सिक्के हों उन्हें खजानेमें जमा कर दे, अन्यथा ऐसा सिक्का रखनेपर मृत्यु-दण्ड दिया जायगा। अत: ये सभी सिक्के चलनसे बाहर कर दिये गये। इसलिये आजके संग्रहकर्ताओंके लिये ये सिक्के दुर्लभ हैं। यह सिक्का आगरा टकसालका है।

धातु—चाँदी, वजन ११.५ ग्राम, आकार गोल २ से०मी०, समय १०२७ हिजरी, १६१७ ईस्वी।

अग्रभाग—बायें मुँह खड़ा हुआ वृषभ तथा पीछे सूर्य अङ्कित है।

पृष्ठभाग—पृष्ठभागमें 'अकबर शाह अज जहाँगीर शॉह सने जुलूस बाफत दर आगरा'—लिखा हुआ है।

(२०) **इन्दौर रियासत (तुकोजीराव द्वितीय)**—मराठा राज्य मल्हार राव होल्करद्वारा स्थापित किया गया। पेशवाद्वारा मल्हारराववको उनकी सेवाओंसे खुश होकर १२ परगना नर्मदाके उत्तरमें दिये गये, जो बादमें इन्दौर रियासत बनी। इन्दौरको अहिल्याबाईके शासनकालमें राजधानी बनाया गया। अहिल्याबाईके शासन-कालसे ही इन्दौर तथा महेश्वर टकसालसे सिक्के निकलने शुरू हो गये थे। तुकोजीराव द्वितीयद्वारा शिवलिंग तथा नन्दीवाला ताँबेका सिक्का निकाला गया।

धातु—ताँबा, वजन १२ ग्राम, आकार गोल १.७ से० मी०, समय १८४४ ई०।

अग्रभाग—सिक्केके अग्रभागमें शिवलिंगके सामने बायें मुँह किये बैठा हुआ नन्दी है तथा शिवलिंगके ऊपर सर्प बना है।

पृष्ठभाग—सिक्केके पृष्ठभागमें हिन्दीमें 'आधा आना' लिखा हुआ है। ऊपर उर्दूमें 'शाह आलम', नीचे 'बेलपत्र' अङ्कित है।

(२१) **भारत सरकार**—भारत १५ अगस्त १९४७ को स्वतन्त्र हुआ, परंतु १९५० ई० तक भारत सरकारने कोई नये सिक्के नहीं ढलवाये और वह पुरानी ब्रिटिश मुद्राको ही चलनमें लाती रही। बंबई, कलकत्ता टकसालके साथ ही तीसरी टकसाल हैदराबाद भी १९५० के बाद शामिल हो गयी।

स्वतन्त्र भारतके सबसे पहले सिक्कोंमें सारनाथका शेर (अशोकको लाट), वृषभ और घोड़ा अङ्कित किये गये।

धातु—क्यूपोनिकल, वजन ५.८ ग्राम, आकार चौकोर २.३ से० मी०, समय १९५४ ई०।

अग्रभाग—बायें मुँह किये खड़ा हुआ वृषभ बना है। एक तरफ अंग्रेजीमें 'टू आनाज' तथा दूसरी तरफ हिन्दीमें 'दो आना' लिखा है तथा नीचे १९५४ ई० सन् पड़ा है।

पृष्ठभाग—अशोक-स्तम्भमें तीन शेर सामने तथा चारों तरफ अंग्रेजीमें 'गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया' लिखा है तथा नीचे तारा अङ्कित है।

गोदान और गोसेवासे भगवत्प्राप्ति

गौसे प्रेय और श्रेयकी प्राप्ति

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेत-
स्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः।
(कठोपनिषद् १। २। २)

आधुनिक जगत्में लौकिक सुखोंकी सर्वथा उपेक्षा कर केवल परमार्थके पथपर विचरण करनेवाले मनुष्य विरले ही हैं। अधिकांश लोगोंकी महत्त्वाकांक्षा और प्रयत्न सांसारिक सुख-सुविधाओंतक ही सीमित हैं। जिनके मनमें श्रेयके प्रति महत्त्वबुद्धि है, वे भी प्रेयको छोड़ना नहीं चाहते। प्रेय और श्रेय दोनोंको हस्तगत करना चाहते हैं। उनके मनमें लोक और परलोक दोनोंके लाभ उठानेकी इच्छा है। वे '**भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव**' कर देनेवाला उपाय ढूँढ़ते हैं। क्या ऐसा होना सम्भव है? क्या ऐसा कोई साधन है, जिससे स्वार्थ और परमार्थ दोनों सधें? प्रेय और श्रेय—भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त हो सकें? उत्तरमें निवेदन है—हाँ, ऐसा होनेके लिये दो साधन हैं—'भगवान्का भजन और गौओंकी सेवा।' गौओंसे प्रेय और श्रेयकी प्राप्तिमें किस प्रकार सहायता मिलती है, यही यहाँ विचारणीय विषय है।

श्रीमद्भगवद्गीतामें बतलाया गया है कि लोकपितामह ब्रह्माजीने जब आदिकालमें समस्त प्रजाओंको उत्पन्न किया, तब उनके सामने यज्ञका आदर्श रखा और कहा—इसके द्वारा तुम सब लोग अपनी-अपनी उन्नति करो। यह तुम्हें अभीष्ट कामनाओं—मनोवाञ्छित भोगोंको देनेवाला होगा। इससे तुम्हें 'इष्ट काम' अर्थात् प्रेयकी प्राप्ति होगी—'**अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्।**' (गीता ३। १०) इतना ही नहीं, तुम लोग इस यज्ञके द्वारा देवताओंकी उन्नति करो और देवता भी तुम्हें उन्नत अवस्थामें पहुँचावें। इस प्रकार स्वार्थ छोड़कर एक-दूसरेकी उन्नतिके लिये प्रयत्न करते हुए तुम सब लोग परम श्रेय (मोक्ष) को प्राप्त होओगे—

परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥
(गीता ३। ११)

इस प्रकार यज्ञको प्रेय और श्रेय दोनोंकी प्राप्तिका साधन बताया गया है। यज्ञके दो स्वरूप हैं—एक तो भगवत्प्रीत्यर्थ किये जानेवाले सभी कर्मोंको यज्ञ कहते हैं और दूसरा वेदोक्त विधिके अनुसार किया जानेवाला यजनरूप कर्म भी यज्ञ कहलाता है। यहाँ 'यज्ञ' शब्दसे दोनों ही प्रकारके कर्म अभीष्ट हैं। गोमाताकी सहायतासे हम दोनों ही प्रकारके यज्ञ करनेमें सफल हो प्रेय और श्रेयके अधिकारी बन सकते हैं।

ब्राह्मण और गौ दोनों ब्रह्माजीकी संतान हैं। ब्रह्माजीकी संतति होनेसे ही उनकी 'ब्राह्मण' संज्ञा हुई है। इसी प्रकार गौएँ भी ब्रह्माजीकी ही पुत्री हैं। इसीलिये शास्त्रोंमें '**नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च**' कहकर उनकी वन्दना की गयी है। इन दोनोंके सहयोगसे वैदिक यज्ञकी सिद्धि होती है। ब्राह्मणोंमें वेदमन्त्र प्रतिष्ठित हैं और गौओंमें हविष्यकी स्थिति है[१]।

यहाँ 'गौ' कहनेसे गोमाताका ग्रहण तो होता ही है, धरती माताका भी ग्रहण होता है। ये दोनों ही गोशब्दके वाच्यार्थ हैं। इसके सिवा धरती भी ब्रह्माजीकी ही पुत्री है और इसका आधिदैविक रूप भी गौ ही है। राजा पृथुने गोरूपमें ही पृथ्वीका दोहन किया था। असुरभावापन्न राजाओंके भारसे पीडित होकर पृथ्वीने गोरूपसे ही भगवान्को पुकारा था और महाराज परीक्षित्ने दिग्विजयके समय गोरूपमें ही पृथ्वीका दर्शन किया था। वस्तुतः धेनु और धरतीमें कोई भेद नहीं है। इन दोनों रूपोंमें प्रतिष्ठित हुई गौसे हविष्य (हवनीय पदार्थ) की उत्पत्ति होती है। धेनुसे दूध और धरतीसे अन्न होता है। यो दोनों हवि हैं। अन्नका संस्कार करके नाना भाँतिके हवनोपयोगी पदार्थ तैयार किये जाते हैं। इसी प्रकार दूधसे भी दही, घी आदि

१-ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधाकृतम्। एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरन्यत्र तिष्ठति॥

अनेक प्रकारके हविष्य बनते हैं। ब्राह्मणोंद्वारा उच्चारित वेदमन्त्रसे गौके द्वारा प्रस्तुत किये हुए हवनीय पदार्थोंकी जो अग्निमें आहुति दी जाती है, उससे भाँति-भाँतिके विभिन्न यज्ञ सम्पन्न होते हैं। इस यज्ञरूप धर्मके दो फल हैं—अभ्युदय और निःश्रेयस। दूसरे शब्दोंमें प्रेय और श्रेय। गीता तो इसका समर्थन करती ही है, वैशेषिक दर्शनमें भी धर्मके ये ही दो फल माने गये हैं। इन्हींमें अन्य सारे फलोंका समावेश हो जाता है। इन्हीं दो फलोंके आधारपर धर्मकी परिभाषा निश्चित की गयी है—'**यतोऽभ्युदय-निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः**।' अभ्युदय अथवा प्रेय लौकिक सुखका नाम है। इसमें राज्य, धन, स्त्री, पुत्र, गृह, परिवार, दास, दासी, शय्या, वाहन तथा वस्त्राभूषण आदि सभी वस्तुओंका अन्तर्भाव है। निःश्रेयस या श्रेय भगवत्प्राप्ति और मोक्षके ही नामान्तर हैं। यही मानव-जीवनका चरम एवं परम पुरुषार्थ है। इसे पाकर फिर और कुछ पाना शेष नहीं रहता।

गोदान तथा गोपूजन

(क) गोदानकी सामान्य बातें

गोदान एवं गोपूजनका फल

गौएँ प्राणियोंको दूध पिलानेके कारण प्राण कहलाती हैं। इसलिये जो दूध देनेवाली गौका दान देता है, वह मानो प्राण-दान करता है। वेदके विद्वान् कहते हैं कि गौएँ समस्त प्राणियोंको शरण देनेवाली हैं; इसलिये जो धेनुदान करता है, वह सबको शरण देनेवाला है।[१]

गोदान करनेसे मनुष्य अपनी सात पीढ़ी पहलेके पितरोंका और सात पीढ़ी आनेवाली संतानोंका उद्धार करता है। (महा०, अनु० ७४। ८)

जो एक गाय और एक बैल दान करता है, उसे वेदाध्ययनके फलकी प्राप्ति होती है तथा जो विधिपूर्वक गौओंका दान करता है, उसे उत्तम लोक मिलते हैं। (महा०, अनु० ७६। २०)

न्यायसे प्राप्त की हुई एक भी कपिला गौका दान देनेसे पुरुष पापोंसे छूट जाता है। (महा०, अनु० ७१। ५१)

वात्सल्य-गुणसे युक्त एवं उत्तम लक्षणोंवाली जवान गौको वस्त्र ओढ़ाकर ब्राह्मणको दान करनेसे मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो जाता है और उसे असुर्य नामक अन्धकारमय लोकों (नरकों) में नहीं जाना पड़ता। (महा०, अनु० ७७। ४-५)

जो मनुष्य प्रतिदिन जौ आदिके द्वारा गौकी पूजा करता है, उसके पितृगण और देवता सदा तृप्त होते हैं। जो सदाचारी पुरुष नियमपूर्वक प्रतिदिन गायोंको खिलाता है, वह सच्चे धर्मके बलसे सारे मनोरथोंको प्राप्त करता है। जो व्यक्ति गौओंके शरीरसे गंदगी, मच्छर आदि हटा देता है, उसके पूर्वज कृतार्थ होते हैं। यहाँतक कि 'यह भाग्यवान् संतान हमारा उद्धार कर देगा' यह सोचकर वे उस अत्यन्त उत्सवमय कार्यके लिये आनन्दसे नाचने लगते हैं। (पद्म०, पाताल० अ०, १८)

जो मनुष्य सबेरे उठकर हाथमें जलका पात्र लेकर गौओंमें जाता है, उनके सींगोंको सींचता है और फिर उस जलको अपने मस्तकपर धारण करके उस दिन उपवास करता है, उसे बहुत पुण्य होता है। तीनों लोकोंमें सिद्ध, चारण और महर्षियोंके द्वारा सेवित जितने तीर्थ हैं, गौओंके सींग-जलका अभिषेक उन सब तीर्थोंमें स्नान करनेके समान है। (पद्म०, सृष्टि०, अ० १८)

दानके योग्य गौ

दुग्धवती, खरीदी हुई, विद्याके प्रभावसे पायी हुई, प्राणोंकी भी अपेक्षा न कर पराक्रमसे पायी हुई, विवाहमें ससुर आदिसे मिली हुई, दुःखसे छुड़ायी हुई और अपने पोषणके लिये आयी हुई गौ प्रशंसनीय मानी जाती है। बलवती शीलसम्पन्न तथा तरुण और उत्तम गन्धवाली सभी गौएँ प्रशंसनीय मानी जाती हैं, परंतु जैसे नदियोंमें गङ्गा नदी श्रेष्ठ मानी जाती है, इसी प्रकार गौओंमें कपिला गौ उत्तम मानी जाती है। (महा०, अनु० ७३। ४१-४२)

जो गौ सीधी-सूधी हो, दुहते समय तंग न करती हो,

१-प्राणा वै प्राणिनामेते प्रोच्यन्ते भरतर्षभ। तस्माद् ददाति यो धेनुं प्राणानेष प्रयच्छति॥
गावः शरण्या भूतानामिति वेदविदो विदुः। तस्माद् ददाति यो धेनुं शरणं सम्प्रयच्छति॥ (महा०, अनु० ६६। ४९-५०)

जिसका बछड़ा सुन्दर हो, जो बन्धन तोड़कर भागती न हो—ऐसी गौका दान करनेसे उसके शरीरमें जितने रोएँ होते हैं, उतने वर्षोंतक दाता परलोकमें सुख भोगता है।[1]

सुन्दर स्वभाववाली, घास आदि चरनेमें अभ्यस्त, जवान, बछड़ेवाली, न्यायसे प्राप्त की हुई, दुधार गाय ब्राह्मणको देनी चाहिये। (स्कन्दपु०, प्रभासखण्डश्रेत्रमा० २०८)

जिसके बछड़ेका मुख बाहर न आया हो, केवल दो पैर बाहर निकले हों, इस प्रकारकी अवस्थामें गाय पृथ्वीरूपा होती है। ऐसी गायको जो मनुष्य सोनेके सींग, चाँदीके खुर, ताँबेकी पीठ, काँसीका दुहनेका बर्तन और गहने-कपड़ोंसे सजाकर तथा गन्ध-पुष्पादिसे पूजकर वेदज्ञ ब्राह्मणको दान करता है, वह नित्य विष्णुलोकमें निवास करता है। (पद्मपु०, सृष्टि० ४८। १७३—१७५)

ऐसे ही वचन याज्ञवल्क्यस्मृति, अत्रिस्मृति, संवर्तस्मृति, बृहस्पतिस्मृति, मत्स्यपुराण, स्कन्दपुराण, महाभारत तथा अन्यान्य स्मृतियों और पुराणोंमें बहुत जगह मिलते हैं।

दानके अयोग्य गौ

बिना सींगकी तथा बूढ़ी गौका दान करनेसे दाताके भोग नष्ट होते हैं। लँगड़ी, लूली और कानी गौका दान करनेसे दाताका अध:पतन होता है और हानि होती है। अत्यन्त दुबली गौका दान करनेसे घर-बार नष्ट हो जाते हैं। (अथर्ववेद १२। ४। ३)

जो गौएँ पानी नहीं पी सकतीं, घास-चारा नहीं खा सकतीं, जिनकी इन्द्रियाँ क्षीण हो चुकी हैं, जो दूध नहीं दे सकतीं ऐसी गौओंका दान करनेवाला पुरुष सुखहीन लोकोंको प्राप्त होता है।[2]

जिसका घास खाना और पानी पीना समाप्त हो चुका हो, जिसका दूध नष्ट हो गया हो, जिसकी इन्द्रियाँ काम न दे सकती हों, अर्थात् जो बूढ़ी और रोगिणी होनेके कारण जीर्ण-शीर्ण शरीरवाली हो गयी हों, ऐसी गौका दान करनेवाला मनुष्य, ब्राह्मणको व्यर्थ कष्टमें डालता है और स्वयं भी घोर नरकमें पड़ता है। क्रोध करनेवाली, मरकही, रुग्णा, दुबली-पतली तथा जिसका दाम न चुकाया गया हो, ऐसी गौका दान करना कदापि उचित नहीं है। (महा०, अनु० ७७। ५—७)

बाँझ, बीमार, अङ्गहीन, दुष्ट स्वभाववाली, बूढ़ी, जिसकी संतान मर गयी हो तथा अन्यायसे प्राप्त की हुई गायका दान नहीं करना चाहिये। जो मनुष्य देवताके लिये ऐसी गायका दान करता है, वह उलटा बहुत-से क्लेशोंको भोगकर नीची गतिको प्राप्त होता है। भड़की हुई, क्लेश भोगती हुई, कमजोर और रोगिणी तथा जिसका मूल्य नहीं चुकाया गया है, ऐसी गायका दान नहीं करना चाहिये। जिस गायसे लेनेवाले ब्राह्मणको क्लेश हो, वैसी गाय दाताके सभी लोकोंको विफल कर देती है, वह किसी भी उत्तम लोकमें नहीं जा सकता। (स्कन्द०, प्रभासक्षेत्रमा० २७८। २३—२५)

जो दुबली हो, जिसका बछड़ा मर गया हो तथा जो ठाँठ, रोगिणी, अङ्गहीन और बूढ़ी हो, ऐसी गौ ब्राह्मणको नहीं देनी चाहिये। (महा०, अनु० ६६। ५३)

इसी प्रकारके वचन अधिकांश पुराणों और स्मृतियोंमें भी मिलते हैं।

गोदानके पात्र और अपात्र

जिसके बहुत-सी संतानें हों ऐसे याचक, श्रोत्रिय तथा अग्निहोत्री ब्राह्मणको दस गौ दान करनेसे दाताको अत्यन्त उत्तम लोकोंकी प्राप्ति होती है। (महा०, अनु० ६९। १६)

जो स्वाध्यायसम्पन्न, शुद्धयोनि (कुलीन) शान्तचित्त, यज्ञपरायण, पापसे डरनेवाला, बहुज्ञ, गौओंपर क्षमाका भाव रखनेवाला, मृदुलस्वभाव, शरणागतवत्सल और जीविकाहीन हो, ऐसे ब्राह्मणको गो-दानका उत्तम पात्र बताया गया है। जो जीविकाके बिना बहुत कष्ट पा रहा हो तथा जिसको खेती या यज्ञ-होम करने, प्रसूता स्त्रीको दूध पिलाने तथा गुरु-सेवा अथवा बालकका लालन-पालन करनेके लिये गौकी आवश्यकता हो, उसको साधारण देश-कालमें भी दूध देनेवाली गौका दान करना चाहिये।[3]

गौ, भूमि, तिल, सोना आदि जो कुछ भी दान देने हों, वह सुपात्र ब्राह्मणको दे, कुपात्रको नहीं। (याज्ञवल्क्य-स्मृति)

पास रहनेवाले मूर्ख ब्राह्मणको छोड़कर दूर रहनेवाले

१-दत्त्वा धेनुं सुव्रतां साधुदोहां कल्याणवत्समपलायिनीं च। यावन्ति रोमाणि भवन्ति तस्यास्तावन्ति वर्षाणि भवन्त्यमुत्र॥
(महा०, अनु० ७३। ४४)

२-पीतोदका जग्धतृणा दुग्धदोहा निरिन्द्रियाः। अनन्दा नाम ते लोकास्तान् स गच्छति ता ददत्॥ (कठ० १। १। ३)

३-स्वाध्यायाढ्यं शुद्धयोनिं प्रशान्तं वैतानस्थं पापभीरुं बहुज्ञम्। गोषु क्षान्तं नातितीक्ष्णं शरण्यं वृत्तिग्लानं तादृशं पात्रमाहुः॥
वृत्तिग्लाने सीदति चातिमात्रं कृष्यर्थे वा होम्यहेतोः प्रसूतेः। गुर्वर्थं वा बालसंवृद्धये वा धेनुं दद्याद् देशकालेऽविशिष्टे॥
(महा०, अनु० ७३। ३९-४०)

वेदज्ञ ब्राह्मणको बुलाकर दान देना चाहिये। (कात्यायन-स्मृति)

गोभिल, व्यास, शातातप, बृहस्पति और वसिष्ठादि स्मृतियोंमें भी ऐसे ही वचन मिलते हैं।

जो ब्राह्मण स्वाध्यायपरायण, कुलीन, प्रशान्त, अग्निहोत्री, पापसे डरनेवाला, बहुत विषयोंका जानकार, स्त्रियोंमें क्षमाशील, धर्मात्मा, गो-सेवामें तत्पर और व्रतोंका पालन करते-करते थक गया है, उसीको सुपात्र कहते हैं। (वसिष्ठस्मृति)

दुराचारी, पापी, लोभी, असत्यवादी तथा देवयज्ञ और श्राद्धकर्म न करनेवाले ब्राह्मणको किसी तरह गौ नहीं देनी चाहिये। (महा०, अनु० ६९। १५)

जो मनुष्य वध करनेके लिये गौ माँग रहा हो उसको और नास्तिकको तथा कसाई और गौसे जीविका चलानेवालेको भी गौ नहीं देनी चाहिये। वैसे पापियोंको देनेवाला पुरुष अक्षय नरकमें पड़ता है। (महा०, अनु० ६६। ५१-५२)

जैसे कच्चे मिट्टीके बर्तनमें रखनेसे दूध, दही, घी और मधु पात्रकी दुर्बलतासे नष्ट हो जाते हैं और साथ ही वह पात्र भी नष्ट हो जाता है, वैसे ही गौ, स्वर्ण, वस्त्र, अन्न आदिका दान लेनेसे मूर्ख ब्राह्मण और दानका फल—ये दोनों नष्ट हो जाते हैं। (बृहस्पतिस्मृति)

ऐसे ही वचन वसिष्ठस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, बृहत्-पराशरस्मृति और मनुस्मृति आदिमें मिलते हैं।

तप और वेदाध्ययनसे रहित ब्राह्मण दान लेनेपर पत्थरकी नाव जैसे चढ़नेवालेको साथ लेकर डूब जाती है, वैसे ही दाताको साथ लेकर डूब जाता है।

गोदानसे कौन-कौन लोग श्रेष्ठ लोकोंको प्राप्त हुए?

उशीनरो विष्वगश्वो नृगश्च भगीरथो विश्रुतो यौवनाश्वः।
मान्धाता वै मुचुकुन्दश्च राजा भूरिद्युम्नो नैषधः सोमकश्च॥
पुरूरवो भरतश्चक्रवर्ती यस्यान्ववाये भरताः सर्व एव।
तथा वीरो दाशरथिश्च रामो ये चाप्यन्ये विश्रुताः कीर्तिमन्तः॥
तथा राजा पृथुकर्मा दिलीपो दिवं प्राप्तो गोप्रदानैर्विधिज्ञः।

(महा०, अनु० ७६। २५—२७)

उशीनर, विष्वगश्व, नृग, भगीरथ, प्रसिद्ध यौवनाश्व-मान्धाता, मुचुकुन्द, भूरिद्युम्न, नैषध, सोमक, पुरूरवा, चक्रवर्ती भरत, जिसके वंशके सभी राजा भारत कहलाये, शूरवीर दशरथपुत्र रामचन्द्र, प्रसिद्ध कीर्तिवाले अन्य नरेन्द्र और विशालकर्मा राजा दिलीप—ये सभी गोदान करके दिव्य लोकोंको प्राप्त हुए।

(ख) गोदानके लिये गौओंके भेद

जन्म, विवाह और मृत्यु तथा अन्य विभिन्न शुभ अवसरोंपर तथा प्रायश्चित्तके लिये गोदानकी विशेष रूपसे महिमा बतायी गयी है। शास्त्रोंमें गौके कई प्रकार के भेद बताये गये हैं। विभिन्न कामनाओंसे विभिन्न प्रकारकी गायोंके दानका वर्णन है।

मरणासन्न-अवस्थामें अथवा इससे पहले किसी भी समय निम्नलिखित पाँच प्रकारकी धेनुओंका दान करना चाहिये—(१) ऋणधेनु, (२) पापापनोदनधेनु, (३) वैतरणीधेनु, (४) मोक्षधेनु और (५) उत्क्रान्तिधेनु।

यदि पाँच प्रत्यक्ष गौ देनेकी सामर्थ्य न हो तो कम-से-कम एक गौ प्रत्यक्ष रूपमें देते हुए अन्य गौओंके लिये अपनी सामर्थ्यानुसार निष्क्रयीभूत द्रव्यका संकल्प कर दान करना चाहिये।[1]

प्रत्येक गौके दानके समय निम्न प्रकारसे प्रार्थना करनी चाहिये—

(१) ऋणधेनु-दान

अनेक जन्मोंके ऋणके नाशके लिये ऋणधेनुका दान किया जाता है। इससे देव, ऋषि, पितृ, मनुष्य तथा अन्य सभी सामान्य ऋणोंसे मुक्ति हो जाती है और उसपर कोई ऋण शेष नहीं रह जाता।

ऐहिकामुष्मिकं यच्च सप्तजन्मार्जितं त्वृणम्।
तत्सर्वं शुद्धिमायातु गामेतां ददतो मम॥

ऐहलौकिक तथा पारलौकिक सात जन्मोंमें अर्जित मुझपर जो ऋण है, वह सब इस ऋणधेनुके दानसे दूर हो जाय और मैं ऋणमुक्त होकर शुद्ध हो जाऊँ।

(२) पापापनोदनधेनु-दान

अनेक जन्मोपार्जित ज्ञाताज्ञात, कायिक, वाचिक, मानसिक तथा सांकल्पिक पापकी निवृत्तिके लिये पापापनोदनधेनुका दान किया जाता है।

आजन्मोपार्जितं पापं मनोवाक्कायसम्भवम्।
तत्सर्वं नाशमायातु गोप्रदानेन केशव॥

हे केशव! जन्म-जन्मान्तरोंका दुष्कर्मरूप जो पाप मेरे मन, वाणी तथा शरीरसे हो गया है वह सब इस पापापनोदन-

१-प्रत्यक्ष गौके उपलब्ध न होनेपर तन्निमित्तक निष्क्रयभूत द्रव्य भी दिया जा सकता है। इस अवस्थामें अक्षतपुञ्जस्थ पूगीफल (सुपारी)-पर गौका आवाहन कर पूजन करना चाहिये।

धेनुके दानसे नष्ट हो जाय।

(३) मोक्षधेनु-दान

जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त होकर भगवत्सायुज्य प्राप्त करना ही मोक्ष है, अतः मोक्ष-प्राप्तिके लिये मोक्षधेनुका दान किया जाता है।

मोक्षं देहि हृषीकेश मोक्षं देहि जनार्दन।
मोक्षधेनुप्रदानेन मुकुन्दः प्रीयतां मम॥

हे हृषीकेश! हे जनार्दन! मुझे आप जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्तकर मोक्ष प्रदान करें। इस मोक्षधेनुके दानसे भगवान् मुकुन्द मुझपर प्रसन्न हो जायँ।

(४) वैतरणीधेनु-दान

यमद्वारस्थित महाभयंकर वैतरणी नदीके सुखपूर्वक संतरणकी कामनासे कृष्णवर्णकी वैतरणीधेनुका दान किया जाता है।

धेनुके त्वं प्रतीक्षस्वक यमद्वारे महाभये।
उत्तितीर्षुरहं देवि वैतरण्ये नमोऽस्तु ते॥
यमद्वारे महाघोर कृष्णा वैतरणी नदी।
तां तर्तुकामो यच्छामि कृष्णां वैतरणीं तु गाम्॥
या सा वैतरणी प्रोक्ता पूयशोणितवाहिनी।
हेलया तर्तुकामस्तां कृष्णां गां विधिवद्ददे॥

हे वैतरणी गौ! महाभयंकर यमद्वारपर तुम मेरी प्रतीक्षा करना। हे देवि! मैं वैतरणीको पार करना चाहता हूँ, तुम्हें नमस्कार है। इसी उद्देश्यसे मैं कृष्ण वैतरणी-रूप धेनुका दान करता हूँ। वह वैतरणी नदी पीब एवं खूनसे भरी हुई है, अतः मैं उसे सुखपूर्वक पार करनेके लिये इस कृष्णा गौका विधिवत् दान करता हूँ।

(५) उत्क्रान्तिधेनु-दान

प्राण निकलते समय बहुत कष्ट होता है। कभी-कभी कई दिनतक प्राण अटके रह जाते हैं, इसमें कारणरूप जो प्रतिबन्धक बनता है, उस प्रतिबन्धककी निवृत्तिके लिये उत्क्रान्तिधेनुका दान किया जाता है।

अप्युत्क्रान्तौ प्रवृत्तस्य सुखोत्क्रमणसिद्धये।
तुभ्यमेनां सम्प्रददे धेनुमुत्क्रान्तिसंज्ञिकाम्॥

मरणासन्न-अवस्थामें सुखपूर्वक एवं शीघ्र प्राण निकल जायँ, इस उद्देश्यसे हे उत्क्रान्तिधेनु! मैं तुम्हें दानमें देता हूँ।

विभिन्न रंगोंकी गायोंके दानका फल

गोदानके प्रकरणमें विभिन्न रंगोंकी गौओंके दानका विभिन्न फल बताया गया है। कृष्ण वर्णकी गाय स्वर्गको प्राप्त कराती है, श्वेत गौ कुलकी वृद्धि करती है। रक्त गौ सुन्दर रूप प्रदान करती है और पीत वर्णकी गौ दुःख-दारिद्र्यका नाश करती है। कृष्णसारा (सफेद तथा कृष्णवर्ण-मिश्रित) गौका दान पुत्रकी प्राप्ति कराता है, नील वर्णकी गौ धर्मकी अभिवृद्धि करती है। कपिला गौ सभी पापोंका नाश करती है और अनेक रंगोंवाली गौ मोक्षको प्राप्त कराती है।)[१]

उभयमुखीधेनु-दान

उभयमुखी गौके दानका शास्त्रोंमें बड़ा महत्त्व बताया गया है और उसका फल भी अनन्त बताया गया है। ब्याती हुई गौ ही 'उभयमुखी गौ' कहलाती है। जबतक बछड़ा योनिके भीतर रहता है एवं जबतक गर्भ नहीं छोड़ता अर्थात् योनिसे बछड़ेका कोई भी किंचित् भी अङ्ग बाहर दिखलायी पड़ता है उस समय वह गोमाता उभयमुखी कहलाती है। उस समय उस गौको पृथ्वीका रूप कहा गया है। उस समय ऐसी गौका जो दान करता है, उसे सम्पूर्ण पृथ्वीके दानका फल प्राप्त होता है और उस बछड़ेके तथा गौके शरीरमें जितने रोएँ होते हैं, उतने युगोंतक दाता देवलोकमें पूजित होता है और अपने पितरोंका उद्धार कर देता है। उसे गोलोक और ब्रह्मलोक सुलभ हो जाते हैं।[२]

उभयमुखी गोदानमें सभी सामग्रियाँ पहलेसे तैयार रहनी चाहिये और ज्यों ही वत्सका किंचित् भी अङ्ग बाहर दिखलायी दे, बिना गौको स्पर्श किये ब्राह्मणको दानका संकल्प दे

१-कृष्णा स्वर्गप्रदा ज्ञेया गौरी च कुलवर्धिनी। रक्ता रूपप्रदा ज्ञेया पीता दारिद्र्यघातिनी॥
पुत्रप्रदा कृष्णसारा नीला धर्मविवर्धिनी। कपिला सर्वपापघ्नी नानावर्णा च मोक्षदा॥ (ब्रह्मपुराण)

२-प्रसूयमानां गां दत्त्वा महत्पुण्यफलं लभेत्। यावद्वत्सो योनिगतो यावद्गर्भं न मुञ्चति॥
तावद् वै पृथिवी ज्ञेया सशैलवनकानना। प्रसूयमानां यो दद्याद् धेनुं द्रविणसंयुताम्॥
ससमुद्रगुहा तेन सशैलवनकानना। चतुरन्ता भवेद् दत्ता पृथिवी नात्र संशयः॥
यावन्ति धेनुरोमाणि वत्सस्य च नराधिप। तावत्संख्यं युगगणं देवलोके महीयते॥
पितॄन् पितामहांश्चैव तथैव प्रपितामहान्। उद्धरिष्यत्यसंदेहं नरकाद् भूरिदक्षिणः॥
गोलोकः सुलभस्तस्य ब्रह्मलोकश्च पार्थिव॥ (मत्स्यपुराण अ० २०५)

देना चाहिये।

दशधेनु-दान

शास्त्रोंमें प्रत्यक्ष धेनु अथवा स्वरूपधेनुके अतिरिक्त निम्नलिखित द्रव्य-निर्मित धेनुओंके दान और उसके विशिष्ट फलका भी वर्णन मिलता है—

(१) गुडधेनु, (२) घृतधेनु, (४) तिलधेनु, (४) जलधेनु, (५) क्षीरधेनु, (६) मधुधेनु, (७) शर्कराधेनु, (८) दधिधेनु, (९) रसधेनु और (१०) प्रत्यक्ष धेनु (स्वरूपधेनु)। द्रव (बहनेवाले पदार्थों)से बननेवाली गौओंका स्वरूप घट है और अद्रव पदार्थोंसे बननेवाली गौओंका स्वरूप उन-उन पदार्थोंकी राशि है*। यथाविधि इन वस्तुओंके द्वारा गो-आकृति बनाकर उनमें धेनुकी भावना करते हुए आवाहन-पूजन करना चाहिये। श्रद्धापूर्वक इन गौओंके दानसे सभी भोग और मोक्षरूप फलकी प्राप्ति होती है।

उपर्युक्त दश धेनुओंके अतिरिक्त रत्नधेनु, सुवर्णधेनु, कार्पासधेनु, लवणधेनु, कर्पूरधेनु, सप्तव्रीहिधेनु तथा गोसहस्रदान आदिका भी विवरण प्राप्त होता है।

यहाँ सर्वसाधारणके लिये गोदानकी सामान्य विधि प्रस्तुत की जा रही है—

गोदान-विधि

गोदानकर्ता स्नानादिसे निवृत्त होकर शुभासनपर पूर्व दिशाकी ओर मुख करके बैठे और तिलक लगाकर आचमन तथा पवित्रीकरणसे शुद्ध होकर माङ्गलिक स्वस्ति-पाठ करे तथा दायें हाथमें जल, कुश, अक्षतादि ग्रहणकर निम्नलिखित संकल्प पढ़े—

संकल्प—ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः। ॐ अद्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे....क्षेत्रे[१] नगरे/ ग्रामे....नामसंवत्सरे[२]...मासे[३] [शुक्ल/कृष्ण] पक्षे... तिथौ[४]... वासरे[५]...गोत्र[६].....शर्मा/ वर्मा/गुप्तोऽहम्[७] ममात्मना सह एकविंशतिपुरुषोत्तारणपूर्वकं श्रीपरमेश्वरप्रीतिकामो गोदानं करिष्ये। तदङ्गं ब्राह्मणवरणं तत्पूजनं गोपूजनं च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं श्रीगणपत्यादीन् पूजयिष्ये।

संकल्पके अनन्तर गोपूजनसे पूर्व कार्यकी निर्विघ्नतापूर्वक सिद्धिके लिये श्रीमहागणपति, गौरी, नवग्रह आदि पञ्चाङ्ग-पूजन करे। अनन्तर गोदान ग्रहण करनेवाले सपत्नीक ब्राह्मणका वरण-पूजन करे और फिर उत्तम लक्षणोंसे युक्त, सुशील सवत्सा गौका निम्न मन्त्रसे जल छिड़ककर प्रोक्षण करे—

गौका प्रोक्षण—

इरावती धेनुमती हि भूतꣳसूयवसिनी मनवे दशस्या।
व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा॥

(यजु० ५। १६)

प्रोक्षणके अनन्तर निम्न मन्त्रसे पुष्प लेकर गौ माताका ध्यान करे—

---

* प्रथमा गुडधेनुः स्याद् घृतधेनुस्तथापरा। तिलधेनुस्तृतीय तु चतुर्थी जलसंज्ञिता॥
क्षीरधेनुश्च विख्याता मधुधेनुस्तथापरा। सप्तमी शर्कराधेनुर्दधिधेनुस्तथाष्टमी॥
रसधेनुश्च नवमी दशमी स्यात् स्वरूपतः॥
कुम्भाः स्युर्द्रवधेनूनामितरासां तु राशयः। यथाश्रद्धं प्रदातव्या भुक्तिमुक्तिफलप्रदाः॥ (मत्स्यपुराण अ० ८२)

१-यदि किसी तीर्थमें गोदान कर रहे हों तो उस रिक्त स्थानमें तीर्थका नाम, नगरमें हों तो उस नगरका नाम और गाँवमें हों तो उस गाँवका नाम जोड़ दे।

२-पञ्चाङ्गोंमें पहले पृष्ठपर ही संवत्सरका नाम लिखा रहता है। रिक्त स्थानमें संवत्सरका वह नाम जोड़ दे। वर्षके आरम्भवाला संवत्सर ही संकल्पादिमें जोड़ा जाता है, बादवाला नहीं।

३-चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन—इन शब्दोंको आवश्यकतानुसार रिक्त स्थानमें जोड़ दे।

४-प्रतिपद्, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावास्या या पूर्णिमा—इन शब्दोंको तिथिके पहले रिक्त स्थानमें जोड़ दे।

५-रवि, सोम, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि—इन दिनोंमेंसे एकको दिनके अनुसार रिक्त स्थानमें जोड़ दे।

६-कश्यप, भरद्वाज आदि अपना गोत्र रिक्त स्थानोंमें जोड़ दे।

७-ब्राह्मण अपने नामके अन्तमें शर्मा, क्षत्रिय अपने नामके अन्तमें वर्मा और वैश्य अपने नामके अन्तमें गुप्त रिक्त स्थानमें जोड़ दे।

ध्यान-मन्त्र—

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥
गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश।
यस्मात् तस्माच्छिवं मे स्यादिह लोके परत्र च॥

ॐ सुरभ्यै नमः, ध्यानार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। (ऐसा कहकर गौके चरणोंमें पुष्प चढ़ा दे।)

श्रीमती गौओंको नमस्कार कामधेनुकी संतानोंको नमस्कार, ब्रह्माजीकी पुत्रियोंको नमस्कार और पावन करनेवाली गौओंको नमस्कार। गौओंके अङ्गोंमें चौदहों भुवन स्थित हैं अत: मेरा इस लोकमें एवं परलोकमें भी कल्याण हो।

फिर नीचेके मन्त्रसे सर्वदेवमयी गौका तथा गौके अङ्गोंमें स्थित देवताओंका अक्षत छोड़ते हुए आवाहन करे—

आवाहन—

आवाहयाम्यहं देवीं गां त्वां त्रैलोक्यमातरम्।
यस्याः स्मरणमात्रेण सर्वपापप्रणाशनम्॥
त्वं देवी त्वं जगन्माता त्वमेवासि वसुन्धरा।
गायत्री त्वं च सावित्री गङ्गा त्वं च सरस्वती॥
आगच्छ देवि कल्याणि शुभां पूजां गृहाण च।
वत्सेन सहितां त्वाहं देवीमावाहयाम्यहम्॥

ॐ सुरभ्यै नमः, सुरभीमावाहयामि। आवाहनार्थे अक्षतान् समर्पयामि। (अक्षत छोड़े।)

जिस गौ माताके स्मरण करनेमात्रसे सम्पूर्ण पापोंका नाश हो जाता है, ऐसी तीनों लोकोंकी माता हे गौ देवि! मैं तुम्हारा आवाहन करता हूँ। हे देवी! तुम संसारकी माता हो, तुम्हीं वधुन्धरा, गायत्री, सावित्री, गङ्गा तथा सरस्वती हो। हे कल्याणमयी देवि! तुम आकर मेरी शुभ पूजाको ग्रहण करो। बछड़ेके सहित देवीस्वरूपा तुम्हारा मैं आवाहन करता हूँ।

इसी प्रकार गौके अङ्गोंमें स्थित सभी देवताओंका भी आवाहन करे—

[१] **शृङ्गमूलयोर्ब्रह्मविष्णुभ्यां नमः, ब्रह्मविष्णू आवाहयामि।**

(गौ माताके शृंग-मूलमें स्थित ब्रह्मा-विष्णुको नमस्कार है, मैं ब्रह्मा और विष्णुका आवाहन करता हूँ।)

[२] **शृङ्गाग्रे सर्वतीर्थेभ्यो नमः, सर्वतीर्थानावाहयामि।**

(शृंगके अग्रभागमें स्थित समस्त तीर्थोंको नमस्कार है, मैं समस्त तीर्थोंका आवाहन करता हूँ।)

[३] **शिरोमध्ये महादेवाय नमः, महादेवमावाहयामि।**

(सिरके मध्य-भागमें स्थित महादेव भगवान् शंकरको नमस्कार है, मैं भगवान् महादेवका आवाहन करता हूँ।)

[४] **ललाटाग्रे गौर्यै नमः, गौरीमावाहयामि।**

(ललाटके अग्रभागमें स्थित भगवती गौरीको नमस्कार है, मैं भगवती गौरीका आवाहन करता हूँ।)

[५] **नासावंशे षण्मुखाय नमः, षण्मुखमावाहयामि।**

(नासावंशमें स्थित भगवान् कार्तिकेयको नमस्कार है, मैं कार्तिकेयका आवाहन करता हूँ।)

[६] **नासापुटयोः कम्बलाश्वतराभ्यां नमः, कम्बलाश्वतरौ आवाहयामि।**

(नासापुटोंमें स्थित कम्बल एवं अश्वतर नागोंको नमस्कार है, मैं इनका आवाहन करता हूँ।)

[७] **कर्णयोरश्विभ्यां नमः, अश्विनौ आवाहयामि।**

(दोनों कानोंमें स्थित अश्विनीकुमारको नमस्कार है, मैं अश्विनीकुमारोंका आवाहन करता हूँ।)

[८] **नेत्रयोः शशिभास्कराभ्यां नमः, शशिभास्करौ आवाहयामि।**

(गौके दोनों नेत्रोंमें स्थित सूर्य और चन्द्रमाको नमस्कार है, मैं सूर्य और चन्द्रमाका आवाहन करता हूँ।)

[९] **दन्तेषु सर्ववायवे नमः, वायुमावाहयामि।**

(दाँतोंमें स्थित सम्पूर्ण वायुओंको नमस्कार है, मैं वायुदेवताओंका आवाहन करता हूँ।)

[१०] **जिह्वायां वरुणाय नमः, वरुणमावाहयामि।**

(जिह्वामें स्थित वरुणदेवको नमस्कार है, मैं वरुणदेवका आवाहन करता हूँ।)

[११] **हुंकारे सरस्वत्यै नमः, सरस्वतीमावाहयामि।**

(गौके हुंकारमें स्थित सरस्वतीको नमस्कार है, मैं भगवती सरस्वतीका आवाहन करता हूँ।)

[१२] **गण्डयोर्मासपक्षाभ्यां नमः, मासपक्षौ आवाहयामि।**

(दोनों गण्डस्थलोंमें स्थित मास और दोनों पक्षोंको नमस्कार है, मैं मास और पक्षोंका आवांहन करता हूँ।)

[१३] **ओष्ठयोः संध्याद्वयाय नमः, संध्याद्वयम् आवाहयामि।**

(दोनों ओष्ठोंमें स्थित दोनों संध्याओंको नमस्कार है, मैं दोनों संध्याओंका आवाहन करता हूँ।)

[१४] **ग्रीवायामिन्द्राय नमः, इन्द्रम् आवाहयामि।**

(ग्रीवामें अवस्थित इन्द्रको नमस्कार है, मैं इन्द्रदेवताका आवाहन करता हूँ।)

[१५] **गलकम्बले रक्षोभ्यो नमः, रक्षांसि आवाहयामि।**

(गलकम्बलमें अवस्थित रक्षोगणोंको नमस्कार है, मैं इनका आवाहन करता हूँ।)

[१६] **उरसि साध्येभ्यो नमः, साध्यान् आवाहयामि।**

(वक्षःस्थलमें स्थित साध्यदेवगणोंको नमस्कार है, मैं साध्योंका आवाहन करता हूँ।)

[१७] **जंघयोर्धर्माय नमः, धर्मम् आवाहयामि।**

(दोनों जंघाओंमें स्थित धर्मको नमस्कार है, मैं धर्मदेवताका आवाहन करता हूँ।)

[१८] **खुरमध्ये गन्धर्वेभ्यो नमः, गन्धर्वम् आवाहयामि।**

(गौके खुरोंके बीचमें विराजमान गन्धर्वोंको नमस्कार है, मैं गन्धर्वोंका आवाहन करता हूँ।)

[१९] **खुराग्रेषु पन्नगेभ्यो नमः, पन्नगान् आवाहयामि।**

(खुरोंके अग्रभागमें स्थित पन्नगोंको नमस्कार है, मैं पन्नगोंका आवाहन करता हूँ।)

[२०] **खुरपार्श्वे अप्सरोगणेभ्यो नमः, अप्सरोगणान् आवाहयामि।**

(खुरोंके पार्श्वभागमें स्थित अप्सरागणोंको नमस्कार है, मैं अप्सरागणोंको आवाहन करता हूँ।)

[२१] **पृष्ठे एकादशरुद्रेभ्यो नमः, एकादशरुद्रान् आवाहयामि।**

(गौके पीठमें स्थित ग्यारह रुद्रोंको नमस्कार है, मैं ग्यारह रुद्रोंका आवाहन करता हूँ।)

[२२] **सर्वसन्धिषु वसुभ्यो नमः, वसून् आवाहयामि।**

(समस्त जोड़ोंमें स्थित वसु नामक देवताओंको नमस्कार है, मैं वसुदेवताओंका आवाहन करता हूँ।)

[२३] **श्रोणीतटे पितृभ्यो नमः, पितॄन् आवाहयामि।**

(श्रोणीतट (नाभिके अगल-बगल कटि-भाग) में स्थित पितरोंको नमस्कार है, मैं पितरोंका आवाहन करता हूँ।)

[२४] **पुच्छे सोमाय नमः, सोमम् आवाहयामि।**

(पूँछमें स्थित सोमदेवताको नमस्कार है, मैं सोमदेवका आवाहन करता हूँ।

[२५] **अधोगात्रेषु द्वादशादित्येभ्यो नमः, द्वादशादित्यान् आवाहयामि।**

(गौ माताके शरीरके निचले भागोंमें स्थित द्वादश आदित्योंको नमस्कार है, मैं द्वादश आदित्योंका आवाहन करता हूँ।

[२६] **केशेषु सूर्यरश्मिभ्यो नमः, सूर्यरश्मीन् आवाहयामि।**

(केशोंमें स्थित सूर्यरश्मियोंको नमस्कार है, मैं सूर्यरश्मियोंका आवाहन करता हूँ।)

[२७] **गोमूत्रे गङ्गायै नमः, गङ्गाम् आवाहयामि।**

(गौके मूत्रमें स्थित भगवती गङ्गाको नमस्कार है, मैं गङ्गादेवीका आवाहन करता हूँ।)

[२८] **गोमये यमुनायै नमः, यमुनाम् आवाहयामि।**

(गोमयमें स्थित यमुनाको नमस्कार है, मैं देवी यमुनाका आवाहन करता हूँ।)

[२९] **क्षीरे सरस्वत्यै नमः, सरस्वतीमावाहयामि।**

(दूधमें स्थित सरस्वतीदेवीको नमस्कार है, मैं सरस्वतीदेवीका आवाहन करता हूँ।)

[३०] **दध्नि नर्मदायै नमः, नर्मदाम् आवाहयामि।**

(दहीमें स्थित नर्मदादेवीको नमस्कार है, मैं नर्मदादेवीका आवाहन करता हूँ।)

[३१] **घृते वह्नये नमः, वह्निम् आवाहयामि।**

(घृतमें स्थित वह्निदेवको नमस्कार है, मैं वह्निदेवका आवाहन करता हूँ।)

[३२] **रोमसु त्रयस्त्रिंशत्कोटिदेवेभ्यो नमः, त्रयस्त्रिंशत्कोटिदेवान् आवाहयामि।**

(गौ माताके रोमोंमें स्थित तैंतीस कोटि देवताओंको नमस्कार है, मैं तैंतीस कोटि देवताओंका आवाहन करता हूँ।)

[३३] **उदरे पृथिव्यै नमः, पृथिवीम् आवाहयामि।**

(उदरमें स्थित पृथिवीदेवीको नमस्कार है, मैं पृथिवीदेवीका आवाहन करता हूँ।)

[३४] **स्तनेषु चतुर्भ्यः सागरेभ्यो नमः, चतुरः सागरान् आवाहयामि।**

(स्तनोंमें स्थित चारों सागरोंको नमस्कार है, मैं चारों सागरोंका आवाहन करता हूँ।)

[३५] **सर्वशरीरे कामधेनवे नमः, कामधेनुम् आवाहयामि।**

(गौ माताके सम्पूर्ण शरीरमें विराजमान कामधेनुको नमस्कार है, मैं कामधेनुका आवाहन करता हूँ।)

—इस प्रकार सर्वदेवमयी गौका आवाहन करनेके

पश्चात् निम्न मन्त्रोंसे पूजन करे। सर्वप्रथम गौदेवीको निम्न मन्त्रसे आसन प्रदान करे—

आसन—नानारत्नसमायुक्तं कार्तस्वरविभूषितम्।
आसनं ते मया दत्तं गृहाण जगदम्बिके॥

ॐ सुरभ्यै नमः, आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। (पुष्प चढ़ाये।)

हे जगज्जननी! नाना रत्नोंसे जटित एवं स्वर्णसे विभूषित यह आसन मैंने तुम्हें दिया है, इसे स्वीकार करो।

[फिर पाद्यके लिये जल अर्पण करे]

पाद्य—सौरभेयि सर्वहिते पवित्रे पापनाशिनि।
प्रतिगृहाण मया दत्तं पाद्यं त्रैलोक्यवन्दिते॥

ॐ सुरभ्यै नमः, पादयोः पाद्यं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

हे सर्वहितकारिणी पापनाशिनी, पावनकारिणी, त्रैलोक्यवन्दिता कामधेनुपुत्री! मेरे द्वारा अर्पित इस पाद्य-जलको ग्रहण करो।

[तदनन्तर निम्न मन्त्रसे अर्घ्य प्रदान करे]

अर्घ्य—देहे स्थितासि रुद्राणि शंकरस्य सदा प्रिया।
धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु॥

ॐ सुरभ्यै नमः, अर्घ्यं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

हे रुद्राणी गौ! तुम भगवान् शंकरको सदा प्यारी हो तथा उनकी आधी देहमें स्थित रहती हो, वही तुम गौके रूपमें मेरे पापका नाश करो।

[तदनन्तर आचमनके लिये जल दे]

आचमन—

या लक्ष्मीः सर्वभूतेषु या च देवेष्ववस्थिता।
धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु॥

ॐ सुरभ्यै नमः, आचमनीयं जलं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

जो लक्ष्मीदेवी समस्त प्राणियोंमें व्याप्त हैं और जिनका देवताओंमें निवास है, वही देवी गौके रूपमें मेरे पापको नष्ट करें।

[फिर निम्न, मन्त्रसे स्नान कराये]

स्नान—

सर्वदेवमयी मातः सर्वदेवनमस्कृते।
तोयमेतत् सुखस्पर्शं स्नानार्थं गृह्य धेनुके॥

ॐ सुरभ्यै नमः, स्नानीयं जलं समर्पयामि। (जल समर्पण करे।)

समस्त देवताओंद्वारा वन्दित हे कामधेनु माँ! तुम सर्वदेवमयी हो। स्पर्शमात्रसे आनन्द प्रदान करनेवाले इस जलको स्नानके लिये ग्रहण करो।

आचमन देनेके पश्चात् सम्भव होनेपर पञ्चामृत तथा शुद्धोदक आदिसे स्नान कराकर '**आ गावो अग्मन्०**' इत्यादि सूक्तसे अथवा श्रीसूक्त या पुरुषसूक्तसे महाभिषेक करे।

[अभिषेकके बाद वस्त्र अर्पित करे]

वस्त्र—

आच्छादनं गवे दद्यां सम्यक् शुद्धं सुशोभनम्।
सुरभिर्वस्त्रदानेन प्रीयतां परमेश्वरी॥

ॐ सुरभ्यै नमः, वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि। (वस्त्र अर्पित करे।)

मैं गोमाताको अत्यन्त शुद्ध एवं सुन्दर वस्त्र अर्पित करता हूँ, इस वस्त्रदानसे परमेश्वरी सुरभिदेवी प्रसन्न हों।

[आचमनके अनन्तर चन्दन अर्पित करे]

चन्दन—

सर्वदेवप्रियं देवि चन्दनं चन्द्रसंनिभम्।
कस्तूरीकुङ्कुमाढ्यं च सुगन्धं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ सुरभ्यै नमः, चन्दनं समर्पयामि। (चन्दन चढ़ाये।)

हे देवि! चन्द्रमाके समान शीतलता एवं आह्लाद प्रदान करनेवाले, सम्पूर्ण देवताओंको प्रिय, कस्तूरी और केसरसे युक्त इस सुगन्धित चन्दनको स्वीकार करो।

[फिर तिलरूप अक्षत प्रदान करे]

अक्षत—

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठे कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वरी॥

ॐ सुरभ्यै नमः अक्षतान् समर्पयामि। (अक्षत समर्पित करे।)

हे सुरश्रेष्ठे! हे परमेश्वरि! भक्तिपूर्वक मेरे द्वारा निवेदित कुङ्कुमसे सुशोभित अक्षतोंको ग्रहण करो।

इसके अनन्तर निम्न मन्त्रोंसे सींगोंके आभूषणके लिये सोनेका सींग, कण्ठके आभूषणके रूपमें घंटी, दोहनके लिये कांस्यपात्रकी दोहनी तथा सम्पूर्ण अलंकारोंके निमित्त अपनी शक्तिके अनुसार द्रव्य प्रदान करे और कहे—

ॐ सुरभ्यै नमः, शृंगभूषणार्थं स्वर्णशृङ्गम्, कण्ठभूषणार्थं घण्टाम्, दोहनार्थं, कांस्यपात्रम्,

सर्वालंकारार्थं यथाशक्ति द्रव्यम् समर्पयामि।

[अनन्तर गौ माताको निम्न मन्त्रद्वारा पुष्प एवं पुष्पमालासे अलंकृत करे]

पुष्प और पुष्पमाला—

पुष्पमालां तथा जातिपाटलाचम्पकानि च।
पुष्पाणि गृह्ण धेनो त्वं सर्वविघ्नप्रणाशिनि॥

ॐ सुरभ्यै नमः, पुष्पं पुष्पमालां च समर्पयामि। (पुष्प और पुष्पमाला चढ़ाये।)

सम्पूर्ण विघ्नोंको नष्ट करनेवाली हे धेनो! तुम मेरे द्वारा प्रदत्त चमेली, गुलाब, चम्पक आदि पुष्पोंसे बनी हुई इस पुष्पमालाको ग्रहण करो।

[अनन्तर धूपसे आप्यायित करे]

धूप—

देवद्रुमरसोद्भूतं गोघृतेन समन्वितम्।
प्रयच्छामि महाभागे धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ सुरभ्यै नमः, धूपमाघ्रापयामि। (धूप दे।)

हे महाभाग्यवती गोमाता! देवदारुवृक्षकी गोंदसे बनी हुई तथा गौके घीसे मिश्रित यह धूप मैं तुम्हें अर्पण करता हूँ, इसे स्वीकार करो।

[तदनन्तर दीप दिखलाये]

दीप—

आनन्ददः सुराणां च लोकानां सर्वदा प्रियः।
गौस्त्वं पाहि जगन्मातः दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ सुरभ्यै नमः, दीपं दर्शयामि। (दीप दिखलाये।)

हे जगन्माता गौ! यह दीपक समस्त लोकोंको आनन्द देनेवाला और देवताओंको सदा ही प्रिय है, इसे स्वीकार करो और मेरी रक्षा करो।

[तदनन्तर गोग्रासके रूपमें नैवेद्य निवेदित करे]

नैवेद्य (गोग्रास)—

सुरभिर्वैष्णवी माता नित्यं विष्णुपदे स्थिता।
ग्रासं गृह्णातु सा धेनुर्याऽस्ति त्रैलोक्यवासिनी॥

ॐ सुरभ्यै नमः, नैवेद्यं निवेदयामि। (नैवेद्य निवेदित करे।)

हे जगदम्बे! तुम पालनी-शक्तिसे सम्पन्न हो तथा तुम्हीं स्वर्गमें रहनेवाली कामधेनु हो। तीनों लोकोंमें रहनेवाली हे गोमाता! तुम मेरे द्वारा अर्पित इस ग्रासको ग्रहण करो।

[नैवेद्य निवेदित करके शुद्ध जल प्रदान करे और कपूरकी आरती कर नमस्कार करे तथा निम्न मन्त्रसे पुष्पाञ्जलि प्रदान करे]

पुष्पाञ्जलि—

ॐ गोभ्यो यज्ञाः प्रवर्तन्ते गोभ्यो देवाः समुत्थिताः।
गोभ्यो वेदाः समुत्कीर्णाः सषडङ्गपदक्रमाः॥

ॐ सुरभ्यै नमः, पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि। (पुष्पाञ्जलि अर्पित करे।)

यज्ञोंका प्रवर्तन गौओंसे ही होता है तथा देवता भी गौसे ही प्रकट हुए हैं; पद, क्रम आदिसे युक्त समस्त वेद गौसे उत्पन्न हैं।

पूजाकी साङ्गता-सिद्धिके लिये '**ॐ सुरभ्यै नमः, दक्षिणाद्रव्यं समर्पयामि**'—ऐसा कहकर दक्षिणाद्रव्य निवेदित करे। आरती करे।

इस प्रकार यथाविधि यथालब्धोपचारसे भक्तिभावपूर्वक गोमाताका पूजन करके '**ॐ अनेन पूजनेन गोदेवता प्रीयताम्**' कहकर नमस्कार करे। इसके बाद गौकी पूँछ पकड़कर तर्पण करे।

गोपुच्छतर्पण

सव्य होकर पूर्वमुख बैठकर चावल, कुश-जलके साथ गौकी पूँछको दाहिने हाथसे पकड़कर, पूँछके नीचे भागमें जलपात्रको स्थापित करके निम्न मन्त्रोंद्वारा देवतीर्थसे एक-एक अञ्जलि जल दे—

देवतर्पण—ॐ ब्रह्मा तृप्यताम्, ॐ विष्णुस्तृप्यताम्, ॐ रुद्रस्तृप्यताम्, ॐ मनवस्तृप्यन्ताम्, ॐ ऋणयस्तृप्यन्ताम्, ॐ रुद्रातिपुत्रास्तृप्यन्ताम्, ॐ साध्यास्तृप्यन्ताम्, ॐ मरुद्गणास्तृप्यन्ताम्, ॐ ग्रहास्तृप्यनताम्, ॐ नक्षत्राणि तृप्यन्ताम्, ॐ योगास्तृप्यन्ताम्, ॐराशयस्तृप्यन्ताम्, ॐ वसुधा तृप्यताम्, ॐ अश्विनौ तृप्येताम्, ॐ यक्षास्तृप्यन्ताम्, ॐ रक्षांसि तृप्यन्ताम्, ॐ मातरस्तृप्यन्ताम्, ॐ रुद्रास्तृप्यन्ताम्, ॐ पिशाचास्तृप्यन्ताम्, ॐ सुपर्णास्तृप्यन्ताम्, ॐ पशवस्तृप्यन्ताम्, ॐ दानवास्तृप्यन्ताम्, ॐ योगिनस्तृप्यन्ताम्, ॐ विद्याधरा-स्तृप्यन्ताम्, ॐ ओषधयस्तृप्यन्ताम्, ॐ दिग्गजास्तृप्यन्ताम्, ॐ देवगणास्तृप्यन्ताम्, ॐ देवपत्न्यस्तृप्यन्ताम्, ॐ लोकपालास्तृप्यन्ताम्, ॐ नारदस्तृप्यताम्, ॐ जन्तवस्तृप्यन्ताम्, ॐ स्थावरास्तृप्यन्ताम्, ॐ जङ्गमास्तृप्यन्ताम्।

दिव्य मनुष्य-तर्पण—उत्तर मुख करे। यज्ञोपवीतको गलेमें मालाकी भाँति धारणकर प्राजापत्य या कायतीर्थसे यवसहित दो-दो अञ्जलि जल दे—

ॐ सनकस्तृप्यताम् (२), **ॐ सनन्दनस्तृप्यताम्** (२), **ॐ सनातनस्तृप्यताम्** (२), **ॐ कपिलस्तृप्यताम्**

(२), ॐ आसुरिस्तृप्यताम् (२), ॐ वोढुस्तृप्यताम् (२), ॐ पञ्चशिखस्तृप्यताम् (२)।

दिव्य पितृ-तर्पण एवं यम-तर्पण—दक्षिणकी ओर मुख करके बैठे। अपसव्य हो जाय। तिलोदकसे पितृतीर्थसे तीन-तीन अञ्जलि जल दे—

ॐ कव्यवाडनलस्तृप्यताम् (३), ॐ सोमस्तृप्यताम्, (३), ॐ यमस्तृप्यताम् (३), ॐ अर्यमा तृप्यताम् (३), ॐ अग्निष्वात्तास्तृप्यन्ताम् (३), ॐ सोमपाः पितरस्तृप्यन्ताम् (३), ॐ बर्हिषदस्तृप्यन्ताम् (३)।

ॐ यमाय नमः (३), ॐ धर्मराजाय नमः (३), ॐ मृत्यवे नमः (३), ॐ अन्तकाय नमः (३), ॐ वैवस्वताय नमः (३), ॐ कालाय नमः (३), ॐ सर्वभूतक्षयाय नमः (३), ॐ औदुम्बराय नमः (३), ॐ दध्नाय नमः (३), ॐ नीलाय नमः (३), ॐ परमेष्ठिने नमः (३), ॐ वृकोदराय नमः (३), ॐ चित्राय नमः (३), ॐ चित्रगुप्ताय नमः (३)।

मनुष्य-पितृ-तर्पण—पूर्वकी भाँति पितरोंको तीन-तीन अञ्जलि दे—

अमुकगोत्रः अस्मत्पिता अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः, तस्मै स्वधा नमः, तस्मै स्वधा नमः।

अमुकगोत्रः अस्मत्पितामहः अमुकशर्मा रुद्ररूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः (३)।

अमुकगोत्रः अस्मत्प्रपितामहः अमुकशर्मा आदित्यरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः (३)।

अमुकगोत्रा अस्मन्माता अमुकी देवी वसुरूपा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा नमः, तस्यै स्वधा नमः, तस्यै स्वधा नमः।

अमुकगोत्रा अस्मत्पितामही अमुकी देवी रुद्ररूपा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा नमः (३)।

अमुकगोत्रा अस्मत्प्रपितामही अमुकी देवी आदित्यरूपा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा नमः (३)।

यदि सौतेली माँ मर गयी हो तो उसको भी तीन बार जल दे—

अमुकगोत्रा अस्मत्सापत्नमाता अमुकी देवी तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा नमः (३)।

द्वितीय गोत्र-तर्पण—इसके बाद द्वितीय गोत्रवाले (ननिहालके) मातामह (नाना) आदिका तर्पण करे। यहाँ भी पहलेकी भाँति निम्नलिखित वाक्योंको तीन-तीन बार पढ़कर तिलसहित जलकी तीन-तीन अञ्जलियाँ पितृतीर्थसे दे—

अमुकगोत्रः अस्मन्मातामहः (नाना) अमकः वसुरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा नमः (३)।

अमुकगोत्रः अस्मत्प्रमातामहः (परनाना) अमुकः रुद्ररूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा नमः (३)।

अमुकगोत्रः अस्मद् वृद्धप्रमातामहः (वृद्ध परनाना) अमुकः आदित्यरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा नमः (३)।

अमुकगोत्रा अस्मन्मातामही (नानी) अमुकी देवी दा वसुरूपा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा नमः (३)।

अमुकगोत्रा अस्मत्प्रमातामही (परनानी) अमुकी देवी दा आदित्यरूपा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा नमः (३)।

पत्न्यादितर्पण—इसके आगे पत्नीसे लेकर आप्तपर्यन्त जो भी सम्बन्धी मृत हो गये हों, उनके गोत्र और नाम लेकर एक-एक अञ्जलि जल दे—

अमुकगोत्रा अस्मत्पत्नी (भार्या) अमुकी देवी दा वसुरूपा तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्यै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मत्सुतः (बेटा) अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रा अस्मत्कन्या (बेटी) अमुकी देवी दा वसुरूपा तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्यै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मत्पितृव्यः (पिताके भाई) अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिल जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मन्मातुल (मामा) अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मद्भ्राता (अपना भाई) अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मत्सापत्नभ्राता (सौतेला भाई) अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रा अस्मत्पितृभगिनी (बूआ) अमुकी देवी दा वसुरूपा तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्यै स्वधा नमः। अमुकगोत्रा अस्मन्मातृभगिनी (मौसी) अमुकी देवी दा वसुरूपा तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्यै स्वधा नमः। अमुकगोत्रा अस्मदात्मभगिनी (अपनी बहन) अमुकी देवी

दा वसुरूपा तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्यै स्वधा नमः। अमुकगोत्रा अस्मत्सापत्नभगिनी (सौतेली बहन) अमुकी देवी दा वसुरूपा तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्यै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मच्छ्वशुरः (श्वशुर) अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मद्गुरुः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रा अस्मदाचार्यपत्नी अमुकी देवी दा वसुरूपा तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्यै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मच्छिष्यः वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मत्सखा अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः। अमुकगोत्रः अस्मदाप्तपुरुषः अमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यताम् इदं सतिलं जलं तस्मै स्वधा नमः।

फिर नीचे लिखे श्लोकोंको पढ़ते हुए पितृतीर्थसे मोटक लेकर तिलाञ्जलि दे—

ॐ मातृपक्षाश्च ये केचिद् ये केचित् पितृपक्षकाः।
गुरुश्वशुरबन्धूनां ये कुलेषु समुद्भवाः॥
ये मे कुले लुप्तपिण्डाः पुत्रदारविवर्जिताः।
क्रियालोपगता ये च जात्यन्धाः पङ्गवस्तथा॥
विरूपा आमगर्भाश्च ज्ञाताज्ञातकुले मम।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः॥
वृक्षयोनिगता ये च पर्वतत्त्वं गताश्च ये।
पशुयोनिगता ये च ये च कीटपतङ्गकाः।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः॥
नरके रौरवे ये च महारौरवसंस्थिताः।
असिपत्रवने घोरे कुम्भीपाकस्थिताश्च ये।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः॥
स्वार्थबद्धा मृता ये च शस्त्राघातमृताश्च ये।
ब्रह्महस्तमृता ये च नारीहस्तमृताश्च ये।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः॥
पाशमध्ये मृता ये च स्वल्पमृत्युवशंगताः।
सर्वे च मानवा नागाः पशवः पक्षिणस्तथा।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः॥
आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं देवर्षिपितृमानवाः।
तृप्यन्तु सर्वदा सर्वे गोपुच्छोदकतर्पणैः॥

तर्पण करनेके बाद गोदान करनेवाला सव्य हो जाय। तदनन्तर सवत्सा गौको रस्सीसे खोलकर गौका मुख पूर्वकी ओर करे और स्वयं पूँछकी तरफ पूर्वमुख होकर बैठ जाय और गोदान ग्रहण करनेवाला ब्राह्मण गौके दक्षिण तरफ उत्तरकी ओर मुख करके बैठे। अनन्तर गोदान करनेवाला स्वर्ण, कुश, अक्षत, जल लेकर गोदानका संकल्प करे—

गोदानका बृहत्संकल्प—हरिः ॐ तत्सत् (३), इह पृथिव्यां जम्बूद्वीपे भारतवर्षे कुमारिकाखण्डे आर्यावर्तैकदेशे अमुक[1]…… क्षेत्रे श्रीभागीरथ्याः गङ्गायाः अमुक दिग्विभागे इत्यादिदेशं समनुकीर्त्य ॐ ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगस्य प्रथमचरणे बौद्धावतारे अमुक… नाम्नि संवत्सरे अयने… ऋतौ… मासे… पक्षे… तिथौ… वारे… नक्षत्रे… योग… करणे अमुक… राशिस्थिते चन्द्रे अमुक–राशिस्थिते सवितरि अमुक… राशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथास्थानस्थितेषु सत्सु एवं गुणविशिष्टे देशे काले अमुक… गोत्रः अमुक नामाहं मम श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहा-सोक्तफलावाप्तये ज्ञाताज्ञातानेक जन्मार्जितमनोवाक्कायकर्म-जन्यपापापनुत्तये निखिलदुःख-दौर्भाग्यदुःस्वप्नदुर्निमित्त-दुष्ट ग्रहबाधाशान्तिपूर्वकं धनधान्यायुरारोग्यद्विपदचतुष्पद-संततिचतुर्वर्गादिनिखिलवाञ्छितसिद्ध्यै गोरोमसंख्यकदिव्य-वत्सरावच्छिन्नस्वर्गलोकस्थितिकामश्च पितृणां निरतिशयानन्दब्रह्मलोकावाप्तये च श्रीपरमेश्वरप्रीतये इमां सुपूजितां सालंकारां सवत्सां गां रुद्रदैवताम् अमुक… गोत्राय अमुक… शर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

—ऐसा कहकर संकल्प ब्राह्मणके हाथमें दे दे और ब्राह्मण '**द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु**' कहकर ग्रहण करे। संकल्प ग्रहण करनेके अनन्तर ब्राह्मण निम्न मन्त्र पढ़े—

कोऽदात्कस्मा अदात्कामोऽदात्कामायादात्।
कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते॥

अनन्तर गोदानकर्ता गोदान-कर्मकी साङ्गता-सिद्धिके लिये तुलसीदलके साथ यथाशक्ति सुवर्ण ब्राह्मणको देते हुए प्रतिष्ठा करे—

प्रतिष्ठा—अद्य कृतैतद्गोदानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यै इदं सतुलसीदलं हिरण्यम् अग्निदैवतम् अमुक… गोत्राय अमुक… शर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यहं सम्प्रददे।

[यजमान प्रार्थना करे]

प्रार्थना—ॐ यज्ञसाधनभूता या विश्वपापौघनाशिनी।
विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया गवा॥

१-रिक्त स्थानोंमें पूर्वकल्पकी भाँति योजना कर ले।

जो गौ यज्ञकी साधनभूता है और संसारके समस्त पापसमूहोंका नाश करनेवाली है, उस गौके दानकर्मसे संसारमें सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मणदेव प्रसन्न हों।

इसके अनन्तर बन्धु-बान्धवोंके साथ यजमान ब्राह्मण तथा बछड़ेके सहित गायकी चार प्रदक्षिणा करे।

प्रदक्षिणा—

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि नाशय धेनो त्वं प्रदक्षिणपदेपदे॥

हे धेनो! जन्म-जन्मान्तरोंमें जो भी पाप मेरे द्वारा हुए हों, उन सभीको प्रदक्षिणाके पद-पदपर नष्ट कर दें।

इस प्रकार चार परिक्रमा करनेके बाद हाथ जोड़कर प्रार्थना करे—

प्रार्थना—

ॐ गावो ममाग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥
नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावो धन्याः सनातनाः।
सर्वे देवास्तनौ यस्याः सा धेनुर्वरदाऽस्तु मे॥

गौएँ मेरे आगे रहें, गौएँ मेरे पीछे रहें, गौएँ मेरे हृदयमें निवास करें और मैं सदा गौओंके बीचमें निवास करूँ। श्रीमती गौओंको नमस्कार। कामधेनुकी संतानोंको नमस्कार। ब्राह्माजीकी पुत्रियोंको नमस्कार। पावन करनेवाली गौओंको नमस्कार। जो गौएँ स्वर्गकी सोपानरूपा हैं, सदासे ही समस्त धन-समृद्धिकी मूलभूता सनातन कारण हैं और जिस गायके शरीरमें सम्पूर्ण देवताओंका निवास है, वह धेनु मेरे लिये वरदायिनी हो।

इसके बाद गौके कानमें निम्न मन्त्रका जप करे—

मन्त्र-जप—ॐ ह्रीं नमो भगवत्यै ब्रह्ममात्रे विष्णुभगिन्यै रुद्रदेवतायै सर्वपापप्रमोचिन्यै।

इसके बाद ब्राह्मण गौकी पूँछके द्वारा जलसे यजमानके सिरपर अभिषेक करे, तिलक लगाये और आशीर्वाद प्रदान करे। तदनन्तर ब्राह्मण गौका विसर्जनकर कुछ दूरतक उसे छोड़ने जाय। फिर सूर्यको अर्घ्य प्रदान करे और निम्न मन्त्रसे भगवान्से क्षमा-प्रार्थना करे—

क्षमा-प्रार्थना—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥

अनन्तर समस्त कर्म '**ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः**' कहकर भगवान्को अर्पित कर दे। और फिर अवशिष्ट गोपुच्छोदकको पीपलके मूलमें अथवा किसी तालाब आदिमें विसर्जित कर दे।

वृषभ-दानका फल

बैल पवित्र है, सुन्दर पुण्यका दाता और पवित्र करनेवाला है, इसलिये बैलके दानका विशेष फल है। एक ही बैलके दानको दस गायोंके दानके समान समझना चाहिये, अवश्य ही वह बैल—

मेदो मांसविपुष्टाङ्गो नीरोगः कोपवर्जितः।
युवा भद्रः सुशीलश्च सर्वदोषविवर्जितः॥
धुरं धारयति क्षिप्रं.................॥[१]

'मेद-मांससे परिपुष्ट अङ्गोंवाला हो, नीरोग हो, क्रोधरहित—सीधा हो, जवान हो, देखनेमें बड़ा सुन्दर, स्वभावसे सुशील और सारे दोषोंसे रहित हो तथा झट्से धुरेको धारण करनेमें समर्थ हो।' ऐसा बैल ब्राह्मणको देनेसे दाता महातेजस्वी होकर चिरकालतक गोलोकमें पूजित होता है।

जो पुरुष धुरीको धारण करनेवाले दो बैलोंका वेदज्ञ सदाचारी गरीब ब्राह्मणको दान करता है,उसे एक हजार गायोंके दानका उत्तम फल मिलता है और वह भगवान्के लोकोंमें जाता है तथा दोनों बैलोंके शरीरपर जितने रोम हैं, उतने हजार वर्षोंतक भगवान्के लोकमें पूजित होता है, पर दान करना चाहिये गरीबको ही, धनीको नहीं; क्योंकि वर्षाका फल तालाबोंमें बरसनेसे ही है, समुद्रोंमें बरसनेसे नहीं—

दरिद्रायैव दातव्यं न समृद्धाय पाण्डव।
वर्षाणां हि तडागेषु फलं नैव पयोधिषु॥

(महा०, आश्व० १००। १२)

जो पुरुष एक बैल दान करता है, वह देवव्रती (सूर्यमण्डलको भेदन करके जानेवाला ब्रह्मचारी) होता है। (महा०, अनु० ७६। २०)

बैल स्वर्गका मूर्तिमान् स्वरूप है। जो गुणवान ब्राह्मणको बैल दान करता है, उसका स्वर्गलोकमें सम्मान होता है। (महा०, अनु० ६६। ४८)

धुरीको धारण करनेवाले एक उत्तम बैलके दानमें दस गायोंके दानका और सौ बैलोंके दानमें हजार गायोंके दानका

१- ठीक ऐसे ही श्लोक भविष्यपुराण, उत्तर० अध्याय १६० में तथा अन्यान्य पुराणोंमें मिलते हैं।

फल होता है। (पद्म०, सृष्टि० ४८। १८०-१८१)

बैलकी जोड़ीके दानका फल

यश्च दद्यादनुडुहौ द्वौ युक्तौ च धुरन्धरौ।
सुवृत्ताय दरिद्राय श्रोत्रियाय विशेषतः॥
सहस्रगोप्रदानेन यत्प्रोक्तं फलमुत्तमम्।
तत्पुण्यफलमाप्नोति याति लोकान् स मामकान्॥
यावन्ति चैव रोमाणि तयोरनडुहोर्नृप।
तावद्वर्षसहस्राणि मम लोके महीयते॥

(महा०, आश्व० १००। ९—११)

जो मनुष्य जुएको भलीभाँति उठा सकनेवाले दो बैलोंकी जोड़ीको सदाचारी श्रोत्रिय गरीब ब्राह्मणको विशेषरूपसे दान देता है, वह एक हजार गोदानके उत्तम फलको प्राप्त होता है और फिर मेरे दिव्य लोकमें जाता है तथा उन दोनों बैलोंके शरीरमें जितने रोम हैं, उतने हजार वर्षोंतक वह मेरे लोकमें पूजित होता है।

गोसेवासे भगवत्प्राप्ति

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं परम्।

श्रीमद्भागवत (२। ३। १०) में एक श्लोक आता है—

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम्॥

'उदार बुद्धिवाला पुरुष निष्काम हो या समस्त भोगोंका इच्छुक अथवा वह मोक्षकी ही अभिलाषा रखनेवाला क्यों न हो, उसे तीव्र भक्तियोगके द्वारा केवल परम पुरुष भगवान् वासुदेवकी आराधना करनी चाहिये।'

यही बात गौओंके लिये भी कही जा सकती है। स्वार्थ या परमार्थ कोई भी ऐसी वस्तु नहीं, जो गौदेवीकी कृपासे सुलभ न हो सके। संसारमें कौन ऐसा विवेकशील प्राणी होगा, जो भगवान्‌को पानेके लिये लालायित न हो। युग-युगसे, जन्म-जन्मान्तरोंसे जीव अपने बिछुड़े हुए प्रियतम परमात्मासे मिलनेके लिये न जाने कहाँ-कहाँ भटकता है, कितने-कितने साधन करता है। किंतु अबतक बहुतोंको सफलता नहीं मिली। साधनका ठीक-ठीक ज्ञान न होनेसे लक्ष्यकी प्राप्तिमें विलम्ब होना स्वाभाविक ही है। भगवत्प्राप्तिके अन्यतम साधनोंमेंसे गौकी सेवा भी एक ऐसा ही साधन है, जिससे भगवान् शीघ्र ही सुलभ हो जाते हैं। भगवान् हमारे इष्टदेव हैं, परंतु ये गौएँ उनकी भी इष्टदेवी हैं।' वे इन्हींकी सेवाके लिये गोपाल-शिरोमणि बनकर इस भूतलपर अवतीर्ण होते हैं। भगवान् भी जिनके सेवक हैं, उनकी सेवासे भगवत्प्राप्तिमें क्या संदेह हो सकता है। जैसे गङ्गाजीके तटपर रहकर भी कोई प्यासों मरे और पानीके लिये दर-दर भटकता फिरे, वही दशा हमारी है। हम घरमें कामधेनुके होते हुए भी उसकी सेवासे मुँह मोड़ते और स्वार्थ एवं परमार्थ दोनोंसे वञ्चित रह जाते हैं।

गोमाता किस प्रकार हमें भगवान्‌के निकट पहुँचाती है, यह थोड़ा-सा विचार करनेपर ही सबकी समझमें आ सकता है। उदाहरणके लिये किसी भी गायको सामने रखिये; वह दो प्रकारकी संतानोंको जन्म देती है—बछड़ा और बछिया। पहले बछड़ेकी उपयोगितापर विचार कीजिये। बछड़ा हृष्ट-पुष्ट होनेपर एक अच्छा साँड़ या उत्तम बैल बन सकता है। साँड़से दो लाभ होंगे। एक तो धर्मशास्त्रीय विधिके अनुसार वृषोत्सर्ग करनेसे वह हमारे पितरोंका उद्धार करेगा और दूसरे उससे गोवंशकी वृद्धि होगी। पितरोंका उद्धार और गोवंशकी वृद्धि—ये दोनों ही पुण्यकार्य हैं। अतः इनसे धर्मका सम्पादन होगा। यदि बछड़ेको बैल बना लिया जाय तो उससे भी अनेक लाभ हो सकते हैं। एक तो वह वाहनके काम आता है, छकड़ों और बैलगाड़ियोंको खींचता है तथा पीठपर भी बोझ ढोता है। इससे अन्न आदि वस्तुओंके व्यापारमें सहायता पहुँचेगी। व्यापारसे सम्पत्ति बढ़ेगी और उससे लोकमें सुख मिलेगा। इस प्रकार आनुषङ्गिक रूपसे 'अर्थ' और 'काम' की भी सिद्धि होती रहेगी। सम्पत्ति होनेपर हम वैदिक विधानके अनुसार यज्ञ कर सकते हैं तथा देश, काल और पात्रके अनुरूप यथेष्ट दान करनेमें भी समर्थ हो सकते हैं। यज्ञ और दान भी धर्मके ही अङ्ग हैं। यह बैलके द्वारा प्राप्त होनेवाले एक लाभकी शाखा हुई।

अब दूसरे लाभकी परम्परापर दृष्टिपात कीजिये।

उत्तम बैल होनेसे अच्छी खेती हो सकती है। खेतीसे पर्याप्त अन्नकी प्राप्ति होगी। फिर अन्नसे भी कई प्रकारके लाभ हो सकते हैं। एक तो उससे हमारा जीवन-निर्वाह होगा, और हम स्वस्थ तथा सबल बनेंगे। स्वास्थ्य ठीक रहनेपर मनुष्य उत्तम पुत्र उत्पन्न कर सकता है, जो श्राद्ध और तर्पण करके पितरोंका उद्धार करे और इस प्रकार धर्मके सम्पादनमें कारण बने। अन्नसे दूसरा लाभ यह है कि हम स्वयं भी उसके द्वारा श्राद्ध करेंगे। उस श्राद्धसे पितरोंका उद्धार होनेके साथ ही हमें भी धर्मकी प्राप्ति होगी। तीसरा लाभ यह है कि अन्नके व्यापारसे प्रचुर धनराशिका उपार्जन किया जा सकता है। वह धन लौकिक सुखका साधन तो बनेगा ही, यज्ञ एवं दानमें लगाये जानेपर धर्मवृद्धिका भी कारण हो सकता है। इस प्रकार यहाँ गायकी एक संतान—केवल बछड़ेद्वारा होनेवाले लाभोंका दिग्दर्शन कराया गया।

गायकी दूसरी संतान है—बछिया। उसका समुचित-रूपसे पालन करनेपर आगे चलकर वह भी एक अच्छी गाय बन सकती है। गायसे दो प्रकारके लाभ होते हैं—लौकिक और पारलौकिक। पारलौकिक लाभ होता है उसके दानसे। शास्त्रोक्त रीतिसे गौका दान करके मनुष्य अत्यन्त भयंकर वैतरणी नदीको सहज ही पार कर सकते हैं। यदि दूसरोंके लिये गोदान किया गया तो वे भी वैतरणी पार तो होंगे ही, उनके उद्धाररूप पुण्यकर्मसे हम भी धर्मके भागी हो सकते हैं। लौकिक लाभ भी आगे चलकर पारलौकिक लाभमें परिणत हो जाता है। गाय घरपर रहेगी तो हमारे लिये दूध देगी—यह लौकिक लाभ है। उस दूधका दो प्रकारसे उपयोग हो सकता है—एक तो दही जमाकर या दूधसे ही घी बना लिया जाय अथवा दूधके द्वारा ही नाना प्रकारके खाद्य पदार्थ—दुग्धान्न तैयार कराये जायँ। घी और दुग्धान्न दोनों ही मानव-जीवनके लिये अत्यन्त उपयोगी वस्तुएँ हैं। घी परम पवित्र एवं सात्त्विक वस्तु है। इसके सेवनसे शरीर और मन दोनों शुद्ध होंगे। फिर शुद्ध विचारसे सदाचारकी वृद्धि होगी और सदाचारसे अन्तःकरणकी पवित्रताके साथ-ही-साथ आयुकी भी वृद्धि होगी। इस तरहके शुद्ध, सात्त्विक एवं सदाचारपूर्ण जीवनमें सदा अधिकाधिक धर्मका सम्पादन होता रहेगा। घीके द्वारा यज्ञ करके भी हम धर्मोपार्जन कर सकते हैं। तीसरा लाभ है व्यापार। घीका व्यापार करके सुख-सम्पत्तिका उपार्जन होगा, उससे फिर यज्ञ और दान होंगे और उन दोनोंसे पूर्ववत् धर्मकी वृद्धि होती रहेगी।

घीकी ही भाँति दुग्धान्नसे भी व्यापार, धनोपार्जन, यज्ञ, दान और धर्म-प्राप्तिकी परम्परा सुस्थिर रह सकती है। वह श्राद्धमें भी उपयोगी है। श्राद्धसे पितरोंका उद्धार और उससे धर्मका सम्पादन भी होगा ही। दुग्धान्नका दान भी धर्मके एक अङ्गकी पुष्टि कर सकता है। जीवन-निर्वाहमें भी दुग्धान्नका बहुत बड़ा उपयोग है। स्वास्थ्य-सम्पादन तो उसकी खास विशेषता है ही। स्वस्थ शरीरसे योग्य संतानका उत्पादन और उसके द्वारा पितरोंके उद्धाररूपी धर्मका पालन भी अवश्यम्भावी है। इस तरह गाय अनेक शाखाओं तथा परम्पराओंसे हमें अर्थ और कामकी प्राप्ति करानेके साथ ही धर्मके सम्पादनमें भी अत्यधिक सहायता पहुँचाती है। निष्काम धर्मके प्रभावसे मनुष्यमें भगवच्छरणागतिकी योग्यता आती है। वह—

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरूष्व मदर्पणम्॥

(गीता० ९। २७)

—इस भगवदाज्ञाके अनुसार अपने समस्त धर्म-कर्म भगवान्‌को भेंट करके स्वयं भी उनके चरणोंमें समर्पित हो जाता है। पूर्णरूपसे शरणागत हो जानेपर भक्तको भगवान्‌की प्राप्तिमें तनिक भी विलम्ब नहीं होता। इस प्रकार गोमाता सम्पूर्ण जगत्‌के मानवोंको प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष-रूपसे भगवान्‌के निकट पहुँचनेमें सहायता करती रहती है। गौके समान मनुष्यमात्रकी सच्ची हितकारिणी दूसरी कोई नहीं है; अतः हम सब लोगोंको तन, मन, धनसे गोमाताकी सेवा और रक्षामें तत्पर रहना चाहिये।

नम्र निवेदन और क्षमा-प्रार्थना

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥

सर्व प्रकारसे पवित्र करनेवाली, लक्ष्मीस्वरूपिणी, कामधेनु सुरभिकी संतान ब्रह्मपुत्री गौओंको बारंबार प्रणाम करते हुए आज हम पाठकोंकी सेवामें इस वर्ष 'कल्याण' के विशेषाङ्कके रूपमें 'गोसेवा-अङ्क' प्रस्तुत कर रहे हैं।

इस संसारमें गौ एक अद्भुत प्राणी है, जो वास्तवमें सबके लिये महनीय, अमूल्य और कल्याणप्रद है। भारतीय संस्कृतिमें मानव-जीवन प्राप्त करनेका परम उद्देश्य है— अपना कल्याण करना अर्थात् अक्षय सुखकी प्राप्ति। इसके लिये अपने शास्त्रोंमें 'गो-सेवा' से सरल कोई दूसरा साधन नहीं है। शुक्ल यजुर्वेदमें एक प्रश्न किया गया है—**'कस्य मात्रा न विद्यते'**—'किसका परिमाण (उपमा) नहीं है?' (२३।४७)। इसका उत्तर भी दिया गया है **'गोस्तु मात्रा न विद्यते'**—'गौका परिमाण (उपमा) नहीं है।' (२३।४८)

गौ और पृथ्वी—ये दोनों गौके ही स्वरूप (पर्याय) हैं। गौ और पृथ्वी—इन दोनोंमें अभिन्नता है। ये दोनों ही परस्पर एक दूसरेकी सहायिका और सहचरी हैं। मृत्युलोककी आधारशक्ति 'पृथ्वी' और देवलोककी आधारशक्ति 'गौ' है। पृथ्वीको भूलोक और 'गौ' को गोलोक कहते हैं। भूलोक—अधोलोक (नीचे)-में है और गोलोक—ऊर्ध्वलोक (ऊपर)-में है। यह अत्युत्तम श्रेष्ठ लोक है। जन्म-जन्मान्तरकी परम साधनाके उपरान्त मानव-जीवनके लक्ष्यको पूर्ण कर लेनेवाले प्राणियोंको गोलोककी प्राप्ति होती है, जहाँ पहुँचकर प्राणी इस मृत्युलोकमें वापस नहीं लौटता, इसीका नाम है जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त होना अथवा स्वयंका कल्याण करना है। इस गोलोकमें ही गौओंका निवास है।

एक बार देवराज इन्द्रने ब्रह्माजीसे यह प्रश्न किया कि गौएँ देवता और लोकपालोंके लोकोंसे भी अति उच्चतम गोलोकमें क्यों रहती हैं? ब्रह्माजीने इसका उत्तर देते हुए कहा—'गौओंको यज्ञका अङ्ग और साक्षात् यज्ञ ही कहा गया है। इनके बिना किसी प्रकार भी यज्ञ नहीं हो सकता। ये अपने दूध और घीसे प्रजाका धारण-पोषण करती हैं और इनके पुत्र बैल खेतीके काममें आते हैं तथा विविध प्रकारके अन्न एवं बीज पैदा करते हैं। उनसे यज्ञ होते हैं और हव्य-कव्यका कार्य सम्पादन होता है। इन्हींसे दूध, दही और घी मिलता है। ये गौएँ बड़ी ही पवित्र होती हैं और बैल बेचारे भूख-प्यासका कष्ट सहकर भी भाँति-भाँतिका बोझ ढोते रहते हैं। इस प्रकार गौएँ अपने कर्मसे प्रजाओंका और मुनियोंका धारण-पोषण करती रहती हैं। इनके व्यवहारमें शठता, कपटता नहीं होती, ये सदा पवित्र कर्ममें ही लगी रहती हैं। इसीसे देवराज! ये गौएँ हम सब लोगोंके ऊपर (गोलोकमें) निवास करती हैं। (महा० अ० ८३।१७—२२)

अभ्युदय और निःश्रेयसकी प्राप्तिके लिये यज्ञकी आवश्यकता है। यज्ञ-दान-तप-रूप कर्मको भगवान्ने अवश्य-कर्तव्य—अनिवार्य बतलाया है। **'यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।'** यज्ञकी पूर्णाहुतिके लिये हविकी आवश्यकता होती है और हविकी प्रदाता गोमाता ही हैं, इसीलिये हमारे शास्त्रोंमें गौको **'हविर्दुघा'** (हवि देनेवाली) कहा गया है। गोघृत देवताओंका परम प्रिय हवि है और यज्ञके लिये भूमिको जोतकर तैयार करने एवं गेहूँ, चावल, जौ, तिल आदि हविष्यान्न पैदा करनेके लिये गोसंतति— बैलोंकी परम आवश्यकता है। यही नहीं यज्ञभूमिको परिष्कृत एवं शुद्ध करनेके लिये उसे गोमूत्रसे छिड़का जाता है और गोबरसे लीपा जाता है तथा गोबरके कंडोंसे यज्ञाग्निको प्रज्वलित किया जाता है। यज्ञानुष्ठानके पूर्व प्रत्येक यजमानको देहशुद्धिके लिये पञ्चगव्यका प्राशन करना होता है और यह गायके दूध, दही, गोघृत, गोमूत्र और गायके ही गोबरसे तैयार किया जाता है, इसलिये इसे 'पञ्चगव्य' कहते हैं। इसके अतिरिक्त गोदुग्धमें पकाये हुए चावल (खीर) को 'परमान्न' (सर्वश्रेष्ठ भोजन) कहा गया है और गोघृतको 'सर्वश्रेष्ठ रसायन' माना गया है—**'आयुर्वै घृतम्।'** इस प्रकार गोघृत आदि गोमय पदार्थ आरोग्यप्रद, तेजःप्रद, आयुवर्धक और बलवर्धक माने जाते हैं। अतः मनुष्यों और देवताओं—दोनोंकी तृप्तिके लिये गौकी सर्वोपरि आवश्यकता है।

कहते हैं कि इस मनुष्यलोकमें जीवोंके कल्याणके लिये ही गौ-जैसी पवित्र और मङ्गलमय प्राणीका प्रादुर्भाव हुआ।

शास्त्रोंमें गौको सर्वदेवमयी और सर्वतीर्थमयी कहा गया है। अतः गौके दर्शनसे समस्त देवताओंके दर्शन तथा समस्त तीर्थोंकी यात्रा करनेका पुण्य प्राप्त होता है। जहाँ गौका निवास होता है, वहाँ सर्वदा सुख-शान्तिका पूर्ण साम्राज्य उपस्थित रहता है। गोदर्शन, गोस्पर्श, गोपूजन, गोस्मरण, गोगुणानुकीर्तन और गोदान करनेसे मनुष्य सर्वविध पापोंसे मुक्त होकर अक्षयलोकका भोग प्राप्त करता है। गौकी परिक्रमा करनेसे सम्पूर्ण पृथ्वीकी परिक्रमा हो जाती है। इस प्रकार गौ भारतवासियोंकी परम आराध्या है। यह तो हुई हमारी आध्यात्मिक एवं आधिदैविक दृष्टि।

अधिकांश लोग आजकल भौतिक और स्थूल दृष्टिसे गौकी आर्थिक उपयोगितापर भी विचार करते हैं। इस दृष्टिसे भी यदि विचार किया जाय तो गाय-जैसा उपयोगी प्राणी कोई अन्य नहीं है। किसी भी प्रकारका गोवंश—बूढ़ा-अपंग, अनुत्पादक—लूला-लँगड़ा, अंधा—देश और गोपालकपर भारस्वरूप नहीं है। उसे अनुपयोगी कहना ठीक नहीं। स्थूल दृष्टिसे भारतमें गौके तीन प्रकारके उपयोग हो सकते हैं—(१) गायके दूधका उपयोग, (२) गोवंशके द्वारा कृषि-कार्य तथा (३) गोबर और गोमूत्रका उपयोग।

आहारके रूपमें दूधका सर्वाधिक वैज्ञानिक महत्त्व सर्वत्र स्वीकार किया गया है। जिन उपादानोंसे शरीरका यन्त्र चालू रह सकता है वे सब दूधमें पाये जाते हैं। बच्चोंके भोजनके लिये दूध ही प्रकृतिकी पहली देन है।

भारतीय औषधिविज्ञानके सुप्रसिद्ध संस्थापक चरकने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि 'दूध सामान्य रूपसे मनुष्य तथा समस्त चतुष्पद प्राणियोंके स्वास्थ्य और विकासके लिये आवश्यक होता है। गायका दूध सर्वश्रेष्ठ है, यह बच्चोंको जीवन, जवानोंको स्वास्थ्य तथा बूढ़ोंको शक्ति प्रदान करता है।' इसी प्रकार ब्रिटिश मेडिकल रिसर्च कौंसिलने घोषित किया है—'गायका विशुद्ध और ताजा दूध सर्वापेक्षा हितकर और विश्वस्त पोषक तत्त्वोंसे भरा होता है और उसमें लाभदायक जीवाणु तथा दूसरे स्वास्थ्यप्रद उपकरण होते हैं।'

गोवंश भारतीय कृषि-विकासकी आधारशिला है, जिसका अति प्राचीन कालसे महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीन कालसे बैलोंका उपयोग कृषिभूमिको जोतकर तैयार करना, कुओंसे पानी खींचना तथा परिवहन-सम्बन्धी आवश्यकताओंकी पूर्तिमें होता रहा है। आजकल नये वैज्ञानिक अनुसंधानके अनुसार जमीन जोतनेमें ट्रैक्टरोंका उपयोग किया जा रहा है, जिसके कारण भूमिकी उर्वरा-शक्तिके क्षीण होनेका खतरा उत्पन्न हो गया है। विश्वविख्यात वैज्ञानिक अलबर्ट आइनस्टाइनने भारतको यह संदेश भेजा था—'भारत ट्रैक्टरके द्वारा यन्त्रीकृत खेतीकी पद्धतिको न अपनाये, क्योंकि इनसे चार सौ वर्षकी खेतीमें ही अमेरिकाके जमीनकी उर्वरा-शक्ति काफी हदतक समाप्त हो चली है, जबकि भारतका उपजाऊपन दस हजार वर्षकी खेतीके बाद भी आज कायम है। अतः देशके किसानोंको इस बातपर विशेष ध्यान देना चाहिये कि आनेवाली पीढ़ीके लिये देशकी भूमिकी उर्वरा-शक्ति समाप्त न हो, इसके लिये हमारी प्राचीन परम्परापर आधारित खेतीके कार्यमें गोवंशका ही अधिकाधिक उपयोग होना चाहिये।

प्राचीन कालसे ही गोबर और गोमूत्रका अन्य उपयोगोंके साथ-साथ धरतीको उर्वरा-शक्ति प्रदान करनेके लिये खादके रूपमें मुख्य उपयोग किया जाता रहा है, परंतु आजकल यान्त्रिक खेतीके साथ-साथ रासायनिक खाद और कीटनाशक जहरीली ओषधियोंका उपयोग अत्यधिक रूपसे किया जा रहा है, जिससे स्वास्थ्यपर तो असर पड़ ही रहा है, साथ-साथ भूमिकी उर्वरा-शक्ति भी कमजोर होती जा रही है। रासायनिक खाद धरतीका प्राकृतिक आहार नहीं है, इससे शुरूमें तो उत्पादन बढ़ता है, पर बादमें उत्पादन घटता ही जाता है। कुछ समय बाद धरती पूर्णतः बंजर हो जाती है। गोबरकी खाद धरतीका प्राकृतिक आहार है। इससे धरतीकी उर्वरा-शक्ति बनी रहती है। गोबरसे गैस मुफ्तमें प्राप्त होती है, इसकी जानकारी जनसाधारणको हो चुकी है। गैसका उपयोग ईंधन और रोशनीके लिये किया जाता है। गाँवोंमें यदि गोबर-गैसके संयन्त्र लगा दिये जायँ तो ग्रामीण जनताको ईंधन और रोशनी सुविधापूर्वक प्राप्त हो सकती है। गोबरकी तरह गोमूत्र भी खेतीके लिये बहुत उपयोगी होता है, उसमें धरतीको बिना किसी प्रकार हानि पहुँचाये कीटाणुनाशक

शक्ति होती है, गोमूत्रका उपयोग मानवकी कई बीमारियोंमें औषधिके रूपमें और पेटमें कृमिनाशकके रूपमें किया जाता है।

गोबर और गोमूत्रका समुचित उपयोग करनेसे जो आय होती है, उससे गाय-बैलके भरण-पोषणका खर्च निकालनेके पश्चात् भी बचत ही रहेगी। ऐसी स्थितिमें गायका दूध और कृषि आदि कार्योंमें बैलका उपयोग एक प्रकारसे बिना किसी खर्चके प्राप्त हो जाता है, जो गोपालकोंकी समृद्धिका कारण बन सकता है। इसमें एक बात और ध्यान देनेकी है कि यह सारी समृद्धि भारतीय नस्लकी गायोंसे ही प्राप्त होती है। आजकल दूधके लोभमें जर्सी आदि विदेशी गायोंका पालन जोरसे बढ़ रहा है। यहाँतक कि भारतीय नस्लकी गायोंको भी विदेशी साँड़ोंसे गर्भाधान कराकर वर्णसंकरी गायें उत्पन्न कर रहे हैं। साथ ही कृत्रिम गर्भाधानकी प्रक्रिया भी अपनायी जाती है, जिसमें गायोंकी भारतीय नस्लें धीरे-धीरे नष्टप्राय हो रही हैं। यह अत्यन्त गम्भीर और विचारणीय विषय है। शास्त्रीय दृष्टिसे विदेशी गायोंमें गायके लक्षण घटित नहीं होते। उपयोगकी दृष्टिसे इनका आवास विशेष स्वास्थ्यप्रद नहीं है। अत: आवश्यकता इस बातकी है कि अच्छी नस्लके देशी साँड़ तैयार किये जायँ, जिससे गायोंकी भारतीय नस्लकी संतति अधिकाधिक रूपमें तैयार हो सके।

उपर्युक्त विवेचनसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गोवंश किसी भी स्थितिमें अनुपयोगी है ही नहीं। अत: मांसका निर्यात करनेके लिये गायकी हत्या करना कितनी बड़ी अज्ञानता है, यह कहा नहीं जा सकता।

भारतीय संस्कृति और अन्य देशोंकी संस्कृतिमें बहुत बड़ा अन्तर है। विदेशोंमें गायकी आर्थिक उपयोगिताके आधारपर सेवा-शुश्रूषा की जाती है। अनुपयोगी होनेपर इसे मारनेमें वे हिचकते नहीं, जिसका अन्धानुकरण हमारे देशके कर्णधार भी आज धड़ल्लेसे कर रहे हैं। यह स्वार्थपरायणताकी पराकाष्ठा है। भारतमें गौके भौतिक उपयोगके साथ-साथ गायका आध्यात्मिक महत्त्व भी है। हम अपनी सर्वोपरि श्रद्धाका केन्द्र माँके रूपमें गौको सम्बोधित करते हैं और अपने शास्त्र तथा मान्यताके अनुसार लोग गौ माताको लोक-परलोक दोनोंका जीवनसाथी समझते हैं। अत: गौकी हत्या या गौका वध देशवासियोंके लिये कभी भी सह्य नहीं हो सकता। पर दुर्भाग्यवश आजतक यह जघन्य कार्य बंद नहीं हो सका, आशा है, भारतके शासकोंको परमात्मप्रभु शीघ्र सद्बुद्धि प्रदान करेंगे, जिससे यह देशका कलंक मिट सके। इसके साथ ही गोरक्षण और गोसंवर्धनके लिये, जनता और सरकारके लिये कुछ आवश्यक कर्तव्य हैं, जिनका कार्यान्वयन यथाशीघ्र होना चाहिये। जिससे भारतकी गोसम्पदा बचायी जा सके—

(१) सुदृढ़ केन्द्रीय कानून बनाकर गोवंशकी हत्या तुरंत बंद की जाय तथा गोमांसका निर्यात करना तत्काल बंद किया जाय।

(२) विभिन्न प्रदेशोंकी सरकार गौ-पालनके लिये चरागाहके निमित्त गोपालनसे सम्बन्धित संस्थाओंको अधिकाधिक भूमि प्रदानकर उनकी सुचारुरूपसे व्यवस्था करे तथा चरागाहके लिये पहले छोड़ी गयी जमीनको जो लोग अन्य उपयोगमें लायें उन्हें कड़ाईसे पुन: चरागाहके उपयोगमें लाया जाय।

(३) विभिन्न स्थानोंमें पशुचिकित्सालयकी स्थापना की जाय तथा पशुचिकित्सक तैयार किये जायँ।

(४) अच्छी नस्लके देशी साँड़ तैयार किये जायँ, जो विभिन्न स्थानोंके गोसदन और गोशालामें रखे जायँ।

(५) विभिन्न स्थानोंमें ऐसे गोशाला और गोसदन होने चाहिये जो अपने क्षेत्रके बीमार और कमजोर गोवंशको भरतीकर उनके पालन-पोषणकी समुचित व्यवस्था करें।

(६) अच्छी नस्लकी देशी गायें तैयार की जायँ, जिन्हें गोपालनके इच्छुक जनताको वितरण किया जा सके।

(७) गोदुग्धका गोशाला और गोसदनोंके द्वारा अपने क्षेत्रमें समुचित वितरणकी व्यवस्था की जाय।

(८) कृषि आदि कार्योंमें गोवंशका अधिकाधिक उपयोग किया जाय।

यदि उपर्युक्त बातोंपर गोशाला, गोसदन, गोभक्त जनता और हमारी सरकार गम्भीरतापूर्वक ध्यान दे और इसे शीघ्र कार्यान्वित किया जाय तो हम आज भी पुन: अपनी समृद्धिको प्राप्त कर सकते हैं।

आजसे लगभग ४९ वर्ष पूर्व सन् १९४५में 'कल्याण' के विशेषाङ्कके रूपमें 'गो-अङ्क' का प्रकाशन हुआ था।

उन दिनों 'कल्याण' की ग्राहक-संख्या सीमित होनेके कारण थोड़े ही लोग लाभान्वित हो सके। अत: बहुत दिनोंसे गोभक्तों एवं प्रेमी पाठकोंका गौ-सम्बन्धी विशेषाङ्क पुन: प्रकाशित करनेका अत्यधिक आग्रह चलता रहा। भगवत्प्रेरणासे मनमें यह विचार आया कि मनुष्य-जीवनके लक्ष्यको प्राप्त करनेका परम साधन अभीके समयमें गो-सेवासे बढ़कर कोई दूसरा नहीं। अत: यह निर्णय लिया गया कि तात्त्विक विवेचनोंसे युक्त यथासम्भव गोसेवाकी समस्त विधाओंपर प्रकाश डालनेवाला गायसे सम्बन्धित समग्र सामग्रियोंका एक संकलन 'कल्याण'-विशेषाङ्क' के रूपमें लोक-कल्याणार्थ यथाशीघ्र प्रकाशित किया जाय। फलस्वरूप आनन्दकन्द लीलापुरुषोत्तम भगवान् श्रीगोपाल कृष्णके अनुग्रहसे इस वर्ष कल्याणमयी भगवती गोमाताके स्तवन-अर्चनके रूपमें 'गोसेवा-अङ्क' जनता-जनार्दनकी सेवामें प्रस्तुत है।

इस अङ्कमें भगवती गौसे सम्बन्धित आध्यात्मिक एवं तात्त्विक निबन्धोंके साथ-साथ गौका विश्वरूप, गोसेवाका स्वरूप, गोपालन एवं गो-संवर्धनकी मुख्य विधाएँ, विविध धर्मों एवं सम्प्रदायोंमें गायका महत्त्व, गोवंशके विभिन्न रूपोंका विवेचन, गौका आर्थिक दृष्टिसे महत्त्व, हमारे स्वास्थ्यको सुरक्षित रखनेमें गौका योगदान, भारतके विभिन्न गोशाला एवं गोसदनोंके विवरण, देशमें गोहत्या-बंदीके लिये गोरक्षा-अभियान, गोसेवी संतों, साधकों और भक्तोंका परिचय एवं आख्यान तथा घटनाओंका विवरण देनेका प्रयास किया गया है। इसके साथ ही विभिन्न संस्कृतियोंमें गो-आराधन और गोसेवाका स्वरूप तथा गोदान एवं गो-सेवासे भगवत्प्राप्ति आदि विभिन्न विषयोंको इस विशेषाङ्कमें प्रस्तुत करनेकी चेष्टा की गयी है।

'गोसेवा-अङ्क' के लिये लेखक महानुभावोंने उत्साह-पूर्वक जो सहयोग प्रदान किया है, उसे हम कभी नहीं भूल सकते। हमें आशा नहीं थी कि वर्तमान समयमें गौसे सम्बन्धित आध्यात्मिक और आर्थिक पहलुओंपर प्रकाश डालनेवाले उच्चकोटिके लेख हमें सुलभ हो सकेंगे, किंतु सुरभि माताकी असीम कृपासे इतने लेख और अन्य सामग्रियाँ प्राप्त हुईं कि उन सबको इस अङ्कमें समाहित करना सम्भव नहीं था, फिर भी विषयकी सर्वाङ्गीणतापर ध्यान रखते हुए अधिकतम सामग्रियोंका संयोजन करनेका नम्र प्रयत्न अवश्य किया गया है। गौ माताके विशिष्ट भक्त, सेवक और संत-विद्वान् जो आज हमारे बीच नहीं हैं, उन महानुभावोंके कतिपय अति महत्त्वपूर्ण लेख भी पूर्व-प्रकाशित अङ्कोंसे संगृहीत कर लिये गये हैं, जिससे हमारे पाठकोंको उन विशिष्ट भक्तों, संत-महात्माओं और गोसेवकोंके अनुभवोंका भी लाभ प्राप्त हो सकेगा।

उन लेखक महानुभावोंके हम अत्यधिक कृतज्ञ हैं जिन्होंने कृपापूर्वक अपना अमूल्य समय लगाकर गोसेवासे सम्बन्धित सामग्री तैयार कर यहाँ प्रेषित की। हम उन सबकी सम्पूर्ण सामग्रीको विशेषाङ्कमें स्थान न दे सके, इसका हमें खेद है, इसमें हमारी विवशता ही कारण है; क्योंकि हम निरुपाय थे। इनमेंसे कुछ तो एक ही विषयपर अनेक लेख होनेसे छप नहीं सके तथा कुछ विचारपूर्ण अच्छे लेख विलम्बसे आये, जिनमें कुछ लेखोंको स्थानाभावके कारण पर्याप्त संक्षेप करना पड़ा और कुछ नहीं भी दिये जा सके। यद्यपि साधारण अङ्कोंमें इनमेंसे कुछ अच्छे लेखोंको देनेका प्रयत्न किया जा सकता है, फिर भी बहुतसे लेख अप्रकाशित ही रह सकते हैं, इसके लिये हम लेखक महानुभावोंसे हाथ जोड़कर विनीत क्षमा-प्रार्थी हैं।

'विशेषाङ्क' के प्रकाशनके समय कभी-कभी कुछ कठिनाइयाँ और समस्याएँ भी आती हैं, पर उन्हें सहन कर पानेकी शक्ति भी भगवान् विश्वेश्वर ही प्रदान करते हैं। इस वर्ष भी विभिन्न कठिनाइयाँ आयीं, परंतु सुरभिदेवीकी कृपासे सबका शमन हुआ।

प्रसन्नताकी बात है कि पिछले कुछ वर्षोंसे 'कल्याण'-की ग्राहक-संख्यामें वृद्धि हो रही है। दो वर्ष-पूर्व २० हजार ग्राहक 'कल्याण' के बढ़े थे। भगवत्कृपासे पिछले वर्ष भी इसी प्रकार ग्राहकोंकी संख्यामें लगभग २० हजारकी वृद्धि हुई, जिसके कारण 'विशेषाङ्क' के संस्करण दो बार पुन: छापने पड़े। फिर भी सम्पूर्ण माँग पूरी नहीं

की जा सकी। हम भी 'कल्याण' का प्रकाशन-वितरण अधिक संख्यामें करना चाहते हैं, जिससे अधिकाधिक लोग लाभान्वित हो सकें तथा सर्वसाधारणकी आध्यात्मिक रुचिमें वृद्धि हो, पर इस कार्यमें आपके सहयोगकी भी अत्यधिक आवश्यकता है, हम यह चाहते हैं कि प्रत्येक पाठक 'कल्याण' का कम-से-कम एक ग्राहक अवश्य बनायें, इससे आप इस आध्यात्मिक पत्रिकाके प्रचार-प्रसारमें सहायक हो सकेंगे। इस वर्ष भी गोभक्तोंके उत्साहको देखते हुए यह प्रतीत होता है कि 'कल्याण' की माँग बढ़ेगी। स्वभावतः इसके प्रचार-प्रसारसे जन-जीवनमें आध्यात्मिक चेतनाका विकास होगा और जन-सामान्य कल्याणके मार्गपर अग्रसर होंगे।

हम अपने उन सभी पूज्य आचार्यों, परम सम्मान्य पवित्र-हृदय संत-महात्माओं, गोभक्त-सेवक और गोपालक महानुभावोंके श्रीचरणोंमें श्रद्धा-भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हैं, जिन्होंने 'विशेषाङ्क' की पूर्णतामें किंचित् भी योगदान किया। गोसेवा और गोभक्तिके प्रचार-प्रसारमें वे ही मुख्य निमित्त भी हैं, क्योंकि उन्हींके सद्भावपूर्ण एवं उच्च विचारपूर्ण लेखोंसे जन-सामान्यको गौके वास्तविक स्वरूपका दिग्दर्शन होगा। हम अपने विभागके तथा प्रेसके अपने उन सभी सम्मान्य साथी-सहयोगियोंको भी प्रणाम करते हैं, जिनके स्नेहभरे सहयोगसे यह पवित्र कार्य सम्पन्न हो सका है। हम अपनी त्रुटियों तथा व्यवहार-दोषके लिये उन सबसे क्षमा-प्रार्थी हैं।

'गोसेवा-अङ्क' के सम्पादनमें जिन भक्तों, गोपालकों, संतों और विद्वान् लेखकोंसे हमें सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ है, उन्हें हम अपने मानस-पटलसे विस्मृत नहीं कर सकते। समादरणीय गोभक्त श्रीराधाकृष्णजी बजाज, श्रीलक्ष्मीनारायणजी मोदी, श्रीपुरुषोत्तमलालजी झुनझुनवाला, श्रीपरमानन्दजी मित्तल तथा श्रीसीतारामजी साबू आदि महानुभावोंके प्रति मैं हृदयसे आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने 'गोसेवा-अङ्क' के प्रकाशनमें अपना प्रेरणापद सहयोग प्रदानकर उत्साहवर्धन किया। इस संदर्भमें हमें सर्वाधिक सहयोग 'गोधन' के सम्पादक भाई शिवकुमारजी गोयलसे प्राप्त हुआ, जिन्होंने गोरक्षाके विभिन्न सेनानी, सेवक और भक्तोंके चरित्र, उनकी कथाएँ और घटनाएँ तथा अपने पूज्य पिता श्रीरामशरणदासजीके संग्रहालयसे प्राप्त कई दुर्लभ सामग्रियोंको उपलब्ध कराया। इनके प्रति हम अपना हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं। अपने सम्पादकीय विभागके वयोवृद्ध विद्वान् पं० श्रीजानकीनाथजी शर्मा तथा कुछ अन्य सहयोगियोंके अथक परिश्रमसे ही यह विशेषाङ्क इस रूपमें प्रस्तुत हो सका है। इसके सम्पादन तथा प्रूफ-संशोधन चित्र-निर्माण आदि कार्योंमें जिन-जिन लोगोंसे हमें सहायता मिली है, वे सभी हमारे अपने हैं, उनको धन्यवाद देकर हम उनके महत्त्वको घटाना नहीं चाहते। वास्तवमें 'कल्याण'का कार्य परमात्मप्रभुका कार्य है। भगवान् अपना कार्य स्वयं करते हैं, हम तो केवल निमित्त मात्र हैं।

इस बार 'गोसेवा-अङ्क' के सम्पादन-कार्यके अन्तर्गत प्रकाशनके निमित्त जो सामग्री प्राप्त हुई, उसके अध्ययन, मनन और चिन्तनसे यह अनुभव हुआ कि गौ माता हमारी सर्वोपरि श्रद्धाका केन्द्र है और भारतीय संस्कृतिकी आधारशिला है। वस्तुतः गोमाता सर्वदेवमयी है। अपने शास्त्रोंमें तैंतीस कोटि देवताओंका वर्णन मिलता है। यदि अपने सम्पूर्ण तैंतीस कोटि देवी-देवताओंका षोडशोपचार अथवा पञ्चोपचार-पूजन करना हो तो यह किस प्रकार सम्भव हो सकता है? '**सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः**' केवल एक गौ माताकी पूजा और सेवा करनेसे एक साथ सम्पूर्ण देवी-देवताओंकी पूजा सम्पन्न हो जाती है, अतः प्रेय और श्रेय अथवा समृद्धि और कल्याण—दोनोंकी प्राप्तिके लिये गोसेवासे बढ़कर कोई दूसरा परम साधन नहीं है। आशा है 'कल्याण' के पाठकगण भी इससे पूर्ण लाभान्वित होंगे।

अन्तमें हम अपनी त्रुटियोंके लिये आप सबसे क्षमा-प्रार्थना करते हुए दीनवत्सला करुणामयी सुरभि गोमाताके श्रीचरणोंमें प्रणतिपूर्वक यह प्रार्थना करते हैं कि 'गायें ही हमारे आगे हों, गायें ही हमारे पीछे हों, सब ओर गायें हों तथा गायोंके मध्यमें ही हमारा निवास हो'—

गावो ममाग्रतः सन्तु गावः पृष्ठत एव च।
गावः सर्वतश्चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

—राधेश्याम खेमका
सम्पादक

परिशिष्टाङ्ककी विषय-सूची

'गावः पवित्रं माङ्गल्यम्'

[श्रीरामचन्द्रजी तिवारी एम० ए० (संस्कृत), धर्मविशारद]

हमारा देश भारत सदासे धर्म-प्रधान रहा है। इसके कल्याणके लिये गो-रक्षा अनिवार्य धर्म्य कर्तव्य है। संसारके जो उपकार गोमाताने किये हैं, उनके महत्त्वको जानते हुए भी जो लोग गौकी उपेक्षा करते हैं, गो-रक्षाके प्रश्नपर ध्यान नहीं देते, वे कर्तव्य-रहित और अन्यायी हैं। जो लोग गोवध करके स्वधर्म-निर्वाहका स्वाँग रचते हैं, उनके अज्ञानका तो ठिकाना ही नहीं। गो-सदृश उपकारी प्राणीका वध करना कभी भी न्यायसंगत अथवा धर्म-संगत नहीं कहा जा सकता।

गो-माहात्म्यका वर्णन हमारे धर्मशास्त्रोंमें प्रचुर मात्रामें विद्यमान है। गायें पवित्र, मङ्गलकारक होती हैं, इनमें समस्त लोक प्रतिष्ठित हैं। गायें यज्ञका विस्तार करती हैं। वे समस्त पापोंका विनाश करती हैं। 'विष्णुस्मृति'का वचन है—

गावः पवित्रं माङ्गल्यं गोषु लोकाः प्रतिष्ठिताः।
गावो वितन्वते यज्ञं गावः सर्वाघसूदनाः॥

गोमूत्र, गोमय, गोघृत, गोदुग्ध, गोदधि और गोरोचन— ये गायके छः पदार्थ सर्वदा माङ्गलिक होते हैं—

गोमूत्रं गोमयं सर्पिः क्षीरं दधि च रोचना।
षडङ्गमेतत् परमं मङ्गल्यं सर्वदा गवाम्॥

गायोंको नियमित ग्रास मात्र देनेसे भी मनुष्य स्वर्गलोकमें सम्मानित होता है—

गवां ग्रासप्रदानेन स्वर्गलोके महीयते॥

(विष्णुस्मृति)

यमस्मृति (७१-७२) में भी गायको रंग-भेदपूर्वक गो-पदार्थ-भेदसे समस्त पापोंका नाश करनेवाली बताया गया है, जैसे—श्वेत रंगकी गायका मूत्र, श्याम रंगकी गायका गोबर, ताम्र-वर्णकी गायका दूध, सफेद गायका दही और कपिला गायका घृत ये सभी ग्राह्य हैं तथा समस्त पापोंका नाश करनेवाले हैं—

शुक्लाया मूत्रं गृह्णीयात् कृष्णाया गोशकृत् तथा।
ताम्रायाश्च पयो ग्राह्यं श्वेताया दधि चोच्यते॥
कपिलाया घृतं ग्राह्यं महापातकनाशनम्।

स्मृतियोंमें गो-दानका महत्त्व विस्तारसे बतलाया गया है, जैसे—बक-(बगुला) की हत्या करनेसे नाक लंबी होती है, अतः उसकी शुद्धिके लिये श्वेत रंगकी गायके दानका विधान है। काकघाती पुरुष कर्णहीन होता है, अतः उसे श्यामा गौका दान करना चाहिये—

वकघाती दीर्घनसो दद्यात् गां धवलप्रभाम्।
काकघाती कर्णहीनो दद्याद् गामसितप्रभाम्॥

(शातातपस्मृति ८७)

धूर्तता करनेवाला मृगीका रोगी होता है। उसे ब्रह्मकूर्चमयी धेनु और दक्षिणासहित गो-दान करना चाहिये—

धूर्तोऽपस्माररोगी स्यात् स तत्पापविशुद्धये।
ब्रह्मकूर्चमयीं धेनुं दद्याद् गां च सदक्षिणाम्॥

(शातातपस्मृति ९९)

परायी निन्दा करनेवाला सिरका गंजा होता है, उसे स्वर्णसहित धेनुका दान करना चाहिये। दूसरेकी हँसी उड़ानेवाला काना होता है, पाप-प्रायश्चित्तके लिये उसे मोतियोंसे युक्त गौका दान करना चाहिये—

खल्वाटः परनिन्दावान् धेनुं दद्यात् सकाञ्चनाम्।
परोपहासकृत् काणः स गां दद्यात् समौक्तिकाम्॥

(शातातपस्मृति १०९)

सम्यक् आत्मशुद्धिके लिये गोमूत्र, गोमय, क्षीर, दधि तथा घृतका पाँच दिनतक आहार करनेका विधान वसिष्ठस्मृतिमें किया गया है—

गोमूत्रं गोमयं चैव क्षीरं दधि घृतं तथा।
पञ्चरात्रं तदाहारः पञ्चगव्येन शुध्यति॥

(वसिष्ठस्मृति ३७०)

स्मृतिकारोंका कथन है कि गाय यदि बछड़ेको पिला रही हो तो न तो उसे रोके और न यह बात उसके मालिकको बताये—

'नाचक्षीत धयन्तीं गाम्' (याज्ञ० १। १४०)

'गां धयन्तीं परस्मै नाचक्षीत न चैनां वारयेत्।'

(गौतमस्मृति)

मार्गमें गौ, ब्राह्मण, राजा और अन्धोंको निकल जानेके लिये रास्ता स्वयं छोड़ देना चाहिये—

पन्था देयो ब्राह्मणाय गवे राज्ञे ह्यचक्षुषे।

(बौधायनस्मृति, स्नातकव्रतानि ३०)

—इस प्रकार हम देखते हैं कि धर्मशास्त्रोंमें गायका अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि गाय हमारे समस्त पापोंको नष्ट करनेवाली है। जिस गायसे दूध ग्रहण करके हम शक्तिशाली बनते हैं, जिस गायके बछड़े हमारे क्षेत्रोंको जोतकर प्रचुर मात्रामें हमें जीवित रहनेके लिये खाद्य-सामग्री प्रदान करते हैं, उसी, मर्त्यलोकका ही नहीं, अपितु स्वर्गलोकका भी ऐश्वर्य प्रदान करनेवाली गोमाताका वध करनेवाले जो लोग स्वयं धार्मिक बननेका स्वाँग रचते हैं वे निश्चितरूपसे निन्दनीय हैं। धर्मके वास्तविक स्वरूपको उन्होंने जाना ही नहीं है। कोई भी धर्म किसी भी प्राणीका प्राण लेनेकी अनुमति नहीं देता है। अपार खेदका विषय है कि गो-संरक्षण एवं गो-सेवाभाव दिन-प्रति-दिन लुप्त होते जा रहे हैं। गौका अपमान होनेके कारण ही हमारा देश, जहाँ घी-दूधकी नदियाँ बहती थीं, आज दूधके लिये तड़प रहा है। कुछ दिनोंमें देव-पितृकार्यार्थ भी दूध मिलना कठिन हो सकता है। अतः गोपालन-रक्षण अत्यावश्यक है। कहा गया है कि जिस घरमें गाय नहीं है, जहाँ वेद-ध्वनि नहीं होती और जो घर बालकोंसे भरा-पूरा न हो वह घर घर नहीं है, अपितु श्मशान है—

यन्न वेदध्वनिध्वान्तं न च गोभिरलंकृतम्।
यन्न बालैः परिवृतं श्मशानमिव तद् गृहम्॥

(अत्रिसंहिता ३१०)

हम अपने घरको श्मशान न बनायें। गो-पालन करें, घी, दूधकी नदियाँ प्रवाहित करें, जिससे हमारा परिवार, हमारा गाँव, हमारा प्रदेश, हमारा देश भारतवर्ष पुनः पूर्वप्रतिष्ठाको प्राप्त कर सके। गोसंरक्षण, गोपालन और गोसंवर्धन सर्वथा सर्वत्र होना चाहिये। जब ऐसा होगा तभी हमारा देश कल्याण प्राप्त कर सकेगा और राष्ट्रकी प्रतिष्ठा ऊँची हो सकेगी।

वेदमें गौकी पूज्यता

[पं० श्रीलालबिहारीजी मिश्र]

वेदमें गौकी बहुत महिमा गायी गयी है। गौकी उत्पत्ति भी इसकी महिमाकी कम अभिव्यञ्जक नहीं है। तैत्तिरीय ब्राह्मणमें एक आख्यायिका आती है—'ब्रह्माजीने प्रजाकी सृष्टिमें अपनी सारी शक्ति लगा दी। अब वे अपनेको अशक्त पा रहे थे। प्रजाओंके भरण-पोषण आदिकी समस्या उनके सामने खड़ी थी। इसके लिये उन्होंने फिर तपस्या प्रारम्भ कर दी। इस बार ब्रह्माजीकी इस तपश्चर्यासे इतनी शक्ति उमड़ी कि उसका धारण कर पाना उनके लिये कठिन हो गया। अन्तमें वह असीम शक्ति उनके देहसे बाहर निकलकर गौके रूपमें परिणत हो गयी। वह इतनी मनोरम थी कि उसे लेनेके लिये सभी देवता लालायित हो गये।' (तैत्तिरीय ब्राह्मण १। १। १०)

—इस आख्यायिकासे व्यक्त होता है कि प्रजाओंके भरण-पोषणके लिये गौका आविर्भाव हुआ। इसके दूध, दही और घीसे देवता, पितर और मनुष्योंका आहार मिलने लगा और इसके गोमय तथा गोमूत्रसे अन्नकी उत्पादन-क्षमता बढ़ गयी। इस तरह गौसे विश्वभरका कल्याण हो गया। इसीलिये वेदने गौको विश्वरूप और सर्वरूप भी कहा है—**'एतद्वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम्।'**

(अथर्ववेद ९। ७। २५)

यजुर्वेदने एक मन्त्र (८। ४३) में गौके बहुतसे गुणोंका अभिव्यञ्जन कर दिया है—

इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति।
एता ते अघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मा सुकृतं ब्रूतात्॥

—इस श्रुतिने गौके लिये इडा और विश्रुति **'विविधं श्रूयते स्तूयते इति विश्रुतिः।'** (यजु० ८। ४३ महीधर-भाष्य)—इन दो पदोंका प्रयोग कर यह सूचित किया है कि गौ स्तुत्य है, उसकी स्तुति की जानी चाहिये। 'काम्या' पदसे सूचित किया कि गौ सबकी कामनाओंको पूर्ण करनेवाली है। एक अन्य श्रुतिने स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया है कि

'**मनुष्याणाᳶह्येतासु कामाः प्रविष्टाः**' (महीधर-भाष्य)। अर्थात् मनुष्योंकी सारी कामनाएँ गौमें प्रविष्ट हैं। श्रुतिने 'चन्द्रा' शब्दसे सूचित किया है कि गौ सबको आह्लाद प्रदान करनेवाली होती है। 'ज्योता' पदसे व्यक्त होता है कि गौ नरक आदि अन्धकारसे निकालकर प्रकाशमें ला देती है। इस तरह वेदकी दृष्टिमें गौ देवता है, पूज्य है—

(क) '**देवीं..........गां०**' (ऋग्वेद ८।१०१।१६) तथा (ख) '**उदस्थात् देवी अदितिः (गौः)**' (तैत्तिरीय ब्राह्मण १।४३)।

वेदने गौके सम्बन्धमें विविध दृष्टिसे विविध महत्त्व बताये हैं। यहाँ केवल गौकी पूज्यतापर ही संक्षिप्त विचार प्रस्तुत किया जा रहा है—

मनन

उपर्युक्त श्रुतिके वचनोंसे ज्ञात हो जाता है कि 'गौ' कोई साधारण वस्तु नहीं है, अपितु देवता है, पूज्य है। श्रुति-वाक्योंके श्रवणके बाद मनन अपेक्षित हो जाता है—

श्रोतव्यः श्रुतिवाक्येभ्यो मन्तव्यश्चोपपत्तिभिः।

प्रश्न उठता है कि गौ तो प्रत्यक्ष ही पशु है। मनुष्य पशुके स्तरसे ऊपर उठा हुआ प्राणी है, फिर मनुष्य पशुकी पूजा क्यों करता है? आखिर गौमें मनुष्यसे क्या अच्छाई है, जिससे मनुष्य इसके सामने झुके? सच तो यह है कि गौमें मनुष्यकी अपेक्षा ज्ञानकी कमी, धर्मका अभाव और खान-पान भी विचित्र ही है, मनुष्यका सात बरसका बच्चा भी किसी विदेशीको किसी स्थानका ठीक पता बता सकता है, जबकि बूढ़ी भी गौ किसी स्थानका कोई पता नहीं बता पाती। मनुष्य चाहे जितना भी भ्रष्ट हो गया हो, कम-से-कम वह माता और बहनका ख्याल अवश्य रखता है, किंतु गोजातिमें न माताका ख्याल रखा जाता है, न बहनका। अतः मनुष्य गौके सामने क्यों सिर झुकाये, क्यों इसकी स्तुति करे और क्यों इसे माने?

यह प्रश्न उस व्यक्तिके लिये हौआ बन जाता है जो वेदकी अपौरुषेयता और अज्ञातार्थ-ज्ञापकतासे अपरिचित है। प्रत्यक्ष और अनुमानसे जो तथ्य हम नहीं जान पाते, उस तथ्यको बतलाना ही वेदका वेदत्व है। वेद पूज्यवर्गमें दैवीशक्तिकी धाराका संचार मानता है। वह पूज्यवर्ग उस दैवी धारासे भले ही स्वयं प्रकाशित न हो, किंतु पूजनसे सम्बद्ध अपने पूजकको प्रकाशित कर ही देता है। जैसे बिजलीके तारमें विद्युत्की धाराएँ प्रवाहित होती रहती हैं, इन धाराओंसे वह भले ही स्वयं प्रकाशित न होता हो लेकिन अपनेसे सम्बद्ध बल्वको प्रकाशित कर ही देता है। इस तरह वेदका सिद्धान्त है कि पूज्य अपने कर्तव्यसे मरकर भले नरकमें जाय, किंतु अपने पूजकका कल्याण कर ही देता है।

इस लेखके छोटेसे कलेवरमें वेदकी अपौरुषेयता और इसकी अज्ञातार्थ-ज्ञापकता—इन दोनों तथ्योंका साङ्गोपाङ्ग विवेचन सम्भव नहीं है; किंतु प्रत्येक ईश्वरवादीको इतना तो मान ही लेना पड़ता है कि ईश्वरका ज्ञान नित्य हुआ करता है और वह ज्ञान शब्दको छोड़कर नहीं रहा करता। अर्थात् प्रत्येक ज्ञानमें शब्दानुवेद अवश्य रहता है— '**अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भाषते**' (वाक्यपदीय)। इसी ईश्वरीय ज्ञानको प्रकट करनेवाले शब्दराशिको वेद कहते हैं। जैसे ईश्वर नित्य है, उसी तरह उसके नित्य-ज्ञानके प्रतिपादक शब्दराशि-रूप वेद भी नित्य हैं। उस वेदमें कोई पुरुष दखल नहीं दे सकता, इसलिये वेद अपौरुषेय है। इस वेदने गौको पूज्य माना है, इसलिये यह सिद्धान्त मान्य है और वेदने यह भी बताया है कि गौकी पूजा करनेसे ऐहिक और आमुष्मिक अभ्युदय प्राप्त होता है। तैत्तिरीय ब्राह्मणमें एक आख्यायिका आती है—'एक बार ब्रह्माजीने अचेतन जगत्की सृष्टि कर दी थी। इसके बाद वे चाहते थे कि जीवात्मासे युक्त चेतन-वस्तु उत्पन्न हो, इसी कामनासे उन्होंने होम किया। उस होमसे अग्नि, वायु और आदित्य-रूप तीन चेतन-देवता उत्पन्न हुए। इन तीनों देवताओंने भी चेतन-जगत्के विस्तारके लिये होम किया। उन तीनोंके होम करनेके बाद एक गौ उत्पन्न हुई— '**तेषाᳶ हुतादजायत गौरेव।**' (तैत्तिरीय ब्राह्मण २।१।६)। उसे देखकर तीनों देवताओंने उसे अपनाना चाहा। प्रत्येकका कहना था कि मेरे होमसे यह गौ उत्पन्न हुई है, इसलिये यह मेरी है। निर्णयके लिये तीनों देवता ब्रह्माजीके पास गये। ब्रह्माजीने उनसे पूछा कि आप तीनोंमेंसे किसने किस देवताको आहुति दी? अग्निदेवताने बताया कि मैंने प्राण देवताके लिये आहुति दी। वायुदेवताने शरीराभिमानी देवताको

और आदित्यने नेत्राभिमानी देवताको आहुति देनेकी बात कही। तब प्रजापतिने निर्णय लिया कि शरीर और चक्षु—ये दोनों प्राणके अधीन हैं; इनमें प्राण ही मुख्य है, इसलिये प्राणदेवताके होमसे ही गौ उत्पन्न हुई और वह गौ अग्निको समर्पित कर दी गयी। तभीसे गौका नाम 'अग्निहोत्र' पड़ गया। '**गौर्वा अग्निहोत्रम्**।' (तैत्ति० ब्राह्मण ३। १। ६)

इसके बाद इसी श्रुतिने बताया है कि इस अग्निहोत्री धेनुकी जो पूजा करता है, वह इस लोकमें अभ्युदय तो प्राप्त करता ही है, मरनेके बाद उसे स्वर्ग मिलता है—'**तृप्यति प्रजया पशुभिः। प्र सुवर्गं लोकं जानाति। पश्यति पुत्रम्। पश्यति पौत्रम्**।' (३। १। ८) '**देहपातादूर्ध्वं स्वर्गं प्रजानाति। ततः पूर्वं दीर्घायुष्येण युक्तः पुत्रं पौत्रं च पश्यति**।' (सायणभाष्य)

वेदके इस प्रमाणसे स्पष्ट हो जाता है कि पूज्यवर्गमें जो दैवीशक्तिकी धारा बहती रहती है, उससे पूजक तो प्रकाशित हो ही जाता है, किंतु अनास्थारूपी तिमिररोग लग जानेसे अपौरुषेय वेदके इस पुनीत प्रकाशको मनुष्य देख नहीं पाता। प्रत्यक्ष घटनासे इस रोगकी चिकित्सा हो जाती है और फिर आँखें स्वस्थ होकर उस पुनीत प्रकाशको देख पाती हैं। इसलिये इस सम्बन्धमें एक सत्य घटना प्रस्तुत की जा रही है—

कुआँ बनानेवाला एक मजदूर अपनी पत्नीके साथ आम रास्तेपर एक कुआँ खोद रहा था। उसकी पत्नी मिट्टी फेंकनेका काम करती थी और मजदूर कुआँ खोदनेका। शामको घर लौटनेके पहले छोटी नदीसे नित्यक्रिया सम्पन्न कर घर लौट जाते थे। नदी छोटी थी। उस दिन उसमें अचानक पानी बढ़ गया। अँधेरा बढ़ता जा रहा था। उसे सुनायी पड़ा कि कोई प्राणी जोर-जोरसे साँस खींच रहा है। नजदीक जानेपर एक गौको उसने कीचड़में फँसी हुई पाया। वह जल पीने आयी होगी, उसका पाँव दलदलमें फँस गया और इसी बीचमें पानीका बढ़ाव हो गया। पानी उसके थुँथनेतक पहुँच चुका था। थोड़ा पानी और बढ़ता तो वह डूब जाती। गायकी यह दुर्दशा उससे देखी नहीं गयी। गाँवसे लोगोंको बुलाकर उसने उसका उद्धार किया। इसके कुछ दिनोंके बाद जब वह कुआँ खोद रहा था, कुआँ भहरा गया और वह करोड़ों मन मिट्टीसे दब गया। किंतु उसने देखा कि उसके सिरपर वही गाय खड़ी है, जिसे उसने डूबनेसे बचाया था। मिट्टीका बहुत बड़ा बोझ गायके पीठपर था और उसके नीचे वह अपनेको सुरक्षित अनुभव कर रहा था। गायके इशारेसे उसने उसका दूध पीया और उसीके इशारेसे वह एक खोहमें घुसता हुआ दूसरे कुएँमें निकल गया। वहाँ वह आवाज देने लगा कि हमको कोई निकालो। लोगोंने उसे निकाल दिया।

इस घटनासे स्पष्ट हो जाता है कि जिस गौको उस मजदूरने बचाया था, वह अपने मालिकके यहाँ भूसा खा रही थी, दूध दे रही थी, उसको इस तथ्यका ज्ञान भी न था कि मैं किसीको बचा रही हूँ, किंतु वेदसे प्रतिपादित गौकी आधिदैविक शक्तिसे गोरूपमें परिणत होकर मजदूरको बचा लिया। तैत्तिरीय श्रुतिके उदाहरणमें यह एक प्रत्यक्ष घटना है, जिसमें बतलाया गया है कि गौकी आधिदैविक शक्ति उसे गोलोकतक पहुँचा देती है।

गाय रक्षा करती है

गाय मनुष्यका सर्वश्रेष्ठ हितैषी है। तूफान, ओला, अनावृष्टि या बाढ़ आवे और हमारी फसलोंको नष्ट करके हमारी आशाओंपर पानी फेर दे, किंतु फिर भी जो बच रहेगा उसीसे गाय हमारे लिये पौष्टिक और जीवन धारण करनेवाला आहार तैयार कर देगी। उन हजारों बच्चोंके लिये जो गाय जीवन ही है, जो दूधरहित वर्तमान नारीत्वकी रेतीपर पड़े हुए हैं।

हम उसकी सिधाई, उसके सौन्दर्य तथा उसकी उपयोगिताके लिये उसे प्यार करते हैं। उसकी कृतज्ञतामें कभी कमी नहीं आयी। हमारे ऊपर दुर्भाग्यका हाथ तो होना ही चाहिये, क्योंकि हमलोग सालोंसे अपने कर्तव्यसे गिर गये हैं। हम जानते हैं कि गाय हमारे एक मित्रके रूपमें है, जिससे कभी कोई अपराध नहीं हुआ, जो हमारी पाई-पाई चुका देती है और घरकी—देशकी रक्षा करती है।—ई० जी० बेनेट

श्रीमद्भागवतमें गोसेवाका आदर्श

[श्रीचतुर्भुजजी तोषनीवाल]

यद्यपि हिंदू वेदोंकी भाँति गायको भी धर्मका अन्यतम प्रतीक मानते हैं, किंतु कालके फेरसे गायके प्रति सच्ची श्रद्धामें कमी आ जानेसे आज गोसेवा एक आडम्बर मात्र बनकर रह गयी है, उसमें आन्तरिक श्रद्धाका अभाव-सा होता दीखता है। अतः गोसेवाके प्राचीन आदर्शको पुनः प्रतिष्ठित करनेके लिये हमें योगेश्वरेश्वर भगवान् श्रीकृष्णद्वारा प्रस्तुत आदर्शका अनुशीलन करके उसे व्यवहारमें लाना होगा, तभी हम सच्चे गोभक्त, सच्चे गोसेवक कहलाये जा सकेंगे। इसी महदुद्देश्यसे यहाँ श्रीमद्भागवतमें वर्णित गोमहिमा एवं गोसेवाके कुछ प्रसंगोंको संक्षेपमें प्रस्तुत किया जा रहा है।

श्रीमद्भागवतमें महाप्रतापी दैत्यराज हिरण्यकशिपुके राज्यका वर्णन करते हुए कहा गया है कि उसके राज्यमें पृथ्वी बिना जोते-बोये यथेच्छ अन्नादि देती थी—'**अकृष्टपच्या तस्यासीत् सप्तद्वीपवती मही**' (७। ४। १६)। इसी प्रकार खानें, आकाश, समुद्र, ऋतुएँ—सभी उसके मनोऽनुकूल पदार्थ उपलब्ध कराते थे, किंतु अजितेन्द्रिय होनेके कारण उसे फिर भी तृप्ति नहीं मिलती थी एवं उस मदोन्मत्तके उच्छृंखल व्यवहारसे देवता, ऋषि, मनुष्य आदि सभी संत्रस्त रहते थे। देवताओंके द्वारा श्रीभगवान्‌को अपनी व्यथा निवेदन किये जानेपर यह भविष्यवाणी हुई—

यदा देवेषु वेदेषु गोषु विप्रेषु साधुषु।
धर्मे मयि च विद्वेषः स वा आशु विनश्यति॥

(७। ४। २७)

'कोई भी प्राणी जब देवता, वेद, गाय, ब्राह्मण, साधु, धर्म एवं मुझसे द्वेष करने लगता है तब शीघ्र ही उसका विनाश हो जाता है।' यह सार्वकालिक दैवी विधान है। पृथ्वी और गाय अभिन्न हैं, जब-जब पृथ्वी दुष्टोंके भारसे पीड़ित हुई है, तब-तब वह गौका रूप धारण करके ही श्रीभगवान्‌को अपनी दुःखगाथा सुनाती है।

राजा परीक्षित्‌ने राज्य-निरीक्षण करते समय एक दिन एक पैरवाला वृष तथा एक अत्यन्त दुःखित गायको देखा, जिसकी आँखोंसे आँसुओंकी झड़ी लग रही थी,मानो उसका बच्चा मर गया हो। इस दृश्यसे व्यथित होकर राजाने अपनी विचक्षण बुद्धिसे इसके कारणका पता लगा लिया और उन्हें आश्वासन देते हुए राजाका कर्तव्य-निरूपण करनेवाले सुन्दर वचन कहे—

मा सौरभेयानुशुचो व्येतु ते वृषलाद् भयम्।
मा रोदीरम्ब भद्रं ते खलानां मयि शास्तरि॥
यस्य राष्ट्रे प्रजाः सर्वास्त्रस्यन्ते साध्व्यसाधुभिः।
तस्य मत्तस्य नश्यन्ति कीर्तिरायुर्भगो गतिः॥

(१। १७। ९-१०)

'हे धेनुपुत्र! अब आप शोक न करें। इस शूद्रसे निर्भय हो जायँ। गोमाता! मैं दुष्टोंको दण्ड देनेवाला हूँ अब आप रोयें नहीं। आपका कल्याण हो। देवि! जिस राजाके राज्यमें दुष्टोंके उपद्रवसे सारी प्रजा त्रस्त रहती है, उस मतवाले राजाकी कीर्ति, आयु, ऐश्वर्य और परलोक—सभी नष्ट हो जाते हैं।' यहाँतक भी कहा गया है कि गौ और ब्राह्मणके हितके लिये एवं किसीको मृत्युसे बचानेके लिये असत्यभाषण भी निन्दनीय नहीं है—

गोब्राह्मणार्थे हिंसायां नानृतं स्याज्जुगुप्सितम्॥

(८। १९। ४३)

किंतु भगवान् व्यासको इतनेसे ही कहाँ संतोष था। गाय तो श्रीभगवान्‌का स्वरूप ही है एवं श्रीभगवान्‌ने गायोंको विशेषरूपसे अपना ही माना है—'**मदीयाः**'। श्रीभगवान् सनकादि ऋषियोंसे कह रहे हैं—

ये मे तनूर्द्विजवरान् दुहतीर्मदीया
भूतान्यलब्धशरणानि च भेदबुद्ध्या।
द्रक्ष्यन्त्यघक्षतदृशो ह्यहिमन्यवस्तान्
गृध्रा रुषा मम कुषन्त्यधिदण्डनेतुः॥

(३। १६। १०)

तात्पर्य यह है कि 'ब्राह्मण, मेरी गायें एवं आश्रयहीन अनाथ प्राणी—ये तीनों मेरे ही शरीर हैं। पापोंके कारण विवेकहीन हुए जो लोग उन्हें भेददृष्टिसे देखते हैं, उन्हें मेरे द्वारा नियुक्त यमराजके गृध्ररूपी दूत—जो सर्पोंके समान क्रोधी हैं—अत्यन्त क्रोधयुक्त होकर चोंचोंसे नोचते हैं।' सब प्राणियोंमें समदृष्टि नहीं रखनेवालोंके प्रति इतना कठोर दण्डविधान अन्यत्र उपलब्ध नहीं होता। मनुपुत्र पृषध्र (जो गुरुजीद्वारा गायोंकी रक्षामें नियुक्त था) द्वारा घनघोर अँधेरी रातमें गायको बाघसे बचानेके प्रयत्नमें भूलसे गाय मारी गयी। इस अनसोचे अपराधके लिये भी उसे गुरुशाप भोगना पड़ा और कठोर तपस्याद्वारा ही उसे ब्रह्मकी प्राप्ति हुई। गायके प्रति किये गये किसी भी अपराध-के लिये क्षमा नामकी कोई वस्तु प्राचीन कालमें नहीं थी।

उपर्युक्त प्रतिपादित सिद्धान्तको ध्यानमें रखकर अब श्रीमद्भागवतमें वर्णित भगवान् श्रीकृष्णकी व्रजलीलाके कुछ प्रसंगोंपर ध्यान दें। प्रायः सभी अध्यायोंमें किसी-न-किसी रूपमें गोवंशका प्रसंग आया ही है। दशम स्कन्धके प्रथम अध्यायके अठारहवें श्लोकमें वर्णन आया है कि पृथ्वी दुष्ट राजाओंके अत्याचारोंसे पीडित होकर ब्रह्मादि देवताओंके साथ गौका रूप धारण करके श्रीभगवान्‌की शरणमें जाती है—

'गौर्भूत्वाश्रुमुखी खिन्ना क्रन्दन्ती करुणं विभोः।'

भाव यह है कि उसके नेत्रोंसे आँसुओंकी झड़ी लग रही थी, वह कृश हो गयी थी, करुण स्वरसे डकरा रही थी। भगवान् श्रीकृष्णने गौको अपना अभिन्न स्वरूप ही माना है और व्रजकी सारी लीलाओंका केन्द्रबिन्दु गायें और गोपियाँ ही हैं। श्रीकृष्ण उनके रक्षक, सेवक और सखा—सभी कुछ बने हैं। व्रजमें कोई भी उत्सव गाय अथवा उसके द्वारा दिये गये पदार्थोंके बिना सम्पन्न नहीं होते। मथुरामें श्रीवसुदेवजीके घर जन्म ग्रहण करनेपर भी उनका जन्मावधि कैशोरतकका समय गोपराज नन्दबाबाके यहाँ गायोंके सांनिध्यमें ही बीता है। जन्मोत्सवपर नन्दबाबाद्वारा सवत्सा साभूषणा अनेकों गायें दानमें दी गयीं और खुशीमें गायों, बैलों, बछड़ोंको खूब सजाया गया—**'गावो वृषा वत्सतरा हरिद्रातैलरूषिताः........'** (१०।५।७)

उधर दैत्योंद्वारा भी योजना बनायी गयी कि चूँकि ब्राह्मण, गौ आदि भगवान् विष्णुके शरीर ही हैं और उनकी पुष्टि गव्य पदार्थोंसे ही होती है (१०।४।४१), अतः हमें हविष्य पदार्थ देनेवाली गायोंका नाश कर देना चाहिये—**'गाश्च हन्मो हविर्दुघाः'** (१०।४।४०)। पूतनावधके पश्चात् गोपियोंने बालक श्रीकृष्णकी बाधा उनके मस्तकपर गोपुच्छ फिराकर, गोमूत्रसे स्नान कराकर, अङ्गोंमें गोरज और गोबर लगाकर उतारी....।'

'गोपुच्छभ्रमणादिभिः॥
गोमूत्रेण स्नापयित्वा पुनर्गोरजसार्भकम्।
रक्षां चक्रुश्च शकृता......॥'

(१०।६।१९-२०)

तृणावर्तद्वारा अपहृत बालक कृष्णकी यादमें बिलखती माँ यशोदाकी उपमा मृतवत्सा गौसे करके—**'मृतवत्सका यथा गौः'** (१०।७।२४)—गायको भी माँका पद दिया गया है। कृष्ण और बलरामके नामकरण-संस्कारका स्थान गर्गाचार्यजीद्वारा गोशालाको चुना जाना भी महत्त्वपूर्ण है। गोवत्सोंकी पूँछ पकड़कर घसीटे जानेकी बाललीला उनके 'गोविन्द' बननेकी भूमिका ही तो है। **'प्रगृहीतपुच्छैः।'** **'वत्सैरितस्तत उभावनुकृष्यमाणौ'** (१०।८।२४)।' तथा **'वत्सान् मुञ्चन्.....'**—'(१०।८।२९) द्वारा बछड़ोंके प्रति सख्यभाव प्रदर्शित है और वे भी अपनी माताओंका दूध पेट भरकर पी सकें, इसलिये यह लीला है। टीकाकारोंने इस श्लोककी अनेक रोचक एवं आध्यात्मिक व्याख्याएँ की हैं, जैसे वत्सरूपी जीवोंको तत्क्षणात् मुक्ति प्रदान करनेकी निरोध-लीला आदि। दामोदर-लीलाका आशय है—माता यशोदाके दूध एवं गायोंके दूध-दही-मक्खनका कृष्ण-सेवामें अर्पित होनेकी प्रतियोगिता-कथा! गायों और गोपियोंकी श्रीकृष्णको अपना स्तन्य-पान करानेकी आन्तरिक कामना पूर्ण करने-हेतु—अर्थात् उनको भी माँ यशोदाके समान ही वात्सल्य-रसका आनन्द प्रदान करने-हेतु ही श्रीकृष्णने ब्रह्माद्वारा गोपबालक एवं गोवत्स चुरा लिये जानेपर उन सबका रूप धारण करके पूरे वर्षभर गोपियों और गायोंका स्तन्य-पान किया। **'मुदं कर्तुं तन्मातॄणां'**,—**'सर्वस्वरूपो बभौ॥'** (१०।१३। १८-१९) इस लीलाका गूढाशय निर्भ्रान्तरूपसे समझानेके लिये प्रायः एक वर्ष-पश्चात् गोवर्धनकी चोटीपर चरती हुई गायोंकी नीचे बहुत दूर अपने पूर्व बिआनके बछड़ोंको देखते ही दुर्गम कँटीले ऊबड़-खाबड़ रास्तेके सब अवरोधोंको अमान्य करके दौड़ते हुए पहुँचकर अपूर्व वात्सल्य-प्रदर्शनकी लीला वर्णित हुई है। कारण था, श्रीकृष्ण स्वयं ही उन बछड़ोंके रूपमें जो थे, **'मुक्तस्तनेष्वपत्येषु.....'** (१०।१३।३५)। यही हाल पीछे भागते हुए आये उन ग्वालोंका अपने बालकोंको देखकर हुआ। ब्रह्माजीने इस लीलापर मुग्ध होकर कहा है—

अहोऽतिधन्या व्रजगोरमण्यः
स्तन्यामृतं पीतमतीव ते मुदा।
यासां विभो वत्सतरात्मजात्मना
यत्तृप्तयेऽद्यापि न चालमध्वराः॥

(१०।१४।३१)

आपने व्रजकी गायों और ग्वालिनोंके बछड़े तथा बालक बनकर उनके स्तनोंका दूध पिया है। उनका जन्म ही सफल है, वे ही धन्य हैं। किंतु श्रीकृष्ण सृष्टिके सर्वोच्च पदाधिकारी ब्रह्माद्वारा नाना प्रकारसे क्षमायाचना करनेपर भी उनसे बोलेतक नहीं; क्योंकि वे ब्रह्माद्वारा गोपबालकों और बछड़ोंके अपहरण (श्रीकृष्णके सामीप्यसे दूर करना) के अपराधको क्षमा नहीं कर पाये। गोपबालकों और गो-वत्सोंके साथ कितना आदर्श सख्यभाव है श्रीकृष्णका!

जगत्‌को गोसेवाका श्रेष्ठ आदर्श श्रीकृष्ण-बलरामने ही बताया है—

तौ वत्सपालकौ भूत्वा सर्वलोकैकपालकौ।
सप्रातराशौ गोवत्सांश्चारयन्तौ विचेरतुः॥

(१०।११।४५)

सारे लोकोंके एकमात्र पालनकर्ता श्याम और बलराम अब बछड़ोंके चरवाहे बने हुए हैं। तड़के ही कलेवेकी सामग्री लेकर बछड़ोंको चाहते हुए वे वन-वन घूमते हैं। स्मरणीय है कि कृष्ण-बलराम नंगे पैर ही गायें चराने जाया करते थे। नन्द-यशोदाद्वारा उपानह् (जूते) धारण करनेके सारे आग्रह उन्होंने अस्वीकार कर दिये, कारण उनके प्रिय बछड़े भी तो बिना पदत्राण ही विचरते हैं—

'कृष्णस्त्वानीते उपानहौ नहि नहिकारेण बहिश्चकार।

(श्रीगोपालचम्पू)

इसीलिये गोपियोंने इन चरणोंका वर्णन किया है—**'तृणचरानुगं श्रीनिकेतनम्'** (१०।३१।७)। जिन चरणोंका श्रीलक्ष्मी अत्यन्त सावधानीसे संवाहन करती हैं, वे ही चरण बछड़ोंके पीछे-पीछे उनकी सेवामें चल रहे हैं। अधिक क्या कहा जाय, गोपियाँ गोचारणकी लीलाका स्मरण करके अत्यन्त मर्माहत हो जाती हैं—

चलसि यद् व्रजाच्चारयन् पशून्
नलिनसुन्दरं नाथ ते पदम्।
शिलतृणाङ्कुरैः सीदतीति नः
कलिलतां मनः कान्त गच्छति॥

(१०।३१।११)

'हे प्यारे! जब तुम गायोंको चरानेके लिये वनमें विचरण करते हो, तब यह सोचकर कि तुम्हारे सुन्दर सुकोमल चरणोंमें कंकड़, काँटे, कुश आदि गड़ जानेसे तुम्हें कितनी पीडा होती होगी, हमारा हृदय आकुल-व्याकुल हो जाता है।'

गोवत्सोंके साथ भी श्रीकृष्णने अगणित कौतुक किये, अपने स्पर्शसुखदानसे उन्हें परम सुखी बनाकर नाना क्रीडाएँ कीं। कभी गोवत्सोंका मुख-चुम्बन करते, कभी हरी-हरी सुकोमल दूब अपने श्रीहस्तोंसे चुनकर उन्हें प्यारसे खिलाते, अपनी अञ्जलिसे उन्हें पानी पिलाते आदि-आदि। उनकी इन मोहिनी लीलाओंका मर्म जान ले, ऐसा जगत्में कोई नहीं है। श्रीमद्भागवतमें इसका सूत्ररूपमें उल्लेखमात्र है—

न वेद कश्चिद् भगवंश्चिकीर्षितं
तवेहमानस्य नृणां विडम्बनम्।

(१।८।२९)

उधर गायें, बैल-बछड़े भी श्रीकृष्णसे कितना प्रेम करते हैं, यह तो तब प्रकट होता है जब वे श्रीकृष्णको कालियनागके पाशमें जकड़ा हुआ देखते हैं। उस समय—

गावो वृषा वत्सतर्यः क्रन्दमानाः सुदुःखिताः।
कृष्णे न्यस्तेक्षणा भीता रुदत्य इव तस्थिरे॥

(१०।१६।११)

तात्पर्य यह कि गाय, बैल, बछिया और बछड़े आदि सभी व्यथित होकर डकराने लगे और डरे हुए-से अचल होकर रोते हुए-से एकटक उनकी तरफ असहाय-से देखने लगे।

जब कभी गायों एवं अन्य व्रजवासियोंपर कोई विपत्ति आयी है, श्रीकृष्णने सर्वदा उनकी रक्षा की है। उनका लक्ष्य सर्वदा यही रहा है कि गायें और व्रजवासी सुखी रहें। अघासुरके मुखसे गोपबालकों एवं बछड़ोंका उद्धार, कालियनागको ह्रदसे भगाकर जलको एवं तत्संलग्न गोचर-भूमिके घासको विषमुक्त करना, दो-दो बार दावाग्निका पान करके सबको मृत्युमुखसे निकालकर पुनः जीवनदान देना, इसके प्रकृष्ट उदाहरण हैं—**'गोनृभिर्भुज्यतां नदी'** (१०।१६।६०), **'गावो वृषा वत्सा लेभिरे परमां मुदम्'** (१०।१७।१६)।

श्रीकृष्णने वैश्योंके लिये—विशेषतः व्रजवासियोंके लिये जो सदासे केवल गोपालन ही करते आये हैं—गोसेवाको परम कर्तव्य बताया—

कृषिवाणिज्यगोरक्षा कुसीदं तुर्यमुच्यते।
वार्ता चतुर्विधा तत्र वयं गोवृत्तयोऽनिशम्॥

(१०।२४।२१)

इसी युक्तिके आधारपर इन्द्रयज्ञका निवारण करके उन्होंने गिरिराज गोवर्धनकी पूजाका प्रवर्तन किया। अपने अपमानसे कुपित हुए इन्द्रने व्रजमें प्रलयकारी तूफानी वर्षा करवायी, जिससे व्रजके पशु, गोप-गोपी सभी पीडित होकर ठिठुरने लगे और श्रीकृष्णकी शरणमें गये। श्रीकृष्णने योगबलसे खेल-खेलमें गिरिराजको अपनी बायीं अंगुलिपर धारण करके व्रजके समस्त गोप-गोपियोंको गोधन तथा उनके सामानके साथ गिरिराजके नीचे आश्रय दिया ताकि वे वर्षा-तूफानसे बच सकें—

यथोपजोषं विशत गिरिगर्तं सगोधनाः॥

(१०।२५।२०)

भगवान् श्रीकृष्ण गोवंशसे कितने एकात्म थे, गायें-बछड़े उनकी एक पुकार (श्रीमुखसे हो या वंशीरवसे)-पर प्रेमपरवश हुए दौड़े आते। कुछेक स्थलोंका आनन्द-आस्वादन करें—

मेघगम्भीरया वाचा नामभिर्दूरगान् पशून्।
क्वचिदाह्वयति प्रीत्या गोगोपालमनोज्ञया॥
धेनवो मन्दगामिन्य ऊधोभारेण भूयसा।
ययुर्भगवताऽऽहूता द्रुतं प्रीत्या स्नुतस्तनीः॥

(१०।१५।१२; १०।२०।२६)

जब वनमें दूर गये हुए गाय और बछड़ोंको श्रीकृष्ण मेघगम्भीर वाणीसे बड़े प्रेमसे उनके नाम ले-लेकर पुकारते, तब गायों आदिका चित्त भी उनके वशमें नहीं रहता। उनके स्तनोंसे दूध झरने लगता और वे दौड़ती हुई भगवान्‌के पास आ जातीं। वंशीपर श्रीभगवान्‌का आह्वान सुनकर गायोंके साथ-साथ नदी-वृक्ष आदिकी जो दशा हो जाती है उसका वर्णन युगलगीतमें मनन योग्य है—

वृन्दशो व्रजवृषा मृगगावो वेणुवाद्यहृतचेतस आरात्।
दन्तदष्टकवला धृतकर्णा निद्रिता लिखितचित्रमिवासन्॥

x x x

वृनचरो गिरितटेषु चरन्तीर्वेणुनाऽऽह्वयति गाः स यदा हि॥

(१०। ३५। ५,८)

वेणुगीत श्रवण करके गायोंकी जो अद्भुत दशा होती है वही तो हर प्राणीके लिये स्पृहणीय है—

गावश्च कृष्णमुखनिर्गतवेणुगीत-
पीयूषमुत्तभितकर्णपुटैः पिबन्त्यः।
शावाः स्नुतस्तनपयःकवलाः स्म तस्थु-
र्गोविन्दमात्मनि दृशाश्रुकलाः स्पृशन्त्यः॥

(१०। २१। १३)

जब हमारे प्यारे कृष्ण अपने मुखसे बाँसुरीमें स्वर भरते हैं और गायें उनका मधुर संगीत सुनती हैं, तब ये अपने दोनों कानोंके दोने खड़े कर लेती हैं और मानो उनसे अमृत पी रही हों, इस प्रकार उस संगीतका रस लेती हैं। मानो वे प्यारे कृष्णको हृदयमें आबद्ध करके उनका आलिंगन कर रही हों, उनके नेत्रोंमें आनन्दाश्रु छलकने लगते हैं! बछड़ोंकी दशा तो और भी निराली हो जाती है, यद्यपि गायोंके स्तनोंसे दूध अपने-आप झरता रहता है और वे दूध पीते-पीते हठात् वंशीध्वनि सुनते हैं, तब मुँहमें लिया हुआ दूध न तो वे निगल पाते हैं, न उगल पाते हैं! अपने हृदयमें भगवान्‌का संस्पर्श अनुभव करते हुए उनकी आँखोंसे अश्रुधारा बहने लगती है! वे ठिठके-से ही खड़े रह जाते हैं।

वंशीकी मधुर तानको सुनकर और श्रीकृष्णके त्रिभुवनसुन्दर मोहिनीरूपको देखकर गौ, पक्षी, हरिण आदि भी रोमाञ्चित तथा पुलकित हो जाते हैं—

यद् गोद्विजद्रुममृगाः पुलकान्यबिभ्रन्॥

(१०। २९। ४०)

केवल गायें-बछड़े ही आत्मविभोर होते हों ऐसा नहीं है। गायें चराते हुए जब खुरोंसे उड़ी हुई गोरज श्रीकृष्णकी घुँघराली अलकोंपर जम जाती है, तब उनके सौन्दर्यमें ऐसी अभिवृद्धि होती है कि गोपियाँ उनके इस रूपके दर्शनकी अभिलाषा करती हैं—

तं गोरजश्छुरितकुन्तलबद्धबर्ह-
वन्यप्रसूनरुचिरेक्षणचारुहासम्।

(१०। १५। ४२)

कैसी सुन्दर झाँकी है। दिनभर गोचारण करके व्रज लौटते हुए श्रीकृष्णकी मधुरतम झाँकीका चित्रण युगलगीतमें भी दर्शनीय है (१०। ३५। २२-२३)। श्रीकृष्णका अभीष्ट ही है गायों और गोपियोंके सर्वविध तापको मिटाना—**'मोचयन् व्रजगवां दिनतापम्'** (१०। ३५। २५)। व्रजमें श्रीकृष्ण गायोंकी सर्वविध सेवा अपने हाथसे ही करते थे। उन्हें चराना, नहलाना, गोष्ठकी सफाई इत्यादिके अतिरिक्त गायें दुहनेका कार्य भी दोनों भाई स्वयं ही करते थे—**'व्रजे गोदोहनं गतौ'** (१०। ३८। २८)। देखिये तो, गोसेवामें नियुक्त होनेके कारण ही गिरिराजको भक्तश्रेष्ठ एवं पूजनीय माना गया—

हन्तायमद्रिरबला हरिदासवर्यो
यद् रामकृष्णचरणस्पर्शप्रमोदः।
मानं तनोति सहगोगणयोस्तयोर्यत्
पानीयसूयवसकन्दरकन्दमूलैः॥

(१०। २१। १८)

गायों और कृष्ण-बलरामके लिये विश्राम-हेतु कन्दराएँ, खानेके लिये कन्दमूल, जल तथा हरी-हरी घासकी व्यवस्था करनेवाला गिरिराज गोवर्धन धन्य है।

इस प्रकार व्रजलीलामें श्रीकृष्णद्वारा गोवंशकी अत्यन्त आन्तरिकताके साथ की गयी सर्वविध सेवा, क्रीडा, रक्षाकी लीलाएँ स्पष्ट ही गायों-बछड़ोंको उनके अन्तरङ्ग परिकरोंकी श्रेणीमें प्रतिष्ठित कर देती हैं। गायों-बछड़ोंका श्रीकृष्णके प्रति प्रतिव्यवहार भी परिकरों-जैसा ही है। वह परस्पर 'अपनत्व' ही सेवा-धर्मकी कुंजी है।

भगवान् श्रीकृष्णने गोसेवाका जो आदर्श प्रस्तुत किया है, हमें अपने सर्वविध उत्कर्ष-कामनासे उसे अपनाना ही होगा। जय गोपाल, जय गोविन्द!

प्राचीन इतिहासमें गौओंका स्थान

[श्रीधर्मलालसिंहजी]

हिंदू गौको बहुत ही पूज्य मानते हैं। इसकी तहमें बड़ा गहरा कारण है। चारों वेदोंमें एक स्वरसे गौओंका गुणानुवाद है। वेदोंमें वर्णित गो-सम्बन्धी मन्त्रोंको उद्धृत करके विचार किया जाय तो बृहत् ग्रन्थ तैयार हो जायगा। यही दृष्टिकोण स्मृति एवं पुराणग्रन्थोंका है। सबमें गोप्रशंसक वाक्योंका भण्डार भरा पड़ा है।

सायणाचार्यने ऋग्वेदकी व्याख्या की है। अपने भाष्यमें वे लिखते हैं कि 'सृष्टिके आदिमें मनुष्य और गाय दोनों आये। दोनों चुप थे। पहले गाय मुँह खोलकर बोली। उसीके सहारे मनुष्यने मुँह खोला और वह बोला; अतः गायसे मनुष्यको बोली मिली।'

इसीसे मिलता-जुलता उद्धरण आदम और ईबके जीवनके सम्बन्धमें मिलता है। दोनों स्वर्गसे निकाले गये। भगवान्‌ने उनको एक मुट्ठी गेहूँ और एक जोड़ी बैल दिये।

हिंदूओंका विश्वास है कि गोलोक सभी लोकोंके ऊपर, सबसे पवित्र और सर्वोत्तम है।

गौकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें तीन प्रकारके प्रसंग आते हैं—(१) ब्रह्मदेव एक मुँहसे अमृत-पान कर रहे थे, दूसरे मुँहसे फेन निकला, जिससे सुरभिकी उत्पत्ति हुई। (२) दूसरे स्थलपर कहा है कि हमलोगोंके आदि पिता दक्षप्रजापति हैं। उनके साठ लड़कियाँ थीं। उनमें सबसे प्यारी सुरभि थी। (३) अपने चलकर बतलाया गया है कि संसारके कल्याणार्थ देव, दनुज—इन दोनोंने मिलकर समुद्रमन्थन किया। उससे चौदह रत्न निकले, उन रत्नोंमें एक सुरभि है। सुरभिसे सुनहरे रंगकी कपिला उत्पन्न हुई, उसके थनके दूधसे क्षीर-समुद्र बना। कपिलाके बच्चे कैलासपर चरते तथा धूम मचाते थे। नीचे भगवान् महादेव ध्यानमग्न थे। उन बच्चोंके मुँहका ठंडा फेन लगनेसे महादेवजीका ध्यान भङ्ग हो गया। हरने अपने तीसरे नेत्रसे उनको देखा। उसी घड़ीसे गौका रंग, जो पहले सुनहरा था, नाना प्रकारका हो गया।

'गोत्र' शब्द 'गो' से बना है। पीछे चलकर हिंदुओंके विभिन्न वंशोंके परिचयके लिये इसका सार्वत्रिक व्यवहार होने लगा। ऋषिगण झुंड-की-झुंड गौएँ रखते थे, यही इस 'शब्द' के व्यवहारका मूल है। उस समय लड़कियोंका प्रधान कार्य गोसेवा था। इसीलिये वे दुहिता कहलाती थीं।

कहते हैं कि एक दिन भगवान् शंकर ब्रह्मदेवके घर गये। पितामहने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया। प्रसन्न होकर स्रष्टाने बहुत-सी गौएँ दीं। उनके आगे स्वर्गकी सम्पदा तुच्छ थी। उन्हें पाकर शंकर बड़े प्रसन्न हुए, तभीसे उनका नाम 'पशुपति' पड़ा। महादेवने अन्य शीघ्रगामी सवारियोंको त्यागकर अपनी सवारीके लिये नन्द नामक बैलका वरण किया।

शोणितपुर (वर्तमान नैपाल) के राजा बाणासुर शंकरजीके महान् भक्त थे। एक बार महादेवजीने प्रसन्न होकर उन्हें अपने गोकुलमेंसे विशिष्ट जातिकी एक दर्जन ऐसी गायें दीं, जिनके आगे संसारकी सम्पदा तुच्छ मालूम पड़ती थी। उन गायोंको पाकर बाण अत्यन्त प्रतापी और शक्तिशाली हुए। बाणासुरकी लावण्यवती पुत्री ऊषाका भगवान् श्रीकृष्णके पौत्र अनिरुद्धके साथ गुप्त प्रेम हो गया। भेद खुलनेपर बाणने अनिरुद्धको कैद कर लिया। नारदजीसे यह संवाद पाकर भगवान् श्रीकृष्ण अपनी विशाल विजयी सेनाके साथ शोणितपुर चढ़ आये। समाचार पाकर बाणने अपने मन्त्रियोंको एकत्रित करके मन्त्रणा की। राज्यका चला जाना वे सहन कर सकते थे, परंतु उन गायोंका चला जाना उनको बरदाश्त नहीं था। सबकी रायसे गायें कुबेरके यहाँ थातीरूपमें इस शर्तपर रख दी गयीं कि वे बाणके सिवा किसीको गायें नहीं देंगे। बाण लड़ाईमें हार गये, संधि हुई। दान-दहेज लेकर श्रीकृष्ण द्वारकाके लिये प्रस्थित हुए। किसीने कानमें धीरेसे कहा—'भगवन्! आपको असली चीज हाथ नहीं लगी। संसारकी सम्पदाको लजानेवाली इनकी बारह गायें कुबेरके यहाँ छिपाकर रखी गयी हैं।' श्रीकृष्ण ठिठक गये। कुबेरको गाय वापस करनेके लिये कहलाया गया। उन्होंने नाहीं कर दिया। फिर लड़ाईके बाजे बजे। युद्धकी तैयारी हुई। देवता डर गये। शान्ति-दूत दौड़े। बड़ी कठिनतासे उन्होंने श्रीकृष्णको समझा-बुझाकर घर भेजा।

जब-जब पृथ्वीपर घोर अन्याय एवं पाप होने लगता है, तब-तब वह गौका रूप धारण कर ब्रह्मदेवकी शरणमें आया

करती है और पितामह उसका दुःख दूर किया करते हैं। इसीसे मिलता-जुलता आख्यान पारसी जातिके इतिहासमें भी पाया जाता है।

द्वापरके अन्तमें कलिने वृषरूप धर्मके तीन पैर काट लिये। जब चौथा काटने लगा, तब वह भागा और महाराज परीक्षित्‌ने उसकी रक्षा की।

राक्षसराज रावण नियमितरूपसे रोज गौओंकी प्रदक्षिणा किया करता था।

इक्ष्वाकुके पौत्रने बैलके ककुद् (डील) पर चढ़कर युद्ध किया, इसलिये रामजीके वंशका नाम 'काकुत्स्थ' पड़ा। वे विजयी हुए।

गीतामें श्रीकृष्ण भगवान्‌ने कहा है कि 'गौओंमें कामधेनु मैं हूँ।' महाराज दिलीपने एक दिन मार्गमें जाती हुई कामधेनुको देखकर प्रणाम नहीं किया। उसके शापसे महाराज अपुत्र हो गये। महाराज अपने गुरु वसिष्ठके आश्रमपर गये। अपुत्र होनेका अपना सारा हाल गुरुजीको कह सुनाया और शापसे मुक्ति पानेके लिये मार्ग-प्रदर्शनके हेतु बड़ी विनती की। गुरुने उन्हें नन्दिनी दे दी और उसकी सब तरहसे पूजा करनेके लिये कहा तथा सेवा-शुश्रूषामें किसी प्रकारकी त्रुटि न होने पावे—इस बातकी पूरी सतर्कता रखनेका उपदेश दिया। गुरुके आदेशानुसार राजा-रानी प्रेमपूर्वक उस दिव्य गायकी परिचर्या करने लगे। राजा गायको वनमें चरानेके लिये ले गये। वे नन्दिनीके चलनेपर चलते थे, बैठनेपर बैठते थे, उसके पानी पीनेपर पानी पीते थे। एक दिन राजा वनके दृश्य देखनेमें लग गये। इतनेमें नन्दिनी जोरसे चिल्लायी। एक सिंह नन्दिनीको दबोचे जा रहा था। राजा नन्दिनीकी प्राण-रक्षाके लिये धनुष उठाकर सिंहसे लड़नेके लिये तैयार हो गये। परंतु सिंहसे जब किसी प्रकार भी राजा गौकी रक्षा नहीं कर सके, तब अन्तमें राजाने अपना शरीर सिंहको अर्पण कर दिया और मांस-पिंडवत् इस प्रतीक्षामें पड़े रहे कि सिंह अब खायेगा, तब खायेगा। बहुत देरके पश्चात् मस्तक उठाकर देखा तो सिंह नहीं दिखायी दिया, केवल नन्दिनी खड़ी-खड़ी हँस रही थी। राजाकी इस अनुपम सेवासे नन्दिनी प्रसन्न हुई।' राजाको पुत्र हुआ।

प्रसिद्ध देशभक्त महादेव गोविन्द रानाडेके सम्बन्धमें भी इसी प्रकारकी कथा प्रचलित है। उनके माता-पिताके कोई पुत्र नहीं था। वे वृद्ध हो चले थे, बहुत दुःखी रहते थे। एक दिनकी बात है, उनके दरवाजेपर एक दिव्य साधु आये। दम्पतिने उनकी बड़ी सेवा की। आदर-सत्कार, सेवा-शुश्रूषासे साधु बहुत प्रसन्न हुए। जिज्ञासा करनेपर ज्ञात हुआ कि दम्पति पुत्र-रत्नके बिना चिन्तित रहा करते हैं। साधुने प्रयोग बतलाया—'दूध देनेवाली सवत्सा काली गाय रखो। उसको साबित पूर्ण गेहूँ खिलाओ, जो गोबरके साथ निकल आयेगा, उन्हीं दानोंको धो-धाकर साफ-सुथरा करके उसीका आटा तैयार करो। ब्रह्मचर्यपूर्वक रहकर उसीकी रोटी खाओ। छः मासतक ऐसा करो।' दम्पतिने वैसा ही किया। अन्तमें उनको पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ। काली गायसे पुत्र प्राप्त होनेकी बात भारतवर्षके प्रत्येक गृहस्थको ज्ञात है।

हिंदुओंका विश्वास है कि गायके शरीरमें सभी देवता वास करते हैं, इस प्रसंगमें एक कथा है कि अन्य सभी देवताओंके गो-देहमें प्रवेश कर जानेके पश्चात् अन्तमें लक्ष्मी आयीं। गायने उनको अपने गोबर और मूत्रमें रहनेका स्थान दिया। कहना न होगा कि गोबर और गोमूत्रके बराबर खाद संसारमें दूसरी नहीं है।

महर्षि वसिष्ठकी शबला नामक होम-धेनुकी महत्ता सभीको मालूम है। एक दिन महाराज विश्वामित्र अपनी विशाल सेनाके साथ उन्हींके तपोवनके रास्तेसे जा रहे थे। ऋषिने उनको रोककर उनका आतिथ्य किया। शबलाकी कृपा तथा दूधसे सारी सेनाने संतुष्ट होकर भोजन किया। गायकी महिमा और चमत्कार देखकर विश्वामित्र अचम्भेमें पड़ गये। उन्होंने शबलाको ऋषिसे अपने लिये माँगा। ऋषिने देना अस्वीकार कर दिया। राजा इसपर नाराज हो गये और उन्होंने बलपूर्वक गायको ले जाना चाहा। दोनोंमें लड़ाई छिड़ गयी। गौकी कृपासे राजाको ऋषिने परास्त कर दिया।

एक बार अपनी विशाल सेनाके साथ कार्तवीर्य अर्जुन तपोवनमें जमदग्नि ऋषिके अतिथि बने। ऋषिने कामधेनुकी दया और दूधसे सेनासहित राजाका भलीभाँति आतिथ्य किया। राजा गायपर लट्टू हो गये। उन्होंने ऋषिसे गाय माँगी। ऋषिने देनेसे इनकार किया। राजाने अपने आदमियोंको बलपूर्वक गाय ले चलनेके लिये कहा। वे ले चले। ऋषिने उन्हें रोका। राजाज्ञासे ऋषिका मस्तक काट लिया गया। ऋषि-पत्नी रेणुका जोर-जोरसे चिल्लाने लगी। जमदग्निके ख्यातनामा

पुत्र परशुराम निकटके पर्वतपर तपस्या कर रहे थे। उन्होंने जब माताका रोना सुना, तब उनका आसन डोल गया। वे शीघ्र घर लौटे। पिताकी दशा देखकर अत्यन्त कुपित हुए। उन्होंने क्षत्रियोंके साथ भयंकर लड़ाई लगातार कई वर्षोंतक लड़ी। इक्कीस बार पृथ्वीको क्षत्रियोंसे शून्य कर दिया।

पृथ्वीका कक्ष बारह भागोंमें बँटा है। हर एक भाग एक-एक राशि है। दूसरी राशिका नाम वृष है।

जहाँसे गङ्गाकी धारा निकलती है, उसका नाम गङ्गोत्तरी है, क्योंकि उसका मुँह गोमुखके समान है।

धनकी देवी लक्ष्मी पहले-पहल पृथ्वीपर गायके रूपमें आयीं, उन्होंने जो गोबर त्यागा, उसने बिल्व-वृक्षकी उत्पत्ति हुई।

गङ्गाजीको पहले-पहल जब संसारमें आनेके लिये कहा गया, तब वे बहुत आनाकानी करने लगीं। उन्होंने बतलाया कि 'पृथ्वीपर पापी लोग मुझमें स्नानादि करके मुझे अपवित्र कर दिया करेंगे, इसलिये मैं न जाऊँगी।' पितामहने कहा कि 'लोग तुम्हें कितना भी अपवित्र करें, गायके पैर लगनेसे तुम पवित्र होती रहोगी।'

महर्षि दत्तात्रेय अपनी गाय, कुत्ते और हिरनके साथ बराबर घूमा करते हैं।

याज्ञवल्क्यको पुरोहित बनाकर महाराज जनकने एक हजार गायोंका दान किया था, जिनके आगे स्वर्गकी सम्पदा भी तुच्छ थी। भगवान् गणेशके जन्मके सम्बन्धमें मनोहर सच्ची आख्यायिका है। गणेशजी ज्यों ही उत्पन्न हुए, भूलसे महादेवजीने उनका मस्तक काट दिया, जो किसी अदृश्य स्थानमें चला गया। पार्वती बहुत रोयीं-धोयीं, देववैद्य अश्विनीकुमार बुलाये गये। पार्वतीसे मुँहमाँगा वरदान मिलेगा—इस शर्तपर उन्होंने बालकका मस्तक जोड़ दिया। वरदानमें उन्होंने स्वयं महादेवको ही माँगा। बड़ी जटिल समस्या उपस्थित हुई। देवताओंके साथ विष्णुने पंचायत की। महादेवका दाम एक गाय रखा गया और वही देकर पार्वतीने छुटकारा पाया। अश्विनीकुमार बड़े प्रसन्न हुए।

योगिराज भगवान् श्रीकृष्णके विषयमें भी विचित्र-विचित्र आख्यान कहे-सुने जाते हैं, जो उनके 'गोपाल' नामको चरितार्थ करते हैं। लड़कपनमें बछड़े चराना, कुछ बड़े हो जानेपर गायें चराना, गायपर आघात करनेवाले आततायीको मार डालना, ब्रह्मदेवका मान-मर्दन करना, गोवर्धन धारण कर गोरक्षा करना, रासलीलाके समय अत्यन्त श्रान्त होनेपर अपने बायें अङ्गसे गायको उत्पन्न करना—जिससे दुग्ध-कुण्ड तैयार हुआ और गोप-गोपिकाओंने उस दुग्धको पीकर अपनी क्लान्ति दूर की—इत्यादि अनेक कथाएँ सविस्तर रूपसे हमारे पुराणोंमें वर्णित हैं। नटवरका सारा ज्ञान-कोष गो-चारणसे ही प्राप्त हुआ था। जिससे आगे चलकर संसारका उद्धार करनेवाली गीताका ज्ञान निकला।

गुरु नानक बचपनमें गायें चराते थे। एक दिन जेठकी दुपहरीमें गायोंको बटोरकर वे एक घने वृक्षके नीचे सो गये। उधरसे निकलनेवाले बटोहीने देखा कि एक विषधर सर्प फन किये नानकके मस्तकके पास खड़ा है। उन लोगोंने ढेला मारकर नानकको जगाया। उनके उठते ही साँप जंगलकी तरफ नौ-दो ग्यारह हो गया। कहते हैं कि उसी समयसे नानक ध्यानमग्न रहने लगे। आगे चलकर वे शक्तिशाली सिख-सम्प्रदायके संस्थापक बने।

भगवान् बुद्धके जीवन-चरित्रमें भी एक इसी प्रकारकी मनोहर घटना घटी थी। उन्होंने उनचास दिनतक उपवास किया; फिर भी उनको ज्ञान एवं मुक्ति नहीं मिली, जिसकी खोजमें वे राज-पाट त्याग कर भटक रहे थे। गयाके पास बोधि वृक्षके नीचे वे उदास बैठे थे। उसी इलाकेके उरूवेला नामक स्थानके सरदारकी लावण्यवती बेटी सुजाताने वट-वृक्षके अधिष्ठातृ-देवकी मन्नत मानी थी कि यदि 'मेरी मनःकामना पूरी हो जायगी तो मैं १६०० गायोंके दूधकी खीर वटदेवके भेंट चढ़ाऊँगी।' उसकी अभिलाषा पूरी हो गयी। उसने १६०० गायोंको जेठी मधुके वनमें चराया। उनको दूहकर उनका दूध आठ सौ गायोंको पिलाया। फिर उनको दूहकर उनका दूध चार सौको पिलाया, इसी प्रक्रियासे अन्तमें उसने १६ गायोंको दूहा और उनका दूध ८ गायोंको पिलाया। फिर आठ गायोंका दूध लेकर उसने प्रेमपूर्वक खीर तैयार करवायी और उसको सोनेके थालमें परोस, खीर लेकर वह वट-वृक्षके सामने उपस्थित हुई। यह देखकर कि वटदेव मनुष्यरूप धारण कर उसका उपहार ग्रहण करनेके लिये पहलेसे बैठे हैं,—सुजाता आनन्दमें निमग्न हो गयी। गौतमने खीर खायी और तुरंत उनको ज्ञान और मुक्तिका मार्ग मिल गया, जिसके लिये वे उतने दिनोंसे व्यग्र थे।

महात्मा ख्रीष्ट भी बचपनमें पशु चराते थे। उन्हीं दिनों उनको संसारकी, पापसे रक्षा करनेका ज्ञान प्राप्त हुआ।

महान् शीशोदिया-वंशके संस्थापक बाप्पा रावल बचपनमें गायें चराया करते थे। एक दिनकी बात है, एक गायने गोष्ठमें आकर दूध नहीं दिया। मालिकने बाप्पाको खूब पीटा। मालिकको ख्याल हुआ कि बाप्पाने ही सारा दूध दुहकर पी लिया है, बेकसूर बाप्पाको इससे मर्मान्तक पीड़ा हुई। दूसरे दिन भी वह गाय चराने गया। प्रतिहिंसाके भाव उसके मनमें उठ रहे थे। संध्याका आगमन हुआ। गाय गोष्ठकी तरफ चल पड़ी। बाप्पा एक झाड़ीमें छिप गया। देखता है कि एक गाय झुंडसे अलग होकर एकलिङ्ग महादेवके मस्तकपर दूध ढाल रही है। बाप्पासे अब न रहा गया। वह एकलिङ्गके पास दौड़ा गया, लाठी मार-मारकर महादेवके नाकों दम कर दिया। भोलेबाबा प्रसन्न हुए। बाप्पाको वरदान मिला। उनका प्रताप बढ़ा। वे शीशोदिया वंशके महान् संस्थापक हुए, जिस वंशके राणा साँगा तथा प्रतापने मुसलमानी कालमें अपने प्रभावसे संसारको चकित कर दिया।

इसीसे मिलती-जुलती आख्यायिका पारसी जातिके इतिहासमें भी मिलती है। इससे पता लगता है कि प्रत्येक महापुरुषका सम्बन्ध किसी-न-किसी रूपमें गायोंके साथ रहा है। सबका बचपन गो-सेवामें बीता है। उसीके प्रतापसे सब महान् बने हैं।

महाराज नृगने एक करोड़ गायें ब्राह्मणोंको दान दी थीं। राजा विराटके पास उत्तम जातिकी एक लाख गायें थीं। उन गायोंकी प्रशंसा सुनकर कौरव बड़ी भारी सेना लेकर उनकी राजधानीपर चढ़ आये, किंतु पाण्डवोंकी सहायतासे विराटने उनको मार भगाया। महाराज नन्दके पास नौ लाख गायें थीं।

जैन-युगमें भी एक-एक महाजनके पास लाखों गायें रहती थीं। विशाखाके विवाहमें उसके पिता धनदृष्टिने अपनी बेटीको इतनी गायें दहेजमें दी थीं जिनकी गणना नहीं हो सकी।

महाराज नल, ऋतुपर्ण, सहदेव तथा नकुल प्रसिद्ध गो-चिकित्सक थे। पाण्डवोंमें यह नियम था कि उनकी स्त्री द्रौपदी जितने समयतक एक भाईके पास रहे, उतने समयतक दूसरा भाई उस महलमें न जाय और यदि चला जाय तो बारह वर्षतक वनवासी होकर रहे। हालमें ही अर्जुनकी पारी बीती थी और युधिष्ठिरकी पारी आयी थी। अर्जुन अपना गाण्डीव उसी महलमें भूल आये थे। किसी ब्राह्मणने आकर उनके सामने पुकार की कि 'लुटेरे मेरी गायको हरण किये जा रहे हैं।' अर्जुनको गाण्डीवकी याद आयी। बारह वर्षोंतक वनमें रहनेकी तनिक भी परवा न करके वे भीतर जाकर धनुष ले आये, क्योंकि गायकी रक्षासे बढ़कर संसारमें कोई दूसरा धर्म नहीं है। उन्हें बारह वर्षोंतक वनमें रहना मंजूर था, परंतु गायकी रक्षासे मुँह मोड़ना मंजूर नहीं था।

च्यवन-ऋषिके विषयमें एक बहुत ही रोचक कथा है। वे एक बार गङ्गाजीके गर्भमें तपस्या कर रहे थे। मछुए मछली मारने आये। जालमें मछलीके बदले मुनिजी आ गये। मछुए उनको नहुषके दरबारमें ले गये। महाराजने मुनिजीके बदले एक थैली सोना दिया; परंतु मुनिजी कहने लगे कि 'इतना कम हमारा दाम नहीं होगा।' राजाने और भी बहुत-सा सोना, अन्तमें समस्त राज्य मुनिजीके मूल्यमें देना चाहा। इसपर भी मुनिजी बोले—'हमारा मूल्य इतना कम नहीं होगा।' राजाने विनती करके पूछा कि 'महाराज! आप ही बतलायें कि आपका मूल्य क्या होगा?' मुनिने कहा कि 'हमारा मूल्य एक गाय है। आप एक गाय दे दीजिये। बस, यही हमारा मूल्य है।' राजाने ऐसा ही किया। इससे पता लगता है कि पूर्वकालमें एक गायका दाम समूचे राज्यसे भी अधिक माना जाता था।

जब भरत रामजीसे मिलने गये, उस समय उन्होंने पूछा कि 'भाई! तुमपर गोपगणका प्रेम है न? तथा गोरक्षा होती है या नहीं?'

प्राच्य जगत्‌में पहले गायका बड़ा मान था। जैसे हमलोग गो-पूजा करते हैं, उसी प्रकार पारसी लोग साँड़की पूजा किया करते थे। मिस्रमें सुनहले बाछेकी पूजा हुआ करती थी। वहाँके प्राचीन सिक्कोंपर बैलोंकी मूर्ति अङ्कित रहती थी। ईसासे कई हजार वर्ष पूर्वके बने हुए पिरामिडमें बैलोंकी मूर्तियाँ अङ्कित हैं। आज भी केलटिक जातिके लोग जहाँ-कहीं हैं, गो-पूजक हैं। उस समय तमाम मुसलमानी देशोंमें भी गायकी पूजा हुआ करती थी तथा उनका मारना दण्डनीय था। पैगम्बर मूसाके समयसे गो-वधका प्रचलन हुआ और विरोधके बहुत प्रयत्नोंके बाद भी भारतमें आज गोहत्याका कलंक बना हुआ है। देखें गोमाता कब सद्‌बुद्धि प्रदान करती हैं।

आर्थिक समृद्धिमें गोवंशका योगदान

[श्रीबाबूलालजी वर्मा]

भारतीय कृषि-संस्कृतिमें गो, गोरस और गोवंश ही नहीं वरन् गोमय तथा गोमूत्रको भी सर्वोपरि महत्त्व दिया गया है। इसका यह कारण नहीं कि भारत कृषि-प्रधान देश है और कृषि-विकासमें गोवंशका विशेष योगदान है, बल्कि धर्म, संस्कृति और सार्वजनिक स्वास्थ्यके साथ भी गाय जुड़ी रही है। यही नहीं सृष्टि-रचनामें भी गायको प्रथम स्थान प्राप्त है। अमृत-तुल्य दुग्ध पेय देनेके अतिरिक्त अपनी पवित्रता, शालीनता, निष्काम-सेवा और धर्मरक्षामें भी गाय पुरोगामिनी रही है।

भारतकी परम पावन धरती माता गोवंशसे ही अनुप्राणित है। वैदिक परम्परामें गाय अनेक अर्थोंमें भारतीय जीवनसे जुड़ी है। गो एक व्यापक अर्थवाला शब्द है और 'गो' शब्दके जितने भी अर्थ-नाम हैं वे सब अवध्य अर्थपरक हैं, क्योंकि उनका सम्बन्ध जीवनसे नहीं प्रत्युत जीवनके संचारसे है, जीवनकी गतिसे है, जीवनके लाभसे है और जीवनके आधारसे है।

भारतीय कृषि और अर्थ-व्यवस्थाका आधार—गोवंश

गोपाष्टमीके पर्वपर देशभरमें गोभक्त जनता गोमाताकी पूजा करती है। वास्तवमें गाय हमारी कृषि-विकास एवं भारतीय अर्थ-व्यवस्थाकी आधारशिला है, अति प्राचीन कालसे ही इसका महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीन परम्परा और भारतीय कृषि-संस्कृतिमें गायका विशेष और पूजनीय स्थान रहा है। गो-भक्ति और गो-सेवाको उच्च स्थान प्राप्त है। सभी धर्मग्रन्थों एवं प्राचीन साहित्यमें गायके महत्त्वको बतलाया गया है और यह अनुभवजन्य सत्य है कि गाय हमारी कृषि-विकास और आर्थिक सम्पन्नताकी रीढ़ है। गौएँ सर्वश्रेष्ठ, पवित्र तथा पूजा करने योग्य और संसारभरमें सबसे उत्तम ईश्वरीय देन हैं, क्योंकि अमृत-तुल्य दूध-दही, घी आदि हव्यके बिना संसारका कोई यज्ञ सम्पन्न नहीं हो सकता। गाय अपने दूध, दही, घी, गोबर, मूत्र, हड्डी, चमड़ा, बालों और सींगोंसे हमारा सब प्रकारका हित—कल्याण करती है। गोधनके बराबर जगत्में अन्य कोई धन नहीं है, क्योंकि गोवंश सदा लक्ष्मीका मूल है, इसलिये गोमाता प्राणिमात्रके लिये माताके समान सुख देनेवाली है। किंतु आज अपनी ही इस गोमाताकी कितनी दुर्दशा की जा रही है, उसपर कितने अत्याचार किये जा रहे हैं, यह भी किसीसे छिपा नहीं है।

गोवंशके ह्रासकी क्या स्थिति होती जा रही है? इसे कौन समझेगा? कलकत्ता, मद्रास, बंबई, केरल तथा देवनारके बूचड़खानोंमें गर्म पानीके फौव्वारोंसे गायको नहलाया जाता है, फिर उसे बिजलीके चाबुकसे पीटकर चारा खाते समय मशीनसे उसका चमड़ा उतारा जाता है, फिर स्वचालित मशीनोंसे उसका मांस काटकर डिब्बोंमें भरकर बाहर भेजा जाता है, इसके बदलेमें दुग्ध-चूर्ण और पेट्रोलियम पदार्थ आयात किया जाता है। पंजाब, हरियाणा और उत्तरप्रदेशसे स्वस्थ गाय-बैलों और बछड़ोंको लाकर उन्हें चारा खिलाकर मोटा किया जाता है। गाभिन गायको बच्चा देनेके दो-चार दिन पूर्व गर्भपातके लिये साबुनका पानी पिलाकर उसका पेट मशीनसे दबाकर अप्राकृतिक रूपसे सुकोमल नवजात शिशुको पेटसे बाहर निकाला जाता है। बछड़ेकी खाल उतारी जाती है। इस नरम चमड़ेको 'क्रूम' कहते हैं। नवजात बछड़ेके मांसको 'बीफ' कहते हैं। बीफ और क्रूम निर्यात किया जाता है। अज्ञानवश ही सही इनसे बनी वस्तुओंका प्रयोग करनेवाले भी गोहत्याके भागीदार हैं। गोवंशकी दुर्दशासे व्यथित होकर राष्ट्रकविके मुँहसे बरबस ये पंक्तियाँ फूट पड़ी थीं—

दाँतों तले तृण दाब कर हैं दीन गायें कह रही,
हम पशु तथा तुम हो मनुज, पर योग्य क्या तुमको यही?
हमने तुम्हें माँ की तरह, है दूध पीने को दिया,
देकर कसाई को हमें, तुमने हमारा वध किया॥
क्या वश हमारा है भला, हम दीन हैं, बल हीन हैं,
मारो कि पालो, कुछ करो तुम हम सदैव आधीन हैं।
प्रभु के यहाँ से भी कदाचित्, आज हम असहाय हैं,
इससे अधिक अब क्या कहें, हा! हम तुम्हारी गाय हैं॥
जारी रहा क्रम यदि यहाँ, यों ही हमारे नाश का,
तो अस्त समझो सूर्य भारत-भाग्य के आकाश का।

जो तनिक हरियाली रही, वह भी न रहने पायगी,
यह स्वर्ण-भारत-भूमि बस, मरघट-मही बन जायगी॥
(श्रीमैथिलीशरण गुप्त)

अमेरिकी कृषि-विशेषज्ञ 'इकलसन' ने अपनी पुस्तक 'दुधारु पशु और उत्पादन' में लिखा है—तीन करोड़ रुपयेसे अधिकको खाद प्रतिदिन गायोंके गोबर और मूत्रसे ही प्राप्त हो सकती है। गायके मूत्र और गोबरमें भूमिको उपजाऊ बनानेवाले पदार्थ मौजूद हैं और अन्न उत्पादन अधिक बढ़ सकता है। भारतमें जहाँ रेलगाड़ियोंपर ४ हजार करोड़ रुपया और सड़क-परिवहनपर एक हजार करोड़ रुपया विनियोजित है, वहीं बैलगाड़ियोंपर ३ हजार करोड़ रुपयेकी पूँजी लगी है। भारत सरकारके भू० पू० पशु-विशेषज्ञ 'सर अलबर्ट हावर्ट' ने 'एग्रीकल्चरल टेस्टामेन्ट' नामक अपने ग्रन्थमें कहा है कि—'रासायनिक खाद कृषि-योग्य भूमिको जीवांश (ह्यूमस) प्रदान नहीं करती। गोबरकी कम्पोस्ट खाद और हरी खाद ही प्राकृतिक खाद है, जिसमें असंख्य जैविक और ह्यूमस (बीजाणु और जीवाणु) पाये जाते हैं।' सर अलबर्टने आगे लिखा है—'देशके करीब १७ करोड़ गाय-बैल, भैंस-भैंसा वस्तुत: बिना ईंधन और अन्य सहायताके ५ करोड़ हार्सपावर पैदा कर सकते हैं। इतनी शक्ति पैदा करनेके लिये ५० लाख कीमती ट्रैक्टरों और मूल्यवान् ईंधनकी भारी मात्रामें आवश्यकता पड़ेगी, फिर भी ये ट्रैक्टर कृषि-भूमिकी उर्वरा-शक्ति बढ़ानेवाले गोबर और गोमूत्र नहीं दे सकते। उल्टे उनके तेल और धुएँसे प्रदूषण फैलनेके साथ भूमिकी उर्वरा-शक्तिको क्षति पहुँचती है। भारतकी कृषि-भूमि छोटे-छोटे टुकड़ोंमें बँटी हुई है। अत: ऐसे खेतोंके लिये बैल ही उपयोगी होंगे।

विश्वविख्यात वैज्ञानिक डॉ० अलबर्ट आइनस्टाइनने स्व० डॉ० अमरनाथ झाके द्वारा भारतको संदेश भेजा था—'भारत ट्रैक्टर, उर्वरक, कीटाणुनाशक (पेस्टीसाइड्ल) और यन्त्रीकृत खेतीकी पद्धति न अपनाये, क्योंकि इनसे चार सौ वर्षकी खेतीमें ही अमेरिकाके जमीनकी उर्वराशक्ति काफी हदतक समाप्त हो चली है, जबकि भारतका उपजाऊपन कायम है, जहाँ कि दस हजार सालसे खेती हो रही है।' इतना होनेपर भी बड़े दु:खके साथ लिखना पड़ता है कि उत्तरप्रदेश, तमिलनाडु आदि प्रदेशोंमें जमीन जोतनेके लिये बैल नहीं मिल रहे हैं। ग्राम्य-जीवन उखड़ रहा है। थोड़े ही दिनोंमें सारे देशमें बैलोंकी कमी होगी, हलमें मनुष्यको जुतना पड़ेगा। आज इंडोनेशियामें यही हो रहा है और भारतके कुछ हिस्सेमें ऐसा देखा भी जा रहा है।

जिन प्रदेशोंमें गोवध-निषेध कानून बने हैं, वहाँ दूध देने तथा कृषि और भारवाहनमें अनुपयुक्त पशुओंको डॉक्टरके प्रमाणपत्रपर बूचड़खानोंमें कटनेकी छूट दी गयी है, जिसके कारण उपयोगी और स्वस्थ गोवंश भी कटने चले जाते हैं। कृत्रिम गर्भाधानसे ८० प्रतिशत बछड़े होते हैं जो भारतकी गर्म जलवायु सहन नहीं कर सकते तथा विदेशी नस्लके बछड़ोंके कंधा (ठिल्ला) नहीं होता, जिससे कृषि-कार्यके लिये अनुपयोगी होते हैं। ऐसे बछड़ोंको डॉक्टर बेकार घोषित कर कटनेके लिये प्रमाणपत्र जारी कर देते हैं। फलत: कृत्रिम गर्भाधानसे गोहत्याको प्रोत्साहन मिलता है। कुछ समयसे सरकारी तन्त्रद्वारा यह धारणा भी पैदा की गयी है कि 'देशी गायें दूध कम देती हैं, इसलिये 'जर्सी', 'फ्रीजियन', 'होल्सटिंग्स' प्रजातिकी विदेशी गायोंके पालनको सरकारी अनुदानपर प्रोत्साहित किया जाता है और इसमें विदेशी साँड़ोंसे प्रजनन कराना अनिवार्य है।'

ध्यान देनेकी बात है कि विदेशी गो-नस्लें वास्तवमें गायोंकी नस्ल नहीं हैं बल्कि जंगली पशु हैं और संकरित की गयी हैं, इनके दूधमें स्वदेशी प्रजातिकी गायोंके दूधके समान गुणवत्ता और पौष्टिकता नहीं है। इनकी शक्ल-सूरत, आकार-प्रकार, रंग-रूप भारतीय गायोंके समान नहीं होता। बोली भयानक लगती है, विषाणुसे ग्रस्त रहती हैं, इन्हें नित्य साबुनसे नहलाना आवश्यक है। जल्दी बीमार होती हैं। इनके लिये पौष्टिक आहार तथा हरे चारेका प्रबन्ध कर पाना सर्वसाधारण किसानके बसका नहीं है। प्रतिकूल जलवायुके कारण दूध घटेगा ही, भारतीय गोवंशके पतनका कारण बनेगा। भारतीय गोवंशकी नस्ल-सुधारके लिये अच्छी नस्लके भारतीय साँड़ ही उपयुक्त हैं। पहले देशी साँड़ोंसे प्रजननकी नीति अपनायी गयी थी, जिसके संतोषजनक परिणाम सामने आये थे और भारतीय गोवंशकी नस्लका उत्साहवर्धक सुधार भी दिखायी दिया था। कम दूध देनेवाली देशी गायोंका प्रजनन कराया गया जिसमें मुख्य थीं—हरियाणा, साहीवाल, गिरि, कांकरेजी, थारपारकर, गो, हल्दीकर, मालवी, राठी,

देवनी, गवलाऊ और नागौरी आदि। विदेशी साँड़ोंसे या कृत्रिम गर्भाधानसे प्रजनित गायोंके दूधमें चिकनाई बहुत कम होती है। पर इनमें विदेशी प्रजननकी अपेक्षा अधिक चिकनाई पायी गयी। 'डॉ० परसाई' ने उत्तम नस्लके मालवी, राठी साँड़ोंद्वारा देशी गायोंपर प्रजनन-प्रयोगकर अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की। डॉ० परसाईके प्रयोगसे अन्तिम रूपसे यह सिद्ध हो गया है कि देशी साँड़ोंसे प्रजनित स्वदेशी गायें हमारे देशके लिये अधिक उपयुक्त हैं।

यह धारणा सही नहीं है कि स्वदेशी प्रजातिकी गायें दूध कम देती हैं। कुछ वर्ष-पूर्व स्वदेशी प्रजातिकी भारतीय नस्लकी करीब ५०० बछिया इजराइल भेजी गयी थीं। वहाँ उनका अच्छा विकास किया गया। ये सभी गायें विदेशी गायोंकी अपेक्षा अधिक दूध देती हैं। भारतीय नस्लकी एक गायने दुग्ध-उत्पादनमें विश्वका रिकार्ड तोड़ दिया है, वह प्रतिदिन ६० लीटर दूध देती है,एक औरने तो कमाल ही कर दिया है जो २४ घंटेमें चार बार दुही जाती है और चारों बारमें १२० लीटर दूधका उत्पादन होता है। यह गाय 'गिनीज बुक आफ वर्ल्ड रिकार्ड' में दर्ज की गयी है।

श्वेत क्रान्ति सफेद झूठ—'विश्व-बैक-संयुक्त पुनर्मूल्याङ्कन मिशन' ने भारतमें ऑपरेशन फ्लड (श्वेत क्रान्ति) द्वितीयके अन्तर्गत जो रिपोर्ट प्रस्तुत की है सही मायनेमें नेशनल डेरी डेवलपमेन्ट बोर्ड (एन० डी० डी० बी०) तथा इंडियन डेरी कारपोरेशन (आई० डी० सी०) ने जान-बूझकर उसे भारतीय जनतासे छिपाया है। संक्षेपमें विश्व-बैंकने भारतको किसी प्रकारकी दुग्ध-सहायता (मिल्क एड) यूरोपसे दिये जानेसे इनकार कर दिया था तथा यह भी कहा था कि भारतमें कहीं भी दूधकी डेरी लाभमें नहीं चल रही है। अत: श्वेत क्रान्तिके सम्बन्धमें अधिकारियोंके सभी दावे दिखावटी और सफेद झूठ साबित हुए। भारत सरकारका भारतीय दूध डेरीका आर्थिक विकास दिवास्वप्न साबित हुआ है। सहकारी दुग्ध-डेरियोंमें राजनैतिक हस्तक्षेपसे व्याप्त भ्रष्टाचार और कुप्रबन्धके कारण करोड़ोंका घाटा हुआ है। 'फ्रीडमफार हंगरकैम्पेन' योजना सरकारी दुग्ध-संघकी बड़ी महत्त्वाकांक्षी योजना बतायी गयी थी। पर सरकारी तन्त्रके भ्रष्टाचारके कारण यह असफल रही। १९७६ में ब्रिटिश सरकारकी सहायतासे 'फ्रीडमफार हंगरकैम्पेन' योजना शुरू की गयी थी। इस योजनाके तहत गायोंके दूधके उत्पादन बढ़ानेके उद्देश्यसे विदेशी जर्सी साँड़ोंके हिमीकृत वीर्यद्वारा स्वदेशी गायोंका संकरण करनेकी एक सघन पशु-विकास-योजना शुरू की गयी थी। परियोजनाके अन्तर्गत जब कृत्रिम गर्भाधानका वर्ष-वार लक्ष्य और उपलब्धियोंकी समीक्षा की गयी तो उपलब्धियाँ नगण्य रहीं। नियन्त्रक महालेखा-परीक्षककी रिपोर्ट प्रकाशित होनेपर उपलब्धियोंके परिणाम उलट गये। उदाहरणके लिये एक रिपोर्टके अनुसार १९७६-७७ में यदि लक्ष्य था १७,७५० तो उसके विपरीत १७७ गायोंका ही हिमीकृत कृत्रिम गर्भाधान सफल हो पाया। शेष गायें जिन्होंने गर्भाधान 'कन्सीव' नहीं किया वे हमेशाके लिये बाँझ हो गयीं। भारतमें डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन आदि विदेशी साँड़ोंका मूल्य आयात-खर्चसहित १६ हजार रुपये प्रति साँड़ बैठता है। भारतीय जलवायु अनुकूल न होनेके कारण उनके रख-रखावपर करोड़ों रुपये खर्च करनेके बावजूद हजारों साँड़ मर गये। जर्सी, फ्रीजियन गायों और बछियोंका मूल्य भी ५ से ११ हजार रुपयेतक है। यहाँकी गर्म जलवायु उनके लिये विपरीत होनेके कारण विदेशी नस्लकी गायें पनप नहीं पातीं। पशु-चिकित्सकोंकी एक अध्ययन-रिपोर्टके अनुसार इनके पालकोंके पूरे परिवार कई असाध्य रोगोंसे पीडित पाये गये। चिकित्सकोंके अनुसार जर्सी या फ्रीजियन गायोंके शरीरसे, उनके खुरोंसे और गोबर-मूत्रमें वैक्टीरिया (विषैले कीटाणु) विकसित होकर फैलते हैं, जिससे आस-पासका पर्यावरण विषाक्त हो जाता है। उसमें साँस लेनेवालोंके फेफड़ोंमें वे विषाणु प्रवेश कर नयी-नयी बीमारियाँ पैदा करते हैं, जिसमें मस्तिष्क-ज्वर सबसे प्रमुख है। इस आयातित नयी आधुनिक बीमारीसे हजारों लोगोंकी मौत हो चुकी है। दूधका उत्पादन भी १६ करोड़ लीटर दैनिक लक्ष्यकी अपेक्षा घटकर ८-१० करोड़ लीटर रह गया है। भारतमें श्वेत क्रान्ति लानेके बहाने गोहत्याको बढ़ावा देनेका यह विदेशी कुचक्र है, जिसके जालमें भारत बुरी तरह फँस गया है।

गोधन और ट्रैक्टर—गाँधीजीने अपने पत्रोंमें अपने भावोंको व्यक्त करते हुए कहा है—'देशमें लंबी और भारी खर्चीली तथा विदेशी नकलपर दीर्घगामी योजनाओंको लागू'

करके दोहरी अर्थव्यवस्था कायम न की जाय, यह नितान्त अलोकतान्त्रिक होगा।' पर देशका दुर्भाग्य है कि विदेशी चकाचौंधसे प्रभावित, विदेशी विचार और मानसिकताके माहौलमें पालित-पोषित तत्कालीन नीतिविशारदोंको यह बात जँची नहीं, जिसका परिणाम यह हुआ कि विदेशी निगमों और पूँजीपतियोंकी घुसपैठ देशमें बढ़ने लगी। राष्ट्रिय पूँजी कुछ हाथोंमें सिमटकर रह गयी। विदेशी कम्पनियोंसे अनुबन्ध और विदेशी पूँजी-निवेशसे विदेशी तकनीकका प्रवाह भारतकी पावन धरतीपर बढ़ने लगा। इस प्रकार विदेशी प्राविधिकी (बासी जूठन) आयातकी खुली छूट देकर बहुराष्ट्रिय निगमोंके लिये शोषणके द्वार खोल दिये गये। 'ईस्ट इंडिया कम्पनी' ने अपनी कूटनीतिके व्यावसायिक बुद्धिसे देशको २०० वर्षतक गुलाम बनाये रखा और अब सैकड़ों ऐसी बहुराष्ट्रिय कम्पनियाँ भारतको आर्थिक गुलामीके जालमें फँसानेका कुचक्र कर रही हैं। देश गरीबी, अभाव, कंगाली तथा बेकारीके कगारपर खड़ा हो गया है।

जब दक्षिण-पूर्व एशियाके विकासशील देशोंमें आधुनिक टेक्नालॉजी और नयी वैज्ञानिक कृषिका पश्चिमी देशोंकी नकलपर कृषि-विकासका 'हल्लाबोल' प्रचार शुरू हुआ तो १९६१-६२ में भारतमें भी इसकी आँधी आयी। नयी तकनीकके नामपर सबसे पहले ऐसे नये बीजोंकी प्रजातियोंका ढोल पीटा गया, जिसके लिये खेतीका मशीनीकरण, सिंचाईके आधुनिक प्रणालीके साथ आयातित मशीनें, रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकोंका प्रयोग आवश्यक बताया गया। कृषि-विकासकी इस नयी प्रक्रियाने बहुराष्ट्रिय कम्पनियों और विश्वबैंकके लिये भारी लाभ कमाने तथा देशके किसानोंका आर्थिक शोषण करनेका मार्ग खुल गया। क्या विदेशी कर्जकी विपुल धनराशि पानीकी तरह बहाकर 'हाहाहूती' मशीनें तथा कृषि-उपकरण किसानके खेत-खलिहानपर खड़ाकर, जल-प्रबन्धकी विदेशी पद्धतिपर अव्यावहारिक तथा गलत पद्धति अपनाकर प्रतिवर्ष ९० लाख टन उर्वरकोंकी तथा ६० हजार टन कीटनाशकोंको प्रतिवर्ष झोंककर, स्वदेशी और परम्परागत बीजोंकी गुणवत्ता समाप्तकर भारतीय मिट्टी, जलवायु एवं परिस्थितिके विपरीत विदेशी संकरित बीजोंका प्रयोगकर आज ३०-३२ साल बाद उत्पादनमें आशातीत सफलता मिली? क्या हर पञ्चवर्षीय योजनामें ५ प्रतिशत कृषि-विकासका लक्ष्य प्राप्त किया जा सका? प्रति हेक्टेयर १.७ टनसे आगे उपज नहीं बढ़ पायी—क्यों? यदि देशमें २ टन प्रति हेक्टेयर उपज कर पाते तो करीब ३० करोड़ टन खाद्यान्न पैदा हो सकता था। १९६७ से ८० के बीच ३ करोड़ ५४ लाख टन उर्वरकोंका आयात हुआ, अर्थात् इस अवधिमें खादका प्रयोग सात गुना अधिक हुआ। पहले कीटनाशक दवाओंका प्रयोग नहींके बराबर था, पर जबसे अमेरिका आदि पश्चिमी देशोंमें विषैली कीटनाशक दवाओंका प्रयोग प्रतिबन्धित किया गया, तभीसे कीटनाशक दवा-निर्माता कम्पनियोंने भारी कमीशन देकर भारतमें फैलाना शुरू किया। कमीशनकी लालचमें फसल-सुरक्षा (?) के नामपर भारत सरकारने कीटनाशकोंका आयात भारी मात्रामें किया। इन विषैली दवाओंका प्रयोग ५०० टनसे प्रारम्भ हुआ और आज इसकी वार्षिक खपत लगभग ६० हजार टनतक पहुँच गयी है।

१९६०-६१ में 'हरित-क्रान्ति' अभियानके प्रारम्भके समय देशमें ६३ हजार ट्रैक्टर थे जो १९७३ में बढ़कर ३ लाख ६६ हजार, १९८७ तक ५५ लाखसे ऊपर और अब ८५ लाखसे अधिक हो गये। इनका मूल्य १७ खरब रुपया हुआ अर्थात् १७ खरबका विश्व-बैंकका कर्जा हमपर लादा गया। यह अपार धनराशि विदेशी कम्पनियोंकी तिजोरीमें बंद हो गयी। ४२ लाख ट्रैक्टर १० सालके बाद कबाड़ा हो गये। डीजलसे चलनेवाले इंजन १९६३ में ५ लाख थे जो अब बढ़कर ८५ लाख हो गये, जिनका मूल्य करीब ८५ अरब ५० करोड़ रुपया हुआ। इनमेंसे आधेसे अधिक बेकार हो गये। बिजलीसे चलनेवाले पंपिंग-सेट ६६ में ४ लाख थे जो ७६ में २८ लाख और अब ६८ लाखसे अधिक हैं। इनपर भी किसानोंका करीब ७० अरब रुपया खर्च हुआ। कृषि-अनुसंधान और कृषि-शिक्षापर ५७० करोड़से अधिक खर्च हो गया। ये आँकड़े बोलते हैं कि कृषिकी नयी तकनीकके नामपर अरबों-खरबों रुपया स्वाहा हो गया, पर इसका क्या नतीजा निकला? इस विपुल पूँजीनिवेशसे कृषि-उपजपर ठीक-ठीक क्या प्रभाव पड़ा? 'हरित-क्रान्ति'-अभियानके दौरान १९६० से ८० के बीच २० वर्षोंके अन्तरालमें करीब

३५०० करोड़ रुपये मूल्यका विदेशी गेहूँ आयात करना पड़ा और खरबोंका खनिज तेल भी। नयी तकनीकके प्रभावसे लाखों एकड़ कृषि-भूमि ऊसर बन गयी। यह अत्यन्त खेदजनक गम्भीर प्रश्न है, जिसपर राजनेताओं, अर्थशास्त्रियों, कृषि-विशेषज्ञों और देशभक्त वैज्ञानिकोंको राष्ट्र-हितमें ठंडे दिमागसे विचार करना चाहिये। नयी तकनीक आनेके बाद जिस अनुपातमें पूँजी-निवेश हुआ, उसकी तुलनामें निश्चित ही पैदावार नहीं बढ़ सकी।

उपर्युक्त सरकारी आँकड़ोंसे स्पष्ट है कि विदेशी विज्ञान और कृषि-तकनीकका सीधा मतलब है अधिक खर्चपर उत्पादकताके क्षेत्रमें अधिक हानि और नाम-मात्रके लाभपर खेतीका धंधा करना। इतनी खर्चीली विदेशी तकनीकके आयातमें आशाके विपरीत परिणाम क्यों भोगने पड़े? क्या विदेशी धुनके पीछे हमारे नीति-नियामकोंका लगाव पागलपनकी निशानी नहीं है? क्या हमारे पास विदेशी तकनीकके अलावा कोई स्वदेशी विकल्प नहीं है? अथवा कड़वा घूँट पीकर अंधे होकर इसीका अनुकरण करते जाना है?

गोधनकी समस्या— भारतवर्ष ५ लाख ७६ हजार गाँवोंमें बसा है। इसीलिये भारत माताको 'ग्रामवासिनी' कहा गया है। भारत कृषि-प्रधान देश है और हमारी 'कृषि-संस्कृति' ही मूल संस्कृति है। १९२८ में जब सरदार पटेल 'बारदोली' सत्याग्रह-आन्दोलनमें जेलमें बंद थे—एक अंग्रेज पत्रकार उनसे मिलने गया। पत्रकारने व्यंग्यात्मक लहजेमें उनसे पूछा—'ह्वाट इज योर कल्चर' (आपकी संस्कृति क्या है?) पटेलजीने तपाकसे सटीक उत्तर दिया—'माई कल्चर इज एग्रीकल्चर' (मेरी संस्कृति कृषि-संस्कृति है) अंग्रेज पत्रकार ऐसा निर्भीक उत्तर सुनकर दंग रह गया।

कृषि-विकासका आधार गोवंशका विकास है। गाय हमारी माता है। ऐसी ममत्व और मातृत्व स्नेहकी भावना चिरकालसे है। गौ माताके अन्तर्गत सभी देवताओंका वास है। यह आदिशक्ति '**ॐ**' और '**श्री**' का प्रतीक है। गोहत्या करना भारतसे देवत्व-भावको समाप्त करना है। जब-जब भारतमें गोवंशका ह्रास हुआ—देवत्व-ममत्व-स्नेह-भावका विनाश हुआ है, तब-तब पुनः देवत्व-भाव पैदा करनेके लिये, गोवंशकी रक्षाके लिये कोई-न-कोई दैवीशक्ति भारतमें अवतरित हुई है।

ऐसे ही समय जब गोवंशका तेजीसे ह्रास हुआ, सोना उगलनेवाली धरती रेत-रेह-क्षार उगलने लगी, चारों ओर हाहाकार मच गया, तभी नररत्न हलधर-बलराम और गोपाल-श्रीकृष्ण युगपुरुषोंने जन्म लेकर भारत-वसुन्धराका उद्धार किया। दोनों हरित-क्रान्ति और श्वेत-क्रान्तिके महानायक बन गये। हलधर बलरामने, जो महान् कृषि-वैज्ञानिक थे—सारी ऊसर और बाँझ हो गयी धरतीको कृषि-योग्य भूमि बनाकर हरा-भरा कर दिया, खाण्डवप्रस्थ (पथरीली भूमि) को इन्द्रप्रस्थमें बदल दिया। गोपाल श्रीकृष्णने गोवंश-विकासका आन्दोलन चलाया। ग्वाल-बालों-गोपालकोंको संगठित किया और देशमें श्वेत-क्रान्तिकी लहर पैदा कर दी। इन्हीं दो महापुरुषोंकी घोर तपस्या—पुरुषार्थ और पौरुष तथा पुण्य-प्रतापसे भारत पुनः धन-धान्य-सम्पन्न और वैभवपूर्ण बन गया। उस समय 'गाय' और 'स्वर्णमुद्रा' वस्तुओंके मूल्याङ्कनका मानक माना गया। उस समय सम्पत्ति-मूल्याङ्कनकी कुछ पदवियाँ निर्धारित की गयीं। जैसे १० हजार गायें अथवा १० हजार स्वर्णमुद्रा-धारकको 'गोप' कहा गया तथा एक लाख गायें अथवा एक लाख स्वर्णमुद्रा धारकको 'नन्द'की पदवीसे विभूषित किया गया।

पर अत्यन्त खेदका विषय है कि आजादीके ४७ वसन्त बीतनेके बाद भी गोवंशकी हत्यापर पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सका। गुलामीकालमें १४ सरकारी बूचड़खाने थे, जो अब बढ़कर २१ हो गये हैं। कुछ वर्ष-पूर्व केन्द्र-सरकारने निजी क्षेत्रमें नये बूचड़खानोंके लाइसेंस जारी किये थे जो अब बढ़कर ३,००० हो गये हैं। सभी सरकारी बूचड़खाने स्वचालित विद्युत्-संयन्त्रोंसे संचालित हैं, जिनमें ३० हजार गोवंश रोज काटा जाता है। इस प्रकार १२० लाख गोवंश प्रतिवर्ष काटकर गोमांस, बीफ तथा क्रूम विदेशोंको निर्यात कर ३ अरब डालर विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है।

निर्यात-संवर्धन और डालर-प्राप्तिकी ललकमें बंदर-कछुआ और मेढक-जैसे जीवंत प्राणियोंके निर्यातके साथ भारी मात्रामें गोमांसका निर्यात कर भारत सरकार खाद्यान्न, दूधका पाउडर, रासायनिक खाद, मशीनके पुर्जे, रेपसीड

आयल और पेट्रोलियम पदार्थ मँगाती रही है। गोमांस-निर्यातमें वृद्धिके लिये अत्याधुनिक तकनीकपर आटोमेटिक प्लांट लगानेकी विदेशी कम्पनियोंको अनुमति मिल गयी है। उसके तहत हैदराबाद (आन्ध्रप्रदेश) के 'अल कबीर' में तथा हरियाणाके गुड़गाँव जिलेमें आधुनिक संयन्त्रोंसे बूचड़खाने स्थापित किये जायँगे। इन कारखानोंकी चार हजार टन गोमांस-उत्पादनकी दैनिक क्षमता है। भारत सरकारने गोमांस-उत्पादनको भी भेड़-बकरी, सुअर, मछली, मुर्गी आदिके साथ कृषि-उत्पादनमें शामिल कर लिया है। ये सभी पदार्थ निर्यात-सूचीमें शामिल किये गये हैं।

१९५५-५६ में जब भारत सरकारने भारी उद्योगोंके नामपर भारी भरकम विदेशी कर्ज सशर्त स्वीकार किया तभी व्यापारिक अनुबन्ध पी० एल० ४८० के तहत २० वर्षीय व्यापारिक समझौता हुआ, जिसके अन्तर्गत कर्ज-प्राप्तिकी कठिन शर्तोंके साथ गोमांस, बीफ तथा क्रूम आदि निर्यातकर खाद्यान्न, रेपसीड आयल, खनिज तेल, सूखा दूध, मशीनें, कल-पुर्जे आदि आयात किया जाता रहा। १९८० में इस समझौतेको १० सालके लिये बढ़ाया गया फिर १९९० में २,००० ई० तकके लिये विदेशी कर्ज प्राप्त करनेकी ललकमें अनुबन्ध किया गया। यदि यही गति जारी रही तो शायद २१ वीं सदीका प्रथम सूर्य जब उदय होगा तो भारत गोवंशके दर्शन करनेसे भी वंचित रह जायगा।

१९४७ में देशमें ७० करोड़ गोवंश था। इनमेंसे ३६ करोड़ दुधार गायें और सात करोड़ जोड़ी बैल थे। पर १९८१ की गणना (पशु-गणना) के आधारपर २४ करोड़ गोवंश रह गया, जिसमेंसे दूध देनेवाली गायें घटकर ३६ करोड़के बजाय ६ करोड़ रह गयीं और बैलोंकी जोड़ी सात करोड़से घटकर एक करोड़ रह गयी। १९९१ की गणना-रिपोर्टमें विदेशी गायोंकी संख्या बढ़ी, पर भारतीय परम्परागत स्वदेशी प्रजातिका गोवंश काफी घट गया। बैलोंकी संख्या करोड़ोंके स्थानपर लाखोंमें और दुधार गायोंकी संख्या एक करोड़ रह गयी। गोवंश-विनाशकी यही गति जारी रही तो सचमुच २००० ई० तक यह संख्या शून्यतक पहुँच जायगी।

किसानोंकी दशा—भारतमें आज भी ८३.८६ प्रतिशत किसानोंकी संख्या है। देशके ८३ करोड़ एकड़ क्षेत्रफलमेंसे केवल ३५ करोड़ एकड़ कृषि-भूमि बची है और इसीपर ८७ करोड़ जनताका भरण-पोषण होना है। देशमें १२५० लाख किसान-परिवार और ३५० लाख भूमिहीन खेतिहर श्रमिक हैं, जिनके पास एक एकड़से कम भूमि है या बिलकुल भूमिहीन हैं। ग्रामीण जनसंख्या करीब ७० करोड़ है, जिसमेंसे ४८.४ प्रतिशत (३६ करोड़) गरीबीकी रेखासे नीचे जी रहे हैं, जिन्हें दो जून भरपेट भोजन नहीं मिलता। २१ करोड़ भूमिके खातेदार हैं। १७ करोड़ एकड़ भूमि आज भी ऊसर-परती-बंजर-बीहड़-रेतीली और दलदली है। उक्त सारी भूमि कृषि-योग्य बनाकर भूमिहीनोंको आवंटित की जाय तो हर एकको पाँच एकड़ भूमि हिस्सेमें आयेगी। फिर कोई भूमिहीन नहीं रहेगा और बेरोजगारीके कलंकको मिटाया जा सकेगा। इनके पास 'हीरा-मोती' बैलोंकी जोड़ी भी होनी चाहिये।

दस एकड़से अधिक कृषि-भूमि-धारकोंकी कुल चार प्रतिशत यानी ८० लाखके करीब है। बैलोंके अभावमें विकल्पके रूपमें ८५ लाख ट्रैक्टर जरूर खड़े किये गये, किन्तु अबतक ४२ लाख ट्रैक्टर पुराने हो गये हैं, जो बेकार हैं। इन्हें भारतभूमिपर खड़ा करनेके लिये १७ खरब रुपयेका पूँजी-निवेश विदेशी कर्जसे किया गया। विदेशी आर्थिक सहायताका ऐसा मायाजाल है कि इस षड्यन्त्रमें फँसकर अपार धनराशि विदेशी कम्पनियोंकी तिजोरियोंमें पुनः बंद होकर रह गयी। यदि आजादी मिलनेके साथ ही विदेशी जालमें न फँसकर स्वदेशी योजना बनायी गयी होती और कुल ५२ करोड़ एकड़ (३५+१७) भूमिके लिये २० करोड़ जोड़ी बैलोंकी जरूरत पूरी करनेके लिये १७ खरब रुपया गोवंशके विकासपर खर्च किया गया होता तो आज हर किसानके पास एक जोड़ी बैल खड़े हो जाते। यदि प्रारम्भमें ही गो-हत्यापर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाकर गोवंशका समुचित विकास किया जाता तो भरपूर दुग्ध-उत्पादनके साथ देशका आर्थिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक उत्थान भी सहज ही सम्भव हो जाता। देर ही सही, यदि अभी भी सद्बुद्धि आ जाय तो इस देशमें दूध-दहीकी नदियाँ बह सकती हैं। निराश होनेकी जरूरत नहीं, इस ओर दृढ़ संकल्प कर अग्रसर हो सतत प्रयत्नशील रहनेकी आवश्यकता है।

गोवंशकी रक्षा कैसे हो ?

[पञ्चखंड पीठाधीश्वर आचार्य श्रीधर्मेन्द्रजी महाराज]

हमारा देश संसारका सबसे बड़ा लोकतन्त्र है, किंतु जनताकी इच्छाकी अपरिमित शक्तिका अनेक बार प्रत्यक्ष साक्षात्कार करनेपर भी सत्तारूढ़ शासकोंद्वारा जनताकी इच्छाकी जितनी अवहेलना हमारे इस अद्भुत लोकतन्त्रमें होती रही है, वह भी अपनेमें एक अद्वितीय उदाहरण है। भारत ही विश्वका वह एकमात्र महादेश है जो भावनाओंपर जीता है और भारत ही वह एकमात्र अभागा लोकतन्त्र है, जिसमें जन-भावनाओंका जनताके द्वारा चुने गये शासकोंने कभी भी आदर नहीं किया। यह विसंगति न होती तो कोई कारण न था कि स्वाधीनताप्राप्तिके पूरे ४७ वर्ष पश्चात् आज भी देशके भावुक गोभक्त-समुदायको गोवंशके निर्मम संहारपर विवशतापूर्ण अश्रुपात करना पड़ता या गोहत्याके विरुद्ध आज भी सत्याग्रहों, उपवासों और आन्दोलनोंका आश्रय लेना पड़ता। गोपाल और गोविन्दके रूपमें भगवान्‌की पूजा करनेवाले और 'गोमाताकी जय' बोलनेवाले ८० प्रतिशत गोभक्त मतदाताओंके मतोंसे चुनी गयी जो सरकार सम्पूर्ण तर्कों और सामाजिक न्यायकी अपेक्षाओंकी उपेक्षा करके साम्प्रदायिकताके आगे आत्मसमर्पण करती देखी जा सकती है, वह निरपराध, निरीह गोवंशके बहुमूल्य गोधनके निर्मम संहारको रोकनेके लिये बहुसंख्यक समाजके किसी भी आन्दोलन, अनुनय-विनय या अनुरोधपर किंचित् भी ध्यान देनेको तत्पर नहीं है, इससे बड़ी लज्जाजनक विडम्बना क्या हो सकती है?

इस देशकी सरकार मगरमच्छोंकी लुप्त होती प्रजातियोंकी रक्षाके लिये चिन्तित है, इस देशके तथाकथित बुद्धिजीवी सिंहों, बाघों और चीतोंके वंश-लोपकी सम्भावनापर व्याकुल हो उठते हैं। हिंसक जीव-जन्तुओंकी रक्षाके लिये इस देशमें अभ्यारण्योंकी व्यवस्था की जाती है, किंतु भारतकी मानव-हितकारिणी अद्वितीय उत्कृष्ट गो-प्रजातियोंका सर्वथा उच्छेद होने जा रहा है, इसमें न तो इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थितिको रोकनेके लिये सरकार उत्सुक है न तथाकथित बुद्धिजीवियोंको इस ओर ध्यान देनेका अवकाश है।

राजस्थानके मरुप्रदेशमें एक पक्षी होता है—'गोडावण'। कुछ वर्षों-पूर्व उसका शिकार करनेको उद्यत अरब शाहजादोंको रोकनेके लिये कुछ पक्षीप्रेमी दयालुओंने पत्र-पत्रिकाओंमें आन्दोलन चलाया और सौभाग्यसे अत्यल्प संख्यामें पाया जानेवाला वह पक्षी नष्ट—निर्मूल होनेसे बच गया। वैसे तो सभी प्राणियोंकी रक्षा होनी उचित है, सो 'गोडावण' की प्राण-रक्षासे सभीका प्रसन्न होना स्वाभाविक है, किंतु शोकपूर्ण स्थिति तो यह है कि जिन दूरदर्शियोंको बालुकाके अनन्त प्रसारमें छिपा हुआ 'गोडावण' भी दिखायी दे गया, उन्हें उसी राजस्थानका प्रत्यक्ष नष्ट हो रहा बहुमूल्य 'गोवंश' क्यों नहीं दिखायी देता? राजस्थानके बेजोड़ राठी गाय, बैल, थारपारकर, सांचेरी और नागोरी-वंशके गोपशु अब सर्वनाशके कगारपर खड़े हैं। प्राकृतिक अकाल और गोहत्यारोंका विस्तृत जाल—ये दोनों मिलकर उन्हें नष्ट—निर्मूल करनेपर तुले हैं, किंतु देशके तथाकथित बुद्धिजीवी वर्गमें या शासकोंमें कहीं कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखायी देती।

गोवंशकी दुर्लभ प्रजातियाँ हरियाणवी और गिर कलकत्ता-बंबई और केरलके कसाईखानोंमें कट-कटकर नष्ट होती जा रही हैं। इस अद्भुत देशमें सिंहों, बाघों, वनमानुषों और मगरमच्छोंतकको वकील मिल जाते हैं, किंतु 'गोवंश' की रक्षाके नामपर स्वयंको पढ़ा-लिखा और प्रगतिशील कहनेवाला वर्ग नाक-भौं सिकोड़ता है और गोरक्षाके प्रयत्नोंको तिरस्कारपूर्ण दृष्टिसे देखता है। जो देश-हितैषी गोभक्त गोवंशकी रक्षाके लिये आन्दोलन करते रहे हैं, उन्हें साम्प्रदायिक और पोंगापंथी कहना तथाकथित प्रबुद्ध-वर्गमें फैशन बन गया है। सत्तामें बैठे लोग या तो उसी तथाकथित प्रबुद्ध-वर्गसे सम्बद्ध हैं या गोकशी-साम्प्रदायिक वोटोंके हाथों बिके हुए हैं।

ऐसी अन्धकारपूर्ण स्थितिमें निरपराध निरीह गोवंशकी रक्षा कैसे हो? यह प्रश्न आज देशके करोड़ों गोभक्तोंके हृदयोंको व्याकुल कर रहा है।

गोहत्यापर पूर्ण प्रतिबन्ध लगवानेके लिये १९४७ से ही यत्र-तत्र आन्दोलन, अनशन, प्रदर्शन और प्रयत्न होते रहे, किंतु १९६६ में दिल्लीमें जो सत्याग्रह हुआ वह अभूतपूर्व था। उस आन्दोलनका विवरण देना या उसकी विराटताके प्रमाण प्रस्तुत करना अभीष्ट नहीं है। उस आन्दोलनके व्यापक प्रभावका सबसे बड़ा प्रमाण है कि १९६७ में पूरे हिन्दी-भाषी प्रदेशोंमें सरकारको पराजयका मुख देखना पड़ा और गोहत्याविरोधी आन्दोलनसे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष जुड़े विपक्षी दलोंकी संविद् सरकारें सत्तारूढ़ हुईं।

गोरक्षाकी भावनासे भारतीय मतदाताका मानस कितना अभिभूत है, इसका यह स्पष्ट प्रमाण था, किंतु फिर भी

गोहत्या बंद नहीं हुई और गोभक्षक साम्प्रदायिकताके आगे समर्पित अवसरवादी राजनीति टस-से-मस नहीं हुई।

आज गोरक्षा-आन्दोलन बिखरा पड़ा है। १९८०में संत विनोबाके द्वारा नैतिक प्रभाव डलवाकर गोवंश-रक्षाकी अभीष्ट-सिद्धि करनेका प्रयत्न दुर्भाग्यसे विफल रहा। १९८२ से निष्ठावान् गोभक्त बंबईके गोहत्या-गृहके द्वारपर अखण्ड सत्याग्रह कर रहे हैं, दिल्लीमें भी उस सत्याग्रहकी भावनाको जाग्रत् करनेके लिये साप्ताहिक सत्याग्रह चलाया गया। सम्पूर्ण देशमें गोहत्या-निषेध-आन्दोलनकी चेतना फिरसे फैलानेकी आवश्यकता है।

आज यह भी बात उठायी जाती है कि देश अनेक गम्भीरतम समस्याओं और वैदेशिक नीतियोंके उलझनोंमें फँसा हुआ है, ऐसी स्थितिमें गोहत्याके प्रश्नको उठाना कहाँतक संगत है, बात कुछ हदतक ठीक भी लगती है, किंतु ये समस्याएँ भी उत्पन्न हमींने की हैं। तो इसके लिये जिम्मेदार भी हम खुद स्वयं हैं। देशकी जनताकी भावनाओंकी उपेक्षा ही अभिशापके रूपमें शासकोंके सामने खड़ी है। इसका हल राष्ट्रिय नीतियोंमें परिवर्तनसे ही सम्भव है। तभी देशको पतनके मार्गसे बचाया जा सकता है।

गोवंशकी रक्षाका प्रश्न इतना तुच्छ या महत्त्वहीन नहीं है कि उसके समाधानके लिये देशकी शेष समस्याओंके हलतक प्रतीक्षा की जाय। भारतकी ग्रामीण अर्थव्यवस्था और संस्कृतिकी रीढ़ गोवंशके अस्तित्वकी रक्षाका रचनात्मक आन्दोलन अप्रासंगिक कैसे हो सकता है?

निश्चय ही देशकी बहुसंख्यक जनता आज भी गोवंशको नष्ट होते देखकर दु:खी है, ८० प्रतिशत ग्रामीण भारतके गोभक्त नर-नारी, गाय और उसके वंशको बचाना चाहते हैं, किंतु इतने विपुल बहुमतकी भावनाको एक संगठित शक्तिके रूपमें जाग्रत् करके गोहत्याका प्रचण्ड प्रतिरोध करनेके लिये जैसे सुयोग्य, कर्मठ और सुदृढ़ नेतृत्वकी आवश्यकता है, उसका आज नितान्त अभाव है।

केवल कानून बना दिये जानेसे गोवंशके प्रति देश और देशवासियोंका कर्तव्य पूरा हो जायगा ऐसा नहीं है। प्रबल राष्ट्रिय संकल्प और शासकीय कानूनद्वारा पहले गोवंशको कटने और मिटनेसे बचाया जाय और उसके पश्चात् व्यापक गोसंवर्धन-गोपालन-योजना बनाकर उसे कार्यान्वित किया जाय तो २१ वीं शताब्दीके आगमनतक देशकी कृषि, ग्रामोद्योग और अर्थव्यवस्थाके क्षेत्रमें चमत्कारपूर्ण क्रान्ति आ जायगी।

पृथ्वी और स्वर्गके देवताओंकी रक्षा गाय और संत करते हैं, किंतु इन दोनोंमेंसे किसीपर संकट आये तो कौन रक्षा करेगा? संतोंकी रक्षा गाय करेगी और गायोंकी रक्षा संत करेंगे। संत-संस्कृतिकी संरक्षिका गोमाता है। गोमाता नष्ट हो गयी तो संत भी नष्ट—निर्मूल हो जायँगे। इसलिये गोमाताके भक्तों एवं संतोंको जगाओ और उन्हें गोमाताकी रक्षाके युद्धकी अग्रिम पंक्तिमें लगाओ। आगे संत हों पीछे संत-पूजक सारा भारतीय समाज हो, गाय तभी बचेगी, अन्यथा नहीं।

गोशाला कैसी हो?

समुचित गोपालनके लिये गोशाला सुन्दर, स्वच्छ और विचारपूर्वक बनायी जानी चाहिये, क्योंकि अच्छे स्थानमें रहनेपर पशु सुखी और स्वस्थ रहते हैं। विदेशोंमें बड़ी-बड़ी धनराशि लगाकर भव्य गोशालाओंका निर्माण किया जाता है। वहाँकी गोशालामें तो कहीं-कहीं बिजली तथा रेडियोतकका भी प्रबन्ध होता है।

गोशाला खूब हवादार बनानी चाहिये, क्योंकि गायोंको प्राणवायु (ऑक्सीजन) की काफी आवश्यकता होती है। इमारत पक्की बनायी जाय तो अच्छा है। साधारण फूस छाकर विधिवत् बनायी गयी कच्ची और सस्ती गोशालामें भी पशु आरामसे रह सकते हैं।

स्थान—जहाँतक सम्भव हो गायोंके रहनेकी जगह शान्त, खुली हुई और बस्तीसे दूर हो तो अच्छा है। इससे गाड़ी आदिके आने-जाने, बस्तीके नालोंकी गंदगी तथा संक्रमणका भय न रहेगा। यहाँ वे स्वच्छन्दतापूर्वक आ-जा सकेंगी।

गोशाला समतल तथा ऊँची भूमिपर होनी चाहिये, ताकि वहाँ आस-पासका पानी आकर इकट्ठा न हो पाये। इसके आस-पास गंदे पानी या कूड़ा-करकटसे भरे गड्ढे न होने चाहिये। अन्यथा गंदी वायु और मच्छर-मक्खीके

प्रकोपसे गायोंको कष्ट पहुँचेगा तथा उनका दूध भी दूषित हो जायगा। गोशालाको हमेशा साफ रखना चाहिये।

गोशालासे एक-दो मीलके फासलेपर बढ़ती हुई नदीका होना बहुत सुविधाजनक है, क्योंकि वहाँ जाकर पशु अच्छी तरह नहा सकेंगे और पानी पी सकेंगे। बड़ी गोशालाओंके लिये उपयुक्त स्थान वह है जो बस्तीसे दूर ऊँचे समतलपर तथा नदीके निकट हो।

कच्ची गोशाला—शालाके चारों तरफ बाड़ मिट्टीकी दीवार उठाकर बना लें। काँटोंकी बाड़से पशुओंके खरोंच लगनेका भय रहता है। पशुओंकी संख्याके हिसाबसे लंबा-सा बरामदा बना लें तथा ऊपर सीमेंटकी पक्की छत ढलवा दें। यदि धनाभाव हो तो वहाँ लकड़ीके गोल खंभोंके सहारे फूसका छप्पर बना दिया जाय। इस बरामदेके एक ओर या बीचमें नाँद बनी होनी चाहिये। जहाँतक हो सके, कम-से-कम नाँद तो पक्की ही बनवाये, अन्यथा मिट्टी और भूसेको मिलाकर बनायी गयी कच्ची नाँदसे भी काम चल सकता है। कुम्हारद्वारा बनाये हुए मिट्टीके बड़े-बड़े कुंडे भी नाँदके लिये अच्छे होते हैं।

फर्शपर निरी मिट्टी ही होगी तो वहाँ कीचड़ शीघ्र हो जाया करेगा। कुछ ईंटके टुकड़े और रोड़े आदि कूटकर फर्शको पक्का तथा समतल बना देना चाहिये। हर दूसरे दिन नयी मिट्टी और पत्ते आदि बिछाकर पहले दिनकी बिछी हुई इन चीजोंको 'कम्पोस्ट खाद' बनानेके काममें लाये।

दूध-पीते छोटे बछड़े-बछियोंको रखनेके लिये बाँस लगाकर बाड़ा बना ले। उनके लिये कम ऊँची नाँदोंमें सानी तथा पानीका प्रबन्ध करना चाहिये। भूसा, दाना, खली और गोरस रखनेके लिये अलग-अलग कोठरियाँ बना ले। ग्वालेके रहनेके लिये एक कुटिया भी अलग हो।

पक्की गोशाला—इसके बनानेमें काफी खर्च करना होता है, पर इससे बहुत समयके लिये सुविधा हो जाती है। इसे चतुर राजमिस्त्रियोंसे बनवाना चाहिये। इसकी चहारदीवारी छः या सात फुट ऊँची हो, ताकि बाहरसे आने-जानेवालोंकी दृष्टि गोशालाके भीतरी कार्यक्रमपर न पड़े। दरवाजा खूब चौड़ा-सा हो और सुडौल हो। यहाँ कोई भी चीज पैनी और नुकीली नहीं होनी चाहिये। गोशालाके बीचमें खुला हुआ आँगन होना चाहिये, जहाँ सुबह-शाम गायें बैठ सकें। गायोंकी संख्याके हिसाबसे बरामदे आठ-नौ फुट चौड़े और लंबे बना लिये जायँ। एक गायको बाँधनेके लिये ५ x १० फुट जगह काफी होती है। एक ओर नाँद बनी हो तथा फर्श पीछेकी ओर ढलवाँ हो, जहाँ कि नालीसे गोमूत्र तुरंत ही बहकर बाहर निकल जाय।

टीनकी छत धूपसे तप जानेके कारण अच्छी नहीं रहती। कड़ियोंकी छतमें साँप आदि जीव-जन्तु घर बना लेते हैं, अतः वह भी ठीक नहीं। डाट, लिंटर या ऐजबेस्टासकी नालीदार छत सबसे अच्छी रहेगी।

नाँद दो फुट लंबी, डेढ़ फुट चौड़ी और ढाई फुट ऊँची होनी चाहिये। इसमें ऐसी नाली बनी होनी चाहिये, जो डाट लगाकर बंद कर दी जा सके तथा साफ करते समय खोल ली जाय। नाँदको हर रोज धोकर साफ कर देना चाहिये। फर्शपर पत्थर या सीमेंट बिछाकर उसे चिकना कर देना ठीक नहीं है, क्योंकि फिसलन हो जानेसे गायके गिरनेका डर रहता है। कंकरीट और चूनेकी रोड़ी मिला ले तथा फर्शपर भलीभाँति कूटकर उसे मजबूत एवं समतल बना दिया जाय। वह ऊँचा-नीचा और गड्ढेदार न हो। जगह-जगहपर सीमेंटसे पक्की नालियाँ बनवा लेनी चाहिये। जरूरतकी जगहपर ईंटें लगवा ले। गोशालामें भूसा भरने, खली-दाना रखने, चारा काटनेकी मशीन लगाने तथा गोरस रखनेके लिये अलग-अलग, सुगमतापूर्वक पहुँचवाले, भण्डार होने चाहिये। साइलेज-कूपका बनवाना बहुत लाभदायी होगा।

एक-दो कमरे जरा अलग हटकर ऐसे बने हों, जहाँ बीमार जानवर रखे जा सकें। उसके पास ही दवा सुरक्षित रखनेके लिये एक कोठरी भी होनी चाहिये।

अड़गड़ा (Cattle Crush)—यह लकड़ीका बना होता है। दवावाले कमरेके पास इसका होना भी जरूरी है। इसके भीतर जानवरको फाँसकर सहूलियतसे खड़ा किया जा सकता है और उसकी बीमारीकी जाँच करनेमें सहूलियत रहती है।

प्रसूतिका कमरा—गायके ब्यानेके लिये बड़ा और साफ हवादार एक कमरा होना चाहिये, उसमें नरम, साफ और सूखी घास आदि बिछा दी जाय, ताकि ब्याते समय गायको आराम मिले। बादमें उसे उठाकर खाद बनानेके कूपमें डाल दे।

गोरस-भण्डार—दूध रखने, तौलने और किताबें रखनेके लिये एक छोटा-सा कमरा होना चाहिये। इसमें जालीदार किवाड़ और खिड़की होनी चाहिये, ताकि मच्छर-मक्खी न घुसने पायें।

साँड़के रहनेके लिये काफी जगह अलग होनी चाहिये। छोटे बच्चोंके लिये भी बाड़ेदार बरामदे अलग बने हों।

नाप—गोशाला आवश्यकताके अनुसार लंबी-चौड़ी और खूब फैली हुई हो। एक पशुको खड़े रहनेके लिये कम-से-कम ५' x १०' फीट जगह चाहिये। पौराणिक मतके अनुसार चौड़ाईको लंबाईसे गुणा करके गुणनफलको ७ से भाग देनेपर यदि ५ बच रहे तो वह वृष-आयवाली गोशाला शुभ मानी जाती है।

सिंह अथवा सर्पके मुखवाली गोशाला बनाना अच्छा नहीं माना जाता।

पानी—सबसे पहले पशुओंके लिये जलका प्रबन्ध करना आवश्यक है। नलके द्वारा जमीनसे हर समय साफ पानीके खींचनेका प्रबन्ध होना चाहिये। यदि साफ पानीका झरना, सोता या नल बराबर २४ घंटे ही झरता रहे तो बहुत अच्छा है। कुएँसे भी काम चल सकता है, परंतु वह ढका हुआ और ऊँचा होना चाहिये। पशुओंकी नाँदके पास एक हौजमें साफ पानी सदैव भरा रहना चाहिये, ताकि प्यास लगनेपर पशु भरपेट पानी पी सके।

गोशालामें पानीकी जरूरत निरन्तर बनी रहती है, इसलिये उसके प्रबन्ध करनेका विशेष ध्यान रखना चाहिये।

कुछ सुव्यवस्थित गोशालाओंमें छोटा और दो तरफसे खुला हुआ एक हौज (Csttle dip) बना होता है, जिसमें पानी भरा और निकाला जा सकता है। इस पानीमें कृमिनाशक दवाएँ डालकर गायोंको तैरा दिया जाता है, जिससे किलनी आदि व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। गायोंको नदीमें नहलाना भी बहुत लाभदायक है।

सफाई—गोशाला हमेशा साफ-सुथरी रहनी चाहिये। वहाँ बकरी, कुत्ते और मुर्गी आदि जानवरोंको न जाने दे, क्योंकि ये गायकी सानीकी चीजोंको अशुद्ध कर देते हैं। वहाँकी दीवारोंपर हर साल एक बार चूनेकी सफेदी करा देनी चाहिये।

पशुओंको मक्खियोंसे बचानेके लिये शालामें नीमके पत्तों या लोबान आदिकी धूपका धुआँ जरूर करना चाहिये। गोशालाकी नालीको सुबह-शाम पानीसे धोकर साफ रखना चाहिये। गोशालाके बाहरकी ओर जहाँ मुख्य एवं बड़ी नाली गिरती हो, वहाँ एक बड़ा-सा हौज बनाकर उसमें एक बर्तन रख दे, जिसमें पशुओंका मूत्र और शालाके धोवनका पानी इकट्ठा होता रहे। बरतनके भर जानेपर कम्पोस्ट खादके बनानेमें इस पानीको डालना लाभदायी होगा। शाला कभी-कभी फिनैलसे धुलवा दी जानी चाहिये।

गोशालामें रातके समय दीपक जलाना अच्छा माना जाता है। गोशालाके आँगनमें नीम या पीपलके एक सघन छायादार पेड़का होना बहुत स्वास्थ्यकारी और उपयोगी होता है। पेड़की छाया जाड़े और गर्मियोंमें हमेशा ही पशुओंको आराम पहुँचाती है।

गोशाला ऐसी हो कि जहाँ सूर्यकी रोशनी अच्छी तरह पहुँच सके, ताकि हानिकर कीटाणु वहाँ पैदा न हो पायें। खुली हुई हवादार जगहमें रहनेसे गाय-बैल प्रसन्न रहते हैं।

बर्तन—दूध दुहने और रखनेके लिये खास तौरकी बनी बाल्टी आदि बरतन गोशालामें रहने चाहिये। दाना-खली भिगोनेके लिये एक बड़ा-सा बर्तन हो या एक हौज ईंट-सीमेंटका बनवा लिया जाय। कुछ बाल्टियों और टोकरियोंकी भी जरूरत पड़ेगी। दवा पिलानेके लिये छोटी-बड़ी बाँसकी बनी हुई २-३ नालें भी रखी रहें।

किताबें—गोशालामें हर एक पशुका जन्मपत्र, दाना-खलीका लेखा और दूधका ब्योरा लिखी हुई पुस्तकें होनी चाहिये। महीने भरकी आमदनी और खर्च भी लिखा रहे। यदि नुकसान नजर आये तो उसके कारणकी तुरंत खोज करे। व्यवस्था रखनेसे नुकसान न हो पायेगा।

ओषधि—व्यवस्थित गोशालामें साधारणतया काम आनेवाली सारी ओषधियाँ तैयार करके रखनी चाहिये, ताकि जरूरत पड़नेपर इधर-उधर भटकना न पड़े।

अन्य हिदायतें—गायोंको बाँधनेकी रस्सी चिकनी और सनकी बनी होनी चाहिये, क्योंकि सूतकी रस्सी बड़ी जल्दी मैली हो जाती है। लोहेकी जंजीरसे भी काम लिया जाता है। रस्सी बाँधनेके खूँटे नुकीले न हों, बल्कि गोल हों।

पशुओंकी गिनती करनेकी सुविधाके लिये उनके कानों या पुट्ठोंपर अंक दाग दिये जाते हैं, जो सदा बने रहते हैं। पशुओंको नाम या संख्याके द्वारा सहज ही पहचाना जा सकेगा।

साधारण तौरपर काममें आनेवाले औजार यथा—चाकू, हँसिया, कैंची, सुई, सूजा, सँड़ासी आदिका होना जरूरी है। इन्हें काममें लानेके पहिले सदा साफ कर लेना चाहिये और कृमिनाशक जलमें उबाल कर कीटाणु-रहित कर लेना चाहिये। उपचार करते समय हाथ तथा नाखूनोंको भी साफ करके कृमिनाशक घोलसे धो लेना चाहिये।

गोशालाओंका विवरण

(१) श्रीकृष्ण गौशाला कैलाशनगर, (गाजियाबाद)

'श्रीकृष्ण गौशाला' अत्यन्त प्राचीन गौशाला है। इसकी स्थापना आजसे लगभग ९० वर्ष-पूर्व सन् १९०४ ई० में कैलाशनगर, गाजियाबादमें हुई। यह गौशाला एक आदर्श गौशालाके रूपमें मान्य रही है। इसने जिला तथा प्रान्त-स्तरपर हुई प्रतियोगिताओंमें सर्वोत्तम गाय तथा सर्वोत्तम साँड़के लिये अनेक पुरस्कार भी प्राप्त किये हैं। बीचमें इस गौशालाकी व्यवस्था कुछ अनियमित-सी हो गयी थी, किंतु अब पुन: इसे सुव्यवस्थित कर लिया गया है। गौशाला-परिसर तथा गोष्ठोंका जीर्णोद्धार भी हो गया है। इस गौशालाके प्रयत्नोंसे समय-समयपर अनेक गायोंको कसाइयोंके चंगुलसे मुक्ति प्राप्त हुई और उन्हें उचित संरक्षण भी प्राप्त हुआ है।

इस समय गौशालामें गाय, बैल, बछिया तथा बछड़ोंकी कुल संख्या मिलाकर ३०१ है। जिनमें मुख्य रूपसे हरियाणा, साहीवाल, जर्सी, रेडडेन तथा देशी नस्लें हैं। किंतु आस-पास सघन आबादी होनेसे गोचरभूमि नहीं है। चारा आदिकी व्यवस्था अन्यत्रसे करनी पड़ती है। गायोंसे प्राप्त दूधकी विक्री तथा गोबर-गैस-संयन्त्र और गौशालाको प्राप्त दानराशिसे सभी कार्य सम्पन्न होते हैं। गायोंकी चिकित्साके लिये चिकित्सक भी नियुक्त हैं। गौ माताकी कृपासे गौशालाका कार्य सुचारु रूपसे चल रहा है।

गोपालन एवं गोसंवर्धनके लिये आधुनिक वैज्ञानिक प्रयोग कितने उपयोगी अथवा अनुपयोगी हैं तथा गोपालनमें कौन-कौन-सी कठिनाइयाँ आती हैं और उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है, इसके साथ ही एक आदर्श गोशालाका स्वरूप कैसा होना चाहिये?—इस सम्बन्धमें इस 'श्रीकृष्ण गौशाला' के अनुभवों, मान्यताओं, विचारों तथा सुझावोंको यहाँ दिया जा रहा है—

आधुनिक वैज्ञानिक प्रयोग

कृत्रिम गर्भाधान तथा भ्रूण-प्रत्यारोपण और इंजेक्शन लगाकर अधिक दूध प्राप्त करनेको 'आधुनिक वैज्ञानिक प्रयोग' कहा जाता है, किंतु यह 'श्रीकृष्ण गौशाला' उसके पक्षमें नहीं है। साथ ही हम अपनी भारतीय नस्लोंको पूर्णत: सुरक्षित रखते हुए उन्नत देशी साँड़ोंके माध्यमसे गर्भाधान कराकर नसल-सुधार करना चाहते हैं; क्योंकि गोवंशकी संकर-नस्लें हमारे देशकी जलवायुके लिये उपयुक्त नहीं हैं। उनका रख-रखाव महँगा है। वे बहुत अधिक खाती हैं। अधिक बीमार होती हैं। उनमें मृत्यु-दर भी ज्यादा है। गर्मी उन्हें सहन नहीं हो पाती। अत: भारतीय उत्तम नस्लको ही बढ़ावा देना चाहिये।

गोपालनमें कठिनाइयाँ तथा उन्हें दूर करनेके उपाय

(क) प्रशिक्षित एवं समर्पित कर्मचारियों तथा प्रबन्धकोंका अभाव दूर करनेके लिये गोशाला-प्रबन्धन तथा गोसेवा-प्रशिक्षण-शिविर लगाये जायँ और वहाँ इन विषयोंपर विस्तारसे विचार करके उन्हें व्यावहारिक रूप दिया जाय, इससे यह समस्या दूर हो सकती है।

(ख) हमारे देशमें लार्ड मैकाले-प्रणीत शिक्षा-पद्धति लागू रहनेके कारण हमारी नयी पीढ़ी गोवंशके महत्त्वके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानती। फलस्वरूप पढ़े-लिखे युवकोंमें गोपालन एवं गोसेवाके प्रति कोई रुचि नहीं है। इतना ही नहीं, वे लोग गोपालनको गंदा एवं निकृष्ट कार्य समझते हैं। गोबरको मल समझकर उससे घृणा करते हैं। इस अज्ञानको दूर करनेके लिये गोवंशके महत्त्वका व्यापक प्रचार-प्रसार करनेकी आवश्यकता है।

(ग) गोपालनके आरम्भमें धनाभावकी भी कठिनाई आती है। जबतक हम अपने गोवंशकी देशी प्रजातियोंको उन्नत नहीं कर पाते हैं, तबतक इस कार्यके लिये आर्थिक सहयोगकी आवश्यकता है। जो राज्य सरकारों तथा 'भारतीय जीव-जन्तु-कल्याण-बोर्ड' मद्राससे अनुदान प्राप्त करके तथा गोप्रेमी सम्पन्न परिवारोंसे दान प्राप्त करके पूरी की जा सकती है।

(घ) चरागाहोंका लगभग समाप्त हो जाना तथा ग्वालोंका गोचारणके लिये न मिलना गोपालनमें सबसे बड़ी कठिनाई है। इसके लिये गोचरभूमि फिरसे आरक्षित करनी होगी तथा ग्वालोंकी व्यवस्था फिरसे करनी होगी। गोशालाएँ प्राय: उन स्थानोंपर स्थापित की जायँ, जहाँ चरागाह उपलब्ध रहे, पानीकी सुविधा हो तथा जीव-जन्तुओंसे कोई भय न हो।

आदर्श गोशाला

भारतमें स्थापित गोशालामें गोवंशकी भारतीय प्रजातियोंकी गाय होनी चाहिये और उनके पालनेके लिये निम्नलिखित व्यवस्था होनी चाहिये—

(१) चारा—भूसा, हरा चारा, खल-चूरी-छिलका, दलिया, नमक तथा अन्य खनिजकी नियमित व्यवस्था होनी चाहिये। चारा काटनेकी मशीन तथा पिसाई-चक्की भी गोशाला-परिसरमें गोशालाकी अपनी होनी चाहिये। चारा विभिन्न आयुके गोवंशको उसकी आवश्यकताके अनुसार मात्राओंमें दिया जाना चाहिये। गर्भवती गायोंको तथा दूध देनेवाली गायोंको विशेष पौष्टिक चारा दिया जाना चाहिये। दूध बढ़ानेके लिये हरा चारा, जई, बरसीम, बिनौलेकी खली, चनेका छिलका, जौ अथवा गेहूँका दलिया विशेष उपयोगी है।

(२) गायोंके पीने तथा नहानेके लिये पानी—गोशालाके पास गायोंके पीने तथा नहानेके लिये पानीकी अपनी व्यवस्था होनी आवश्यक है। उसके लिये ट्यूबवेल, भूमिगत जलाशय तथा ओवर हैड टैंक होने चाहिये।

(३) आवास—गोशालामें सभी गायोंके लिये आच्छादित आवास, जिसमें गर्मी-सर्दी तथा वर्षासे बचाव हो सके, होना चाहिये। आवासमें उनके चारेके लिये खोर तथा पानी पीनेके लिये पक्की चरई होनी चाहिये। गायोंको बिना पक्के फर्श लगी भूमिपर बैठना सुखद है। इसलिये गायोंके आवासोंमें पक्के फर्श नहीं लगाये जायँ और यदि लगाये भी जायँ तो ऐसे हों कि उनपर गाय फिसल न सके और साथमें कुछ स्थान कच्चा भी छोड़ दिया जाय।

(४) गोशालामें गोवंशका वर्गीकरण—गोवंशका वर्गीकरण करके प्रत्येक वर्गके गोवंशको अलग-अलग आवास तथा बाड़ोंमें रखा जाना चाहिये। बछिया अलग, बाछे अलग, गर्भवती गाय तथा दूध देनेवाली गाय अलग, दूधसे सूखी गाय, साँड़ और बीमार गोवंश—ये सब अलग-अलग आवास तथा बाड़ोंमें रखे जाने चाहिये।

(५) नामकरण अथवा क्रमाङ्कन—आदर्श गोशालामें गोवंशका नामकरण अथवा क्रमाङ्कन अवश्य होना चाहिये। यह देखा गया है कि गाय अपना नाम पुकारे जानेपर दौड़ती आती है। नामकरण होनेसे उसे अपने साथ आत्मीयताका भी अनुभव होता है। नामकरण न हो सके तो क्रमाङ्कन (Numbering) कर दिया जाय। इससे भी पहचानमें सुविधा होती है।

(६) गर्भाधान—गर्भाधानका समय होनेपर गाय रँभाती है। उस समय उसका गर्भाधान करवा देना चाहिये। समय निकल जानेपर वह पुनः १४ दिन या २१ दिन बाद रँभाती है। गर्भाधानके लिये गायको उत्तम जातिके ही उत्तम देशी साँड़से प्राकृतिक गर्भाधान कराना सर्वोत्तम है। ज्यादा दूध देनेवाली देशी गायके बछड़ोंको अच्छी तरह खिला-पिलाकर अच्छे साँड़ तैयार किये जाने चाहिये। उनकी माताके दूधका रिकार्ड भी रखा जाना चाहिये।

(७) चिकित्सा-व्यवस्था—फैलनेवाली छूतकी बीमारियों-जैसे 'खुरपका', 'मुँहपका' की रोक-थाम तथा बीमार पड़नेवाली गायोंकी चिकित्साके लिये एक नियमित चिकित्सक तथा औषधालय होना चाहिये। अनुभवी गोपालकका परामर्श लेकर घरेलू दवाओंके प्रयोगसे गायको विशेष लाभ होता है।

(८) स्वच्छता—गायको स्वच्छता पसंद है। वह स्वयं स्वच्छ रहना चाहती है और स्वच्छ स्थानपर ही बैठना चाहती है। गोशालाको स्वच्छ रखनेसे गोवंश बीमारीसे भी बचा रहता है। अतः गोशालाको स्वच्छ रखना बहुत ही आवश्यक है। गायोंके पानी पीनेके चरई, चारेकी खोज तथा आवास सभी स्वच्छ रहने चाहिये। गायोंको प्रतिदिन नहलाया जाना चाहिये। इसके लिये फव्वारा-स्नानकी व्यवस्था हो तो सर्वोत्तम है।

(९) गोबर-गैस संयन्त्र—गोशालामें गोबर प्रचुर मात्रामें होता है, इसलिये वहाँपर गोबर-गैस संयन्त्र लगाने और चलानेसे कई लाभ होते हैं। गोबर-गैस मिलती है, उससे भोजन बनानेके लिये गैसका चूल्हा तथा प्रकाशकी व्यवस्था हो सकती है। इसके अतिरिक्त गोबर-गैससे जेनेरेटर सेट चलाकर विद्युत्-उत्पादन भी किया जा सकता है। जिससे बिजलीके पंखे, चारा काटनेकी मशीन, बिजलीके मोटरसे चलनेवाली आटाचक्की—ये सब चल सकते हैं। साथ ही गोबर-संयन्त्रसे बने हुए खादकी गुणवत्ता भी बढ़ जाती है।

(१०) कृषि-भूमि—गोशालाके पास अपनी कृषि-भूमि होनी चाहिये। जिसमें गोवंशके लिये हरा चारा, भूसा तथा मोटे अनाज उत्पन्न किये जा सकें। एक गायके लिये एक एकड़ भूमि होना आदर्श स्थिति है।

(११) चरागाह—गोशालाके निकट एक चरागाह होना चाहिये, जिसमें गोशालामें रहनेवाला गोवंश चरनेके लिये जा सके। गायको चरना तथा भ्रमण करना बहुत पसंद है। इससे वह स्वस्थ रहती है और उसके दूधकी श्रेष्ठता तथा गुणवत्ता भी बहुत बढ़ जाती है।

(१२) निष्ठावान् प्रबन्ध-समिति—गोशालाको

आदर्श गोशाला बनानेमें तथा आदर्श गोशालाके रूपमें चलानेके लिये निष्ठावान् लोगोंकी प्रबन्ध-समिति होनी चाहिये और ऐसे ही निष्ठावान् सेवक भी होने चाहिये, जो नि:स्वार्थ एवं निष्कामभावसे ईश्वरकी प्रसन्नता तथा गोमाताका आशीर्वाद पानेके लिये गोशालाके प्रबन्धमें कार्यरत हों। इससे कम व्यय होनेसे वह गोशाला स्वावलम्बी भी हो जायगी।

(१३) **छायादार वृक्ष**—गोशालामें छायादार वृक्ष होनेसे गायोंको बैठनेके लिये छाया मिल जाती है। यह वृक्ष ऐसे होने चाहिये जिनसे वायुकी भी शुद्धि होती रहे। इस दृष्टिसे नीमका वृक्ष सर्वाधिक उपयोगी है।

(१४) **गोवंश-संरक्षणकी व्यवस्था**—गोशालाके द्वार कसाइयोंसे छुड़ाये गये गोवंश तथा असहाय, बीमार, वृद्ध और दुर्घटनाग्रस्त गोवंशके लिये सदैव खुले रहने चाहिये।

(१५) **गोवंश-संवर्धनकी व्यवस्था**—गोशालामें गोवंशके पालन एवं रख-रखावकी ही नहीं, बल्कि उसके विकासकी भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिये। जो बछिया दूध देनेवाली अच्छी गाय बन सकती है, उसका गर्भाधान उन्हींकी नसलके अच्छे साँड़ोंसे करवाकर, उनको अच्छा पौष्टिक चारा देकर अधिक दूध देनेवाली गाय बनाने, बछड़ोंको अच्छे साँड़ बनाने अथवा अच्छे बैल बनानेका प्रयास लगातार होते रहना चाहिये।

इस प्रकार इन उपायोंके अमलमें लानेसे निश्चित ही गोवंशकी अभिवृद्धि होगी, गोसंरक्षणको प्रोत्साहन मिलेगा तथा गोमाता भी नृशंस-हत्यासे बच सकेगी। अत: अधिक-से-अधिक लोगोंको प्रयत्नपूर्वक इस दिशामें अवश्य लगना चाहिये, यह एक पुण्यका कार्य है, परोपकारका कार्य है, इससे न केवल लौकिक समृद्धि ही प्राप्त होगी, बल्कि सच्चा सुख-संतोष भी प्राप्त होगा और बुद्धि शुद्ध होकर उनका अध्यात्मपथ भी प्रशस्त हो जायगा।

—श्रीपरमानन्दजी मित्तल

(२) गोशाला, हरिधाम-आश्रम, बिठूर (कानपुर)

इस गोशालाकी स्थापना ब्रह्मलीन स्वामी श्रीप्रकाशानन्द सरस्वतीजी महाराजके सत्प्रयासोंसे सन् १९७४ ई० में सम्पन्न हुई। वर्तमानमें गोशालामें ८ गायें, एक साँड़, २ बाछे तथा ५ बाछी हैं, जो साहीवाल, जर्सी तथा हरियाणा नस्लके हैं। गोमाताकी कृपासे हमारी इस गोशालामें उचित गोपालनके लिये प्राय: सभी साधन उपलब्ध हैं। निकटमें गङ्गाजी होनेसे गायोंको पानी आदिकी बड़ी सुविधा है। गोशालासे संलग्न लगभग आधा बीघा भूमि है, जिससे प्राय: ८ महीने हरा चारा उपलब्ध होता रहता है। चारेका भण्डारण उपयुक्त समयपर कर लिया जाता है। गायोंके उपचारके लिये घरेलू-देशी ओषधियाँ दी जाती हैं और आवश्यकता पड़नेपर विशेषज्ञ भी बुलाये जाते हैं।

मुख्यत: यह 'गोशाला' हरिधाम-आश्रमसे ही सम्बद्ध है। आश्रममें साधु-संत, महात्मागण पधारते रहते हैं। गोशालाका गोदुग्ध आदि साधु-संतोंकी सेवामें प्रयुक्त होता है। आश्रमका अपना गोबर-गैस संयन्त्र भी है, उसीमें गोमयका प्रयोग हो जाता है। धर्मात्मा दान-दाताओंसे प्राप्त धनराशिसे यहाँका प्रबन्ध होता है।

हमारी यह मान्यता है कि गोशालामें उतना ही गोधन रखना चाहिये, जितनेका ठीकसे पालन-पोषण-संरक्षण हो सके। गौको भूखी, प्यासी या चिकित्साके लिये लालायित रखे रहना महान् पापका भागी बनना है। अत: जितनी गौओंको ठीकसे खिला-पिला सके उतनी ही गौओंको अपनी गोशालामें रखना चाहिये। बाकी गोधनको किसी अन्य गोशाला या गोपालकको समर्पित कर देना चाहिये। इसी दृष्टिसे इस गोशालामें गोधनकी संख्या कम रखी गयी है। अत: गौओंकी देख-रेख आदिमें कोई विशेष कठिनाई हमें नहीं होती।

हमारा यह अनुभव है कि गोपालन किंवा गोसंवर्धनमें आधुनिक वैज्ञानिक प्रयोग अधिक सफल नहीं हो रहे हैं, अत: पूर्णत: भारतीय पद्धतिका अनुसरण करना चाहिये। एक आदर्श गोशालाके लिये आवश्यक है कि उसमें उत्तम चारा, पौष्टिक दाना, शुद्ध जल, सफाई, चिकित्सा तथा सरदी-गरमीसे बचावकी व्यवस्था होनी चाहिये।

ईश्वरकी सृष्टिमें गौका प्रमुख स्थान है, अत: गोपालन हमारा परम धर्म है, वैज्ञानिक दृष्टिसे भी यही बात सिद्ध होती है। कई बार ऐसा होता है कि मन बड़ा उद्विग्न हो जाता है, ऐसी स्थितिमें यदि गौका दर्शन कर लिया जाय तो मनमें बड़ी शान्ति प्राप्त होती है, ऐसा हमारा व्यक्तिगत अनुभव है।

हमारी जानकारीमें एक उत्तम गोशाला गौहाना (हरियाणा) में है, जहाँ रुग्ण तथा अपाहिज गायों, बछियों तथा बछड़ोंकी बड़ी तन्मयतासे सेवा-शुश्रूषा की जाती है।

—स्वामी श्रीश्यामस्वरूपानन्दजी सरस्वती

(३) अवध-प्रान्तकी कुछ गोशालाएँ

[भारतीय गोवंश-रक्षण, गोसंवर्धन एवं अनुसंधान-परिषद्, नयी दिल्लीके शाखा-कार्यालय, कानपुरसे अवध-प्रान्तकी चार गोशालाओंका विवरण तथा अवध-प्रान्तकी गोशालाओंकी एक संक्षिप्त सूची गोरक्षा-प्रमुख अवधप्रान्तद्वारा प्राप्त हुई है, जिसे यहाँपर दिया जा रहा है—]

(क) श्रीकानपुर गोशाला सोसाइटी

जरनलगंज, कानपुरमें सन् १८८८ ई० में 'श्रीकानपुर गोशाला सोसाइटी' नामसे एक गोशालाकी स्थापना हुई। इमलिया खुर्द कालपीमें भी इस गोशालाकी शाखा है। इस समय इस गोशालामें कुल गोधन ७३ हैं, जिसमें ४९ गायें हैं। इस क्षेत्रकी विशेष नस्ल देशी फ्री क्रास है। गोशालाके पास गायोंके लिये पर्याप्त स्थान है। लगभग ८४० गौओंभरका स्थान है। गोशालाकी व्यवस्था तथा गोधनकी देख-रेख चंदा, किराया तथा खेतीद्वारा प्राप्त आयसे होता है। अपना बहुत बड़ा गोबर-गैस संयन्त्र भी है। किंतु खेद है कि गोशालाकी लगभग ३५० बीघा जमीनपर अधिग्रहण हुआ है। अभी गोशालाके पास जो गायें हैं, उनमें अधिकतर दानमें प्राप्त अनुपयोगी गायें हैं जो बूढ़ी तथा कमजोर हैं। इनकी देख-रेखपर विशेष ध्यान देना पड़ता है। उपयोगी एवं दुधार गौओंके साथ ऐसी गौओंका संरक्षण भी अत्यन्त आवश्यक है। हमारा यह अनुभव है कि अच्छे एवं सेवाभावी कर्मचारियोंके अभावमें ठीकसे गोशालाका कार्य नहीं हो पाता है। आजकल कुछ ऐसी प्रवृत्ति पनप गयी है कि जो अच्छे कार्यकर्ता हैं, उनकी राजनैतिक तथा सामाजिक संस्थाओंमें कार्य करनेकी अधिक रुचि रहती है, अपेक्षाकृत धार्मिक संस्थाओंके। इसलिये कार्यकी व्यवस्था एवं गुणवत्तामें अन्तर आ जाता है, अतः यथासम्भव गोशालाओंके लिये सेवाभाव तथा गायमें प्रेम रखनेवाले कुशल सेवकोंकी आवश्यकता होती है।

—श्रीपुरुषोत्तमलालजी

(ख) गो-गंगा-कानन, शिवाजीनगर, (कानपुर)

गोसेवा, गोपालन, पर्यावरण-सुरक्षा, वृक्ष-सेवा, स्वस्थ प्राकृतिक जीवनकी शिक्षा इत्यादि उद्देश्योंको लेकर 'गो-गंगा-कानन' नामक इस संस्थाकी स्थापना सन् १९८७ ई० में शिवाजीनगर, कानपुरमें की गयी है। मुख्य रूपसे गोमाता, गङ्गामाता तथा धरतीमाताकी सेवा करना इस संस्थाका प्रमुख ध्येय है। संस्थाके पास इस समय लगभग २० एकड़ भूमि है, जिसमें जंगल भी है। इसीमें गायें विचरण करती हैं। गोधनके विकासके लिये कृषि,वानिकी तथा ग्राम्य संस्कृतिका पुनर्जीवित होना बहुत आवश्यक है। इसी दृष्टिसे संस्थाने इससे सम्बद्ध अनेक कार्यक्रमोंको प्रारम्भ करनेकी योजना बनायी है।

—श्रीप्रेमचन्द्रजी पाल

(ग) जय श्रीकृष्ण गौशाला, सहार (इटावा)

कुछ ही समय पूर्व (२१ नवम्बर, १९९३ ई०) गोपाष्टमीके पावन पर्वपर सहार (इटावा) में एक गौशाला स्थापित की गयी। यह गौशाला 'विवेकानन्द आश्रम' के एक अङ्गके रूपमें कार्यरत है। यहाँ एक बूचड़खाना है। उसी बूचड़खानेसे स्थानीय गोवंशकी रक्षा-हेतु गोभक्तोंके सहयोगसे यह गौशाला स्थापित हुई। गौशालाका अपना भवन भी है। इस समय गौशालामें १७ गायें, ३ बछड़े तथा ३ बछड़ियाँ हैं। अधिकतर देशी नस्लकी गायें हैं। स्थानीय लोगों तथा दानदाताओंके सहयोगसे गौशालाका कार्य सुचारु रूपसे चल रहा है। आश्रममें एक ऐसी गाय है, जो एक तरफ अपनी बाछीको दूध पिलाती है तथा दूसरी तरफ एक वृद्ध गायके बछड़ेको भी दूध पिलाती है। एक दूसरी गाय ऐसी है, जिसके एक तरफ उसका बछड़ा दूध पीता है तथा दूसरी तरफ दूधकी दुहाई होती है।

—श्रीआशुतोषजी शुक्ल

(घ) गोधाम (गोशाला), नयी झूसी (प्रयाग)

सन् १९८५ ई० में नयी झूसी, प्रयागमें 'गोधाम' नामसे एक गोशालाकी स्थापना हुई। इस समय गोशालाके पास ४ एकड़का सीमित क्षेत्र है और गोशालामें गोधनकी संख्या लगभग १५ के आस-पास है। गायोंसे प्राप्त दूधकी विक्री की जाती है। प्रायः देशी नस्लकी गायें हैं। कुछ हरा चारा पैदा किया जाता है, शेष क्रय करना पड़ता है। खादका उपयोग खेतीके लिये किया जाता है।

—श्रीशिवमंगल सिहंजी

(ङ) अवधप्रान्तकी गोशालाओंकी सूची

लखनऊ —(१) अवध गोशाला, (२) नदौली गोशाला निगोहा, तहसील-मोहनलालगंज, (३) गोशाला असर्फाबाद, तखास।

हरदोई—(१) गोपाल गोशाला धियर महोलिया, (२) कृष्ण गोशाला, माधोगंज, (३) राधा कृष्ण गोशाला शाहाबाद।

लखीमपुर— (१) गोरक्षणी सभा गोशाला निघासन रोड (२) धर्मार्थ गोशाला गोकरननाथ, (३) हिन्दुस्तान सुगर मिल गोशाला गोला, (४) पाराशर नाथ गोशाला मैकलगंज।

सीतापुर— (१) पिंजरापोल गोशाला सोसाइटी,(२) हनुमंत मंशाराम गोशाला बिसवाँ, (३) नैमिषारण्य गोशाला, मिश्रिख।

फैजाबाद— (१) साकेत गोशाला अयोध्या, (२) भगवंत गोशाला डुहिया, टांडा (३) नरसिंह गोशाला बीकापुर।

गोंडा— (१) हनुमान गोशाला भगवतीगंज बलरामपुर, (२) बलरामपुर गोशाला सोसाइटी नीलगाँव, (३) गायत्री तपोभूमि गोशाला बड़गाँव, (४) सरजू गोशाला नवाबगंज, (५) देवीपाटेश्वरी गोशाला, (६) गोपाल गोशाला, कर्नलगंज।

बहराइच— (१) राजलक्ष्मी गोशाला निन्दीपुर भंडारा, (२) जुगलीना गोशाला नानपारा।

फतेहपुर— (१) नंदगोशाला बिन्दकी।

कानपुर— (१) कानपुर गोशाला सोसाइटी भौती, (२) पंचमुखी हनुमान गोशाला पनकी कटरा, (३) कृष्ण गोशाला पुखरायाँ ।

झाँसी— गोपाल गोशाला पंचकुइया, नई बस्ती।

बाँदा— (१) गोपाल गोशाला, (२) नरसिंह गोशाला पेलानी, (३) मुकुन्द गोशाला मुजौली, डाकखाना-तिन्दवारी।

जालौन— जिला जालौन गोशाला समिति, कालपी।

बाराबंकी— नागेश्वरनाथ गोपाल गोशाला।

बिल्हौर— (१) गो-गंगा कानन गोशाला गुमटी-४९ दरियापुर तहसील, (२) हरिधाम-आश्रम गोशाला बिठूर, (३) आरोग्यधाम आश्रम गोशाला बिठूर।

[प्रेषक—श्रीदिनेशचन्द्रजी गुप्त]

(४) श्रीसूर-श्याम सेवा-संस्थान परासौली (मथुरा)

[पूज्यपाद बाबा श्रीगणेशदासजी भक्तमाली]

व्रजधाममें स्थित श्रीगिरिराज-गोवर्धनकी सुरम्य तलहटीमें भगवान् श्रीकृष्णकी महारास-स्थली चन्द्रसरोवर—परासौली नामक एक स्थान है। यह परासौली गोवर्धन कस्बेसे सोंख भरतपुरको जानेवाले राजमार्गपर दो किलोमीटर दूर स्थित है। इस पावन स्थलीके निकट स्थित ग्रामोंके गण्यमान्य सदस्योंके संयोगसे आश्विनशुक्ला शरद्-पूर्णिमा संवत् २०४५ वि० को 'श्रीसूर-श्याम सेवा-संस्थान' की स्थापना हुई। संस्थानने सर्वदेवमयी गौ तथा उसके वंशके संवर्धन एवं रक्षार्थ 'सूर-श्याम गोशाला' की स्थापना भी की। इस सूर-श्याम गोशालामें गोवंशकी वर्तमान संख्या ३५५ है।

इनमें दूध देनेवाली गौएँ ३४, दूध पीनेवाले बछड़े-बछियोंकी संख्या ३०, बैलोंकी संख्या ८, अशक्त-वृद्ध विकलाङ्गकी संख्या १२ साँड़ोंकी संख्या ५ है। गोशालाके दूध तथा गोवंशका विक्रय नहीं किया जाता। दूध 'सूर-श्याम बाल-विद्यामन्दिर' के शिशुओंको तथा अतिथियोंको पिला दिया जाता है और आर्थिक दृष्टिसे कमजोर गोप्रेमीको उसकी इच्छाके अनुसार एक या दो गौ सेवाके लिये निःशुल्क भी दे दी जाती है। उसके द्वारा वह गौ लौटानेपर पुनः गोशालामें प्रवेश करा ली जाती है।

गोशालाको आत्मनिर्भर बनानेके लिये 'सूर-श्याम सेवा-संस्थान' गौके गोबर तथा मूत्रसे नॅडेप कम्पोस्ट खाद, गो-देव-दर्शन धूप एवं अंगराग नामक स्नान-साबुनका निर्माण कराती है, जिससे आयमें वृद्धि हुई है।

भारतवर्षमें ही नहीं, अपितु विदेशोंमें बहुधा गौशालाएँ ऐसी हैं जो उत्तम नस्लकी दुधार गायें ही रखती हैं। दूध न देनेवाली अवस्थामें या अशक्त-वृद्ध होनेपर उन गायोंको हटा देती हैं। ऐसी गोशालाएँ आर्थिक लाभ लेनेके लिये ही खोली गयी हैं, गोवंशके रक्षार्थ या उसके संवर्धनके लिये नहीं, परंतु

'सूर-श्याम गोशाला' को एक आदर्श रूपमें प्रस्तुत करनेके प्रयास किये जा रहे हैं। मौसम एवं ऋतुके अनुसार प्रत्येक गोवंशको हरा चारा, भूसा, अनाज, दूध, जल आदि दिया जाता है, गिरि-गोवर्धनकी तलहटीमें ग्वालोंकी देख-रेखमें उन्हें चरनेके लिये ले जाया जाता है, जहाँ वे स्वतन्त्र रूपसे आहार-विहार करते हैं। गर्मी, वर्षा, शीतके बचाव-हेतु कच्चे फर्शवाले हवादार पक्के बड़े-बड़े कमरे हैं। गायके प्रसवके समय समुचित आहार, औषधि आदिका विशेष ध्यान रखा जाता है। रुग्णावस्थामें पशु-चिकित्सकसे चिकित्सा कराकर उसे पूर्ण स्वस्थावस्थामें लानेका पूरा प्रयत्न किया जाता है। किसी भी अवस्थामें आयु पूर्ण होनेपर—गोलोक पधार जानेपर उस गोवंशके पार्थिव शरीरको विधिवत् व्रजरजका लेपन कर फूल-मालाओंसे सजाया जाता है, उचित पवित्र स्थानपर गड्ढा खोदकर उसमें शवको रखकर औषधि-नमक डालकर भूमिगत किया जाता है। इस अन्तिम संस्कार करनेकी अवधिमें श्रीहरिनाम-संकीर्तन उच्च स्वरसे होता रहता है और अन्तमें भी दिवंगत आत्माकी शान्तिहेतु संकीर्तन किया जाता है।

—[प्रेषक—श्रीरामलखनजी शर्मा 'राम']

(५) श्रीगोरखनाथ गोशाला (गोरखपुर)

भगवान् गोरखनाथके मन्दिर-परिसरमें स्थित यह गोशाला एक प्राचीन गोशाला है। ऐसी प्रसिद्धि है कि इसकी स्थापना शताब्दियोंपूर्व गोरखनाथ-पीठके तत्कालीन प्रमुख एक-नाथयोगीद्वारा की गयी थी। मन्दिरके आलेखोंमें गोशालाके स्थापनकालका कोई यथार्थ उल्लेख उपलब्ध न होनेसे इसकी प्राचीनताकी निश्चित तिथि ज्ञात नहीं हो सकी है।

गोरखनाथ-मन्दिरद्वारा संचालित और सुव्यवस्थित इस गोशालाका उद्देश्य आरम्भसे ही गोरक्षण, गोसेवा और गोसंवर्धन रहा है। तदनुरूप आज भी यह एक आदर्श गोशालाके रूपमें 'गोसेवा' का संदेश दूर-दूरतक (सर्वत्र) प्रसारित कर रही है। इस गोशालामें नियमतः देशी गायें ही रखी जाती हैं। वर्तमानमें यहाँ गाय तथा गोवंशकी कुल संख्या लगभग १२५ है। इनमें बूढ़ी, अपंग, युवा और बच्ची—सभी अवस्थाकी गायें हैं। इनकी देख-रेख और सेवाके लिये २५ से ३० व्यक्ति नियुक्त हैं। गायोंके रहनेका स्थान बहुत स्वच्छ, हवादार और हर मौसमके लिये उपयुक्त बनाया गया है। यहाँ गायोंके लिये शुद्ध, सुपुष्ट आहार तथा पीनेके लिये स्वच्छ जलकी व्यवस्था है। समय-समयपर पशु-चिकित्सक और विशेषज्ञोंद्वारा गायोंका स्वास्थ्य-परीक्षण होता है। गायोंसे प्राप्त दूधका उपयोग गोरखनाथ-पीठमें रहनेवाले योगियों, साधुओं, कर्मचारियों एवं आगन्तुक अतिथियोंके सेवार्थ किया जाता है। भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है। गाय और गायसे प्राप्त बछड़ों तथा बैलोंका कृषि-कार्यमें महत्त्वपूर्ण योगदान होनेसे हमारे यहाँ गोपालनको सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। हमारी तुष्टि-पुष्टि और सुख-समृद्धिसहित आध्यात्मिक चेतनाका सुदृढ़ आधार गाय ही है, अतएव गोरक्षण, गोपालन और गोसंवर्धनके लिये सतत संनद्ध और समर्पित गोरक्षपीठका यह गोसदन दीर्घकालसे जन-जनको गोसेवाका सुसंस्कार और शुभ प्रेरणा दे रहा है तथा आगे भी देता रहेगा, ऐसा विश्वास है।

—[प्रेषक—श्रीश्यामसुन्दरजी श्रोत्रिय, 'अशान्त']

(६) श्रीलक्ष्मी गोशाला, बदनावर (मध्यप्रदेश)

'श्रीलक्ष्मी गोशाला बदनावर' की स्थापना आजसे लगभग ८० वर्ष पूर्व यहाँके नगरसेठ श्रीनंदरामजी चोपड़ाके द्वारा की गयी। बदनावर बसस्टैंडपर गोशाला चलानेके लिये एक भवनका निर्माण कराया। उस आमदनीसे गोशालाका खर्च आज भी चलता है।

इस समय गोशालामें १५ गाय, १५ केड़ा, ८ केड़ी कुल ३८ पशु हैं। इस गोशालाका मुख्य उद्देश्य गोवंशकी रक्षा तथा सेवा करना है और लूले-लँगड़े, अपाहिज पशु रखना तथा उनकी सेवा करना है, साथ ही क़त्लखानेमें जानेवाले पशुओंको रोकना है। गोशालामें मालवी नस्लका गोवंश है।

—श्रीमांगीलालजी अवस्थी

(७) श्रीगौशाला पिंजरापोल, राजनांदगाँव (म० प्र०)

[श्रीदेवीशरणजी खण्डेलवाल]

श्रीकृष्णके उपासक वैरागियोंकी रियासत नंदग्राम आज भक्ति, क्रीडा एवं साहित्यकी त्रिवेणीमें नया कलेवर प्राप्त कर छत्तीसगढ़ अञ्चलमें राजनांदगाँवके नामसे सुविख्यात है।

रियासतकालीन एक अंग्रेज दीवानद्वारा एक पागल घोड़ेको गोली मार देनेके हुक्मसे उद्वेलित यहाँकी धर्मप्राण जनताकी भावनाओंको मुखर करते हुए रियासतके सेठ श्रीरामलालजी चोपड़ा एवं श्रीसाहिबराम सूरजमल ओस्तवाल-परिवारने शहरके मध्य गोशालाके लिये भूमि क्रयकर गोशालाकी स्थापनाका उपक्रम प्रारम्भ किया।

इस प्रकार संवत् १९६१ (सन् १९०५) में संस्थापित यह संस्था अपने लंबे इतिहासमें अनेक उतार-चढ़ाव देख चुकी है और अनेक संस्मरण सँजोये हुए निरन्तर प्रगति-पथपर अग्रसरित है।

सन् १९६० में शासनद्वारा तीस एकड़ भूमि गौशाला-हेतु मिली। इस ऊसरभूमिको परिवर्तित कर जी० ई० रोडपर गौ-सदनका निर्माण हुआ। इस तीस एकड़ भूमिमेंसे २० एकड़ भूमि शासनको प्रदान की गयी, जिसके बदलेमें जिलाध्यक्षद्वारा चालीस एकड़ भूमि संस्थाको प्रदान की गयी, जहाँपर कृषि-कार्य होता है। १९७० में नगरके मध्य स्थित गौशालामेंसे लगभग १० हजार वर्गफुट भूखण्डपर गौशाला सुपर मार्केटका निर्माण कर गौशालाको ठोस आर्थिक आधार प्रदान किया गया। इससे अर्जित आयसे शहरके मध्यमें गो-सदनका पक्का निर्माण किया गया।

नगरमें सार्वजनिक श्मशान-गृहका भी सफल संचालन गोशालाद्वारा किया जा रहा है। यहाँपर धर्मशाला, जलाऊ लकड़ी, पानी, स्नानागारकी व्यवस्था है। निम्न आय-वर्गके तपेदिकसे पीडित बच्चोंको संस्था निःशुल्क दूध भी प्रदान करती है।

वर्तमानमें संस्थाके पास १७७ गायें, १० बैल, ५ साँड, ४६ बाछे, ५ भैंसा, १२८ बाछियाँ हैं, जिनमें साहीवाल, गीर, जर्सीक्रास, देशी एवं हरियाणवी नस्लें हैं।

चारा-व्यवस्था—कृषिद्वारा उपजका चारा एवं पशु-आहार चूनी-भूसी, खली आदिका बाजारसे क्रय होता है। पेयजल-हेतु दो कुआँ, दो बोरिंग एवं नलका साधन उपलब्ध है। गोचरभूमिकी समुचित व्यवस्था नहीं है।

आयके परम्परागत साधनोंमें प्रमुख रूपसे गोपाष्टमी-अनुदान, किरायासे अर्जित आय, कृषि-आय, शहरमें दूधकी विक्री आदि है।

गोधनका नियमित स्वास्थ्य-परीक्षण पशु-चिकित्सकों-द्वारा किया जाता है। गोबरका उपयोग देशी पद्धतिसे खादका निर्माण करके किया जाता है।

वर्तमानमें हरे चारेकी कमी एवं श्रम-अधिनियमसे गोसदनोंको मुक्त करना जरूरी है। पशु-आहार-हेतु प्रयुक्त तिलहनके किस्मोंमें शासनद्वारा अन्य मदोंके अनुरूप सब्सिडी (शासन-अनुदान) देकर गोपालनको सहज बनाया जा सकता है।

समय-समयपर अवैध रूपसे ले जाये जा रहे गोवंशका संरक्षण किया गया है। जनताके तन-मन-धनके सहयोगसे हमारा यह पावन संस्थान आज नगरके संस्कारका अङ्ग बन चुका है। शायद यही विश्वास इस संस्थाका आधार है जो सदैव पुख्ता होता रहेगा एवं भगवान् श्रीकृष्णका गोवंश अपने आशीषसे जन-जनका कल्याण करता रहेगा।

—[प्रेषक—श्रीनथमलजी अग्रवाल]

---

(८) श्रीलक्ष्मी-गोशाला, धार (म० प्र०)

सन् १९१५ ई० में मध्यप्रदेशके मालवा अञ्चलकी तत्कालीन धार रियासतकी महारानी लक्ष्मीबाई पँवार साहिबाके नामसे 'श्रीलक्ष्मीबाई गोशाला' नामक एक गोशाला ४६ बीघा जमीनपर स्थापित की गयी थी, जिसमें आज गोचारण-हेतु खुली भूमि, कर्मचारियोंके आवास, कार्यालय तथा घास-गोदामकी समुचित व्यवस्था है। वर्तमानमें यहाँ ७५ पशु हैं। वास्तवमें यह गोशाला न होकर इस क्षेत्रके लँगड़े-लूले, अपाहिज और वृद्ध पशुओं तथा मध्यप्रदेश गोरक्षण-कानूनके अन्तर्गत ज़ब्त पशुओंका शरणस्थल है। यहाँ उन्हें पर्याप्त मात्रामें चारा-पानी और आश्रय मिलता है।

गोशालाकी ४६ बीघा खुली भूमिके सिवाय ग्राम जेतपुराके दक्षिणमें ६२ बीघाकी एक बीड़ (चक) है, जिससे लगभग एक लाख घास-पिंडी (बोझा) प्रतिवर्ष प्राप्त होती है। यहाँ पानीके अपने अच्छे स्रोत हैं। गोशालाका रख-रखाव तथा व्यवस्था

आदिका खर्च दान एवं गोबर-खाद और कंडोंकी विक्रीसे प्राप्त धनराशिसे गोशाला-कमेटीके माध्यमसे होता है। यहाँ दूधका उत्पादन और विक्रय नहीं किया जाता; क्योंकि अच्छी नस्लके पशु और उनपर होनेवाला व्यय गोशाला-कमेटीकी आर्थिक स्थितिसे ऊपर है।

इस गोशालाके इतिहासमें एक महत्त्वपूर्ण घटना दिनाङ्क १६-१२-८८ की है, जब श्रीमेहताजी, मालेगाँव (महाराष्ट्र) के सहयोगसे वधके लिये ले जायी जा रही ४८८ गायोंके झुंडको मध्यप्रदेशकी सहायतासे पकड़कर इस गोशालामें काफी समयतक रखा गया। न्यायालयके आदेश और संस्थाके नियमके अनुसार बादमें इन गायोंको गोभक्तोंमें वितरित कर दिया गया। यह प्रकरण सुप्रीमकोर्ट दिल्लीतक चला और अन्तमें गोभक्तोंकी विजय हुई। इस घटनाके बादसे पुलिसद्वारा ज़ब्त किये गये सैकड़ों गाय-बैलोंको और कृषकोंद्वारा उपेक्षित बहुत-से गाय-बैलोंको इस गोशालाद्वारा जीवनदान देनेका क्रम चालू है। गोवंशके संरक्षणमें यह संस्था मालवा क्षेत्रमें अग्रणी है।

वर्तमानमें गोशालाका भवन, गोदाम, आवासीय कमरे आदि अत्यन्त पुराने और जीर्ण-शीर्ण-अवस्थामें हो गये हैं।

—प्रो० श्रीउमाकांतजी शुक्ल

(९) श्रीगोपाल गोशाला, महिदपुर (उज्जैन)

महिदपुर, जिला उज्जैनमें 'श्रीगोपाल गोशाला' नामक एक गोशाला है। यह गोशाला सन् १९१९ ई० स्थापित हुई। इस गोशालामें ४० गायें, १७ बछड़े तथा एक साँड़ है। मुख्य रूपसे यहाँ मालवी नस्लकी गायें हैं। गोशालाके पास ३० बीघा गोचर-भूमि है। इसलिये गोपालन आदिमें सुविधा है, चारे आदिकी कठिनाई नहीं रहती। गोशालाकी एक धर्मशाला भी है, उससे भी गोशालाको आयकी प्राप्ति होती है। यहाँ न कोई वैज्ञानिक प्रयोग किये गये हैं और न गोशालामें चिकित्साकी कोई समुचित व्यवस्था है। स्थानीय चिकित्सालयमें चिकित्सा करायी जाती है। गोशालाके आदर्श स्वरूपके विषयमें अच्छी जानकारी उपलब्ध हो जाय तो हम उसे अमलमें लानेकी ओर विशेष सचेष्ट होनेका प्रयत्न करेंगे। इस ओर हमारा प्रयत्न है। फिर भी इस गोशालाकी वर्तमान स्थिति अच्छी है। हमारे आस-पास उज्जैन, आगर, रतलाम तथा आलोटमें भी कुछ गोशालाएँ हैं।

—श्रीमधुसूदनजी आचार्य, अध्यक्ष

(१०) श्रीमाधव गौशाला, उज्जैन

श्रीभगवान् महाकालकी पावन नगरी एवं भगवान् श्रीकृष्ण तथा सुदामाकी विद्यास्थली उज्जैनमें सन् १८९० में 'श्रीमाधव गौशाला' स्थापित हुई। संस्था लगभग १०४ वर्ष प्राचीन है। गौशालाद्वारा गोपालन एवं गोसंवर्धनका पुनीत कार्य सम्पन्न हो रहा है।

गौशालामें २३ दुधार गायें, १४ दूधरहित केड़ी-केड़े तथा २ साँड़ हैं। घास-बीडकी व्यवस्था नहीं होनेसे वर्तमानमें सीमित संख्यामें अनुपयोगी गोधनका पालन-पोषण हो रहा है। संस्थामें अधिक संख्यामें वृद्ध गोधनका पालन-पोषण हो सके, इसके लिये गम्भीरतासे हम प्रयत्नशील हैं।

गौशालामें दैनिक दूधका अनुपात लगभग ११० लीटर है। गौशालाकी ग्राम भूतिया, पण्डयाखेड़ी तथा सुरासाचकमें कृषि-भूमि एवं सुरासा ग्राममें चरागाहकी भूमि है। प्रभुकृपासे गौशाला एक आत्मनिर्भर संस्था है। गायोंके लिये आधुनिक आरामदायक आर० सी० सी० के ३० फुट x २०० फुट आकारके पक्के शेड-निर्माणकी योजनाको शीघ्र ही कार्यान्वित किया जा रहा है, इनमें गोवंशकी सुविधाके लिये बिजली, पंखे, नल आदिकी आधुनिक व्यवस्था की जायगी।

गौशाला केन्द्रीय एवं राज्य-सहायता-अनुदानके लिये एक मान्यता-प्राप्त संस्था है।

[प्रेषक—श्रीमुरलीधरजी गुप्ता, उपाध्यक्ष]

(११) गोपाल-इफ्तखार गोशाला, जावरा (मध्यप्रदेश)

वर्तमान मध्यप्रदेशके मालवा-अञ्चलमें एक जावरा रियासत थी। यहाँ मुस्लिम-जनसंख्या बड़ी संख्यामें थी और शासन भी नवाब साहबका था। यहाँ लगभग २०० गौओंका वध प्रतिमाह होता था। इससे स्थानीय और पास-पड़ोसकी अन्य रियासतों, जैसे—रतलाम, सैलाना, मन्दसौर (ग्वालियर), आलोट (होल्कर)-की हिन्दू-जनता अत्यन्त दुःखी थी।

संवत् १९७८ विक्रमीमें 'श्रीरतलाम-गौरक्षा-मण्डल' की तरफसे सेठ केशरीमलजी झालानी और सेठ नारायणदासजी पोतदारने नवाब साहब श्रीमेजर इफ्तखार अली खाँ साहबसे उनके राज्यमें गोवध-बंदीके लिये निवेदन किया तथा गोशाला आदिके लिये जमीनके वास्ते भी प्रार्थना की। इसपर नवाब साहबने सहर्ष तत्कालीन पचीस हजार रुपये-मूल्यकी खुली भूमि गोशाला, धर्मशाला बनाने-हेतु प्रदान की। यह एक घटना मात्र नहीं है, अपितु यह श्रीमंत नवाब साहबकी उदारता, समभाव और गोभक्तिकी बेजोड़ मिसाल है। शिष्टमण्डलने अपनी कृतज्ञता ज्ञापन करते हुए गोशालाका नामकरण 'श्रीइफ्तखार गोपाल गोशाला जावरा' रखनेका प्रस्ताव नवाब साहबके समक्ष रखा, किंतु नवाब साहबने 'गोपाल' का नाम पहले होना चाहिये, ऐसा कहते हुए मंजूरी प्रदान की। यह उनकी उदारता और महानता है। आज भी यह गोशाला गोमाताकी सेवामें लगी है। इसके साथ ही मालवा क्षेत्रमें उज्जैन, इन्दौर, धार, रतलाम, मंदसौर, सैलाना, ताल तथा आलोट आदि स्थानोंमें भी गोशालाएँ हैं।

—प्रो० श्रीउमाकांतजी शुक्ल

(१२) स्वामी राधाकृष्ण गौशाला, सेन्धवा (मध्यप्रदेश)

दक्षिण-पश्चिम मध्यप्रदेशके महाराष्ट्र प्रान्तकी सीमा-रेखापर सेन्धवा नामका एक नगर स्थित है। प्राकृतिक दृष्टिसे यह क्षेत्र अत्यन्त रमणीय एवं भव्य है। इस नगरके उत्तर-पूर्वकी ओर विशाल वटवृक्षकी शाखा-प्रशाखाओंसे आच्छादित एक सुरम्य पर्वत-श्रेणीके नीचे एक जलकुण्ड है, जो इस वनप्रदेशमें श्रीदेवझिरी तीर्थस्थलके नामसे सुविख्यात है। यहाँ भगवान् शिव एवं श्रीहनुमन्तरायजीका अति सुन्दर मन्दिर एवं यज्ञशाला है।

इसी पुण्यमय पवित्र स्थलको श्रीस्वामी राधाकृष्ण बाबाजीने अपनी भक्तिमय संगीत-साधनासे चैतन्यमय बना दिया था। पूज्य स्वामीजी महान् गोभक्त भी थे। आपके आश्रममें अनेक गौएँ रहती थीं। वे स्वयं अपने हाथोंसे गो-सेवाके सभी कार्य करते थे। श्रीबाबाजीके महाप्रयाणके बाद आपकी स्मृतिको चिरस्थायी बनानेके लिये सेन्धवा नगरके प्रबुद्ध धार्मिक गोभक्तोंने सन् १९४९ में स्थानीय साधनसम्पन्न लोगोंके सहयोगसे एक समितिका गठन किया और स्वामीजीद्वारा स्थापित गोशालाका कार्य और आगे बढ़ानेका निर्णय लिया। प्रारम्भमें अर्थ-व्यवस्था-सम्बन्धी कठिनाइयाँ आयीं, किंतु गौ माताकी कृपासे सारे कार्य सम्पन्न होते गये और वर्तमानमें यहाँ गोसेवाका कार्य अच्छी दशामें चल रहा है। आज यहाँ गायोंके लिये भवन तथा चारा-भंडार-गृह भी है। बछड़ोंके आवास-हेतु अलग भवन हैं। संत-निवास तथा अतिथिशाला भी है। गौशालासे संलग्न ही ४४ एकड़ कृषिभूमि है, कुएँ हैं। यहाँसे हरा चारा तथा पानी गौओंको उपलब्ध कराया जाता है। गौशालासे उपलब्ध गोबरकी खाद खेतीके काम आती है, जिससे अन्नकी गुणवत्ता बनी हुई है। गौओंसे प्राप्त दूध उपभोक्ताओंको उपलब्ध कराया जाता है। वर्तमान गोधनकी संख्या ९७ है।

बांबे-आगरा-मार्गके संनिकट होनेसे इस मार्गसे वध-हेतु पशुओंका निकास होता रहता है। ऐसे पशुओंको पकड़कर गौशालाद्वारा संरक्षण दिया जाता है, किंतु कानूनी कमजोरियोंका लाभ उठाकर असामाजिक तत्त्व—कसाई दंडित नहीं हो पाते और वे गोवंशको छुड़ाकर ले जाते हैं। ऐसी स्थिति देखकर बड़ा दुःख होता है तथापि इस ओर सतत चेष्टा की जाती रही है।

यह संस्था केवल गोशाला, गोसंवर्धनतक ही सीमित नहीं है, बल्कि गोपाष्टमी आदि विशेष पर्वोंपर जनसाधारणको इस ओर बढ़नेके लिये प्रोत्साहित किया जाता है। गोसेवाके साथ ही संत-सेवा तथा सत्संग आदिके कार्य भी यहाँ चलते रहते हैं। अनेक संत-महात्माओंके आशीर्वाद इस गौशालाको प्राप्त हैं।

गोधन, गोवंश एवं गोसंवर्धन तथा गोपालनके लिये सबसे मुख्य बात यह है कि गोशालाके पास अधिक-से-अधिक गोचरभूमि हो। गोधनका उपचार स्थानीय देशी चिकित्सापद्धतिसे किया जाय। स्थानीय देशी नस्लके पशुधनको

प्रोत्साहन देकर गोदुग्धके उत्पादनमें पर्याप्त वृद्धि की जा सकती है। अच्छी नस्लके संकरणके नामपर गौओंपर होनेवाले अमानुषिक अत्याचार बंद किये जायँ। कृषिमें गोबरके खादके उपयोग-हेतु कृषकोंको प्रोत्साहितकर रासायनिक खादसे खेतीको बचाया जाय। विदेशोंसे गोबरका आयात और गोमांसका निर्यात—भारतीय पशुधन एवं अर्थव्यवस्थाको चौपट ही करेगा, अतः गोवध-निषेध-हेतु केन्द्रीय सरकारपर दबाव डालकर प्रभावी कानून बनवाकर देशको गोहत्याके कलंकसे मुक्त किया जाय। वस्तुतः गोसेवाका वास्तविक स्वरूप भी यही है।—श्रीहरीलाल गुलजारीलालजी

(१३) श्रीगोपाल गौशाला, शिवपुरकलाँ (मध्यप्रदेश)

पूर्व-ग्वालियर-राज्यके तत्कालीन शासकोंद्वारा यहाँ प्रत्येक जिलोंमें गोशालाएँ स्थापित की गयी थीं। उसी समय शिवपुरकलाँ (म० प्र०) में भी सन् १९२५ ई० में एक गौशाला बनायी गयी, साथ ही २९ बीघा भूमि भी इसे प्राप्त हुई। पहले तो बहुत समयतक गौशालाका कार्य प्रगतिपर चलता रहा, किंतु बीचमें कुछ अव्यवस्था हो गयी थी, पुनः सन् १९७१ ई० से इसका कार्य ठीक कर लिया गया है। वर्तमानमें कुल गोवंशकी संख्या ८२ है। इस समय दुधार १५ गायें हैं, बिन ब्यायी २६ हैं। बछड़ा-बछड़ी, बाखरे २४ तथा बछड़ा-बछड़ी दुधवारे १५ हैं, २ साँड़ हैं। गौशालामें देशी तथा माड़वारी नस्लकी गायें हैं। एक बीघा भूमिमें पक्की गौशाला बनी है। चारा-भूसा आदि कुछ क्रय किया जाता है। दिनमें गायें चरनेके लिये जंगलमें जाती हैं। हमारी जानकारीमें कुछ गोशालाएँ इस प्रकार हैं—श्रीगोपाल गौशाला डोली बुआका पुल, लश्कर (ग्वालियर), श्रीगोपाल गौशाला, मुरैना, शिवपुरी तथा गुना (म० प्र०) आदिमें भी गोशालाएँ स्थापित हैं।—

श्रीमुरारीलालजी गुप्ता

(१४) मध्यप्रदेश गोशाला-संघ, भोपाल

५ दिसम्बर १९५० को स्व० बाबू तख्तमल जैनकी प्रेरणासे 'मध्यभारत गोशाला-संघ' की स्थापना हुई। नया मध्यप्रदेश बननेके बाद महाकौशल और मध्यभारतकी गोशाला-संघोंका विलीनीकरण होकर १९ मार्च १९६२ में 'मध्यप्रदेश गोशाला-संघ भोपाल' का नया गठन हुआ।

संघने गोरक्षण और गोसंवर्धनका महत्त्वपूर्ण कार्य किया और शासनसे गोशालाओंको विकास-कार्योंके लिये आर्थिक सहयोग दिलाया। संघको शिवपुरी और ओखला नगरोंमें गोसदन चलानेके लिये सरकारसे अनुदान प्राप्त हुआ। संघने दोनों गोसदनोंको बड़ी कुशलता और मितव्ययतासे वर्षोंतक चलाया। संघको शासनने निवारी तथा भूतिया ग्रामोंमें गोसंवर्धन-केन्द्र चलानेका भी उत्तरदायित्व सौंपा। इन दोनों केन्द्रोंमें प्रमाणित नस्लोंके साँड़ रखे गये और उनके द्वारा गायोंसे अच्छी संतति प्राप्त की गयी। इसी प्रकार विदिशामें भी 'गाँधी-गोशाला' नामक एक गोशाला दुग्ध-उत्पादन तथा गोवंश-संरक्षणका कार्य कर रही है।

संघके प्रयत्नसे प्रदेशमें अनेक कार्यकर्ताओंको गोशाला-व्यवस्थाका प्रशिक्षण दिलाया गया। संघके निर्देशनमें गोशालाओंमें दो विभाग बनाये गये—एकमें अच्छी प्रमाणित नस्लकी गायें रखी गयीं ताकि उनके द्वारा गोवंशकी नस्ल सुधरे और गोसंवर्धन-कार्य अग्रसर हो। दूसरे विभागमें अपंग और वृद्ध गौएँ रखी गयीं ताकि उनकी समुचित सेवा हो और उन्हें कसाईकी छुरीसे बचाया जा सके। संघके प्रयासोंसे छत्तीसगढ़ अञ्चलकी इंदौर और उज्जैनकी कई गोशालाएँ इस समय उन्नत स्थितिमें हैं, जहाँ दुग्ध-उत्पादन, नस्ल-सुधार और हरा चारा आदिके कार्य होते हैं।

मध्यप्रदेशमें पंजीकृत ४३ गोशालाएँ तथा ९ साधारण गोशालाएँ हैं। प्रतिवर्ष लगभग कुछ गोशालाओंको शासकीय अनुदान नियमानुसार मिलता है। मध्यप्रदेशके गोसेवी कार्यकर्ताओं-के प्रयासोंसे मध्यप्रदेशके मुख्य मन्त्रीने आचार्य विनोबाभावेकी जन्मशतीपर उन्हें श्रद्धाञ्जलिके रूपमें गोवंशकी रक्षाहेतु 'गोसेवा-आयोग' के गठनका निर्णय किया है। इस गोसेवा-आयोगका मुख्य कार्य गोवंशका परिरक्षण-संवर्धन और विकास होगा तथा यह गोशालाओं और अन्य पशु-कल्याण-संस्थाओंके माध्यमसे वृद्ध, अपंग और अनुपयोगी पशुओंकी देखभालकी व्यवस्था करेगा। शासकीय गोसदन भी इसे सौंपे जायँगे और गोवंश-सम्बन्धी जो विधान लागू है, उसके क्रियान्वयनके लिये आयोगकी भूमिका महत्त्वपूर्ण होगी, ऐसा हमारा पूरा विश्वास है।

—डॉ० श्रीक्रान्तिकुमारजी शर्मा, मन्त्री

(१५) श्रीटाटानगर गोशाला, जमशेदपुर (बिहार)

आजसे लगभग ७५ वर्ष पूर्व सन् १९१९ ई० में तत्कालीन गोप्रेमी समाजके जागरूक बन्धुओं तथा समाज-सेवियोंने गौके प्रति अपने कर्तव्यका पालन करते हुए गोवंशके संरक्षण, उसकी सेवा और संवर्धनके लिये 'सनातन-धर्म-गोरक्षिणी-सभा' के नामसे एक गोशालाकी स्थापना की, जो आज 'श्रीटाटानगर गोशाला' के नामसे प्रसिद्ध है। उस समय दानमें प्राप्त एक भूखण्डपर कुछ अपंग, अनाथ गायोंको साथ लेकर गोसेवाका व्रत लिया गया और इस तरह एक लोकोपकारी संस्थाका प्रारम्भ हुआ जो अपनी सेवाओंद्वारा इस समय बिहारकी प्रमुख गोशालाओंमें परिगणित की जाती है।

इस गोशालामें मुख्य रूपसे सूखी,बूढ़ी, बीमार, अपाहिज और अनुपयोगी गायोंका पालन-पोषण होता है। तथा उनकी निःस्वार्थ सेवा की जाती है। शुद्ध दूधकी विशेष आपूर्तिके लिये भी यह सतत चेष्टित है। इस समय गोशालामें दूधका उत्पादन लगभग ११००-१२०० लीटर प्रतिदिन हो रहा है। अपने ७५ वर्षोंके पूर्व-इतिहासमें इस गोशालाने अनेक उतार-चढ़ाव देखे हैं और गोपालनकी अनेक कठिनाइयोंका अनुभव किया है। इस सम्बन्धमें हमारा कहना है कि गायोंके हितमें किये जानेवाले कार्योंमें देशभरके सभी गोप्रेमियों तथा अनुभवी जनोंका सहयोग मिलना आवश्यक है। बिना अनुभवी व्यक्तिके रहते गायोंकी देख-रेख तथा सार-सँभालमें कठिनाई पड़ती है। अतः सभीको गोसेवाके लिये जागरूक रहना चाहिये।

—व्यवस्थापक
श्रीटाटानगर गोशाला

(१६) श्रीकृष्ण गोशाला—झालरापाटन सिटी (राजस्थान)

आज देशमें अंधाधुंध गोवंशकी हत्या हो रही है। सरकार गोवधपर प्रतिबन्ध लगानेमें सक्षम नहीं है। कसाइयोंपर कोई रोक-टोक नहीं है। यह बात सबकी जानकारीमें है, सबके सामने है, किंतु गोभक्तोंद्वारा प्रबल विरोध किये जानेपर भी कोई आशाजनक परिणाम सामने नहीं आ रहा है और न सरकारद्वारा गोपालनकी कोई विशेष प्रेरणा, प्रोत्साहन ही प्राप्त हो रहा है। यहाँतक कि गोशालाके नामपर भूमि प्राप्त करना और भी कठिन हो गया है। राजस्थानके झालरापाटनमें भी यही स्थिति है।

इसी दृष्टिसे हालहीमें आजसे लगभग २ वर्ष-पूर्व एक गोशाला खोली गयी, जिसमें कसाइयोंद्वारा छुड़ाये गये गोधनको संरक्षण दिया जाता है। वर्तमानमें गोशालाके गोधनकी संख्या १०० के आस-पास है। किंतु दूध देनेवाली गौएँ नहीं हैं। सहायताराशिसे गोशालाका कार्य चलता है। दूध उपलब्ध न होनेपर भी गोधनके गोमूत्रसे विशेष लाभ प्राप्त हो रहा है। कई बीमारियाँ इसकी गन्धसे ही दूर हो जाती हैं। बीमारीवाले कीटाणु नष्ट हो जाते हैं और आस-पासका वातावरण शुद्ध रहता है। सुबह-सुबह गायका मुँह देखनेसे दिन शुभ बीतता है तथा मङ्गल होता है।

अभी इस गोशालाके पास अपनी कोई गोचरभूमि नहीं है। क़तलखाने जानेवाला गोधन जो भूखा-प्यासा, बीमार अथवा अपंग रहता है, उसके इलाज तथा देख-रेख आदिमें बड़ी कठिनाई होती है। काफी देख-भालके बाद भी गोधनको बचाना बड़ा मुश्किल होता है। ऐसा गोधन तो केवल सेवा करनेके लिये होता है। इस असहाय गोधनसे कोई प्रत्यक्ष लाभ तो दीखता नहीं, किंतु जो पुण्यार्जन होता है, उसकी कोई तुलना नहीं। गायको जीवनदान देनेसे अधिक और क्या पुण्य कार्य हो सकता है। अतः सभी लोगोंको इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

—श्रीकृष्ण गोशाला एवं जनकल्याण-ट्रस्ट

(१७) राजस्थान-गोसेवा-संघ, दुर्गापुरा (जयपुर)

[श्रीमाणिकचन्दजी बोहरा, अध्यक्ष]

'राजस्थान-गोसेवा-संघ' की स्थापना १९५४ में हुई। गायके विषयमें परम्परागत सांस्कृतिक भावना और वैज्ञानिक दृष्टिका समन्वय करते हुए गोरक्षण, गोपालन और गोसंवर्धनके कार्यक्रमोंद्वारा भारतीय समाजमें गोवंशकी पुन: स्थापना करना इसका मुख्य उद्देश्य रहा है। प्रथमत: यह कार्य 'अखिल भारत-गो-सेवा-संघ, वर्धा' की शाखाके रूपमें प्रारम्भ हुआ और १९५४ में एक स्वतन्त्र संस्थाके रूपमें इस संघका गठन हुआ।

राजस्थानका सौभाग्य है कि यहाँ भारत-प्रसिद्ध गो-नस्लें पायी जाती हैं और यहाँके निवासियोंकी गायके प्रति असीम भक्ति है। किंतु बार-बार वर्षाका अभाव तथा अकाल भी राजस्थानकी नियति है। अकालके वर्षमें गोपालक अपनी गायोंको लेकर चारेकी तलाशमें मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और समीपवर्ती प्रदेशोंमें जाते थे और 'गोसेवा-संघ' ने भी १९५१-५२ के अकालमें यही नीति अपनायी, किंतु अनुभव यह रहा कि गये हुए गोधनमेंसे मुश्किलसे एक तिहाई गोधन वापिस आ पाता था। अतएव बादके अकालोंमें संघद्वारा बाहरसे चारा लाकर सस्ते दामोंपर गोपालकोंको उपलब्ध कराने तथा पशु-शिविर एवं 'चारा-दाना-केन्द्र' खोलनेका कार्यक्रम बनाया। १९५१-५२ से प्रारम्भ करके १९८९-९० तकके अकालोंमें 'राजस्थान-गोसेवा-संघ' ने हर बार अपनी शक्तिके अनुसार दान-दाताओंके सहयोगसे लाखों गोधनको बचानेका प्रयत्न किया। अकालकी समाप्तिके बाद भी संघसे पशु-शिविरोंमें ऐसा गोधन रह जाता है, जैसे कमजोर, बूढ़ी, अपंग गाय, बैल, बछिया आदि, जिन्हें कोई सँभालनेके लिये तैयार नहीं होता और अकालकी स्थिति न होनेके कारण राजकीय सहायता भी प्राप्त नहीं होती। ऐसे गोधनको वर्षोंतक पालना भी एक व्ययसाध्य किंतु मानवीय कर्तव्य है। १९८७-८८ में पड़े भयंकर अकालकी समाप्तिके बाद 'गोसेवा-संघ' के पास लगभग ६ हजार अनुपयोगी गोधन बच गया। जिसे संघके विभिन्न गोसदनोंमें रखा गया। उपयोगी पशुधन विश्वस्त गोपालकोंमें वितरण भी किया जाता है। फिर भी काफी गोधन बचा रहता है।

राजस्थानकी पाकिस्तानसे लगी हुई लंबी सीमाएँ हैं और पाकिस्तानमें गोमांसकी पूर्तिके लिये काफी गायें चोरी-छिपे ले जायी जाती हैं। अकालसे बची गायें रखनेके लिये एवं क़त्लसे छुड़ायी गायोंको रखनेके लिये श्रीगंगानगरसे जैसलमेरतक संघके निम्न गोसदन हैं—

(१) छत्तरगढ़—यहाँपर 'राजस्थान भूदान-यज्ञ-बोर्ड'-की ओरसे प्राप्त २००० बीघा ऊबड़-खाबड़ टीबोंवाली असिंचित भूमि (बादमें कुछ सिंचित बनायी गयी) । उपलब्ध है। गोसेवा एवं वृक्षपालनके लिये यहाँपर व्यापक प्रयत्न होते रहे हैं और आज भी हो रहे हैं। यहाँ संघकी बड़ी गोशाला एवं गोसदन है। कुल गोवंश ४७५ है, जिसमें अधिकांश अनुत्पादक हैं।

(२) अनूपगढ़—यहाँ संघकी एक बड़ी गोशाला है और १३१ बीघा सिंचित-असिंचित जमीन है। यहाँपर गोधनकी संख्या २३२ है।

(३) भादराराय—यह गोसदन जैसलमेर जिलेमें है। इनमें पलनेवाला १,१०० गोधन गर्भित होनेपर गोपालकोंमें वितरित किया जाता रहेगा। गत अकालोंमें जैसलमेर जिलेका गोवंश काफी कम हो गया है। इस कमीको पूरा करनेमें इस केन्द्रका महत्त्व है। पहले भी काफी गोधन वितरित किया है।

(४) बाजूवाला—यहाँपर संघकी बड़ी गोशाला एवं गोसदन है। स्थानीय सहयोगसे यहाँ आज ५८७ गोधन पल रहा है।

(५) खाजूवाला—यहाँ गोधनकी संख्या आज केवल ९३ है। ५०० तककी व्यवस्था है।

(६) रावला—गोधनकी संख्या आज केवल १४३ है। ५०० तककी व्यवस्था है।

(७) मुण्डा—इसमें गोधन-संख्या आज ४०१ है। ७०० तककी व्यवस्था है। इस तरह कुल गोधन-संख्या ३०३१ है। कुछ गोसदनोंमें स्थानीय चारा-दानाका सहयोग है। परंतु साधन, संयोजन एवं व्यवस्था-खर्च संघको उठाना ही पड़ता है।

पाकिस्तानके अलावा बंबईकी ओर भी क़त्लके लिये गोधन जाता है। इसकी रोकथामके लिये उदयपुरके समीप कड़िया ग्राममें उपयुक्त स्थानपर 'बड़गाँव प्रखण्ड सेवा-मण्डल' को आर्थिक सहयोग देकर गोसदन प्रारम्भ किया गया है।

'गोसेवा-संघ' को इस गोसदनोंकी सहायतासे काफी गोधनको पाकिस्तानकी ओर जानेसे रोकनेमें सफलता मिली है।

किंतु परिस्थिति और समस्या जितनी विकट है उसके सामने साधन बहुत सीमित है।

गोपालन-गोसदन-योजना

एक बड़ी चिन्ताका विषय है, देशी नस्लकी गायोंका निरन्तर ह्रास। गोसदनोंमें जो गायें आती हैं, उनमें बड़ी संख्या बछियोंकी रहती है। शहरोंमें सड़कोंपर डोलनेवाले आवारा पशुओंसे बछियोंकी संख्या काफी रहती है। देशमें शहरीकरणकी प्रवृत्ति बढ़ी है, तबसे गोशालाओंपर अनुपयोगी गायें लेनेका भार बहुत बढ़ा है। संघकी ओरसे १९५० में सवाईमाधोपुरमें इण्डाला गोसदन प्रारम्भ किया, जिसमें चराईकी खूब सुविधा थी और हजारों पशु रखे जा सकते थे। किंतु वह सारा क्षेत्र 'बाघ-परियोजना' में आजानेके कारण छोड़ना पड़ा और आज ऐसे बड़े गोसदनकी आवश्यकता और भी बढ़ गयी है, जहाँ गोशालाएँ अपना ऐसा पशुधन भेज सकें।

जैसलमेर जिलेके सीमावर्ती जंगलोंमें संघद्वारा वर्ष ८४-८५ में अछूते खड़े सेवण घासको कटवाकर अकाल-ग्रसित जिलोंमें पहुँचाया गया था। जो अपने-आपमें अभूतपूर्व कार्य था।

संघद्वारा इन गोसदनोंमें अच्छी नस्लोंके साँड़ भी रखे जानेकी व्यवस्था है ताकि अनुपयोगी पशुधन उत्पादन-योग्य बना सकें।

जैसलमेर फॉडर बैंक (चारा-संग्रहण)-योजना

जैसलमेर जिलेमें मोहनगढ़ नाख सेवण घासका बहुत बड़ा क्षेत्र है। जहाँ हमने गत वर्षोंमें फॉडर बैंकके द्वारा हजारों मन सेवण घासकी कलारें लगायीं। यह घास अकालके दिनोंमें बहुत उपयोगी साबित हुई। उस योजनाको हम पुन: शुरू करना चाहते हैं।

गो-विकासकी स्वावलम्बी योजना—गोरस भंडार

अकालमें गोरक्षणसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है गायके प्रति पशुपालकोंमें रुचि जाग्रत् करना, ताकि घर-घर गोपालन हो सके। इस दृष्टिसे गोरस-भंडारका प्रयोग काफी सफल रहा है।

'राजस्थान गोसेवा-संघ' ने जयपुर चौमूं रोडपर बांडी नदीके क्षेत्रमें अपना दूध-संग्रह-क्षेत्र बनाया और जयपुरमें घर-घर गायके दूधका वितरण किया। बांडी क्षेत्रके ४० गाँवोंमें ८० प्रतिशत भैंस तथा २० प्रतिशत गायें थीं। आज ३० बरसके अथक प्रयत्नोंके बाद अनुपात उलट गया है—८० प्रतिशत गायें हैं और २० प्रतिशत भैंसे हैं। उस क्षेत्रमें घर-घर गाय पलती देखकर गोप्रेमी मुग्ध हो जाते हैं।

जयपुर बांडी क्षेत्रके प्रयोगसे उत्साहित होकर 'श्रीकृष्ण-जन्म-स्थान मथुरा' में गोरस-भंडार विकसित करनेकी जिम्मेदारी भी 'राजस्थान गोसेवा-संघ' ने ली है।

'राजस्थान गोसेवा-संघ' की योजना है कि राजस्थानके अनेक क्षेत्रोंमें गोरस-भंडार कायम करके गोपालनके क्षेत्र विकसित किये जायँ। अभी बीकानेर, जोधपुर और दौसा—इन तीन स्थानोंपर कार्य प्रारम्भ करनेकी इच्छा है।

राजस्थानकी गोशालाएँ एवं गोपालनमें रुचि रखनेवाली संस्थाएँ सुयोग्य भावनाशील कार्यकर्ताओंकी कमी महसूस करती हैं। संघके प्रधान कार्यालयमें कृषि-गोपालन-केन्द्र तो हैं ही जहाँ गोनस्ल-सुधारका कार्य हो रहा है, किंतु साथ ही प्रशिक्षण-केन्द्रकी व्यवस्था भी है। इन योजनाओंके निष्ठापूर्वक कार्यान्वयनसे हम गायको बचानेके साथ जीव- दया, शाकाहार, पर्यावरण एवं गोबर-खादके जरिये, अंग्रेजी खादद्वारा होती अपनी बरबादीको तथा देश और मानवताको बचा सकेंगे। तेल खत्म होते ही ट्रैक्टर जोत खत्म होगी तब हम बची गायोंसे बैल ले सकेंगे। गाय बचेगी तो हम बचेंगे, हमारे बच्चे पोषित होंगे और खेत बचेंगे।

---

(१८) श्रीपंचायत गोशाला, सूरजगढ़ (राजस्थान)

राजस्थानके शेखावाटी अञ्चलके उत्तर-पूर्वमें हरियाणा सीमाके संनिकट सूरजगढ़ नामक एक नगर है। लगभग दो सौ वर्ष पूर्वकी बात है, एक दिन तत्कालीन बिसाऊ नरेश स्व० सूरजसिंहजी अपने परिकरोंसहित भ्रमण कर रहे थे। इस स्थानपर पहुँचनेपर रात्रि हो गयी, अत: राजाने ससैन्य वहींपर विश्राम किया। उसी रात वहाँ एक गौ माता अपने नवजात बछड़ेकी रक्षा-हेतु पूरी रात हिंसक जानवरसे मुकाबला करती रही। सूर्योदय होनेपर इस विस्मयकारी घटनाकी जब ठाकुर साहबको जानकारी हुई तो वे भावविभोर हो गये और उस क्षेत्रको विलक्षण वीरभूमि मानकर उन्होंने अपने नामपर 'सूरजगढ़' स्थापनाका श्रीगणेश किया—ऐसी जनश्रुति है। धीरे-धीरे यहाँ नगर बस गया।

धर्मपरायण, सदाचारी लोगोंने सर्वसाधारणके कल्याणके लिये मन्दिर, धर्मशाला, पाठशाला, औषधालय, प्याऊ एवं

गोशाला आदिकी स्थान-स्थानपर स्थापना की। उसी क्रममें स्वनामधन्य गोलोकवासी श्रीरामनारायणजी कायाँने विक्रम-संवत् १९६० में उक्त गोशालाकी स्थापना की।

एक बार बिसाऊ दरबार बिशनसिंहजीको कोई असाध्य रोग हो गया था। उसके दोष-निवारणके लिये उन्होंने फरट गाँवके पास लगभग ७५० बीघा गोचरभूमि गोशालाको प्रदान की। कहते हैं, इससे ठाकुर साहबको उस रोगसे मुक्ति मिली है। रजवाड़ोंके समयमें क्षेत्रके शासकोंका गोशालाको विशेष सहयोग प्राप्त होता रहा, वे स्वयं गोपालक थे। उनकी ओरसे भवनके लिये भूमि एवं लगभग २५०० बीघा गोचरभूमि (चरागाह) गौ माताओंके लिये प्राप्त हुई, जिसपर इस समय पूर्ण स्वामित्व गोशालाका है। इसमें गोशाला एवं गाँवकी गायें चरती हैं।

भगवान् गोविन्द गोपालकी असीम अनुकम्पा एवं व्यापक जन-सहयोगसे भयंकर दुर्भिक्ष तथा विषम परिस्थितियोंका भी गोशालाने दृढ़तासे मुकाबला किया। गोशालाका मुख्य उद्देश्य लूली-लँगड़ी तथा असहाय गायोंकी सेवा-शुश्रूषा करना और गोधनकी निरन्तर वृद्धि करना ही रहा है जो भगवत्कृपासे अनवरत चल रहा है। सचमुच आज यह गोशाला झुँझुनू जिलेकी सर्वाधिक भाग्यशाली गोशाला है। इसके पास कृषि-भूमि पर्याप्त है, जिससे हरा चारा, घास, गुँवार, कड़बी, पाला आदि गोमाताओंको सुलभ होता है। समीपवर्ती ग्राम काजड़ामें भी गोचरभूमि (चरागाह) है, जहाँ गौएँ चरती हैं। भगवत्कृपासे इस समय गोशालामें दूध देनेवाली लगभग ४० गायें हैं और अच्छी नस्लके साँड़ भी हैं। गोशाला निरन्तर प्रगतिके पथपर अग्रसर होकर गौ माताओंकी सेवा करे—यही व्रजनन्दन गोपालसे करबद्ध प्रार्थना है।—श्रीभालचन्द्रजी शर्मा 'गीतेश'

(१९) श्रीकलीकुंड मेनालक्ष्मी गौशाला एवं स्व० जोरमल लक्ष्मीचन्द पिंजरापोल, धोलका (गुजरात)

'श्रीकलीकुंड मेनालक्ष्मी गौशाला' एवं 'स्व० जोरमल लक्ष्मीचन्द पिंजरापोल' की स्थापना मकरसंक्रान्ति १९८८ ई० को वावला-खेड़ा हाइवे धोलकाके पास अहमदाबादमें हुई। इसमें 'गौशाला-विभाग' तथा 'पिंजरापोल-विभाग' —ये दो विभाग हैं। गौशाला-विभागमें २६ गायें, २९ बाछे-बाछी, ५ साँड़ तथा ५ बैल हैं, इस कुल गोधनकी संख्या ६५ है। इसी प्रकार पिंजरापोल-विभागमें ६ गायें, १० बैल तथा अन्य जानवर हैं। मुख्यतः यहाँ काँकरेज, गीर तथा मिश्र नस्लका गोधन है। गौशालाके पास अपनी कोई गोचरभूमि नहीं है, किंतु ३ बीघा क्षेत्रफल होनेसे उसीमें गायें घूमती-फिरती हैं। उपलब्ध शुद्ध दूध गरीब मरीजोंको निःशुल्क दिया जाता है, कुछ मन्दिरके कार्यमें प्रयुक्त होता है तथा कुछ विक्री कर दिया जाता है। शेषका घी बनाया जाता है। गोधनकी चिकित्साके लिये स्वयंका चिकित्सालय है। अनुपयोगी गोधनकी संख्या बढ़ जानेपर उसे 'अहमदाबाद पिंजरापोल' में भेज दिया जाता है और बाछे-बाछीको इस शर्तके साथ गरीब पशुपालकको वितरित कर देते हैं कि वह किसी भी हालतमें उन्हें बेचे नहीं और जब अनुपयोगी लगें तो पुनः संस्थामें वापस कर दें।

मूलतः इस संस्थाकी स्थापना गोसेवाकी दृष्टिसे तथा गोमाताके ऋणसे उऋण होनेके लिये हुई। हमारा यह मानना है कि यदि गायको मातृतुल्य समझकर भक्तिपूर्वक गायकी सेवा होगी तो वही स्वयंमें एक आदर्श गोशाला बन जायगी। अतः गोशालाओं या पिंजरापोलोंमें मूलतः कर्तव्य और सेवाका ही भाव होना चाहिये।—डॉ० सुरेश एस्० झवेरी

(२०) श्रीगोपालक-संघ (गोरक्षण-संस्था), सोलापुर

'श्रीगोपालक-संघ (गोरक्षण-संस्था)' की स्थापना सन् १९३२-३३ ई० में सोलापुरमें हुई। इस संस्थाकी स्थापनाका मुख्य उद्देश्य है—जीवदया, अहिंसा और गोवध-बंदी तथा क़तलखानेसे गोवंशका बचाव करना एवं गोपालन तथा गोसंवर्धन करना, गोदुग्धकी महत्ता समझाकर अधिकाधिक उत्पादन करना तथा उसका प्रचार-प्रसार करना, खेतीके लिये जुताई आदिके हेतु अच्छी नसलके बछड़ोंको तैयार करके उन्हें गरीब किसानोंको वितरित करना। हमारी इस संस्थाने शुरूसे आजतक लगभग तीन हजारसे भी अधिक बछड़ोंका वितरण किया है।

इस संस्थामें कुल गोधनकी वर्तमान संख्या १०२ है, जिनमें ६५ गायें, ८ बैल, १ साँड़ तथा २८ बछड़े हैं। मुख्य रूपसे देशी, गीर और संकरित नसलें हैं। तीन गोसदन हैं।

पानीके लिये एक बड़ा हौद है। चारेमें कड़बी, मकई तथा हरी घास दी जाती है। जानवर खेतमें लगभग ५ घंटेतक चरते हैं। गायोंके लिये एक चरागाह भी है और लगभग ९५ एकड़ गोचरभूमि है। हम अपनी गायोंसे प्राप्त दूधको उचित दामोंमें गरीबों, छोटे बालकों, बीमार व्यक्तियों तथा वयोवृद्धजनोंको उपयोगके लिये देते हैं। हमारी गोशाला तथा संस्थाके लोगोंका गायोंपर इतना प्रेम है कि उनकी आवाज सुनकर गायें वहीं खड़ी हो जाती हैं।

हमारा यह अनुभव है कि गोपालनमें आर्थिक कठिनाइयाँ आड़े आती हैं, अत: गोपालन तथा गोसंवर्धनके लिये आयके स्रोतोंको ठीक रखना चाहिये तथा स्थानीय सक्रिय कार्यकर्ताओं एवं संस्थाओंके सहयोगके साथ ही सरकारकी ओरसे भी विशेष प्रोत्साहन एवं सहयोग मिलना चाहिये। अलग-अलग गायों-बैलों आदिके लिये अलग-अलग हवादार गोसदन होने चाहिये। हमारी जानकारीमें बीजापुर तथा बार्शीमें दो पिंजरापोल संस्थाएँ हैं।—मन्त्री, श्रीगोपालक-संघ

(२१) श्रीपाँजरापोल-संस्था, साँगली (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्रके साँगली शहरमें श्रीगणपति-मन्दिरके पास श्रीपाँजरापोल-संस्था स्थापित है। यह एक प्राचीन गोशाला है। इसकी स्थापना सन् १९१९ ई० में हुई। संस्थाके पास कुल १०५ छोटे-बड़े साँड़, बछड़े तथा गायें हैं। दुधार गायें साँगलीमें हैं तथा अन्य बूढ़ी-अपंग, अपत्यहीन गायें कवठेपिरानमें हैं। साँगलीके पास पाँच एकड़ जमीन है। इसके अतिरिक्त साँगलीसे लगभग १५ कि० मी० की दूरीपर कवठेपिरानकी संस्थामें ९० एकड़ जमीन नदीके किनारे है। अत: दोनों स्थानोंसे चारे आदिकी व्यवस्था हो जाती है। कुछ घास-चारा बाजारसे भी खरीदा जाता है, और खेती भी की जाती है। मुख्य रूपसे इस संस्थाके पास गीर, देहाती और खिलार नस्लकी गायें हैं।

एक आदर्श गोशालाके लिये आवश्यक है कि गोशालामें भरसक मात्रामें प्रकाश और प्रदूषणमुक्त शुद्ध हवा होनी चाहिये। साधारणतया एक गायके लिये १०x५ फुटकी जगह होनी चाहिये। चारे-पानीकी पर्याप्त सुविधा हो। गोशाला एवं गायोंकी रोज सफाई होनी चाहिये। सेवक-वर्ग कुशल एवं कर्मठ तथा गोप्रेमी हों। हर हफ्तेमें योग्य चिकित्सकसे गायोंकी देख-भाल करानी चाहिये और गोशालाकी प्रत्येक गायका अलग रेकार्ड, दर्शक-कार्ड तथा रजिस्टर हो, जिसमें उसका प्रत्येक दिनका विवरण हो।—व्यवस्थापक श्रीपाँजरापोल-संस्था—साँगली

(२२) श्रीगौरक्षण-संस्था, धामनगाँव रेलवे, अमरावती (महाराष्ट्र)

अपाहिज, बूढ़े तथा भाखड़ जानवरोंको उचित संरक्षण देनेके लिये सन् १८८७ ई० में 'श्रीगौरक्षण-संस्था' की स्थापना की गयी। महाराष्ट्रकी गोशालाओंमें इस 'श्रीगौरक्षण-संस्थान' का विशिष्ट स्थान है। आज संस्थाको लगभग सौ वर्षसे ऊपर हो चुके हैं, यह निरन्तर प्रगतिपर है। संस्थाके पास आज अपनी खुदकी इमारत है, जहाँ जानवरोंका आवास, कार्यालय, कर्मचारीनिवास, बगीचा तथा जानवरोंका दवाखाना है। संस्थाके पास १७२ एकड़ जमीन है, जिसका उपयोग हरा चारा, घास-चारा आदिके लिये होता है। कुछ जमीन चरागाह-हेतु भी प्रयुक्त होती है। गायोंके आवास-हेतु संस्थाकी इमारतमें गोठे बने हुए हैं और गायोंको सरकी ढेप, फल्ली ढेप, गेहूँ, चोकर, मक्का, चुरी आदि संतुलित आहार दिया जाता है तथा वर्षभर हरा चारा मिलता रहे, ऐसी व्यवस्था भी की गयी है।

संस्थामें प्रतिदिन लगभग १७५ लीटर शुद्ध पौष्टिक दूध होता है। वह संस्थाके कर्मचारियोंद्वारा उचित दामोंमें घर-घर वितरित किया जाता है तथा जनहितको ध्यानमें रखते हुए अस्पतालोंमें मरीजों और सद्य:प्रसूता माताओंको नि:शुल्क वितरित किया जाता है।

इस 'श्रीगौरक्षण-संस्था' में गोधनकी कुल संख्या इस समय १९३ है, जिनमेंसे ६३ गायें, ८ बैल, ४५ बाछे तथा ७७ बाछी हैं। गायोंकी मुख्य नस्लोंमें जर्सी २८, होस्टन १८, गीर १० तथा गावरानी ७ हैं।

आदर्श गोशालाके सम्बन्धमें हमारा कहना है कि आदर्श गोशालाको यथासम्भव पूर्णतया स्वावलम्बी होना चाहिये, उसके आयके स्रोत अपने होने चाहिये, तभी ठीकसे गायोंका पालन-पोषण और व्यवस्था-सम्बन्धी कार्य हो पाता है। यदि वह कुछ बचत कर सके तो जरूरतमन्द गोशालाओंको वितरित कर दे। इसके साथ ही योग्य, कुशल, प्रशिक्षित कामगारोंका होना भी एक अच्छी गोशालाके लिये बहुत आवश्यक है। क्योंकि सब साधन रहनेपर योग्य कामगारोंके अभावमें गोशाला ठीक चल नहीं पाती।

—श्रीझुंबरलाल राठी, उपाध्यक्ष

(२३) गोसेवा-समिति, कामठी, नागपुर (महाराष्ट्र)

सन् १९८० में कामठीमें गोरक्षा तथा गोहत्या-बंदीके लिये विशाल सत्याग्रह हुआ था। उसी समय गोधनके संरक्षण तथा पालन-पोषणके लिये एक समिति बनानेका निर्णय लिया गया। इसके फलस्वरूप १९८२ ई० में समिति गठित हुई और समितिको गोशालाके लिये ४.७० एकड़ भूमि लीजपर प्राप्त हुई और निर्माण आदि कार्य प्रारम्भ हो गया तथा गोशालाका ठीकसे संचालन १९९२ से प्रारम्भ हुआ।

इस समय इस गोशालामें कुल गोधनकी संख्या ३८ है, जिनमें २१ गाय, १ बैल, ३ साँड़ ६ बाछे तथा बाछियाँ हैं। सभी गायें गाँवरानी नस्लकी हैं। सहयोग-राशिसे गायोंके लिये आवास तथा पानीकी व्यवस्था है। अभी गोशालाके पास कोई चरागाह या गोचर-भूमि नहीं है। जिससे चारे आदिकी व्यवस्थामें कठिनाई होती है। गायोंसे प्राप्त शुद्ध दूधको विक्री कर दिया जाता है।

आज गोधनकी हत्या देशकी सबसे बड़ी समस्या है। गोहत्याको रोकनेके लिये सभी लोगोंको मिलकर प्रयत्न करना चाहिये। क़तलखाने बंद होने चाहिये। जिस राज्यमें गोवंश-वध-सम्बन्धी कानून नहीं है, वहाँ ऐसा कानून बनना चाहिये और लोगोंको कानूनकी जानकारी भी करानी चाहिये।

—पं० श्रीमनोहरलालजी शर्मा

(२४) श्रीगौरक्षण-संस्था, यवतमाल (महाराष्ट्र)

यवतमालमें 'श्रीगौरक्षण-संस्था' के नामसे एक गोशाला है। यह अत्यन्त प्राचीन गोशाला है। यह संस्था १९०५ ई० से आजतक सुव्यवस्थित रूपमें चल रही है। प्रारम्भमें इस 'गौरक्षण-संस्था' के पास लगभग १६० एकड़ जमीन थी, किंतु वह सब सीलिंगमें चली गयी, जिससे काफी कठिनाई हुई। शहरमें जमीन है, जहाँपर अभी गोशाला आदि चलती है। जगह तो बहुत है, किंतु गायोंके लिये कोठा बहुत छोटा है और वह भी प्रायः जीर्ण हो चुका है, इसे बनानेके लिये हम सचेष्ट हैं।

गोशालामें इस समय गाय-बैल, बछड़ोंकी संख्या ९३ है। सभी गायें देशी नस्लकी हैं। गायोंके लिये चारा खरीदा जाता है। गोपालनमें मुख्य समस्या आर्थिक रहती है। सरकारको चाहिये कि गोरक्षण-गोशाला आदिकी जमीन-जायदाद आदिको सीलिंग-एक्टसे मुक्त रखे, क्योंकि गोरक्षण किसीका व्यक्तिगत कार्य न होकर परोपकारका कार्य है, जीव-दयाका कार्य है। इसपर सरकारको ध्यान देना चाहिये तथा गोपालनको विशेष महत्त्व देना चाहिये।

हमारी जानकारीमें अमरावती, नागपुर, धामनगाँव तथा भद्रावतीमें भी कई गोशालाएँ हैं।

—एस्० बी० अटल

(२५) श्रीपाँजरापोल गोरक्षण-संस्था, पनबेल (महाराष्ट्र)

आजसे बहुत वर्ष पूर्व हमारे यहाँ गाँवमें कुछ गोप्रेमी सज्जनोंने गोसेवाके उद्देश्यको ध्यानमें रखकर विचार-विमर्श किया और उस निर्णयके अनुसार सन् १९०८ ई० में पनबेलमें 'श्रीपाँजरापोल गोरक्षण-संस्था' की स्थापना हुई। आज इस संस्थाको स्थापित हुए लगभग ८६ वर्ष हो गये हैं और यह धीरे-धीरे प्रगतिकी ओर ही जा रही है।

इस समय संस्थामें गोधनकी कुल संख्या ९८ है, जिसमें ३३ गायें, ३६ बछड़े, २७ बाछी और २ साँड़ हैं, गाँवडी, गीर, जर्सी, किलारी तथा देशी नस्लके गोधन हैं। संस्थाके पास २७५ एकड़ जमीन है, गोचर-भूमि भी है। गोचरभूमिके घास-चारेका उपयोग होता है। सभी व्यवस्थाएँ ठीक हैं, किंतु सेवाभावी कुशल कर्मचारियोंके अभावमें गायोंकी देख-रेख ठीकसे नहीं हो पाती है। एक अच्छी गोशालाके लिये आवश्यक है कि उसमें जो भी काम करें वे प्रायः गौके प्रति श्रद्धा एवं प्रेम रखें, तभी सच्ची गोसेवा हो सकती है। गोपालन एवं गोसंवर्धनके लिये लोगोंको

अधिक-से-अधिक प्रेरणा देनी चाहिये और गोदुग्धकी विशेष उपयोगिताको समझाते हुए गायों-सम्बन्धी विवरण तथा गोपालन आदिकी बातोंके लिये कोई पत्र-पत्रिका प्रकाशमें आनी चाहिये। उसमें ऐसी सामग्री हो जिससे अधिक-से-अधिक लोग इस ओर उन्मुख हों, जिसके पास समय हो, वह समय दे और जिसके पास साधन हो वह साधन उपलब्ध कराये। इस प्रकार पारस्परिक सहयोगसे गोधनकी सेवा तो होगी ही साथ ही गोवंशकी रक्षा भी की जा सकेगी।

—व्यवस्थापक
श्रीपाँजरापोल गोरक्षण-संस्था,
पनबेल

(२६) श्रीगोपाल-कृष्ण गोरक्षण-संस्था—मानवत (महाराष्ट्र)

मानवतमें १९७० में इस 'श्रीगोपाल-कृष्ण गोरक्षण-संस्था' की स्थापना हुई। इस समय गोशालामें २१ गाय, ९ बैल, २ साँड़, १४ बाछे तथा २१ बछिया हैं। गोशालाके पास अपनी थोड़ी-सी गोचर-भूमि होनेसे चारे आदिकी व्यवस्था है, किंतु फिर भी हरी घास आदि खरीदनी पड़ती है। गायोंसे प्राप्त दूध तथा गोबर आदिकी विक्री की जाती है। थोड़ी खेती भी होती है। नासिक तथा निजामाबादमें भी गोशालाएँ हैं। —गोरक्षण-संस्था, मानवत

(२७) गुरुनानक गोशाला, कवंर नगर, जलगाँव (महाराष्ट्र)

जलगाँवके 'गुरुनानक गोशाला' की स्थापनाका एक रोचक इतिहास है, जिसे यहाँपर दिया जा रहा है। मैं 'कल्याण' पत्रका बहुत दिनोंसे पाठक रहा हूँ और इस 'गोशाला' की स्थापनाकी मूल प्रेरणा भी मुझे 'कल्याण' पत्रके पढ़नेसे ही मिली। हुआ यह कि कुछ वर्ष पहले 'कल्याण' के एक साधारण अङ्कके 'पढ़ो, समझो और करो' स्तम्भमें 'दो पैसेका स्कूल' शीर्षकसे एक घटना छपी थी। शीर्षक पढ़ते ही मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि दो पैसेका कैसा स्कूल होगा? जिज्ञासावश पूरा लेख पढ़ गया। मनमें उमंग हुई कि मैं भी क्यों न दो पैसेसे गोरक्षाका कार्य शुरू करूँ। गौके प्रति प्रेम तो मेरा था ही। बस, फिर मैंने मनमें संकल्प कर लिया कि गोसेवाके लिये एक गोशाला खोलनी चाहिये।

यहाँ गुरुद्वारेमें सत्संगका कार्य चलता रहता है। अतः मुझे अपनी योजनाके प्रचारका अवसर मिल गया। मैंने गोमाताकी महिमा बताते हुए गोरक्षार्थ केवल दो पैसे प्रतिदिन निकालनेकी लोगोंसे अपील की। उस अपीलके परिणाम-स्वरूप एक रुपया मासिक चंदा गोरक्षाके लिये देनेवाले कुछ सदस्य बन गये। इससे मेरे मनमें उत्साह बढ़ने लगा।

यहाँ शनिवारको पशु-बाजार लगता है, जिसमें गोवंश विक्रीके लिये आता है। उस बाजारसे जो गोवंश अनुपयोगी होता था, उसे स्थानीय पिंजरापोलद्वारा खरीदकर सुरक्षित रखा जाता था। कुछ दिन इसी रूपमें गोरक्षाके कार्यमें लगा रहा। बादमें लोगोंके सहयोगसे थोड़ी-सी जमीन भी गोशालाके लिये मिल गयी। पर अब गौएँ कहाँसे आयें। अपने दरबार साहबमें दो गौएँ थीं। उनमेंसे एक गाय गोशालामें रखी गयी। एक गाय एक अन्य सज्जनने दे दी। इस प्रकार दो गौओंसे इस गोशालाका शुभारम्भ हुआ और गुरुजीके नामपर ही 'गुरुनानक गोशाला' नामकरण किया गया। पिंजरापोलके एक सज्जनके सत्परामर्शद्वारा गोशालाका उद्घाटन हुआ और अक्षय तृतीयाको सन् १९६९ ई० में गोशालाकी स्थापना भी हुई।

इस गोशालाका मुख्य उद्देश्य गोवंशको कसाइयोंके हाथसे बचाकर गोशालामें उचित संरक्षण देना है। अनुपयोगी गोवंशकी भी यहाँ पालना होती है। कई लोग अपने वृद्ध बैल जो खेती करने योग्य नहीं रहते, गोशालामें दे जाते हैं। पहले तो उनके लिये कुछ नहीं लिया जाता था, किंतु अब आर्थिक कठिनाईके कारण स्वल्प धनराशि उनसे ली जाती

है, जो गोधनकी जीवन-रक्षा, चारे-पानी, औषधि आदिके काम आता है। इन प्राणियों—असहाय गोधनोंकी रक्षा करना हमारा मुख्य प्रयोजन है।

इस समय इस छोटी-सी गोशालामें ५०-६० तक गोवंश है और अधिकांश गोवंश जनतासे प्राप्त वृद्ध बैल तथा आर्थिक दृष्टिसे अनुपयोगी गाय आदि हैं। वैसे इस समय गोशालाके पास लगभग १६-१७ एकड़ खेती है, किंतु सिंचाईकी कोई खास व्यवस्था नहीं है, इसलिये चारा आदि प्राय: खरीदना पड़ता है और सुयोग्य कर्मठ सच्चे गोसेवकों एवं गोभक्तोंकी हमें आवश्यकता भी है। वैसे यहाँका प्राय: सारा कार्य सेवाभावमें ही होता है। धनके अभावमें भी गो-गोविन्दकी ऐसी कृपा है कि सभी कार्य सुचारु रूपसे चल रहे हैं। मुझे तो लगता है कि गोसेवा प्रभुकी लीला है और उनकी लीलामें सभी कुछ होता रहता है। उनकी लीलामें सहभागी बननेके लिये यह आवश्यक है कि हमें गोरक्षा एवं गोसेवाके पुण्य कार्यके लिये आगे आना होगा और तभी हम सच्चे गोसेवक एवं सच्चे गोविन्दके उपासक कहे जा सकेंगे।

—स्वामी परशुराम गोविंदराम हंस

(२८) गोशाला सन्तोषगढ़, ऊना (हिमाचल प्रदेश)

इस गोशालाकी स्थापना सन् १९११-१२ में हुई थी। श्रीभोलानाथजीने गोभक्तिके वशीभूत हो यह गोशाला बनवायी थी। इस गोशालाकी समुचित व्यवस्थाके लिये एक कमेटीका गठन हर वर्ष किया जाता है। इस कमेटीके पाँच सदस्य हैं।

वर्तमानमें गोशालामें कुल ४७ गाय, ४ साँड़, १४ बछड़े तथा १५ बछिया इस प्रकार ८० पशु हैं। पशुओंके खानेके लिये भूसा-तूड़ी आदि खरीदी जाती है। गोशालाके पास १५० कनाल चरागाह भूमि है। कुछ चरागाह प्रतिवर्ष किरायेपर भी लिये जाते हैं। पानीकी व्यवस्था गोशालामें है और सोभद्रा नदीका पानी भी वर्ष भर उपलब्ध रहता है। गोमय विक्रय कर दिया जाता है। सन्तोषगढ़में सरकारी पशु-चिकित्सालयकी सेवाएँ उपलब्ध हैं, जिससे चिकित्सामें कोई कठिनाई नहीं होती।

इस क्षेत्रकी दो-एक गोशालाओंकी सूचना इस प्रकार है—एक गोशाला 'शिव आश्रम' के नामसे लगभग १० वर्ष पूर्व भोजोआल (जिला-रोपड़, पंजाब) में स्थापित की गयी थी। वह गोशाला सन्तोषगढ़से ६ कि० मी० की दूरीपर है।

इसी प्रकार एक गोसदन खज्जीयाँ, जिला-काँगड़ा (हि० प्र०) में पशु-पालन-विभाग (हि० प्र०) द्वारा चलाया जा रहा है। इस गोसदनमें १०० से अधिक पशु हैं।

—डॉ वी० बी० जोशी

मैं गौकी प्रशंसा करूँगा; किंतु यों ही साधारण दृष्टिसे नहीं, वरं इसलिये कि वह इसकी अधिकारिणी है और ऐसा करना हमारा कर्तव्य है। मैं गायको भगवत्-सृष्टिके चर प्राणि-समाजमें एक ऊँचे आदरणीय स्थानपर खड़ी देखना चाहूँगा। गायसे बढ़कर अन्य कोई भी पशु मनुष्यका मित्र नहीं है और न गाय-ऐसा कोई मधुर स्वभाववाला है। अपने दीप्त, शान्त और ध्यानमग्न नेत्रोंसे संसारको देखनेवाली गायके सौम्य रूपमें सचमुच देवत्व भरा है। उसमें एक महानता और भव्यता है, जो ग्रामदेवताके उपयुक्त है। उसमें शत-प्रतिशत मातृत्व है और उसका मनुष्य-जातिसे यही माताका सम्बन्ध है।

मैं यह नहीं मानता हूँ कि गाय एक उदास, अबोध और व्यक्तित्वशून्य प्राणी है; किंतु ऐसा न माननेवाले किसी संशययुक्त मनुष्यको यह मनाना भी मेरे लिये कठिन है। जबतक मनुष्य अपने पशु-मित्रोंके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार न करेगा तबतक वह उनकी अत्यन्त प्रिय तथा मनोरम विशेषताओंके विषयमें सदा अँधेरेमें ही रहेगा।—श्रीवाल्टर ए० डामर

गोशालाओं और पिंजरापोलोंकी एक प्राचीन तालिका

पंजाब

१. अबोहर मंडी (फीरोजपुर), २. अम्बाला छावनी, ३. अहमदगढ़ (लुधियाना), ४. अगरोहा (हिसार), ५. अलावलपुर (गुड़गाँवा), ६. अब्दुल्लापुर (गुजराँवाला), ७. अम्बाला, ८. अमृतसर, ९. अजनाला (अमृतसर), १०. बेरी (रोहतक) ११.बहदपुर (काँगड़ा), १२. बंगा नावनशहर (जलंधर), १३. बयिराबाद (गुजराँवाला), १४. बटाला (गुरदासपुर), १५. बबिआर (अम्बाला), १६. भिवानीसंघ (हिसार), १७. भिवानी गोपाल-गोरस (हिसार), १८. चुनियान (लाहौर), १९. दहूबाला (हिसार), २०. देघोट (गुड़गावाँ), २१. दसुआह (होशियारपुर), २२. दत्ता— शाला डेयरी (हिसार), २३. फर्रुखनगर (गुड़गावाँ), २४. फीरोजपुर, २५. फाजिलका (फीरोजपुर), २६. गुड़गावाँ, २७. गीदड़बाह (फीरोजपुर), २८. हिसार, २९. हाँसी (हिसार), ३०. होशियारपुर, ३१. इस्माइलाबाद (करनाल), ३२. जंडियाला (अमृतसर), ३३. जलंधर , ३४. जरनवाला (लायलपुर), ३५. जगराँव (लुधियाना), ३६. जगाधरी (अम्बाला), ३७. झेलम,३८. जैजों (होशियारपुर), ३९. झंग, ४०. करनाल, ४१. कैथल (करनाल), ४२. कसूर (लाहौर), ४३. काद्राबाद फलिया (मुल्तान), ४४. कीरतपुर (होशियारपुर), ४५. लाहौर, ४६. लुधियाना, ४७. लायलपुर, ४८. मुल्तान,४९. मच्छीवाड़ा (लुधियाना), ५०. मुक्तसर (फीरोजपुर), ५१. मूली (काँगड़ा), ५२. नयागाँवकसूर (लाहौर), ५३. नरुसुई (गुड़गावाँ), ५४. नरबहा (गुड़गावाँ), ५५. पानीपत (करनाल), ५६. पहाड़ी (गुड़गावाँ), ५७. रोहतक हरियाना, ५८. रोहतक व्यायामशाला, ५९. रेवाड़ी (गुड़गावाँ), ६०. रावलपिंडी, ६१. राजकोट (लुधियाना), ६२. रूपड़ (अम्बाला), ६३. सिरसा (हिसार), ६४. संगला (लायलपुर), ६५. संतोषगढ़ (होशियारपुर), ६६. सियानपुर लोरा (काँगड़ा), ६७. तलाजा (करनाल), ६८. जीरा (फीरोजपुर), ६९. खरगोधा, ७०. कोट निक्का पिंडी भट्ठिआन (गुजराँवाला)।

संयुक्त-प्रान्त

१. अजितमाल (इटावा), २. अलीगढ़, ३. अलीगढ़-पञ्चायती, ४. अड़ैल (इलाहाबाद), ५. अछनेरा (आगरा), ६. अम्बाला (सहारनपुर), ७. अलीगंज (एटा), ८. अकबरपुर (कानपुर), ९. अमरोहा (अलीगढ़), १०. अलीपुर (मुजफ्फरगढ़), ११. आवागढ़ (एटा), १२. अयोध्या (फैजाबाद), १३. आगरा, १४. आनन्दपुर (मेरठ), १५. इलाहाबाद, १६. अमेमजा (इटावा), १७. बनारस, १८. बस्ती, १९. बिलग्राम (बाँदा), २०. वृन्दावन (मथुरा), २१. बाँदा, २२. बरहज (गोरखपुर), २३. बलिया, २४. बैराना (इलाहाबाद), २५. बिसानो (अलीगढ़), २६. बैकुंठपुर बाबा बिहारीजीका (गोरखपुर), २७. बैबर (फर्रुखाबाद), २८. बक्सर (मेरठ), २९. बेढ़ (गोरखपुर), ३०. बेरारी (इटावा), ३१. भरथना (इटावा), ३२. भादन (आगरा), ३३. भरौली (बस्ती), ३४. बेगमाबाद (मेरठ), ३५. बरसूर्ली (अलीगढ़), ३६. बिलासी (बदायूँ), ३७. बनसूली (मेरठ), ३८. बुढाना (मुजफ्फरनगर), ३९. बरेली, ४०. भटनी (अलीगढ़), ४१. भगवाननगर (हरदोई), ४२. भगमाघियानी (मथुरा), ४३. बाराबंकी, ४४. बक्सर (नबाबगंज), ४५. बदायूँ ४६. बावली (मेरठ), ४७. भरोतिया (बस्ती), ४८. बल्लार—गोकुल (मथुरा), ४९. बेराडी (इटावा), ५०. बुलंदशहर, ५१. चँदौसी (मुरादाबाद), ५२. चाँदपुर (बिजनौर), ५३. चिपरामन (फर्रुखाबाद), ५४. छपरा, ५५. चौरी (गोरखपुर), ५६. चिरगाँव (झाँसी), ५७. कानपुर, ५८. डिबाई (बुलंदशहर), ५९. डिडवरगंज (इटावा), ६०. डालमऊ (रायबरेली), ६१. दनकौर (बुलंदशहर), ६२. धनस्वा (झाँसी), ६३. देहरादून, ६४. देवबंद (सहारनपुर), ६५. देवरिया (गोरखपुर), ६६. इटावा, ६७. एटा, ६८. एचना (अलीगढ़), ६९. इर्वाह (इटावा), ७०. एरच (झाँसी), ७१. गढ़मुक्तेश्वर (मेरठ), ७२. गोतम (अलीगढ़), ७३. गाजियाबाद (मेरठ), ७४. गोलाबाजार (गोरखपुर), ७५. गंगेसरी (मुरादाबाद), ७६. गोकुल (मथुरा), ७७. गोरखपुर, ७८. गाजीपुर, ७९. गढ़ीपारसोली (मथुरा), ८०. गोपालगढ़ (इटावा), ८१. गणेशपुर (बस्ती), ८२. गूलपुर (इलाहाबाद), ८३. गायघाट (बनारस), ८४. गाजीपुर (कानपुर), ८५. हँसवा (फतेहपुर), ८६. हरद्वार (सहारनपुर), ८७. हापुड़ (मेरठ), ८८. हरदोई (कानपुर), ८९. हरदुआ (अलीगढ़), ९०. हाथरस, ९१. हरदुआगंज (अलीगढ़), ९२. हमीरपुर, ९३. हसवा (फतेहपुर), ९४. होलीपुर (आगरा), ९५. हरनौत (अलीगढ़), ९६. हस्तिनापुर (मेरठ), ९७. हरछना (बुलंदशहर), ९८. जटाई (मुजफ्फरनगर), ९९.जैगड़ा (आगरा), १००. जौनपुर, १०१. जंगलकठार (बस्ती), १०२. जलेसर (एटा), १०३. जुही (कानपुर), १०४. जरार (आगरा), १०५.झारनवारी (मथुरा), १०६. झाँसी, १०७. झड़ीबिल्खी (अलीगढ़), १०८. कायमगंज

(फर्रुखाबाद), १०९. कासगंज (एटा), ११०. कादिरगंज (एटा), १११. कवरारी (उन्नाव), ११२. कालाकाँकर (प्रतापगढ़), ११३. कछलाघाट (बदायूँ), ११४. कपसर (मेरठ), ११५. कर्णवास (बुलंदशहर), ११६. कमालगंज (फर्रुखाबाद), ११७. कोरियासी (मथुरा), ११८. कन्नौज (फर्रुखाबाद), ११९. काशीपुर (नैनीताल), १२०. कप्तानगंज (गोरखपुर), १२१. कुहनेरा (मेरठ), १२२. खुरजा (बुलंदशहर), १२३. खागा स्टेशन (इलाहाबाद), १२४. कालपी (झाँसी), १२५. केउँच (झाँसी), १२६. कचेहरी (कन्नौज), १२७. खड्डा (अलीगढ़), १२८. खतौली (मेरठ), १२९. खैर (अलीगढ़), १३०. कीडगंज (इलाहाबाद), १३१. लालढाँक (बिजनौर), १३२. लीसामऊ (कानपुर), १३३. लियो (इटावा), १३४. लखनऊ (अवध गोशाला-समिति), १३५. लखीमपुर खीरी, १३६. मोहाली (प्रतापगढ़), १३७. मंडी डिप्टीगंज (बुलंदशहर), १३८. मथुरा, १३९. मिर्जापुर, १४०. महोबा (हमीरपुर), १४१. मेरठ, १४२. मवाना (मेरठ), १४३. मेनागपुर (सहारनपुर), १४४. मुरादाबाद, १४५. महलवाला (मेरठ), १४६. मेहदावल(बस्ती), १४७. महाराजगंज (गोरखपुर), १४८. मेहुआ (कानपुर), १४९. मोतीकटरा (आगरा), १५०. मरिहा (जौनपुर), १५१. महाराजपुर (मेरठ), १५२. मोहनाल बाजार (बस्ती), १५३. नयागाँव छावनी (बुंदेलखंड), १५४. निनौहरा (कानपुर), १५५. नन्दपुर (मेरठ), १५६. नीमसार (सीतापुर), १५७. नजीबाबाद (बिजनौर), १५८. नवाबगंज (गोंडा), १५९. नगीना (बिजनौर), १६०. नहाटी (अलीगढ़), १६१. नारायणगंज (इटावा), १६२. नीजाबाद (बिजनौर), १६३. उरई (झाँसी), १६४. औरैया (इटावा), १६५. परसोतीगढ़ी (मथुरा), १६६. पिपराइचबाजार (गोरखपुर), १६७. पीलीभीत, १६८. पटियाली (एटा), १६९. पाली (इटावा), १७०. पँचरा (बनारस), १७१. पोखरायाँ (कानपुर), १७२. परखेउना (गोरखपुर), १७३. प्रतापगढ़, १७४. पाकीपुरा (आगरा), १७५. पिपरा (बस्ती), १७६. पयकालीबाड़ा पौहारीजीका (गोरखपुर), १७७. पीनाहट (आगरा), १७८. पनवाड़ा (मेरठ), १७९. फीरोजाबाद (आगरा), १८०. फूलपुर (कानपुर), १८१. पेशावरस्टेट (अलीगढ़), १८२. ऋषिकेश (देहरादून), १८३. साकोई (बुलंदशहर), १८४. सम्भल (मुरादाबाद), १८५. सिकंदरपुर (फतेहगढ़), १८६. शामली (मुजफ्फरनगर), १८७. शाहजादपुर (इलाहाबाद), १८८. सोंख (मथुरा), १८९. शाहजहाँपुर, १९०. सरानी (अलीगढ़), १९१. सुरारियर (मथुरा), १९२. शाहबाद (हरदोई), १९३. सहारनपुर, १९४. शक्तिपुर (बस्ती), १९५. सीकरी फतेहपुर (आगरा), १९६. शंकरपुर (बस्ती), १९७. सीतापुर, १९८. सोरोंघाट (एटा), १९९. सकूराबाद (मैनपुरी), २००. सहसबन (हरदोई), २०१. सिकन्दराराउ (एटा), २०२. सतईकी कुटी (मुरादाबाद), २०३. सैथाकलाँ (जौनपुर), २०४. सिकरौरा (हमीरपुर), २०५. शाहगंज (जौनपुर), २०६. सीसामऊ (कानपुर), २०७. टीकमपुर सचनी (अलीगढ़), २०८. तनकपुर मंडी (नैनीताल), २०९. तुलसीपुर (गोंडा), २१०. तारीनध (फर्रुखाबाद), २११. उद्धवकुण्ड (मथुरा), २१२. उन्नाव, २१३. ऊआँली (सहारनपुर), २१४. फतेहपुर, २१५. करनैलगंज (गोंडा), २१६. करवीमण्डी (बाँदा), २१७. अमेठी (सुल्तानपुर), २१८. चुनार (मिर्जापुर), २१९. कैराना (मुजफ्फरनगर)।

बम्बई काठियावाड़ एवं गुजरात

(अ) गोशाला—

१. श्रीभारतवर्षीय गोपाल गोरक्षक-मण्डल, बम्बई, २. श्रीगोग्रास-भिक्षा-संस्था, बम्बई, ३— (अ) बम्बई गो-रक्षक-मण्डली, ३— (आ) गो-रक्षक-मण्डली, मूलजी जेठा मार्केट, बम्बई, ४. गो-रक्षा-लीग, बम्बई, ५. गोग्रास गो-जीव-दान-मण्डल, बम्बई, ६. श्रीगोवर्द्धन-संस्था बम्बई, ७. नत्थूलालजी चैरिटी-ट्रस्ट गोशाला, बम्बई, ८. डोम्बिवली लोकमान्य गोशाला, बम्बई, ९. गोधड़ा, १०. दोहद, ११. बड़ौदा, १२. उपलेटा (काठियावाड़), १३. खम्भालिया (काठियावाड़), १४. बगसरा (कंकावाव), १५. जडिया (काठियावाड़), १६. कुंडला (काठियावाड़), १७. मूली (काठियावाड़), १८. अटकोट (काठियावाड़), १९. बाबरा (काठियावाड़), २०. धराफा (काठियावाड़), २१. श्रीद्वारकापुरी (काठियावाड़), २२. मंडवा (काठियावाड़), २३. सलाया (काठियावाड़), २४. खडबा (काठियावाड़), २५. श्रीगोवर्धन-संस्था, वाई (सतारा), २६. सङ्गमनेर, २७. धुलिया, २८. येवला, २९. गो-जीवदान कमेटी, वेतलपेठ, पूना, ३०. पंढरपुर, ३१. श्रीगोवर्द्धन-संस्था, पूना, ३२. लाटूर, ३३. बारामती, ३४. निपानी, ३५. बगलकोट, ३६. शिवयोगमन्दिर, ३७. केरूर, ३८. मन्दिर गोशाला, डाकोर, ३९. धामनगर (काठियावाड़), ४०. हलवाद (काठियावाड़), ४१. कराड़ (सतारा), ४२. लोनन्द (काठियावाड़), ४३. सतारा, ४४. जभखंडी (संस्थान), ४५. बार्शी (शोलापुर), ४६. मुलुंद, ४७. कल्याण, ४८. चलाला (काठियावाड़), ४९. करभालें (शोलापुर),

५०. हल्याल (कारवार), ५१. बरौली स्टेशन (बम्बई)।

(आ) पिंजरापोल—

१. श्रीबम्बई पिंजरापोल, २. श्रीपशु-रक्षक-मण्डली, बम्बई, ३. सार्वजनिक जीव-दया खाता, घाटकोपर, ४. अहमदाबाद, ५. धोलका (काठियावाड़), ६. धंधूका, ७. घोघा (काठियावाड़), ८. सानन्द, ९. मण्डल, १०. खम्भात, ११. बोरसद, १२. डाकोर, १३. मऊधा (कैरा), १४. कैरा, १५. नड़ियाद, १६. जूनागढ़, १७. राजकोट, १८. भड़ौच, १९. सूरत, २०. मेहसाना, २१. विसनगर, २२. ध्राँगध्रा (काठियावाड़), २३. पाटन, २४. बीजापुर, २५. सिद्धपुर, २६. पालनपुर, २७. वीरमगाम, २८. पाटड़ी (वीरमगाम तालुका), २९. भावनगर (काठियावाड़), ३०. विसावदर (काठियावाड़), ३१. धोराजी (काठियावाड़), ३२. जामनगर (काठियावाड़), ३३. गोंडल (काठियावाड़), ३४. जेतपुर (काठियावाड़), ३५. कुटिआना (काठियावाड़), ३६. लिंबड़ी (काठियावाड़), ३७. माँगरोल (काठियावाड़), ३८. महुवा (काठियावाड़), ३९. मोरवी (काठियावाड़), ४०. पालीताना (काठियावाड़), ४१. वेरावल (काठियावाड़), ४२. वढ़वान (काठियावाड़), ४३. भायावदर (काठियावाड़), ४४. वोटाड (काठियावाड़), ४५. चूडा (काठियावाड़), ४६. तालजा (काठियावाड़), ४७. धरोल (काठियावाड़), ४८. गोधड़ा (काठियावाड़), ४९. हलवाद (काठियावाड़), ५०. जस्दान (काठियावाड़), ५१. जफराबाद, ५२. लाठी (काठियावाड़), ५३. सिहार (काठियावाड़), ५४. वाँकानेर (काठियावाड़), ५५. बिल्खा (काठियावाड़), ५६. चीतल (काठियावाड़), ५७. लखतर (काठियावाड़), ५८. मेंदरदा (काठियावाड़), ५९. सायला (काठियावाड़), ६०. वाला (काठियावाड़), ६१. अमरेली (काठियावाड़), ६२. आरामदा (काठियावाड़), ६३. बखराल (काठियावाड़), ६४. बालम्भा (काठियावाड़), ६५. बेट (काठियावाड़), ६६. भन्वाद (काठियावाड़), ६७. दामनगर (काठियावाड़), ६८. देदन (काठियावाड़), ६९. धारी (काठियावाड़), ७०. ढासा (काठियावाड़), ७१. डूँगर (काठियावाड़), ७२. जाम जोधपुर (काठियावाड़), ७३. कोंध (काठियावाड़), ७४. कंकावाव (काठियावाड़), ७५. मलिया (काठियावाड़), ७६. पनेली (काठियावाड़), ७७. प्रभासपाटन (काठियावाड़), ७८. राजसीतापुर (काठियावाड़), ७९. सोनगढ़ (काठियावाड़), ८०. बरवाल (काठियावाड़), ८१. कलावद (काठियावाड़), ८२. केशोद (काठियावाड़), ८३. कराची (काठियावाड़), ८४. टट्टा (काठियावाड़), ८५. परली (सतारा), ८६. कुंड (सतारा), ८७. तासगाँव (सतारा), ८८. लोनंद (सतारा), ८९. अहमदनगर, ९०. जलगाँव, ९१. चालीसगाँव, ९२. नन्दुरबार, ९३. नवपुर, ९४. नासिक, ९५. मालेगाँव, ९६. शोलापुर, ९७. बीजापुर, ९८. घोडनदी, ९९. गुलेदगड्ड (बदामी), १००. हुबली, १०१. गड़ाग, १०२. नवेल, १०३. भोर, १०४. साँगली, १०५. कोल्हापुर, १०६. माँडवी, १०७. भुज (कच्छ), १०८. अंजार (कच्छ), १०९. मूँदड़ा (कच्छ), ११०. राधनपुर (गुजरात), १११. पूना, ११२. माँडवी (कच्छ), ११३. डभोई (बड़ौदा), ११४. पोरबंदर (काठियावाड़), ११५. संगोला (शोलापुर), ११६. वडनगर (बड़ौदा), ११७. वरवाला (काठियावाड़), ११८. भरनबार, ११९. बधेलियन सिटी, १२०. बखेरेला (ध्राँगध्रा स्टेट), १२१. धानली, १२२. जरिजाबंदर (काठियावाड़), १२३. जामकंडोरना (काठियावाड़), १२४. लरधार (काठियावाड़), १२५. मोरैल (काठियावाड़), १२६. धनराजी (ध्राँगध्रा स्टेट), १२७. इचारच (बड़ौदा स्टेट), १२८. खेतड़ वाई (सतारा), १२९. शंकेश्वर (बेलगाँव), १३०. डाकोर (खोडदादपुर), डाकोर।

मध्य-प्रदेश

१. आकोला (बरार), २. अमरावती, ३. आर्वी (वर्धा), ४. अंजनगाँव सुरजी तालुका (अमरावती), ५. विजयराघोगढ़ (जबलपुर), ६. भंडारा, ७. बगलकटा (बिलासपुर), ८. भाटापाड़ा, ९. चालीशगाँव (खानदेश), १०. छिंदवाड़ा, ११. चोला (छिंदवाड़ा), १२. चाँदा, १३. धूलिया (खानदेश), १४. धमतरी, १५. गणेशपुर, १६. गढ़ा (जबलपुर), १७. गोंडा, १८. गिरमा, १९. गोंदिया (नागपुर), २०. होशंगाबाद, २१. हींगनघाट, २२. इच्छापुर (नीमाड़), २३. जबलपुर (नीमाड़), २४. जनगाँव (खानदेश), २५. कटरा (सागर), २६. कटोल, २७. कटनी, २८. बाँदा, २९. खाँमगाँव (बरार), ३०. लखनादौन (सिवनी), ३१. नागपुर धनतोली, ३२. नरसिंहपुर (नागपुर), ३३. मुरवाड़ा कटनी (जबलपुर), ३४. मुताई (बेतूल), ३५. नकोरदर (खानदेश), ३६. राजगढ़ (बिलासपुर), ३७. राजनाँदगाँव स्टेट (रायपुर), ३८. रायपुर (होशंगाबाद), ३९. सामलपुर (रायपुर), ४०. वर्धा, ४१. यवतमाल (अमरावती), ४२. वरोरा, ४३. तुमसर (भंडारा), ४४. तिरोरा, ४५. बालोद, ४६. बिलासपुर, ४७. चरपा (बिलासपुर), ४८. सिलेरा (सागर), ४९. इटारसी (होशंगाबाद), ५०. हरदा, ५१. पाटोला, ५२. खंडवा,

५३. बुढ़ानपुर, ५४. बनोसा (अमरावती),५५. धामनगाँव, ५६. मोरसी (अमरावती), ५७. पंढरकवड़ा (यवतमाल), ५८. पुसाद (यवतमाल), ५९. वून, ६०. उमरखेड़ (यवतमाल), ६१. खेरकेड (आकोला), ६२. अकोलवी बालापुर, ६३. मुर्तिजापुर (आकोला), ६४. करंजा (आकोला), ६५. रिसोड (आकोला), ६६. बुलोलेक (बरार), ६७. चिखली (बरार), ६८. काले (बुल्डाना), ६९. मलकापुर, ७०. नंदूरा, ७१. लोनार (बुल्डाना), ७२. देउलगाँव राजा, ७३. शेगाँव (बुल्डाना)।

बंगाल

१. कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी, २. बरिया (बर्दवान), ३. दूधरा (मुर्शिदाबाद), ४. दार्जलिङ्ग, ५. रानीगंज, ६. रामकुमार रक्षित लेन (कलकत्ता), ७. लिलुआ (कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी), ८. ताहिरपुर (रानीगंज), ९. रामपुर डेयरी फार्म, १०. पञ्चानन तल्ला लेन, हवड़ा, ११. तालकरघर रोड, हवड़ा, १२. म्युनिसिपल मार्केट, हवड़ा, १३. लिलुआ—(अ) मारवाड़ी गो-रस कंपनी, (आ) फ्रेंड्स डेयरी फार्म, (इ) दि शर्मा डेयरी फार्म, (ई) दि रेलवे डेयरी फार्म, १४. रंगपुर डेयरी फार्म, लोकनाथ चटर्जी लेन, शिवपुर।

मद्रास

१. कोयम्बीपुर (मद्रास), २. मद्रास।

बिहार और उड़ीसा

१.आरा, २.बिहार , ३.बेगूसराय (मुंगेर), ४. भागलपुर, ५. बगहा बाजार (चम्पारन), ६. बरगाम (चम्पारन), ७. चैबासा, ८. चतुरबाजार (हजारीबाग), ९. कोलगाँव (भागलपुर), १०.चौकुलिया, ११.दलसिंहसराय (दरभंगा), १२.दरभंगा, १३.देवघर, १४.गया, १५.गोगरी जमालपुर (मुंगेर), १६.हजारीबाग, १७. हाजीपुर (मुजफ्फरपुर), १८. इस्लामपुर (पटना), १९. झल्दा, पुरलिया (मानभूम), २०. झरिया (मानभूम), २१. खगड़िया (मुंगेर), २२. किशनगंज, २३. कटिहार, २४. केंडुली (मुजफ्फरपुर), २५. कम्तुल डेयरी फार्म (दरभंगा), २६. लक्खीसराय, २७. मधुबनी (पुरनिया), २८. मुंगेर, २९. मुजफ्फरपुर, ३०. मोतिहारी, ३१. मिराजगंज (हजारीबाग), ३२. मेहसी (चम्पारन), ३३. मधुबनी (दरभंगा), ३४. मोहम्मदपुर (छपरा), ३५. नौगछिया (भागलपुर), ३६.पटना, ३७.पुरलिया (मानभूम), ३८.पंचम्बा (हजारीबाग), ३९. रक्सौल, ४०. रसड़ा (दरभंगा), ४१. पुरी श्रीजगन्नाथ, ४२. राँची (छोटा नागपुर), ४३. राजगिर (पटना), ४४.ससराम (आरा), ४५.सिवान, ४६. सिगिया, ४७.समस्तीपुर (दरभंगा), ४८.सारन (छपरा), ४९. सिलाव (पटना), कटक।

सिंध

१.अलिअरकोटैंटो (हैदराबाद), २.अदमाकनंटो (हैदराबाद), ३.हैदराबाद, ४.हाला (हैदराबाद), ५.जल्लन (हैदराबाद), ६.जैकोबाबाद (हैदराबाद), ७.कम्बर (लरकाना), ८.खैरपुर (सक्खर), ९.खानपुर (हैदराबाद), १०.कराची, ११.कंधकोट, १२.लरकाना, १३.मीरपुर (हैदराबाद), १४.मेहर (हैदराबाद), १५.नगरथला, १६. रोहड़ी (सक्खर), १७. राबदेसी, १८.शिवदरीकुँवर (लरकाना), १९.सक्खर, २०. शिकारपुर, २१.टाँडोमुहमदखान (हैदराबाद), २२.टट्टा।

दिल्ली

१. नजफगढ़ (दिल्ली), २. सोनपत (दिल्ली), ३. दिल्ली पिंजरापोल।

हैदराबाद रियासत

१. हैदराबाद।

मैसूर रियासत

१. बंगलोर।

सीमान्त-प्रदेश

१. नौशेरा (पेशावर), २. पेशावर, ३. कोहाट, ४. मर्दान, ५. देरा इस्माइल खाँ।

बलोचिस्तान

१. थाडर।

मध्य-भारत

१. इंदौर, २. मऊ छावनी (इंदौर), ३. रतलाम, ४. सनावद (इंदौर), ५. अनूपशहर (ग्वालियर), ६. उज्जैन (ग्वालियर), ७. कोसरपुरा (ग्वालियर), ८, शाहजहाँपुर (ग्वालियर), ९. खाचरोद (मालवा), १०. बड़ानगर स्टेशन (मालवा), ११. रोहरच (मालवा), १२. जावरा , १३. तल्ल (जावरा), १४. टीकमगढ़ (ओड़छा), १५. जैथारी (रीवाँ रियासत), १६. छतरपुर, १७. सिमथर।

राजपूताना

(अ) अजमेर मेरवाड़ा—

१. अजमेर, २. ब्यावर, १. नसीराबाद, ४. केकड़ी, ५. पुष्कर, ६. किशनवास।

(आ) रियासतें—

जयपुर—१. जयपुर, २. लक्ष्मणगढ़, २. मँडावा, ४. चौसा, ५. रामगढ़, ६. फतेहपुर, ७. नवलगढ़।

जोधपुर—१. जोधपुर, २. डीडवाना, ३. नावाँ, ४. रिसालपुर, ५. लाडनूँ, ६. खारची।

बीकानेर—१. बीकानेर गोशाला, २. बीकानेर पिंजरापोल, ३. रतनगढ़, ४. चूरू, ५. सुजानगढ़, ६. सरदारशहर, ७. सादुलपुर, ८. हनुमानगढ़, ९. नोहर, १०. रेनी (तारानगर), ११. डूँगरगढ़, १२. भीनासर।

जैसलमेर—१. जैसलमेर, २. बाड़मेर।

भरतपुर—१. भरतपुर, २. बैरभुसावर, ३. बयाना, ४. कामबन, ५. खेलरी, ६. पहाड़ी, ७. रूपवास, ८. श्रीगढ़ी।

अलवर—१. अलवर, २. राजगढ़, ३. बटोठरा, ४. रामगढ़।

धौलपुर—१. धौलपुर।

पंजाबकी रियासतें

पटियाला—१. पटियाला, २. धूड़ी, ३. बरनाला, ४. भादुल, ५. भटिंडा, ६. मनसा, ७. धेलीबली।

नाभा—१. नाभा, २. भावल भोजाकी, ३. जंतूल।

भावलपुर—१. अहमदपुर, २. अहमदपुर लंबा।

फरीदकोट—१. कोटकपूरा।

कपूरथला—१. कपूरथला, २. फगवाड़ा।

जींद—१. जींद, २. दादरी चर्खी, ३. सोतिया।

मंडी—१. मंडी।

गायसे पुरुषार्थ-चतुष्टयकी सिद्धि

संस्कृत साहित्यमें पृथ्वी, जल, तेज (सूर्य, चन्द्रमा, किरण), वायु, दिशा, माता, इन्द्रिय और वाणी आदि अनेक अर्थोंमें 'गो' शब्दका प्रयोग देखा जाता है। इनमेंसे कोई भी अर्थ लाक्षणिक नहीं है, सभी 'गो' शब्दके वाच्यार्थ हैं। इन सभी रूपोंमें गोमाता सम्पूर्ण जगत्का कल्याण कर रही है। भगवद्विभूतियोंकी भाँति गौकी विभूतियाँ भी सर्वत्र व्यापक हैं। हम गोमाताके ही अङ्कमें रहते, चलते-फिरते और खेलते हैं। गौसे ही हमें जीवन और जीवन-निर्वाहके साधन प्राप्त होते हैं। गौ ही सुमधुर अन्न, अमृतोपम दूध, शीतल जल और स्वच्छ हवा प्रदान करके हमारे प्राणोंका पोषण तथा शक्ति और स्वास्थ्यका संवर्धन करती है। हमारी आधारशक्ति, प्राणशक्ति और वाक्-शक्ति सब कुछ गौ ही है। इस महिमामयी गौकी सम्पूर्ण विभूतियोंका वर्णन तथा उनका गौरव-गान हम जीवनभर करते रहें तो भी पार नहीं पा सकते। यहाँ केवल धेनु और धरतीके रूपमें प्रतिष्ठित गोविभूतिकी किंचित् महिमापर प्रकाश डाला जायगा।

मूर्खसे लेकर विद्वान्तक सम्पूर्ण जगत्के मानव जो कुछ चाहते हैं तथा जिसकी प्राप्तिके लिये जीवनभर अनेक उपायोंका अवलम्बन एवं अथक परिश्रम करते हैं, उसका नाम है पुरुषार्थ। यह पुरुषार्थ चार भागोंमें विभक्त है—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। विश्वके अखिल जन-समुदायकी समस्त इच्छाएँ इन्हीं चारोंमें केन्द्रीभूत हैं। अपने-अपने अधिकार और योग्यताके अनुसार कोई इनमेंसे एकको, कोई दोको, कोई तीनकी, कोई चारोंकी और कोई केवल अन्तिम पुरुषार्थकी अभिलाषा रखते हैं। उक्त पुरुषार्थोंमें दो लौकिक हैं और दो पारमार्थिक। अर्थ और काम लौकिक हैं तथा धर्म और मोक्ष पारमार्थिक। जिसने क्रमशः लौकिक और पारलौकिक चारों पुरुषार्थोंको हस्तगत किया है, उसीका जीवन सभी दृष्टियोंसे परिपूर्ण माना गया है। जीवनकी इस परिपूर्णताको प्राप्त करनेके लिये गो-सेवा एक प्रधान साधन है। पहले इस बातपर विचार किया जायगा कि गो-सेवासे लौकिक पुरुषार्थोंकी—अर्थ और कामकी प्राप्ति कहाँतक और किस प्रकार सम्भव होती है।

ऊपर यह संकेत किया जा चुका है कि धेनु और धरती एक ही गो-शक्तिकी दो स्थूल विभूतियाँ हैं। अतः इनमें वस्तुतः कोई भेद नहीं है। शास्त्र कहते हैं—गौओंके भीतर सम्पूर्ण देवताओंका वास है और मानव-जगत् धरतीपर टिका हुआ है, यह बात सबको प्रत्यक्ष है। अतः मानवलोककी आधार-शक्तिका नाम धरा या पृथ्वी है और देवलोककी आधारशक्तिको हम गौ कहते हैं। इसीलिये
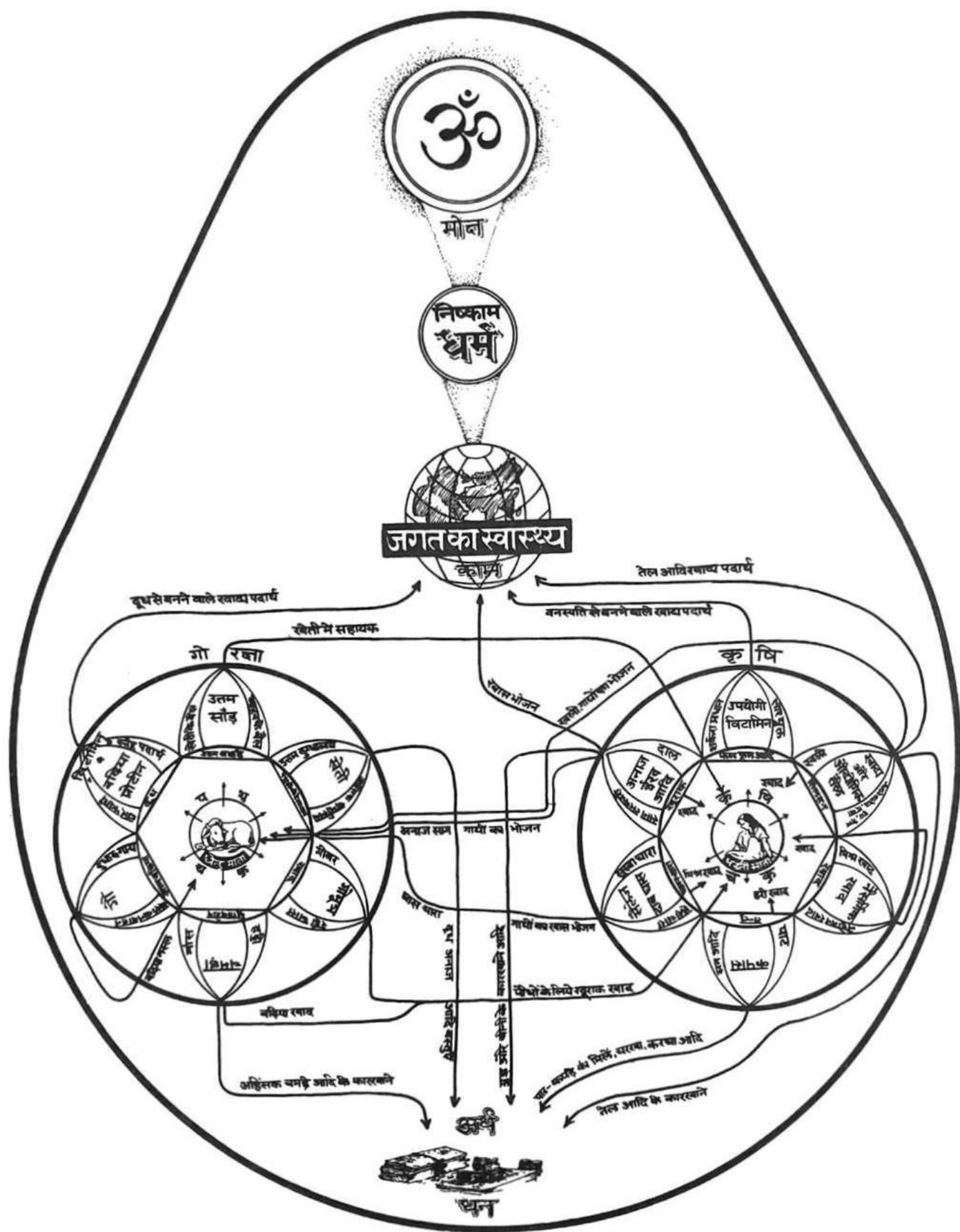
गायसे पुरुषार्थ-चतुष्टयकी सिद्धि

'गोलोक' ऊपर है और 'भूलोक' नीचे। परंतु गोलोकमें भी दिव्यभूमि है और भूलोकमें भी दिव्य शक्तिसम्पन्न गौएँ हैं। इन दोनोंमें घनिष्ठ साहचर्य है। दोनों ही एक-दूसरेको सहयोग प्रदान करती हैं। दूसरे शब्दोंमें हम यह भी कह सकते हैं कि गौएँ ही भूमि हैं और भूमि ही गौएँ। दोनों एक-दूसरीके प्राण हैं। परस्परके सख्य और सहयोगसे ही दोनों कार्य-क्षम होती हैं। एकके क्षीण होनेपर दूसरीका क्षय होना अनिवार्य है। यदि दोनोंके सख्य और सहयोगमें कोई बाधा न पड़े, तभी ये स्वयं समुन्नत होकर जगत्‌के लिये अर्थ और काम प्रस्तुत कर सकती हैं। शास्त्रोंमें भूदेवीको श्रीदेवीकी सहचरी बताया गया है तथा गोदेवीके भीतर भी लक्ष्मीका निवास माना गया है, अतः इनके सेवनसे अर्थ या धन-सम्पत्तिका विस्तार होना स्वाभाविक ही है।

अन्नपर ही जगत्‌के प्राणियोंका जीवन निर्भर है। वह अन्न गेहूँ, धान, फल-मूल, पत्र-पुष्प, घास-चारा, दूध-दही आदि किसी भी रूपमें क्यों न हो, उसके उत्पादनकी आधार-भूमि गौ ही है। 'गौ' से धेनु और धरती दोनोंकी ओर लक्ष्य है। और इसी व्यापक दृष्टिकोणसे गोधनकी अधिक महिमा गायी गयी है। सब प्रकारके अन्नोंको केवल दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—दुग्धान्न और कृष्यन्न। दूध तथा उससे तैयार होनेवाले खाद्य पदार्थोंका नाम 'दुग्धान्न' है। शेष सब अन्न 'कृष्यन्न' के अन्तर्गत समझे जाते हैं। इन दोनोंका पृथक्-पृथक् मण्डल है। जिस मण्डलसे दुग्धान्नका प्रादुर्भाव होता है, उसका नाम 'पशुचक्र' है तथा 'कृष्यन्न' के उत्पादक मण्डलको 'कृषिचक्र' कह सकते हैं। पशुचक्रकी अधिष्ठात्री देवी धेनु माता हैं और कृषिचक्रकी धरती माता। पशुचक्रसे प्राप्त होनेवाले लाभ गोरक्षापर निर्भर हैं और कृषिचक्रसे होनेवाले लाभ कृषिके विकासपर। ये दोनों चक्र सदा एक-दूसरेको शक्ति पहुँचाते हुए विश्वकी सर्वाङ्गीण उन्नतिमें योग देते रहते हैं।

चित्रमें जो 'गोरक्षा' और 'कृषि' नामक दो वृत्त हैं, उनके भीतर ध्यानपूर्वक दृष्टिपात करनेसे पशुचक्र और कृषिचक्रके उपयोग एवं पारस्परिक सहयोगका रहस्य स्पष्टरूपसे समझमें आ जायगा। उक्त दोनों चक्र षड्दल कमलके रूपमें अङ्कित किये गये हैं। पहले पशुचक्रके छहों दलोंका विवरण उपस्थित किया जाता है। ऊपरवाले दलमें धेनु मातासे होनेवाले बछड़ेका उपयोग दिखाया गया है। गायका समुचित रूपसे पालन-पोषण होनेपर वह उत्तम बछड़ा पैदा कर सकती है। बछड़ा आगे चलकर यदि बनाया जाय तो उत्तम साँड़ बन सकता है, जिससे गोवंशकी रक्षा और वृद्धि होगी। यदि बछड़ेको बैल बना लिया गया तो वह खेती और वाहनके काम आ सकता है। इस प्रकार खेतीमें सहायक होकर पशुचक्रके बछड़ेसे कृषिचक्रकी उन्नतिमें योग प्राप्त होता है। दूसरे दलमें पशुओंकी देख-भालका लाभ बताया गया है। पशुओंके आरामसे रहने और पालन आदिकी सुव्यवस्था होनेसे तीन प्रकारके लाभ होंगे। एक तो अच्छा दुधार गायोंके रहनेसे उत्तम दुग्धालयकी स्थापना हो सकती है। देख-भालसे उसमें किसी प्रकारकी गड़बड़का भय नहीं रहता। दूसरे अच्छे बलिष्ठ पशु तैयार होकर खेतीको अच्छे पैमानेपर बढ़ा सकते हैं। तीसरा लाभ यह है कि जो पशु स्वयं अपनी मृत्युसे मरेंगे, उनके चमड़ोंका संग्रह करके एक अहिंसक चर्मालयकी व्यवस्था की जा सकती है। दुग्धालयसे दूधका, खेतीसे अनाजका और चर्मालयसे चमड़ेकी बनी हुई वस्तुओंका व्यापार हो सकता है, जिससे अर्थकी प्राप्ति होगी। तीसरे दलमें खादकी उपयोगिता दिखायी गयी है। पशुओंके गोबर, गोमूत्र और रद्दी घास आदिको एकत्र संग्रह करके उससे अच्छी खाद तैयार की जा सकती है, जो धरतीकी उत्पादनशक्तिको बढ़ाकर और पौधोंके लिये खूराक पहुँचाकर कृषिकी उन्नतिमें योग देगी। चौथे दलमें मृत पशुओंके शरीरके अवशिष्ट भागकी उपयोगिताकी ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है। अक्सर लोग मरे हुए पशु चमार आदिको दे डालते हैं या फेंक देते हैं। यह उसका बहुत बड़ा दुरुपयोग है। मृतावशेष हड्डी और मांसको जमीनमें गाड़ देनेसे बहुत अच्छी खाद तैयार हो सकती है, जो खेतीकी उपजको बढ़ानेमें विशेष सहायक सिद्ध होगी और चमड़ोंका संग्रह करके अहिंसक चमड़े आदिके कारखाने खोले जा सकते हैं, जो आर्थिक उन्नतिके प्रधान साधन हैं। गोरक्षाका व्रत लेनेवाले प्रत्येक विचारशील मनुष्यको ऐसे ही कारखानोंके जूते आदि पहनने चाहिये। पाँचवें दलमें उत्तम बछियासे होनेवाले लाभकी ओर संकेत है। धेनु माताकी दो संतानें हैं—बछड़ा और बछिया। इनमें बछड़ेके उपयोगकी चर्चा

प्रथम दलके वर्णनमें की जा चुकी है। अब बछियाका उपयोग बताया जाता है। उत्तम बछिया आगे चलकर बहुत अच्छी 'गाय' बन सकती है। वह दुधार गाय होकर दूध देगी। स्वयं भी बछिया और बछड़ा पैदा करेगी और उसका दिया हुआ बछड़ा बलवान् वाहन होकर जगत्को सदा लाभ पहुँचाता रहेगा। इस प्रकार वह 'काम' का साधन प्रस्तुत करती हुई पशुचक्रकी उत्तरोत्तर उन्नतिमें लगी रहेगी। छठे दलमें दूधके चमत्कारोंका दिग्दर्शन कराया गया है। वैज्ञानिक अन्वेषक खूब छानबीन करके इस निश्चयपर पहुँचे हैं कि दूधकी जोड़का दूसरा कोई खाद्य पदार्थ संसारमें नहीं है। शरीरको स्वस्थ, सबल और सुपुष्ट बनानेवाले सभी आवश्यक तत्त्व गोदुग्धमें पर्याप्त रूपसे पाये जाते हैं। उसमें ऊँचे दर्जेका विटामिन, स्नेह-पदार्थ, क्षार-पदार्थ और बढ़िया प्रोटीन मौजूद है। ऐसे सुधोपम गुणोंसे युक्त दूध या दूधसे बननेवाले खाद्य पदार्थोंका सेवन करनेसे जगत्के स्वास्थ्यकी रक्षा हो सकती है। स्वास्थ्य-सुधार कौन नहीं चाहता। इस प्रकार धेनु माता पशुचक्र और कृषिचक्रकी उन्नतिके साथ-साथ मनुष्यके 'अर्थ' और 'काम'-रूपी लौकिक पुरुषार्थोंको सिद्ध करती है।

अब कृषिचक्रपर दृष्टिपात कीजिये। इसके भी पूर्ववत् छः दल हैं। ऊपरवाले दलमें, जिसे प्रथम दल समझना चाहिये, धरतीसे उत्पन्न होनेवाले फल-फूल आदिकी उपयोगिता बतायी गयी है। फल-फूल और शाक-आदिमें उपयोगी विटामिनका अंश मौजूद रहता है। उनमें शर्कराकी प्रधानता होती है तथा क्षार-पदार्थकी भी कमी नहीं रहती। इस प्रकार उन्हें बहुत उपयोगी खाद्य माना गया है। ये बनस्पतिसे बननेवाले खाद्य पदार्थ भी संसारके स्वास्थ्य-सम्पादनमें विशेष सहायक सिद्ध होते हैं, इस रूपमें इनसे 'काम' की सिद्धि होती है। दूसरे दलमें तिलहनके लाभोंका उल्लेख है। धरती माता हमारे लिये जो दूसरी उपयोगी वस्तु उत्पन्न करती है, वह तिलहन है। तिलहनसे तेल तैयार होता है। यह खाने और जलानेके भी काममें आता है। इससे इत्र और दवा आदि भी बनते हैं। तिलहनमें जो स्निग्धता है, उसे तेलके रूपमें पृथक् कर लिया जाता है और सीठी बच जाती है। सीठीको खली कहते हैं, जो पशुओंके खानेके काम आती है। तेल आदि खाद्य पदार्थ उचित रूपसे उपयोगमें लेनेपर जगत्के स्वास्थ्यकी रक्षा करते हैं। दूसरी ओर तेलसे उद्योग-धंधोंको प्रोत्साहन मिलता है। तेल आदिके कारखाने चलते हैं। इस प्रकार तिलहनसे अर्थ और काम दोनोंकी सिद्धि होती है। साथ ही यह खलीके रूपमें परिणत होकर पशुचक्रकी भी पुष्टि करता है, क्योंकि खली पशुओंका बहुत उत्तम टानिक खाद्य है। खली खादके काम भी आती है। तीसरे दलमें खादकी चर्चा है। धरतीसे तीन प्रकारकी खाद तैयार होती है—नैसर्गिक खाद, नाइट्रोजन खाद और मिश्र खाद। ये तीनों ही खादें धरतीको अधिक उर्वरा बनाती हैं, इसकी उपजाऊ शक्तिको बढ़ाती हैं और इस प्रकार कृषिचक्रकी उन्नतिमें योग देती हैं। चौथे दलमें तन्तुके गुण दिखाये गये हैं। पाट, कपास और सन आदि तन्तुके अन्तर्गत समझे जाते हैं। इनसे पाट-कपड़ेकी बड़ी-बड़ी मिलों और चरखा-करघा आदि गृहउद्योगोंको प्रश्रय मिलता है, जिससे महान् अर्थलाभकी सम्भावना रहती है। दूसरा फायदा यह है कि पाटसे हरी खाद तैयार होती है, जिससे कृषिचक्रको बल मिलता है। पाँचवें दलमें घास-चारेका उल्लेख है। धरती माता जो घास-चारा आदि उत्पन्न करती है, वह गौओं तथा अन्यान्य पशुओंका खास भोजन है। कुछ कालतक तो हरा चारा पशुओंके उपयोगमें आता है, फिर सूखनेपर भूसा, पुआल या सूखे चारेके रूपमें उसका संग्रह किया जाता है, जो सालभर गौओंके उपयोगमें आता है। साइलेज—दाबघाससे भी पशुओंका पोषण होता है। साथ ही घास-चारेसे मिश्र खाद भी तैयार होती है। इस प्रकार ये घास-चारे पशुचक्र और कृषिचक्र दोनोंके समान रूपसे पोषक होते हैं। छठे या अन्तिम दलमें खुराककी चर्चा की गयी है। धरतीसे गेहूँ, धान आदि अनाज, अरहर, चने आदि दालके काम आनेवाले अन्न, साग-तरकारी और ईख आदि उत्पन्न होते हैं, जो मनुष्योंके तो खास भोजन हैं ही, पशु आदिके भी उपयोगमें आते हैं। अतः एक ओर तो ये पशुचक्रकी पुष्टि करते हैं, दूसरी ओर उत्तम भोज्य प्रस्तुत करके मानव-जगत्का स्वास्थ्य सुधारते और सब तरहकी कामनाओंकी सिद्धिमें सहायक होते हैं। तीसरा लाभ यह होता है कि ईखसे गुड़ और चीनीके कारखाने चलते हैं और अन्नकी मंडीमें अनाजका भी व्यापार होता है, इस प्रकार इन

व्यवसायोंसे महान् 'अर्थ' की सिद्धि होती है।

उपर्युक्त विवेचनसे यह स्पष्ट है कि गोदेवी और भूदेवी परस्परकी सहायतासे सुपुष्ट हो प्राणिमात्रके लिये अन्न और धन प्रस्तुत करती हैं। अन्नसे जगत्का स्वास्थ्य, जो सबको अभीष्ट है, सुरक्षित रहता है और धनसे अर्थ-सुलभ 'काम' की भी सिद्धि होती है। अत: गौ हमारे लिये लौकिक पुरुषार्थोंका—अर्थ और कामका अमोघ साधन है, इस बातमें तनिक भी संदेह नहीं रह जाता। अब पारमार्थिक पुरुषार्थ—धर्म और मोक्षकी सिद्धिमें गौका कहाँतक हाथ है, इस विषयपर विचार किया जाता है। गोदेवीकी कृपाद्वारा स्वास्थ्य और शक्तिसे सम्पन्न जगत् निष्कामधर्मके अनुष्ठानमें समर्थ होता है और उसके द्वारा परम मोक्ष प्राप्त कर लेता है। इस विषयको कुछ अधिक स्पष्ट करनेकी आवश्यकता जान पड़ती है। धर्मका प्रधान साधन है स्वस्थ और नीरोग शरीर*—'**शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्**।' यहाँ धर्म उपलक्षणमात्र है। वास्तवमें सभी पुरुषार्थ स्वस्थ शरीरद्वारा ही साध्य हैं। अत: गोमाता जगत्को स्वस्थ बनाकर अप्रत्यक्षरूपसे सभी पुरुषार्थोंके साधनमें योग देती है। उक्त चार पुरुषार्थोंमें धर्मका ही महत्त्व सबसे अधिक है। उसके साधनसे सभी कुछ सध जाते हैं। वही सकामभावसे करनेपर अर्थ और कामका साधक होता है—'**धर्मादर्थश्च कामश्च**' तथा वही निष्कामभावसे पालित होकर मोक्षकी प्राप्ति कराता है। धनके प्रमुख साधनोंमें कृषि, गोरक्षा और वाणिज्यका ही नाम लिया जाता है। इन तीनोंकी सफलता गोसेवापर ही निर्भर है। आज संसारके सामने सबसे बड़ी समस्या है अन्न और वस्त्रकी। गोदेवीकी उपेक्षासे ही यह जटिल समस्या हमारे सम्मुख उपस्थित हुई है। रूई और अनाज दोनों धरतीसे ही होनेवाली वस्तुएँ हैं, इनकी उत्पत्ति गोपुत्रों—बलिष्ठ बैलोंके ही अधीन है। जिन देशोंमें मशीनोंसे खेती की जाती है, वहाँकी चर्चा हम नहीं करते। भारतवर्षमें तो कितने ही युगोंसे गो-जाति ही अन्न-वस्त्रकी समस्याको हल करती आ रही है। इस मशीनोंके युगमें जब संसारकी व्यापारिक उन्नति बहुत बढ़ी हुई समझी जाती है, सोने-चाँदी सपने हो रहे हैं। किंतु प्राचीन कालमें जब गोधनकी अधिकता थी, प्रतिदिन लाखों गौओंके सींगों और खुरोंमें सोने-चाँदी मढ़कर उन्हें दान कर दिया जाता था। उस समय धर्ममूलक अर्थका ही बाहुल्य था। कामकी प्राप्तिमें भी धर्मका बहुत बड़ा हाथ है। कामनाएँ दो प्रकारकी हैं—अर्थाधीन और दैवाधीन। बाजारोंमें बिकनेवाली सांसारिक सुख-भोगकी वस्तुएँ ही अर्थसे प्राप्त हो सकती हैं। धन किसीको पुत्र नहीं दे सकता, दैवी प्रकोपसे किसीकी रक्षा नहीं कर सकता। ये सब कामनाएँ धर्मसाध्य हैं। धर्मद्वारा उत्तम प्रारब्धका निर्माण करके अथवा कामनासिद्धिके प्रतिबन्धकोंको हटाकर अभीष्ट कामना प्राप्त की जा सकती है। गोसेवासे 'अर्थ' और 'धर्म' दोनोंकी प्राप्ति होती है, अत: उसके द्वारा दोनों तरहकी कामनाएँ सिद्ध हो सकती हैं।

शास्त्रोंमें धर्मका आधिदैविक स्वरूप वृषभ बताया गया है। इस दृष्टिसे गौएँ धर्मकी जननी हैं। भगवान् श्रीकृष्णने तो इन्द्रकी पूजा बंद कराके गो-पूजाका प्रचार किया था, जो अबतक प्रचलित है। उन्होंने स्पष्ट कहा था—'**गावोऽस्मद्दैवतं तात**' (गौएँ हमारे लिये देवता हैं)। जिन्हें भगवान् भी देवता मानें, उनकी महत्ताके विषयमें अधिक क्या कहा जा सकता है। देवपूजाका महत्त्व अधिक है। देवपूजासे किसी एक ही देवताको—जिसकी पूजा की जाती है, उसीको हम प्रसन्न कर सकते हैं, परंतु गौओंकी सेवा और पूजासे सम्पूर्ण देवताओं तथा साक्षात् भगवान्की भी प्रसन्नता प्राप्त होती है, क्योंकि गौओंके प्रत्येक अवयवमें—रोम-रोममें देवताओंका निवास है। गोसेवाके अनेक प्रकार हैं। गौओंके रहनेके लिये उत्तम स्थानका प्रबन्ध करे, जहाँ सर्दी, गर्मी, आँधी और पानीसे उनकी भलीभाँति रक्षा हो सके। भूमि ऐसी हो, जहाँ वे आरामसे बैठ सकें। उन्हें डाँस-मच्छरोंसे बचानेका भी पूरा ध्यान रखे। मौसमके अनुकूल उनके खान-पानकी अच्छी व्यवस्था करे। उनकी प्रत्येक सेवामें स्वार्थको छोड़कर धर्मको ही आगे रखे। ऐसा न हो कि दूध कम देनेके कारण उनकी

* प्रत्यक्ष गो-सेवा तथा गो-सेवा-मूलक (गौ और भूमि तथा उनकी पूजा समस्त प्राणीकी सेवा बने इस) बुद्धिसे जितने भी कार्य होते हैं, उनसे चित्त-शुद्धिरूप मानसिक स्वास्थ्य तथा मनकी सर्वसिद्धिप्रदायिनी एवं परमपुरुषार्थ मोक्षकी ओर ले जानेवाली नीरोगता प्राप्त होती है—यह शास्त्रसिद्ध है।

खूराक ही कम कर दी जाय, उन्हें भूखों रखकर कष्ट दिया जाय। ऐसा करना महान् पाप है। उनके घूमने और चरनेकी अच्छी व्यवस्था हो। उन्हें ठीक समयपर घास-भूसा, दाना और पानी मिलते रहें—इस बातकी ओर पूर्ण ध्यान रखा जाय। उनके शरीरको सहलावे, प्रतिदिन सबेरे-शाम उन्हें प्रणाम करे। रातमें गौओंके ही पास सोये, वहाँ दीपक जलाये। प्रतिदिन रसोईमेंसे पवित्र अन्न निकालकर उन्हें ग्रास अर्पण करे, देवबुद्धिसे उनकी पूजा करे। उन्हें जूँठी अपवित्र वस्तुएँ खानेको न दे। उनके रहने और खाने-पीनेके स्थानको झाड़-बुहारकर साफ रखे। जहाँ गोशाला होती है, गौएँ रहती हैं, वहाँ सभी तीर्थों और देवताओंका वास होता है, अतः उसे देवस्थान समझकर स्वच्छ एवं पवित्र रखे। गौओंको लात न दिखाये, कभी उनपर प्रहार न करे। उनकी ओर थूके नहीं। गौओंके स्थानके समीप मल-मूत्र न करे, गंदगी न फेंके। गौओंकी ओर पैर करके न सोये। पुण्यपर्वके दिन फूल-मालासे अलंकृत करके गौओंकी पूजा करे। उन्हें इतना न दुहे, जिससे बछड़ेको दूध ही न मिले। इस प्रकार सावधानीके साथ गोसेवा करनेवाला मनुष्य धर्मके उत्तम फलको पाता है।

जो लोग स्वार्थ या लोभके वशीभूत होकर गौओंके कष्टकी ओर ध्यान नहीं देते, वे महापापी हैं। जिनके सहयोग या प्रेरणासे गौएँ क़साइयोंके घर पहुँचती हैं, वे अनन्त कालतक नरकोंके कष्ट भोगते हैं। वे कसाई, जो धर्मान्धताके कारण या मोहवश आजीवन इस क्रूरकर्मके द्वारा जीविका चलाते हैं, उनकी परमात्माके दरबारमें कैसी भयंकर दुर्गति होती है—इस बातकी ओर उनका ध्यान नहीं जा रहा है। हिंदू, मुसलमान, ईसाई—कोई भी क्यों न हो, गौएँ सबकी माता हैं। गौओंसे सबका जीवन चलता है। गौओंका दूध सभी पीते हैं और गौओंकी कमाई सब खाते हैं। इतना होनेपर भी जो गोमाताके पालन और रक्षाकी ओर ध्यान नहीं देते, उलटे उनका वध करके उन्हें उदरस्थ कर लेते हैं, वे राक्षसों तथा पिशाचोंसे भी गये-बीते हैं। उन्हें उस ईश्वरीय कोपका सामना करना पड़ेगा, जिससे बढ़कर भयंकर कुछ है ही नहीं। जो लोग फैशनके पुजारी हैं और पैरोंमें मुलायम जूते ही पहनना पसंद करते हैं, उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि उन्हींके कारण आज जूतोंकी फैक्ट्रियोंके लिये अनगिनत बछड़ोंके प्राण इतनी निर्दयताके साथ लिये जाते हैं जिनकी चर्चा करने मात्रसे हृदय काँप उठता है, लेखनी शिथिल हो जाती है। उन्हें इस महापापमें पूरा-पूरा हिस्सा बँटाना पड़ेगा। परलोकमें जब भयानक यमयातना भोगनी पड़ेगी, उस समय यह फैशन उनकी रक्षा नहीं कर सकेगा। अतः गौओंकी सब प्रकारसे सेवा और रक्षा करना ही मनुष्यमात्रका परम कर्तव्य एवं उत्तम धर्म है। वेदों और स्मृतियोंमें गौओंकी बड़ी भारी महिमा गायी गयी है। उनके सेवन और संरक्षणजनित धर्मकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी है।

ऊपर जो कुछ कहा गया है, उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गो-सेवासे अर्थ और कामकी प्राप्तिके साथ ही परम दुर्लभ धर्मकी भी सिद्धि होती है। वह धर्म यदि निष्कामभावसे युक्त हो तो वही चित्त-शुद्धिके द्वारा परम मोक्ष या परमानन्दकी प्राप्ति करा देता है। कोई भी शुभकर्म किया जाय, यदि उसमें आसक्ति, फलेच्छा, अहंता और ममताका अभाव है तो वह गीतोक्त प्रणालीके अनुसार 'कर्मयोग' बन जाता है। तथा उसका अनुष्ठान करनेवाले मनीषी पुरुष जन्म-मृत्युरूपी बन्धनसे मुक्त हो अनामय परम पदको प्राप्त हो जाते हैं—'**जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम्**।' जब सभी शुभकर्मोंकी यह स्थिति है, तब गोसेवाके द्वारा मोक्ष होनेमें क्या संदेह हो सकता है? गोसेवा वेदशास्त्रानुमोदित सर्वोत्कृष्ट दिव्य कर्म है। साक्षात् भगवान्ने भी गौओंकी सेवा तथा आराधना करके उनका महत्त्व बढ़ाया है। उन्होंने उपदेश और आचरण दोनोंके द्वारा गोसेवाका आदर्श हमारे सामने उपस्थित किया है। गोसेवासे भगवदाज्ञाका पालन होता है, अतः गौओंके साथ-साथ भगवान्की भी प्रसन्नता प्राप्त होती है। भगवान्के प्रसन्न होनेपर मुक्तिकी क्या बिसात है जो न मिले। वह तो गोभक्त तथा भगवद्भक्त पुरुषके चरणोंकी दासी बन जाती है। वास्तवमें गोसेवा स्वभावसे ही भगवत्प्रीत्यर्थ कर्म है। उसका अनुष्ठान करनेवाला साधक '**स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः**।' के अनुसार निश्चय ही भगवान्का सांनिध्य प्राप्त करता है। इस प्रकार गोमाता मानव-जगत्को पुरुषार्थ-चतुष्टयकी प्राप्ति करानेमें सर्वाग्रगण्य है, यह जानकर सबको सदा उसकी सेवा तथा रक्षामें संलग्न रहना चाहिये।

श्रीकृष्णलीलाके उपकरणोंमें गाय

[पृष्ठ ५२ से आगे]

अब दूसरे दिनसे राम-श्यामकी वत्स-चारण-लीला नियमितरूपसे प्रतिदिन ही होने लगी। पर जननीके आदेशसे वे दूर नहीं जाते थे—

अविदूरे व्रजभुवः सह गोपालदारकैः।
चारयामासतुर्वत्सान् नानाक्रीडापरिच्छदौ॥

(श्रीमद्भा० १०। ११ ३८)

इसी वत्स-चारणको निमित्त बनाकर भगवान् व्रजराजनन्दनने वत्सासुरका उद्धार किया; बछड़ोंको जल पिलाने जाकर बकासुरको अपने परमधाममें पहुँचाया; वत्स-चारणमें ही संलग्न रहकर अघासुर-मोक्षलीला सम्पन्न की; तथा श्यामसुन्दरकी परम मनोहारिणी ब्रह्म-मोहन-लीला भी इसी वत्स-चारणके प्रसंगसे ही हुई। इस भुवन-पावनी लीला-मन्दाकिनीसे जगत्को पवित्र करनेके उद्देश्यसे ही मानो सर्वलोकैकपाल व्रजराजनन्दन अपने अग्रज दाऊके साथ वत्सपालका वेष स्वीकार कर वत्स-चारण करते हुए वृन्दावनमें घूमते हैं—

तौ वत्सपालकौ भूत्वा सर्वलोकैकपालकौ।
सप्रातराशौ गोवत्सांश्चारयन्तौ विचेरतुः॥

(श्रीमद्भा० १०। ११। ४५)

व्रजराजनन्दन अब वत्सपालसे गोपाल बन गये हैं। पौगण्डमण्डित श्रीअङ्गोंसे एक अभिनव सौन्दर्य झरता रहता है; अग्रज राम एवं सखाओंके साथ गायें चराते हुए वृन्दावनमें घूमते रहते हैं; वृन्दावनकी भूमि उनके चारु चरणतलोंका स्पर्श पाकर कृतार्थ हो रही है—

ततश्च पौगण्डवयः श्रितौ व्रजे
बभूवतुस्तौ पशुपालसम्मतौ।
गाश्चारयन्तौ सखिभिः समं पदै-
र्वृन्दावनं पुण्यमतीव चक्रतुः॥

(श्रीमद्भा० १०। १५। १)

प्रतिदिन यशोदा एवं रोहिणी अपने वात्सल्यपूर्ण हृदयका समस्त प्यार लेकर राम-श्यामका शृंगार करतीं; नवनीत एवं विविध मिष्टान्नोंका कलेवा करातीं, कुछ छींकोंमें भर देतीं; तथा राम-श्याम गायोंको लेकर वनमें चराने जाते। वनमें सखाओंके साथ विविध क्रीडा करते। कभी मदमत्त मधुकरोंका अनुकरण करते हुए गाते, कभी कलहंसोंका कमनीय कूजन सुनकर उसी तरहकी ध्वनि करते, कभी मयूरोंका मनोहर नृत्य देखकर उन्हींकी तरह नाचने लगते। इधर व्रजराजनन्दन तो इन विविध लीलाओंमें मस्त रहते, उधर गायें चरती हुई वनमें दूर चली जातीं। तब खेल छोड़कर श्यामसुन्दर अपने अग्रज एवं सखाओंको सूचना देते, कदम्बपर चढ़कर गायोंका नाम ले-लेकर पुकारते तथा पीताम्बर फहरा-फहराकर उन्हें अपनी ओर बुलाते—

टेरत ऊँची टेर गुपाल।
दूर जात गैया, भैया हो! सब मिल घेरो ग्वाल॥
लै लै नाम धूमरी धौरी मुरली मधुर रसाल।
चढ़ि कदंब चहुँ दिसि तें हेरत अंबुज नयन बिसाल॥
सुनत सब्द सुरभी समुहानी उलट पिछोड़ी चाल।
चत्रभुज प्रभु पीतांबर फेर्‍यो गोबर्धनधर लाल॥

इस प्रकारकी अनेक मनोहारिणी लीलाध्वनियोंसे श्रीगोवर्धनके समीपवर्ती वनप्रान्त, सरित्, तडाग आदि सभी निनादित होते रहते। जिस समय मनमोहन श्यामसुन्दर अपनी बाँसुरीमें स्वर भरते, उस समय तो समस्त वृन्दावन ही एक अनिर्वचनीय रस-सुधा-धारासे प्लावित हो उठता, वनवासी चर-अचर प्राणी उसमें बह जाते।

दिनभर व्रजबालकोंको सुख देकर वनसे गोष्ठ लौटनेकी तैयारी होती। सभी ग्वाल अपनी-अपनी गायें इकट्ठी करते। श्यामसुन्दर भी दूर चरती हुई गायोंको बुलाते—

गोबिंद गिरि चढ़ि टेरत गाय।
गाँग बुलाई धूमरि धौरी, टेरत बेनु बजाय॥
स्त्रवन नाद सुनि मुख तृन धरि सब चितईं सीस उठाय।
प्रेम बिबस ह्वै हूँक मार चहुँ दिसि ते उलटीं धाय॥
चत्रभुज प्रभु पटपीत लिये कर आनँद उर न समाय।
पोंछत रेनु धेनु के मुख तें गिरि गोबर्द्धन राय॥

पिशङ्गि मणिकस्तनि प्रणतशृङ्गि पिङ्गेक्षणे
मृदङ्गमुखि धूमले शबलि हंसि वंशीप्रिये।
इति स्वसुरभीकुलं मुहुरुदीर्णहीहीध्वनि-
र्विदूरगतमाह्वयन् हरति हन्त चित्तं हरिः॥

(उज्ज्वलनीलमणि)

गायें एकत्र हो जातीं तो उनसे अनेक लाड़ लड़ाते। फिर सभी गोष्ठकी ओर गायें हाँककर चल पड़ते। उस समय श्यामसुन्दरकी शोभा देखते ही बनती। सुन्दर अलकावली गोधूलि-कणोंसे मण्डित रहती, उनमें मयूरपिच्छ एवं वनप्रसून बँधे रहते, चितवनमें असीम सौन्दर्य भरा होता, अधरोंपर मधुर मुसकान खेलती रहती, स्वयं बाँसुरी बजाते होते एवं सखा-मण्डली उनकी गुणावली गाती रहती। गायोंकी पंक्तियोंसे श्यामसुन्दर घिरे रहते।

यूथ-की-यूथ व्रजाङ्गनाएँ अपने कोटि-कोटि-प्राणप्रतिम प्रियतमको देखनेके लिये एकत्र हो जातीं। उनकी आकुलदृष्टि गायोंके बीचसे मुड़कर श्यामसुन्दरके पास जा पहुँचती। अश्रु-जल-पूरित नयनोंसे कोई व्रजाङ्गना जब नहीं देख पाती, तब दूसरी संकेत करती—

वे देखो आवत हैं, गिरिधारी।
कछुक गाय आगें अरु पाछें, सोभित संग सखा री॥

श्यामसुन्दरको देखकर समस्त दिनका उनके विरहानलमें जलता हुआ व्रजाङ्गनाओंका संतप्त हृदय शीतल हो जाता।

यह लीलाक्रम प्रतिदिन चलता, पर प्रतिदिन ही एक नये रंगमें ढल जाता। उसीके साथ भूभार-हरणका कार्य भी आनुषङ्गिकरूपसे होता जाता। पहले कालिय-उद्धार हुआ। विषदूषित जल-पानसे मृत गौओं एवं ग्वालसखाओंको अपनी अमृतवर्षिणी दृष्टिसे देखकर व्रजराजनन्दनने जीवन-दान दिया। फिर कालिय-दमनके उद्देश्यसे स्वयं कालियह्रदमें कूद पड़े। लीला-रस-मत्त व्रजराजनन्दनको न पहचानकर कालियने उन्हें अपने फणोंमें बाँध लिया। अपने प्राणधनकी यह आकस्मिक दशा देखकर सखा एवं गायें रो पड़ीं। इतना ही नहीं, समस्त व्रजमण्डल एकत्र होकर कालियह्रदमें कूदकर प्राण देनेको प्रस्तुत हो गया। श्रीकृष्णकी अनन्त कृपाशक्तिके लिये यह असह्य था। दृश्य बदला और दूसरे ही क्षण कालियके फणको व्रजराजनन्दनने चूर-चूर कर डाला। नागपत्नियोंके अनुनय-विनयसे नागने जीवन-दान पाया तथा आज्ञा हुई—'नाग! यहाँसे चले जाओ; यह नदी हमारी गायोंकी, हमारे जनोंकी क्रीडास्थली होगी।'

अग्रज बलरामके द्वारा धेनुकासुर एवं प्रलम्बासुरका उद्धार हुआ। दो बार कंसप्रेरित आसुरी माया श्यामसुन्दर एवं उनके प्रिय व्रजको भस्म करनेके उद्देश्यसे दावानलके रूपमें प्रकट हुई। स्वयं भगवान् व्रजराजनन्दन उसी बालोचित लीला-रसका आस्वाद लेते-लेते उस लप-लप करती दावाग्निको पी गये। ऐसे अद्भुत कृत्योंके समय व्रजराजनन्दनके श्रीअङ्गोंमें तदनुरूप कार्यके लिये किसी विशाल विकराल रूपका आविर्भाव होता रहा हो, ऐसी बात बिलकुल नहीं थी। उनका तो सर्वदा वही मधुर मनोहर नव-जलधर-श्यामल अङ्ग, अरुण अधर, कर-पल्लवोंमें वही हरिद्वेणु—सब कुछ ज्यों-का-त्यों बना रहता। ऐसी लीलाओंका समापन करके भी सन्ध्या-समय वे गायोंको बटोरकर, अपने वदनारविन्दपर उसी स्वभावसुलभ प्रसन्नता, उसी आनन्दमयी शान्तिको लिये, वेणुछिद्रोंसे मधुधाराकी वर्षा करते हुए व्रजमें लौटते—

गाः संनिवर्त्य सायाह्ने सहरामो जनार्दनः।
वेणुं विरणयन् गोष्ठमगाद्गोपैरभिष्टुतः॥

(श्रीमद्भा० १०।१९।१५)

इस तरह गोचारण-लीलाका आनन्द लेते हुए व्रजराजनन्दनको अब दो वर्ष, दस महीनोंसे कुछ अधिक हो गये। पञ्चम वर्षकी कार्तिक शुक्ला अष्टमीको यह गो-चारण-लीला आरम्भ हुई थी। अब इस बार उनके अष्टम वर्षकी शरद्-ऋतु आयी। सप्तम वर्षके प्रारम्भमें ही गोचारण-परायण व्रजराजनन्दन श्रीकृष्णके पौगण्डवयःश्रित श्यामल अङ्गोंके अन्तरालसे कैशोर मानो झाँक-सा रहा था तथा उन्हें देख-देखकर व्रज-युवतियोंके हृदयमें अनुरागका अङ्कुर उत्पन्न होने लगा था। इस अष्टम शरद्ने तो मानो स्पष्ट आह्वान किया एवं आमन्त्रण पाकर व्रजराजनन्दनके नवनीरद श्रीअङ्गोंपर कैशोरने अपनी अनादिसिद्ध सत्ताकी घोषणा करना प्रारम्भ कर दिया—

वयसो विविधत्वेऽपि सर्वभक्तिरसाश्रयः।
धर्मः कैशोर एवात्र नित्यनानाविलासवान्॥

(भक्तिरसामृतसिन्धु)

स्वयं भगवान् व्रजराजनन्दनकी अचिन्त्य लीलामहाशक्ति भी आगेकी लीला-प्रकाशन करनेको उद्यत थी; वयस्क व्रजदेवियोंको वात्सल्यरसकी आनन्दधारामें डुबोकर अब उसे माधुर्यरसकी मन्दाकिनीसे व्रज-सुन्दरियोंको आप्लावित करना था। अतः लीलाशक्तिने भी व्रजराजनन्दनके श्रीअङ्गोंपर उभरते हुए कैशोरका स्वागत ही किया। इसीलिये आज जब शारदीय शृंगारसे सजे हुए वृन्दावनमें गोचारण-लीलारसमें निमग्न श्यामसुन्दर व्रजराजनन्दनकी वंशी बजी—

कुसुमितवनराजिशुष्मिभृङ्गद्विज-
कुलघुष्टसरःसरिन्महीध्रम्　।
मधुपतिरवगाह्य चारयन् गाः
सहपशुपालबलश्चुकूज वेणुम्॥

(श्रीमद्भा० १०। २१। २)

'उस वनके सरोवर, नदियाँ और पर्वत—सब-के-सब सुन्दर-सुन्दर पुष्पोंसे परिपूर्ण हरी-हरी वृक्षपंक्तियोंसे शोभायमान हो रहे थे। मतवाले भौंरे स्थान-स्थानपर गुनगुना रहे थे और तरह-तरहके पक्षी झुंड-के-झुंड अलग-अलग कलरव कर रहे थे। भगवान् श्रीकृष्णने बलरामजी और ग्वाल-बालोंके साथ उसके भीतर घुसकर गौओंको चराते हुए अपनी बाँसुरीपर बड़ी ही मधुर तान छेड़ी।'

तब व्रजयुवतियाँ क्षणभरमें ही कुछ-से-कुछ हो गयीं। उनके हृदयका अनुराग-सिन्धु उमड़ पड़ा तथा उसकी उत्ताल तरङ्गोंमें उनके शरीर, इन्द्रियाँ, मन और प्राण—सभी बह चले। एककी नहीं, सबकी यही दशा थी। सभी एक ही धारामें डूबती-उतराती अपने प्रियतम श्यामसुन्दर व्रजराजनन्दनकी ओर बहती जा रही थीं। लीलाशक्तिकी प्रेरणासे एक गोपीका स्थूलशरीर दूसरीके स्थूलशरीरसे जा सटा, दूसरीका तीसरीके शरीरसे, तीसरीका चौथीसे; इस तरह रस-धारामें बहती हुई व्रज-सुन्दरियोंकी एक गोष्ठी बन गयी। सामने स्वजनों एवं आर्यपथका विशाल पर्वत खड़ा था। प्रेम-रस-पीयूषकी प्रबल धाराके प्रचण्ड वेगसे उसकी भी जड़ हिल गयी। पर एक बार तो उसने उनके शरीरको रोक ही लिया। उनके शरीर उस पर्वतको अभी पार न कर सके। अवश्य ही यह प्रतिरोध भी पर्वतके टूटनेके लिये ही हुआ था। जो हो, उनका शरीर ही रुक सका; उनकी रसमय मन-प्राण-इन्द्रियाँ तो विरह-तापसे वाष्प बन उड़कर कभीकी श्यामसुन्दरके पास पहुँच गयीं और श्यामसुन्दरका मधुर स्पर्श पाकर निहाल होने लगीं। उनके शरीर व्रजमें थे। शेष सब कुछ था अपने जीवनधन श्यामसुन्दरके पास। लीलाशक्तिकी इच्छासे ही उनके स्थूलशरीर एवं व्रजराजनन्दनमें रमे हुए मन-प्राण आदिमें सूक्ष्म तन्तुका-सा सम्बन्ध अवशिष्ट था। इसीके सहारे मानो उनके मन-इन्द्रिय-प्राणोंकी अनुभूति इस स्थूलशरीरमें प्रतिध्वनित होने लगी।

एक व्रजयुवतीके मुखसे यह प्रतिध्वनि सुन पड़ी—'सखियो! नेत्रोंका बस चरम फल यही है कि वनमें गायोंको ले जाते हुए श्यामसुन्दर व्रजराजनन्दन एवं गौरसुन्दर बलरामके मुखारविन्दका मधुपान कर लें।'

कोई प्रतिध्वनि ऐसी थी—'देख सखी! वनमें गाय चराने आकर राम-श्याम कैसी क्रीडा कर रहे हैं। आम्र-पल्लव, मयूर-पिच्छ, पुष्प-गुच्छ एवं कमलोंकी मालासे शृंगार किये हुए दोनों कितना सुन्दर गा रहे हैं।' कुछ गोपियोंके मुखसे सुन पड़ रहा था—'बहिनो! देखो, गायोंको बुलानेके लिये हमारे हृदयधन वंशी बजा रहे हैं। ओह! पता नहीं इस वंशीने कौन-सी कठोर तपस्या की है, जिसके फलस्वरूप यह निरङ्कुश होकर निरन्तर हमारे गोविन्दकी अधर-सुधाका पान कर रही है; यह अधर-सुधा तो हमलोगोंकी ही वस्तु थी।'

वीणाकी झनकारकी तरह कुछ प्रतिध्वनियाँ थीं—'सखियो! वहाँ देखो, गायोंको चराते हुए व्रजराजनन्दन आगे बढ़ रहे हैं; उनके चरणोंके स्पर्शसे वृन्दावनकी भूमि निहाल हो रही है। पृथ्वीदेवीने वृन्दावनको अनन्त कालसे अपने हृदयपर धारण कर रखा है। आज वृन्दावनने भी उसका पूरा प्रतिदान दे दिया।'

कुछके मुखोंमें ये प्रतिशब्द थे—'हरिनियो! तुमलोग धन्य हो। अयाचित अनन्त असीम आनन्द तुम्हें प्राप्त हो गया। श्यामसुन्दर तो वनमें गाय चराने आये थे; पर इसी निमित्तसे तुमलोग अपने पतियोंके साथ रसभरी चितवनके पुष्पोंसे उनकी पूजा करके निहाल हो गयीं। हम अभागिनी इतने निकटसे प्रियतमको कहाँ देख पाती हैं!'

कुछ गोपियोंके कण्ठसे असीम सुन्दर, स्वर्गीय संगीतको भी तुच्छ कर देनेवाली स्वर-लहरी ध्वनित हो रही थी—

'बहिन! इन गायोंको धन्य है। देखो, प्यारे श्यामसुन्दर श्रीकृष्णकी अधर-सुधा वंशीके छिद्रोंसे शब्द बनकर झर रही है और ये गायें घास चरना भूलकर अपने कर्ण-पुटोंसे उस पीयूषका पान कर रही हैं।

आह! इन बछड़ोंकी दशा तो देखो, मातृस्तनोंका दूध मुखमें ज्यों-का-त्यों लिये ये निस्तब्ध खड़े हैं। दूधको कण्ठके नीचे उतारना भूल गये हैं। क्यों न हो! इन गायोंकी, बछड़ोंकी आँखोंकी राह प्रियतम श्यामसुन्दर इनके हृदयमें जो जा पहुँचे हैं, उनके आलिङ्गनका सुख जो इन्हें प्राप्त हो रहा है। देखो, बहिन! इनकी आँखोंमें आँसू छल-छल कर रहे हैं—

गावश्च कृष्णमुखनिर्गतवेणुगीत-
पीयूषमुत्तभितकर्णपुटैः पिबन्त्यः।
शावाः स्नुतस्तनपयःकवलाः स्म तस्थु-
र्गोविन्दमात्मनि दृशाश्रुकलाः स्पृशन्त्यः॥

(श्रीमद्भा० १०। २१। १३)

आम्रकी सुशीतल छायामें स्फटिकनिर्मित वेदीपर पूर्वाभिमुख बैठे श्यामसुन्दर कुछ सोच रहे हैं। घुँघराली कुन्तलराशि कंधोंपर झूल रही है। कुछ क्षण पहले वंशीके छिद्रोंका अँगुलियोंसे मृदु-मृदु स्पर्श करते हुए एक अभिनवरागिनीका संचार कर रहे थे, जिसके मधुर संस्पर्शसे आम्रशाखा, आम्रपल्लवोंसे मधु झरने लगा था। पक्षी अपने कलरवको रोककर नीरव हो गये थे, आँखें बंद किये वंशीनादका पीयूष पान कर रहे थे। पर हठात् व्रजराजनन्दन रुक-से गये थे, अन्यमनस्क-से होकर कुछ विचारने लगे। मानो अपने निराविल प्रेमानन्दके दानमें आत्मविस्मृत हुए व्रजराजनन्दनके सामने उनकी अचिन्त्य लीलामहाशक्तिने भावी कार्यक्रमका चित्रपट ला रखा—

'देव! उधर भी दृष्टि हो, कल होनेवाले इन्द्रयागकी तैयारी प्रारम्भ होने जा रही है। अब इन्द्रका गर्वहरण आवश्यक है। उनपर कृपा करनी ही है।' इसी विचारमें श्यामसुन्दर संलग्न हो गये। इधर सचमुच उसी समय नन्दरायकी आज्ञासे नगारे बज उठे तथा सबको इन्द्रयागके प्रबन्धके लिये आदेश सुना दिया गया।

श्यामसुन्दर उठ खड़े हुए। उनके अरुणिम अधरोंपर मन्द-मन्द मुसकान थी। एक बार गिरिराजकी ओर अपनी दृष्टि डालकर वे गोशालाकी ओर चल पड़े। नन्दरानी अपने लालको ढूँढ़ती फिर रही थीं, गोशालाकी ओर जाते हुए व्रजराजनन्दनको देखकर वात्सल्यभरे स्वरमें पुकारने लगीं—'मेरे नीलमणि! ओ नीलमणि!'

नीलमणि रुक गये। माँने आकर उन्हें उठाकर हृदयसे लगा लिया, फिर मुखचुम्बन किया और सिर सूँघने लगीं। कुछ क्षणों बाद गद्गद कण्ठसे बोलीं— 'नीलमणि! बेटा! आज दीपावली है, मैं दीपोंको थालमें सजाने जा रही हूँ; तू बाबासे आज्ञा लेकर दीप जला दे।'

कहत यशोदा सुनु मनमोहन अपने तात कि अग्या लेहु।
बारौ दीपक बहुत लाड़िले करि उजियारो अपनी गेहु॥

पर नीलमणिके तो प्राण मानो गायोंमें बस रहे थे। नीलमणिने माँके आँचलसे अपना मुख पोंछते हुए कहा—

हँस ब्रजनाथ कहत माता सों धौरी धेनु सिंगारौं जाय।
परमानंददासकौ ठाकुर जेहि भावत है निसिदिन गाय॥

आनन्दमें निमग्न माँ तो दीप सजाने घरकी ओर और प्रेमवितरणमें प्रमत्त व्रजराजनन्दन गौओंको सजाने खिरककी ओर चल पड़े। गायोंका शृंगार हुआ—

स्याम खरिक के द्वार करावत गायन कौ सिंगार।
नाना भाँति सींग मंडित किए ग्रीवा मेले हार॥
घंटा कंठ मोतिन की पटियाँ पीठिन को आछे औछार।
किंकिनि नूपुर चरन बिराजत बाजत बाजत चलत सुढार॥

सूर्य अस्ताचलकी ओर जा रहे थे। संध्याकालीन अरुण रश्मियोंसे गायोंके आभूषण चम-चम करने लगे; व्रजेन्द्रनन्दन बालोचित प्रसन्नतासे भरते जा रहे थे। धौरी, धूमरी, कजरी, पीरी आदिकी शोभा ही मानो इस समय उनके हृदयकी सबसे प्यारी चीज थी। नन्दरानी कुछ देर दीपक सजातीं तथा फिर दासीको सौंपकर अपने नीलमणिका गोशृंगार देखने खिरककी ओर आ जातीं; फिर दीपक सजाने जातीं, फिर लौट आतीं। अन्य व्रजाङ्गनाएँ अपने-अपने प्रासादके गवाक्षरन्ध्रोंसे नन्दनन्दनकी यह लीला देख रही हैं। उनके घर भी दीपावलीका उत्सव है, दीप सजाना परमावश्यक है; पर दीपकी थाली उनके हाथोंमें ही पड़ी रह गयी, प्रस्तर-प्रतिमा-सी निश्चल खड़ी रहकर वे श्यामसुन्दरको देखती ही रह गयीं। कब संध्या हुई, यह भी कितनोंने नहीं जाना; उनके नेत्रोंके सामने तो श्यामसुन्दर गायोंका शृंगार ही कर रहे थे। अभी भी उजेला ही था। अस्तु,

संध्या होते ही दीपोंकी पंक्तियोंसे सारा व्रज जगमग हो उठा। व्रजाङ्गनाओंने सुन्दर शृंगार किया, वे स्वर्णथालोंमें दीपक सजाकर नन्दगृहमें आयीं। व्रजराजनन्दन श्रीकृष्ण-रससारस्वरूपा वृषभानुनन्दिनी श्रीराधाजी भी सखियोंके साथ पधारीं—

गोपिजन जूथ सँग जोरी कुँअर किशोरि, साज सिंगार उर उदित प्रेमावली।
कर कनक थाल भर दीप संजोय, सब चलीं गृह नंद के द्वार संझावली॥

नन्दरानीने वृषभानुनन्दिनीको हृदयसे लगा लिया। कपोलोंका चुम्बन करती हुई नन्दरानीने कहा—लाडिली! विधाताने तुझको एवं मेरे नीलमणिको समान कौशलसे रचा है; तुझे देखते ही मुझे नीलमणिकी स्मृति हो आती है। सच, बेटी! तेरी एवं नीलमणिका मुख सर्वथा एक-जैसा है, तू

तो मेरी ही लाडिली है; नीलमणिकी तरह तुझे देखते ही मेरा हृदय शीतल हो जाता है—

न सुतासि कीर्तिदायाः किन्तु ममैवेति तथ्यमाख्यामि।
प्राणिमि वीक्ष्य मुखं ते कृष्णस्येवेति किं त्रपसे॥*

(उज्ज्वलनीलमणि)

आज वृषभानुनन्दिनीके स्पर्शसे देखते-देखते मैया यशोदाकी एक विचित्र दशा हो गयी। उन्हें दीखता था, मानो लाडिलीके अणु-अणुमें मेरा नीलमणि भरा है, उन्हें अनुभूति हो रही थी कि नीलमणिको ही बाहुपाशमें लेकर बैठी हूँ। मैयाकी आँखोंसे अश्रुधारा बह चली और उससे लाडिलीका सिर भीगने लगा। अभिनन्दपत्नीकी चेष्टासे कहीं जाकर मैयाको बाह्यज्ञान हुआ; मैया निर्णय कर सकीं कि यह कीर्तिदा रानीकी लाडिली राधा है, नीलमणि तो गोशालाकी ओर गया है।

मैयाने बहुत-से मेवे मँगवाये; लाडिलीका आँचल भरने लगीं। आँचल भर जानेपर बहुत-से मिष्टान्न मँगवाये; पासमें ही श्रीकृष्णका पीताम्बर पड़ा था। नीलमणिके लिये प्रतिदिन मैया नूतन पीताम्बर निकालती थीं, कभी-कभी एक ही दिनमें दो-तीन बार पीताम्बर बदला जाता था। नीलमणि दो घड़ी ओढ़कर फेंक देते थे। मैया नया निकालकर पुनः कंधोंपर डालती थी। आज कुछ ही देर पहले पीताम्बर कंधोंपर फेंककर नीलमणि भागे थे, मैयाने नया निकालकर दासीके हाथ ओढ़ाने भेजा था। वही पहला पीताम्बर वहाँ पड़ा था; मैयाने उसीमें विविध मिष्टान्न बाँधकर लाडिलीकी अञ्जलिमें रख दिया। फिर एक मणिजटित मुद्रिका मँगाकर कहा—'लाडिली! मैंने अपने नीलमणिके लिये यह मुद्रिका बनवायी थी, आज मैंने उसे पहनाया था; पर सम्भवतः कुछ बड़ी बन गयी है, उसने कुछ ही देर बाद निकालकर फेंक दिया। तेरी अँगुली तो देखूँ बेटी! यह कहकर लाडिलीकी अनामिकामें मैयाने मुद्रिका डाल दी। मुद्रिका ठीक आ गयी, मानो लाडिलीके नापकी ही बनी हो। मैयाके आनन्दका पार नहीं; पर लाडिलीके सारे अङ्गोंमें कम्पन हो रहा है, प्रस्वेद-कण ललाट एवं कपोलोंपर झल-झल कर रहे हैं।

यशोदा मैया लाडिलीके दाहिने कंधेपर हाथ रखे, नीलमणिको ढूँढ़ने चलीं। नीलमणि खिरकके द्वारपर प्रज्वलित दीपोंकी पंक्ति सजा रहे थे। गायें एवं बछड़े हुमड़-हुमड़कर द्वारके पास आ रहे थे; ग्वाले बहुत चेष्टा करते, पर वे गायें एक नहीं सुन रही हैं। वे तो अपने प्राणधन श्यामसुन्दरका दीपदान देखने आयी हैं और उनका आवाहन पाकर आयी हैं; भला, किसीके रोकनेसे वे कैसे रुकतीं। अतः द्वारके पास गायोंकी अपार भीड़ एकत्र हो गयी। आश्चर्य यह था कि भीतर इतनी उछल-कूद करनेपर भी द्वारके पास आयीं तो वे शान्त हो गयीं; दीप-पंक्तियोंको किसी गाय या बछड़ेने नष्ट नहीं किया।

मैयाने पुकारा—नीलमणि! और नीलमणिने भी सिर घुमाकर देखा। नीलमणिके मुखारविन्दसे अनन्त असीम सौन्दर्यका स्रोत झर रहा है। मैयाने एक बार नीलमणिकी ओर देखा, फिर लाडिलीकी ओर; फिर आँखें मूँद लीं। नीलमणिके नेत्र भी अपने-आप बंद हो गये; लाडिलीकी आँखें भी न जाने कब बंद हो गयी थीं। मैयाके पीछे-पीछे यूथ-की-यूथ व्रजाङ्गनाएँ दौड़ी आयी हैं, सभी अपलक नेत्रोंसे यह सुन्दर दृश्य देख रही हैं। पर गायें जोर-जोरसे हम्बारव करने लगीं।

कुछ क्षण बाद मैया, लाडिली एवं व्रजाङ्गनाओंको व्रजराजनन्दनने घूम-घूमकर गायोंका श्रृंगार दिखाया। व्रजाङ्गनाएँ मन-ही-मन गायोंके भाग्यकी सराहना कर रही हैं। गायोंका श्रृंगार देखने कुछ देरके लिये स्वयं नन्दरायजी भी आये। पर नीलमणिकी मङ्गलकामनासे ही आज वे इन्द्रयागकी व्यवस्थामें संलग्न हैं; इसलिये कुछ क्षण ही ठहरकर, नीलमणिको हृदयसे लगाकर, सिर सूँघकर लौट गये। व्रजराजनन्दन श्यामसुन्दर अपने पिताको लौटते देखकर कुछ सोचते हुए-से मुसकराने लगे।

अतिशय उमंगसे व्रजगोपोंने दीपावलीका उत्सव मनाया। आज समस्त व्रजमें जागरण है, सर्वत्र बाजे बज रहे हैं। पर व्रजरानी अपने नीलमणिको दुग्धधौत उज्ज्वल सुकोमलतम शय्यापर लिटाकर सुलानेकी चेष्टा कर रही हैं। नीलमणि आज ७ वर्ष २ महीने ७ दिनके थे, पर वात्सल्यरससाररूपा व्रजरानीके लिये दुधमुँहे शिशु-जैसे ही थे। प्रतिदिनकी तरह मैया आज भी कहानी सुनाकर, गीत गाकर, थपकी देकर सुलानेका प्रयास कर रही हैं; पर श्यामसुन्दरकी आँखोंमें आज नींद नहीं। रात्रि डेढ़ पहरसे

* मैं तुझसे सच कहती हूँ—तू कीर्तिदादेवीकी बेटी नहीं, मेरी ही लाडिली है। मैं जैसे कन्हैयाका चन्द्रमुख निहारकर जीती हूँ, वैसे ही तेरा भी मुखड़ा देखकर जीती हूँ। फिर तू लजाती क्यों है?

अधिक बीत चुकी है। नन्दभवनके तोरणद्वारके पास वन्दिजन गा रहे हैं—

जयति ब्रजपुर सकल खोरि गोकुल अखिल
तरनितनया निकट दिब्य दीपावली।
जयति नवकुंजबर द्रुम लता पत्र प्रति
मानो फूलीं नवल कनक चंपावली॥
जयति गोबिंद गोबृंद चित्रित करे,
मुदित उमड़ी फिरै ग्वाल-गोपावली।
जयति ब्रज ईस के चरित लख थकित सिव,
मोहे बिधि, लज्जित सुरलोक-भूपावली॥

जब रात्रि एक पहर अवशिष्ट रही, तब कहीं व्रजराजनन्दन सोये। फिर भी बीच-बीचमें चौंक-से पड़ते थे, मानो कुछ स्वप्न देख रहे हों। नन्दरानी चिन्तित थीं, कहीं मेरे नीलमणिको किसीकी नजर तो नहीं लग गयी। मैया दृष्टिदोषनिवारणके उद्देश्यसे धौरी गायको लानेके लिये कहने गयीं। व्रजराजनन्दन-स्वप्नावेशमें बोल रहे थे—'लाडिली! मेरी धौरीका शृंगार देखो।' उसी समय धौरी शयनागारमें पहुँची। माताने धौरीकी पूँछका अपने नीलमणिके अङ्गोंसे स्पर्श कराया, फिर उसे अपने लालके चारों ओर तीन बार घुमाया। धौरी प्रेममें विह्वल-सी हुई स्तब्ध-शान्त खड़ी रहकर यशोदाके नीलमणिकी शोभा निहार रही है और श्यामसुन्दर स्वप्नमें ही कह रहे हैं—'अहा! आज मेरी धौरी कितनी सुन्दर दीखती है।'

कार्तिक शुक्ला प्रतिपदाका प्रभात है। स्वयं भगवान् व्रजराजनन्दनकी अचिन्त्य लीलामहाशक्तिने आज वृन्दावनके रङ्गमञ्चको एक नये साजसे सजा दिया तथा सर्वथा अभूतपूर्व दृश्य प्रारम्भ हुआ। शारदीय मन्द समीरके झोंकोंसे तरुकिसलय कम्पित हो रहे हैं, तरुशाखाओंपर बैठे हुए पक्षियोंके मधुर कलरवसे वन निनादित हो रहा है, मानो वनकी अधिष्ठात्री वृन्दादेवी किसलय-संचालन तथा पक्षिकलरवके मिससे नृत्य करती हुई गा रही हैं, नये दृश्यका मङ्गलाचरण कर रही हैं। अचानक पट-परिवर्तन हुआ और दृश्य सामने आ गया।

स्तूपाकार यज्ञसम्भारके निकट खेलते हुए राम-श्याम दोनों आ पहुँचे। चपल नन्दनन्दन एवं बलरामने कुछ वस्तुएँ उठाकर देखना चाहा कि ये क्या हैं। पर जननीने हाथ बढ़ाकर दोनोंको पकड़ लिया और बोलीं—'मेरे लाल! आज यज्ञ है, यह देवान्न है। तेरे बाबा एवं ब्राह्मण इस अन्नसे यज्ञ करेंगे। तू खेलकर आ रहा है, तुझे इनका स्पर्श नहीं करना चाहिये।' व्रजराजनन्दन स्थिर खड़े होकर आश्चर्यचकित नयनोंसे द्रव्यसम्भारकी ओर देखने लगे। पर अब व्रजराजके लिये द्रव्यसम्भारमें मनोयोग देना कठिन हो गया। प्राणोंमें एक विद्युत्-सी दौड़ उठी—एक बार अपने लालको हृदय लगाकर उसे प्यार कर लूँ, आह! कैसी भोली चितवनसे वह मेरी ओर देख रहा है!

नन्दराय मानो खिंचे हुए-से द्रव्यस्तूपोंके बीचसे निकल आये। निकट आकर राम-श्यामको गोद लेकर उन्होंने छातीसे लगा लिया। नन्दरायके बाहुपाशोंमें बँधे दोनों भाइयोंके नेत्र खिल उठे। एक क्षणके लिये बंकिम दृष्टिसे परस्पर दोनों भाइयोंने एक-दूसरेको देखा, मानो कुछ संकेत-सा कर रहे हों। फिर दूसरे ही क्षण अनन्त मधुधाराकी वर्षा-सी करते हुए व्रजराजनन्दनने पूछा—'बाबा! आज क्या है, किसका यज्ञ है, यज्ञ कैसे होता है, उसका क्या फल होता है? तुम्हें तो किसी बातकी त्रुटि नहीं, तुम यज्ञ किसलिये करते हो?' एक साथ ही नन्दके प्राणधनने प्रश्नोंकी झड़ी लगा दी—

कथ्यतां मे पितः कोऽयं सम्भ्रमो व उपागतः।
किं फलं कस्य चोद्देशः केन वा साध्यते मखः॥

नन्दरायने मन-ही-मन एक बार इन्द्रको नमस्कार किया। फिर 'मेरे लाल! यह वर्षाधिदेव भगवान् इन्द्रका यज्ञ है।' यह कहकर वे अपने प्राणधनको यज्ञकी कर्तव्यता बताने लगे। व्रजराजनन्दन दोनों हाथोंसे अपने बाबाके बायें कंधेको पकड़े हुए गोदमें चढ़े-चढ़े ही सुन रहे थे। नन्दरायने बात समाप्त ही की थी कि चटपट व्रजराजनन्दन बोल उठे—'बाबा! रात मैंने एक स्वप्न देखा है—'

आज एक सपनें कोउ आयो। संख चक्र भुज चारि बनायो॥
मोसों यह कहि कहि समुझायो। यह पूजा किन्ह तुम्हहि सिखायो॥
सूर स्याम कहि प्रगट सुनायो। गिरि गोबर्द्धन देव बतायो॥

x x x

यह तब कहन लगे दिवराई। इंद्रहि पूजें कौन बड़ाई॥
कोटि इंद्र हम छन में मारैं। छन ही में पुनि कोटि सँवारैं॥
जाके पूजें फल तुम पावहु। तो देवहि तुम भोग लगावहु॥
तुम आगे वह भोजन खैहै। मुख माँगे फल तुमको दैहै॥

व्रजराजनन्दनका स्वप्न सुनकर सभी गोप चकित हो उठे। सभी अपना-अपना अनुमान लगाने लगे। हठात् श्यामसुन्दरका मुख एक अनिर्वचनीय तेजसे उद्दीप्त हो उठा, उनके मुखसे शास्त्र-वचन निकलने लगे; सबका सारांश था—

इन्द्रयागके स्थानपर गो-यज्ञ, ब्राह्मण-यज्ञ, गोवर्द्धन-यज्ञ करो! नीलमणिको इस प्रकार परम विद्वान्‌की तरह तर्कसमन्वित युक्तियोंसे इन्द्रयागका खण्डन करते देखकर सब-के-सब आश्चर्यमें पड़ गये। सन्नन्दने अनुभव किया—'एक नील तेज:पुञ्ज यशोदाके नीलमणिके चारों ओर छिटका हुआ है।' अत: परस्परके परामर्शसे यह निष्कर्ष निकला कि 'साक्षात् आदिपुरुष नारायणने ही नीलमणिके मुखसे ऐसी आज्ञा दी है। जिस नारायणने अबतक व्रजके प्राणधन नीलमणिकी अनेक विपत्तियोंसे रक्षा की, उनकी आज्ञा ही सर्वमान्य है।' इसी निश्चयके अनुसार उसी क्षण इन्द्रयागका प्रयत्न गोवर्द्धनयागके रूपमें परिणत हो गया। गिरिराजके चरणतलमें समस्त व्रज एकत्र होने लगा। दो घड़ियोंमें ही पर्वतराजका चरणप्रान्त अनन्त गो-गोप एवं गोपाङ्गनाओंसे परिपूर्ण हो गया।

यथासमय स्वस्त्ययनपूर्वक गिरिराजकी विधिवत् पूजा आरम्भ हुई। अन्न, व्यञ्जन आदि स्तूपाकार सजा दिये गये। व्रजराजनन्दनके परामर्शसे सभी गोप एकचित्त होकर प्रत्यक्ष प्रकट होनेकी आशासे गिरिराजकी उपासनामें—

बिनती करत सकल अहीर।
कलस भरि भरि ग्वाल लै लै सिखर डारत छीर॥
चल्यो बहि चहुँ पास ते पय सुरसरी जल ढारि।
बसन भूषन लै चढ़ाए भीर अति नर-नारि॥
मूँदि लोचन भोग अरप्यो प्रेम सों रुचि भारि।
सबनि देख्यो प्रकट मूरति सहस भुजा पसारि॥
रुचि सहित गिरि सबनि आगे करनि लै लै खाय।
नंदसुत महिमा अगोचर सूर क्योंकर गाय॥

गिरिराजने सचमुच सबके भोगको प्रत्यक्ष प्रकट होकर स्वीकार किया, सबका मनोरथ पूर्ण किया। मेघगम्भीर शब्दोंमें नन्दराय और नन्दरानीसे गिरिराजने वर माँगनेका आदेश दिया। श्रद्धाञ्जलि अर्पण करते हुए नन्दरायने कहा—

कहत नंद सब तुमही दीनो, माँगत हौं हरि की कुसलाई।

और नन्दरानी बोलीं—

सदा तुम्हारी सेवा करिहौं, और देव नहीं करौं पुजाई।
सूर स्यामको नीके राखौ कहति महरि ये हलधर भाई॥

गिरिराज 'एवमस्तु' कहकर बोले—

और कछू माँगहु नँद मोसों।
जो चाहौ सो देहुँ तुरत ही कहत सबै गोपन सों॥
बल मोहन दोऊ सुत तेरे कुसल सदा ये रैहें।
बाढ़ैं सुरभी बच्छ घनैरै चर तृन बहुत अघैहें॥
इन के कहें करी मम पूजा, अब तुम सब घर जाहु।
भोग प्रसाद लेहु कछु मेरो, गोप सबै मिलि खाहु॥

श्रीगोवर्द्धनका प्रत्यक्ष दर्शन गोपोंके लिये असाधारण बात हुई; सबको दृढ़ विश्वास हो गया कि वास्तवमें श्रीआदिपुरुष नारायणकी इच्छा ही व्रजराजनन्दनमें अभिव्यक्त हुई थी। लीलाशक्तिकी इच्छासे गोप यह तो नहीं ही समझ पाये कि यशोदाके नीलमणि ही स्वयं आदिपुरुष पुरुषोत्तम भगवान् हैं। इस ज्ञानकी आवश्यकता भी नहीं थी; क्योंकि वैसा होनेपर तो मधुर लीलारस-सिन्धुमें निमग्न व्रजगोपोंकी रसानुभूति विच्छिन्न हो जाती। जो हो, अब गोवर्द्धनयागके अनन्तर श्रीकृष्णकी प्रिय गायोंका सत्कार आरम्भ हुआ—

ततश्च सर्वोऽपि विस्रब्ध: परमप्रेमभाजनगोसभाजनमारब्धवान्। (श्रीगोपालचम्पू)

गायोंका शृंगार तो सात पहर पूर्वसे होने लगा था—विशेषत: व्रजराजनन्दन श्यामसुन्दरकी गायोंकी वेश-भूषा तो आज देखने ही योग्य थी। सबके सींग सोनेसे मढ़ दिये गये थे; इन स्वर्णिम शृंगोंसे उनका सौन्दर्य शतगुणित हो गया था; उज्ज्वल रजतपत्रोंसे मढ़े हुए खुर चमक रहे थे; प्रत्येकके गलेमें मणिमुक्तानिर्मित हार लटक रहे थे; सबको किङ्किणी पहना दी गयी थी; वे घूम रही थीं तथा किङ्किणीका झन-झन शब्द गिरिराजके वन-प्रान्तरमें गूँज रहा था—

स्वर्णनिर्मितविषाणसुरूपा
रूप्यसंवृतखुरा धृतहारा:।
किङ्किणीप्रकरझंकृतियुक्ता
नैचिकीनिचितयो रुचिमाञ्चन्॥

(श्रीगोपालचम्पू)

इन गायोंकी भी पूजा की गयी। सुकोमल तृणांकुर एवं विविध पक्वान्न भोजनके लिये दिये गये; इनके बछड़े आज इनके पास ही छोड़ दिये गये। उनके आनन्दकी सीमा न थी। भोजन करती हुई ये गायें स्नेहवश क्षण-क्षणमें श्रीकृष्णकी ओर सिर उठा-उठाकर देख लेती थीं। श्रीकृष्ण दीख जाते तो पुन: चरने लग जातीं। पर यदि नहीं दीखते तो ग्रास लेना स्थगित कर देतीं। जैसे किसी प्रियवियोगमें उपरामता आती है, भोगोंकी ओर दृष्टि नहीं जाती, वैसे ही श्रीकृष्ण ज्यों ही आँखोंसे ओझल हुए कि ये गायें भोजन

आदि सब छोड़कर व्याकुल हो जातीं तथा हम्बारवके रूपमें आर्तनाद करने लगतीं—

लब्धार्चाश्चारुवेषैः शबलितवपुषः प्राप्तभोगावलीका
वत्सैः पृक्ताः प्रमोदं पृथुतरमभजन् धेनवः सत्यमेव।
किन्तु श्रीकृष्णदृष्टिप्रमदवलयिता यर्हि तर्ह्येव नो चेत्
केचिद्यद्वद्व्रजन्ते मधुरविधुरतः संस्कृतं षाडवादि॥

(श्रीगोपालचम्पू)

कुछ गोपोंकी गायोंने उनके हाथसे चारा-दाना नहीं लिया, तब वे व्रजराजनन्दनके पास दौड़े आये और बोले—बेटा नीलमणि! इस चारेको तू तनिक अपने हाथसे छू दे, तेरे हस्तकमलोंकी सुगन्धका संधान पाकर वे गायें अतिशय प्रीतियुक्त होकर चारा खाने लग जाती हैं—

गोपा ऊचुः कृष्ण गोग्रासमेतं हस्ताम्भोजस्पृष्टमीषत्कुरुष्व।
तत्सौगन्ध्यप्राप्तसंधानमेनं गावः सुष्ठुप्रीतितः स्वादयन्ते॥

(श्रीगोपालचम्पू)

इस प्रकार गायोंकी तृप्ति सम्पादन करनेके बाद गायोंका कौतुक आरम्भ हुआ। अनादि परम्परासे नन्दव्रजमें यह गो-सम्भ्रमका कौतुक होता आया है। इस वर्ष भी आरम्भ हुआ। व्रजराजनन्दन श्यामसुन्दर एवं अग्रज बलरामका संकेत पाकर उनके सखा गायोंको विविध चेष्टाओंसे बिझुका देते और गायें पूछँ उठाकर कूदती-फाँदती हुई नृत्य करने लगतीं—

कूकें देत जात कानन पर ऊँची टेरन नाम सुनावत।
सुंदर पीत पिछोरी ले ले मुख पर फेर सबन बिझुकावत॥
काहू कौ बछरा काहू को ले ले आगे आन दिखावत।
पूँछ उठाय सूधि ह्वै भाजत आप हँसत और सबन हँसावत॥
फिर चुचुकार सूधि कर भाजत बछरन अपने हाथ मिसावत।
श्रीबिट्ठल गिरिधर बलदाऊ इति बिधि अपनी गाय खिलावत॥

एक ओर राजा वृषभानु गायोंको खेला रहे थे, दूसरी ओर अन्य गोपोंकी मण्डली थी; बीचमें थे यशोदाके नीलमणि। उमंगमें भरकर अब नीलमणि स्वयं गायोंको बिझुका रहे थे—

आप गुपाल कूक मारत हैं गोसुत कों भर कोरी।
धों धों करत लकुट कर लीने मुख पर फेर पिछोरी॥

धौरी प्रतीक्षामें थी कि कब मेरे प्राणधन श्यामसुन्दर आकर मुझे खेलाते हैं; इतनेमें श्यामसुन्दर आ गये, धौरीकी उत्कण्ठाका क्या कहना—

खेलन कों धौरी अकुलानी।
ठाढ़ मेल सनमुख आतुर ह्वै नंदनँदन की सुन मृदु बानी॥

धौरी आनन्दातिरेकसे नाच उठी—

बड़रे गोप चकित भए देखत ऐसी कबहुँ न सुनी कहानी।
नाचत गाय भई नौतम ब्रज बरसों बरस कुसल यह जानी॥

धौरीको खेलते देखकर मानो धूमरिको ईर्ष्या हुई; उसने निश्चय कर लिया कि प्रथम स्थान आजके खेलमें मेरा होगा। हुंकार करती हुई श्यामसुन्दरके सामने आयी; मानो प्रणयरोषसे भरकर श्यामसुन्दरको उपालम्भ दे रही थी कि आज मेरी पुचकारमें इतना विलम्ब क्यों? व्रजराजनन्दन हँस पड़े; धूमरिको खेलाने लगे। सचमुच धूमरिने सबको मात कर दिया—

सब गायन में धूमरि खेली।
स्त्रवन पूँछ उचकाय सूधि ह्वै ग्वाल भगावत फिरत अकेली॥

धूमरिको सँभालना कठिन हो गया। किसीका साहस नहीं था कि धूमरिको स्पर्श करे। अतः व्रजराजनन्दन हँसते हुए आगे बढ़े—

पकरि लई गोपाल आप ही कंठ बनावत सेली।
चुंबत मुख आँको भर भेटी टेर कहत लाओ गुर भेली॥

इस खेलमें आज सबने यह एक आश्चर्य अनुभव किया कि गायोंके समक्षसे जब श्रीकृष्ण हट जाते थे, तभी गायोंको अपने बछड़ोंकी स्मृति होती थी और बछड़ोंको दूर हटानेपर वे व्यग्र होतीं। अन्यथा श्रीकृष्णके सामने रहनेपर तो वे मानो सर्वथा श्रीकृष्णमय ही हो जातीं, उन्हें और कुछ भी ज्ञान नहीं रहता था। यह उनकी प्रत्येक चेष्टासे स्पष्ट हो रहा था—

यदा मुदा याति हरिः परोक्षतां
गवां तदा ता निजवत्सकृष्टितः।
व्यग्रीभवन्ति स्म यदा समक्षतां
यात्येष यान्ति स्म तदा तदात्मताम्॥

(श्रीगोपालचम्पू)

समय अधिक हो गया था। गायें खेलमें उन्मत्त हो गयी थीं। नन्दकी आज्ञासे गोपोंने उन्हें एकत्र करनेकी अथक चेष्टा की, पर सब व्यर्थ। व्रजराज चिन्तित हो उठे। यशोदाके नीलमणिने पिताके चिन्तित मुखकी ओर देखा; फिर होठोंपर मुरली रखकर उसमें सुर भरने लगे। एक क्षणमें गोवर्द्धनका समस्त वनप्रान्तर मुरलीरवसे झंकृत हो

उठा। व्रजाङ्गनाओंके नेत्र बंद हो गये, सभी बाह्यज्ञानशून्य हो गयीं तथा अपार गोराशि जहाँ जैसे थी, स्थिर शान्त खड़ी हो गयी—

गोवर्द्धनाचलमहस्य युतादियूथ-
गोरोधनाय पशुता न हि तत्र शेकुः।
फूत्कारकेलिकलया मुरली मुरारे-
रासीदलं यदसकौ गुणकोटिकल्पा॥

(श्रीगोपालचम्पू)

गोप इस बार जब गायोंको पकड़ने चले, तब प्रतीत हुआ मानो गायोंके मन:प्राण किसी दूसरे राज्यमें हैं, उनके शरीरको कोई कहीं भी खींच ले जाय। गोपोंने बिना परिश्रम गायोंको एकत्र कर लिया।

इसके बाद ब्राह्मणभोजन आदि अन्य समारोह सम्पन्न करके व्रजराजने गोवर्द्धनकी परिक्रमाका आदेश दिया। आगे-आगे गोपंक्ति, उनके पीछे राम-श्याम, फिर ब्राह्मण, फिर नन्द-यशोदा आदि, उनके पीछे परिजन, फिर अन्य गुरुजनपत्नियाँ, फिर व्रजाङ्गनाओंका यूथ, व्रजाङ्गनाओंके पीछे दासियाँ, उनके पीछे व्रजके अन्य प्रमुख व्यक्ति तथा अन्तमें अपार जनता—इस क्रमसे गिरिराजकी परिक्रमा प्रारम्भ हुई। व्रजाङ्गनाओंके नेत्रोंमें तो प्रियतम श्यामसुन्दर छाये हुए थे। उन्हें पथ नहीं दीख रहा है, पथके स्थानपर प्राणधन श्यामसुन्दरकी लीला दीख रही है; उन्हींमें तन्मय हुई लीला गाती हुई वे चल रही हैं। परिक्रमा आरम्भ होकर समाप्त भी हो गयी, सभी व्रजकी ओर लौट रहे हैं; पर व्रजाङ्गनाएँ उसी तरह स्वर-में-स्वर मिलाकर लीला गाती हुई चल रही हैं—

गिरिपूजेयं विहिता केन ? अरचि शक्रपदमभयं येन॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? पूतनिका सा निहता येन॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? तृणावर्ततनुदलनं येन॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? यमलार्जुनतरुमुदकलि येन॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? वत्सवकासुरहननं येन॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? व्योमाघासुरमरणं येन॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? कालियदमनं कलितं येन॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? खरप्रलम्बकशमनं येन॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? दवयुग्मं परिपीतं येन॥

(श्रीगोपालचम्पू)

'यह गोवर्द्धन-पूजा किसने की ? जिसने इन्द्रलोकको भयशून्य बनाया, जिसने उस पूतनाका वध किया, तृणावर्तका मर्दन किया, जोड़वाँ अर्जुनके वृक्षोंको जड़से उखाड़ दिया, वत्सासुर और बकासुरका हनन किया, व्योमासुर और अघासुरका वध किया, कालियनागका दमन किया, धेनुकासुर एवं प्रलम्बासुरका विनाश किया और दो बार दावाग्निका पान किया, उसीने यह पूजा की है।'

अञ्जलि बाँधे देवराज खड़े हैं। कमलयोनि भी गम्भीर चिन्तामें निमग्न हैं। देवराजके मुखपर अतिशय क्लान्ति है। सारा गर्व चूर-चूर हो गया है। सोचा था—समस्त व्रजको क्षणभरमें बहा दूँगा, व्रजका चिह्नतक अवशिष्ट नहीं रहेगा; इस मर्त्य श्रीकृष्णके साथ ही नन्द, नन्दके परिवार, नन्दके अगणित बन्धु-बान्धव, असीम गोराशि—सभी जलके अतल-तलमें सदाके लिये विलीन हो जायँगे। मेरे स्थानपर अपनी पूजा करानेवाला यह गोवर्द्धनपर्वत भी चूर्ण-विचूर्ण होकर अनन्त जलराशिके प्रवाहमें कहाँ-से-कहाँ बह जायगा। जगत् देखेगा, मेरी अवज्ञाका क्या परिणाम होता है। पर सुरराजका यह गर्व धूलिमें मिल गया। संवर्तक मेघ श्रीहत होकर व्रजसे लौटे।

शुक्ला तृतीयाको वर्षा आरम्भ हुई थी। पहले संवर्तकने भी सोचा था—सागरकी उत्ताल तरङ्गोंकी-सी जलराशिमें बस, व्रज समाप्त होने जा रहा है। व्रजवासियोंके करुण नादका यह अन्तिम क्षण है। पर देखते-ही-देखते श्याम तमालकी-सी अङ्गकान्तिका एक बालक आया, मानो खेलने जा रहा हो। इसी तरहसे उसने सहज ही हाथ बढ़ाया और दूसरे ही क्षण विशाल गोवर्द्धनपर्वत भूमिसे विच्छिन्न होकर आकाशमें जा उठा। संवर्तकोंने झाँककर देखा, उसके नीचे वही तमाल-श्यामल बालक खड़ा-खड़ा हँस रहा है। उसकी एक भुजा ऊपरको उठी है तथा उसकी कनिष्ठिकापर पर्वतराज छत्राकपुष्पकी तरह टिका है। बालक पुकार रहा है—'ओ बाबा, री मैया, री ग्वालिनो! यहाँ इसके भीतर आओ; यह देखो, गिरिराज हमारे हाथके ऊपर उठ गये हैं। सभी इनके नीचे चले आओ। सभी गायोंको हाँक लाओ, डरो मत; गिरिराजने तुम्हारी रक्षाके लिये ही भूमिगर्त बना डाला है। जितने दिन वर्षा हो, इसमें सुखसे रहो। मेरे हाथसे पर्वतके गिरनेकी किञ्चित् भी आशङ्का मत करो।' बालकका आवाहन पाकर देखते-ही-देखते समस्त व्रजवासी, समस्त गोराशि, सम्पूर्ण व्रज ही उस गिरिगर्तमें जा घुसा; बाहर केवल निर्जन वनमात्र बच रहा, जिसपर मुसलाधार वृष्टि हो

रही है। संवर्तकगण चाहते थे कि एक बार फिर झाँककर देखें, गिरिगर्तके अन्तर्देशकी अवस्थाका परिचय प्राप्त करें। पर उनकी आँखोंके सामने एक अँधेरा-सा छा गया। उनके अङ्गोंसे अनवरत संचारित विद्युत्-रश्मि भी उन्हें प्रकाश न दे सकी। वे अब कुछ भी नहीं देख सके। हाँ, गिरिगर्तमें प्रविष्ट होते समय व्रजवासियोंका आनन्दकोलाहल उन्हें स्पष्ट सुन पड़ रहा था; व्रजवासी झाँककर भीतर देखते थे तथा आनन्दमें भरकर अपने साथियोंको उस विशाल गर्तका अनुभव सुनाते थे। वह ध्वनि उनके कानोंमें पड़ रही थी—

सुविन्यस्तनिःश्रेणिलब्धप्रवेशं
मणिश्रेणिविद्योतमानप्रदेशम्।
गृहस्येव रत्नाङ्गभित्तिप्रकारं
तदूर्ध्वं च तत्तुल्यशोभाप्रचारम्॥
सुखस्पर्शमण्याचितक्षोणिभागं
समस्तावकाशादिसंधाविभागम्।
यथापेक्षविभ्राजितस्वच्छनीरं
सुखाकारिधर्माञ्चिनीचैः समीरम्॥
करे स्वस्य वामे तु वामे वसन्तं
गिरिं लीलयाऽऽस्पृश्य सन्तं हसन्तम्॥
तदीयान्तरुद्यन्महाकुट्टिमस्थं
हरिं हारिरूपादिभिः प्रागवस्थम्॥
दधद्वेणुमानम्रहस्तप्रधानं
कदाचिन्मुदा सख्युरंसे दधानम्॥

(श्रीगोपालचम्पू)

'अहा! गिरिराजके अन्तर्देशमें जानेके लिये सुन्दर सीढ़ियाँ निर्मित हैं, समस्त अन्तर्देश मणिसमूहोंसे जगमग-जगमग कर रहा है; सुन्दर गृहके रत्नमय आँगन, भित्ति आदिके समान ही गिरिराजके आवासके रत्नमय आँगन एवं भित्तिकी रचना है; गृहके ऊर्ध्वभाग छत-प्रकोष्ठ आदि भी वैसी ही शोभाका प्रदर्शन कर रहे हैं; इसका तलदेश सुकोमल मणिसंयुक्त है; सबको स्थान देनेके योग्य यथोचित विभाग बने हुए हैं; जितनी आवश्यकता हो, उतनी मात्रामें यहाँ चम-चम करता हुआ स्वच्छ जल बह रहा है; सुखकर तनुतापहारी मन्द समीर प्रवाहित हो रहा है। ऐसे आवासवाले गिरिराजको व्रजराजनन्दन लीलासे अपने बायें हाथपर लिये, उसे किञ्चिन्मात्र ही स्पर्श करते हुए, हँसते हुए अन्तर्देशकी एक विशाल वेदीपर खड़े हैं; उनका मनोहर रूप, परिधान आदि सब कुछ ज्यों-का-त्यों वैसा ही है; वयस् भी वही है; उनका दक्षिण हस्तकमल नीचेकी ओर लटक रहा है, उसमें वे वंशी धारण किये हुए हैं; कभी प्रसन्न होकर दाहिने हाथको सखाके कंधेपर रख देते हैं।'

इसे सुनकर ही संवर्तक मेघोंका सारा उत्साह टूट चुका था। पर उन्हें तो अपने स्वामीका आदेश पालन करना था; अतः वे अपनी सारी शक्ति लगाकर सात दिनोंतक अनवरत जलधारा बरसाते ही रहे। प्रतिक्षण उनकी शक्ति क्षीण हो रही थी; नवमीकी रात्रि आते-आते वे सर्वथा सामर्थ्यहीन हो गये, व्रजके एक क्षुद्र अंशका भी नाश न कर सके। ऐरावतपर आसीन सुरराजका मुख म्लान हो गया। शक्ति समाप्त हो चुकी थी; मेघोंको निवारण करते हुए स्वर्ग लौट आये; किसीको मुख दिखानेकी इच्छा न होती थी। पर एक बड़ा लाभ हुआ देवराजको। मदका आवरण हटते ही व्रजराजनन्दनका स्वरूप उनके हृदयके दर्पणमें चमक उठा—ओह! जिसे मैं 'मर्त्य कृष्ण' कह रहा था, वह ईश्वरोंका भी परम महेश्वर है; उसकी इच्छासे ही मैं सुरराज बना हुआ हूँ, वह चाहे तो मैं इसी क्षण नरक-कीट बन जाऊँ और नरक-कीट मेरे आसनको सुशोभित करे। सुरराज पश्चात्तापकी ज्वालामें जलने लगे। सुरगुरु बृहस्पतिका आश्रय लिया। बृहस्पतिके परामर्शसे वे पितामह ब्रह्माके पास आये। उनसे समस्त अपराध निवेदन कर इसका निदान पानेकी आशासे अञ्जलि बाँधे खड़े रहे।

कमलयोनिने सोच-विचारके उपरान्त परामर्श दिया—

गवां कण्डूयनं कुर्याद् गोग्रासं गोप्रदक्षिणाम्।
नित्यं गोषु प्रसन्नासु गोपालोऽपि प्रसीदति........॥
क्षमापनाय कातरस्त्वं तज्जातिमातरं सुरभीमेव भजस्व।

(श्रीगोपालचम्पू)

गोपालके भक्त गौतम आदि ऋषियोंके ये वचन हैं—'गायोंको खाज आनेपर उनकी खाज करनी चाहिये, गोग्रासका दान करना चाहिये, गोप्रदक्षिणा करनी चाहिये। जिनपर गायें सदा प्रसन्न रहती हैं, उनपर गोपाल भी प्रसन्न होते हैं। सुरराज! अपराध क्षमा करानेके लिये तुम व्याकुल हो; तुम्हारे लिये यही पथ है कि तुम गोजातिकी माता सुरभिका आश्रय ग्रहण करो।'

श्रीकृष्णकी अवज्ञा करनेवाले सुरराजको देखकर सुरभि खिन्न हो उठी। पर बारम्बार अनुनय-विनय करनेपर ब्रह्माकी अनुमतिसे इन्द्रके साथ चल पड़ी। उस दिन

कार्तिक शुक्ला एकादशी थी। पुण्य वृन्दावनकी भूमिपर आकर इन्द्रको साथ लिये सुरभि उचित अवसरकी प्रतीक्षा करने लगी।

व्रजराजनन्दन वनमें गाय चराने आये। पुरन्दरके अन्तर्हृदयकी व्याकुलता व्रजराजनन्दनके रसमय निर्मल हृदयमें प्रतिबिम्बित हो गयी थी। उन्हें एकान्त अवसर देनेके लिये ही उन्होंने आज अग्रजको साथ नहीं लिया, सखाओंको भी किसी प्रसङ्गसे अलग भेज दिया। एकाकी गोवर्द्धनकी रत्नशिलापर विराजमान हैं। सुरराज आकर चरणोंमें दण्डवत् गिर पड़े। नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा बह चली, वाणीसे अपने-आप स्तुति निकल पड़ी। स्तुति करते-करते व्रजेन्द्रनन्दनके हस्तारविन्दका मधुरातिमधुर स्पर्श प्राप्त हुआ; देवराज निहाल हो गये, निर्भय हो गये। सुरभि अन्तरिक्षमें छिपी हुई देख रही थी, ठीक उसी समय आ पहुँची। सुरभि प्रणाम करने जा रही थी; पर उसके पूर्व ही व्रजराजनन्दन अञ्जलि बाँधे हुए उठ खड़े हुए तथा बोले—'माँ! कैसे आयी?' सुरभि बोली—

एते मदन्वया धन्या गोत्वं त्वां सेवितुं गताः।
अहं तु नेदृक्पुण्या यद्गोचरत्वं च नागता॥

(श्रीगोपालचम्पू)

'व्रजराजनन्दन! मेरे वंशज धन्य हैं, जो तुम्हारी सेवाके लिये गौ बन गये। पर मैं ऐसी पुण्यवती नहीं थी, क्योंकि गौ होकर भी तुम्हारे नयनोंके सामने नहीं आयी।'

—कहते-कहते सुरभिके हृदयमें व्रजराजनन्दनका अनन्त असीम ऐश्वर्य जाग उठा, सुरभि स्तुति करने लगी— श्रीकृष्ण! इन्द्रके कोपसे हमलोग सचमुच नष्ट ही हो चले थे, पर तुम लोकनाथने हमारी रक्षा की। तुम्हीं हमारे परमदेव हो; आजसे तुम्हीं गोवंश, ब्राह्मण एवं देवोंके अभ्युदयके लिये हमारे इन्द्र बनो—

कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वसम्भव।
भवता लोकनाथेन सनाथा वयमच्युत॥
त्वं नः परमकं दैवं त्वं न इन्द्रो जगत्पते।
भवाय भव गोविप्रदेवानां ये च साधवः॥

(श्रीमद्भा० १०।२७।१९-२०)

उत्तरोत्तर भावसे आविष्ट होकर सुरभिने फिर कहा—'व्रजमहेन्द्रकुलचन्द्र! तुम्हारे चरणस्पर्शसे यहाँके तीर्थ सार्थक हो गये। तुम्हारे दुग्धपानसे यहाँकी गायें धन्य हो गयीं; पर स्वर्गीय गङ्गाका स्रोत एवं दूधसे भरे मेरे थन, दोनों व्यर्थ ही रहे। मेरे आराध्यदेव! उनकी सार्थकताके लिये ही मेरे मनमें स्वर्मन्दाकिनीकी धारासे एवं अपने थनकी दुग्धधारासे तुम्हारे अभिषेककी लालसा जाग उठी है; आज्ञा दे दो, हमारे इन्द्र!'

व्रजराजनन्दनके अधरोंपर एक पवित्र मनोहर मुसकान खेलने लगी; यह मुसकान ही संकेत था—'**यथेष्टमनुष्ठीयताम्**', जैसी इच्छा हो वैसे करो। दूसरे ही क्षण देववाद्य बज उठे; गन्धर्व, अप्सरा, सुराङ्गनाएँ गान करती हुई नृत्य करने लगीं; ऋषि स्तोत्रपाठ करने लगे; ब्रह्मा-रुद्रकी जय-जय-ध्वनिसे आकाश प्रकम्पित होने लगा; एक ओर उत्फुल्ल ऐरावत स्वर्मन्दाकिनी-जलसे पूरित घट अनवरत अपनी सूँड़ोंमें उठा-उठाकर देवराजके हाथोंमें देने लगा; दूसरी ओर सुरभि अपने थनोंसे दूध बरसाने लगी; जलधारा एवं दुग्धधारा एक ही साथ झर-झर करती हुई व्रजराजनन्दनपर गिरने लगी, उनका अभिषेक होने लगा।

अभिषेकके अनन्तर व्रजराजनन्दन 'गोविन्द' नामसे अभिहित हुए। आकाशसे देवताओंने पुष्प-वृष्टि की। अन्तमें पुष्पाञ्जलिके रूपमें इन्द्र, ब्रह्मा आदिने छत्र,चामर, विविध अलंकार, लीलाकमल आदि समर्पण किये। व्रजराजनन्दनके मुखपर वही मुसकान थी। हाँ, उनके सखा दूरसे देख रहे थे, आश्चर्यमें भरकर सोच रहे थे—यह क्या कौतुक है।

इन्द्रादि देवताओंने परिक्रमा कर बिदा ली। सखा आये; देवार्पित छत्र, चामर, आभूषणोंसे खेलने लगे। परस्पर सबने शृंगार किया। संध्या होनेको आ रही थी; अतः सभी गायें बटोरकर घरकी ओर चल पड़े। श्रीदामा पूछ रहा था—दादा! वे चार मुख, पाँच मुख, सहस्र आँखोंवाले कौन थे? व्रजराजनन्दन हँसते जा रहे थे।

आकाशमें नृत्य, वाद्य, गीत सुनकर नन्द-यशोदा आदि सभी चकित हो गये थे। नन्दरानीने व्रजराजको अपने नीलमणिके पास भेजा; यशोदाके वात्सल्यपूर्ण हृदयमें क्षण-क्षणमें यह भय जाग उठता था—पता नहीं, नीलमणिपर कोई विपत्ति तो नहीं आ रही है।

व्रजराजने आकर श्यामसुन्दरको हृदयसे लगा लिया। पूछा—बेटा! आज आकाशमें बाजे क्यों बज रहे थे, कोई नयी बात हुई क्या? श्यामसुन्दर मुसकराकर चुप हो गये। नन्दरायने श्रीदामासे पूछा—'तू बता, बेटा! आज क्या हुआ

है?' पर श्रीदामाने कहा—'बाबा! मैं गायें बटोरने दूर चला गया था, फिर पीछे आकर देखा तो.......।' बीचमें ही मधुमङ्गल बोल पड़ा—'व्रजराज! आज बड़ा कौतुक हुआ—एक गाय आयी, मनुष्यकी तरह बहुत देरतक कन्हैयासे बात करती रही; एक हजार आँखोंवाला एक आदमी आया, उसने कन्हैयाको दण्डवत् प्रणाम किया; एक बहुत ही बड़ा उजला हाथी था, वह बार-बार घड़ोंमें जल भर-भरकर सूँड़से उसको दे रहा था; एक पाँच मुखोंका और एक चार मुखोंका—दो पुरुष और आये, वे कन्हैयाकी स्तुति गा रहे थे तथा सब मिलकर तुम्हारे नीलमणिपर जलकी धारा गिरा रहे थे—

गौरेका गिरमातनोदथ पुमानन्यः सहस्रेक्षणो-
ऽनंसीत् कोऽपि करी सितः स्वरुदकान्याहृत्य शश्वद्ददौ।
कौचित् पञ्चचतुर्मुखाङ्कवलितौ स्तोत्रप्रथाञ्चक्रतु-
स्ते चान्ये च महामहेन सिषिचुर्गोपेश पुत्रं तव॥

(श्रीगोपालचम्पू)

व्रजनरेश आश्चर्यमें डूबे हुए मधुमङ्गलकी बात सुन रहे हैं। मन-ही-मन सोच रहे हैं—मेरे नीलमणिपर मेरे कुलदेव नारायणकी अपार कृपा है; वे नारायण ही समय-समयपर मेरे लालमें आविष्ट हो जाते हैं, देवताओंने उन्हींकी अभ्यर्थना की होगी। सोचते हुए नन्दराय नीलमणिके मधुरमनोहर मुखकी ओर देखने लगे। नीलमणिने अमृतमय कण्ठसे कहा—'बाबा! घर चलो, मैया चिन्ता करती होगी।' इन शब्दोंमें एक विलक्षण मोहिनी शक्ति थी, व्रजराज देवताओंकी बात सर्वथा भूल गये। वात्सल्य-रस-सागरमें डूबते-उतराते हुए नीलमणिका हाथ पकड़े व्रजकी ओर चल पड़े; अपार गोराशि व्रजराजनन्दनको चारों ओरसे घेरे चल रही थी। व्रजके वन्दीजन गा रहे थे—

आगे गाय पीछे गाय, इत गाय उत गाय,
गोबिंद कों गायन में बसिबोई भावै।
गायन के संग धावै, गायन में सचु पावै,
गायन की खुररेनु अंग लपटावै॥
गायन सों ब्रज छायो, बैकुंठ बिसरायो,
गायन के हेत कर गिरि लै उठावै।
छीतस्वामी गिरधारी बिट्ठलेसबपुधारी
ग्वारिया को भेस धरें गायन में आवै॥

जनसाधारणकी दृष्टिमें व्रज अब सूना हो गया। व्रजराजनन्दन मथुरा चले गये। अपने पीछे वे ग्यारह वर्षकी बड़ी ही मधुर सुधामयी स्मृति छोड़ गये हैं। यह स्मृति व्रजवासियोंके हृत्पटपर अङ्कित है, जिसमें उलझे हुए उनके प्राण निकल नहीं पा रहे हैं, अन्यथा उड़कर प्राणाधार व्रजराजनन्दनके पास कभीके चले गये होते।

उन व्रजवासियोंके नेत्र श्रीकृष्णलीलामय हो चुके हैं। निरन्तर उनकी आँखोंके सामने एक लीलाचक्र घूमता रहता है। वे अनुभव करते रहते हैं—नन्दप्राङ्गणमें हरिद्रामिश्रित दधिका प्रवाह बह रहा है; यशोदाकी गोदमें एक महामरकतद्युति मनोहर शिशु है। शिशु तो निष्प्राण पूतनाके वक्षःस्थलपर खेल रहा है। यशोदा अपने प्राणधन नीलमणिको पालनेमें झुला रही हैं। गोपशिशु कोलाहल कर रहे हैं। नीलमणिने अपने नन्हे-नन्हे चरणोंको उछाला। उसीसे विशाल शकट उलट गया है। हमने आँखोंसे यह स्वयं देखा है। तृणावर्तके अङ्ग चूर्ण-विचूर्ण होकर शिलापर पड़े हैं। नीलमणि उसपर पड़ा हुआ किलक रहा है। नीलमणि चलना सीख गया। अरे! यह तो गोवत्सोंसे अब तनिक भी नहीं डरता। आज दिनभर उनकी पूँछें पकड़े घूमता रहा है। यशोदाका चञ्चल नीलमणि छिपकर नवनीत खाने आया है। स्वयं खाकर बंदरोंको वितरण कर रहा है।

यह देखो, दुहनेके पहले ही बछड़ोंको खोलकर उसने सारा दूध पिला दिया। श्रीदामा मैयासे कह रहा है—मैया! नीलमणिने मिट्टी खायी है। मैया भांड फोड़नेके अपराधमें नीलमणिको ऊखलसे बाँध रही है। हम सभी लोग वृन्दावन चल रहे हैं। नीलमणि भी छकड़ेपर चढ़ी हुई यशोदा मैयाकी गोदमें बैठा चल रहा है। इन बछड़ोंको चरानेके लिये आज नीलमणि सज-धजकर वन जा रहा है। व्रजाङ्गनाएँ पूछ रही हैं—'बेटा सुबल! बता तो, नीलमणिने वत्सासुरको कैसे उठाकर पटका। मेरे नीलमणि! बकासुरको चीर डालते हुए तुझे भय नहीं लगा? भला, इन सुकोमल हाथोंसे तूने व्योमासुरका कचूमर कैसे निकाला? यशोदा कह रही हैं—'अघासुरसे रक्षा नारायणने ही की, भला उसके मुखमें जाकर नीलमणि जीवित निकल आये, यह कभी सम्भव था?' नीलमणि कालियके फनपर थिरक-थिरककर नाच रहा है। आकाशमें बाजे बज रहे हैं, देवता फूलोंकी वर्षा कर रहे हैं। गोचारण करते हुए नीलमणि वनमें विविध खेल खेल रहा है। मधुमङ्गल कह रहा है—'री गोपियो! सुनो, कन्हैयाके साथ हम सब तालफल खाने बैठे ही थे कि धेनुकासुर

आया। दाऊ दादाने उसे पतंगकी तरह उछाला और आकाशमें घुमाकर मार डाला।' श्रीदामा कह रहा है—'गोपियो! सुनो, हमारी गायें अलग चर रही थीं, कन्हैया खेलमें हारकर मुझे पीठपर उठाये चल रहा था, इतनेमें बालक बना हुआ प्रलम्बासुर दाऊ दादाको ले भागा। दाऊ दादाने एक मुक्कीकी चोटसे ही उसे मार डाला।' गोपशिशु मैया यशोदासे कह रहे हैं—'मैया! उसी रातकी तरह फिर आज वनमें दावानल जल उठा था। कन्हैयाके कहनेसे हमलोगोंने आँखें मूँद लीं। बस, पता नहीं उसी क्षण अग्नि कहाँ चली गयी।

ओह! अनवरत मुसलाधार वृष्टि हो रही है। सात दिन हो गये, मेरे नीलमणिके हाथपर गिरिराज टिके हुए हैं। नीलमणि, नीलमणि! तेरे हाथोंमें पीड़ा तो नहीं हो रही है? नन्दराय वरुणलोकसे लौटकर कह रहे हैं—'सचमुच मेरे नीलमणिमें साक्षात् नारायण आविष्ट होकर हमलोगोंकी रक्षा करते हैं, आवेशके समय ही मेरा नन्हा-सा नीलमणि अलौकिक—असम्भव कार्य कर देता है। आवेशके समय देवता मेरे नीलमणिमें साक्षात् परम-पुरुषको देखकर उसकी अर्चना करते हैं।' गोपशिशु कह रहे हैं—'मैया! तुम्हारी छाक तो आज पहुँची नहीं, हमलोग भी जल्दीमें आज कुछ भी कलेवा साथ नहीं ले गये थे। गाय चराते-चराते भूखसे व्याकुल हो गये। ब्राह्मणोंके पास कुछ माँगने गये। उन्होंने कुछ भी न दिया। फिर द्विजपत्नियोंसे जाकर कहा, कन्हैयाका नाम सुनते ही वे सब बावरी-सी हो गयीं। अपने घरसे मिष्टान्नकी थालियाँ भर-भरकर दौड़ पड़ीं। सबने जाकर कन्हैयाको घेर लिया। बहुत देरतक कन्हैयासे कुछ कह-कहकर सब रोती रहीं; फिर लौट आयीं। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था, मानो उनको बाह्यज्ञान नहीं है। हमलोगोंने भर पेट खाया; फिर जाकर देखा तो वे समाधिस्थ-सी बैठी थीं और ब्राह्मण सभी पश्चात्ताप करते हुए दुःखसे जलते हुए रो रहे थे—'हाय! हाय!! व्रजेन्द्रनन्दनके लिये हमारे सूखे हृदयोंमें जरा भी प्यार नहीं। ये स्त्रियाँ ही धन्य हैं। हमारे इस जीवनको धिक्कार है। इसमें तो आग लग जानी चाहिये।'

सर्पग्रस्त नन्दकी रक्षा करके नीलमणि हँस रहा है। विद्याधर उसकी प्रदक्षिणा कर रहा है; अरिष्टासुरके संहारसे प्रसन्न होकर देवता नीलमणिपर पुष्प बरसा रहे हैं। नन्दरानी नीलमणिके सुकोमल हाथोंको हाथमें लेकर नारायणसे प्रार्थना कर रही हैं—देवाधिदेव! मेरे नीलमणिके हाथ असुरके मुखमें जाकर भी अक्षत रहे, यह तुम्हारी ही अनन्त कृपाका प्रताप है। नीलमणि संध्या-समय हाथमें दोहनी लेकर गोशालामें गाय दुहने जा रहा है, मथुराकी ओरसे रथपर चढ़ा हुआ कोई आया। नीलमणिके चरणोंमें जाकर लोटने लगा।'

इस प्रकार समस्त व्रजवासी अपने अन्तर्हृदयमें सुधामयी स्मृतिका विचित्र चित्रपट उलटते हुए लीला देखते रहते हैं। जिस समय बाह्यज्ञान होता, उस समय—'हाय, नीलमणि! तुम कहाँ गये। मेरे प्राणधन! कब आओगे, कितने दिन मथुरा और रहोगे' कहकर आँसू बहाने लगते हैं।

व्रजयुवतियोंकी करुण दशाका तो कहना ही क्या। लीलाचक्र उनके सामने भी घूमता रहता है; पर वे तो अब विक्षिप्त-सी हो गयी हैं। इस मतिभ्रमका आरम्भ तो पहले ही हो चुका था। जिस दिन वंशीध्वनि कानोंमें आयी थी, उसी दिनसे वे अनुभव करती थीं, मानो कभी वंशीरवका विराम हुआ ही नहीं। वे अधिकांश समय निश्चित भी नहीं कर पाती थीं कि किस स्थानपर स्थित होकर व्रजराजनन्दन वंशी बजा रहे हैं, निर्णय करनेके उद्देश्यसे जिधर दृष्टि ले जातीं, उधरहीसे स्वरलहरी गूँजती हुई सुनायी पड़ती। आम्र-कदम्बशाखाओंकी ओर देखतीं तो पहले दीखता—पक्षी निमीलित नयनोंसे वंशीध्वनि सुन रहे हैं; फिर दीखता, वृक्ष-शाखा, पत्र-पक्षी कुछ भी नहीं है, केवल व्रजराजनन्दन ही हैं।

अरुणाभ अधरोष्ठोंपर वंशी नाच रही है और उससे उन्मादकारी मधु झर रहा है। सोचतीं—नेत्रोंका भ्रम है, श्यामसुन्दर तो वनमें गाय चराने गये हैं। अब यमुनाके तरंगोंकी ओर देखने लग जातीं; अनुभव होता—प्रवाह स्थिर—स्थगित है, तरल तरंगें घन हो गयी हैं। उनके अन्तरालसे ध्वनि आ रही है; पर दूसरे ही क्षण वही दृश्य सामने आता—यमुना, यमुनाकी तरंगोंके स्थानपर सर्वत्र व्रजराजनन्दन भरे हैं। वंशीमें सुरीला स्वर भर रहे हैं। व्रजाङ्गनाएँ विचारमें पड़ जातीं—हमारी ऐसी दशा क्यों है, हम क्यों नहीं निर्णय कर पातीं कि हमारे प्रियतम श्यामसुन्दर सचमुच कहाँ हैं, कहाँसे वंशी बजा रहे हैं! इसी चिन्तामें आकाशकी ओर देखने लगतीं—प्रतीत होता उधरसे ही वंशीध्वनि आ रही है और भी एकाग्र होकर दृष्टि डालतीं

तो दीखता—विमानोंकी पंक्तियाँ लगी हैं, उनमें सुरललनाएँ बेसुध—मूर्च्छित-सी बैठी हैं। प्रेमावेशसे उनके वस्त्र स्खलित हो गये हैं। वे वंशीध्वनि ही सुन रही हैं; पर एक ही क्षण बाद आँखोंके सामनेसे विमान, सुराङ्गनाएँ सब कुछ अन्तर्हित होकर पुनः समस्त नील गगन वंशीधारी श्यामसुन्दरसे भर जाता; व्रजाङ्गनाएँ कुछ भी निर्णय न कर पातीं।

किसी अचिन्त्य प्रेरणासे व्रजराजनन्दनकी दैनन्दिनी लीलाका रस लेनेके लिये ही वे बीच-बीचमें प्रकृतिस्थ होती थीं, अन्यथा निरन्तर वंशीरवके प्रवाहमें ही बहती रहती थीं। उन व्रजकुमारिकाओंकी भी यही दशा थी, कात्यायनी-उपासनाका फल ही उन्हें मिला था—वंशीरवके उद्गमका अन्वेषण करना; प्राणोंकी उत्कण्ठासे वे उद्गमस्थलको मन-ही-मन ढूँढ़ती रहती थीं। इसीलिये मानो इन व्रजाङ्गनाओंका अथक परिश्रम देखकर ही कृपापरवश होकर दूसरे वर्ष शारदीय पूर्ण शशधरकी निर्मल ज्योत्स्नामें वंशीध्वनिने प्रत्येक गोपाङ्गनाका पृथक्-पृथक् नाम ले-ले कर आवाहन किया।

इतना ही नहीं, उसने सबको अपने-आप खींच ले जाकर प्रियतम श्यामसुन्दरसे मिला दिया। वह राकारजनी 'ब्राह्मरजनी' बन गयी और व्रजाङ्गनाएँ चिदानन्दरसमयी रासलीलाके सुख-सुधा-समुद्रमें डूबकर कृतार्थ हो गयीं। दो वर्ष कुछ महीनोंतक व्रजाङ्गनाएँ अतुलनीय परमानन्द-रसका उपभोग प्रतिदिन करती रहीं। उनका दिन तो श्रीकृष्णभावनाके स्रोतमें समाप्त होता था और रात्रि मिलनानन्द-सिन्धुमें व्यतीत होती थी। पर हठात् सब कुछ बदल गया। अक्रूरके रथपर चढ़कर उनके प्राणाधार प्रियतम मथुरा चले गये। उनके साथ ही उनका भी सब कुछ चला गया। उनकी अन्य सारी स्मृति, सारा विवेक, सारा ज्ञान चला गया। अब वे निरन्तर पूर्ण मतिभ्रमकी दशामें रह-रहकर रोती हुई पुकार उठती हैं—

अयि दीनदयार्द्र नाथ हे
मथुरानाथ कदावलोक्यसे।
हृदयं त्वदवलोककातरं
दयित भ्राम्यति किं करोम्यहम्॥

'मेरे स्वामिन्! तुम तो निष्ठुर नहीं हो, तुम्हारा हृदय तो अपार असीम करुणासे भरा है। किसीका भी दुःख तुम देख नहीं सकते। अब तो कंसका भी भय नहीं रहा। अब तो तुम्हीं मथुरेश हो। जो चाहो सो कर सकते हो; फिर मेरे पास क्यों नहीं आते? मेरे जीवनधन! मैं तुम्हें अब देखूँगी? तुम्हारे दर्शनके लिये मेरा हृदय अतिशय कातर हो रहा है, भ्रमित हो रहा है। हाय! मैं क्या करूँ?'

व्रजाङ्गनाओंके शरीर क्षीण हो गये हैं, वह ताम्बूल-राग-रञ्जित अधरपुट अब नहीं है, अङ्गोंपर आभूषण भी नहीं हैं, किसी मलिन वस्त्रसे अपने अङ्गोंको आच्छादित रखकर प्रियतम श्रीकृष्णका नाम रटती हैं। नेत्रोंसे अविरल अश्रुप्रवाह बहता रहता है।

इन्हींकी तरह यशोदाजी भी विक्षिप्त हैं। प्रातःकाल जिस क्षण नीलमणि विदा हुए, ठीक उसी क्षणपर वे प्रतिदिन तोरणद्वारपर आकर बैठ जाती हैं और पुकारने लगती हैं—

जसोदा बार बार यों भाषै।
है ब्रज में कोउ हितू हमारो, चलत गोपालहि राखै॥
कहा काज मेरे छगन-मगन कों, नृप मधुपुरी बुलायो।
सुफलक-सुत मेरे प्रान हनन को, कालरूप ह्वै आयो॥
बरु ये गोधन हरौ कंस सब, मोहि बंदि लै मेलो।
इतनो ही सुख कमलनयन मेरी, अँखियन आगे खेलो॥
बासर बदन बिलोकत जीवौं, निसि निज अँकम लाऊँ।
तेहि बिछुरत जो जीवौं कर्मबस, तौ हँसि काहि बुलाऊँ॥
कमलनैन-गुन टेरत-टेरत, अधर बदन कुम्हिलानी।
सूर कहाँ लगि प्रगट जनाऊँ, दुखित नंदकी रानी॥

दासियाँ प्रबोध देती हैं, पर नन्दरानी इस राज्यमें हों तब तो प्रबोध सुनें, वे तो मन-ही-मन अपने नीलमणिको ढूँढ़ती हुई न जाने कहाँ-से-कहाँ घूमती रहती हैं। कभी-कभी कुछ बाह्य ज्ञानकी दशामें मथुराके राजपथपर जा बैठती हैं, जो मिलता है उसीसे नीलमणिको संदेश देती हैं। नीलमणिको संदेश देकर फिर देवकीजीको संदेश देती हैं—

सँदेसो देवकी सों कहियो।
हौं तो धाय तुम्हारे सुत की, मया करत निज रहियो॥
जदपि टेव तुम जानत उन की, तऊ मोहि कहि आवै।
प्रातहि उठत तुम्हारे सुत कों माखन रोटी भावै॥
तेल उबटनो अरु तातो जल देखत ही भजि जावै।
जोइ-जोइ माँगत, सोइ-सोइ देती, क्रम-क्रम करि-करि न्हावै॥
सूर पथिक सुनि मोहि रैन दिन बढ्यो रहत उर सोच।
मेरो अलक लड़ैतो मोहन ह्वैहै करत सकोच॥

दासियाँ पकड़ लाती हैं, नन्दरानी दधि-भांडके पास जाकर बैठ जातीं और रोने लगती हैं—

मेरे कुँअर कान्ह बिन सब कछु वैसेहि धर्‌यो रहै।
को उठि प्रात होत लै माखन, को कर नेत गहै॥
सूने भवन जसोदा सुत के, गुन गुनि सूल सहै।
दिन उठि घेरत ही घर ग्वारिनि, उरहन कोउ न कहै॥
जो ब्रज में आनंद हुतो सो, मुनि मनसहु न गहै।
सूरदास स्वामी बिन गोकुल, कौड़ी हू न लहै॥

यह दशा तो विवेकयुक्त मानव-प्राणियोंकी है। व्रजेन्द्रनन्दनकी गायोंकी दशा भी कम हृदयविदारक नहीं है। उनके शरीर सूख गये हैं, तृण चरना उन्होंने छोड़ दिया है, उनके थनोंसे दूध झरना बंद हो गया है, निरन्तर मथुराकी ओर ताकती हुई वे अतिशय खिन्न-मन भटकती रहती हैं—

धेनु नहीं पय स्त्रवत उदित मुख चरत नहीं तृन कंद।

धौरी, धूमरीके वत्सोंने तो दूध ही पीना छोड़ दिया है। श्रीकृष्णका नाम सुनते ही वे चौंक उठते हैं, चारों ओर दृष्टि घुमा-घुमाकर देखने लगते हैं।

इस तरह अपने विरहमें जलते हुए व्रजकी दशाका प्रतिरूप व्रजराजनन्दनके हृदयपर पड़ रहा है; वे भी तदनुरूप भावोंसे भावित होकर एकान्तमें रो पड़ते हैं। सान्त्वना देने योग्य एकमात्र अग्रज बलराम ही हैं, जो एकान्तमें अनुजके आँसू पोंछा करते हैं। सान्दीपनिकी पाठशालामें व्रजराजनन्दनका दिन तो पाठग्रहण, गुरुसेवामें व्यतीत होता है पर रात व्यतीत होती है व्रजकी मधुर मनोहर स्मृतिमें। दिनमें भी गुरुदेवकी गायोंको चारा डालते समय उनकी आँखें छल-छल करने लगतीं तथा पासमें कोई न होता तो उनके कण्ठोंमें बाँह डाल वे रोने लग जाते, मानो हृदयमें बसी हुई धौरी-धूमरीकी करुण आँखोंसे निकला हुआ अश्रुनिर्झर ही श्यामसुन्दरकी आँखोंसे निर्गत हो रहा है। जो हो, चौंसठ दिनका पाठ पूराकर व्रजराजनन्दन पितृगृहमें लौट आये हैं, रोहिणी मातासे एकान्तमें जाकर व्रजकी बातें पूछते हैं।

रोहिणी मैया कुछ ही दिनों पहले व्रजसे लौटी हैं; रोहिणीने जो कुछ कहा, उसे सुनकर व्रजराजनन्दनका धैर्य जाता रहा। व्रज जाना तो सम्भव था नहीं, अतः अग्रजकी गोदमें सिर रखकर व्रजराजनन्दन सिसकियाँ भरने लगे। भला, जिनके संकल्पमात्रसे अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड क्षणभरमें सृष्ट होकर पुनः दूसरे ही क्षण विलीन हो जाते हैं,उन शर्वशक्तिमान् सर्वैश्वर्यनिकेतन स्वयं भगवान् व्रजराजनन्दन श्यामसुन्दरके लिये तीन कोसकी दूरीपर स्थित वृन्दावन जाना सम्भव नहीं हो सका। धन्य है लीलाविहारीकी मधुर लीला! अस्तु, अग्रजने ही सान्त्वना दी, फिर परामर्श दिया कि 'तुम उद्धवको व्रज भेज दो।' व्रजराजनन्दनकी लीलाशक्तिने ही तो उद्धवको चुना था, इसीलिये उनका नाम सुनते ही व्रजराजनन्दन उत्फुल्ल हो उठे। एकान्तमें सखाको सब समझाया, उनका शृंगार किया; यथायोग्य सबके लिये संदेश देने लगे, पत्र लिखने लगे। उस समय व्रजराजनन्दनकी आँखोंसे निरन्तर अश्रुधारा बह रही थी, कण्ठसे वे स्पष्ट बोल नहीं पा रहे थे, पर उद्धव तो अपनेको आत्मानन्दकी अनुभूति करनेवाला पुरुष समझते थे, उन्हें आश्चर्य हो रहा था, साक्षात् भगवान् होकर व्रजराजनन्दनमें इतनी व्याकुलता क्यों? यह संकल्प आया ही था कि व्रजराजनन्दनकी सर्वज्ञताशक्तिने लीलाशक्तिको संकेत कर दिया; अब व्रजराजनन्दनके उस प्रेमिल संदेशमें भी आत्मज्ञानका पुट लग गया, पत्रमें भी। ऐसे संदेशको लेकर उद्धवजी व्रज पहुँचे।

नन्ददम्पति बैठे थे। उद्धवको देख कुछ देर वे नीलमणिके मिलनका-सा सुख अनुभव करने लगे। अतः नीलमणिके समान ही उद्धवकी आवभगत हुई; अब परम सुखका अनुभव करते हुए मैया-बाबाके प्रति उनके नीलमणिने जो संदेश दिया था, उद्धव वही कहने जा रहे हैं। उद्धव बोले—नन्दरानी! नन्दराय! श्रीकृष्णने तुम्हारे लिये मुझसे कहा है—

ऊधौ इतनौ कहियो जाय।
हम आवेंगे दोऊ भैया, मैया जनि अकुलाय॥
याकौ बिलग बहुत हम मान्यो, जो कहि पठयौ धाय।
वह गुन हम कों कहा बिसरिहैं, बड़े किए पय प्याय॥
और जु मिलौ नंद बाबा सों, तौ कहियो समुझाय।
तौलौं दुखी होन नहिं पावैं धौरी धूमरि गाय॥
जद्यपि यहाँ अनेक भाँति सुख, तद्यपि रह्यो न जाय।
सूरदास देखौं ब्रजबासिन तबहिं हियौ हरषाय॥

संदेशके उत्तरमें बाबा-मैया केवल रो पड़े। नन्दरानीका रोना तो थमा ही नहीं, नन्दने किसी प्रकार आत्मसंवरण किया। अपने नीलमणिकी बात उद्धवको सुनाने लगे; पर कुछ ही सुना पाये थे कि प्रेमसे विह्वल हो गये, आगे बोल न सके। उद्धवने श्रीकृष्ण-तत्त्वका उपदेश किया, पर नन्ददम्पति तो रोते ही रहे। श्रीकृष्णकी चर्चा सुनकर धौरी, धूमरी श्रीकृष्णकी प्यारी गायें भी वहाँ आकर एकत्र हो

गयीं। उनकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बह रही थी, पर वे बोलना नहीं जानती थीं। नन्द मानो उनकी सान्त्वनाके लिये ही अन्तर्यामीकी प्रेरणासे संदेश सुनकर भी पुनः पूछने लगे—

जानीमः प्रत्येकं गा मनुते स स्वतोऽप्यधिकाः।
निजकरकवलैः पुषितास्ताः किं चित्ते समाहरति?

(श्रीगोपालचम्पू)

'हम सभी जानते हैं मेरा नीलमणि गायोंको अपनेसे भी अधिक प्यार करता है, प्रत्येक गायके प्रति उसका अपने शरीरसे भी अधिक प्रेम है, गायोंको वह अपने हाथसे ग्रास देता था, उसके हाथके ग्राससे ही हमारी गायोंका पोषण होता था; मेरा नीलमणि इन गायोंको स्मरण करता है क्या?'

उद्धवकी आँखोंमें इनकी बात सुनकर बरबस आँसू आने लगे। रातभर नीलमणिकी ही चर्चा होती रही। उद्धव प्रबोध करते रहे, पर नन्ददम्पतिकी अश्रुधाराका विराम नहीं ही हुआ।

दूसरे दिन उद्धव व्रजाङ्गनाओंसे संदेश कहने गये। लीलाशक्तिकी प्रेरणासे व्रजाङ्गनाएँ आज किञ्चित् प्रकृतिस्थ हो गयी थीं, पर उपदेशके उपक्रममें 'श्याम' नाम सुनते ही वे प्रेमावेशमें बेसुध-सी हो गयीं—

सुनत स्याम कौ नाम बाम गृह की सुधि भूली।
भरि आनँद रस हृदय प्रेम बेली द्रुम फूली॥
पुलक रोम सब अँग भए, भरि आए जल नैन।
कंठ घुटे, गदगद गिरा, बोल्यो जात न बैन॥
बिबस्था प्रेम की।

श्यामसुन्दरका संवाद पाकर तो वे मूर्च्छित हो गयीं—

सुनि मोहन संदेस रूप सुमिरन ह्वै आयौ।
पुलकित आनन कमल अंग आबेस जनायौ॥
बिहबल ह्वै धरनी परीं, ब्रज-बनिता मुरझाय।
दै जल छींट प्रबोधहीं, ऊधौ बैन सुनाय॥
सुनौ ब्रजनागरी।

आत्मानन्दानुभूतिका अभिमान—गर्व उद्धवके अन्तरालसे झाँक रहा था। व्रजराजनन्दनका आत्मज्ञान-सम्पुटित संदेश लेकर वही गर्व अब बाहर निकला। पूरी शक्ति लगाकर उसने व्रजसुन्दरियोंको समझाना चाहा; आत्मज्ञानकी सरिता बहा दी। पर वह सरिता, व्रजसुन्दरियोंके डुबोनेकी बात तो दूर रही, उनके चरणोंको स्पर्शतक न कर सकी; वे इसके तटपर अलग खड़ी रहकर श्यामसुन्दरकी विरह-व्यथामें कराहती ही रहीं।

दिन एक पहर चढ़ आया। यही वेला थी जब कि कोटि-कोटि प्राण-प्रियतम श्यामसुन्दर गाय चराने वन जाया करते थे। गोपियोंके हृदयमें गोचारणपरायण नन्दनन्दनकी मधुर मनोहर छबि नाच उठी। कुछ ही दूरपर गायें सचमुच जोरसे डकार रही थीं, मानो श्यामसुन्दरको ढूँढ़ रही हों; उनके पास ग्वाले उदास-मुँह खड़े थे, उन्हें शान्त करनेका प्रयास कर रहे थे। गोपियोंने एक बार दृष्टि उठाकर उनकी ओर देखा। उन्हें दीखता है, एक ओर हमारे प्रियतम श्यामसुन्दर खड़े हैं तथा दूसरी ओर उन्हें न देखकर गायें डकार रही हैं, ग्वाले भी रो रहे हैं। व्रजसुन्दरियोंके धैर्यका बाँध टूट गया। अपने दुःखसे नहीं, उन मूक गायोंके दुःखसे, ग्वालोंके दुःखसे। वे उस भावनाजात श्रीकृष्णविग्रहके सामने आकुल होकर पुकार उठीं—

अहो! नाथ! रमानाथ और जदुनाथ गुसाईं।
नंदनँदन बिडरात फिरत तुम बिनु बन गाईं॥
काहे न फेरि कृपाल ह्वै गौ-ग्वारन सुख लेहु।
दुख-जलनिधि हम बूड़हीं कर अवलंबन देहु॥
निठुर ह्वै कहा रहे?

सबकी आँखोंके सामने एक-एक श्रीकृष्ण हैं और उन्हें सुना-सुनाकर व्रजाङ्गनाएँ अपना हृदय हलका कर रही हैं, पर हृदय हलका तो हुआ नहीं बल्कि भावके आदान-प्रदानसे आवेश शिथिल हो गया और यह स्मृति जाग उठी कि प्राणधन मथुरा गये हुए हैं। फिर क्या था, विरहसागर उमड़ा, सब एक साथ ही रो पड़ीं—

ता पाछे एक बारही रोईं सकल ब्रजनारि।
हा करुनामय नाथ हो केसौ कृष्ण मुरारि!!
फाटि हिय दृग चल्यौ।

विरहसागर हृदयका बाँध तोड़कर आँखोंकी राह बह चला, व्रजसुन्दरियाँ उसीमें डूब गयीं; प्रवाह वेगसे आगे बढ़ा, उद्धव भी उसमें बह चले।

उमग्यौ ज्यौं तहँ सलिलसिंधु लै तन की धारन।
भीजत अंबुज नीर कंचुकी भूषन हारन॥
ताही प्रेम प्रबाह में ऊधौ चले बहाय।
भलें ग्यान की मेड़ हौं ब्रज में प्रगट्यों आय॥
कूल के तृन भये।

उद्धवका जीवन ही बदल गया। वे अब कुछ और ही हो गये हैं। अब उनका एक ही काम है—श्रीकृष्णलीला

गा-गाकर व्रजवासियोंको सुख देना। मुखसे लीला गाते रहते और नेत्रोंसे जल बहता रहता। व्रजाङ्गनाओंकी प्रेमदशा देखकर उद्धवकी इच्छा हुई—'मैं यदि वृन्दावनके किसी गुल्म-लता-ओषधिके रूपमें परिणत हो जाता और गुल्मलतादिरूपमें अङ्कुरित हुए मुझपर इन व्रजसुन्दरियोंकी चरणधूलि पड़ जाती तो मैं कृतार्थ हो जाता।' भावावेग न सँभलनेपर उद्धव उच्च-कण्ठसे गाने लगे—

आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां
वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम्।
या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा
भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम्॥

(श्रीमद्भा० १०। ४७। ६१)

कै ह्वै रहौं द्रुम गुल्म लता बेली बन माहीं।
आवत जात सुभाय परे मोपै परछाहीं॥
सोऊ मेरे बस नहीं, जो कछु करौं उपाय।
मोहन होहिं प्रसन्न जो, यहि बर माँगौं जाय॥
कृपा करि देहिं जौ।

अब उद्धवको कभी-कभी ऐसा प्रतीत होने लगा, मानो श्यामसुन्दर तो यहीं हैं, मथुरा कभी गये ही नहीं। उनका हृदय उत्तरोत्तर प्रेमसे भरता जा रहा है। वे सर्वथा भूल-से गये हैं कि यहाँसे लौटकर सखा श्यामसुन्दरको भी यहाँका कुशल सुनाना है। कई दिन नहीं, कई महाने बीत गये। तब कहीं स्मृति आयी और वे व्रजसे विदा हुए। विदा होते समय रोती हुई व्रजाङ्गनाएँ मूक संदेश दे रही हैं, रोती हुई यशोदा नीलमणिके लिये नाना उपहार दे रही हैं। सबसे अन्तमें गायोंको रोती देखकर मैया नीलमणिको यह संदेश देने लगीं—

ऊधौ इतनी कहियो जाय।
अति कृसगात भई हैं तुम बिनु बहुत दुखारी गाय॥
जल समूह बरसति अँखियन ते हूँकत लेतहि नाउँ।
जहाँ जहाँ गोदोहन करते ढूँढ़त सोइ सोइ ठाउँ॥
परति पछारि खाइ तेही छिन अति ब्याकुल ह्वै दीन।
मानहुँ सूर काढ़ि डारे हैं बारि मध्य ते मीन॥

उद्धवका रथ चल पड़ा। व्रजाङ्गनाएँ मूर्च्छित हो गयीं। गायें डकारती हुई कुछ दूरतक दौड़कर गयीं, पर कृशशरीरसे थककर वे भी गिर पड़ीं; उद्धव सिसक-सिसककर रोते हुए जा रहे हैं।

व्रजराजनन्दनसे मिलनेपर भी उद्धवका रोना थमता नहीं है; रोते-रोते ही उद्धवने सबका संदेश श्यामसुन्दरको सुनाया; संदेशका उपसंहार था—

कहा लौं कहिए ब्रज की बात।
सुनहु स्याम तुम बिन उन लोगनि, जैसे दिवस बिहात॥
गोपी ग्वार गाइ गोसुत वे, मलिन बदन कृस गात।
परम दीन जनु सिसिर हिमी हत, अंबुजगन बिनु पात॥
जो कहूँ आवत देखि दूरि तें, सब पूँछति कुसलात।
चलन न देत प्रेम आतुर उर, कर चरनन लपटात॥
पिक चातक बन बसन न पावहिं, बायस बलिहि न खात।
सूर स्याम संदेसन के डर, पथिक न उहि मग जात॥

व्रजराजनन्दनके नयनोंसे भी अनवरत अश्रुधारा बहती जा रही है। उनके कपोल, वक्षःस्थल सभी भीग रहे हैं। उद्धवकी बात सुनकर बीच-बीचमें गद्गद-कण्ठसे केवल इतना कह देते हैं—उद्धव! व्रजको मैं एक क्षणके लिये भी भूल नहीं पाता—

ऊधौ मोहि ब्रज बिसरत नाहिं।
हंससुताकी सुंदर कँगरी अरु कुंजनकी छाँहि॥
वे सुरभी, वे बच्छ, दोहनी, खरिक दुहावन जाँहि।
ग्वालबाल सब करत कुलाहल, नाचत गहि गहि बाँहि॥
यह मथुरा कंचन की नगरी मनि मुकताहल जाँहि।
जबहि सुरति आवत वा सुख की जिय उमगत तनु नाहिं॥
अनगन भाँति करी वह लीला, जसुदा नंद निबाहिं।
सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै यह कहि कहि पछिताहिं॥

व्रजराजनन्दनने आँखें बंद कर लीं। उद्धव मन-ही-मन सोचने लगे—'आह! श्यामसुन्दर बड़े निष्ठुर हैं, अन्यथा इन गो-गोप-गोपियोंका करुणक्रन्दन सुनकर ये अभी मेरे साथ व्रज चल पड़ते।' सखाके मनमें यह विचार आते ही व्रजराजनन्दनकी आँखें खुल गयीं। इस बार उनके मुखपर एक मन्द मुसकान थी। यह मुसकान मानो अचिन्त्यलीलामहाशक्तिको कुछ संकेत करनेके लिये ही आयी थी। दूसरे ही क्षण, उद्धवकी आँखोंके सामने मथुराका अस्तित्व विलीन हो गया। उद्धव देख रहे हैं—सामने मधुर वृन्दावन है, व्रजराजनन्दन गोचारणके लिये वृन्दावनसे निकले हैं; अद्भुत शोभा है—

भक्तिच्छेदाढ्यचर्चां मलयजघुसृणैर्धातुचित्राणि बिभ्रद्
भूयिष्ठं नव्यवासः शिखिदलमुकुटं मुद्रिकाः कुण्डले द्वे।
गुञ्जाहारं सुरत्नस्त्रजमपि तरलं कौस्तुभं वैजयन्तीं
केयूरे कङ्कणे श्रीयुतपदकटकौ नूपुरौ शृंखलां च॥

आत्मैकदृश्यगान्धर्वाप्रतिबिम्बकरम्बितैः ।
दधद्वक्षस्ययं हारं गुम्फितं स्थूलमौक्तिकैः॥
शृंगं वामोदरपरिसरं तुन्दबन्धान्तरस्थं
दक्षे तद्वन्निहितमुरलीं रत्नचित्रां दधानः।
वामेनासौ सरललगुडीं पाणिना पीतवर्णां
लीलाम्भोजं कमलनयनः कम्पयन् दक्षिणेन॥
वंशीविषाणदलयष्टिधरैर्वयस्यैः
संवेष्टितः सदृशहासविलासवेषैः।
गन्तुं वनाय भवनाद्वनजेक्षणोऽयं
मुष्णन् मनो मृगदृशामथ निर्जगाम॥

(श्रीगोविन्दलीलामृतम्)

व्रजराजनन्दनके ललाटमें चन्दन-केसरकी खौर लगी है, कपोलोंपर धातुचित्रोंका शृंगार किया हुआ है, अतिशय सुन्दर बहुत-से वस्त्रोंसे सुसज्जित हैं, सिरपर मयूरपिच्छका मुकुट है, कानोंमें कुण्डल हैं, वक्षःस्थलपर गुञ्जाहार, सुनिर्मित रत्नमाला, वैजयन्ती एवं कौस्तुभ हैं। भुजाओंमें अंगद शोभा पा रहे हैं, दोनों हाथोंमें कंकण हैं, अँगुलीमें मुद्रिका हैं, दोनों चरणोंमें मनोहर कड़े, नूपुर तथा कटिमें क्षुद्रघण्टिका धारण किये हुए हैं। मोतीके बड़े-बड़े दानोंका बना हुआ एक हार वक्षःस्थलपर लटक रहा है, इस हारके प्रत्येक दानेमें श्रीराधाका प्रतिचित्र अङ्कित है, अवश्य ही इस चित्रको एकमात्र श्रीकृष्ण ही देख पाते हैं और किसीके ध्यानमें यह चित्र नहीं आता। उदरकी बाँयीं ओर टेंटमें सींग खोंसा है, टेंटमें ही दाहिनी ओर रत्नजटित मुरली खोंसी हुई है, बायें हाथमें पीले रंगकी छड़ी है, दाहिने हाथसे लीलाकमल नचाते जा रहे हैं। उनके सभी सखा भी उन्हींके समान वंशी, शृंग, लकुटिया आदिसे सुशोभित हैं, उनके समान ही उनके मुखपर भी हास एवं कौतुकप्रियता है, वेष भी उन्हीं-जैसा है। इस प्रकार सज-धजकर व्रजाङ्गनाओंका मन हरण करते हुए कमलनयन व्रजराजनन्दन वन जानेके लिये घरसे निकले हैं।

अपार गोराशि श्रीकृष्णको घेरे हुए चल रही है। अब वे व्रजकी समीपवर्ती भूमिमें निर्मित गोशालाके पास आ पहुँचे हैं, गोशालाकी शोभा देख-देखकर मुग्ध हो रहे हैं—

गोमयोत्पलिकाकूटैर्गिरिशृंगनिभैर्युतम् ।
वासितावासमत्तानां षण्डानां सङ्गरोद्धुरम्॥
कृष्णलीलां प्रगायद्भिर्विहसद्भिः परस्परम्।
गोमयावचयव्यग्रैर्गोपदासीशतैर्वृतम् ॥
गोयानवत्सवारणव्यग्रगोपशतान्वितम् ।
गोमयोत्पलिकाकृद्भिर्जरद्गोपीगणैर्युतम् ॥
गवां स्थानिश्रेणीस्फुटितमभितोऽल्पावृतिचयो-
ल्लसद्वत्सावासस्फुरिततलवृक्षावलिचितम् ।
करीषक्षोदस्योच्चयमृदुलभूमीतलमसौ
व्रजाभ्यर्णं पूर्णं व्रजधनजनैर्वीक्ष्य मुमुदे॥

(श्रीगोविन्दलीलामृतम्)

गोशालामें गिरिशृंगकी तरह ऊँचे-ऊँचे गोबर-कंडोंकी थाक लगी है; इधर-उधर ऋतुमती गायोंके पीछे मत्त साँड़ोंके टोल युद्धमें संलग्न हैं, शत-शत गोपदासियाँ गोमय-सङ्कलनमें व्यस्त हैं, उनके मुखसे निरन्तर श्रीकृष्णलीलाका कलित गान हो रहा है, परस्पर एक-दूसरेको हँसाती हुई आनन्दमें निमग्न होकर गोबर चुन रही हैं। गायोंको वनमें जाती देखकर उनके गोवत्स साथ जानेके लिये उछल-कूद रहे हैं, शत-शत गोप उन गोवत्सोंको रोकनेमें लगे हैं। वृद्ध गोपियाँ गोबर पाथ रही हैं। गायोंके विश्रामके लिये सुन्दर आवास बने हैं; गोवत्सोंके लिये वृक्षोंके नीचे छोटी छतके गृह बने हैं। शुष्क गोमय-चूर्णसे वहाँकी भूमि मृदुल बन गयी है। ऐसी धन-जनपूर्ण गोशालाको देखकर व्रजराजनन्दनका मुख प्रसन्नतासे खिल उठा।

उद्धव दिनभर लीला देखते रहे। अब व्रजराजनन्दनने कंधेपर हाथ रखा, तब भावसमाधि टूटी। देखा नन्दनन्दन मुसकरा रहे हैं।

संध्या हो चली है। अबतक उद्धवने भी भावसमाधिमें संध्यातककी लीला ही देखी है। व्रजराजनन्दनका हाथ पकड़कर वे प्रासादकी ओर चल पड़े। आँखोंमें आवनी लीला भरी थी, वे अभी भी देख रहे हैं—

कमल मुख सोभित सुंदर बेनु।
मोहनलाल बजावत गावत आवत चारें धेनु॥

साथ ही अन्तर्हृदयमें मानो कोई कह रहा है—उद्धव! इन व्रजाङ्गनाओंसे, गोपोंसे, गायोंसे, वृन्दावनसे व्रजराजनन्दन कभी अलग नहीं होते; ये जहाँ हैं, वहाँ श्रीव्रजराजनन्दन भी हैं ही!! (समाप्त)

गावो विश्वस्य मातरः

[डॉ० श्रीनरेशजी झा, शास्त्रचूडामणि]

अध्यात्मप्रधान इस भारतवर्षमें गौ माताका स्थान देवोंसे भी अधिक पूजनीय है। नीतिशास्त्रोंमें जो पाँच प्रकारकी माताएँ बतायी गयी हैं, उनका सम्बन्ध व्यक्तिपरक या समाजपरक होता है, किंतु यह गौ माता तो समस्त विश्वकी माता है। यह केवल कहनेकी बात नहीं है, इसका अनुभूत स्वरूप प्रत्यक्ष है। भारतीय संस्कृतिके मूलाधार वेद-वेदाङ्ग-इतिहास-पुराणादि ही हैं। इनमें न कोई वेद ऐसा है, अथवा न पुराण ही ऐसा है, जहाँ हमारी इस पूजनीया गौ माताका उल्लेख न हो। ऐसा कोई धर्म नहीं, जिसमें इसका माहात्म्य न वर्णित हो। सनातन हिन्दू-धर्ममें तो सुमेरुभूता पुण्यमयी माताके रूपमें इसकी पूजा होती है; क्योंकि इसका मानव-जीवनके जन्मसे लेकर मरणपर्यन्ततकका अटूट सम्बन्ध है। बौद्ध-जैन-सिख-ईसाई-इस्लाम-पारसी आदि विश्वके सभी धर्मोंमें इसकी महिमा गायी गयी है, यहाँ संक्षेपमें कुछका उल्लेख किया जाता है—

सर्वप्रथम ऋग्वेद (१। १५४। ६) में '**यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः**' कहकर गोमाताका स्मरण किया गया है। तदनन्तर उसकी व्यापकताको दिखाते हुए कहा गया है कि गौ रुद्रोंकी माता, वसुओंकी दुहिता तथा आदित्योंकी बहन और अमृतकी नाभि है। साथ ही उसके वधका सर्वथा निषेध किया गया है।

इतना ही नहीं गौ माताकी प्रशस्तिमें यजुर्वेद (१६। ४४) में एक मन्त्र आया है—

नमो व्रज्याय च गोष्ठ्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो हृदय्याय च निवेष्प्याय च नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च।

आशय यह है कि जो मनुष्य मेघसे उत्पन्न हुई वर्षा और वर्षासे उत्पन्न तृण आदिकी रक्षासे गौ आदि पशुओंको बढ़ायेंगे वे पुष्कल भोगोंको प्राप्त करेंगे।

गौ माताकी रक्षाके विषयमें हमें सामवेदके उस मन्त्रसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये, जिसमें इन्द्रको सम्बोधित करके कहा गया है—

'**यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत्। स्तोता मे गोसखा स्यात्। शिक्षेयमस्मै दित्सेयꣳशचीपते मनीषिणे। यदहं गोपतिः स्याम्। धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते। गामश्वं विप्युषी दुहे।**' (सामवेद १८३४—३६)

तात्पर्य यह है कि 'हे इन्द्र! यदि हमको आप सामर्थ्य दें तो हम और अपने अनुयायियोंसे गोरक्षा करवायें।' इससे यह सिद्ध है कि वैदिक कालमें गोरक्षापर विशेष बल दिया जाता था।

अथर्ववेदके एक मन्त्र (१०। १०। ३४) से सिद्ध होता है कि वशा (गाय) के दूधसे मनुष्योंको कौन कहे देवता भी जीवित रहते हैं। उन्हें गोघृतकी आहुतिसे तृप्त किया जाता है। मन्त्र इस प्रकार है—

वंशा देवा उप जीवन्ति वशां मनुष्या उत।
वशेदं सर्वमभवद्यावत्सूर्यो विपश्यति॥

अपरं च अथर्ववेद (१।१६।४) में गायकी रक्षाके लिये स्पष्ट निर्देश है कि—'**यदि नो गां हंसि....तं त्वा सीसेन विध्यामः**""॥' इन्हीं उपर्युक्त वैदिक तथ्योंको ध्यानमें रखकर कहा गया है कि—

ब्रह्म सूर्यसमं ज्योतिर्द्यौः समुद्रसमं सरः।
इन्द्रः पृथिव्यां वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते॥

अर्थात् गोमाताका माहात्म्य अपरिमेय है।

धर्मशास्त्रोंमें कहा गया है कि बाल (बछड़ा), वृद्ध (बूढ़ी गाय), रोगसे पीडिता एवं थकी हुई गायकी यथाशक्ति सेवा करनी चाहिये, यही धर्म है, अन्यथा विप्लवकी सम्भावना है। गायकी रक्षा भलीभाँति करे, उनको बिना जल पिलाये स्वयं जल न पीवे, बैठ जानेपर बैठे, यदि गौ विश्राम कर रही हो तो उसे उठाये नहीं।

गौ माताकी रक्षा एवं उसकी परिचर्याके साथ-साथ सविधि गोदानका भी स्मृतियों (धर्मशास्त्रों) में विस्तारसे उल्लेख हुआ है। स्मृतियोंका प्रायश्चित्त-प्रकरण तो पदे-पदे गोदान-प्रक्रियासे भरा है। इसी प्रकार श्राद्ध-कल्पमें गोदानसे बढ़कर और किसी दानका विशेष उल्लेख नहीं है। आदिकवि महर्षि वाल्मीकिने तो करोड़ों गायोंके दानकी बात रामायणमें कही है—

गवां कोट्ययुतं दत्त्वा विद्वद्भ्यो विधिपूर्वकम्।

वह त्रेतायुग था, जब करोड़ों गायें विद्वानोंको विधिपूर्वक दानमें देनेकी व्यवस्था थी।

महर्षि वेदव्यासप्रणीत महाभारत हिन्दूधर्मका सर्वमान्य विश्वकोष है। इसमें गायका माहात्म्य, उसके प्रत्येक अङ्गमें देवताओंका निवास तथा गोसेवाका विशेष महत्त्व निरूपित है। केवल उदाहरणके रूपमें कुछ श्लोक यहाँ

प्रस्तुत हैं—

गाश्च शुश्रूषते यश्च समन्वेति च सर्वशः।
तस्मै तुष्टाः प्रयच्छन्ति वरानपि सुदुर्लभान्॥
द्रुह्येन्न मनसा वापि गोषु नित्यं सुखप्रदः।
अर्चयेत सदा चैव नमस्कारैश्च पूजयेत्॥
दान्तः प्रीतमना नित्यं गवां व्युष्टिं तथाश्नुते।

(महा०, अनु० ८१। ३३—३५)

आशय यह है कि 'जो समान-भावसे आत्मवत् मानते हुए गायोंकी सेवा करता है, उसे गायें प्रसन्नचित्तसे अत्यन्त दुर्लभ वरदानोंको देती हैं। गौओंके साथ मनसे भी कभी द्रोह न करे, उन्हें सदा सुख पहुँचाये, उनका यथोचित सत्कार करे और नमस्कार आदिके द्वारा उनका पूजन करता रहे। जो मनुष्य जितेन्द्रिय और प्रसन्नचित्त होकर नित्य गौओंकी सेवा करता है, वह समृद्धिका भागी होता है।'

पुराणोंमें तो स्थल-स्थलपर गौका तथा गोसेवाका माहात्म्य वर्णित है। पद्मपुराण, अग्निपुराण, ब्रह्मपुराण, स्कन्दपुराण तथा भविष्यपुराणमें गायोंकी सेवाके विषयमें बहुत ही सुन्दर प्रसंग हैं। पद्मपुराणका स्पष्ट उद्घोष है—

सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम्।
यद्गृहे दुःखिता गावः स याति नरकं नरः॥
गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत्।
गावो भूतं च भव्यं च गावः पुष्टिः सनातनी॥

तात्पर्य यह है कि 'संसारके समस्त प्राणियोंका एकमात्र आधार गायें हैं। जिसके घरमें ये दुःखी रहती हैं, वह निश्चय ही नरकगामी होता है। इतना ही नहीं, गायें सब प्राणियोंकी प्रतिष्ठा-रूपा हैं, कल्याणदायिनी हैं। भूत-भविष्य सब कालमें पुष्टि देनेवाली हैं।'

सच बात तो यह है कि गाय, विप्र, वेद, सती, सत्यवादी, अलोभी और दानशील—इन सातोंसे पृथ्वी स्थिर है। यहाँतक कहा गया है कि—

यो वै नित्यं पूजयति गामिह यवसादिभिः।
तस्य देवाश्च पितरो नित्यं भूत्या भवन्ति हि॥

आशय यह कि 'जो गोभक्त मानव घास-चारे आदिसे गायकी नित्य पूजा करता है, देवता और पितर निरन्तर उसकी कामनाकी पूर्ति करते रहते हैं।'

शिवपुराणमें कहा गया है—

यो गोब्राह्मणकन्यानां स्वामिमित्रतपस्विनाम्।
विनाशयन्ति कार्याणि ते नरा नारकाः स्मृताः॥

अर्थात् 'नरकगामी पुरुषोंकी श्रेणीमें वे आते हैं जो गाय, ब्राह्मण, कन्या, स्वामी, मित्र और तपस्वियोंके कार्यमें विघ्न पहुँचाते हैं।'

यह गौ माताकी ही विशेषता है कि समस्त कृत-पुण्योंमें गोसेवाजन्य पुण्य सर्वाधिक है। इसका कारण यह भी है कि गायके अङ्गोंमें समस्त देवता तथा सम्पूर्ण तीर्थोंका निवास है।

लक्ष्मी-प्राप्तिका सरल उपाय गोमय (गोबर)-का उपलेपन

स्कन्दपुराणके अनुसार—'गोमय (गोबर)-में लक्ष्मीका निवास रहता है, अतः उसके द्वारा भूमिको लीपनेसे लक्ष्मी स्वयं आ जाती हैं।' जैसा कि कहा गया है—

लक्ष्मीश्च गोमये नित्यं पवित्रा सर्वमङ्गला।
गोमयालेपनं तस्मात् कर्तव्यं पाण्डुनन्दन॥

(स्कन्दपुराण, अवन्ती० रे० ८३। १०८)

इसी प्रकारके गोमाहात्म्य तथा गोदानके माहात्म्य श्रीमद्भागवत, नरसिंहपुराण तथा स्मृतियों आदिमें विस्तारसे वर्णित हैं।

महाभारतमें सारांश-रूपमें यह कहा गया है कि गाय संसारमें सबसे श्रेष्ठ, पवित्र मानी गयी है, क्योंकि बिना गोदुग्ध-दही-घृतके कोई भी यज्ञ प्रवर्तित नहीं हो सकता। गाय ही एक ऐसी माता है, जिसके दूधसे, हविष्यसे, दहीसे, गोबरसे, मूत्रसे, चर्मसे, हड्डियोंसे, बालोंसे, सींगोंसे अर्थात् सभीसे संसारका उपकार-ही-उपकार होता है। संसारमें गायके समान पवित्र तथा उपकारी अन्य कुछ भी नहीं है।

सनातन हिन्दू-धर्म-शास्त्रोंके समान ही बौद्धधर्ममें भी गायको माता-पिता, परम मित्र और पूजनीया कहा गया है—

यथा माता पिता भ्राता अञ्ञे वापि च ञातका।
गावो नो परमा मित्ता यासु जाअन्ति ओसधा॥

गायकी हिंसाका निषेध करते हुए कहा गया है कि 'गौ माता अन्न देनेवाली, बल देनेवाली, सुख देनेवाली और कल्याणमयी हैं, अतः इनकी हिंसा न करे'—

अन्नदा बलदा चेता वण्णदा सुखदा तथा।
एतमत्थवसं ञत्वा नास्सु गावो हनिंषु ते॥

हिन्दू-धर्मके रक्षक गुरु गोविन्दसिंहजी गौ माताके विषयमें कहते हैं—

आस पूरण करौ तुम हमारी,
मिटे कष्ट गौवन छुटे खेद भारी।

यही देहु आज्ञा तुर्क को मिटाऊँ
गऊ घात का दोष जग से हटाऊँ॥

इसी प्रकार पारसी तथा ईसाई-धर्ममें भी गो-महिमाका उल्लेख मिलता है।

इस्लाम-धर्मके 'कुरानशरीफ सूर ए हज' में स्पष्ट रूपसे कहा गया है कि—

'हरगिज नहीं पहुँचते अल्लाहके पास उसके गोश्त और खून। हाँ, पहुँचती है उसके पास तुम्हारी परहेजगारी।'

इसी प्रकार एक उपदेश है—*'गायका गोश्त बीमारी, उसका मक्खन दवा, उसका दूध शिफा है।'*

इस प्रकार हम देखते हैं कि वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों, इतिहास-पुराणों, बौद्ध-जैन-धर्म-ग्रन्थों, गुरुग्रन्थ साहब, पारसी, ईसाई, इस्लाम आदि सभीके पवित्र ग्रन्थोंमें गौ माताकी महनीयता सिद्ध की गयी है। अतः **'गावो विश्वस्य मातरः'** यह सदुक्ति समीचीन ही है। आज आवश्यकता है कि इस महिमामयी गौ माताकी अर्चना-सेवा हम सभी उसी प्रकार करें, जिस प्रकार महाराज दिलीपने अपनी रानी सुदक्षिणाके साथ की थी। जिसका हृदयस्पर्शी वर्णन महाकवि कालिदासकृत रघुवंशके द्वितीय सर्गमें उपलब्ध है।

गोमूत्र और गोमयसे रोग-निवारण

गायके मूत्रको गोमूत्र कहते हैं। वैद्यलोग इसका औषधोंमें बहुत उपयोग करते हैं। यह सौम्य और रेचक है। कब्ज़ हो गया हो, पेट फूल गया हो, डकारें आती हों, मुँह मिचलाता हो तो तीन तोला स्वच्छ और ताजा गोमूत्र छानकर आधा माशा नमक मिलाकर पी जाना चाहिये। थोड़ी ही देरमें टट्टी होकर पेट उतर जाता है और आराम मालूम होता है। छोटे बच्चोंका पेट फूलनेपर उन्हें गोमूत्र पिलाया जाता है। उम्रके अनुसार साधारणतः एक वर्षके बच्चेको एक चम्मच गोमूत्र नमक मिलाकर पिला देना चाहिये। तुरंत पेट उतर जाता है। पेटके कृमियोंको मिटानेके लिये तो गोमूत्रसे बढ़कर कोई दूसरी औषधि ही नहीं है। बच्चोंके हब्बा-डब्बा रोगपर भी कुलथीके काढ़ेके साथ गोमूत्र दिया जाता है। बच्चेकी दो मुट्ठियोंमें जितनी समाये, उतनी कुलथी कूटकर और उसमें बच्चेकी हथेलीके बराबर आकका पत्ता छोड़कर आध सेर पानीमें पकाना चाहिये। जब पानी एक छटाँक रह जाय तब उसे छानकर और उसमें उतना ही गोमूत्र मिलाकर पिलाना चाहिये। तीन दिनमें ही टट्टी-पेशाब साफ होकर पेट उतरने लगता है और सात दिनमें हब्बा-डब्बा रोग अच्छा हो जाता है। [इस रोगमें बच्चेका शरीर फूल जाता है, पेट बढ़ जाता है और नाभि ऊपर आ जाती है।]

पेटकी हर-एक व्याधिपर गोमूत्र रामबाण है। यकृत् या प्लीहा बढ़ गयी हो तो पाँच तोला गोमूत्र नमक मिलाकर प्रतिदिन पिलानेसे थोड़े ही दिनोंमें आराम मालूम होता है। यकृत् या प्लीहापर गोमूत्रसे सेंक भी किया जाता है। उसकी विधि इस प्रकार है—एक अच्छी ईंट आगमें गरम कर ली जाय। फिर उसपर गोमूत्र छोड़कर गोमूत्रमें भिगोये हुए कपड़ेमें उसे लपेट लिया जाय और उससे नरम-नरम सेंका जाय। इससे यकृत् या प्लीहा घट जाती है। शरीर खुजलाता हो तो कड़ुवा जीरा गोमूत्रमें पीसकर उसका लेप किया जाय और नीमके पत्ते छोड़कर उबाले हुए पानीसे नहाया जाय इससे खुजलाहट बंद हो जायगी। गोमूत्रमें बावचीको पीसकर रातमें कोढ़के सफेद दागोंपर लेप करने और सुबह गोमूत्रसे ही धो डालनेसे कुछ दिनोंमें दाग मिट जाते हैं। पेटके फूलनेपर भी गोमूत्रका सेंक लाभकारी होता है।

यकृत् और प्लीहाके बढ़नेसे उदररोग हो गया हो तो पुनर्नवाके काढ़ेमें आधा गोमूत्र मिलाकर पिलाया जाय, इससे उदररोग अच्छा हो जायगा। इस सम्बन्धमें अक्कलकोटके डॉक्टर चाटी अपना अनुभव इस प्रकार बतलाते हैं—अपनी चालीस वर्षकी नौकरीमें मैंने कितने ही जलोदरके रोगियोंका इलाज किया। उन्हें अंग्रेजी दवाएँ पिलायीं और पेट चीरकर दो, तीन, चार बार भी पेटका पानी निकाल दिया; परंतु उनमेंसे अधिकांश रोगियोंकी मृत्यु हो गयी। मैंने सुना और आयुर्वेदिक ग्रन्थोंमें पढ़ा था कि इस रोगपर गोमूत्रका उपयोग बहुत ही लाभकारी होता है, परंतु मुझे विश्वास नहीं होता था। एक बार एक साधु महात्माने गोमूत्रके गुणोंका बहुत वर्णन करके कहा कि इसका जलोदरपर बहुत अच्छा उपयोग होता है। तदनुसार चार रोगियोंपर मैंने गोमूत्रका प्रयोग करके देखा। उनमेंसे तीन चंगे हो गये। जो चौथा मर गया, वह मुमूर्षु-अवस्थामें ही मेरे पास आया था। जो अच्छे हो गये,

उनमेंसे एकका ब्योरा इस प्रकार है—सन् १९१० में जब मैं अक्कलकोट राज्यमें 'चीफ मेडिकल अफसर' था तब मुझे जुन्नर गाँवमें जरूरी कामसे बुलाया गया। वहाँ अप्पण्णा नामक एक तीस वर्षका बढ़ई जलोदरसे आसन्नमरण हो रहा था, उसीका इलाज करना था। रोगीका सब शरीर फूल गया था। न वह कुछ निगल सकता था, न हिल सकता था और बड़े कष्टसे साँस लेता था। उसके जीनेकी कोई आशा नहीं बच रही थी। उसे इंजेक्शन देकर शक्तिवर्धक औषधि खिलायी और पेट चीरकर १६ पौंड पानी निकाल दिया, जिससे वह श्वासोच्छ्वास ठीक तरहसे करने लगा। पंद्रह दिन बाद फिर ऑपरेशन कर १४ पौंड पानी उसके पेटसे निकाला। अब वह अच्छा हो गया और उसके पेटमें फिर पानी जमा नहीं हुआ। पहले दिनसे ही उसे मैं एक नीरोग और बलिष्ठ गायका मूत्र शहदके साथ दिया करता और एक पौंड गोदुग्ध पिलाया करता था। पंद्रह दिन बाद दो पौंड दूध देने लगा। इस इलाजसे एक ही महीनेमें वह चंगा हो गया। मैंने इलाज बंद कर दिया। यद्यपि अब गोमूत्र-सेवनके लिये उससे मैंने नहीं कहा था, तथापि वह बराबर गोमूत्र पीया करता था। उसका विश्वास हो गया था कि गोमूत्रसे ही मेरे प्राण बचे हैं, इस कारण गोमूत्र-सेवनसे वह विरत नहीं हुआ और धीरे-धीरे हट्टा-कट्टा हो गया।

गोमय-माहात्म्य

अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां वने वने।
तासामृषभपत्नीना पवित्रं कायशोधनम्॥
तन्मे रोगांश्च शोकांश्च नुद गोमय सर्वदा।

—इस मन्त्रसे सिरसे पैरतक गोबर लगाकर स्नान करनेकी श्रावणीकर्ममें विधि है। पञ्चगव्य (दही, दूध, घी, गोमूत्र और गोमय)-प्राशन भी श्रावणीमें किया जाता है। आधुनिक शिक्षित लोग इस विधिको घृणित और हेय समझते हैं; परंतु स्वास्थ्यकी दृष्टिसे पञ्चगव्यका कितना महत्त्व है, इसका उन्होंने कभी विचार ही नहीं किया है। इस सम्बन्धमें डॉ० रविप्रताप महाशयने 'विशाल भारत' में एक लेख लिखा था, उसमें आप लिखते हैं—'भारतमें अनादिकालसे गोबरका मानव-शरीरके लिये ओषधिकी तरह उपयोग किया जा रहा है। परंतु इस बीसवीं शताब्दीमें यह जानकर इस दिव्यौषधिका हमने त्याग कर दिया कि यह घृणित, गंदी, आरोग्य-विघातक और दुर्गन्धिमय वस्तु है। यहाँतक कि म्युनिसिपलिटियोंके अधिकारी लोगोंको हुक्म देने लगे हैं कि जमीन गोबरके बदले चूनेसे लीपा करो। आश्चर्यकी बात है कि सहज-सुलभ और निसर्गदत्त गोबर-जैसी कृमिनामक वस्तुको त्यागकर महँगे, कृत्रिम और विदेशी जन्तुनाशक द्रव्योंका हम संग्रह कर रहे हैं।'

हिंदूधर्मके प्रायः सभी धार्मिक कार्योंमें गोबरका उपयोग किया जाता है। (**गोमयेन प्रदक्षिणमुपलिप्य**) इसका कारण भी यही है कि गोबरमें रोगके कीटाणुओंका नाश करनेका गुण विद्यमान है। प्राचीन ऋषि-महर्षि अपनी पर्णकुटियाँ गोबरसे लीपकर स्वच्छ रखते थे। वे वस्तुकी व्यावहारिक उपयोगिता जानकर उसे धार्मिक स्वरूप दे दिया करते थे, जिससे वह समाजमें रूढ़ हो जाय।

इटलीवालोंकी खोज

इटलीके प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० जी० ई० बीगेंडने गोबरके अनेक प्रयोग कर सिद्ध किया है कि ताजे गोबरसे तपेदिक और मलेरियाके जन्तु तुरंत मर जाते हैं। प्रोफेसर महाशयका अनुभव है कि प्राथमिक अवस्थाके जन्तु तो गोबरकी गन्धसे ही मर जाते हैं। गोबरके इस अलौकिक गुणके कारण इटलीके अधिकांश सेनिटोरियमोंमें गोबरका ही उपयोग करते हैं। इटलीमें अब भी हैजा या अतिसारके रोगीको ताजे पानीमें ताजा गोबर घोलकर पिलाते हैं और जिस तालाबके पानीमें हैजेके जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं, उसमें गोबर डालते हैं। उनका अनुभव है कि इससे हैजेके जन्तु तुरंत मर जाते हैं। गोबरसे फोड़ा-फुंसी, घाव, दंश, चक्कर, लचक आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। डॉ० मैकफर्सनने दो वर्षतक गोबरका संशोधन कर उसका इतिवृत्त 'न्यूयार्क टाइम्स' में छपाया है। उसमें अनेक सिद्धान्त स्थिर कर उन्होंने यह सिद्ध किया है कि गोबरसे बढ़कर कीटाणुनाशक कोई दूसरा उपयुक्त द्रव्य नहीं है। उनका कहना है कि गोबर उसी गायका होना चाहिये, जिसका आहार उत्तम हो और जो नीरोग हो। '**अग्रमग्रं चरन्तीनाम्**'—इस मन्त्रका भी यही अभिप्राय है।

गाय आरोग्य-देवता है

सतपुड़ेके गोंड, भील आदि सब कामोंमें गोबरका उपयोग करते हैं। अपस्मार, चक्कर, मस्तकविकार, मूर्छा आदि रोगोंपर वे गायके दूध या तिलके तेलमें गोबर घोलकर पिलाते और इसीका लेप करते हैं। तेलमें गोबर मिलाकर मालिश करनेसे मज्जातन्तु नीरोग हो जाते हैं। वैद्यलोग क्षयरोगियोंको

गायोंके बाड़ेमें सुलानेको कहते हैं। क्योंकि गोमूत्र और गोबरकी गन्धसे क्षयरोगीके शरीरके क्षयजन्तु मर जाते हैं। क्षयरोगीके पलँगको प्रतिदिन गोबर और गोमूत्रके जलसे धो डालना भी लाभदायक होता है। हिंदूलोग गोबर और गोमूत्रसे प्रात:काल घरके द्वार लीपते हैं। इसका कारण यही है कि दोनों द्रव्य रोगकीटनाशक हैं। सन् १९३४ में मद्रासप्रान्तमें हैजेका प्रकोप हुआ। उस समय जो गोबरके गारोंमें काम करते थे, उनपर हैजेका कोई परिणाम नहीं हुआ। इस अनुभवके अनुसार वहाँ अब वर्षाकालमें सब कामोंमें गोबरका ही उपयोग किया जाता है। वहाँके प्रयोगोंसे सिद्ध हो चुका है कि आगसे जल जाने या चोटसे घाव होनेपर गोबरके लेपसे अच्छा हो जाता है। खुजली, चकत्ते आदि रोग तो गोमूत्र और गोबरके प्रयोगसे बात-की-बातमें अच्छे हो जाते हैं।

सार्वजनिक विषूचिका-प्रतिबन्ध

श्रावणीकर्मके पञ्चगव्य-प्राशनकी विधिमें भी यही उद्देश्य है। आषाढ़ तथा श्रावणमें जब नया पानी आ जाता है तब इससे हैजेकी सम्भावना होती है। उसीके प्रतिबन्धके लिये पञ्चगव्य-प्राशनका प्रारम्भिक उपचार है। खाद्याखाद्य, पेयापेय, स्पृश्यास्पृश्य आदिका विचार न करनेवाले लोगोंको ही हैजा हो जानेकी अधिक सम्भावना रहती है। इसीलिये धार्मिक प्रक्रियाओं और शुद्धिसंस्कारमें पञ्चगव्य प्रायश्चित्तका विशेष महत्त्व है।

मद्रासके सुप्रसिद्ध डॉक्टर किंग कहते हैं—यह अब प्रयोगोंसे सिद्ध हो चुका है कि गायके गोबरमें हैजेके जन्तुओंका संहार करनेकी विचित्र शक्ति है। गायके गोबरका शास्त्रीय रीतिसे पृथक्करण कर, उसका सत्त्व निकालकर उसे जहाँ-जहाँ पानीमें डालकर देखा गया, वहाँकी घनी बस्तीमें भी कहीं हैजा नहीं हुआ। डॉक्टरोंने अब सिद्ध कर दिया है कि 'रोगजन्तु-नाशके लिये गोमयका बहुत ही महत्त्वपूर्ण उपयोग है।'

'गोबर' की उपयोगिता

[श्रीहरिवल्लभजी बोहरा 'हरि', एम० ए० (हिन्दी), एम० कॉम०, बी० एड०]

गायकी महिमा अद्भुत है। ऐसी मान्यता है कि तीर्थस्थान, भगवान्‌की सेवा, सभी प्रकारके व्रत एवं उपवास, महादान, ब्राह्मण-भोजन, तप, तीर्थाटन और सत्य वाणीके जो भी सम्मिलित पुण्य हैं, वे सभी केवल-मात्र सच्ची गो-सेवासे प्राप्त हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त गोसेवाका व्यावहारिक एवं आर्थिक दृष्टिसे अत्यधिक महत्त्व है। मनुष्यके शरीर और मस्तिष्क—इन दोनोंको सर्वोत्तम पोषण प्रदान करनेवाले आहारके रूपमें इसका सार्वभौमिक महत्त्व है और राष्ट्रिय अर्थव्यवस्थामें इसकी प्रमुख भूमिका है।

वैज्ञानिक यह निष्कर्ष सिद्ध करते हैं कि स्वच्छता एवं पवित्रताकी दृष्टिसे गायका गोबर एवं गोमूत्र सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है। आज भी ग्रामोंमें जनसामान्य अपने घरको स्वच्छ एवं पवित्र करनेके लिये गोबर तथा गोमूत्रका उपयोग करते हैं।

अनुभवजनित निष्कर्ष है कि रासायनिक उर्वरकोंकी तुलनामें गायकी खादसे जो अन्न उत्पन्न होता है, उसमें अधिक स्वाद, पौष्टिकता एवं सद्‌बुद्धि प्रदान करनेका गुण होता है। स्वस्थ तथा नीरोगी कायाका मूलाधार भी गो-वंश ही है।

शास्त्रोंने गायको अर्थशास्त्रका प्रमुख आधार बताया है—

'धनं च गोधनं धान्यं स्वर्णादयो वृथैव हि।'

पञ्चगव्यमें गायके ही गोबरका उपयोग होता है। भारतीय परिवेशमें पञ्चगव्यकी उपादेयतापर अधिक प्रकाश डालनेकी आवश्यकता नहीं है। हमारे पारम्परिक माङ्गलिक अवसरोंपर, रसोई-चूल्हेसे लेकर ईंधन तथा यज्ञकी वेदीतक गोबर एक महत्त्वपूर्ण एवं पवित्र पदार्थ माना गया है।

गोबरकी खाद और रस पाकर वनोंकी दुर्लभ ओषधियाँ पुनर्जीवित हो उठती हैं। गोबर ही समस्त प्रकारकी वन्य ओषधियोंका मूल है।

वैज्ञानिक विचारधाराओंमें निरन्तर आश्चर्यजनक रूपसे परिवर्तन होते रहते हैं; परंतु गोबरके सम्बन्धमें शाश्वत धारणा है कि कृत्रिम खादके स्थानपर गोबरकी खाद सौ गुना बेहतर है।

धरतीकी अन्न उपजानेकी शक्तिमें वृद्धि गोबरसे होती है। रासायनिक खादोंके निरन्तर प्रयोगसे भूमिके ऊपर बन जानेका खतरा निरन्तर बढ़ता जा रहा है, जबकि गोबरसे भूमिकी उर्वरा-शक्ति घटनेके बजाय बढ़ती है।

दुर्गन्ध दूर करनेमें उत्तम किस्मकी फिनायल भी

गोबरसे कहीं पीछे है। यत्र-तत्र पलनेवाले हानिकारक कीटाणु तो गोबरकी उपस्थिति मात्रसे ही भाग जाते हैं। गरम गोबरका प्रयोग भी बहु-उपयोगी है। गीला गोबर रसयुक्त होता है। ताजे गरम गोबरपर बारीक कपड़ा रखकर निचोड़नेपर अत्यधिक मात्रामें गोबरका रस मिल सकता है। गोबरका रस अत्यन्त लाभकारी पदार्थ है।

गोबरके रसमें रससे चार गुना तेल मिलाकर गर्म किया जाय और जबतक सम्पूर्ण रस तेलमें न मिल जाय, तबतक गरम किया जाय, जब केवल-मात्र तेल ही शेष बच जाय तो यह गोमय-तेल दृष्टि-मान्द्यतामें बहुत उपयोगी है गोमय-तेल आँखोंमें लगानेसे नेत्र-ज्योति निश्चित रूपसे बढ़ती है।

विभिन्न प्रकारके चर्मरोग मरिच्यादि तेलसे नष्ट हो जाते हैं। यह चमत्कारी मरिच्यादि तेल गोबरके रससे ही बनता है। मनुष्यका कायाकल्प करनेमें शुद्ध भल्लातक प्रयोग किया जाता है। यह भल्लातक भिलावेसे बनता है जो कि विषयुक्त पदार्थ है, परंतु गोमय-रसमें पकानेसे भिलावेके समस्त विष-तत्त्व नष्ट हो जाते हैं।

गोबरके कंडेकी आगमें विशेष प्रभावोत्पादक किरणें होती हैं। इसी कारण विभिन्न प्रकारकी औषधियाँ एवं रस बनानेमें केवल-मात्र गोबरकी आग ही काममें ली जाती है।

बंदरके काटनेसे हुए घावपर गरमागरम ताजा गोबर लगानेसे पीड़ा जादुई-रूपसे समाप्त हो जाती है। सूखी खुजलीमें भी गोबर-रस रामबाण पदार्थ है। दादा, जो कि चर्मरोग है, उसमें खुजलाकर घाव पैदा कर देती है। यदि दादको कंडेसे खुजलाकर दवा लगायी जय तो दादकी बीमारी तुरंत दूर की जा सकती है। गोबरको जलानेके उपरान्त बनी राख भी उपयोगी होती है। निश्चेष्ट शरीरपर गोबरकी राख रगड़नेसे शरीरको अतिरिक्त ऊर्जा मिलती है। रुधिर-तन्त्र स्वतः ही ठीक ढंगसे कार्य करने लगता है। राखसे दाँत और बर्तन चमकानेकी उपादेयतासे कौन-सी गृहिणी अनभिज्ञ होगी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोबर अपने जन्मसे लेकर जलनेके उपरान्त राख बननेतक उपयोगी रहता है। कहा भी गया है—'**गोमये वसते लक्ष्मीः।**' गोमूत्र एवं गोबरमें लक्ष्मीका निवास रहता है।

गायका गोबर अत्यन्त लाभप्रद एवं पर्यावरणीय दृष्टिकोणसे भी महत्त्वपूर्ण पदार्थ है। गोबरके इतने सारे गुण देखकर भी क्या हमें नहीं चेतना चाहिये कि जिस स्रोतसे यह गोबर हमें मिलता है, उसका संरक्षण एवं संवर्धन किया जाना चाहिये? यदि हम संकल्प कर सकें कि हम मिलकर गोमाताका संहार रोकेंगे तो कोई शक नहीं हमारा राष्ट्र समृद्धशाली होगा एवं देशमें दूध-दहीकी नदियाँ बह सकेंगी।

लक्ष्मीप्रदाता, लाभप्रद औषधि एवं पर्यावरण-संतुलनका महत्त्वपूर्ण घटक 'गोबर' केवल-मात्र गोबर ही नहीं है।

भारतमें गोरक्षाकी अनिवार्यता

[डॉ० श्रीमुहम्मदखाँ दुर्रानी, शास्त्री, एम० ए०, पी०-एच० डी०]

कुछ वर्ष पूर्व जब मुझे ज्ञात हुआ कि भारतके स्वतन्त्र हो जानेके पश्चात् भी भारतमें भारतीयोंद्वारा 'गोवध' प्रचलित है तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ और विश्वास ही न हो पाया। जिस गौकी महिमाको अनादिकालसे ऋषियों, मुनियों तथा विद्वानोंद्वारा वेदों, उपनिषदों, पुराणों, ब्राह्मणग्रन्थों, रामायण, महाभारत तथा भागवतमें गाया जाता रहा है, वर्णाश्रमधर्मके चारों मानव-स्तरोंपर जिसका सम्मान रहा है तथा मानव-जीवनके सोलहों संस्कारोंमें जिसकी पूजा श्रेयस्कर एवं वेदविहित मानी जाती रही है, उस गोमाताके प्रति अपने स्वतन्त्र देशमें सम्मान तो दूरकी बात—उसकी पूजा तो दूरकी बात—उसका वध कराकर उसके मांससे पेट-पूजा की जाती है। जो उसमें सहानुभूति प्रकट करे, उसकी खबर ली जाती है और जो उसकी पूजाका व्रत धारण करे उसे जेलकी सजा दी जाती है! वाह रे कैसा युग बदला!!

तीर्थोंपर जो 'गोदान' करेगा उसे क्या देश-निकालेका दण्ड मिलेगा अथवा मृत्युदण्ड? 'गोहत्या' पर साधु-समाजको क्या भारतमें समूल नष्ट कर दिया जायगा? ये मेरे भावनात्मक अथवा आवेशात्मक उद्गार नहीं, अपितु तथ्यपूर्ण विचार हैं। मैं मुस्लिम हूँ, पर भारतीय मुस्लिम। मुझे मुस्लिम होनेपर गर्व है। भारतीय होनेपर उससे अधिक गर्व था, किंतु अब मुझे भारतीय होनेपर कुछ भी गर्व नहीं रहा। यहाँके अधिकांश लोग स्वार्थपरतावश धर्म-त्याग तथा नास्तिक बनानेकी ओर अग्रसर रहते हैं। स्वार्थमें इतने अन्धे रहते हैं कि किसी समस्याको सुलझानेका प्रयास करनेके पूर्व ही असमर्थता प्रकट कर देते हैं। अतः कार्य आरम्भ ही नहीं करते। इसीलिये तो कहा गया है कि—

'प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः।'

अर्थात् 'नीच लोग विघ्नोंके भयसे कोई अभीष्ट कार्य आरम्भ ही नहीं करते।'

उदाहरणार्थ, जब 'गोवध-प्रतिबन्ध' की माँग की जाती है तो उत्तर मिलता है—'चर्म-पूर्ति कैसे होगी? उदरपूर्ति कैसे होगी? और फिर बढ़ती हुई गौओंका पालन कैसे होगा? इत्यादि-इत्यादि।' इस प्रकारके सहस्रों प्रश्नोंमें ग्रथित समस्याओंके समाधानकी दिशामें क्या देशके कर्णधारोंने कोई प्रयास किया? भारतीय संस्कृतिके 'गुरु-गोविन्द-गौ'—ये तीन ही आदिकालसे आधार-स्तम्भ रहे हैं। आज भारतमें इन तीनोंके प्रति कितनी उपेक्षाका भाव है यह भी जगजाहिर ही है।

कुरानमें गोवधका आदेश नहीं

हमारे 'कुरान' में कहीं भी 'गोवध' का आदेश नहीं है। हमारी नसोंमें 'गोमाता' के दूधसे निर्मित रक्त संचारित है। हम 'गोवध' को सहन कर 'माता' का दूध न लजायेंगे और उसकी रक्षाके लिये सक्रिय कदम उठायेंगे। कुछ लोग कहेंगे कि दूध तो भैंसका भी पीते हैं, उसे क्यों न बचायें? ठीक है, यदि सम्भव हो, तो उसे भी बचाइये, किंतु प्रथम 'गौ' को बचाकर। क्योंकि 'गोमाता' का महत्त्व हमारे मन्त्रद्रष्टा ऋषियोंद्वारा रचित धर्मग्रन्थोंमें कथित है जिससे यह समाज अपनी विशिष्ट संस्कृति-सहित जीवित है।

किंकर्तव्यविमूढता

खेदका विषय है कि आज संसार हँस रहा है, हमारी स्वार्थपरतापर, नास्तिकतापर और किंकर्तव्यविमूढतापर। संसारमें ऐसे भी समाज हैं जो अपनी संस्कृति-सम्बन्धी बालकी खालपर उसे बालका बाल-बाँका न होने देनेके लिये सर्वस्व निछावर कर देते हैं और एक हम हैं कि **'गोपरित्राणाय'** किसी योजनापर विचार भी नहीं करते। बिना योजना बनाये केवल 'गोवध-प्रतिबन्ध' घातक सिद्ध होगा।

समाजके विचारार्थ 'गो-रक्षा' में बाधक मूलभूत तीन प्रश्नोंके उत्तर ये हो सकते हैं—

प्रश्न (१) 'गो-वध-निषेध' पर चर्मपूर्ति कैसे होगी?

उत्तर—अरे भाई! देहान्त होनेपर 'गौ' सशरीर कहीं उड़ थोड़े ही जायगी? मृत्युपर तो चर्म मिलेगा ही। अतः जीते-जी उसे क्यों मारते हो? यदि कहो कि मरनेपर चमड़ा कठोर हो जाता है तो उत्तर है कि मृत चर्मको रासायनिक विधिसे उत्तम बनाया जा सकता है।

प्रश्न (२) 'गोवध-निषेध' पर उदरपूर्ति कैसे होगी?

उत्तर—भारतकी इस सस्य-श्यामला भूमिपर फल-शाकादिकी कमी नहीं। परिश्रमसे इससे सभी कुछ मिलता है। 'गो-नस्ल-सुधार' से अधिक दुग्ध एवं पुष्ट बछड़े प्राप्त होते हैं, जो कृषिको उन्नत करते हैं और मानव क्षुधाग्रस्त होकर नहीं मरने पाता। गो और देवताओंके अभिशापके कारण ही आज भारतमें मनुष्य भूखों मर रहा है। 'गो-सुरक्षा' की दिशामें यदि आवश्यक योजना कार्यान्वित हो तो कोई कारण नहीं कि देवगण प्रसन्न होकर भारत-वसुन्धरापर सुख-समृद्धिकी वर्षा न करें। राष्ट्रिय स्तरपर 'गोरक्षा'-योजना बनाकर देशकी समृद्धिके लिये सहस्रों यज्ञोंका फल प्राप्त करें।

प्रश्न (३) 'गोवध-निषेध' पर बढ़ती हुई गौओंका पालन कैसे होगा?

उत्तर—इस प्रश्नपर विस्तारपूर्वक विचार करनेके लिये सशक्त 'गो-सुरक्षा-आयोग' को गठन किया जाय। तो निम्न प्रकारके सुझावोंको कार्यान्वित करानेकी दिशामें कार्य करे—

[क] राष्ट्रिय स्तरपर इतनी गोशालाएँ खोली जायँ कि कोई भी गो आवारा न फिरने पाये।

[ख] देशी 'गो-नस्ल-सुधार'-केन्द्रोंकी समुचित व्यवस्था की जाय।

[ग] 'गो-विकास'के विषयपर अनुसंधान-कार्य किये जायँ।

[घ] 'गो' को 'राष्ट्रिय घरेलू पशु' घोषित किया जाय तथा उसका वध निषिद्ध किया जाय।

[ङ] राष्ट्रिय स्तरपर गोचर-भूमि उपलब्ध करायी जाय।

[च] लोगोंको गोमूत्र-गोबरकी बहुआयामी उपयोगिताको समझाया जाय।

यदि देशके कर्णधार 'गोरक्षा'-सम्बन्धी उपर्युक्त प्रकारकी योजना प्रारम्भ करें तो कोई कारण नहीं कि समस्त देशमें एक खुशीकी लहर न दौड़ जाय। अतः सभीको ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि शीघ्र ही 'गोहत्या-बंदी' हो जाय और लोग 'गोसेवा' के महान् कार्यमें जुट जायँ।

'कल्याण' के पुनर्मुद्रित विशेषाङ्क

कोड	नाम	कल्याण वर्ष
1184	श्रीकृष्णाङ्क	६
41	शक्ति-अङ्क	९
616	योगाङ्क	१०
627	संत-अङ्क	१२
604	साधनाङ्क	१५
39	सं० महाभारत (प्रथम खण्ड)	१७
511	सं० महाभारत (द्वितीय खण्ड)	१७
44	सं० पद्मपुराण	१९
1773	गो-अङ्क	२०
539	सं० मार्कण्डेयपुराण	२१
1111	सं० ब्रह्मपुराण	२१
43	नारी-अङ्क	२२
659	उपनिषद्-अङ्क	२३
279	सं० स्कन्दपुराण	२५
40	भक्त-चरिताङ्क	२६
48	श्रीश्रीविष्णुपुराण	२८
1183	सं० नारदपुराण	२८
667	सन्तवाणी-अङ्क	२९
587	सत्कथा-अङ्क	३०
636	तीर्थाङ्क	३१
1133	सं० श्रीमद्देवीभागवत	३४
574	सं० योगवासिष्ठ	३५
789	सं० शिवपुराण	३६
631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण	३७
1135	श्रीभगवन्नाम-महिमा और प्रार्थना अङ्क	३९
572	परलोक-पुनर्जन्माङ्क	४३
517	गर्ग-संहिता	४४-४५
1362	अग्निपुराण (मूलसंस्कृतका हिन्दीअनुवाद)	४४-४५
1113	नृसिंहपुराणम्-(सानुवाद)	४५
657	श्रीगणेश-अङ्क	४८
42	हनुमान-अङ्क	४९
1361	सं० श्रीवराहपुराण	५१
791	सूर्याङ्क	५३
1432	वामनपुराण	५६
557	मत्स्यमहापुराण (सानुवाद)	५९
584	सं० भविष्यपुराण	६६
586	शिवोपासनाङ्क	६७
653	गो-सेवा-अङ्क	६९
1131	कूर्मपुराण-सटीक	७१
1044	वेदकथाङ्क	७३
1189	सं० गरुडपुराण	७४
1592	आरोग्य-अङ्क (परिवर्धित सं०)	७५
1467	भगवत्प्रेम-अङ्क	७७
1610	महाभागवत (देवीपुराण)	७९
1793	श्रीमद्देवीभागवताङ्क (पूर्वार्ध)	८२
१८42	श्रीमद्देवीभागवताङ्क (उत्तरार्ध)	८३
1985	लिङ्गमहापुराण-सटीक	८६
1947	भक्तमाल अङ्क	८७
1980	ज्योतिषतत्त्वाङ्क	८८

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित उपनिषद् साहित्य

कोड	नाम	विवरण
66	ईशादि नौ उपनिषद्	अन्वय, हिंदी व्याख्यासहित
577	बृहदारण्यकोपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
582	छान्दोग्योपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
67	ईशावास्योपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
68	केनोपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
578	कठोपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
69	माण्डूक्योपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
513	मुण्डकोपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
70	प्रश्नोपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
71	तैत्तिरीयोपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
72	ऐतरेयोपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
73	श्वेताश्वतरोपनिषद्	हिंदी-अनुवाद शांकरभाष्यसहित
1421	ईशादि नौ उपनिषद् (शांकरभाष्य)	—नौ उपनिषदोंके मन्त्रानुवाद, शांकरभाष्य एवं हिन्दी-भाष्यार्थ।